॥ श्रीः ॥

हरिदास-संस्कृत-ग्रन्थमाला

९२

॥ श्रीः ॥

महाकविदण्ड्याचार्यकृतं

दशकुमार-चरितम्

काशीस्थ-टीकमाणी-संस्कृतमहाविद्यालय-प्रधानाध्यापकेन
साहित्याचार्येण
पण्डितश्रीताराचरणभट्टाचार्येण
विरचितया "बालविबोधिनी" नामकसंस्कृतटीकया
तथा
श्रीरामतेजशास्त्र्यारब्धया श्रीकेदारनाथशर्मप्रपूरितया
"बालक्रीडा" नामक हिन्दीटीकया च
समुल्लसितम्

सम्पूर्णम्

प्रकाशकः
जयकृष्णदास हरिदास गुप्तः—
चौखम्बा संस्कृत सीरिज़ आफिस,
बनारस सिटी

मूल्य ५॥)

विज्ञप्तिः

विद्योत्साहिभिः श्रीमद्भिः श्रीचौखम्भा-संस्कृत-सिरीज़-स्वत्वा[illegible] बहुशोऽनुरुद्धस्य ममेदानीं महाकवेर्दण्डिनः सुप्रसिद्धां कृतिं दशकुमारचरि[illegible] सम्मुद्रय प्रकाशयितुं प्रथमोऽयं समुद्यमः। यद्यपि बहुसंख्याकाशीका [illegible]कुमार[illegible] मुद्रिताः सन्ति तथापि ताः काश्चनातिसंक्षिप्ता या भावगभीरस्यास्य [illegible] तात्पर्यप्रकाशनेऽसमर्थाः काश्चन चातिविस्तृतास्तत्त्वं विद्यार्थिनामल्पविष आहिपया मत्या साकल्येनायत्तीकरणानर्हाः। अतश्च मया मन्य [illegible] विद्यार्थिनां ग्रन्थाभ्यासे किमपि साहाय्यं वितरीतुं बालविबोधिनीनाम्नी [illegible] नवीना व्याख्याऽत्र समयोजि।

भ्रान्तेः पुरुषधर्मत्वादत्र स्खलनं सम्भवदेव। अतो मन्मतेरपाटवाद् मुद्रकदोषाद् वा यानि यान्यत्र स्खलितानि सञ्जातानि तानि विचारदृशः सहृदय स्वगुणेन संशोध्य मामनुग्रहीष्यन्तीति मे सुमहान् विश्वासः।

व्याख्येयं बालविबोधिनी परीक्षार्थिनां विद्यार्थिनां चेत् स्वल्पायाप्युपकार भवेत्तदा मदीयं सकलं श्रमं सार्थकं मंस्ये।

चौखम्भा-संस्कृतसीरीज़-सञ्चालकानाञ्चायं ग्रन्थप्रकाशसमुद्यमो धन्यवादा इति तु कृतमुक्तेन। भगवान् विश्वनाथो दीर्घायुषामेतेषामिमं समुद्यमं सर्वथा सफ कुर्यादितीयमस्माकं नियतप्रार्थनेत्यलं पल्लवितेन।

वाराणसी।
वसन्तपञ्चमी
सं० २००४

विदुषामनुचरः—
श्रीताराचरणशर्मभट्टाचार्यः।

ग्रन्थ-ग्रन्थकृतोः संक्षिप्तपरिचयः ।

गद्यकाव्येषु साम्प्रतं ये ये ग्रन्थाः समुपलभ्यन्ते तेषु दण्ड्याचार्यरचितं दशकुमारचरितमेव प्राचीनतमम् । तत्पूर्वमाख्यानमूलकाः काव्यग्रन्था अभूवन्नवेति निश्चेतुं न शक्यते । भासद्यौमिल्लकादीनां नामान्यपि कालिदासादीनां ग्रन्थेषूल्लिखितान्येव पर्यवसितानि दृश्यन्ते । तत्कारणन्तु-परवर्तियुगेषु विरचिताः काव्यग्रन्थाः क्रमोन्नतिवशतस्तत्पूर्ववर्त्तिनां काव्यग्रन्थानां यथाप्यपह्नुत्य कालक्रमेण तान् विस्मृतिसागरस्य कुक्षिशयानकुर्वन्निति सम्भाव्यते । यदस्तु—दशकुमारचरितं नाम काव्यमाख्यायिकाविशेषः । तदप्यसम्पूर्णमेव निर्णीयते । श्रुत्वा तु भुवनवृत्तान्त" मित्यारभ्य "योगानन्दवतिष्ठ" मित्यन्ते भागेऽष्टाभिरुच्छ्वासैरष्टानामेव कुमाराणां चरित्रवर्णनं कृतं तावदेव दण्डिविरचितं यौ तु पूर्वपीठिकोत्तरपीठिकारूपौ द्वावंशौ तावन्यरचिताविति लिखनभंग्या भाषाविश्लेषेणानुमीयते । पूर्वपीठिका पञ्चभिरुच्छ्वासैः सङ्कलिताऽस्ति-तत्र च द्वयोरेव कुमारयोरितिवृत्तं वर्णितमस्ति । उत्तरपीठिकायां तु मूलग्रन्थस्य असम्पूर्णं विश्रुतचरितं परिसमापितं दृश्यते । पूर्वपीठिकायामुत्तरपीठिकायां च बहुषु स्थलेषु बहवः पाठभेदा अपि दृश्यन्ते । एवमादिभिर्बहुभिर्हेतुभिरनुमीयते यदेते पूर्वोत्तरपीठिके न दण्ड्याचार्यरचिते इति । सम्भाव्यते च परवर्तिना केनापि कविना परमरमणीयस्यास्य ग्रन्थस्य सम्पूर्णतां विधातुं पीठिकाद्वयमेतदनेन समयोजीति । न खलु तादृशमुदाहरणं संस्कृतसाहित्यजगति विरलमित्यपरोक्षं मेधाविनाम् । काव्येऽस्मिन् अद्भुतरसस्यैव प्राधान्यम् । चौर्यविद्या, रमणीहरणं, रहस्यप्रणयः, दूतीप्रेषणमित्यादीन्यत्र वर्णितानि दुर्नीतिमूलकान्यपि महाश्चर्यजनकानि पाठकानां चेतःसमाकर्षकाणि च । अतिनैपुण्येन वन्यावसन्तादिवर्णनमस्य कवेः सर्वतोमुखप्रतिभायाः परिचायकम् । प्रधानतयात्र वैदर्भीरीतिः स्थलविशेषेषु च समासबाहुल्याद् गौडीरीतिरनुसृता वर्त्तते । उपमारूपकादीनामलङ्काराणां समावेशोऽपि काव्यस्यास्योत्कर्षतामेव वर्द्धयति ।

दण्डी—

अस्मदालोच्यो महाकविर्दण्डी कस्मिन् समये कस्मिन् देशे कस्मिन् वंशे जन्माभजत इति बहुप्रयत्नस्यापि न केनाप्यज्ञायत । स्वरचितग्रन्थे निजनामसमया-

दिशापनरीतिः प्राचीनानां ग्रन्थकाराणां नासीदिति प्रायशो दृश्यते। भौमस्य दण्डिनो जीवनकालमधिकृत्य बहव एव विवदन्ते नैतावतापि निर्णयः सञ्जातः परन्तु दशकुमारचरितप्रणेता दण्ड्याचार्यः का०५ ५ .च दण्ड्याचार्यादभिन्न एवेत्यत्र नैकस्यापि विप्रतिपत्तिः। दण्डिविषये ।वेषण बहुभिः प्रमाणैः प्राच्यैः प्रतीच्यैश्च बहुभिर्महामतिभिः प्रतारिवकैर्यन्निरणायि त- साधो निर्दिश्यते—

खीष्टीयषष्ठशताब्दीशेषभागोऽस्य महाकवेर्जीवनकालः, मध्यभारतीयविदर्भं (बेरार) देशं चायं स्वजन्मनाऽलमकार्षीत्। अन्ध्रचोलकाञ्चीप्रभृतिदेशानां . रीप्रभृतिनदीनामुल्लेखेन वैदर्भीरीति प्रशंसया च पूर्वोक्तमनुमातुं शक्यते। यथा वास्तु वयमप्यनेन निर्णयेनैव सन्तोषमादध्म इति कृतं पल्लवितेन।

कुमाराणां नामानि परिचयश्च।

१. राजवाहनः—मगधाधिपतेश्चन्द्रवंशीय राजहंसस्य तनयः।
२. सोमदत्तः—राजहंसमन्त्रिणः सितवर्मकनिष्ठात्मजस्य सत्यवर्मणस्तनयः।
३. पुष्पोद्भवः— ,, पद्मोद्भवकनिष्ठात्मजस्य रत्नोद्भवस्य तनयः।
४. अपहारवर्मा—राजहंसमित्रस्य मिथिलेश्वरप्रहारवर्मणो यमजपुत्रयोरेकः
५. उपहारवर्मा— ,, ,, यमजपुत्रयो रपरः
६. अर्थपालः—राजहंसमन्त्रिणो धर्मपालकनिष्ठात्मजस्य कामपालस्य तनयः
७. प्रमतिः— ,, सितवर्मज्येष्ठात्मजस्य सुमते स्तनयः।
८. मित्रगुप्तः— ,, धर्मपालज्येष्ठात्मजस्य सुमन्त्रस्य तनयः।
९. मन्त्रगुप्तः— ,, धर्मपालमध्यमात्मजस्य सुमित्रस्य तनयः।
१०. विश्रुतः— ,, पद्मोद्भवज्येष्ठात्मजस्य सुश्रुतस्य तनयः।

विषयसूची



प्राक्कथन

भद्रमहिलाओ ! एवं भद्रपुरुषो !

आज आप लोगोंके समक्ष मैं दशकुमारचरितकी हिन्दी टीका उपस्थित कर रहा हूं। यह टीका मैंने ग्रन्थके आधे भागकीकी है। आधे भागकी पं० रामतेजशास्त्रीने पूर्वमें ही करके आप लोगोंके समक्ष उपस्थित कर दी है यद्यपि यह आधा भाग भी उन्हें ही करना चाहिये था। परन्तु, गार्ह- झंझटोंके कारण उन्होंने न किया। ततः इसका भार चौखम्बा संस्कृत सी०ि अध्यक्ष महोदयने मुझे सौंपा। साथ ही नेपालके प्रसिद्ध विद्वान् तथा संस्कृत नेपाली और हिन्दीके सुयोग्य कवि पूज्य पं० शेषराजजी शर्मा शास्त्री, काव्यतीर्थ-का एवं पं० श्रीरामचन्द्रजी झा व्याकरणाचार्य (विद्याविलासप्रेस, काशी) का साग्रह निर्देश हुआ कि, इस टीकाको "शीघ्र कर डालिये" अतः मुझे निर्देश स्वीकार करना पड़ा। यह टीका कैसी हुई इसका विवेचन आप लोगोंपर नि है। हां, त्रुटियोंके लिये क्षमाका अधिकारी मैं हूँ।

इस ग्रन्थके प्रारम्भमें, महाकवि दण्डीका जीवनचरित तथा गद्यकाव्यकी प्रथा आदिका वर्णन संक्षिप्तरूपेण दे दिया गया है। इस जीवनचरित आदिके लिखनेका आदेश मुझे मेरे स्वर्गीय गुरुवर (प० गङ्गाधरशास्त्री भारद्वाज साहित्य-व्याकरणाचार्य प्रोफेसर गवर्नमेंट संस्कृत कालेज काशी) के अनुज पं० विश्वनाथ शास्त्री भारद्वाज एम० ए०, काव्यतीर्थ प्रोफेसर हिन्दू विश्वविद्यालय, काशीने दिया। जिसके लिये मैं उनके श्रीचरणोंमें श्रद्धासे कुसुमाञ्जलि अर्पण कर रहा हूं।

भावत्कः—

—केदारनाथ शर्मा।

दशकुमारचरित और उसका उद्गम

[प, फ, ब, भ, म, (पवर्ग) से रहित श्लोक]

"अव्याहतास्त्रः सर्वासु यः सदा देवयोनिषु।
निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह शृणुष्व तत्॥"

कहते है-कि, महाकवि दण्डी देवीके परम उपासक (शाक्त) थे। एक समय उनका अपने तदानीन्तन कवियोंसे झगड़ा हो गया। सभी कवि कहने लगे "मैं ही श्रेष्ठ कवि हूँ" इसपर महाकवि दण्डीने भगवतीको निर्णायिका बनाया और भगवतीके ही आयतनमें उन लोगोंने अपनी अपनी रचना करके धर दी तथा आयतनका पट बन्द कर दिया। कुछ देरके अनन्तर आयतनसे ध्वन्यमान हुआ—

"कविर्दण्डी, कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः"

[देवीके इस निर्णयपर अन्य कवियोंने अपना-अपना निबटारा भी देवीसे कराया जिसका विस्तृत वर्णन स्थानाभावसे यहां नहीं दिया जाता।]

अस्तु, किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि, उस दिनसे दण्डीकवि देवीके और प्रबल उपासक हो गये। मेरे मतसे शायद उन्होंने "अव्या०" इस पवर्गहीन श्लोकको देखकर एक सुन्दर काव्य रचनेकी ठानी हो। जिसमें कमसे कम एक उच्छ्वास को उस कालके द्योतकरूपमें—ओष्ठ्यवर्णहीन—भक्तिपूर्वक धर दिया हो। निःसन्देह ऐसी ओष्ठ्यवर्णहीन सुन्दर और सुमधुर रचना अन्य काव्योंमें नहीं पायी जाती। प्रयास तो स्तुत्य है ही:—

गद्यकाव्य किसे कहते हैं और वह कबसे प्रारम्भ हुआ—

संस्कृत गद्यकाव्यमें संस्कृत आलंकारिकों द्वारा वर्णित नवों प्रकारके रस, रीति, गुण और अलंकार आदिका समावेश रहता है। हां, पद्यकाव्यके जैसे वृत्त इसमें नहीं रहते हैं। पद्यकाव्यके साथ ही गद्यकाव्यका प्रचुररूपेण वर्णन संस्कृत-साहित्यमें अत्यन्त प्राचीन कालसे देखा जाता है। महाभारतके समयमें

गद्यकाव्य पूर्णरूपेण प्रतिष्ठित हुआ पाया जाता है। महाभारतकी गद्यकथा देखनेसे यह बात सर्वथा मनोगत हो जाती है। महाभाष्यके रचयिता पतञ्जलिके कालमें अनेकों आख्यायिकाएं एवं कथाएं प्रणयन की गयीं थीं। क्योंकि, सुमनोत्तरा, वासवदत्ता, और भैमरथी आदिकी कथाओंका नामनिर्देश महाभाष्यमें पाया जाता है। भास और कालिदास (दीपशिखा) आदि प्राचीन कविवरोंके नाटकों-में—प्रतिमा तथा शाकुन्तलमें—गद्यकाव्यकी सुन्दर झांकी देखी जाती है। ईसाके पूर्व द्वितीय शतकसे आरम्भ करके ईसाके षष्ठ शतकतकके प्रस्तर लेखोंमें गद्यकाव्यमें भी रचनाएं पायी जाती हैं। ईसाकी छठवीं शताब्दीके पूर्व कालका कोई संस्कृत गद्यकाव्य अधुना नहीं प्राप्य है। परन्तु, उस समय गद्यमें भी रचना होती थी इसमें सन्देह नहीं है।

गद्यकाव्यके प्रणेता :—

गद्यकाव्यके पुरातन उत्तम प्रणेतृगण—दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट ही हैं। इन्हींके रचे हुए काव्य गद्यकाव्यमें श्रेष्ठ माने जाते हैं। गद्य और पद्यकाव्यों-की आलोचना करते हुए वामनने लिखा है:—

"गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति" (गद्यकाव्य ही कवियोंकी कसौटी है।)

महाकवि दण्डीकी उत्पत्ति और काव्य आदि :—

महाकवि दण्डीकी उत्पत्ति सातवीं शताब्दीमें हुई। यों तो इनके उत्पत्ति-समयनिर्धारणमें विद्वानोंमें मतभेद है परन्तु, अवन्तिसुन्दरीके आधारपर इनके जीवनचरितका कुछ वर्णन इस प्रकार है :—महाकवि दण्डी, किरातार्जुनीयके रचयिता कविवर भारविके परममित्र दामोदरके प्रपौत्र थे अथवा कुछ विद्वानोंके कथनानुसार महाकवि भारविका नाम ही दामोदर था और दण्डी कवि उन्हीं भारविके प्रपौत्र थे दण्डी कविके प्रपिताका नाम मनोरथ था तथा पिताका नाम वीरदत्त था। वीरदत्त चार भाई थे चारों भाइयोंमें वीरदत्त सबसे छोटे थे तथा दर्शन-शास्त्रके निष्णात थे। दण्डीकी माताका नाम गौरी देवी था। अभाग्यवश दण्डीकवि बाल्यावस्थामें ही मातृ-पितृविहीन हो गये थे। ये काञ्चीपुरीके निवासी थे। यह जनश्रुति तो, सुविख्यात है ही कि, पल्लवनृपतिके राजकुमार

को शिक्षित करनेके लिए इन्होंने अपने प्रख्यात ग्रन्थ "काव्यादर्श" की रचना की थी। कई लेखकोंके मतोंसे "काव्यादर्श" में वर्णित राजवर्मा ही काञ्चीके अधिपति पल्लव नृपति हैं। पल्लव नृपति शैव धर्मावलम्बी थे और उसके प्रचारक भी थे इनका राज्यकाल ईसवी ६९० से ७२५ तक मनाया गया है। अत एव इस महाकविका समय इतर प्रमाणोंके अनुसार तथा अवन्तिसुन्दरीकी कथाके आधारपर सातवीं शताब्दीका अन्तिम चरण ज्ञात होता है। इस कथनकी पुष्टि इसके द्वारा और भी मानी जाती है कि, काव्यादर्शमें कालिदास एव बाणके वर्णनोंके सदृश वर्णन पाया जाता है। प्रोफेसर तथा इतिहासज्ञ पाठकके कथनानुसार 'काव्यादर्श' में निर्वर्त्य तथा विकार्य एवं प्राप्य हेतुका विभाग वाक्यपदीयकर्ता भर्तृहरि (६५० ई०) के समान किया गया है। परन्तु, महाशय काणेने अपनी का० द० की भूमिकामें अनेकों प्रमाणोंका उद्धरण देकर सिद्ध किया है कि, कविवर दण्डी भामहके पूर्ववर्ती कवि थे। यह बात अवश्य ध्यान देने योग्य है कि, महाशय काणे भामहका काल ६०० ई० के पश्चात्का मानते है। परन्तु, भामहका काल ६०० ई० के बादका हरगिज नहीं है। अपितु उनका काल ५०० ई प्रथम अथवा इसके समीप माने तो, कोई हानि नहीं है।

हां महाशय काणेका कथन विचारने योग्य अवश्य हो सकता है। क्योंकि, अवन्तिसुन्दरी कथाको प्रमाणरूपेण माननेमें अभीतक सभी इतिहासज्ञोंमें मतैक्य नहीं है। महाशय काणे स्वमतानुरूप सिद्धान्तके समर्थनमें कहते हैं कि, कवि-यित्री विद्या (विज्जा) वा विज्जकाके नामसे निर्देशित एक श्लोक "शार्ङ्गधर पद्धति" में वर्णित है। उक्त श्लोकमें "काव्यादर्श" का वर्णन है। वह श्लोक निम्नांकित प्रकारसे है—

> "नीलोत्पलदलश्यामां विज्जकां मामजानता।
> वृथैव दण्डिना प्रोक्तं सर्वशुक्ला सरस्वती॥"

इस कथनसे यह सिद्ध ही है कि, 'काव्यादर्श' के प्रणेता (रचयिता) दण्डी कवि ही हैं। यथाक्रम दसवीं और एकादश शताब्दियोंके आलंकारिकोंने अर्थात् मुकुल भट्ट और मम्मट भट्ट महोदयोंने क्रमशः अपने-अपने अलंकार

ग्रन्थोंमें जिनके नाम "अभिधावृत्तिमातृका" तथा "शब्दव्यापारविचार" रक्खा है। उनमें विज्जकाके अनेकों श्लोकोंका उद्धरण दिया है। अत एव विज्जकाका समय ८५० ई० पूर्व है। जल्हणकविकी "सूक्तिमुक्तावली" में राजशेखरकृत श्लोक मिलता है। जिससे विदित होता है कि, कर्नाटक प्रान्तमें विजयांका नामकी कोई एक कवियित्री सरस्वतीके समान तदानीन्तना थी। जैसा निम्नांकित शार्ङ्गधरपद्धतिके १८४ वें श्लोकसे प्रतीत होता है:—

"सरस्वतीव कार्णाटी, विजयाङ्का जयत्यसौ।
या विदर्भगिरां वासः कालिदासादनन्तरम् ॥"

विज्जका ही विजयांका थी तथा वही विजयांका यदि द्वितीय पुलकेशीके कुमार चन्द्रादित्यकी महारानी विजयभट्टदारिका रही हो तो, उसका काल ६६० ईसवीके समीप माना जाता है*। अतः उससे सिद्ध होगया कि, महाशय काणे दण्डीकविको ६०० के समीप मानते हैं तथा अन्य इतिहासकार इन्हें सातवीं सदीके अन्तिम चरणमें मानते हैं। इन दोनों मतोंमें अर्थात् महाशय काणे और अन्य इतिहासवेत्तृमण्डलोंके मतोंमें महाशय काणेका मत कुछ शिथिल मालूम पड़ता है। अस्तु। दण्डीकविके द्वारा रचित ग्रन्थोंमें भी इतिहासकारोंमें अनैक्य मत है। राजशेखरकविकृत शार्ङ्गधरपद्धतिके श्लोक १७४ से स्पष्ट विदित होता है कि, प्राचीन समयसे दण्डीकवि रचित तीन काव्य हैं—जैसा माना जाता है।

ये तीन काव्य कौन-कौन हैं ?

इसका कहना कठिन है। क्योंकि, इनका ठीकसे पता नहीं है। कुछ इतिहासलेखक इन तीन काव्योंमें दोको ही दण्डीकवि प्रणीत मानते हैं। उनमें भी कोई दशकुमारचरित तथा काव्यादर्शको, एवं कोई अवन्तिसुन्दरीकथा तथा काव्यादर्शको, परन्तु काव्यादर्शको सभी ऐक्यमतसे दण्डीकविविरचित मानते हैं। लेकिन, अवन्तिसुन्दरी—कथाकी अपेक्षा दशकुमारकी ओर इतिहासज्ञ अधिक मतैक्यमें पाये जाते हैं। कुछ इतिहासज्ञ तो, "छन्दोविचिति"

* देखिये महाशय काणेकी साहित्यदर्पणकी भूमिका पृ० ४०-४१

नामक एक काव्यको दण्डीकविका तीसरा काव्य माननेके पक्षमें हैं। किन्तु, छन्दस् शब्द छन्दः शास्त्रका नाम ही है। इस नामका कोई काव्य नहीं है। अस्तु, महाशय कीथके मतानुसार दशकुमारचरितकका भूगोलचित्रण तो, हर्षवर्द्धन पूर्वके भारतके वर्णनसे साम्य रखता है। दशकुमारचरितकी भाषाप्रणाली तथा वर्णनशैली भी दण्डीकविको सुबन्धु और बाणभट्टके पूर्वमें होनेकी सूचना देती है। महाकवि भारवि काञ्चीनगरीके नृपति सिंह विष्णुवर्माके सभापण्डित थे। इससे यह सिद्ध है कि, दण्डीकवि सातवीं सदीके उत्तरार्द्धमें थे।

दशकुमारचरितः—

यह एक सुन्दर गद्यकाव्य है। इसमें पूर्वपीठिका, चरित और उत्तर-पीठिका, तीन भाग हैं। पांच उच्छ्वासोंकी पूर्वपीठिका है। आठ उच्छ्वासोंका चरित भाग है। उत्तरपीठिका तो, केवल अष्टम उच्छ्वासकी उपसंहारमात्र है। इस काव्यकी भाषा ललित तथा मधुर है और साथही बाणभट्ट एवं सुबन्धु-कविकी भाषाओंसे सरल भी है। यह काव्य श्लेषालंकारहीन है। अन्य उपमा आदि अलंकार भी प्रचुरतामें नहीं पाये जाते हैं। इसका कथानक राजवाहनादि दशकुमारोंकी यात्रा-विलास आदिके आधारपर अति रोचकता एवं सरलतासे लिखा गया है। इसमें पाठकोंको मुग्ध एवं आकर्षित करनेकी खूबी है। चोर-शास्त्र और राजनीतिज्ञान तथा व्यावहारिक ज्ञानका उपदेश तो, पदे-पदे है। कुछ स्थलोंमें कामशास्त्रका वर्णन निपुणतापूर्ण वर्णित है। कुछ इतिहासके पारंगत उसे अश्लील होनेसे दोषमय कहते हैं किन्तु, साहित्यसे वस्तुतः वह गुण ही है। बाण और सुबन्धुकविके सदृश इस काव्यका वर्णित कथाभाग पाठकोंके सदा स्मृतिपटलमें स्थायी रहता है। तदानीन्तना व्यवहारोंकी कुटिल-ताएं तो; इसमें कूट-कूट कर भरी पड़ी हैं। कुछ लोगोंके विचारसे यह काव्य एक लेखकका लिखा नहीं है। उनके विचारोंसे यह दो कवियोंकी कृति है। वे पूर्वपीठिकाके लेखकको अलग तथा उत्तरपीठिकाके लेखकको अलग मानते हैं। वे लोग कहते हैं कि, पूर्वपीठिका और उत्तरपीठिकाके सूक्ष्मनिरीक्षणसे एक दूसरेमें साम्य नहीं है कुछ विद्वानोंके मतसे तो, पूर्वपीठिका और उत्तर

पीठिका दण्डीकवि निर्मित ही नहीं है। कुछ इतिहासज्ञ तो, पद्मनाभ कविको उत्तरपीठिकाके लेखक मानते हैं। अस्तु...।

केवल दशकुमारचरितकी तीन टीकाएं हैं:—वे टीकाएं पूर्वपीठिका उत्तरपीठिकापर नहीं है। उनके कर्त्ताओंके नाम तथा टीकाओंके नाम निम्नाङ्कित हैं:—शिवराम पण्डितकी 'भूषणा' कवीन्द्राचार्य पण्डितकी 'पदच...का' और पण्डित भानुचन्द्रकी 'लघुदीपिका'। ये तीनों टीकाएं जो सुप्रसिद्ध हैं पूर्वपीठिकापर न होनेसे कुछ विद्वान लोगोंके मतोंसे पूर्वपीठिका दण्डी निर्मित नहीं है।

भाषाप्रयोगमें महाकवि दण्डीने सुबन्धुकी अपेक्षा पाणिनीय व्याकरण... अधिक विचार रखा है। इनके काव्यमें लिट् और लुङ् लकारके प्रयोग व्याकरणानुसार हैं। ऐसे प्रयोग सुबन्धु कविने अपने प्रसिद्ध काव्य 'वासव...' नहीं किये हैं।

............दण्डिनः पदलालित्यम्।

जो भी हो, प्राचीनताके अनुयायी तो, महाकवि दण्डी निर्मित पूर्वपीठिका चरित और उत्तरपीठिकाके सहित "दशकुमारचरित" को मानते हैं अतः दण्डीकविके ललितपदोंवाले दशकुमारचरितका कौन गद्यकाव्य ल... में साम्य कर सकता है?

कुछ, प्राचीनताके पक्षपाती विद्वान् तो, महाकवि दण्डीको भगवान् व्यास और महर्षि वाल्मीकिके पश्चात् गणना करनेमें ही दृढ़ देखे जाते हैं।

वसन्तपञ्चमी
वि० सं० २००४

कृपेच्छु—
—केदारनाथ शर्मा

॥ श्रीः ॥

दशकुमारचरितम् ।

पूर्वपीठिका ।

प्रथमोच्छ्वासः ।

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः

अथ बालविबोधिनी ।

नवनीरधरच्छायां जितपूर्णेन्दुविग्रहाम् ।
नीलां वाऽप्यथवा शुभ्रां काञ्चिदेकां गिरं श्रये ॥
पितरावग्रजन्मानं गुरूंश्चानम्य यत्नतः ।
व्याख्यां दशकुमारस्य कुर्वे बालविबोधिनीम् ॥

॥ श्रीः ॥

अथ बालक्रीडा

श्रीत्रिविक्रम पाददण्ड निःश्रेय का शुभ सेतु है ।
ब्रह्माण्ड-रूपी छत्र का मानों विधारक हेतु है ॥
झरती हुई आकाशगङ्गा पट्टिका का केतु है ।
देव शत्रुनाश सूचक मानो जु धूम केतु है ॥ १ ॥
पद्मयोनी के कमल का नाल मानु अमान है ।
मानों महादढ स्तम्भ जो जयकीर्ति का एक स्थान है ॥
संसाररूपी नाव में जो कूप दण्ड समान है ।
नक्षत्ररूपी चक्र का जो अक्षदण्ड महान् है ॥२॥

॥ बालविबोधिनी ॥

आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वापि तन्मुखमित्यनुशासनमनुसरता तत्रभवता कविकुलधौरेयेणाचार्यदण्डिना चिकीर्षितस्य दशकुमारचरिताख्यस्य गद्यकाव्यस्य प्रत्यूह-व्यूहविध्वंसनाय भगवच्चरणारविन्दस्मरणरूपं मङ्गलं कर्तुमुपक्रम्यते ब्रह्माण्डेत्यादिना।

अत्र कविना वामनरूपेणावतीर्णस्य भगवतो नारायणस्य बलिनियमनार्थमावि-ष्कृतस्य पादत्रयस्य वर्णनं कृतम्। तेनैव पादे ऊर्ध्वमुत्क्षिप्ते समस्तं गगनं, द्वितीयश्चाधोगतः सम्पूर्णा क्षोणी तृतीयः पुनर्नाभितो निर्गतो पदैकेनमाक्र समाक्रा-न्तवानिति पौराणिकी कथा। रूपकेण कविस्तामेव विशिनष्टि—

ब्रह्माण्डं जगदेव छत्रमातपत्रं तस्य दण्ड आधारः यष्टिः। भगवतः समस्तज-गदाधारत्वात्। एतेनोर्ध्वपादो गम्यते। शतधृतेर्ब्रह्मणो भवनं गृहमाश्रय इत्यर्थः, यदम्भोरुहं कमलं तस्य नालदण्डो वृन्तभूता यष्टिः, अनेन मध्यमपादो गम्यते। क्षोणी क्षोणिरेव नौस्तरणिः तस्याः कूपदण्डो गुणवृक्षः, एतेन भूतलस्थपादो गम्यते। क्षरन्ती

॥ बालक्रीडा ॥

कारण और कार्य का नियतसिद्ध एक सम्बन्ध है। जहां कार्य है वहां कारण अवश्य है अथ च कारण के बिना कार्य हो ही नहीं सकता। किन्तु कारण है और कार्य हो ही जायगा। यह कोई निश्चित नियम नहीं है। क्यों कि अक्सर देखा जाता है कि कारण रहता है और कार्य नहीं होता है। अतः मानना पड़ता है कि कोई है जिससे कार्य नहीं होरहा है जिसके बदौलत कार्य नहीं होरहा है उसका नाम प्रतिबन्धक है। प्रतिबन्धक के दूर होने पर ही कार्य सम्पन्न होता है। यह प्रतिबन्धक तभी दूर होसकता है जब ईश्वर का अनुग्रह प्राप्त हो। अतः ईश्वर के अनुग्रह प्राप्त करने के लिए (अर्थार्थी) भक्त लोग अपनी अपनी भावना के अनु-सार विशेषरूपसे (सजाकर) या सामान्यरूपसे ईश्वरका अथवा ईश्वर की वस्तु का स्मरण कीर्तन वगैरह करते हैं। इसी का पारिभाषिक नाम मङ्गलाचरण है। हमारे बाद की सृष्टि के जीव भी मंगलाचरण से लाभ उठावें इस लिए ग्रन्थकार लोग उसे अपनी पुस्तकें आरम्भ में लिखदेते हैं। इस का फल यह होता है कि पढने पढाने वालों को अनायास ही मंगल का लाभ हो जाता है। इसी सिद्धान्त के आधार पर आचार्य दण्डी बनाने के लिए प्रस्तुत किये हुए अपने ग्रन्थको निर्विघ्नसमा-प्त्यर्थ भगवान वामन के चरण का अपनी भावना के रंगमें रंग कर स्मरण करते हैं।

* बालविबोधिनी *

प्रवहमाणा याऽमरसरिदाकाशगङ्गा सैव पट्टिका पताका तस्याः केतुदण्डो ध्वजद स्वरूपः । अयमप्यूर्ध्वपादः । ज्योतिषां ग्रहनक्षत्रादीनां चक्रं मण्डलमेव चक्रं र चक्रमित्यर्थः, तस्याक्षदण्डः काष्ठदण्डविशेषः । त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुव त्रैलोक्यं तस्य यो व्यापनरूपो विजयस्तत्सूचकः स्तम्भदण्डः । विबुधद्वेषिणामसुराण कालदण्डो यमदण्डस्वरूपः, त्रिविक्रमस्यायमिति त्रैविक्रमो विष्णुसम्बन्धी अङ्घ्रि श्चरणो दण्डइवेत्यङ्घ्रिदण्ड श्चरणदण्ड स्ते तुभ्यं तव वा श्रेयो मङ्गलं सुकृतं

* बालक्रीडा *

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्ड इति । इस श्लोक में आठवार दण्डशब्द का प्रयो किया है । जो कि प्रतिपादके अन्त में हैं एवं हर एक पाद के पांचवें अक्षर के बा पड़ता है जिससे पादान्त्यानुप्रास एवं पदान्त्यानुप्रास सफल होता है जिसको तुका कविता कहते हैं । किन्तु पदान्त्यानुयास चतुर्थपाद में पांच अक्षर के बाद द शब्द के न आने से न्यून होजाता है । और सभी स्थानों में दण्ड पद "दण्डः इस रूपमे आता है किन्तु एक जगह "दण्डो" इस रूप में आता है अतः स्वरू प्रक्रमभंगदोष होजाता है । अतः प्रकारान्तर से यदि इन पदों की रचना की ज तो निर्दोष होसकता है । तीनों लोकों को जीतने के लिये भगवान् वामन ने ती वार पैर को फैलाया इस भावको द्योतन करने के लिए त्रिभुवन एवं त्रैविक्रम य विशेषण दिये हैं अतः यहां परिकरालंकार है । और कवि भगवान् वामन चरणों में श्रद्धा से अवनत होरहा है अतः यहां भाव व्यक्त हो रहा है और अ अर्थात् चरण को दण्डतुल्य मानकर सात रूपों में उसको उपस्थित किया है अ रूपकालङ्कार है । वह रूपक ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः क्षोणीनौकूपदण्डः एवं ...दमरस रपट्टिकाकेतुदण्डः इन तीनों में अश्लिष्ट परम्परित है, और ज्योतिश्चक्राक्षदण्ड इसमें श्लिष्ट परम्परित है, शेष स्थल में साधारण है ।

भगवान् वामन का चरणदण्ड तुम्हारा अर्थात् पढने पढाने वालों का कल्या करें । यहां का भाव यह है कि भगवान् विष्णुने बौने बनकर बलिनामक दैत्यरा से तीन पैर पृथ्वी भिक्षा में मांगी । उस मांगी हुई पृथ्वी को नापने के लि भगवान् ने अपना पैर ऊपर को फैलाया है । उस समय ऊपर की तरफ फैलाया हुआ यह चरणदण्ड ऐसा मालूम होता है मानों यह ब्रह्माण्डरूपी छत्र का आधार

क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः ।
ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः ॥

(१) अस्ति समस्तनगरीनिकषायमाणा शश्वदगण्यपण्यविस्तारितम-

* बालविबोधिनी *

वितरतु ददातु । अत्र रूपकालङ्कारसंसृष्टिः । ब्रह्माण्ड-क्षोणी-स्वर्गङ्गासु छत्र-नौ-पट्टि-कानामारोपो भगवच्चरणे दण्ड-कूपदण्ड-ध्वजदण्डत्वारोपे हेतुरिति परम्परितं रूपकं श्लिष्टशब्दनिबन्धनम् । ज्योतिश्चक्राक्षदण्डेत्यत्र तु चक्रशब्दस्य श्लिष्टत्वात् श्लिष्टशब्दनिबन्धनम् । अन्यत्र तु केवलं निरङ्गरूपकम् तेषाञ्च परस्परनिर-पेक्षत्वात् संसृष्टिः । वृत्तञ्चात्र स्रग्धरा ।

(१) अस्तीत्यस्य-पुष्पपुरी नाम नगरीत्यनेनान्वयः । समस्तानां सकलानां नगरीणां निकषः कषणोपल इवाचरतीति निकषायमाणा सर्वश्रेष्ठादर्शभूता ।* शश्वत् निरन्तरम् । अगण्यैः असंख्यैः पण्यैः विक्रेयैः विस्तारितं विक्रयार्थं प्रसारितं मणिगणा-

* बालक्रीडा *

ै, ब्रह्माजी की पैदाइश के कमल का नाल है, पृथ्वीरूपी नौका का कूप†दण्ड है, आकाश से पृथ्वी की तरफ झरती हुई आकाशगङ्गा रूपी ध्वजा का बांस है, तारागणरूपी पहिये का अक्षदण्ड है, भगवान के त्रैलोक्यविजयका सूचक स्तम्भ है, और विद्वान या देवताओं से द्वेष करने वालों के लिये साक्षात् कालका दण्ड है । समस्त पुस्तक में अनुप्रास एवं यमकालंकार पद २ पर है अतः उनको हम नहीं दिखेंगे किन्तु और अर्थालंकारों को यथासंभव दिखलाने का प्रयत्न करेंगे ।

(१) विश्व के समस्त शहरों के महत्वादिगुणों के जांचने की कसौटी और अगणित दुकानों में फैलाये हुये मणि वगैरह के द्वारा समुद्र रत्नोंका खजाना है इस

* अत्रोपमालङ्कारः ।

† जिसतरफ वायु बहता है उसी तरफ विना पतवार के नौका को चलाने के लिये मल्लाह लोग नौका के बीच में पाल लगा बांधते हैं । उस पालको सहारा देने के लिये नौका के बीचमें जो बांस खड़ा करदेते हैं उसी का नाम कूपदण्ड है ।

णिगणादिवस्तुजातव्याख्यातरत्नाकरमाहात्म्या मगधदेशशेखरीभूता पुष्प पुरी नाम नगरी ।

(२) तत्र वीरभटपटलोत्तरङ्गतुरङ्गकुञ्जरमकरभीषणसकलरिपुगणक टकजलनिधिमथनमन्दरायमाणसमुद्दण्डभुजदण्डः, ... नि हरणपरायणतरुणगणिकागणजेगीयमानयातिमानया शरदिन्दुकुन्दघनसा

* बालविबोधिनी *

दिवस्तुजातं स्तत्तद्द्रव्यसमूहैः व्याख्यातं प्रकटितं रत्नाकरस्य समुद्रस्येव माहात्म्यं महिमा यस्याः सा, मगधदेशस्य कीकटस्य शेखरीभूता शिरोभूषणरूपा, पुष्पपुरं कुसुमपुरं नाम नगरी अस्ति वर्त्तते यस्याः साम्प्रतिकं नाम पाटलिपुत्रमिति ज्ञेयम् ।

(२) तत्र पुष्पपुर्यां, वीराणां शूराणां भटानां योद्धॄणां पटलेन समूहेन उत्त रङ्गः उद्गतवीचिस्तथा—तुरङ्गा अश्वाः कुञ्जरा गजास्ते मकरा नक्रा इव तैर्भीषणं भयङ्करस्तथा सकलानां रिपुगणानां शत्रुमण्डलानां कटकं सैन्यं जलनिधिः समु इव तस्य मथने आलोड़ने मन्दरायमाणः मन्दराचल इवाचरन्, मन्थनदण्डस्वरूपः समुद्दण्डः समुद्यतो भुजो बाहुर्दण्ड इव यस्य सः । पुरन्दरपुरस्य अमरावत्या उद्या नवने चत्वरोद्याने नन्दनवने इति यावत्, विहरणपरायणेन भ्रमणशीलेन तरुणगणि कागणेनाप्सरःसमूहेन जेगीयमानया मुहुर्गीतया, अति सातिशयं मानं परिमा यस्या स्तया अपरिमितया, शरदिन्दुः शरच्चन्द्रश्च कुन्दं माघ्यकुसुमञ्च घनसार कर्पूरश्च नीहारो हिमञ्च हारो मौक्तिकस्रक् च मृणालं बिसञ्च मरालो हंसश्च सुरग ऐरावतश्च नीरं जलञ्च क्षीरं दुग्धञ्च गिरिशस्य महादेवस्याट्टहासो महाहास्यञ्च काश काशपुष्पञ्च तैर्नीकाशा तुल्या मूर्त्तिः स्वरूपं यस्यास्तया, रचिता कृता दिगन्तर लानां दिगवकाशानां पूर्त्तिः पूरणं यया तया, समस्त दिग्व्यापिन्येत्यर्थः, कोर

* बालक्रीडा *

बातको निरन्तर सूचित करने वाली मगधदेश का केन्द्र पुष्पपुरी नामकी नगरी है ।

(२) जिस में कभी राजहंस नामक राजा हुआ था । जिसका विशाल भुजदण्ड सम्पूर्ण शत्रुओं के वीर योधाओं के समूह, चञ्चल घोड़े एवं उन्नत हाथी रूपी म से भयङ्कर सेनासमुद्र को मन्थन करने के लिये मन्दराचल है । जिसकी शरदृतु चन्द्र, माघ के महीने में फूलनेवाला पुष्प, कर्पूर, बर्फ, मोतियों की माला, मृणाल ऐरावत हाथी, जल, दूध, शिवजीका अट्टहास, कैलासपर्वत एवं काशनामक घा

रनीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरदगिरिशाट्टहासकैलासकाशनीकाशमूर्त्या रचितदिगन्तरालपूर्त्या कीर्त्याऽभितःसुरभितः, स्वर्लोकशिखरोरुरुचिररत्नरत्नाकरवेलामेखलायितधरणीरमणीसौभाग्यभोगभाग्यवान्, अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविशिष्टविद्यासम्भारभासुरभूसुरनिकरः, विरचितारातिसंतापेन प्रतापेन सततुलितवियन्मध्यहंसः, राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव ।

* बालविबोधिनी *

प्रकाशा अभितः समन्तात् सुरभितो मनोज्ञः, स्वः स्वर्गो लोक आश्रयो येषां ते स्वर्लोका देवास्तेषां शिखरेषु शिरःसु उरूणि महान्ति रुचिराणि मनोहराणि रत्नानि भूषणानि यस्य तथाभूतस्य रत्नाकरस्य सागरस्य वेलया तटभूम्या मेखलायिता मेखलाकाञ्ची तयेवाचरिता, वेष्टिता धरणी पृथिव्येव रमणी कामिनी तस्याः सौभाग्यस्य सौन्दर्यस्यैश्वर्यस्य च भोगे उपभोगे भाग्यवान् भाग्यशाली, ससागराया धराया अधीश्वर इत्यर्थः । अनवरतानां निरन्तरमनुष्ठितानां यागानां यज्ञानां दक्षिणाभिर्द्रव्यैः रक्षितः पालितः शिष्टानां सदाचारपरायणानां विशिष्टेन अन्यविलक्षणेन विद्यासम्भारेण शास्त्रज्ञानातिरेकेण भासुराणां प्रदीप्तानां भूसुराणां ब्राह्मणानां निकरः समूहो येन सः । विरचितः उत्पादितः अरातीनां शत्रूणां सन्तापो दुःखं येन तथाविधेन प्रतापेन कोषदण्डजेनतेजसा सततमनारतं तुलितः समीकृतो वियन्मध्यहंसो मध्याह्नसूर्यो येन सः । प्रतापेन सूर्यसदृश इत्यर्थः । राजहंसो नाम राजहंसाभिधानो, घनः सान्द्रो दर्पोऽहङ्कारो यस्य तस्य महाभिमानवतः कन्दर्पस्य कामस्य यत्सौन्दर्यं रूपं तस्य

* बालक्रीडा *

के समान 'स्वच्छ', तथा दिशाओं के अन्तरालको पूरण करनेवाली एवं अति विशाल कीर्ति से इन्द्र की पुरी अमरावती के बगीचे में सैर करने में ... उसका सौरभ चारों तरफ फैला हुआ है । और जो सुमेरु के शिखर के विशाल एवं रुचिर रत्नों से युक्त रत्नाकर की वेलारूपी मेखला अर्थात् करधनी से वेष्टित पृथ्वीरूपी रमणी के सौभाग्यका भोग करने में भाग्यवान् है । तथा जिसने निरन्तर किये गये यज्ञों की दक्षिणाओं के द्वारा सदाचारशील महान् एवं विद्यासम्पन्न ब्राह्मणों की रक्षा की है, और जो अपने

(३) तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव

(४) रोषरूक्षेण निटिलाक्षेण भस्मीकृतचेतने मकरकेतने तदा भयेना नवद्या वनितेति मत्वा तस्य रोलम्बावली केशजालम्, प्रेमाकरो रजनी करो विजितारविन्दं वदनम, जयध्वजायमानो मीनो जायायुतोऽक्षि

* बालविबोधिनी *

सौदर्य सदृशं हृद्यं मनोरमं निरवद्यमनिन्दनीयं निर्दोषमिति यावत्, रूपं सौन्द यस्य स तथाभूतो भूपो राजा बभूव आसीत् ।

(३) तस्य राजहंसस्य वसुमती नाम सुमतिः शोभनबुद्धिशालिनी, लील वतीनां कामिनीनां कुलस्य मण्डलस्य शेखरमणिः शिरोभूषणरूपा, रमणी पत्नी रा त्यर्थः, आसीत् ।

(४) वसुमतीं विशिनष्टि—रोषेण तपोभङ्गकरणजनितेन कोपेन रूक्षो निष्ठ स्तेन, निटिले भाले अक्षि चक्षुर्यस्य तेन शिवेन भस्मीकृता विनाशिता चेतना चै न्यं यस्य तस्मिन्, भस्मीकृते इत्यर्थः, मकरकेतने कामदेवे सति, तदा भस्मीकरण काले भयेन सहचरनाशजनितसम्भ्रमेण वनिता कामिनी अनवद्या निर्दोषा अतः सै समाश्रयणीया, निर्दोषां तां महादेवोऽपि न धक्ष्यतीति मत्वा निश्चित्य तस्य मद रोलम्बावली भ्रमरपंक्तिः मौर्वीरूपा तस्या वसुमत्याः केशजालं कुन्तलकलाप समभूदिव, वचनविपरिणामेन सर्वत्रान्वयः । प्रेम्णः आकरः खनिः, प्रीत्युत्पाद रजनीकरश्चन्द्रः, प्रधानसहायः कामस्य, विजितं कान्त्या तिरस्कृतं अरविन्दं कम

* बालक्रीडा *

को सन्तप्त करने वाले प्रताप में मध्याह्न के सूर्य के समान है । एवं जिसका रू सौन्दर्य का घमण्ड करने वाले कामदेव के समान हृद्य एवं निर्दुष्ट है ।

(३) उस राजा के बड़ी बुद्धिमत्ता एवं विलासिनियों के कुलकी मुकुट वसुमती नाम की स्त्री थी । यहां सुमती का ह्रस्व इकार और दीर्घ ईकार दो होता है ।

(४) जब एक समय निटिलेक्षण अर्थात् भालनेत्र भगवान् रुद्रने रोषारुण ने की अग्नि से कामदेवको भस्म कर दिया तब कामदेव के सब सैन्य ने मानो भयभी हो उस रमणी को निर्दुष्ट समझकर अपने २ स्वरूप के अनुसार उसके अलग अङ्गों का आश्रयण करलिया । जिसमें भ्रमरपंक्ति केश, प्रेम का आकर चन्द्रमा कम

ुगलम् , सकलसैनिकाङ्गवीरो मलयसमीरो निःश्वासः, पथिकहृद्दलन-
रवाल प्रवालश्चाधरबिम्बम् , जयशङ्खो बन्धुरा लावण्यधरा कंधरा,
पूर्णकुम्भौ चक्रवाकानुकारौ पयोधरौ, ज्यायमाने मार्दवासमाने बिसलते
... गङ्गावर्तसनाभिर्नाभि , दूराकृ-
... , जयस्तम्भभूते सौन्दर्यभूते

* बालविबोधिनी *

ेन तत् निरस्कृतकमलमित्यर्थ , तस्या वदन मुख, (समभूदिव) जयध्वज इवाचर
ीति जयध्वजायमान , (केतन ध्वाजमस्त्रियाम्) कामस्य मीनध्वजत्वं प्रसिद्धमेव ।
ायया स्वपत्न्या युत समेतौ मीनोऽक्षियुगलं तस्या नेत्रद्वन्द्व (समभूदिव) अत्रा-
ियुगल प्रस्तुतमतो मीनस्यापि जायायुतत्वमपेक्षितम् । सकलसैनिकाना निखिलमदन
ैन्याना अङ्गवीर प्रधानयोध , मलयसमीरो दक्षिणानिल , मलयानिलस्य कामोद्दीप-
त्वात् । तस्या नि श्वास प्राणवायु , पथिकाना प्रोषिताना हृद्दलने हृदयभेदने कर-
ाल कृपाणरूप नूतनतरुपल्लवदर्शनेन पान्थाना हृदयमतितरा पीड्यते । प्रवाल-
केमलयश्च अधरबिम्ब तस्या ओष्ठाधरौ, जयशङ्ख कामस्य विजयध्वनिकारक-
ङ्खो बन्धुरा उन्नतावनता लावण्यधरा सौन्दर्यशालिनी तस्या कन्धरा ग्रीवा, पूर्ण-
ुम्भौ कामस्य विजययात्रायामपेक्षितौ जलपूर्णकलशौ चक्रवाकानुकारौ चक्रवाक
क्षिविशेष मनुकुरुत इति, तत्सदृशावित्यर्थ , पयोधरौ तस्या स्तनौ, ज्यायमाने
ौवासदृशौ, मार्दवे कोमलताया असमानेऽतुलनीयेऽतिकोमले इति शेष । बिसलते
ृणालद्वय बाहू तस्या भुजौ, बाह्वोर्मृणालसादृश्य कविप्रसिद्धम् । ईषत्फुल्ल स्वल्पवि-
कसितो लीलावतस कामस्य विलासभूषण कह्लारकोरक सौगन्धिककुड्मलो गङ्गाया
तदाख्यप्रसिद्धनद्या आवर्तस्य अम्भसा भ्रमस्य (स्यादावर्त्तोऽम्भसा भ्रम इत्यमर)

* बालक्रीडा *

ो जीतने वाला मुख, जयध्वजाचिह्न सपत्नीक मत्स्य नेत्रयुगल, सम्पूर्ण सेना में
धान वीर मलयानिल सुखवायु, पथिकों के हृदय को दलन करने में तलवार के
दृश प्रवाल अर्थात् नवपल्लव अधरोष्ठ, विजयशंख बन्धुरा एव लावण्यवती ग्रीवा,
ो पूर्णकुम्भ चक्रवाकतुल्य दो कुच, अत्यन्त कोमल काम के धनुष की डोरी बिसलता
ो भुजाएँ, कुछ खिला हुआ रक्तकमल कर्णभूषण गङ्गा के आवर्त्त को सदृश नाभि,
ोगियों के मनोरथ अर्थात् समाधि के द्वारा ब्रह्मानन्द प्राप्ति की अभिलाषा को दूर

विघ्नितयतिजनारम्भे रम्भे चोरुयुगम्, आतपत्रसहस्रपत्रं पादद्वयम्, अस्त्र भूतानि प्रसूनानि तानीतराण्यङ्गानि च समभूवन्निव ।

(५) विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसता सानन्तभोगलालिता सुमती वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि ।

* बालविबोधिनी *

सनाभिः सदृश स्तस्या नाभिः, दूरीकृतोऽपनीतो योगिनां तपश्चारिणां मनोरथो ऽभि नाभिलाषो येन स तादृशो जैत्ररथः कामस्य जयनशीलरथः अतिपीनमतिनि.. जघनं तस्याः कटिपुरोभागः, जयस्तम्भभूते कामस्य विजयस्तम्भस्वरूपे, सौन्दर्य भूते मनोरमत्वमधिगते, विघ्नितः विघ्नयुक्तः कृतो यतिजनानां संयमिनामारम्भो ध्यानोद्योगो याभ्यां ते, रम्भे कदल्यौ च तस्या ऊरुयुगं सक्थियुगलम्, आतपत्र छत्रं तद्रूपं कामस्य सहस्रपत्रं कमलं पादद्वयं तस्याश्चरणयुगम्, तानि प्रसिद्धानि अस्त्रभूतानि कामस्य बाणभूतानि प्रसूनानि पुष्पाणि अरविन्दादीनि इतराणि पूर्ववर्णि तभिन्नानि वसुमत्या अङ्गानि उदरादीनि समभूवन्निव जातानीव* ।

(५) विजितं समृद्ध्या तिरस्कृतममरपुर मिन्द्रनगरं येन तस्मिन् । अनन्त भोगेन नानासुखोपभोगेन लालिता पुष्टा । वसुमती पृथिवीव । सापि अनन्तस्य वासुकेः भोगेन फणेन मस्तकेनेति यावत् लालिता धृता । वसुमती महिषी । मग धराजेन राजहंसेन । अन्वभावि सम्भुक्ता ।

* बालक्रीडा *

करने वाला जैत्ररथ अतिपीन जघन, अतिसुन्दर एवं यतियों के योगाभ्यास में विघ्न पहुँचाने वाला काम का जयस्तम्भ कदली ऊरुयुगलः छत्ररूप कमल दो पैर एवं अस्त्रभूत पुष्प उसके शेष अङ्ग बन गये । अर्थात् उसके वे वे अङ्ग क्रमशः उस उस वस्तु के तुल्य हैं ।

(५) शोभामें देवताओं की पुरी को दवा देनेवाले पुष्पपुर में उस मगधराज ने अनन्त (शेषनाग) के भोग (फणों) से लालित (धारित) वसुन्धरा की तरह अगणित भोगपदार्थों से प्रसन्न वसुमती रानी के साथ सुखपूर्वक विहार किया ।

* उत्प्रेक्षा ।

(६) तस्य राज्ञः परमाविधेया धर्मपालपद्मोद्भवसितवर्मनामधेया धीरधिषणावधीरितविबुधाचार्यविचार्यकार्यसाहित्याः कुलामात्यास्त्रयोऽभूवन् ।

(७) तेषां सितवर्मणः सुमतिसत्यवर्माणौ, धर्मपालस्य सुमन्त्रसुमित्रकामपालाः, पद्मोद्भवस्य सुश्रुतरत्नोद्भवाविति तनयाः समभूवन् ।

(८) तेषु धर्मशीलः सत्यवर्मा संसारासारतां बुद्ध्वा तीर्थयात्राभिलाषी देशान्तरमगमत् ।

(९) विटनटवारनारीपरायणो दुर्विनीतः कामपालो जनकाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य भुवं बभ्राम ।

* बालविबोधिनी *

(६) परमाविधेया अतिविनीता । धीरधिषणया स्वतीक्ष्णबुद्ध्याऽवधीरितानि अवज्ञातानि विबुधाचार्यस्य बृहस्पतेरपि विचार्याणि विचारणीयानि कार्याणि साहित्यानि समृद्धा यैस्ते अतीवगम्भीरबुद्धय इत्यर्थः । कुलामात्या वंशपरम्परागत मन्त्रिणः ।

(७) तेषां कुलामात्यानां मध्ये । निर्धारणे षष्ठी ।

(८) संसारस्य असारतां नश्वरतया तुच्छताम् । देशान्तरमन्यदेशम् ।

(९) विटो धूर्तः, नटः शैलूषः, वारनारी वेश्या तासु परायणस्तत्पर आसक्त इत्यर्थः । दुर्विनीतो दुर्निवारोऽशिष्टो वा । जनकाग्रजन्मनोः पितुर्ज्येष्ठसहोदरस्य च । शासनमादेशम् ।

* बालक्रीडा *

(६) उस राजा के परम आज्ञाकारी और कुलपरम्पराप्राप्त धर्मपाल पद्मोद्भव एवं सितवर्मा ये तीन सचिव थे । जो अपनी गम्भीर बुद्धि के द्वारा विचारणीय कार्य में बृहस्पति की आवश्यकता को तुच्छ समझते थे ।

(७) उन में से सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा, धर्मपाल के सुमन्त्र सुमित्र एवं कामपाल तथा पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव पुत्र हुए ।

(८) उन पुत्रों में से धर्मशील सत्यवर्मा संसार की असारता को समझकर तीर्थयात्रा की इच्छा से देशान्तर में चला गया ।

(९) विट (भांड) नट एवं वेश्याओं में आसक्त एवं दुर्विनीत (बेपरवाह) कामपाल अपने पिता एवं बड़े भाइयों (सुमन्त्र एवं सुमित्र) की आज्ञा का उल्लंघन कर इधर उधर आवारा होकर घूमने लगा ।

(१०) रत्नोद्भवोऽपि वाणिज्यनिपुणतया पारावारतरणमकरोत् ।

(११) इतरे मन्त्रिसूनवः पुरन्दरपुरातिथिषु पितृषु यथापूर्वमन्वतिष्ठन् ।

(१२) ततः कदाचिन्नानाविधमहदायुधनैपुण्यरचितागण्यजन्यराजन्यमौलिपालिनिहितनिशितसायको मगधनायको मालवेश्वरं प्रत्यग्रसङ्ग्रमघस्मरं समुत्कटमानसारं मानसारं प्रति सहेलं न्यक्कृतजलधिनिर्घोषाहङ्का

* बालविबोधिनी *

(१०) पारावारतरणं समुद्रलङ्घनेन द्वीपान्तरगमनम् ।

(११) इतरे अन्ये । पुरन्दरपुरस्य महेन्द्रनगरस्यातिथिषु प्राघुणिके सत्सु, स्वर्गतेषु मृतेषु इति शेषः । यथापूर्वं पितृपुरुषानुक्रमेण । अन्वतिष्ठन् मन्त्रित्वमकुर्वन् ।

(१२) नानाविधानामनेकप्रकाराणां महतां विशालानामायुधानामस्त्राणां नैपुण्येन प्रयोगकौशलेन रचितेषु सम्पादितेषु अगण्येष्वसंख्येषु जन्येषु युद्धेषु राजन्यानां क्षत्रियाणां मौलिपालिषु किरीटप्रान्तभागेषु निहिता निक्षिप्ता निशिता स्तीक्ष्णाः सायका बाणा येन सः । विजितानेकभूपाल इत्यर्थः । मगधनायको राजहंसः । मालवेश्वरं मालवाधिपतिम् । प्रत्यग्रे नवीने संग्रामे युद्धे घस्मरं शत्रुभक्षणशीलम् । समुत्कटोऽति शयितो मानो बलगर्व एव सारः स्थिरांशो यस्य तम् । मानसारं तन्नामानं नरपतिं प्रति लक्षीकृत्य । सहेलं सावज्ञम् । न्यक्कृतास्तिरस्कृतो जलधेः सागरस्य निर्घोषाहङ्कारो निर्घोषविषयेऽभिमानो येन तथाविधेन भेरीझाङ्कारेण दुन्दुभिशब्देन हठिक

* बालक्रीडा *

(१०) और रत्नोद्भव वाणिज्य (व्यापार) में निपुण होने के कारण सामुद्र व्यवसाय में उतर पड़ा । अतः समुद्र को पार करने लगा ।

(११) और शेष मंत्रिपुत्र पिताओं के स्वर्ग चले जाने पर पहले की तरह अर्थात् पहले जैसे उनके पिता जिस पदपर काम करते थे वैसे ही उसी पद पर काम करने लगे ।

(१२) उसके बाद कभी नाना प्रकार के आयुधों की निपुणता से कई बार युद्ध करने से कुशल हुए राजाओं के मस्तकमें तीक्ष्ण बाण मारने वाला मगधराज, थोड़ेही दिन पहिले संग्राम में विजय प्राप्त करनेसे अतिअभिमानी मालवेश्वर मानसार

रेण भेरीझाङ्कारेण हठिकाकर्णनाक्रान्तभयचण्डिमानं दिग्दन्तावलवलयं विघूर्णयन्निजभरनमन्मेदिनीभरेणायस्तभुजगराजमस्तकबलेन चतुरङ्गबलेन संयुत: सङ्ग्रामाभिलाषेण रोषेण महताविष्टो निर्ययौ।

(१३) मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रह सविग्रह इव साग्रहोऽभिमुखीभूय भूयो निर्जगाम।

* बालविबोधिनी *

कर्णनात् सहसा श्रवणात् आक्रान्त प्राप्तो भयस्य चण्डिमा चण्डत्वं यं तम्। दिशा ये दन्तावला गजा ऐरावतादयस्तेषां वलय मण्डल विघूर्णयन् सञ्चालयन्। निजभरेण स्वभारेण नमन्त्या अधोगच्छन्त्या पृथिव्या भरेण भारेण। अत्र करणे तृतीया। आयस्तं क्लिष्टमतिपीडित भुजगराजस्य वासुकेर्मस्तकबलं शिरसा धारणसामर्थ्यं येन तथाभूतेन, अत्र कर्त्तरि तृतीया। चतुरङ्गबलेन गजवाजिरथपदातिरूप चतुर्विधसैन्येन संयुत सहित। सङ्ग्रामाभिलाषेण युद्धाकाङ्क्षया। महता अतिशयितेन रोषेण क्रोधेनाविष्ट समाक्रान्त सन्। मगधराजो निर्ययौ निर्जगाम। युद्धमायोधन जन्यम्। मौलि किरीटे धम्मिल्ले चूडायाम्। पाळि कर्णलताग्रे स्यात्प्रदेशे पङ्क्तिचिह्नयो। दन्ती दन्तावलो हस्तीति च कोश:।*

(१३) मालवनाथ मानसार। अनेके रणस्थाने अनेकपाना हस्तिना यूथं समूह: सनाथो युक्त। द्विरदोऽनेकपो द्विप इत्यमर। विग्रह समर। सविग्रह सशरीर मूर्त्तिमान्। साग्रह युद्धाभिनिवेशवान्। भूय पुनरपि।

* बालक्रीडा *

के ऊपर क्रुद्ध होकर समुद्रीय महाघोष के अहंकार को दबा देनेवाले भेरियों की ध्वनि को जबर्दस्ती सुनने से भयभीत हुए दिग्गजों को कँपाता हुआ अपने भारसे दबी हुई पृथ्वी के बोझ से शेषनाग के मस्तक को विकल कर देने वाली चतुरङ्गिणी (हाथी घुड़सवार पैदल एवं आयुधों से सुसज्जित) सेनाको लेकर युद्ध करने के लिये निकल पड़ा।

(१३) मालवेश्वर भी अनेक हाथियों की सेना को साथ लेकर आग्रह के साथ साक्षात् युद्धस्वरूप होकर पुन सामना करने के लिये निकल पड़ा।

* अत्र असम्बन्धे सम्बन्धरूपातिशयोक्तिरनुप्रासश्चैतयोः संसृष्टि:। घस्मर इत्यत्र च 'सृघस्यद' क्मरच्' इत्यनेन क्मरच्।

† उत्प्रेक्षानुप्रासयो: सङ्कर:।

(१४) तयोरथ रथतुरगखुरक्षुण्णक्षोणीसमुद्भूते करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौतमूले नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकन्याजनजवनिकापटमण्डप इव वियत्तलव्याकुले धूलीपटले दिविपदध्वनि धिक्कृतान्यध्वनिपटहध्वान बधिरिताशेषदिगन्तरालं शस्त्राशस्त्रि हस्ताहस्ति परस्पराभिहतसैन्य जन्यमजनि ।

* बालविबोधिनी *

(१४) अथ निर्गमनानन्तरम् । तयोर्मगधराजमालवराजयोः । रथैः रथचक्रैः तुरगाणां अश्वानां खुरैः शफैः क्षुण्णायाः पिष्टायाः क्षोण्याः पृथिव्याः समुद्भूते उत्थिते उत्पन्ने वा । धूलीपटले इत्यस्य विशेषणम् । करिघटानां हस्तिसमूहानां कटेभ्यो गण्डेभ्यः स्रवन्त्या क्षरन्त्या मदधारया मदजलप्रवाहेण धौतं क्षालितं मूलं मूलदेशो यस्य तस्मिन् । नव्यवल्लभानां नवीनरमणानां वरणाय आगतस्य युद्धक्षेत्रे समुपस्थितस्य दिव्यकन्याजनस्याप्सरःसमूहस्य जवनिकया तिरस्करिण्या युक्तः पट मण्डपः पटवास स्तस्मिन्निव । वियत्तलव्याकुले नभस्तलसम्भृते । धूलीपटले पांशु-समूहे । दिवि सीदन्ति ये ते दिविषदो देवा स्तेषामध्वनि मार्गे आकाशे इत्यर्थः । धिक्कृत स्तिरस्कृतः दूरीकृत इति यावत्, अन्येषां ध्वनिः शब्दो येन तादृशेन पटहध्वानेन ढक्काशब्देन बधिरितानि बधिरीकृतानि अशेषाणि दिगन्तरालानि तत्रस्थ जना इत्यर्थः यस्मिन् तत् । शस्त्रैः शस्त्रैश्च प्रहृत्य यद्युद्धं प्रवृत्तमिति शस्त्राशस्त्रि । हस्तैश्च हस्तैश्च प्रहृत्य यत्प्रवृत्तं तद् हस्ताहस्ति । परस्परस्य अभिहतं समाक्रान्तं सैन्यं यस्मिन् तत् । जन्यं युद्धम् ।

* बालक्रीडा *

(१४) इसके बाद उन दोनों में युद्ध शुरू होगया । जिस युद्ध में रथके पहिये एवं घोड़ों की टाप से पिसी हुई पृथ्वी से उत्पन्न और हस्तिसमूह के कपोलों से झरने वाली मदधारा से धौतमूल धूलिपटल नूतन पतियों का वरण करने के लिये आई हुई कन्याओं के लिये पड्दे की तरह आकाश में फैल रहा है । और अन्य ध्वनियों को दबाने वाली युद्ध के नगाड़ों की ध्वनियों से समस्त दिशायें बधिर हो गई हैं अर्थात् जिसमें युद्ध के नगाड़ों की ध्वनि के सिवाय और कुछ नहीं सुनाई पड़ता है । एवं जिसमें शस्त्र के बदले शस्त्र से और हाथ के बदले हाथ से आपुस में मार काट हो रही है ।

(१५) तत्र मगधराजः प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलं मालवराजं जीवग्राहमभिगृह्य कृपालुतया पुनरपि स्वराज्ये प्रतिष्ठापयामास।

(१६) ततः स रत्नाकरमेखलामिलामनन्यशासनां शासदनपत्यतया नारायणं सकललोकैककारणं निरन्तरमर्चयामास।

(१७) अथ कदाचित्तदग्रमहिषी 'देवि देवेन कल्पवल्लीफलमाप्नुहि' इति प्रभातसमये सुस्वप्नमवलोकितवती।

(१८) सा तदा दयितमनोरथपुष्पभूतं गर्भमधत्त।

बालविबोधिनी

(१५) तत्र युद्धे। प्रक्षीणं हतविध्वस्तं सकलं समस्तं सैन्यमण्डलं यस्य तम्। जीवग्राहमभिगृह्य जीवन्तमेव कृत्वा।

(१६) रत्नाकरः समुद्रो मेखला रशना यस्यास्ताम्। ससागरामित्यर्थः। इलां पृथ्वीम्। अनन्यशासनाम्—न विद्यतेऽन्यस्य नृपस्य शासनं यस्यां ताम्। अनपत्यतया अपुत्रतया। एककारणं आदिहेतुम्। नारायणं कृष्णम्। क्षमेत्यमरः।

(१७) तस्य राजहंसस्य। अग्रमहिषी प्रधानराज्ञी। देवेन राज्ञा सह। कल्पवल्लीफलं कल्पलताफलम्।

(१८) दयितस्य वल्लभस्य यो मनोरथः पुत्रप्राप्तिरूपोऽभिलाषः स्तदेव फलं तस्य पुष्पभूतं कुसुममिव भूतम्।

बालक्रीडा

(१५) इस युद्ध में मगधराज राजहंस ने सम्पूर्ण सेना के मारे जाने पर बचे हुए मालवेश्वर मानसार को जीते हुए को पकड़कर कृपा करके फिरभी उस को अपने राज्य पर बैठा दिया।

(१६) इस के बाद वह मगधराज समुद्र पर्यन्त पृथ्वी को अपने अधीन करके शासन करता हुआ अनपत्य होनेके कारण सकल लोकके आदि कारण भगवान् नारायण को निरन्तर सेवा करने लगा।

(१७) एक दिन उसकी पटरानी ने ब्राह्म मुहूर्त में "हे देवि ! देव (राजा) से तुम कल्पवृक्ष के फल को लेवो" ऐसा स्वप्न देखा।

(१८) उसके बाद उसने पति के मनोरथ का पुष्पभूत गर्भको धारण किया।

(१९) राजापि सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः सुहृन्नृपमण्डलं समाहूय निजसम्पन्मनोरथानुरूपं देव्याः सीमन्तोत्सवं व्यधत्त ।

(२०) एकदा हितैः सुहृन्मन्त्रिपुरोहितैः सभायां सिंहासनासीनो गुणैरहीनो ललाटतटन्यस्ताञ्जलिना द्वारपालेन व्यज्ञापि—'देव, देवसंदर्शनलालसमानसः कोऽपि देवेन विरच्यार्चनार्हो यतिर्द्वारदेशमध्यास्ते' इति ।

(२१) तदनुज्ञातेन तेन स संयमी नृपसमीपमनायि ।

(२२) भूपतिरायान्तं तं विलोक्य सम्यग्ज्ञाततदीयगूढचारभावो-

* बालविबोधिनी *

(१९) सम्पदा समृद्ध्या न्यक्कृत स्तिरस्कृत आखण्डल इन्द्रो येन सः । समृद्ध्या महेन्द्रादप्यधिकः । सुहृदां मित्रभूतानां नृपाणां मण्डलं समूहम् । स्वस्य सम्पदः समृद्धेः मनोरथस्याभिलापस्य चानुरूपं सदृशम् । सीमन्तोत्सवं संस्कारविशेषम् ।

(२०) हितैः हिताकाङ्क्षिभिः । गुणैः राजगुणै रहीनोऽन्यूनः सर्वगुणसम्पन्न इत्यर्थः । ललाटतटे*भालदेशे न्यस्तो धृतोऽञ्जलिर्येन तेन । व्यज्ञापि निवेदितः । देवस्य भवतः सन्दर्शनेऽवलोकने लालसमभिलाषि मानसं यस्य सः । देवेन भवता । विरच्यां कर्त्तव्यां अर्चनां पूजामर्हतीति । भवतोऽपि पूज्य इत्यर्थः । यतिः संन्यासी ।

(२१) तदनुमतेन राज्ञादिष्टेन । तेन द्वारपालेन । संयमी यतिः । अनायि नीतः ।

(२२) सम्यक् सुष्ठु ज्ञातोऽवगतस्तदीय स्तत्सम्बन्धी गूढः प्रच्छन्न श्चारभा-

* बालक्रीडा *

(१९) ऐश्वर्य में इन्द्र से भी बढ़े हुए राजा ने भी मित्र राजमण्डल को बुलाकर अपनी सम्पत्ति एवं मनोरथ के अनुरूप रानी का सीमान्तोत्सव किया ।

(२०) एक दिन गुणी मगधराज अपने हितकारी मित्र मंत्री एवं पुरोहितों के साथ सभा में सिंहासन पर बैठा हुआ था उसी समय द्वारपाल ने कोर्निस करके निवेदन किया । हे देव ? आप के दर्शन के लिये पूजा के योग्य कोई सन्यासी ड्योढ़ी पर खड़ा है ।

(२१) आज्ञा पाकर द्वारपाल उस सन्यासी को राजा के पास ले आया ।

(२२) राजा ने भी उसको देख कर यह कोई गुप्तचर है ऐसा समझ कर

* भालस्थले इति पाठान्तरम् ।

निखिलमनुचरनिकरं विसृज्य मन्त्रिजनसमेतः प्रणतमेनं मन्दहासम-भाषत–'ननु तापस, देशं सापदेशं भ्रमन्भवांस्तत्र तत्र भवदभिज्ञातं कथयतु' इति।

(२३) तेनापि भूभ्रमणबलिना प्राञ्जलिना—'देव, शिरसि देव-स्याज्ञामादायैनं निर्दोषं वेषं स्वीकृत्य मालवेन्द्रनगरं प्रविश्य तत्र गूढतरं वर्तमानस्तस्य राज्ञः समस्तमुदन्तजातं विदित्वा प्रत्यागमम्।

(२४) मानी मानसारः स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये संपराये भवतः

* बालविबोधिनी *

यः चरस्तं येन सः। प्रणतं कृतनमस्कारम्। एनं यतिम्। मन्दहासं क्रियाविशेषण-मिदम्। ईषद् हसन्नित्यर्थः। सापदेशं सकपटम्। यतिवेशच्छलेनेत्यर्थः। तत्र तत्र तेषु तेषु स्थानेषु। भवता त्वया। अभिज्ञातमवगतम्।

(२३) अपि कथितम्। भुवः पृथिव्याः भ्रमणे पर्यटनविषये बली समर्थ-स्तेन। प्राञ्जलिना बद्धाञ्जलिनेति तेनेत्यस्य विशेषणम्। देव राजन्। आदायाङ्गीकृत्य। निर्दोषं दोषवर्जितम्। वेषं यतिरूपम्। तत्र मालवेन्द्रनगरे। गूढतरमतिशयेन गूढं यथा स्यात्तथा। उदन्तजातं वृत्तान्तसमूहम्।

(२४) स्वसैनिकानां निजभटानामायुष्मत्ताया आयुष्यस्यान्तरायो विघ्नस्त-स्मिन्, सैन्यसंहारकारिणि इति तात्पर्यम्। संपराये युद्धे। युद्धायत्योः संपराय

* बालक्रीडा *

सब नौकरों को हटवा दिया और मंत्रियों सहित (राजा) प्रणाम करते हुए यति को हंसकर बोला हे तापस ! इस कपटवेश से देशों में घूमते हुए आपने कोई बात जानी हो तो कहो।

(२३) घूमने में बलवान् वह यति कोर्निस करके कहने लगा। देव ! आपकी आज्ञा को शिरोधार्य करके और अशंकनीय इस वेश को स्वीकार करके मालवेन्द्र के नगर में गया। वहां खूब छिपकर उसके समस्त वृत्तान्तों को जान कर आया हूँ।

(२४) महाभिमानी मानसार अपनी सेना के आयुष्य में अन्तराय युद्ध में पराजित होकर लज्जित होगया अतः वीतदय अर्थात् शारीरिक मानसिक एवं

पराजयमनुभूय वैलक्ष्यलक्ष्यहृदयो वीतदयो महाकालनिवासिनं काली- लासिनमनश्वरं महेश्वरं समाराध्य तपःप्रभावसंतुष्टात् तस्मादेकवीरारातिघ्नीं भयदां गदां लब्ध्वात्मानमप्रतिभटं मन्यमानो महाभिमानो भवन्तमभि- योक्तुमुद्युङ्क्ते। ततः परं देव एव प्रमाणम्' इति।

(२५) तदालोच्य निश्चिततत्कृत्यैरमात्यै राजा विज्ञापितोऽभूत्। देव, निरुपायेन देवसहायेन योद्धुमरातिरायाति। तस्मादस्माकं यु- सांप्रतमसांप्रतम्। सहसा दुर्गसंश्रयः कार्यः इति।

* बालविबोधिनी *

-त्यमरः। वैलक्ष्यस्य पराजयजनितदैन्यस्य लक्ष्यं विषयीभूतं हृदयं यस्य सः वीतदयो निर्दयः। महाकाले तदाख्यस्थाने निवासोऽस्त्यस्येति तम्। कालीवि- लासिनं पार्वतीवल्लभम्। अनश्वरं विनाशरहितम्। तपसः प्रभावेण सन्तुष्टात् प्रीतात् अस्मान्महेश्वरात्। एकमेकसंख्यकं वीरं शूरम् अरातिं शत्रुं हन्तीति ताम्। भय भीतिदात्रीम्। अप्रतिभटमप्रतिद्वन्द्विनम्। महानतिशयितोऽभिमानोऽहङ्कारो य- सः। अभियोक्तुमाक्रमितुम्। उद्युङ्क्ते चेष्टते। देव एव भवानेव। प्रमाणं कर्तव्य- निर्णायकः।

(२५) तत्र शत्रुविषये यत्कृत्यं करणीयं तन्निश्चितं निर्णीतं यैस्तैः। अ- मन्त्रिभिः। निर्नास्त्युपायः प्रतीकारो यस्य तेन, अप्रतिकार्येणेत्यर्थः। अ- न्प्रतमयुक्तम्। युक्ते द्वे सान्प्रतमित्यमरः। सहसा सत्वरम्। दुर्गसंश्रयः दुर्गप्रवेश

* बालक्रीडा *

वाचिक कष्टों को सहता हुआ महाकालनिवासी* कालीविलासी एवं अनश्वर महे- को आराधना एवं तप से सन्तुष्ट करके प्रधान वीर को मारनेवाली भयप्रद गदा प्राप्तकर अपने को योद्धाओं में बेजोड़ मानता हुआ आप से लड़ने के लिए उ- कर रहा है इसके बाद क्या कर्तव्य है वह आप जानें।

(२५) इस कथन को सुनकर विचार द्वारा एक होकर मंत्रियों ने राज- निवेदन किया देव! शत्रु निरुपाय होकर देवता की सहायता प्राप्त कर लड़ने लिये आरहा है। अतः इस समय हम लोगों का युद्ध का असामयिक होगा। समय तो दुर्गका ही आश्रय करना चाहिये।

* उज्जैन में महाकालका निवासस्थान है।

(२६) तैर्बहुधा विज्ञापितोऽप्यखर्वेण गर्वेण विराजमानो राजा तद्वाक्यमकृत्यमित्यनादृत्य प्रतियोद्धुमना बभूव ।

(२७) शितिकण्ठदत्तशक्तिसारो मानसारो योद्धुमनसामग्रीभूय सामग्रीसमेतोऽक्लेशं मगधदेशं प्रविवेश ।

(२८) तदा तदाकर्ण्य मन्त्रिणो भूमहेन्द्रं मगधेन्द्रं कथंचिदनुनीय रिपुभिरसाध्ये विन्ध्याटवीमध्येऽवरोधान्मूलबलरक्षितान्निवेशयामासुः ।

(२९) राजहंसस्तु प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीव्रगत्या निर्गत्याधिक्रुधं द्विषं रुरोध ।

* बालविबोधिनी *

(२६) बहुधा बहुप्रकारेण । अखर्वेण महता । अकृत्यमननुष्ठेय कर्ममनुचित त्वस्यप्रकाशकत्वादित्यर्थः । अनादृत्य अस्वीकृत्य । प्रतियोद्धुमना युद्धाभिलाषी ।

(२७) शितिकण्ठेन शिवेन दत्ताऽर्पिता शक्तिः प्रहरणविशेष एव सारो बल स्य स । योद्धुमनसां युद्धाकाङ्क्षिणाम् । अग्रीभूय पुरो भूत्वा । सामग्रीसमेत· युद्धोपकरणसहित· ।

(२८) भूमहेन्द्रं पृथिवीन्द्रम् । कथंचिदतियत्नेन । असाध्ये दुष्प्रवेश्ये । अवरोधान् ाजस्त्रिय । मूलबलेन प्रधानसैन्येन रक्षितान् गुप्तान् । निवेशयामासु· स्थापयामासु ।

(२९) प्रशस्तैरत्युत्कृष्टैर्वीतदैन्यैस्त्यक्तकार्पण्यै· निर्भयैरित्यर्थ· । सैन्यैः समेतो क्त । तीव्रगत्या महता वेगेनेत्यर्थ । अधिक्रुधं अतिक्रुद्धम् ।

* बालक्रीडा *

(२६) इस प्रकार अमात्यवर्ग के बहुत समझाने पर भी अखर्व गर्व से युक्त ाजा उनके कहने की परवाह न करके लड़ने के लिये तैयार हो गया ।

(२७) इधर मानसार भी भगवान् रुद्र की दी हुई शक्ति के बल पर सम्पूर्ण ोद्धाओं में मुखिया होकर युद्धसामग्री के साथ क्लेश के बिना मगध देश में घुस गया ।

(२८) मानसार के आने की बात को सुन कर मन्त्रीलोगों ने भूमि के इन्द्र गधेश को किसी प्रकार मनाकर अन्त पुर की रानियों को प्रधान सेना की रक्षा में त्रुओं से अगम्य विन्ध्याटवी में भेजवा दिया ।

(२९) राजहंस भी प्रशस्त एवं दैन्यरहित सेना को साथ लेकर बड़ी शीघ्रता युद्ध के लिये निकल पड़ा और उसने क्रुद्ध शत्रु को घेर लिया ।

(३०) परस्परबद्धवैरयोरेतयोः शूरयोस्तदा तदालोकनकुतूहलागतगगनचराश्चर्यकारणे रणे वर्तमाने जयाकांक्षी मालवदेशरक्षी विविधायुधस्थैर्यचर्याञ्चितसमरतुलितामरेश्वरस्य मगधेश्वरस्य तस्योपरि पुरा पुरारातिदत्तां गदां प्राहिणोत् ।

(३१) निशितशरनिकरशकलीकृतापि सा पशुपतिशासनस्यावन्ध्यतया सूतं निहत्य रथस्थं राजानं मूर्छितमकार्षीत् ।

(३२) ततो वीतप्रग्रहा अक्षतविग्रहा वाहा रथमादाय दैव . . . पुरशरण्यं महारण्यं प्राविशन् ।

* वालविवोधिनी *

(३०) परस्परेण बद्धं धृतं वैरं याभ्यां तयोः । तस्य युद्धस्यालोकने दर्श यत्कुतूहलं कौतुकं तेनागतानां युद्धक्षेत्रे समुपस्थितानां गगनचराणामाकाशचारि देवानां आश्चर्यकारणे विस्मयहेतुभूते । मालवदेशस्य रक्षी रक्षिता मानसारः । वि धानां नानाप्रकाराणामायुधानामस्त्राणां स्थैर्येण स्थिरतया चर्यया प्रयोगेणाञ्चिते य समरे तुलितः समीकृतोऽमरेश्वर इन्द्रो येन तस्य । पुरा प्राक् । पुरारातिदत्तां म श्वरार्पिताम् । प्राहिणोत् न्याक्षिपत् प्राहरदित्यर्थः ।

(३१) निशितेन तीक्ष्णेन शरनिकरेण बाणसमूहेन शकलीकृता खण्डीकृता सा गदा । पशुपतिशासनस्य शिववाक्यस्य । अवन्ध्यतया अव्यर्थतया । सूतं सारथि

(३२) वीता मुक्ताः प्रग्रहा रश्मयो येषां ते । अक्षतो विग्रहः शरीरं येषां वाहा अश्वाः । वाजिवाहार्वगन्धर्वेत्यमरः । अन्तःपुरशरण्यं राजस्त्रीणामाश्रयभूत

* बालक्रीडा *

(३०) परस्पर बद्धवैर इन दोनो शूरो का जब युद्ध देखने के लिये आये गगनचर भी लोगो के आश्चर्य का कारण युद्ध होने लगा । उसने तब जयाकांक्षी मा वेश विविध आयुओ को स्थिरता से चलाने मे उत्तम अत एव युद्ध मे देवेन्द्र की व वरी करनेवाले मगधेश्वर के ऊपर रुद्र की दी हुई गदा को फेंका ।

(३१) पैने २ वाणो से टुकड़े २ की गई वह गदा भगवान् पशुपति आज्ञा के अमोघ होनेसे सारथि को मारकर रथमें बैठे हुए राजा को मूर्च्छित कर

(३२) उसके वाद अक्षत शरीर एवं सारथि के न रहने से बेलगाम रथ को लेकर दैवगति से जिस वन मे रानियां थीं, वहां पहुँच गये ।

(३३) मालवनाथो जयलक्ष्मीसनाथो मगधराज्यं प्राज्यं समाक्रम्य पुष्पपुरमध्यतिष्ठत्।

(३४) तत्र हेतिततिहतिश्रान्ता अमात्या दैवगत्यानुत्क्रान्तजीविता निशान्तवातलब्धसंज्ञाः कथंचिदाश्वस्य राजानं समन्तादन्वीक्ष्यानवलोकितवन्तो दैन्यवन्तो देवीमवापुः।

(३५) वसुमती तु तेभ्यो निखिलसैन्यक्षतिं राज्ञोऽदृश्यत्वं चाकर्ण्योद्विग्ना शोकसागरमग्ना रमणानुगमने मतिं व्यधत्त।

(३६) 'कल्याणि, भूरमणमरणमनिश्चितम्। किञ्च दैवज्ञकथितो

* बालविबोधिनी *

(३३) जयलक्ष्म्या विजयश्रिया सनाथो युक्तः। प्राज्यं प्रभूतं विशालमित्यर्थः।

(३४) तत्र महारण्ये। हेतीनामस्त्राणां ततिभिः समुदायैर्हत्या प्रहारेण श्रान्ताः क्लान्ताः। दैवगत्या शुभादृष्टवशेन। अनुत्क्रान्तं न निर्गतं जीवितं प्राणा यथा ते। निशान्तवातेन प्राभातिकवायुना लब्धा पुनः प्राप्ता संज्ञा चैतन्यं यैस्ते। समन्तादितस्ततः। अन्वीक्ष्य अन्विष्य। दैन्यवन्तोऽतिविषण्णाः। देवीं महिषीं वसुमतीम्।

(३५) तेभ्योऽमात्येभ्यः। तत्सकाशादित्यर्थः। निखिलसैन्यक्षतिं सकलसैन्यविनाशम्। अदृश्यत्वमन्तर्धानम्। आकर्ण्य श्रुत्वा। उद्विग्ना व्याकुला। रमणानुगमने पतिमनु मरणे मतिं व्यधत्त निश्चयं कृतवती।

(३६) कल्याणि हे मङ्गलमयि! राज्ञीसम्बोधनमेतत्। भूरमणस्य राज्ञो मरणं

* बालक्रीडा *

(३३) मालवेश्वर भी विजयलक्ष्मी को पाकर समस्त मगधराज्य को आक्रान्त कर पुष्पपुर में राजा बनकर बैठ गया।

(३४) युद्ध में आयुधों के आघात से मूर्च्छित किन्तु दैवगति से जीवित अमात्य लोग प्रातःकाल की वायु के स्पर्श से चैतन्य पाने से किसी प्रकार स्वस्थ हो चारों तरफ खोजने पर भी राजा को नहीं पाकर दीनता के साथ रानी के पास गये।

(३५) उनसे सम्पूर्ण सेना का विनाश एवं राजा का अदृश्य हो जाना सुनकर उद्विग्न तथा शोकसमुद्र में मग्न वसुमती ने राजा के पीछे मरने का निश्चय कर लिया।

(३६) "कल्याणि! राजा का मरना अनिश्चित है और दैवज्ञों ने बतलाया

मथितोद्धताराति: सार्वभौमोऽभिरामो भविता सुकुमारः कुमारस्त्वदुदरे वसति । तस्मादद्य तव मरणमनुचितम्' इति भूपितभाषितैरमात्यपुरोहितैरनुनीयमानया तया क्षणं क्षणहीनया तूष्णीमस्थायि ।

(३७) अथार्धरात्रे निद्रानिलीननेत्रे परिजने विजने शोकपारावारमपारमुत्तर्तुमशक्नुवती सेनानिवेशदेशं निःशब्दलेशं शनैरतिक्रम्य य[illegible] संसक्ततया तदानयनपलायनश्रान्ता गन्तुमक्षमाः क्षमापतिरथ्याः पथ्याकुलाः पूर्वमतिष्ठंस्तस्य निकटवटतरोः शाखायां मृतिरेखायामिव क्वचि-

* बालविबोधिनी *

मृत्युः । दैवज्ञैर्ज्यौतिषिकैः । कथित आदिष्टः । मथिता मर्दिता उद्धता दृप्ता अरातयः शत्रवो येन सः । मथिष्यमाणा इत्यर्थे मथिता इति । सार्वभौमश्चक्रवर्त्ती । अभिरामो मनोहरः । भविता भावी जनिष्यमाण इत्यर्थः । सुकुमारः कोमलः । कुमारः पुत्रः । तस्मात् गर्भवत्त्वात् । अनुचितमयुक्तम् । भूपितमलङ्कृतं शोभनमिति भावः भाषित कथनं येषां तैः । क्षणहीनया उत्सवशून्यया । अस्थायि स्थितम् । स्थाधातोर्भावे लुङ् ।

(३७) अर्धरात्रे निशीथे । निद्रया निलीने परिमिलिते नेत्रे नयने यस्य तस्मिन् । परिजनेऽनुचरमण्डले । विजने निर्जने एकान्ते इत्यर्थः । शोकपारावारं शोकसागरम् । अपारं दुस्तरम् । उत्तर्तुं लङ्घयितुम् । सेनानिवेशस्य शिविरस्य दे[illegible] प्रदेशम् । निर्नास्ति शब्दस्य लेशो लवोऽपि यस्मिंस्तद् यथा तथा । संसक्ततया संलग्नतया । तस्य राज्ञः आनयने वहने श्रान्ताः परिश्रान्ताः अतएव गन्तुं चलितुम् अक्षमा असमर्थाः । क्षमापतेः राज्ञो राजहंसस्य। रथ्या अश्वाः । पथि मार्गे अ

* बालक्रीडा *

है कि तुम्हारे उदर में शत्रुओं को मारनेवाला सार्वभौम सुन्दर एवं सुकुमार कुमार है । अतः आज तुम्हारा मरना अनुचित है" इस प्रकार प्ररोचक वाक्यों के द्वारा अमात्य एवं पुरोहितों ने रानी को समझाया । जिस से वह रानी थोड़ी देर के लिये निरुत्सव होकर निश्चेष्ट होगई ।

(३७) इस के बाद अर्धरात्रि में सब सेवकवर्ग के सोजाने पर एकान्त अपार शोकसमुद्र को पार करने में असमर्थ शान्त सेना के पड़ाव को धीरे पार करके जिस स्थान में रथ के फंस जाने से उसको लेकर दौड़ने से थके हुए अतएव चलने में असमर्थ घोड़े व्याकुल होकर पहले से ही ठहरे हुए थे, उसी

सी कलकल-कण्ठ-कण्ठा साश्रुकण्ठा व्यलपत्—'लावण्योपमितपुष्पसायक, भूनायक, भवानेव भाविन्यपि जन्मनि वल्लभो भवतु' इति।

(३८) तदाकर्ण्य नीहारकरकिरणनिकरसम्पर्कलब्धावबोधो मागधो गाधरुधिरविक्षरणनष्टचेष्टो देवीवाक्यमेव निश्चिन्वानस्तन्वानः प्रियवचनानि शनैस्तामाह्वयत्।

* बालविबोधिनी *

...गमनं ...तिशयश्रान्ता। निकटवटतरोः समीपस्थवटवृक्षस्य। मृतेर्मरणस्य ...लेखा चिह्नभूतेति भावः तस्याम्। बन्धनं पाशम्। मृतिसाधनं मरणसाधकम्। ...विधाय। मर्तुं कामोऽभिलाषो यस्याः सा। वाङ्माधुर्यो वचनमाधुर्येण ...तिरस्कृतः कलकण्ठस्य कोकिलस्य कण्ठो यया सा। साश्रुकण्ठा सगद्गदस्वरा। व्यलपत् रुरोद। लावण्येन देहसौन्दर्य्येण उपमितस्तुलितः पुष्पसायकः कामो येन तत्सम्बोधने। भूनायक भूपते। भाविनि भविष्यति। वल्लभः पतिः।

(३८) नीहाराः शीतलाः कराः किरणा यस्य सः नीहारकरश्चन्द्रस्तस्य किरणनिकरस्य मयूखसमूहस्य सम्पर्केण संस्पर्शेन लब्धः प्राप्तोऽवबोधश्चैतन्यं येन सः। मागधो मगधाधिपतिः। अगाधस्य प्रभूतस्य रुधिरस्य शोणितस्य विक्षरणेन विनिर्गतोऽपगमेन नष्टा विलुप्ता चेष्टा दैहिकप्रयत्नो यस्य सः। देवीवाक्यं वसुमतीविलापमेव निश्चिन्वानः देव्येवेयं नान्या विलपतीति निश्चयं कुर्वन्। तन्वानो विस्तारयन्।

* बालक्रीडा *

...स वटवृक्ष की मृत्युरेखा जैसी किसी शाखा में लिये 'धोती के ऊपर' ओढ़ने के वस्त्र की फांसी बनाकर मरने के उद्यत होकर कोकिल के स्वर को तिरस्कृत करनेवाले स्वर से विलाप करने लगी कि हे लावण्य में कामदेव के समान राजन्! आप ही मेरे ...वी जन्म में भी वल्लभ होवें।

(३८) रुधिर के अधिक निकल जाने पर निश्चेष्ट होने पर भी चन्द्रकिरणों के सम्पर्क से संज्ञाप्राप्त मगधेश्वर विलाप को सुनकर देवी का ही यह विलाप है ऐसा निश्चय करके मीठे स्वर से धीरे से उसको बुलाया।

(३९) सा ससंभ्रममागत्यामन्दहृदयानन्दसंफुल्लवदनारविन्दा ... पोषिताभ्यामिवानिमिषिताभ्यां लोचनाभ्यां पिबन्ती विकस्वरेण ... पुरोहितामात्यजनमुच्चैराहूय तेभ्यस्तमदर्शयत् ।

(४०) राजा निटिलतटचुम्बितनिजचरणाम्बुजैः प्रशंसितदैवमाहात्म्यैरमात्यैरभाणि—'देव, रथ्यचयः सारथ्यपगमे रथं रभसादरण्यमनयत्' इति ।

(४१) तत्र निहतसैनिकग्रामे संग्रामे मालवपतिना ... तदुर ... तिन

* बालविबोधिनी *

(३९) ससम्भ्रमं सत्वरम् । अमन्देन प्रचुरेण हृदयानन्देन हर्षेण संफुल्लं सम्यग् विकसितं वदनारविन्दं मुखकमलं यस्याः सा । तं राजानम् । उपोषिताभ्यां दर्शनार्थमत्युत्कण्ठिताभ्यामिवेति क्रियोत्प्रेक्षा—अतएव अनिमिषिताभ्यां निर्निमेषाभ्यां लोचनाभ्यां नयनाभ्यां पिबन्ती सादरं विलोकयन्ती । विकस्वरेण अतिस्पष्टेन तेभ्यः पुरोहितामात्येभ्यः । तं राजानम् ।

(४०) निटिलतटेन भालस्थलेन चुम्बितं स्पृष्टं निजचरणाम्बुजं ... यैस्तैरमात्यैरित्यस्य विशेषणम् । प्रशंसितं स्तुतं दैवस्यादृष्टस्य माहात्म्यं प्रभा... यैस्तैः । अभाणि–शब्दार्थभणधातोः कर्मणि लुङ् । कथित इत्यर्थः । रथं वहन्तीति रथ्या अश्वास्तेषां चयः समूहः । सारथेः सूतस्यापगमे विनाशे सतीति शेषः । रभसाद् वेगात् । इत्यन्तं अभाणीत्यस्य कर्म ।

(४१) निहतो निःशेषं विनष्टः सैनिकानां योधानां ग्रामः समूहो यस्मिन्

* बालक्रीडा *

(३९) मगधेश्वर के आह्वान से जनित अत्यन्त आनन्द से उस रानी का मुखकमल खिल गया और वह बड़े आराम के साथ आकर व्रती की नाईं निर्निमेष नेत्रों से उसको देखती हुई स्पष्ट एवं उच्च स्वर से पुरोहित और अमात्यलोग को बुलाया और राजा के दर्शन करा दिया ।

(४०) ईश्वर के अनुग्रह की प्रशंसा करते हुए अमात्यों ने अभिवादन कर राजा से निवेदन किया—राजन् ! मालूम होता है घोड़े सारथि के न रहने रथ को वेग से अरण्य में ले आये ।

(४१) ऐसा सुनकर राजा ने कहा कि युद्ध में सम्पूर्ण सेनाके सारे जा...

हितया गदया दयाहीनेन ताडितो मूर्छामागत्यात्र वने निशान्तपवनेन बोधितोऽभवम्' इति महीपतिरकथयत्।

(४२) ततो विरचितमहेन मन्त्रिनिवहेन विरचितदैवानुकूल्येन कालेन शिबिरमानीयापनीताशेषशल्यो विकसितनिजाननारविन्दो राजा सहसा विरोपितव्रणोऽकारि।

(४३) विरोधिदैवधिक्कृतपुरुषकारो दैन्यव्याप्ताकारो मगधाधिपतिरधिकाधिरमात्यसंमत्या मृदुभाषितया तया वसुमत्या मत्याकलितया समबोधि।

* बालविबोधिनी *

थाभूते। आराधितः सन्तोषितः पुरारिर्महादेवो येन तथाभूतेन। प्रहितया प्रेषितया। दयया हीनो दयाहीनस्तेन निर्दयेनेत्यर्थः। आगत्य प्राप्य। निशाया रजन्या अन्तः शेषो निशान्तः प्रभातं तस्य पवनेन तत्सम्बन्धिसमीरणेन बोधितो लब्धज्ञानोऽभवम्—अहमिति शेषः।

(४२) विरचितः कृतो महः उत्सवो येन तथाभूतेन। मन्त्रिनिवहेन अमात्यवर्गेण विरचितं सम्पादितं दैवस्यानुकूल्यं साहाय्यं येन तथाभूतेन। कालेनैतस्य विपणम्, शुभमुहूर्त्ते इति भावः। शिबिरं सेनानिवेशम्। अपनीतानि दूरीकृतानि शेषाणि सर्वाणि शल्यानि बाणाग्राणि यस्य सः। विकसितं प्रसन्नं निजाननारविन्दं मुखकमलं यस्य सः। विरोपिता औषधादिना चिकित्सिता व्रणा यस्य सः।

(४३) विरोधिना प्रतिकूलेन दैवेन भागधेयेन धिक्कृतस्तिरस्कृतः पुरुषकारः विक्रमो यस्य सः। दैन्येन खेदेन व्याप्त आक्रान्तः आकारः स्वरूपं यस्य सः। अधिकाधिरतिशयेनाधिक आधिर्मनोव्यथा यस्य सः। पुंस्याधिर्मानसी व्यथेत्यमरः। अमा

* बालक्रीडा *

र मालवेश ने निर्दय होकर भगवान् रुद्र की दी हुई गदा मारा जिससे मैं मूर्छित गया और यहां वन में प्रातःकाल की वायु लगने पर जगा।

(४२) उसके बाद मंत्रियों ने बड़ा उत्सव मनाया और देवताओं की आराधना करके प्रशस्त समयमें राजाको शिविर में ले आये। वहां सब अस्त्रों के निकलने से प्रसन्नवदन उनके घावों में मरहम पट्टी करके बहुत शीघ्र अच्छा किया।

(४३) प्रतिकूल दैव के कारण पौरुष विफल हो जाने से राजा पर दीनता

(४४) 'देव, सकलस्य भूपालकुलस्य मध्ये तेजोवरिष्ठो गरिष्ठो भवानद्य विन्ध्यवनमध्यं निवसतीति जलबुद्बुदसमाना विराजमाना संपत्तडिल्लतेव सहसैवोदेति नश्यति च। तन्निखिलं दैवायत्तमेवावधार्य कार्यम्।

(४५) किञ्च पुरा हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्या असंख्या महीन्द्रा ऐश्वर्योपमितमहेन्द्रा दैवतन्त्रं दुःखयन्त्रं सम्यगनुभूय पश्चादनेककालं निजराज्यम·

* बालविबोधिनी *

त्यानां मन्त्रिणां संमत्याऽनुमोदनक्रमेण । मृदु कोमलं भाषितं वचनं यस्यास्तया । मत्या बुद्ध्या कलितया युक्तया । समबोधि विज्ञापितः । बुध्धातोः कर्मणि लुङ् ।

(४४) तेजसा प्रतापेन वरिष्ठो महत्तरः । गरिष्ठोऽतिशयेन गुरुः । विन्ध्यवनमध्यं निवसति राज्यभ्रष्टोऽरण्यमाश्रित्य तिष्ठति । जलस्य सलिलस्य बुद्बुदेन विकारेण समाना तुल्या । सम्पत् राज्यलक्ष्मीः । तडिल्लता विद्युत् सेव । सहसा अकस्मात् । उदेति आविर्भवति । नश्यति अदृश्यतां याति च । तत् तस्मात्कारणात् । दैवायत्तं भाग्याधीनम् । अवधार्य निश्चेतव्यम् ।

(४५) किं च अपरञ्च । हरिश्चन्द्ररामचन्द्रौ मुख्यौ प्रधाने येषां ते । ऐश्वर्येण सम्पदा उपमितस्तुलितः समीकृत इति यावत् । महेन्द्रो देवराजो यैस्ते । दैवतन्त्रं दैवायत्तम् दैवचालितमिति भावः । दुःखयन्त्रं दुःखचक्रम् । तद्वदेव—य· । हरिश्चन्द्रादयो राजानः पूर्वं महद्दुःखमनुभूय पश्चात्पुनरपि स्वस्वराज्यादिकं प्राप

* बालक्रीडा *

छा गई और उसका मन बहुत उदास होगया । इस बात को देखकर अमात्यों की सम्मति एवं अपनी बुद्धि की प्रेरणा से वसुमती ने राजा को समझाया ।

(४४) हे देव ! संसार के यावत् राजाओं में श्रेष्ठ एवं प्रतापी आप आ· विन्ध्यवन में पड़े हुए हैं । इस से सिद्ध है कि जल के बुद्बुदों की तरह यह लक्ष्मी बिजली की तरह अकस्मात् आती है और अकस्मात् चली जाती है । अतः सभी बातें भाग्य के अधीन हैं ।

(४५) पुराने जमाने में हरिश्चन्द्र एवं रामचन्द्र प्रभृति पृथ्वीपतियों ने भी जिसका विभव इन्द्र के समान था—भाग्य के अधीन हो दुःखों को भोगकर चिरकाल तक अपना राज्य किया । उसी तरह आप भी इस समय दुःखों को भो·

कुर्वन् । तद्वदेव भवान्भविष्यति । कंचन कालं विरचितदैवसमाधिर्गलिताधिस्तिष्ठतु तावत्' इति ।

(४६) ततः सकलसैन्यसमन्वितो राजहंसस्तपोविभ्राजमानं वामदेवनामानं तपोधनं निजाभिलाषावाप्तिसाधनं जगाम ।

(४७) तं प्रणम्य तेन कृतातिथ्यस्तस्मै कथितकथ्यस्तदाश्रमे दूरीकृतश्रमे कंचन कालमुषित्वा निजराज्याभिलाषी मितभाषी सोमकुलावतंसो राजहंसो मुनिमभाषत—'भगवन्, मानसारः प्रबलेन दैवबलेन मां निर्जित्य मद्भोग्यं राज्यमनुभवति । तद्वदहमप्युग्रं तपो विरच्य तमरातिमुन्मूल-

* बालविबोधिनी *

यन्तस्तथा । भविष्यति राज्यं प्राप्स्यतीत्यर्थः । विरचितः कृतो दैवसमाधिर्देवाराधनं येन स । गलितोऽपगत आधिर्मनोव्यथा यस्य स । तिष्ठतु अपेक्षतामित्यर्थः ।

(४६) तपसा विशेषेण भ्राजमानं दीप्यमानम् । वामदेव इति नाम यस्य तम् । तप एव धनं यस्य स तम् । तापसमित्यर्थः । निजस्य स्वस्याभिलाषस्य मनोरथस्य अवाप्तेः प्राप्तेः साधनं सम्पादकम् ।

(४७) तेन वामदेवेन । कृतं विहितमातिथ्य अतिथिसत्कारादि यस्य स । तस्मै वामदेवाय । कथितमुक्तं कथ्यं वक्तव्यं येन स. । दूरीकृतोऽपाकृत. श्रम आयासो येन यत्र वा तस्मिन् । सोमकुलावतंसः चन्द्रवंशभूषणम् । मानसारस्तदाख्यो मालवराज । तद्वदिति—तेन मानसारेण यथा तपसा शिवं सन्तोष्य तस्माद्वर समासादितस्तथाऽहमपि । उग्रं तीव्रमुत्कटम् । विरच्य कृत्वा । लोकानां जनानां शरणे

* बालक्रीडा *

कर पीछे अपना राज्य करेंगे । इस वास्ते दुःखों को दबाकर देवता की आराधना करते हुये रहिये ।

(४६) उसके बाद राजहंस सम्पूर्ण सेना को साथ लिये हुए अपने मनोरथ को पूर्ण करने वाला समझ कर तपमें देदीप्यमान तपोधन वामदेव के पास गया।

(४७) वहां पहुंच कर सोमकुल के भूषण राजहंस ने मुनिको प्रणाम करके अपनी सब कथा कही और थकावट को दूर करनेवाले आश्रम में कुछ दिन रह कर थोड़े शब्दों में राज्य प्राप्त करने की अपनी अभिलाषा को कहा—भगवन् !

यिष्यामि लोकशरण्येन भवत्कारुण्येनेति नियमवन्तं भवन्तं प्राप्तवम्' इति ।

(४८) ततस्त्रिकालज्ञस्तपोधनो राजानमवोचत्—'सखे, शरीरकार्श्य-कारिणा तपसालम् । वसुमतीगर्भस्थः सकलरिपुकुलमर्दनो राजनन्दनो नूनं संभविष्यति, कञ्चन कालं तूष्णीमास्स्व' इति ।

(४९) गगनचारिण्यापि वाण्या 'सत्यमेतत्' इति तदैवावाचि राजापि मुनिवाक्यमङ्गीकृत्यातिष्ठत् ।

(५०) ततः संपूर्णगर्भदिवसा वसुमती सुमुहूर्ते सकललक्षणलक्षितं

* बालविबोधिनी *

रक्षणे साधुना । भवतस्तव कारुण्येन करुणया । इति–इति हेतोः । नियमवन्तं संय-मिनम् ।

(४८) त्रिकालज्ञः भूतभविष्यद्वर्तमानकालवित् । शरीरस्य देहस्य कार्श्यं क्षीणतां करोतीति तेन । अलं प्रयोजनं नास्ति । वसुमतीगर्भस्थः–महिषीगर्भस्थितः । सकलं निखिलं रिपुकुलं शत्रुमण्डलं मर्दयति हिनस्तीति तथाभूतः । नूनं निश्चितं सम्भविष्यति–उत्पत्स्यते । तूष्णीमास्स्व जोषं तिष्ठ, युद्धादिकं मा कार्षीरित्यर्थः ।

(४९) गगनचारिण्या–अशरीरिण्या । अङ्गीकृत्य स्वीकृत्य ।

(५०) सम्पूर्णाः परिपूर्णा गर्भदिवसाः नवदिनाधिकनवमासाः यस्याः सा ।

* बालक्रीडा *

मानसार प्रबल दैवबल की सहायता से मुझे जीत कर मेरे राज्य का भोग कर रहा है । अतः आपकी कृपा से उसी तरह मैं भी कठोर तपस्या करके उस शत्रु को जड़ से उखाड़ दूँ इसी वास्ते नियमवान् होकर आपके पास आया हूँ ।

(४८) इस तरह राजा के कथन को सुनकर त्रिकालज्ञ तपोधन बोला । सखे ! शरीर को सुखा देनेवाले तपको रहने दो । वसुमतीके गर्भसे सम्पूर्ण शत्रुओं को नष्ट करनेवाला पुत्र अवश्य पैदा होगा । अतः कुछ समय तक शान्त रहो ।

(४९) आकाशवाणी ने भी "यह सच है" ऐसा कहा । राजा भी मुनि के वाक्य को मान गया ।

(५०) उसके बाद गर्भ के दिन पूरे होने पर वसुमती ने शुभ मुहूर्त में

ुतमसूत। ब्रह्मवर्चसेन तुलितवेधसं पुरोधसं पुरस्कृत्य कृत्यविन्महीपति-
;मारं सुकुमारं जातसंस्कारेण बालालंकारेण च विराजमानं राजवाहन
ामानं व्यधत्त।

(५१) तस्मिन्नेव काले सुमतिसुमित्रसुमन्त्रसुश्रुतानां मन्त्रिणां प्रमति-
मत्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुताख्या महाभिख्या सूनवो नवोद्यदिन्दुरुचश्चिरायुष-
ामजायन्त। राजवाहनो मन्त्रिपुत्रैरात्ममित्रैः सह बालकेलीरनुभवन्न-
ावर्धत।

* बालविबोधिनी *

ुमुहूर्ते शुभलग्ने। मङ्गलरेखोपलक्षणं सौभाग्यचिह्नैर्लक्षितं सुतम्। ब्रह्मणो वर्चः-इति
ब्रह्मवर्चसम् इत्यच्। तेन ब्रह्मतेजसा तुलित उपमितो वेधा ब्रह्मा येन
म्। ब्रह्मतेजसा ब्रह्मसदृशम्। पुरस्कृत्य अग्रे कृत्वा। पुरोधसं पुरोहितम्।
त्यविन् समयोचितकार्यज्ञ। सुकुमारं सुन्दरदर्शनम्। जातसंस्कारेण जात-
र्मनाम्ना संस्कारविशेषेण। बालालङ्कारेण बालकोचितभूषणेन। विराजमानं विरा-
ान शोभमानम्। राजवाहन इति नाम यस्य तम्। व्यधत्त चकार।

(५१) तस्मिन्नेव काले-यदा राजवाहनस्य जन्माभवत् तदैव। महती
ामधिका अभिख्या शोभा येषां ते। अभिख्या नाम शोभयोरित्यमरः। महदभिख्या
ति पाठान्तरन्तु चिन्त्यम्। नवो नूतनः प्रातिपदिक इति यावत्-उद्यन् उदयमानो
ा इन्दुश्चन्द्रस्तस्य रुगिव रुक् कान्तिर्येषां ते। चिरायुषो दीर्घजीविनः। आत्मन-
नस्य मित्रैः सुहृद्भिः। बालकेलीः शैशवोचितक्रीडाः।

* बालक्रीडा *

म्पूर्ण लक्षणों से युक्त पुत्र को पैदा किया। कृत्यविन् राजा ने बालकों के भूषणों
ो सुशोभित सुकुमार बालक का ब्रह्मतेज में ब्रह्मा के समान पुरोहित से जात-
ंस्कार करवाया और राजवाहन नाम रखा।

(५१) उसी समय सुमति, सुमन्त्र, सुमित्र एवं सुश्रुत इन मन्त्रियों को बड़े
ुन्दर नवोदित चन्द्र के तुल्य कान्तिमान् एवं चिरायु पुत्र पैदा हुए। जिन के प्रमति,
मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्त एवं विश्रुत नाम रक्खे गये। राजवाहन अपने मित्र मंत्रिपुत्रों
के साथ खेलता हुआ बढ़ने लगा।

(५२) अथ कदाचिदेकेन तापसेन रसेन राजलक्षणविराजितं कञ्चिन्नयनानन्दकरं सुकुमारं कुमारं राज्ञे समर्प्यावाचि—भूवल्लभ, कुशसमिदानयनाय वनं गतेन मया काचिदशरण्या व्यक्तकार्पण्याश्रु मुञ्चन्ती वनिता विलोकिता।

(५३) निर्जने वने किंनिमित्तं रुद्यते त्वया इति पृष्टा सा करसरोरुहैरश्रु प्रमृज्य सगद्गदं मामवोचत्—मुने, लावण्यजितपुष्पसायके मिथिलानायके कीर्तिव्याप्तसुधर्मणि निजसुहृदो मगधराजस्य सीमन्तिनीसीमन्तम-

* बालविबोधिनी *

(५२) तापसेन मुनिना। रसेन अनुरागेण, राजहंसं प्रति प्रीत्येत्यर्थः। रा० नृपस्य लक्षणैश्चिह्नैर्विराजितं शोभितम्। करतलादौ राजचिह्नचक्रच्छत्रादियुक्तमित्यर्थः। नयनानन्दकरं लोचनानन्ददायिनम्। राज्ञे राजहंसाय। अशरण्या न विद्यते शरण्यं रक्षिता यस्याः सा। रक्षकहीनेत्यर्थः। व्यक्तं प्रकटितं कार्पण्यं दैन्यं यया सा। अश्रु नेत्रजलम्। मुञ्चन्ती त्यजन्ती, रोरुद्यमानेति शेषः।

(५३) करसरोरुहैः करकमलैः। अत्र सौन्दर्यातिशयमहिम्ना गौरवाद्बहुव बोद्धव्यम्। प्रमृज्य दूरीकृत्य। सगद्गदं गद्गदस्वरेणेत्यर्थः। लावण्येन कान्त्या जित पराजितः पुष्पसायकः कामो येन तस्मिन्। मिथिलानायके मिथिलाधिपतौ। कीर्त्या यशसा व्याप्ता परिपूरिता सुधर्मा देवसभा येन तस्मिन्। स्यात्सुधर्मा देवसभेत्यमरः

* बालक्रीडा *

(५२) इसके बाद एक दिन कोई तपस्वी राजलक्षणोंसे युक्त एवं नयनों से सुहावना मालूम देनेवाले एक सुकुमार बालक को बड़े प्रेम से राजा को समर्पित करके बोला—भूवल्लभ! कुश एवं समिधा लेने के लिये मैं वन में गया था वहां मैंने एक असहाय दीन एवं रोती हुई किसी स्त्री को देखा और पूछा कि इस निर्जन वन में तुम क्यों रोती हो? तब वह अंगुलियों से आंसुओं को पोंछ कर गद्गद स्वरमें मुझसे कहने लगी।

(५३) मुने! जिसकी कीर्ति इन्द्रकी सभा तक फैली हुई है और जो कान्ति में कामदेव के समान है वह मिथिलेश अपने मित्र मगधराज की स्त्री के सीमन्त-महोत्सव में संमिलित होने के लिये स्त्री पुत्रों सहित आकर पुष्पपुर में ठहरे

होत्सवाय पुत्रदारसमन्विते पुष्पपुरमुपेत्य कञ्चन कालमधिवसति समाराधितगिरीशो मालवाधीशो मगधराजं योद्धुमभ्यगात्।

(५४) तत्र प्रख्यातयोरेतयोरसंख्ये संख्ये वर्तमाने सुहृत्साहाय्यकं कुर्वाणो निजबले सति विदेहे विदेहेश्वरः प्रहारवर्मा जयवता रिपुणाभिगृह्य कारुण्येन पुण्येन विसृष्टो हतावशेषेण शून्येन सैन्येन सह स्वपुरगमनमकरोत्।

(५५) ततो वनमार्गेण दुर्गेण गच्छन्नधिकबलेन शबरबलेन रभसादभिहन्यमानो मूलबलाभिरक्षितावरोधः स महानिरोधः पलायिष्ट। तदी-

* बालविबोधिनी *

सीमन्तिन्या महिष्या सीमन्तमहोत्सवाय सीमन्तोन्नयनाख्यगर्भसंस्काररूपमुत्सव कर्तुम्। पुत्राश्च दाराश्चेति पुत्रदारास्तैः समन्विते युक्ते। अधिवसति वासं कुर्वति सति। समाराधितः सेवितो गिरीशो महेश्वरो येन सः।

(५४) प्रख्यातयोः वीरत्वेन प्रसिद्धयोः। संख्ये युद्धे। सुहृदः स्वमित्रस्य राजहंसस्येति शेषः। साहाय्यकं साहाय्यमेवेति स्वार्थे कः। निजबले स्वसैन्ये। विगतो विनष्टो देहः शरीरं यस्य तस्मिन्। निहते सतीति शेषः। विदेहेश्वरो मिथिलाधिपः। जयवता विजयिना। अभिगृह्याक्रम्य। कारुण्येन करुणया। पुण्येन स्वभागधेयमाहात्म्येन। विसृष्टस्तेन मालवाधीशेन परित्यक्तः। शून्येन हताग्रेन शस्त्रादिरहितेन वा।

(५५) दुर्गेण दुर्गमेण। अधिकं प्रभूतं बलं सामर्थ्यं यस्य तेन। शबरबलेन

* बालक्रीडा *

हुए थे। इसी बीच में शिवजी की आराधना करनेवाला मालवेश युद्ध करने के लिये वहां आ गया।

(५४) वहां उन वीरों का भय युद्ध होने लगा। मित्र की सहायता में सब सेना के नष्ट होजाने पर मिथिलेश प्रहारवर्मा को विजयी शत्रु ने पकड़ लिया। तब पुण्यके बल से उत्पन्न शत्रु की कृपा से छूट कर बची खुची सब दुःखी सेना के साथ अपने नगर की तरफ चल दिया।

(५५) इसी बीच में वनमार्ग से जाते समय प्रबल भीलों की सेना से

यामेकयोर्यमयोर्धात्रीभावेन परिकल्पिताहं मद्दुहितापि तीव्रगति भूपतिमनुगन्तुमक्षमे अभूव । तत्र विवृतवदनः कोऽपि रूपी कोप इव व्याघ्रः शीघ्रं मामाघ्रातुमागतवान् । भीताहमुदग्रग्राविण स्खलन्ती पर्यपतम् । मदीयपाणिभ्रष्टो वालकः कस्यापि कपिलाशवस्य क्रोडमभ्यलीयत ।

(५६) तच्छवाकर्षिणोऽमर्षिणो व्याघ्रस्य प्राणान्वाणो वाणासनयन्त्रमुक्तोऽपाहरत् । लोलालको वालकोऽपि शबरैरादाय कुत्रचिदुपानीयत । कुमारमपरमुद्वहन्ती मद्दुहिता कुत्र गता न जाने । साहं मोहं गता केनापि

* वालविबोधिनी *

शबरसैन्येन । रभसाद् वेगात् । मूलबलेन प्रधानसैन्येन अभिरक्षितः सुरक्षितोऽवरोधः शुद्धान्तः स्त्रीवर्ग इति शेषः येन सः । स प्रहारवर्मा । महान् समधिको निरोधः स्वावरोधः स्वसैन्यैः स्वपरिवेष्टनं यस्य सः । तदीयार्भकयोः तत्पुत्रयोः । यमयोर्युग्मजातयोः । धात्रीभावेन उपमातृरूपेण । तीव्राऽतिवेगवती गतिर्यस्य तम् । अनुगन्तुमनुसर्त्तुम् । अक्षमे असमर्थे । तत्रारण्ये । विवृतं विस्तारितं वदनं मुखं येन सः । रूपी मूर्त्तिमान् । आघ्रातुं हन्तुम् । उदग्रग्राविण उन्नतप्रस्तरे । मदीयपाणिभ्रष्टो मम हस्तच्युतः । कपिलाया धेनोः शवस्य मृतदेहस्य । क्रोडमङ्कम् । अभ्यलीयत प्रच्छन्नोऽभवत् ।

(५६) अमर्षिणः क्रुद्धस्य । वाणः शरः । वाणासनयन्त्रं धनुस्तस्मान्मुक्तः प्रक्षिप्तः । विलोलाश्चञ्चला अलकाश्चूर्णकुन्तला यस्य सः । आदाय गृहीत्वा । कुत्र-

* वालक्रीडा *

सामना करना पड़ा किन्तु प्रधान सेना की रक्षा में अन्तःपुर की स्त्रियों की रक्षा करते हुए उपद्रव से बचकर भाग गये । ~~(प्रहारवर्मा)~~ (भूपति) के जोडले लड़के की धाय मैं और मेरी दुहिता तीव्रगति से राजा के पीछे जाने में असमर्थ होगई । उसी समय खाने के लिये मुँह फैलाये हुए साक्षात् क्रोध की तरह मालूम पड़ता हुआ कोई व्याघ्र मेरी तरफ खाने को दौड़ा । उस से डरकर भागते समय विषम पथरीली भूमि में ठोकर खाकर मैं गिर पड़ी और मेरे हाथ से छूट कर गिरा हुआ वालक किसी कपिलाशव की गोदी में छिप गया ।

(५६)उस शवका आकर्षण करनेवाले क्रुद्ध व्याघ्रका धनुष से छूटे हुए बाणने काम तमाम करदिया और चञ्चल केशवाले वालक को न मालूम शवर कहां लेगए

कृपालुना वृष्णिपालेन स्वकुटीरमावेश्य विरोपितव्रणाभवम् । ततः स्वस्थीभूय भूयः क्ष्माभर्तुरन्तिकमुपतिष्ठासुरसहायतया दुहितुरनभिज्ञाततया च व्याकुलीभवामि' इत्यभिदधाना 'एकाकिन्यपि स्वामिनं गमिष्यामि' इति सा तदैव निरगात् ।

(५७) अहमपि भवन्मित्रस्य विदेहनाथस्य विपन्निमित्तं विषादमनुभवंस्तदन्वयाङ्कुरं कुमारमन्विष्यंस्तदैक चण्डिकामन्दिरं सुन्दरं प्रागाम् ।

* बालविबोधिनी *

चिह्नानस्थाने । अपरमन्य यमजयोर्मध्ये एकं तद्दुहितुरङ्कस्थमित्यर्थः । उद्वहन्ती धारयन्ती । कृपालुना दयावता । वृष्णिपालेन मेषपालेन* । आवेश्य प्रवेश्य । विरोपित औषधादिना चिकित्सितो व्रणो यस्याः सा । स्वस्थीभूय सुस्था भूत्वा अहमिति शेषः । भूयः पुनरपि । क्ष्माभर्तुः भूपतेः प्रहारवर्मण । अन्तिकं समीपम् । उपतिष्ठासुः प्रयातुमिच्छुः । असहायतया सहायाभावात् । अनभिज्ञतया निरुद्दिष्टतया । अभिदधाना कथयन्ती ।

(५७) अहमपि वक्ता तापसोऽपि । विपत् निमित्तं यस्य तम्, विपत्तिमजनितम् । तस्य विदेहराजस्यान्वयस्य वंशस्याङ्कुरं प्ररोहम् । तदा तस्मिन् समये ।

* बालक्रीडा *

तथा दूसरे बालक के लिये मेरी दुहिता भी न जाने कहा चली गई ।

मुझे मूर्छित अवस्था मे पडी हुई देखकर कोई कृपालु ग्वाला अपने घर मे ले आया और उसने मेरे घावों की मरहम पट्टी की । अब मैं स्वस्थ होगई अतः राजा के पास जाना चाहती हूँ किन्तु अकेली और लडकी के लापता होने से दुखिनी हूँ । पर जो हो मैं अकेली ही स्वामी के पास जाऊँगी । ऐसा कहती हुई वह चली गई ।

(५७) इसके बाद मैं भी आप के मित्र विदेहनाथ की विपत्ति मे दुःखित हो उसके वंश के अङ्कुर की खोज करता हुआ चला तो एक सुन्दर देवी के मन्दिर मे पहुँचा ।

* गोपालेन ।

(५८) तत्र संततमेवंविधविजयसिद्धये कुमारं देवतोपहारं क...
किराताः 'महीरुहशाखावलम्बितमेनमसिलतया वा, सैकततले ...
क्षिप्तचरणं लक्षीकृत्य शितशरनिकरेण वा, अनेकचरणैः पलायमानं ...
रवालकैर्वा दंशयित्वा संहनिष्यामः' इति भाषमाणा मया स... म...
'ननु किरातोत्तमाः, घोरप्रचारे कान्तारे स्खलितपथः स्थविरभूसुरोऽहं ...
पुत्रकं कचिच्छायायां निक्षिप्य मार्गान्वेषणाय किंचिदन्तरमगच्छम् ।

(५९) स कुत्र गतः, केन वा गृहीतः, परीक्ष्यापि न वीक्ष्यते ।

* बालविबोधिनी *

(५८) तत्र चण्डिकामन्दिरे । एवंविधविजयसिद्धये—यथा साम्प्रतं विदेह... वयं विजितवन्तः एवमेव सर्वदास्माकं विजयो भूयादिति चण्डिकाप्रसादलाभाय देवतोपहारं बलिम् । महीरुहस्य वृक्षस्य शाखायामवलम्बितं बद्धम् । असिलत... खड्गेन । सैकततले वालुकामयप्रदेशे । खनने गर्ते निक्षिप्तौ कीलितौ चरणौ ... तम् । लक्षीकृत्य उद्दिश्य । शितशरनिकरेण तीक्ष्णबाणसमूहेन । अनेकचरणैः क्षिप्र... रणैः वेगेन धावद्भिरित्यर्थः । कुक्कुरबालकैरित्यस्य विशेषणम् । इति भाषमाण... एवं कथयन्तः । समभ्यभाष्यन्त उक्ताः । घोरो भयंकरः प्रचारः सञ्चारो ... तस्मिन् । कान्तारे दुर्गममार्गे । स्खलितो भ्रष्टः पन्था यस्य सः । मार्गभ्रष्ट इत्यर्थः ... भूसुरो ब्राह्मणः । निक्षिप्य संस्थाप्य । अन्तरं दूरम् ।

(५९) स मत्पुत्रकः । परीक्ष्य अन्विष्य । अहानि दिनानि । अतीता...

* बालक्रीडा *

(५८)—(५९) वहाँ पर इस तरह के विजय के उपलक्ष्य में उस बाल... को देवी की बलि चढ़ाने के लिये उद्योग करते हुए किरातों को देखा । वे कह रहे थे देखो भाई ! या तो वृक्ष की शाखा में लटकाकर इसको तलवार से उड़ा दिया ज... अथवा बालू में गढ़ा खोदकर उसमें पैरों को बाँध दिया जाय फिर पैने बाण से ... जाय या कुत्तों से नुचवाया जाय—उनको ऐसा कहते हुए मैंने सुना । तब मैंने ... से कहा—हे किरातपुङ्गवो ! मैं बुड्ढा ब्राह्मण इस भयङ्कर वन में जाते समय रास्ता भूलगया हूँ । अतएव मार्ग खोजने के लिये बालक को छाया में सुलाकर मैं कुछ ... गया, किन्तु जब लौट कर आया तब देखा न मालूम वह कहाँ चला गया या ... उसको ले गया, खोजने पर भी मैं उसे नहीं पा रहा हूँ । उसका मुँह देखे ...

त्रावलोकनेन दिनानेकान्यहान्यतीतानि । किं करोमि क्व यामि, भवद्भिर्न कश्चिदर्शि' इति ।

(६०) 'द्विजोत्तम, कश्चित्तत्र तिष्ठति । किमेष तव नन्दनः सत्यमेव । इदेनं गृहाण' इत्युक्त्वा दैवानुकूल्येन मह्यं तं व्यतरन् ।

(६१) तेभ्यो दत्ताशीरहं बालकमङ्गीकृत्य शिशिरोदकादिनोपचारेणाश्वास्य निःशङ्कं भवदङ्कं समानीतवानस्मि । एनमायुष्मन्तं पितृरूपो भवानभिरक्षतात्' इति ।

(६२) राजा सुहृदापन्निमित्तं शोकं तन्नन्दनावलोकनसुखेन किंचिद-

* बालविबोधिनी *

गतानि । अदर्शि दृष्टः ।

(६०) कश्चित् एको बालकः । नन्दनः सुतः । दैवानुकूल्येन दैवानुग्रहेण । व्यतरन् दत्तवन्तः ।

(६१) तेभ्यः किरातेभ्यः । दत्ता अर्पिता आशिषो येन सः । अङ्गीकृत्य गृहीत्वा । शिशिरोदकादिना शीतलजलादिरूपेण शुश्रूषणेन । आश्वास्य स्वस्थं कृत्वा भवदङ्कं भवत्समीपम् । पितृरूपः पितृतुल्यः । अभिरक्षतात् रक्षतु । 'तुह्योस्तातङाशिष्यन्यतरस्याम्' इति तातङ् ।

(६२) राजा राजहंसः । सुहृदो मित्रस्य प्रहारवर्मण आपद् विपद् निमित्तं कारणं यस्य तम् । तस्य मित्रस्य नन्दनस्य सुतस्य विलोकनाद् दर्शनाद् यत्सुखं तेन । अधरीकृत्य स्वल्पीकृत्य । उपहारवर्मनाम्ना । आहूय आकार्य । राजवाहन-

* बालक्रीडा *

दिन बीत गये । क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? आप लोगों ने तो नहीं देखा है ?

(६०) हे ब्राह्मण ! एक बालक यहाँ है । क्या सचमुच वह तुम्हारा बालक है ? तब तो लो इसको । ऐसा कहकर भगवान् के अनुग्रह से मुझे इन्होंने यह बालक दे दिया । इनको मैंने आशीर्वाद दिया और बालक को लेकर शिशिर उपायों से चेत कराकर आप के पास ले आया हूँ ।

(६१) अब पितृतुल्य आप इसकी रक्षा करें ।

(६२) राजाने मित्र की विपत्तिजनित दुःख को उसके बालक के अवलोकन-जनित सुख से दूर किया और बालक का उपहारवर्मा नामकरण करके राजवाहन

धरीकृत्य तमुपहारवर्मनाम्नाहूय राजवाहनमिव पुपोष ।

(६३) जनपतिरेकस्मिन्पुण्यदिवसे तीर्थस्नानाय पक्कणनिकटमार्गे
गच्छन्नवलया कयाचिदुपलालितमनुपमशरीरं कुमारं कंचिदवलोक्य कुतू
हलाकुलस्तामपृच्छत्—'भामिनि, रुचिरमूर्तिः सराजगुणसंपूर्तिरसावर्
भको भवदन्वयसंभवो न भवति कस्य नयनानन्दनः, निमित्तेन केन भ
दधीनो जातः कथ्यतां याथातथ्येन त्वया' इति ।

(६४) प्रणतया तया शबर्या सलीलमलापि—'राजन्, आत्मपल्लीस

* बालविबोधिनी *

मिव स्वतनयवत् ।

(६३) जनपतिः राजा । पुण्यदिवसे पुण्यतिथौ पर्वणि वा । तीर्थस्नानाय
तीर्थे स्नानं कर्तुम् । पक्कणस्य शवरालयस्य निकटमार्गेण सन्निहिताध्वना । अवलया
स्त्रिया । उपलालितं वात्सल्येन धृतम् । अनुपमं अतुलनीयं शरीरं देहो यस्य तम्
कुतूहलेन कौतुकेन आकुलो व्याप्तः । भामिनि हे कामिनि ! सम्बोधनमेतत् । रुचिर
मनोरमा मूर्त्तिः स्वरूपं यस्य सः । राजगुणानां नृपलक्षणानां संपूर्त्या परिपूर्णतया
सह वर्त्ततेऽसाविति । अर्भको बालः । भवत्यास्तवान्वये वंशे सम्भव उत्पत्तिर्यस्य
सः । नयनानन्दनः नेत्रप्रीतिदः पुत्र इति भावः । निमित्तेन कारणेन । भवदधीन
स्त्वदायत्तः । याथातथ्येन तत्त्वतः ।

(६४) प्रणतया कृतनमस्कारया । सलीलं सस्मितम् अलापि अभापि

* बालक्रीडा *

की तरह उसका भी पालन–पोषण करने लगा ।

अपहारवर्मा की कथा ।

(६३) किसो पर्व के दिन तीर्थस्नान के लिये शवरों के गांव के समीप
जाते हुए राजा ने किसी औरत को एक अनुपम बालक को खिलाते हुए दे॰
और कुतूहल से पूछा "हे भामिनि ! इतना सुन्दर और सम्पूर्ण राजलक्षणों से यु
यह बालक तुम्हारे वंश में उत्पन्न नहीं होसकता । तब यह किसके नयनों
तारा है और कैसे तुम्हारे अधीन यह हुआ, सच २ कहो ।

(६४) वह शवरी प्रणाम करके बोली–हे राजन् ! जब शवरों की सेना हम
गांव के पासवाले रास्ते से जाते हुए इन्द्र जैसे मिथिलेश्वर का सर्वस्व अपह

मीपे पदव्या वर्तमानस्य शक्रसमानस्य मिथिलेश्वरस्य सर्वस्वमपहरति शबरसैन्ये मद्दयितेनापहृत्य कुमार एष मह्यमर्पितो व्यवर्धत' इति ।

(६५) तदवधार्य कार्यज्ञो राजा मुनिकथितं द्वितीयं राजकुमारमेव निश्चित्य सामदानाभ्यां याममुनीयापहारवर्मेत्याख्याय देव्यै 'वर्धय' इति समर्पितवान् ।

(६६) कदाचिद्वामदेवशिष्यः सोमदेवशर्मा नाम कंचिदेकं बालकं राज्ञः पुरो निक्षिप्याभाषत—'देव, रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छता मया काननावनौ वनितया कयापि धार्यमाणमेनमुज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य

* बालबोधिनी *

पदव्या मार्गे । शक्रसमानस्य इन्द्रतुल्यस्य । सर्वस्वं सर्वधनम् । मद्दयितेन मम भर्त्रा । व्यवर्धत वृद्धिं गतः ।

(६५) अवधार्य निशम्य । कार्यज्ञः कृत्यवित् । सामदानाभ्यां साम्ना सान्त्ववादेन दानेन चोपायभूतेन । तां शबरीम् । अनुनीय सन्तोष्य । अपहारवर्मेत्याख्याय–अपहारवर्मेति नाम कृत्वा । वर्धय पालय ।

(६६) राज्ञो राजहंसस्य । निक्षिप्य संस्थाप्य । काननावनौ आरण्यप्रदेशे । स्थविरे वृद्धे सम्बोधनमेतत् । प्रवया स्थविरो वृद्धो जीर्णः इत्यमरः । अटवीमध्ये-

* बालक्रीडा *

कर रही थी, उस समय मेरे स्वामी ने लाकर मुझे यह बालक दिया था । मैंने इसको पाल-पोस कर इतना बड़ा किया है ।

(६५) उसको समझकर और मुनि का बतलाया हुआ दूसरा कुमार यही है यह निश्चय किया और साम एवं दान से उस शबरी को खुश करके उससे यह बालक ले लिया और अपहारवर्मा नामकरण करके 'इसका पालन करो' ऐसा कह कर महारानी को देदिया ।

पुष्पोद्भव की उत्पत्तिकथा ।

(६६) किसी दिन वामदेव का शिष्य सोमदेव शर्मा किसी एक बालक को राजा के सामने लाकर कहने लगा—हे देव ! मैं रामतीर्थ में स्नान करके लौट रहा था तो मैंने देखा कि एक वृद्ध औरत उज्ज्वलाकार इस बालक को लिये हुए है । मैंने उससे बड़े आदर से पूछा–हे स्थविरे ! तुम कौन हो और क्यों इतने परिश्रम

सादरमभाणि—'स्थविरे, का त्वम् । एतस्मिन्नटवीमध्ये ब ... मुद्वहन्ती किमर्थमायासेन भ्रमसि' इति ।

(६७) वृद्धयाप्यभाषि—'मुनिवर, कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्त नाम धनाढ्यो वैश्यवरः कश्चिदस्ति । तन्नन्दिनीं नयनानन्दकारिणीं सुवृत्त नामैतस्माद्द्वीपादागतो मगधनाथमन्त्रिसंभवो रत्नोद्भवो नाम रमणीय गुणालयो भ्रान्तभूवलयो मनोहारी व्यवहार्युपयम्य सुवस्तुसंपदा २ ... संमानितोऽभूत् । कालक्रमेण नताङ्गी गर्भिणी जाता ।

(६८) ततः सोदरविलोकनकौतूहलेन रत्नोद्भवः कथंचिच्छ्वशुरमनु नीय चपललोचनया सह प्रवहणमारुह्य पुष्पपुरमभिप्रतस्थे । कल्लोलमा

* बालविबोधिनी *

ऽरण्यमध्ये । उद्वहन्ती धारयन्ती । आयासेन क्लेशेन ।

(६७) कालयवननाम्नि कालयवनाख्ये । धनाढ्यो धनसमृद्धः । तन्न ... तद्दुहितरम् । मगधनाथस्य मगधाधिपस्य मन्त्रिणोऽमात्यात् सम्भव उत्पत्तिर्यस्य सः । तत्पुत्र इत्यर्थः । रमणीयानामुत्कृष्टानां गुणानां सौन्दर्यादीनामालयो निलय आधार इति यावत् । भ्रान्तं पर्यटितं भुवः पृथिव्या वलयं मण्डलं येनासौ । व्यवहारी वाणिज्यकर्त्ता । उपयम्य विवाह्य । सुवस्तुसम्पदा शोभनद्रव्यसमृद्ध्या करणे तृतीया । उत्कृष्टवस्तून्युपहारीकृत्येत्यर्थः । संमानितः सत्कृतः । नताङ्गी सुवृत्ता

(६८) सोदराणां भ्रातृणां विलोकने दर्शने यत्कुतूहलं कौतुकं तेन । चप

* बालक्रीडा *

से इस अरण्य में बालक को लिये हुए घूम रही हो ?

(६७) वृद्धाने उत्तर दिया—हे मुनिवर ! कालयवन द्वीप में कालगुप्त नाम एक धनी वैश्य है । उस वैश्य की नयनान्दकारिणी सुवृत्तानामक लड़की से इस द्वीप में गये हुए मगधेश के मन्त्री के पुत्र रत्नोद्भव जो कि रमणीय गुणों का घर है । वह सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल पर घूम चुका है और बड़ा अच्छा व्यापारी है । उसने अपना विवाह किया । श्वशुर ने सुन्दर वस्तु तथा सम्पत्ति देकर उसका सम्मान किया । कालक्रम से वह नताङ्गी गर्भिणी हुई ।

(६८) इसके बाद भाइयों से मिलने के लिये लालायित रत्नोद्भव किसी तरह

(आव)लिकाभिहतः पोतः समुद्राम्भस्यमज्जत् ।

(६९) गर्भभराऽलसां तां ललनां धात्रीभावेन कल्पिताहं कराभ्यामुद्वहन्ती फलकमेकमधिरुह्य दैवगत्या तीरभूमिमगमम् । सुहृज्जनपरिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगमद्वा न जानामि । क्लेशस्य परां काष्ठामधिगता सुवृत्तास्मिन्नटवीमध्येऽद्य सुतमसूत । प्रसववेदनया विचेतना सा प्रच्छायशीतले तरुतले निवसति । विजने वने स्थातुमशक्यतया जनपदगामिनं मार्गमन्वेष्टुमुद्युक्तया मया विवशायास्तस्याः समीपे बालकं

* बालविबोधिनी *

चञ्चले लोचने नयने यस्यास्तया । प्रवहणं नौकाम् । कल्लोलाना महातरङ्गाणा मालिकया परम्परयाऽभिहतस्ताडितः । पोतः प्रवहणम् । अमज्जत् निमग्नः ।

(६९) गर्भभरेण गर्भभारेणालसा जडीभूताम् । ललना स्त्रियम् । धात्रीभावेन धात्रीरूपेण । फलकं काष्ठखण्डम् । दैवगत्या दैवात् । सुहृज्जनैर्मित्रवर्गैः परिवृतः परिवेष्टितः । तत्र समुद्रे । परां काष्ठां अतिशयम् । असूत प्रसूतवती । प्रसववेदनया प्रसवकालिकपीडया । विचेतना सज्ञारहिता । प्रच्छायेन प्रचुरच्छायया शीतले शिशिरे । जनपदगामिनं लोकालयप्रापकम् । विवशायाः विकलायाः । आनायि

* बालक्रीडा *

श्वशुर को राजी करके इस चपललोचना के साथ नौका पर सवार होकर पुष्पपुर की तरफ चला ।

(६९) तरङ्गों के आघात से दुर्दैव वश वह नौका समुद्र में डूब गई । गर्भ की पीड़ा से अलस उस ललना की धाय बनाकर रक्खी गई मैं उस को भी हाथों से सम्हालती हुई एक काठ के पट्टे पर चढ़कर किसी तरह भगवान् के अनुग्रह से तीर पर पहुची । नौका के डूब जाने पर वह रत्नोद्भव अपने मित्रमण्डल के साथ समुद्र में डूब गया या किसी उपाय से तीर पर चला गया यह मैं नही जानती । दुःख की पराकाष्ठा को सहन करने में असमर्थ सुवृत्ताने इसी वन में पुत्र को पैदा करदिया । अत प्रसव की वेदना से अचेत हुई वह एक छायावृक्ष के नीचे है निर्जन वन मे अकेली रह नहीं सकती । अतः शहर की तरफ जानेवाले मार्ग के खोजने में लगी हुई मैं उस विवशा के पास बालक को छोड़ना अनुचित सम

निक्षिप्य गन्तुमनुचितमिति कुमारोऽप्यनायि' इति ।

(७०) तस्मिन्नेव क्षणे वन्यो वारणः कश्चिददृश्यत । तं [illegible] भीता सा बालकं निपात्य प्राद्रवत् अहं समीपलतागुल्मके प्रविश्य [illegible] माणोऽतिष्ठम् , निपतितं बालकं पल्लवकवलमिवाददति गजपतौ [illegible] रवो महाग्रहेण न्यपतत् । भयाकुलेन दन्तावलेन झटिति वियति स[illegible] त्यमानो बालको न्यपतत । चिरायुष्मत्तया स च [illegible] वानरेण केनचित्पक्वफलबुद्ध्या परिगृह्य फलेतरतया विततस्कन्धमूले [illegible] क्षिप्तोऽभूत् । सोऽपि मर्कटः क्वचिदगात् ।

* बालविबोधिनी *

आनीतो मयेति शेषः ।

(७०) वने भव इति वन्य आरण्यक इत्यर्थः । वारणो गजः । सा धात्री प्राद्रवत् पलायत । अहं वामदेवशिष्यः । समीपलतागुल्मके समीपस्थलतागृहे परीक्षमाणः परितो विलोकयन् । पल्लवकवलं किसलयग्रासम् । आददति [illegible] सतीति शेषः । कण्ठीरवः सिंहः । भीमो भयङ्करो रवो गर्जितं यस्य सः । महाग्रहे अधिकावेशेन । दन्तावलेन हस्तिना । वियति आकाशे । समुत्पात्यमानः समुत्क्षि[illegible] माणः । चिरायुष्मत्तया दीर्घजीवितत्तया । स बालकः । उन्नतस्योच्छ्रितस्य तरोर्वृ[illegible] शाखायां समासीनेनोपविष्टेन । पक्वफलबुद्ध्या पक्वफलभ्रान्त्या । फलेतरतया इ[illegible] फलं नेति हेतोः । वितते विस्तृते स्कन्धस्य वृक्षप्रकाण्डस्य मूले मूलदेशे मर्कटो वानरः ।

* बालक्रीडा *

कर कुमार को भी ले आई ।

(७०) इसी समय एक जङ्गली हाथी दिखाई पड़ा । उसको देखने डर कर वह बालक को फेंक कर भाग गई । किन्तु इस प्रतीक्षा में कि देखें क्या होता है पास के एक लताओं के झुण्ड में घुस कर बैठ गया । जब [illegible] गजपति उस गिरे हुए बालक को पल्लवग्रास की तरह उठाने लगा उसी समय सिं[illegible] नाद करता हुआ एक शेर उस पर बड़े वेग से टूट पड़ा । भयाकुल गजपति ने [illegible] बालक को आकाश में उछाल दिया । किन्तु चिरायुष्य होने के कारण पृथ्वी [illegible] गिरने के पहले ही उन्नत वृक्ष की शाख पर बैठे हुए किसी वानर ने उसे [illegible] समझकर ले लिया और फल के न होने से वृक्ष की चौड़ी शाख पर रख दिया

(७१) बालकेन सत्त्वसंपन्नतया सकलक्लेशसहेनाभावि। केसरिणा करिणं निहत्य कुत्रचिदगामि। लतागृहान्निर्गतोऽहमपि तेजःपुञ्जं बालकं शनैरवनीरुहादवतार्य वनान्तरे वनितामन्विष्याविलोक्यैनमानीय गुरवे निवेद्य तन्निदेशेन भवन्निकटमानीतवानस्मि, इति।

(७२) सर्वेषां सुहृदामेकदैवानुकूलदैवाभावेन महदाश्चर्यं बिभ्राणो राजा 'रत्नोद्भवः कथमभवत्' इति चिन्तयंस्तन्नन्दनं पुष्पोद्भवनामधेयं वि-

* बालविबोधिनी *

(७१) सत्त्वसम्पन्नतया बलशालितया। सकलक्लेशसहेन सर्वप्रकारक्लेशसहिष्णुना। केसरिणा सिंहेन। तेजसा पुञ्जं राशिम् तेजस्विनमित्यर्थः। शनैर्मन्दं मन्दम्। अवनीरुहाद् वृक्षात्। अविलोक्य अप्राप्येत्यर्थः। एनं बालकम्। निवेद्य कथयित्वा। तन्निदेशेन गुरोराज्ञया।

(७२) एकदैव युगपदेव। अनुकूलदैवाभावेन प्रतिकूलदैववशात्। महदाश्चर्यं परमविस्मयम्। बिभ्राणो धारयन्। कथं सर्वेषामस्माकं सममेव दैवं प्रतिकूलं जातमिति विस्मयाकुलः सन्निति भावः। राजा राजवाहनः। रत्नोद्भवः कथमभवत्—रत्नोद्भवस्य का गतिर्जाता, तस्य किं जातमिति तात्पर्यम्। पुष्पोद्भवः नामधेयं नाम यस्य तम्। तदुदन्तं पूर्वोक्तं वृत्तान्तम्। व्याख्याय उक्त्वा। सुश्रुताय रत्नोद्भवस्य ज्येष्ठसहोदराय। विषादसन्तोषौ विषादहर्षौ—रत्नोद्भवस्य विनाशाद् विषाद-

* बालक्रीडा *

(७१) बालकने भी सत्वसम्पन्न होने के कारण सब दुःखों को सह लिया। वह शेर उस हाथी को मारकर चला गया। इस के बाद मैंने भी लतागृह से निकल कर तेज पुञ्जस्वरूप उस बालक को धीरे वृक्ष से उतारा और वन में इधर उधर उस औरत को खोजा, किन्तु जब नहीं पाया तब इस बालक को लाकर गुरुजी की सेवामें अर्पण कर दिया। अब उन्हीं की आज्ञा से मैं आप के समीप इसे लाया हूं। थोड़ी देर में वह वानर कहीं पर चला गया।

(७२) सब मित्रों पर एक ही साथ आपत्ति आई, इससे आश्चर्य में मग्न राजा "रत्नोद्भव का क्या हुआ होगा" यह विचार करने लगा। इसके बाद राजाने उस लड़के का पुष्पोद्भव नामकरण किया और उसका सब वृत्तान्त सुश्रुत को सुनाकर

धाय तदुदन्तं व्याख्याय सुश्रुताय [illegible] समर्पितवान् ।

(७३) अन्येद्युः कंचन बालकमुरसि दधती वसुमती वल्लभमभिगता । तेन 'कुत्रत्योऽयम्' इति पृष्टा समभाषत—'राजन्, अतीतायां [illegible] काचन दिव्यवनिता मत्पुरतः कुमारमेनं संस्थाप्य निद्रामुद्रितां मां [illegible] ध्य विनीताब्रवीत्—'देवि, त्वन्मन्त्रिणो धर्मपालनन्दनस्य का[illegible] वल्लभा यक्षकन्याहं तारावली नाम, नन्दिनी मणिभद्रस्य । यक्षे[illegible]

* बालविबोधिनी *

तत्पुत्रस्य लाभात्सन्तोष इति भावः ।

(७३) अन्येद्युः अन्यस्मिन् दिने । उरसि वक्षसि । दधती धारयन्ती वल्लभं पतिम् । तेन राज्ञा । कुत्रभव इति कुत्रत्य इति कुत्रेत्यव्ययात्त्यप्प्रत्ययः अयं बालकः कुत्रोत्पन्नः—कस्य पुत्र इति भावः । अतीतायां गतायाम् । दिव्य[illegible] निता स्वर्गीया स्त्री । निद्रया मुद्रितां निमीलितनयनाम् । विबोध्य प्रबोध्य । [illegible] पत्नी । यक्षेश्वरस्य कुबेरस्यानुमत्याऽऽदेशेन । भवत्यास्तव तनूजस्य नन्दनस्य भाविनो भविष्यतः । अम्भोनिधिः समुद्र एव वलयः कटकस्तेन वेष्टितं यत् [illegible] मण्डलं भूमण्डलं तस्येश्वरः पतिः शासक इत्यर्थः । विशुद्धस्य [illegible] ज्ज्वलस्ये[illegible] यावत् यशसः कीर्तेर्निधिर्निधानं तस्य । परिचर्येति सुश्रूषाकरणायेत्यर्थः । [illegible]

* बालक्रीडा *

विषाद और सन्तोष के साथ उस छोटे भाई के लड़के को देदिया ।

अर्थपालोत्पत्तिकथा ।

(७३) एक दिन किसी एक बालक को गोद में लिये हुए महारानी वसुम[illegible] महाराज के पास आई । राजा के "यह कहां से मिला" यह पूछने पर उसने क[illegible] हे राजन् ! इस बीती हुई रात्रि में कोई दिव्य वनिता मेरे सामने इस कुमार रख कर सोई हुई मुझे जगाकर बड़े विनय से बोली—'हे देवि ! मैं मणिभद्र यक्ष की कन्या और तुम्हारे मन्त्री धर्मपाल के पुत्र कामपाल की स्त्री हूं । तारा[illegible] मेरा नाम है । यक्षेश्वर की आज्ञा में से इस लड़के को आप के लड़के राजवा[illegible] की परिचर्या के लिए लाई हूं । जो राजवाहन समुद्रों से घिरी हुई इस [illegible]

नदात्मजमेतं भवत्तनूजस्याम्भोनिधिवलयवेष्टितक्षोणीमण्डलेश्वरस्य भा-
त्रेनो विशुद्धयशोनिधे राजवाहनस्य परिचर्याकरणायानीतवत्यस्मि । त्वमे-
तं मनोजसंनिभमभिवर्धय' इति विस्मयविकसितनयनया मया सविनयं
सत्कृता स्वक्षी यक्षी साप्यदृश्यतामयासीत्' इति ।

(७४) कामपालस्य यक्षकन्यासंगमे विस्मयमानमानसो राजहंसो
रञ्जितमित्रं सुमित्रं मन्त्रिणमाहूय तदीयभ्रातृपुत्रमर्थपालं विधाय तस्मै
सर्वं वार्तादिकं व्याख्यायादात् ।

(७५) ततः परस्मिन्दिवसे वामदेवान्तेवासी तदाश्रमवासी समारा-

* बालविबोधिनी *

नोजेन वा संनिभ—कामदेवतुल्य सौन्दर्येणेति यावत् । अभिवर्द्धय पालय ।
विस्मयेनाश्चर्यरसेन विकसिते प्रफुल्ले नयने नेत्रे यस्यास्तया । सत्कृता सम्मानिता ।
स्वक्षी—सु शोभने अक्षिणी नेत्रे यस्याः सा । यक्षी यक्षकुलोत्पन्ना न तु यक्षपत्नी ।
कामपालस्य यक्षत्वाभावात् । अदृश्यतामन्तर्धानम् ।

(७४) यक्षकन्यासंगमे यक्षीविवाहे । विशेषेण स्मयमान आश्चर्यान्वितं
मानसं मनो यस्य सः । रञ्जितानि स्वभावेनावर्जितानि मित्राणि सुहृदो येन तम् ।
सुमित्रं तन्नामानं कामपालज्येष्ठभ्रातरम् । अर्थपालं तन्नामानम् ।

(७५) अन्ते वसतीति अन्तेवासी—वामदेवस्यान्तेवासी छात्रः । 'छात्रान्ते

* बालक्रीडा *

मण्डल का यशस्वी सम्राट् होगा । अतः कामदेव की तरह सुन्दर इस बालक का
तुम पालन करो । ऐसा सुनकर मेरे नेत्र आश्चर्य से खिल गये और मैंने बड़े
विनय के साथ उस सुनयना यक्षी का सत्कार किया । इस के बाद वह भी
अदृश्य होगई ।

(७४) कामपाल का यक्षकन्या के साथ समागम हुआ । इससे राजहंस का
मन विस्मित हुआ । इसके बाद मित्रों को खुश करनेवाले सुमन्त्र नामक
मन्त्री को बुलाकर सब वृत्तान्त सुनाया और अर्थपाल नामकरण करके दे दिया ।

सोमदत्तोत्पत्तिकथा ।

(७५) *कुछ दिनों बाद किसी दिन वामदेव का शिष्य जो कि उसी आश्रम*

धितदेवकीर्तिं निर्भर्त्सितमारमूर्तिं कुसुमसुकुमारं कुमारमेकमवगमय्य न
पतिमवादीत्—'देव, विलोलालकं बालकं निजोत्सङ्गतले निधाय रुद
स्थविरामेकां विलोक्यावोचम्—'स्थविरे, का त्वम्, अयमर्भकः क
नयनानन्दकरः, कान्तारं किमर्थमागता, शोककारणं किम्' इति ।

(७६) सा करयुगेन बाष्पजलमुन्मृज्य निज...
व मामवलोक्य शोकहेतुमवोचत्—'द्विजात्मज, राजहंसमन्त्रिणः सि
वर्मणः कनीयानात्मजः सत्यवर्मा तीर्थयात्राभिषेण देशमेनमागच्छत
स कस्मिंश्चिदग्रहारे काली नाम कस्यचिद् भूसुरस्य नन्दिनीं विवाह्य तस्

* बालविबोधिनी *

वासिनां शिष्ये' इत्यमरः । तस्य वामदेवस्याश्रमवासी आश्रमस्थः । सनाथी...
प्राप्त्यर्थं संनेविता देवानां कीर्तिर्येन तं देवतुल्यकीर्त्तिमन्तमित्यर्थः । निर्भर्त्सि...
न्दर्यातिरेकेण निरस्कृता मारस्य कन्दर्पस्य मूर्त्तिः स्वरूपं येन तम् । कुसुमवत् ...
मिव सुकुमारं कोमलम् । अवगमय्य प्रापय्य पुरतः संस्थाप्येत्यर्थः । विलोला
चला अलकाः कुन्तला यस्य तम् । उत्सङ्गतले अङ्के । स्थविरां वृद्धाम् । अर्भ
शिशुः । कान्तारं दुर्गममार्गम् ।

(७६) बाष्पजलम् अश्रु । उन्मृज्यापनीय । निजस्य स्वस्य शोक ए
शङ्कुः कीलः तस्योत्पाटने उद्धरणे क्षमं समर्थम् । शोकस्य हेतुं कारणम् । कनीया
कनिष्ठः । तीर्थयात्राया मिषेण कपटेन । अग्रहारे ग्रामे । भूसुरस्य ब्राह्मणस्य

* बालक्रीडा *

पर रहता था—देवताओं के तुल्य कीर्तिमान् कामदेव के समान सुन्दर एवं सुकुम
एक कुमार को लाकर कहने लगा—हे देव! तीर्थयात्रा के प्रसङ्ग से मैं कावे
नदी के तीर पर गया हुआ था। वहां पर इस विलोल बालक को गोद में
कर रोती हुई एक बुढ़िया को देखकर पूछा—ऐ बुढ़िया! तुम कौन हो ? ...
बालक किसका है? तुम वन में क्यों आई हो और तुम्हारे शोक का कारण क्या है

(७६) ऐसा सुनकर वह बुढ़िया दोनों हाथों से आँसुओं को पोंछकर
को अपने शोकरूपी शंकु के उखाड़ने में समर्थ समझ कर शोक का कारण बतल
लगी। वह बोली—हे ब्राह्मणपुत्र! राजहंस के मन्त्री सितवर्मा का छोटा लड़

नपत्यतया गौरीं नाम तद्भगिनीं काञ्चनकान्तिं परिणीय तस्यामेकं तन यमलभत। काली सासूयमेकदा धात्र्या मया सह बालमेनमेकेन मिषेणा-नीय तटिन्यामेतस्यामक्षिपत्। करेणैकेन बालमुद्धृत्यापरेण प्लवमाना नदीवेगागतस्य कस्यचित्तरोः शाखामवलम्ब्य तत्र शिशुं निधाय नदीवेगे-नोह्यमाना केनचित्तरुलग्नेन कालभोगिनाहमदंशि। मदवलम्बीभूतो भूरु-होऽयमस्मिन्देशे तीरमगमत्। गरलस्योद्दीपनतया मयि मृतायामरण्ये ऽस्य न शरण्यो नास्तीति मया शोच्यते इति।

* बालविबोधिनी *

नपत्यतया अपुत्रकतया। काञ्चनस्य स्वर्णस्येव कान्तिरौज्ज्वल्यं यस्यास्ताम्। परिणीय विवाह्य। सासूयं विद्वेषेण। मिषेण छलेन। तटिन्यां नद्याम्। उद्धृत्य धारयित्वा। अपरेण करेणेति शेषः। प्लवमाना तरन्ती। नदीवेगागतस्य नद्या वेगवशादुपस्थितस्य। तरोः वृक्षस्य। निधाय संस्थाप्य। उह्यमाना नीयमाना। तरुलग्नेन आरूढेन। कालभोगिना कृष्णसर्पेण। अदंशि दष्टा। मदवलम्बीभूतो मदाश्रयीभूतः। भूरुहो वृक्षः। आगमत् प्रापत्। गरलस्य विषस्य। उद्दीपनतया उत्कटतया। मृतायां सत्यामिति शेषः। शरण्यो रक्षकः। शोच्यते खेदः क्रियते।

* बालक्रीडा *

...त्यवर्मा तीर्थयात्रा के बहाने इस देश में आया था। किसी अग्रहार (राजा के द्वारा संकल्प करके दिये हुए ग्राम) में किसी ब्राह्मण की काली नाम की लड़की से विवाह किया, किन्तु उस स्त्री से सन्तान न होने से उसकी बहिन सुवर्ण के समान सुन्दर गौरी को विवाहा। उससे एक लड़का हुआ। काली एक दिन मारे असूया-... मुझ धात्री के साथ इस बालक को किसी बहाने यहां लाई और इस नदी में ढकेल कर चली गई। मैं भी एक हाथ से बालक को थामे हुए दूसरे हाथ से तैरने लगी। इसी बीच में नदी वेग से आये हुए किसी वृक्ष की शाखा को पकड़ कर उसमें बालक को बैठाकर नदी के वेग के अनुसार बहने लगी। वहीं उस वृक्ष की शाखा में चिपटे हुए एक सर्प ने मुझे डस लिया। जिसके सहारे मैं आरही थी वह वृक्ष इस देश में आकर तीर पर ठहरा। विष के अधिक बढ़ने से मैं यहां मर जाऊंगी। तब कोई भी इस जंगल में इस बालक का रक्षक नहीं होगा। यही मेरे शोक का कारण है।

(७७) ततो विषमविषज्वालावलीढावयवा सा धरणीतले न्य दयाविष्टहृदयोऽहं मन्त्रबलेन विषव्यथामपनेतुमक्षमः धिविशेषमन्विष्य प्रत्यागतो व्युत्क्रान्तजीवितां तां व्यलोकयम् ।

(७८) तदनु तस्याः पावकसंस्कारं विरच्य शोकाकुलचेता बालमे मगतिमादाय सत्यवर्मवृत्तान्तवेलायां तदन्वेषणमशक्यमित्यालोच्य भवदमात्यतनयस्य म वाभिरक्षिते भवन्तमेनमनयम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

(७७) विषमयाऽविपह्यया विषस्य ज्वालया शिखया पीड़येत्यर्थः । अवलीढ व्याप्ता अवयवा अङ्गानि यस्याः सा । दयया करुणया आविष्टमाक्रान्तं हृदयं चे यस्य सः । मन्त्रबलेन मन्त्रशक्त्या । अपनेतुं दूरीकर्त्तुम् । समीपकुञ्जेषु नि स्थलतादिपिहितस्थानेषु । व्युत्क्रान्तजीवितां मृताम् ।

(७८) तदनु तदनन्तरम् । पावकसंस्कारं विरच्य अग्निसंस्कारं तद्देहं भस्मसात्कृत्वेत्यर्थः । शोकेन खेदेनाकुलं व्याप्तं चेतो यस्य सः । अग थम् । सत्यवर्मणो वृत्तान्तश्रवणवेलायां वार्त्ताश्रवणसमये तस्य सत्यवर्मणो निव अग्रहारस्य वासस्थलभूतस्य ग्रामस्य यन्नामधेयं नाम तस्याश्रुततया अश्रवणेन अभिरक्षिता पालकः । अनयं प्रापितवानस्मि । णीञ् प्रापणे इत्यस्य लँ रूपम् ।

* बालक्रीडा *

(७७) इतना कहते २ भयंकर विप की ज्वाला के सब शरीर के अवयव में प्राप्त होने से वह अचानक पृथ्वी पर गिर पड़ी । मुझे उसकी इस अवस्था दया आई, किन्तु मन्त्र तो मैं जानता नहीं था । अतः मंत्रबल से उसकी विषव्यथ को दूर करने में असमर्थ था । जब पास के निकुञ्ज से औषधिविशेष खोजकर आया तब उसको मरी हुई देखा ।

(७८) तदन्तर उसका अग्निसंस्कार किया और इस अनाथ बालक को अपनी रक्षा में ले लिया । किन्तु सत्यवर्मा का वृत्तान्त के सुनते समय उनके निवास भूत अग्रसर का नाम नहीं सुना । अतः उसका खोजना अशक्य है । अ अमात्य का लड़का है आप ही इसके रक्षक हैं ऐसा विचार कर आपके पास लेआया ।

(७९) तन्निशम्य सत्यवर्मस्थितेः सम्यगनिश्चिततया खिन्नमानसो नरपतिः सुमतये मन्त्रिणे सोमदत्तं नाम तदनुजतनयमर्पितवान् । सोऽपि सोदरमागतमिव मन्यमानो विशेषेण पुपोष ।

(८०) एवं मिलितेन कुमारमण्डलेन सह बालकेलीरनुभवन्नधिरूढानेकवाहनो राजवाहनोऽनुक्रमेण चौलोपनयनादिसंस्कारजातमलभत । ततः सकललिपिज्ञानं निखिलदेशीयभाषापाण्डित्यं षडङ्गसहितवेदसमुदायकोविदत्वं काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकेतिहासचित्रकथासहितपुराणगणनैपुण्यं धर्मशब्दज्योतिस्तर्कमीमांसादिसमस्तशास्त्रनिकरचातुर्यं कौटिल्य

* बालविबोधिनी *

(७९) सत्यवर्मस्थिते तदवस्थानस्य जीवनस्य वा सम्यगनिश्चिततया सोऽद्यावधि तिष्ठते न वेति जीवति न वेति वा सन्दिग्धतया । खिन्नं खेदाकुलं मानसं यस्य सः । नरपतिः राजा राजहंस इत्यर्थः । सोऽपि सुमतिरपि । सोदरं सत्यवर्मागमित्यर्थः । पुपोष वर्द्धयामास ।

(८०) एवमनेन प्रकारेण । मिलितेन एकत्र सङ्गतेन । कुमारमण्डलेन कुमारसंघेन । बालकेलीः शैशवोचितक्रीडाः । अधिरूढानि समारूढान्यनेकानि नानाविधानि वाहनानि हस्त्यश्वादीनि येन सः । कदाचिद् गजं कदाचिच्चाश्वमारुरोहेति भावः । अनुक्रमेण यथाक्रमम् । सकललिपिज्ञानं सर्वविधाक्षरसंस्थानपरिचयम् । षडङ्गैः शिक्षाकल्पादिरूपैर्वेदाङ्गैः सहिते युक्ते वेदसमुदाये वेदसमूहे कोविदत्वं पाण्डित्यम् ।

* बालक्रीडा *

(७९) ऐसा सुनकर सत्यवर्मा की स्थिति का सच्चा निश्चय न होने से दुःखी होते हुए राजा ने उसके छोटे भाई के लड़के को सोमदत्त नाम करके सुमति मन्त्री को सौंप दिया । वह भी भाई ही आगया ऐसा समझता हुआ उसे बड़े प्रेम से पालने लगा ।

(८०) इस तरह प्राप्त कुमारमण्डल के साथ बालक्रीड़ा करता हुआ नाना प्रकार की सवारियों के चढ़ने में निपुण राजवाहनने क्रमशः चौल एवं उपनयनादि संस्कारों को प्राप्त किया । उसके बाद सकल लिपियों का ज्ञान, सब देश की भाषाओं का पाण्डित्य, छहों अङ्गों के सहित वेदराशि की विद्या, काव्य, नाटक, आख्यानक, आख्यायिका, इतिहास, चित्रकथा एवं पुराण आदि का नैपुण्य, धर्म, शब्द

कामन्दकीयादिनीतिपटलकौशलं वीणाद्यशेषवाद्यदाक्ष्यं ॱीत हि॰ ।रि
मणिमन्त्रौषधादिमायाप्रपञ्चचुञ्चुत्वं मातङ्गतुरङ्गादिवाहनारोहणपाटवं वि
विधायुधप्रयोगचणत्वं चौर्यदुरोदरादिकपटकलाप्रौढत्वं च तत्तदाचार्येभ्य

* बालविबोधिनी *

काव्यं रामायणादि, नाटकं रूपकादि, आख्यानकं चूर्णकं, आख्यायिका कादम्बर्यादि कथा, इतिहासो महाभारतादि, चित्रकथा रमणीयकथा । एतैः सहितो युक्तो यत्पुराण गणः वेदव्यासरचिताष्टादशपुराणानि तत्र नैपुण्यं पाटवम् । धर्म इत्यादि :ॱ शास्त्रेण सम्बध्यते तेन धर्मशास्त्रं स्मृतिः, शब्दशास्त्रं व्याकरणं, ज्योतिषं, तर्क शास्त्रं न्यायः, मीमांसा पूर्वोत्तरभेदेन द्विविधा, जैमिनीयदर्शनं वेदान्तदर्शनञ्चेत्य दिषु आदिपदेन धनुर्वेदादिसंग्रहः शास्त्रनिकरेषु शास्त्रसमूहेषु चातुर्य अभिज्ञत्वम् कौटिल्यश्चाणक्यस्तेन प्रणीतं कौटिल्यं, कामन्दकरचितं कामन्दकीयम् आदिपदे शुक्रनीत्यादिसंग्रहः । इत्यादीनि यानि नीतिपटलानि नीतिशास्त्रसमुदायास्तेषु कौ॰ ॱ नैपुण्यम् । वीणादिषु वीणाप्रभृतिष्वशेषेषु सकलेषु वाद्येषु दाक्ष्यं दक्षताम् । सङ्गीत साहित्येषु नृत्यगीतादिशिल्पकलासु हारित्वं मनोहारित्वम् । म॰ ॱन्त्रौषध ॱ॰य मायाप्रपञ्चः कपटप्रबन्धस्तेन वित्त इति 'तेन वित्तश्चुञ्चुप्चणपा'विति चुञ्चुप्प्रत्यय ततस्तस्य भावस्तथा । कपटप्रबन्धकुशलत्वमित्यर्थः । विविधानामायुधान प्रयोगेण वित्तस्तस्य भावस्तथा । अत्रापि तेनैव चणप् । चौर्य स्तेयं, दुरोदरं ॱॱ तदादिकपटकलासु प्रौढत्वं प्रावीण्यम् । तत्तदाचार्येभ्यस्तत्तच्छास्त्रनिष्णातेभ्यः

* बालक्रीडा *

(व्याकरण) ज्योतिष, तर्क एवं मीमांसादि शास्त्रसमूह का चातुर्य, कौटिल्य और कामन्दकीय नीतिपटल का कौशल, वीणादि अशेष वाद्यों में दक्षता, संगीत और साहित्य में हारित्व, मणि मन्त्र और औषधादि के मायाप्रपञ्च में प्रसिद्धि, हाथी एवं घोड़े आदि सवारियों के चढ़ने मे पाटव, नाना प्रकार के आयुधों के प्रयोग में प्रसिद्धि, चोरी एवं जूआ वगैरह छलमयी कलाओं में प्रौढ़ता को उन आचार्यों से अच्छी तरह प्राप्तकर युवावस्था से सुशोभित एवं कार्यों में आलस्य रहित कुमार वृन्द को देखकर "अब मैं शत्रुओं से अजेय होगया" इस तरह सोचकर राजाने

सम्यग्लब्ध्वा यौवनेन विलसन्तं कुमारनिकरं निरीक्ष्य महीवल्लभः सः 'अहं शत्रुजनदुर्लभः' इति परमानन्दममन्दमविन्दत ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते कुमारोत्पत्तिर्नाम प्रथम उच्छ्वासः ।

द्वितीयोच्छ्वासः ।

(१) अथैकदा वामदेव: सकलकलाकुशलेन कुसुमशायकसंशयितसौन्दर्येण कल्पितसोदर्येण साहसापहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारणकुलिशाङ्कितकरेण कुमारनिकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं

* बालविबोधिनी *

लब्ध्वा अधिगम्य । कृत्येषु कार्येषु अनलसमालस्यरहितमुद्यमशालिमित्यर्थः । महीवल्लभो राजा। शत्रुजनदुर्लभ शत्रुभिरपराजेयः । अविन्दत अलभत ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्य कृताया बालविबोधिनीसमाख्याया दशकुमारचरितव्याख्याया प्रथमोच्छ्वासः ।

(१) सकलासु निखिलासु कलासु नृत्यगीतादिविद्यासु कुशलेन निपुणेन । कुमारनिकरेणेत्यस्य विशेषणमेवमग्रेऽपि । कुसुमशायक कन्दर्प संशयितः कन्दर्पो वा तदन्यो वेति सन्दिग्धो यस्मात् तथाभूतं सौन्दर्यं यस्य तेन । यस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा जनस्य कन्दर्पभ्रमो भवतीत्यर्थः । कल्पितं परस्परं रचितं सौदर्यं सहोदरभावः बन्धुतेति यावत्, येन तेन । साहसेन पराक्रमेण अपहसितास्तिरस्कृतः कुमारः कार्तिकेयो येन तेन । कुमाराधिकवीर्यशालिनेत्यर्थः । सुकुमारेण कोमलशरीरेण । जयध्वजो जयपताका, आतपवारणं छत्रं, कुलिशं वज्रं तैरङ्कितौ चिह्नितौ करौ हस्तौ

* बालक्रीडा *

परमानन्द को पाया ।

इसतरह बालक्रीडा टीका में दशकुमारोत्पत्ति नामक प्रथम उच्छ्वास समाप्त हुआ ।

---

(१) इसके बाद एक दिन वामदेव सम्पूर्ण कलाओंमें कुशल यही कामदेव है ऐसा लोगों के हृदयों में संशय के उत्पादक वेशादि से अत्यन्त सुन्दर एवं साहस में कार्त्तिकेय का उपहास करनेवाले तथा जिनके करों में जयध्वजा छत्र एवं कुलिश के चिन्ह हैं, ऐसे सुकुमार कुमार समूह से घिरे हुए प्रणतमस्तक

समभिगम्य तेन तां कृतां परिचर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षं विदलिष्यमाणविपक्षं कुमारचयं गाढमालिङ्ग्य मितसत्यवाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत । ७/०१९

(२) भूवल्लभ, भवदीयमनोरथफलमिव समृद्धलावण्यं तारुण्यं नुतमित्रो भवत्पुत्रोऽनुभवति। सहचरसमेतस्य नूनमेतस्य दिग्विजयारम्भसमय एषः। तदस्य सकलक्लेशसहस्य राजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं क्रियताम्' इति

* बालविबोधिनी *

यस्य तेन । येषां करेषु ध्वजादिरेखाः सन्तीत्यर्थः । कुमारनिकरेण कुमारसमूहेन आनतशिरसं कृतनमस्कारम् । तेन राज्ञा राजहंसेन । परिचर्यां सेवाम् । अङ्गीकृत्य स्वीकृत्य । निजस्य (वामदेवस्य) चरणकमलयुगले पादपङ्कजद्वये मिलन्तः पतन्तः मधुकरायमाणा भ्रमरा इवाचरन्तः काकपक्षाः शिखण्डका यस्य तं वामदेवं प्रणमन्तमित्यर्थः । विदलिष्यमाणाः पराजेष्यमाणा विपक्षाः शत्रवो येन तम् । कुमारचयं राजवाहनादिकुमारगणम् । गाढं निर्भरम् । मितं स्वल्पं सत्यमवितथं यद्वाक्यं तेन । परिमितसत्याप्रियवचनेनेत्यर्थः । विहिताशीः कृताशीर्वादः ।

(२) भवदीयानां त्वदीयानां मनोरथानामभिलाषाणां फलमिव । समृद्धमतिशयेन वर्धितं लावण्यं सौन्दर्यं यस्मिन् तदिति तारुण्यविशेषणम् । नुतानि प्रशंसितानि मित्राणि सुहृदो यस्य सः । नूनं निश्चयेन । दिशां विजयस्यारम्भः प्रारम्भस्तस्य समयः कालः । अस्मिन्नेव समये दिग्विजयोद्योगः कर्त्तव्य इत्यर्थः । सकलक्लेशसहस्य सत्त्वसम्पन्नतया सकलक्लेशसहिष्णोः । द्विग्विजयप्रयाणं द्विग्विजययात्रा ।

* बालक्रीडा *

राजा के पास गये और वहां उसका सेवा-सत्कार किया । इसके बाद अपने चरणकमल में प्रणाम करते समय जिनका काकपक्ष मधुकर की शोभा को धारण करता था और जो भविष्य में विपक्षदलका दलन करनेवाला था, ऐसे कुमारसमूह का आलिङ्गन किया और परिमित एवं सत्य वाक्य से आशीर्वाद देकर बोले—

(२) हे भूवल्लभ ! अनुकूलमित्र आपका पुत्र राजवाहन आपके मनोरथफल की तरह समृद्ध लावण्य और तारुण्य का अनुभव करता है । अतः सहचरों के साथ यह इसका दिग्विजय करने का समय है । इस वास्ते दिग्विजय करने के लिए आप इस को भेज दीजिए ।

(३) कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतरयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाशासं राजानमकार्षुः। तरसा साचिव्यमितरेषां विधाय समुचितां बुद्धिमुपदिश्य शुभे मुहूर्ते सपरिवारं कुमारं विजयाय विससर्ज।

(४) राजवाहनो मङ्गलसूचकं शुभशकुनं विलोकयन्देशं कंचिदतिक्रम्य विन्ध्याटवीमध्यमविशत्। तत्र हेतिहतिकिणाङ्कं कालायसकर्कशकायं

* बालविबोधिनी *

(३) मारः कन्दर्पस्तद्वदभिरामा मनोहराः। रामो दाशरथिराद्यो येषां ते तेषां पौरुषमिव पौरुषं पराक्रमो येषां ते। रुषा कोपेन भस्मीकृता विनाशिता अरयः शत्रवो यैस्ते। रयेण वेगेनोपहसितस्तिरस्कृतः समीरणः पवनो यैस्ते। रणमभियातीति रणाभियानं तेन रणाभिमुखेन। यानेन यात्रया। अभ्युदयेऽभ्युन्नतौ आशासा यस्य तम्। तस्य राजवाहनस्य साचिव्यं मन्त्रित्वं सहायत्वमिति यावत्। इतरेषां अन्यकुमाराणाम्। समुचितां विजययात्रायां योग्याम्। सपरिवारं सपरिजनम्। विजयाय विजयं कर्तुमिति तुमर्थाच्च भाववचनादिति चतुर्थी। विससर्ज प्रेषयामास।

(४) मङ्गलसूचकं शुभोदर्कज्ञापकम्। शुभशकुनं सुनिमित्तम्। तत्र विन्ध्याटव्याम्। हेतीनामस्त्राणां हतिभिः प्रहारैर्ये किणाः शुष्कव्रणास्तेषामङ्काश्चिह्नानि यस्मिन् तम्। कालायसं लोहमिव कर्कशः कठोरः कायो देहो यस्य तम्। यज्ञोपवीतेन यज्ञसूत्रेण। अनुमेयोऽनुमातुं योग्यो विप्रभावो द्विजत्वं यस्य तम्। व्यक्तः प्रकटितः किरातप्रभावो वनचरसामर्थ्यं येन तम्। यज्ञसूत्रेण ब्राह्मणोऽसावित्यनुमीयते, स्वर-

* बालक्रीडा *

(३) काम के समान सुन्दर रामादि के तुल्य पौरुषशाली क्रोध से ही शत्रुओं को भस्म करने में समर्थ एवं वेग में वायु का उपहास करनेवाले कुमारवृन्द की युद्धयात्रा के द्वारा राज्य का अभ्युदय अवश्य होगा इस बात का निश्चय कर उन्होंने अन्य कुमारों को राजवाहन की सहायता में नियुक्त किया और समयोपयोगी उपदेश देकर शुभमुहूर्त में सपरिवार कुमार को विजय के लिये भेज दिया।

(४) राजवाहन भी मङ्गलसूचक शुभ शकुन देखता हुआ अनेक देशों का उल्लङ्घन करके विन्ध्याटवी में घुस गया। वहाँ आयुधों के आघात से बने हुए घाव के चिह्न एवं लोहे की तरह काले तथा उसके कर्कश शरीर से ऐसा मालूम

यज्ञोपवीतेनानुमेयविप्रभावं व्यक्तकिरातप्रभावं लोचनपरुषं कमपि पुरुषं ददर्श।

(५) तेन विहितपूजनो राजवाहनोऽभाषत—'ननु मानव, जनसङ्गरहिते मृगहिते घोरप्रचारे कान्तारे विन्ध्याटवीमध्ये भवानेकाकी किमिति निवसति। भवदंसोपनीतं यज्ञोपवीतं भूसुरभावं द्योतयति। हेतिहतिभिः किरातरीतिरनुमीयते। कथय किमेतत्' इति।

(६) 'तेजोमयोऽयं मानुषमात्रपौरुषो नूनं न भवति' इति मत्वा स पुरुषस्तद्वयस्यमुखान्नामजनने विज्ञाय तस्मै निजवृत्तान्तमकथयत्—'राजनन्दन,

* बालविबोधिनी *

पादिना तु किरातोऽयमिति स्पष्टं ज्ञायत इति भावः। लोचनयोर्नेत्रयोः परुषं कर्कशं भीषणदर्शनमित्यर्थः।

(५) तेन किरातवेषधारिणा पुरुषेण। विहितपूजनः कृतसत्कारः। जनसङ्गरहिते मनुष्यसम्पर्कशून्ये। मृगहिते पशूनामेव हितकरे। घोरो भयजनकः प्रचारः सञ्चारो यस्मिंस्तस्मिन्। किमिति किमर्थम्। भवतस्तव अंसं स्कन्धदेशमुपनीतं प्राप्तम्। भूसुरभावं विप्रभावम्। द्योतयति सूचयति। हेतिहतिभिः शस्त्राघातचिह्नैः। किरातरीतिः वनचरव्यवहारः। अनुमीयते तर्क्यते।

(६) तेजोमयः प्राचुर्ये मयट् तेन तेजःपुञ्जशरीर इत्यर्थः। अयमिति राजवाहनस्य निर्देशः। मानुषमात्रं मानुषप्रमाणं पौरुषं पराक्रमो यस्य सः। नूनमवश्यम्। मत्वा विचार्य। तस्य राजवाहनस्य वयस्यानां मित्राणां मुखात् तेषां

* बालक्रीडा *

होता था जैसे कोई किरात है, किन्तु यज्ञोपवीत से जिसका विप्रभाव अनुमित होता था, ऐसे भयंकर नेत्रवाले किसी पुरुष को देखा।

(५) उस पुरुषने राजवाहनकी पूजाकी। पूजा करनेके बाद राजवाहन बोले—हे मानव! जनसङ्ग से रहित मृगों के लिये हित और घोर जन्तुओं के प्रचार के योग्य विन्ध्याटवीमध्यगत कान्तार में आप अकेले क्यों निवास करते हैं? कन्धे पर पड़े हुए यज्ञोपवीत से आप ब्राह्मण मालूम पड़ते हैं, किन्तु आयुधों के आघात से आप में किरातों का आचार अनुमित होता है। यह क्या बात है, कहो।

(६) वह राजवाहन के मित्रों से पहलेही उनका नाम एवं उत्पत्ति जान चुका था। अतः—"इस तेजस्वी पुरुप का सामर्थ्य साधारण मनुष्य के जैसा नहीं है" ऐसा समझकर

केचिदस्यामटव्यां वेदादिविद्याभ्यासमपहाय निजकुलाचारं दूरीकृत्य सत्यशौचादिधर्मव्रातं परिहृत्य किल्बिषमन्विष्यन्तः पुलिन्दपुरोगमास्तदन्नमुपभुञ्जाना बहवो ब्राह्मणब्रुवा निवसन्ति, तेषु कस्यचित्पुत्रो निन्दापात्रचारित्रो मातङ्गो नामाहं सह किरातबलेन जनपदं प्रविश्य ग्रामेषु धनिनः स्त्रीबालसहितानानीयाटव्यां बन्धने निधाय तेषां सकलधनमपहरन्नुद्धृत्य वीतदयो व्यचरम् । कदाचिदेकस्मिन्कान्तारे मदीयसहचरगणेन जिघांस्यमानं भूसुरमेकमवलोक्य दयायत्तचित्तोऽब्रवम्–'ननु पापाः, न हन्तव्यो ब्राह्मण' इति।

* बालविबोधिनी *

कथनेनेत्यर्थः । नामजननेति–नाम आख्या जननमुत्पत्तिः–ते । कुलनामनीत्यर्थः । केचिदित्यस्य ब्राह्मणब्रुवा इत्यनेन सम्बन्धः । अपहाय परित्यज्य । निजकुलाचारं ब्राह्मणकुलोचितधर्मम् । धर्मव्रातं धर्मसमूहम् । परिहृत्य त्यक्त्वा । किल्बिषं पापम् । पापं किल्बिषकल्मषमित्यमरोक्तेः । पुलिन्दाना किराताना पुरोगमा अग्रगाः, पुलिन्दाः पुरोगमा नेतारो येषां ते इति वा । तदन्नं म्लेच्छान्नमुपभुञ्जाना भक्षयन्तः । ब्राह्मणब्रुवाः ब्राह्मणाधमाः । निन्दापात्रं गर्हणीयं चारित्रं चरितं यस्य सः । किरातबलेन शबरसैन्येन। धनिनो धनाढ्यान् । स्त्रीभिरबलाभिर्बालैः शिशुभिश्च सहितान् युक्तान् । उद्धृत्य विनाश्य । वीताऽपगता दया करुणा यस्य सः । जिघांस्यमानं हन्तुमिष्यमाणं हननार्थं नीयमानमिति भावः । भूसुरं ब्राह्मणम् । दयया करुणया आयत्तं आक्रान्तं चित्तं हृदयं यस्य सः । अब्रवमकथयम् ।

* बालक्रीडा *

उसने अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ कर दिया । वह बोला–हे राजनन्दन ! इस अटवी में वेदादि विद्याओं का अभ्यास ब्राह्मणोचित कुलाचार एवं सत्य तथा शौच आदि धर्मको छोड़कर पापाचार में रत म्लेच्छों के अधीन रहनेवाले और उन्हीं के अन्न को खाने वाले बहुत से कुत्सित ब्राह्मण रहते हैं। उन्हीं में से किसी एक ब्राह्मण का पुत्र चारित्र से निन्दित मैं मतङ्ग हूँ। मैं भी किरातों की सेना के साथ जनपदों में जाता, वहां ग्रामों में से पुत्र–कलत्र सहित धनियों को पकड़ लाता और बन्धन में रखकर उनका सब धन छीन लेता था। इसी तरह दयारहित होकर मैं घूमता फिरता था। एक बार एक वन में अपने साथी लोगोंको ब्राह्मण के मारने के लिये उद्योग करते हुए देखकर मुझे दया आगई और मैं बोला–अरे पापियो ! इस ब्राह्मण को मत मारो।

(७) ते रोषारुणनयना मां बहुधा निरभर्त्सयन् । तेषां भाषणपारुष्यमसहिष्णुरहमवनिसुररक्षणाय चिरं प्रयुध्य तैरभिहतो गतजीवितोऽभवम् ।

(८) ततः प्रेतपुरीमुपेत्य तत्र देहधारिभिः पुरुषैः परिवेष्टितं सभामध्ये रत्नखचितसिंहासनासीनं शमनं विलोक्य तस्मै दण्डप्रणाममकरवम् । सोऽपि मामवेक्ष्य चित्रगुप्तं नाम निजामात्यमाहूय तमवोचत्—'सचिव, नैषोऽमुष्य मृत्युसमयः । निन्दितचरितोऽप्ययं महीसुरनिमित्तं गतजीवितोऽभूत् ।

* बालविबोधिनी *

(७) ते पुलिन्दाः । रोषेण क्रोधेन अरुणानि रक्तवर्णानि नयनानि नेत्राणि येषां ते । बहुधा नानाप्रकारेण । निरभर्त्सयन् अतर्जयन् । भाषणपारुष्यं कर्कशवचनानि । असहिष्णुः सोढुमशक्तः । अवनिसुररक्षणाय ब्राह्मणत्राणाय । चिरं दीर्घकालम् । प्रयुध्य युद्धं कृत्वा । अभिहतः प्रहतः । गतं जीवितं यस्य सः गतप्राणो मृत इति शेषः ।

(८) प्रेतपुरीं यमालयम् । रत्नैर्मणिभिः खचिते प्रत्युप्ते सिंहासने आसीनमुपविष्टम् । शमनं यमराजम् । दण्डप्रणामं दण्डवन्नमस्कारम् । सोऽपि यमराजोऽपि । निजामात्यं स्वमन्त्रिणम् । अमुष्य पुरुषस्य । मृत्युसमयः मरणकालः । निन्दितं गर्हितं चरितं चरित्रं यस्य सः । महीसुरनिमित्तं ब्राह्मणार्थम् । इतः प्रभृति अद्यारभ्य । विगलितं विनष्टं कल्मषं पापं यस्य तस्य । अस्य पुरुषस्य । पुण्यकर्मणां

* बालक्रीडा *

(७) इस बातपर उन लोगों ने मुझे बहुत फटकारा और मारे क्रोध के उनके नेत्र लाल होगये । उन के कठोर भाषण को मैं नहीं सह सका और ब्राह्मण की रक्षा के लिये उनसे लड़ता-लड़ता मर गया ।

(८) मरने के बाद मैं प्रेतपुरी में पहुंचा । वहां देहधारी पुरुषों से घिरे और सभा के मध्य में रत्नयुक्त सिंहासन पर बैठे हुये यमराज को देखकर मैंने दण्डवत् प्रणाम किया । उस ने भी मुझे देखा और चित्रगुप्तनामक अपने सचिव को बुलाकर कहा-हे सचिव ! यह इसके मरने का समय नहीं है । यद्यपि इसका चरित्र दूषित है तथापि यह ब्राह्मण के लिये मरा है । जिसके फलस्वरूप पापों से रहित इसकी बुद्धि आज से पुण्यकर्म के लिये उदित होगी । अतः पापियों को

इत प्रभृति विगलितकल्मषस्यास्य पुण्यकर्मकरणे रुचिरुदेष्यति। पापिष्ठै-रनुभूयमानमत्र यातनाविशेषं विलोक्य पुनरपि पूर्वशरीरमनेन गम्यताम्' इति।

(९) चित्रगुप्तोऽपि तत्र तत्र संतप्तेष्वायसस्तम्भेषु बध्यमानान्, अत्युष्णीकृते विततशरावे तैले निक्षिप्यमाणान्, लगुडैर्जर्जरीकृतावयवान्, निशितटङ्कैः परितक्ष्यमाणानपि दर्शयित्वा पुण्यबुद्धिमुपदिश्य मामसुञ्चत्। तदेव पूर्वशरीरमहं प्राप्तो महाटवीमध्ये शीतलोपचारं रचयता महीसुरेण परीक्ष्यमाणः शिलायां शायितः क्षणमतिष्ठम्।

(१०) तदनु विदितोदन्तो मदीयवंशबन्धुगणः सहसागत्य मन्दिर-

* बालविबोधिनी *

करणेऽनुष्ठाने। रुचिरभिलाषः। उदेष्यति उत्पत्स्यते। पापिष्ठैः पापाचारिभिः। अनुभूयमानं भुज्यमानम्। अत्र यमालये नरके वा। यातनाविशेषं पीडाविशेषम्। गम्यतां प्राप्यताम्।

(९) आयसस्तम्भेषु लौहस्तम्भेषु। विततशरावे विस्तीर्णकटाहे। तत्रस्थे त्यर्थः। लगुडैर्वंशदण्डैर्यष्टिभिरिति यावत्। जर्जरीकृता प्रहारेण शिथिलीकृता अवयवा अङ्गानि येषां तान्। निशितटङ्कैस्तीक्ष्णपाषाणदारणैः। परितक्ष्यमाणान् तनूक्रियमाणान्। रचयता कुर्वता। परीक्ष्यमाणः जीवति वा नवेति दृश्यमानः।

(१०) विदितो ज्ञात उदन्तो वृत्तान्तो येन सः। मदीयवंशबन्धुगणः मम ज्ञा-

* बालक्रीडा *

अनुभव कराई जानेवाली यातनाओं को दिखाकर फिर इस को पहिले शरीर में भेज दो।

(९) चित्रगुप्त ने भी मुझे ले जाकर दिखाया। वहां मैंने देखा—कहीं पर लोग गरम लोहे के खम्भों में बांधे जा रहे थे, कहीं पर अत्यन्त गरम किये गये बड़े २ कड़ाहों में रक्खे हुए तेल में फेंके जारहे थे, कहीं पर लट्ठ के प्रहार से उनके अवयव जीर्ण होगये थे, कहीं पर छैनी से भेदन किये जारहे थे, उन्होंने ऐसे पापियों को दिखाया और पुण्य बुद्धि का उपदेश देकर मुझे छोड़दिया। उसी पूर्वशरीर में मैं फिर पहुंच गया। उस महाटवी में वही ब्राह्मण शीतोपचार से रक्षा कर रहा था और मेरे शरीर शिला पर लिटा रक्खा था। इस अवस्था में क्षण भर रहा।

(१०) इसके बाद मेरे वंश के बन्धु लोग भी इस वृत्तान्त को जानकर अचा-

मानीय मामपक्रान्तव्रणमकरोत् । द्विजन्मा कृतज्ञो मह्यमक्षरशिक्षां विधाय विविधागमतन्त्रमाख्याय कल्मषक्षयकारणं सदाचारमुपदिश्य ज्ञानेक्षण-गम्यमानस्य शशिखण्डशेखरस्य पूजाविधानमभिधाय पूजां मत्कृतामङ्गी-कृत्य निरगात् ।

(११) तदारभ्याहं किरातकृतसंसर्गं बन्धुवर्गमुत्सृज्य सकललोकैक-गुरुमिन्दुकलावतंसं चेतसि स्मरन्नस्मिन्कानने दूरीकृतकलङ्को वसामि । देव, भवते विज्ञापनीयं रहस्यं किंचिदस्ति । आगम्यताम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

त्रिवर्गः । अपक्रान्ताः चिकित्सिता व्रणाः प्रहारस्थानानि यस्य तम् । द्विजन्मा ब्राह्मणः । अक्षरशिक्षां लिपिविज्ञानम् । विविधागमानां नानाशास्त्राणां तन्त्रं सिद्धान्तम् । आख्याय उपदिश्य । कल्मषाणां पापानां क्षये नाशे कारणं निमित्तभूतम् । सताम् आचारं—सज्जनैरुपदर्शितं मार्गम् । ज्ञानेक्षणेन ज्ञाननेत्रेण गम्यमानस्य न तु चक्षुषा दृश्यस्येत्यर्थः । शशिखण्डशेखरस्य शिवस्य । पूजाविधानं पूजनविधिम् । अङ्गीकृत्य स्वीकृत्य गृहीत्वेत्यर्थः । निरगात् निर्गतः ।

(११) किरातैः कृतः संसर्गः सम्बन्धो येन तमिति बधुवर्गस्य विशेषणम् । उत्सृज्य त्यक्त्वा सकलस्य लोकस्य संसारस्यैकोऽद्वितीयो गुरुस्तम् । इन्दोः कला अवतंसः शिरोभूषणं यस्य तं शिवमित्यर्थः । दूरीकृतकलङ्को निष्कलङ्को निष्पाप इति यावत् । विज्ञापनीयं कथनीयम् । रहस्यं गोप्यम् ।

* बालक्रीडा *

तक आये और घर ले जाकर उन्होंने मरहम-पट्टी करके मेरे घावों को ठीक किया वह कृतज्ञ ब्राह्मण मुझे अक्षरशिक्षा, विविध आगम के सिद्धान्त, पापनाशक सदाचार और ज्ञानचक्षु से दृश्य भगवान् साम्बसदाशिव के पूजाविधान का उपदेश देकर तथा मेरी दी हुई भेंट लेकर चला गया ।

(११) उसी दिन से किरातों के साथ रहनेवाले बन्धुओं को छोड़कर सकललोक के एकमात्र कारण भगवान् साम्बसदाशिव का चित्त में स्मरण करता हुआ सब कलङ्कों को दूर करके मैं इस वन में रहता हूं । हे देव ! आप से एकान्त में कुछ कहना है । अतः इधर आइये ।

(१२) स वयस्यगणादपनीय रहसि पुनरेनमभाषत—'राजन्, अतीते निशान्ते गौरीपतिः स्वप्नसंनिहितो निद्रामुद्रितलोचनं विबोध्य प्रसन्नवदनकान्तिः प्रश्रयानतं मामवोचत्—'मातङ्ग, दण्डकारण्यान्तरालगामिन्यास्तटिन्यास्तीरभूमौ सिद्धसाध्याराध्यमानस्य स्फटिकलिङ्गस्य पश्चादद्रिपतिकन्यापदपङ्क्तिचिह्नितस्याश्मनः सविधे विधेराननमिव किमपि बिलं विद्यते। तत्प्रविश्य तत्र निक्षिप्तं ताम्रशासनं शासनं विधातुरिव समादाय विधिं तदुपदिष्टं दिष्टविजयमिव विधाय पाताललोकाधीश्वरेण भवता भवितव्यम्। भवत्साहाय्यकरो राजकुमारोऽद्य श्वो वा समागमिष्यति'

* बालविबोधिनी *

(१२) स मातङ्गः। वयस्यगणात् सुहृन्मण्डलात्। अपनीय दूरं नीत्वा। रहसि निर्जने। एनं राजवाहनम्। अतीते विगते। निशान्ते रात्रिशेषे। स्वप्ने स्वप्नावस्थायां संनिहितः समीपमागतः। निद्रया मुद्रिते निमीलिते लोचने यस्य तम्। विबोध्य जागरयित्वा। प्रसन्ना सौम्यमधुरा वदनस्य मुखस्य कान्तिः शोभा यस्य सः। प्रश्रयेण विनयेनानतं नम्रशिरसम्। दण्डकारण्यस्य तदाख्यवनस्य अन्तराले मध्ये गामिन्या गमनशीलायास्तटिन्या नद्याः। सिद्धैः गुह्यकादिभिः साध्यैः गणदेवताभिश्च आराध्यमानस्य उपास्यमानस्य। स्फटिकलिङ्गस्य स्फटिकनिर्मितशिवस्य। अद्रिपतेः हिमालयस्य कन्यायाः पार्वत्याः पदपङ्क्त्या चरणपद्धत्या चिह्नितस्याङ्कितस्य। अश्मनः पाषाणस्य। सविधे समीपे। विधेर्ब्रह्मणः। आननं मुखम्। बिलं विवरं छिद्रमिति यावत्। तत् बिलम्। निक्षिप्तं स्थापितम्। ताम्रशासनं ताम्रफलकम्। शासनमादेशम्। समादाय गृहीत्वा। तत्र ताम्रशासने उपदिष्टं

* बालक्रीडा *

(१२) राजवाहन को मित्रवर्ग से अलग कर एकान्त में ले जाकर उसने कहा—हे राजन्! बीती हुई शेष रात्रि में प्रसन्नमुख भगवान् गौरीपति ने सोते हुए मुझे जगाकर कहा कि—हे मातङ्ग! दण्डकारण्य के बीच में जानेवाली नदी के तट पर सिद्ध एवं साध्यों से आराध्यमान स्फटिकलिङ्ग के पीछे भगवती की पदपङ्क्ति से चिह्नित पाषाण के पास ब्रह्माके मुख की तरह कोई बिल है। उस बिल में घुस कर वहां पड़े हुये ताम्रशासन को ब्रह्मा के शासनपत्र की तरह ले लो और उस में लेखी हुई विधि को भाग्य से प्राप्त विजय की नाई स्वीकार कर तुम पाताललोक

इति । तदादेशानुगुणमेव भवदागमनमभूत् । साधनाभिलाषिणो मम तोषिणो रचय साहाय्यम्' इति ।

(१३)'तथा' इति राजवाहनः साकं मातङ्गेन नमितोत्तमाङ्गेन विहायार्धरात्रे निद्रापरतन्त्रं मित्रगणं वनान्तरमवाप । तदनु तदनुचराः कल्ये साकल्येन राजकुमारमनवलोकयन्तो विषण्णहृदयास्तेषु तेषु वनेषु सम्यगन्विष्यानवेक्षमाणा एतदन्वेषणमनीषया देशान्तरं चरिष्णवोऽतिसहि-

* बालविबोधिनी *

लिखितम् । दिष्टस्य भाग्यस्य विजयं विजयकारिणम् । दैवं दिष्टं भागधेयं भाग्यं स्त्री नियतिर्विधिरित्यमरः । भवतस्तव साहाय्यकरः साहाय्यकारी । श्वः आगामिदिने । तदादेशानुगुणं तदादेशानुरूपम् । साधनाभिलाषिणः तत्कार्यसिद्धिं कामयतः । तोषिणः सन्तुष्टस्य । रचय कुरु ।

(१३) तथा 'एवमस्तु' इति प्रार्थनां स्वीकृत्येत्यर्थः । नमितोत्तमाङ्गेन नम्रशिरसा । विहाय परित्यज्य । मित्रगणमिति शेषः । अर्धरात्रे निशीथे । निद्रापरतन्त्रं निद्राकुलम् । वनान्तरं अपरं वनम् । कल्ये प्रभाते । प्रत्यूषोऽहर्मुखं कल्यमित्यमरः । साकल्येन सामस्त्येन—सर्वं सर्वत्र अन्विष्यापि इत्यर्थः । विषण्णं खिन्नं हृदयं येषां ते । अनवेक्षमाणाः अपश्यन्तः । एतस्य कुमारस्य अन्वेषणस्यानुसन्धानस्य मनीषया बुद्ध्या । चरिष्णवः भ्रमणशीलाः । अतिसहिष्णवः क्लेशसहन-

* बालक्रीडा *

के अधीश्वर हो जाओ और इस कार्य में तुम्हारी सहायता करनेवाला राजकुमार आज या कल आ जायगा । भगवान् के आदेश के अनुकूल ही आपका आगमन भी होगया । अतः आप मेरी सहायता करें ।

(१३) राजवाहन भी बहुत अच्छा कहकर अर्धरात्रि में निद्रापरतन्त्र मित्रगण को छोड़कर प्रणामार्थ नतमस्तक मातङ्ग के साथ दूसरे वन में चलागया । उस के बाद प्रातःकाल राजवाहन के अनुचर चारों तरफ खोजने पर भी राजवाहन को नहीं देख कर बड़े दुःखी हुए । किन्तु जब और और वनों में अच्छी तरह खोज कर भी नहीं देख पाये, तब राजवाहन को खोजने के लिये देशान्तर में

शीला निश्चितपुनःसंकेतस्थानाः परस्परं वियुज्य ययुः ।

(१४) लोकैकवीरेण कुमारेण रक्ष्यमाणः संतुष्टान्तरङ्गो मातङ्गोऽपि [illegible] निःशङ्कं प्रविश्य गृहीतताम्रशासनो [illegible] त्पत्तनस्य निकटे केलीकाननकासारस्य विततसारसस्य समीपे नानाविधेनेशशासनविधानोपपादितेन हविषा होमं विरच्य प्रत्यूहपरिहारिणि सविस्मयं विलोकयति राजवाहने समिदाज्यसमुज्ज्वलिते ज्वलने पुण्यगेहं देहं मन्त्रपूर्वकमाहुतीकृत्य तडित्समा-

* बालविबोधिनी *

शीलाः । निश्चितं निर्णीतं पुनः सङ्केतस्थानं पुनः सङ्गमस्थानं यैस्ते । वियुज्य पृथग्भूय ।

(१४) लोकेषु भुवनेषु एकोऽद्वितीयो वीरो योधस्तेन । सन्तुष्टान्तरङ्गः हृष्टमानसः । शशिशेखरेण शिवेन कथितात् आदिष्टात् अभिज्ञानात् चिह्नात् परिज्ञातमवगतम् । निःशङ्कं निर्भयम् । रसातलं पातालम् । पथा मार्गेण । पत्तनस्य नगरस्य । केलीकानने क्रीडोद्याने यत्कासारः सरोवरः तस्य । वितताः सर्वतः प्रसृताः सारसाः पक्षिविशेषा यत्र तस्य । ईशस्य शिवस्य यत् शासनविधानं आज्ञाविधिस्तेनोपपादितेन सम्पादितेन । हविषा हवनीयद्रव्येण आज्यादिनेत्यर्थः । प्रत्यूहपरिहारिणि विघ्ननिवारके । समिद्भिः काष्ठैः आज्यैर्घृतैश्च समुज्ज्वलिते उद्दीपिते । ज्वलने वह्नौ । पुण्यस्य सुकृतस्य गेहमाधारभूतं देहस्य विशेषणमेतत् । मन्त्रपूर्वकं समन्त्रकम् । आहुतीकृत्य ज्वलने क्षिप्त्वा । तडिता विद्युता समाना तुल्या

* बालक्रीडा *

जाने को इच्छुक अतिसहिष्णु कुमारवर्ग पुनः मिलने के लिये संकेतस्थान का निश्चय करके परस्पर वियुक्त होकर चल दिया ।

(१४) संसार के प्रधान वीर कुमार द्वारा रक्षित होने से सन्तुष्टान्तरङ्ग मातङ्ग ने भी शिवनिर्दिष्ट चिह्नों से परिज्ञात बिल में निर्भय घुसकर ताम्रशासन को ले लिया और उसी मार्ग से रसातल में जाकर वहां किसी शहर के पास सारसपक्षियों से युक्त क्रीडावन के तालाब के समीप ईश्वर की आज्ञाविधि के अनुकूल सम्पादित नानाप्रकार के हवि का होम करके विघ्नों को दूर करनेवाले राजवाहन के आश्चर्यपूर्वक देखने ? समिधा एवं घृत से समुद्दीप्त अग्नि में पुण्यगेह देह की आहुति कर दी और इसके बाद बिजली के समान चमकता हुआ

नकान्ति दिव्यां तनुमलभत ।

(१५) तदनु मणिमयमण्डनमण्डलमण्डिता सकललोकललनाकुल-ललामभूतकन्यका काचन विनीतानेकसखीजनानुकम्प्यमाना कलहंसगत्या शनैरागत्यावनिसुरोत्तमाय मणिमेकमुज्ज्वलाकारमुपायनीकृत्य तेन 'का त्वम्' इति पृष्टा सोत्कण्ठा कलकण्ठस्वनेन मन्दंमन्दमुदञ्जलिरभापत—

(१६) 'भूसुरोत्तम, अहमसुरोत्तमनन्दिनी कालिन्दी नाम । मम पितास्य लोकस्य शासिता महानुभावो निजपराक्रमासहिष्णुना विष्णुना दूरीकृतामरे समरे यमनगरातिथिरकारि । तद्वियोगशोकसागरमग्नां माम-

* वालविवोधिनी *

कान्तिः प्रभा यस्यास्ताम् । दिव्यां स्वर्गीयाम् । तनुं देहम् ।

(१५) मणिमयैः रत्नप्रचुरैर्मण्डनमण्डलैर्भूपणगणैर्मण्डिताऽलंकृता । सकललोकस्य निखिलसंसारस्य ललनाकुलेपु कामिनीगणेपु ललामभूता भूपणस्वरूपा कन्यका । विनीता नम्रा । अनेकैर्बहुभिः सखीजनैः सहचरीवर्गैरनुगम्यमानाऽनुि यमाणा । कलहंसगत्या राजहंसवन्मन्थरगमनेन । अवनिसुरोत्तमाय ब्राह्मणवराय मातङ्गायेत्यर्थः । उपायनीकृत्य उपहारीकृत्य । तेन मातङ्गेन । सोत्कण्ठा सोत्सुका कलकण्ठस्वनेन कोकिलस्वरेण । उदञ्जलिर्बद्धाञ्जलिः ।

(१६) लोकस्य पातालस्य । शासिता पालयिता । महानुभावो महाप्रतापः निजस्य स्वस्य (मत्पितुरित्यर्थः) पराक्रमस्य असहिष्णुना सहनाशक्तेन । दूरीकृत पराजिताः अमरा देवा यस्मिंस्तस्मिन् । यमनगरस्य यमालयस्यातिथिरभ्यागतः

* वालक्रीडा *

दिव्य देह प्राप्त किया ।

(१५) उस के बाद मणियों के भूपण पहिने हुए सम्पूर्ण स्त्रियों में उ. एक कन्या ने शिक्षित सखियों के साथ कलहंस की तरह चलती हुई उस दिव्य दे-धारी ब्राह्मण के पास आकर उसे एक चमकीला मणि भेंट किया । जव उसने पूछ कि तुम कौन हो ? तव वड़ी उत्कण्ठा से कोकिल के स्वर में वह धीरे २ वोली

(१६) हे भूसुरोत्तम ? मैं असुरराज की लड़की हूं, कालिन्दी मेरा नाम है उस लोक के शासक महानुभाव मेरे पिता को पराये पराक्रम को सहन नहीं क. वाले विष्णु ने युद्ध में—जिसमें देवता भी परास्त होगये थे—मार दिया । उस

वेक्ष्य कोऽपि कारुणिकः सिद्धतापसोऽभाषत—

(१७) 'बाले, कश्चिद्दिव्यदेहधारी मानवो नवो वल्लभस्तव भूत्वा सकलं रसातलं पालयिष्यति' इति। तदादेशं निशम्य घनशब्दोन्मुखी चातकी वर्षागमनमिव तवालोकनकांक्षिणी चिरमतिष्ठम्। मन्मनोरथफलायमानं भवदागमनमवगम्य मद्राज्यावलम्बभूतामात्यानुमत्या मदनकृतसारथ्येन मनसा भवन्तमागच्छम्। लोकस्यास्य राजलक्ष्मीमङ्गीकृत्य मां तत्सपत्नीं करोतु भवान्' इति।

(१८) मातङ्गोऽपि राजवाहनानुमत्या तां तरुणीं परिणीय दिव्याङ्ग-

* बालविबोधिनी *

अकारि कृत हृत इत्यर्थः। तस्य पितुर्वियोगो विनाशस्तस्मात् शोक एव सागरस्तत्र मग्ना ताम्। कारुणिको दयालु।

(१७) वल्लभ पतिः। तस्य सिद्धतापसस्यादेशमाज्ञाम्। घनस्य मेघस्य शब्देन गर्जनेन उन्मुखी ऊर्ध्वमुखी। मेघध्वनिं श्रुत्वोर्ध्वाननेत्यर्थः। तवालोकनकांक्षिणी त्वद्दर्शनाभिलाषिणी। चिरं दीर्घकालम्। मम मनोरथोऽभिलाषस्तस्य फलं तद्वदाचरतीति। मम राज्यस्य लोकस्य पातालस्येत्यर्थः। अवलम्बभूतानां रक्षकाणाममात्यानां मन्त्रिणामनुमत्या सम्मत्या। मदनेन कामेन कृतं सारथ्यं सारथिकर्म यस्य तेन मदनचालितेनेत्यर्थः। तस्या राजलक्ष्म्याः सपत्नीं प्रतिपक्षवनिताम्।

(१८) राजवाहनानुमत्या राजकुमारादेशेन। परिणीयोद्वाह्य। दृष्टनरोऽपि

* बालक्रीडा *

वियोग से शोकसमुद्र में मग्न मुझको देख कर किसी परम दयालु सिद्ध महात्मा ने आशीर्वाद दिया—

(१७) हे बाले! दिव्यदेहधारी कोई तरुण मनुष्य तुम्हारा पति होगा और वह इस रसातल की रक्षा करेगा। उसी के आदेश से मैं घनागम के लिये चातकी की तरह तुम्हारी प्रतीक्षा में बैठी रही। मेरे मनोरथ के फलस्वरूप आपके आगमन को समझकर मेरे राज्य के आलम्बनभूत अमात्यों की अनुमति से कामवासना से आपके पास आई हूँ। अतः इस लोक की राज्यलक्ष्मी को अङ्गीकार करके आप मुझे उसकी सौत बनाइये अर्थात् अपनाइये।

(१८) मातङ्ग भी राजवाहन की अनुमति से उस तरुणी से विवाह करके

नालाभेन हृष्टतरो रसातलराज्यमुररीकृत्य परमानन्दमाससाद।

(१९) वञ्चयित्वा वयस्यगणं समागतो राजवाहनस्तदवलोकनकौतूहलेन भुवं गमिष्णुः कालिन्दीदत्तं क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनं मणिं साहाय्यकरणसंतुष्टान्मातङ्गाल्लब्ध्वा कंचनाध्वानमनुवर्तमानं तं विसृज्य बिलपथेन तेन निर्ययौ। तत्र च मित्रगणमनवलोक्य भुवं बभ्राम।

(२०) भ्रमंश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य तत्र विशश्रमिषुरान्दोलिकारूढं रमणीसहितमाप्तजनपरिवृतमुद्याने समागतमेकं पुरुषम

* बालविबोधिनी *

शयेन हृष्टः। उररीकृत्य स्वीकृत्य तद्राज्याधिपतिर्भूत्वेत्यर्थः। आससाद प्राप।

(१९) वञ्चयित्वा विप्रलभ्य। वयस्यगणं मित्रमण्डलम्। तदवलोकनकौतूहलेन तेषां सुहृदां अवलोकनकौतूहलेन दर्शनकौतुकेन। भुवं पृथिवीम्। गमिष्णु गमनशीलोऽर्थात्पातालात्। कालिन्द्या मातङ्गपत्न्या दत्तमर्पितम्। क्षुत्पिपासेति यस्य प्रभावात् क्षुत्पिपासादयो नश्यन्तीत्यर्थः। मणिं रत्नम्। साहाय्यकरणसन्तुष्टात् साहाय्यविधानपरितुष्टात्। कञ्चन कियन्तम्। अनुवर्तमानमनुसरन्तम्।

(२०) विशाले महति उपशल्ये ग्रामप्रान्तभागे। आक्रीडमुद्यानम्। विशश्रमिषुः विश्रमितुमिच्छुः। आन्दोलिकायां दोलायामारूढमुपविष्टम्। आप्तजनै

* बालक्रीडा *

दिव्य स्त्री की प्राप्ति से प्रसन्न हुआ और रसातल के राज्य को पाकर वह परमानन्द में विभोर होगया।

(१९) राजवाहन मित्रगणकी वंचना करके आया था। अतः उन मित्रों को देखने के लिये जब भूमितल पर जाना चाहा, तब भूख और प्यास के दुःख को दूर करनेवाली एक मणि कालिन्दी ने उसको दी और सहायता करने से सन्तुष्ट मातङ्ग पहुँचाने के लिये उसके पीछे कुछ दूर गया, किन्तु राजवाहन उसको बीच ही में लौटा कर स्वयं बिल के मार्ग से निकल गया। परन्तु वहाँ आकर जब मित्रगण को नहीं पाया तब भूमण्डल पर घूमने लगा।

(२०) घूमते २ एक दिन वह विशालापुरी के पास किसी बगीचे म पहुंचा और वहां विश्राम करने की चेष्टा करने लगा। तब तक पालकी में आरूढ

पश्यत् । सोऽपि परमानन्देन पल्लवितचेता विकसितवदनारविन्दः 'मम स्वामी सोमकुलावतंसो विशुद्धयशोनिधी राजवाहन एषः । महाभाग्यतयाकाण्ड एवास्य पादमूलं गतवानस्मि । संप्रति महान्नयनोत्सवो जातः' इति ससंभ्रममान्दोलिकाया अवतीर्य सरभसपदविन्यासविलासिहर्षोत्कर्षचरितस्त्रिचतुरपदान्युद्गतस्य चरणकमलयुगलं गलदुल्लसन्मल्लिकावलयेन मौलिना पस्पर्श ।

* बालविबोधिनी *

रात्मीयैः परिवृत परिवेष्टितम् । सोऽपि आन्दोलिकारूढः पुरुषोऽपि । पल्लवितं विकसित चेतो हृदयं यस्य स प्रसन्नहृदय इत्यर्थः । विकसितवदनारविन्द प्रफुल्लमुखकमल । स्वामी प्रभुः । सोमकुलावतंस चन्द्रवंशभूषणम् । विशुद्धयशोनिधिर्विमलकीर्त्तिशेवधि । महद्भाग्य यस्य तस्य भावस्तया अनुकूलदैवप्रभावेण अकाण्डे असमये सहसेत्यर्थः । पादमूलं चरणसमीपम् । नयनोत्सवो नेत्रानन्दः । ससम्भ्रमं सत्वरादरम् । सरभसेन वेगवता पदविन्यासेन चरणनिक्षेपेण विलसतीति विलासी तथाभूतश्चासौ हर्षोत्कर्षो चरिते यस्य स चेति कर्मधारयः । त्रीणि चत्वारि वेति त्रिचतुराणि । उद्गतस्य चलितस्य । गलद् अवनमनेन स्रवद् उल्लसन्मल्लिकावलयं विकसन्मल्लिकामाल्य यस्मात्तेन । मौलिना शीर्षेण । पस्पर्श चरणयुगलमिति शेषः, नमश्चकारेत्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

रमणीयुक्त एवं आप्त जनों से परिवृत होकर आये हुए एक पुरुष को देखा । परम आनन्द से प्रसन्न चित्त एवं विकसित वह मुख पुरुष भी—"अये ! यह तो सोमकुल के भूषण निर्मल यश-समुद्र मेरे स्वामी राजवाहन हैं । बड़े भाग्य से अचानक मैं इनके चरणों में पहुंच गया । इस समय बड़ा आनन्द हुआ ।" ऐसा कहता हुआ आदर के साथ पालकी से उतर गया और जब तक राजवाहन तीन चार पैर आगे बढ़ा होगा कि तभी बड़े वेग से विलास के साथ पैरों को रखते हुये और प्रत्येक आचरण से हर्ष को प्रकट करते हुए उसने अपने मस्तक से राजवाहन के चरणकमलयुगल का स्पर्श किया । प्रणाम करते समय मस्तक के नम्र करने से खिली हुई मल्लिका की मालाएँ उसके मस्तक से गिर रही थीं ।

(२१) प्रमोदाश्रुपूर्णो राजा पुलकिताङ्गं तं गाढमालिङ्ग्य 'अये सौम्य सोमदत्त!' इति व्याजहार। ततः कस्यापि पुंनागभूरुहस्य छायाशीतले तले संविष्टेन मनुजनाथेन सप्रणयमभाणि—'सखे, कालमेतावन्तं देशे कस्मिन्, प्रकारेण केनास्थायि भवता, संप्रति कुत्र गम्यते, तरुणी केयम्, एष परिजनः संपादितः कथम्, कथय' इति।

(२२) सोऽपि मित्रसंदर्शनव्यतिकरापगतचिन्ताज्वरातिशयो मुकुलितकरकमलः सविनयमात्मीयप्रचारप्रकारमवोचत्—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते द्विजोपकृतिर्नाम द्वितीय उच्छ्वासः ॥

* बालविबोधिनी *

(२१) प्रमोदाश्रुभिः सुहृदवलोकनानन्दजनितनेत्रवारिभिः पूर्णः । पुलकिताङ्ग रोमाञ्चितशरीरम् । सौम्य-सुन्दर-मनोहरेति यावत् । व्याजहार उवाच । पुन्नागभूरुहस्य नागकेसरवृक्षस्य । संविष्टेनोपविष्टेन । मनुजनाथेन राज्ञा । सम्पादितः प्राप्तः ।

(२२) सोऽपि सोमदत्तोऽपि । मित्रस्य सुहृदः सन्दर्शनव्यतिकरेण अवलोकनव्यापारेण अपगतो विनष्टः चिन्ताज्वरातिशयो यस्य सः । मुकुलितकरकमल बद्धाञ्जलिः । आत्मीयप्रचारप्रकारं निजभ्रमणवृत्तान्तम् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्य कृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरित व्याख्यायां द्वितीयोच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

(२१) आनन्दविभोर हुए राजवाहन ने भी पुलकिताङ्ग हो उसका गाढ आलिङ्गन करके "अये सोमदत्त" ऐसा कहा और उसके बाद किसी नागकेसर वृक्ष की ठण्डी छाया में बैठ मनुजनाथ ने बड़े प्रेमसे कहा—"सखे! इतने समय तक तुम किस स्थान में कैसे रहे? इस समय कहां जारहे हो और यह तरुणी कौन है और यह परिजन कहां से पाये, कहो।"

(२२) वह भी मित्र के देखने से चिन्ताजनित ज्वर के वेग से मुक्त होता हुआ हाथ जोड़कर बड़े विनय से अपने घूमने के प्रकार को कहने लगा।

इति श्रीमधुसूदनशास्त्रीकृत दशकुमार के हिन्दी अनुवाद बालक्रीडा में द्विजोपकृतिनामक द्वितीय उच्छ्वास समाप्त हुआ।

तृतीयोच्छ्वासः ।

(१) 'देव, भवच्चरणकमलसेवाभिलाषीभूतोऽहं भ्रमन्नेकस्यां वनावनौ पिपासाकुलो लतापरिवृतं शीतलं नदसलिलं पिबन्नुज्ज्वलाकारं रत्नं तत्रैकमद्राक्षम् । तदादाय गत्वा कंचनाध्वानमम्बरमणेरत्युष्णतया गन्तुमक्षमो वनेऽस्मिन्नेव किमपि देवतायतनं प्रविष्टो दीनाननं बहुतनयसमेतं स्थविरमहीसुरमेकमवलोक्य कुशलमुदितदयोऽहमपृच्छम् ।

(२) कार्पण्यविवर्णवदनो महाशापूर्णमानसोऽवोचदग्रजन्मा—'महा-

* बालविबोधिनी *

(१) सोमदत्त कथयति देवेति—भवतस्तव चरणकमलयोः पादपद्मयोः सेवायाः शुश्रूषाया अभिलाषीभूतः साभिलाषः । वनावनौ काननप्रदेशे । तत्र नदसलिले । कञ्चन कियन्तम् । अम्बरमणेः सूर्यस्य । देवतायतनं देवमन्दिरम् । दीनं विषण्णम् आननं मुखं यस्य तम् । बहुभिरनेकैस्तनयैः पुत्रैः समेतं युक्तम् । स्थविरमहीसुरं वृद्धब्राह्मणम् । कुशलं क्षेमम् अपृच्छमित्यस्य कर्म । उदितोत्पन्ना दया करुणा यस्य सः । अहं सोमदत्त इत्यर्थः ।

(२) कार्पण्येन दैन्येन विवर्णं मलिनं वदनं मुखं यस्य सः । महत्या प्रचुरया आशया आकाङ्क्षया उपस्थितोऽयं मह्यं किञ्चिदवश्यं प्रदास्यतीत्येवं रूपया पूर्णं

* बालक्रीडा *

(१) सोमदत्त कहने लगा—देव ! आप के चरणकमलों की सेवा की अभिलाषा रखता हुआ मैं वन में प्यास से व्याकुल होकर लतामण्डित नदियों का जल पीता हुआ घूम रहा था। इसी समय एक स्थान पर मैंने एक शुभ्र रत्न पड़ा देखा उसे उठा लिया । कुछ दूर आगे बढ़ा तो धूप की तेजी से मैं चलने में असमर्थ हो गया । अन्त में उसी वन के एक देवमन्दिर में घुसा । वहां मैंने कई बालकों को साथ लिये हुए एक बूढ़े ब्राह्मण को देखा । उसे देखकर मुझे दया आगयी और मैंने उस से कुशल पूछा ।

(२) दीनता के कारण उसके मुख की आभा फीकी पड़ गयी थी और मन में बहुत उच्च आशा करके वह ब्राह्मण कहने लगा—'महाभाग ! इन बिना माता के

भाग, सुतानेतान्मातृहीनाननेकैरुपायै रद्यनिशानीमस्मिन्कुदेशे भैक्ष्यं संपाद्य ददेतेभ्यो वसामि शिवालयेऽस्मिन्' इति ।

(३) भूदेव, एतत्कटकाधिपती राजा कस्य देशस्य, किंनामधेयः, किमत्रागमनकारणमस्य' इति पृष्टोऽभापत महीसुरः—'सौम्य, मत्तकालो नाम लाटेश्वरो देशस्यास्य पालयितुर्वीरकेतोस्तनयां वामलोचनां नाम तरुणीरत्नमसमानलावण्यं श्रावं श्रावमवधूतदुहितृप्रार्थनस्य तस्य नगरीमरौत्सीत् । वीरकेतुरपि भीतो महदुपायनमिव तनयां मत्तकालायादात् । तरु-

* बालविबोधिनी *

मानसं यस्य सः । अग्रजन्मा ब्राह्मणः । इदानीं सम्प्रति । कुदेशे निकृष्टस्थाने भैक्ष्यं भिक्षाचरणम् । एतेभ्यः सुतेभ्यः ।

(३) एतस्य पुरतो वर्त्तमानस्य कटकस्य सैन्यस्याधिपतिः स्वामी । किंनामधेयः किमाख्यकः किं नामधेयं यस्येति विग्रहः । महीसुरो भूसुरः । लाटेश्वरः लाटदेशाधिपतिः । असमानं अद्वितीयं लावण्यं सौन्दर्यं यस्य तत् । श्रावं श्रावं पुनः पुनः श्रुत्वा । अवधूता तिरस्कृता न स्वीकृतेति यावत्, दुहितुः कन्याया वामलोचनाया इति यावत् प्रार्थना लाटेश्वरकृता याच्ना येन तस्य । तस्य वीरकेतोः । अरौत्सीत् रुद्धवान् । उपायनमुपढौकनम् । अदात् प्रददौ । तरुण्याः

* बालक्रीडा *

बच्चों का इस कुदेश में भिक्षा मांगकर पालन करता हुआ मैं इसी शिवाले में रहता हूं' ।

(३) मैंने पूछा—'ब्राह्मणदेवता ! (सामने संकेत करके) इस सेना का स्वामी किस देश का राजा है ? इसका क्या नाम है और यह यहां किस लिये आया है ?' ऐसा पूछने पर ब्राह्मण बोला—'भद्र ! लाट देश के अधिपति मत्तकाल ने इस देश के राजा वीरकेतु की पुत्री—जो अपने सौन्दर्य में अद्वितीय है और स्त्रियों में रत्न के सदृश है, उस के साथ विवाह करने की इच्छा प्रकट की, किन्तु वीरकेतु ने कन्या देने से इनकार कर दिया । इस पर मत्तकाल ने उसका नगर घेर लिया । इस से वीरकेतु डर गया और एक बड़े उपहार की तरह उसने मत्तकाल को अपनी कन्या दे दी । उस युवती के मिल जाने से प्रसन्न मन लाटेश्वर (मत्तकाल) 'अपने नगर में ही ले चलकर इसके साथ व्याह कर लेंगे ।' ऐसा निश्चय कर

शीलाभहृष्टचेता लाटपतिः 'परिणेया निजपुर एव' इति निश्चित्य गच्छन्निजदेशं प्रति संप्रति मृगयादरेणात्र वने सैन्यावासमकारयत।

(४) कन्यासारेण नियुक्तो मानपालो नाम वीरकेतुमन्त्री मानधनश्चतुरङ्गबलसमन्वितोऽन्यत्र रचितशिबिरस्तं निजनाथावमानखिन्नमानसोऽन्तर्बिभेद' इति।

(५) विप्रोऽसौ बहुतनयो विद्वान्निर्धनः स्थविरश्च दानयोग्य इति तस्मै करुणापूर्णमना रत्नमदाम्। परमाह्लादविकसिताननोऽभिहितानेकाशीः

* बालविबोधिनी *

कन्याया लाभेन प्राप्त्या हृष्टं सन्तुष्टं चेतश्चित्तं यस्य स। परिणेया विवाह्या। निजपुरे स्वनगरे। मृगयादरेण मृगयाभिलाषेण।

(४) कन्यैव सारो धनं यस्य तेन वीरकेतुनेत्यर्थः। नियुक्तः प्रेरितः। मान एव धनं यस्य स अभिमानीत्यर्थः। चतुरङ्गं हस्त्यश्वरथपदातिरूपं बलं सैन्यं तेन समन्वितो युक्तः। रचितशिबिरः कृतसैन्यावासः। तं मत्तकालम्। निजनाथस्य स्वस्वामिनोऽवमानेन परिभवेन खिन्नं विषण्णं मानसं मनो यस्य स। अन्तर्बिभेद प्रकृत्यमात्यादीनां भेदं चकार।

(५) दानयोग्यो दानपात्रम्। करुणापूर्णमनाः सदयचेताऽहं सोमदत्त इत्यर्थः। परमेणोत्कृष्टेनाह्लादेनानन्देन विकसितं प्रफुल्लमाननं मुखं यस्य सः। अभिहिता उक्ता दत्ता इति यावत्। अनेका असंख्येया आशिष आशीर्वादा येन सः।

* बालक्रीडा *

अपने नगर को जारहा था। इस जगह शिकार खेलने के लिये उसने पड़ाव डाल दिया है।

(४) इधर वीरकेतु की आज्ञा से उसका मानपालनामक मन्त्री अपनी चतुरङ्गिणी सेना के साथ छावनी डाले हुए अलग पड़ा है। उसने अपने स्वामी का अपमान देखकर खिन्न मन हो इन में भेद डाल दिया है।'

(५) मैंने सोचा कि यह ब्राह्मण विद्वान किन्तु निर्धन है और बालक भी इसके कई हैं, बुढ़ौती भी आगई है। इस लिये यह उत्तम दानपत्र है। बस, दयावश मैंने वह रत्न उस ब्राह्मण को दे दिया। रत्न पाने से उसे बड़ी खुशी हुई—उसका चेहरा खिल उठा। उसने मुझे तरह तरह के आशीर्वाद दिये और

कुत्रचिदग्रजन्मा जगाम । अध्वश्रमखिन्नेन मया तत्र निरवेशि निद्रासुखम् । तदनु पश्चान्निगडितबाहुयुगलः स भूसुरः कशाघातचिह्नितगात्रोऽनेकनैस्त्रिंशिकानुयातोऽभ्येत्य माम् 'असौ दस्युः' इत्यदर्शयत् ।

(६) परित्यक्तभूसुरा राजभटा रत्नावाप्तिप्रकारं मदुक्तमनाकर्ण्य भयरहितं मां गाढं नियम्य रज्जुभिरानीय कारागारम् 'एते तव सखायः' इति निगडितान्कांश्चिन्निर्दिष्टवन्तो मामपि निगडितचरणयुगलमकार्षुः ।

* बालविबोधिनी *

कुत्रचिदनिर्दिष्टे स्थाने । अग्रजन्मा ब्राह्मणः । अध्वनि मार्गे यः श्रमः परिश्रमस्तेन खिन्नस्तेन । निरवेशि उपभुक्तम् । तदनु तदनन्तरम् । पश्चात् पृष्ठदेशे निगडितं बद्धं बाहुयुगलं हस्तद्वयं यस्य सः । कशाघातेन वेत्रप्रहारेण चिह्नितं गात्रं शरीरं यस्य सः । अनेकैर्बहुभिर्नैस्त्रिंशिकैरस्त्रधारिपुरुषैरनुयातोऽनुसृतः । दस्युश्चौरः ।

(६) परित्यक्तो मुक्तो भूसुरो ब्राह्मणो यैस्ते । रत्नावाप्तिप्रकारं मम रत्नलाभवृत्तान्तम् । भयरहितं निर्भयम् । गाढं नियम्य दृढं बद्ध्वा । एते कारागारस्थिता इत्यर्थः । सखायः सुहृदः । निगडितान् संयमितान् शृङ्खलाबद्धान् इति यावत् । निर्दिष्टवन्तो दर्शयन्तः । निगडितं बद्धं चरणयुगलं पादद्वयं यस्य तम् । किं कर्त्तव्य यस्य तस्य भावः किंकर्त्तव्यता तस्यां मूढो मन्दस्तेन, अधुना किं कार्यमित्यजानतेत्य-

* बालक्रीडा *

फिर कहीं चला गया । रास्ता चलने की थकावट से वहां मुझे गहरी नींद आगयी । थोड़ी देर बाद मैंने देखा कि ब्राह्मण के दोनों हाथ पीछे बँधे हैं, शरीर पर चाबुक की मार के दाग पड़े हैं, कई सिपाही उसके साथ हैं । वह मेरे पास आया और मुझे दिखाकर सिपाहियों से कहने लगा –'यह चोर है ।'

(६) इस पर उन पुलिसवालों ने ब्राह्मण को छोड़ दिया और मुझे रस्सियों से खूब कसकर बाँध लिया । यद्यपि मैं निर्भीकभाव से उस रत्न के पाने का हाल उन से कह रहा था, पर उन्हों ने कुछ भी नहीं सुना और मुझे कारागार में लेजाकर– 'ये तुम्हारे मित्र हैं' ऐसा कहते हुए उन्हों ने कुछ बन्दियों को दिखाया और मेरे पैरों में भी बेड़ी डाल दी । "मैं क्या करूँ" यह सोचकर मेरी बुद्धि कुण्ठित होगयी । उस कारागार से छुटकारा पाने का कोई उपाय न देखकर मैंने उन बन्दियों

किंकर्तव्यतामूढेन निराशक्लेशानुभवेनात्राचि मया—'ननु पुरुषा वीर्य-परुषाः, निमित्तेन केन निर्विशथ कारावासदुःखं दुस्तरम्। यूयं वयस्या इति निर्दिष्टमेतैः, किमिदम्' इति।

(७) तथाविधं मामवेक्ष्य भूसुरान्मया श्रुतं लाटपतिवृत्तान्तं व्याख्याय चोरवीरा पुनरवोचन्—'महाभाग, वीरकेतुमन्त्रिणो, मानपालस्य किंकरा वयम्। तदाज्ञया लाटेश्वरमारणाय रात्रौ सुरङ्गाद्वारेण तदगारं प्रविश्य तत्र राजाभावेन विषण्णा बहुधनमाहृत्य महाटवीं प्राविशाम।

* बालविबोधिनी *

र्थः। निर्नास्ति आशा यस्य तस्य यः क्लेशः खेदस्तस्यानुभवो अस्मिन् तथाभूतेन। नन्विति सम्बोधने। वीर्येण पराक्रमेण परुषाः कठोराः। निर्विशथ—अनुभवथ। दुस्तरमपारम्। वयस्याः सुहृदः। निर्दिष्टं कथितम्। एतैः राजभटैः।

(७) तथाविधं तथाकारं निगडितचरणमित्यर्थः। व्याख्याय मम पुरत उक्त्वा। किंकराः सेवकाः। तदाज्ञया वीरकेतोरादेशेन। सुरङ्गाद्वारेण बिलमार्गेण। तदगारं-तस्य लाटपतेरगारं गृहम्। राजाभावेन राज्ञोऽनुपस्थित्या। विषण्णाः दुःखिताः। आहृत्यादाय। अपरेद्युः अन्यस्मिन् दिने तत्परदिवस इत्यर्थः। पदान्वेषिणः चरण-चिह्नमनुसरन्तः। अभ्येत्य अस्मत्समीपमागत्य। धनौ रक्षितो धनानां रत्नानां चयो

* बालक्रीडा *

से कहा—'भाइयो! तुम लोग इतने प्रबल बलवान् होते हुए भी यह कठिन कारावास का दण्ड क्यों भोग रहे हो और इन सिपाहियों ने तुम्हें मेरा मित्र क्यों कहा है ?'

(७) मुझे उस बन्दीदशा में देखकर और मेरे द्वारा ब्राह्मण के मुख से सुने लाटपति का वृत्तान्त सुनकर वे वीर चोर कहने लगे—'हे महाभाग! हमलोग राजा वीरकेतु के मन्त्री मानपाल के सेवक हैं। मन्त्री की आज्ञा से लाटेश्वर को मार डालने के लिये हमलोग सुरंग बनाकर रात को उसके घर में घुसे, किन्तु वहां राजा (मत्तकाल) नहीं मिला। इस से हमको बड़ा दुःख हुआ। अन्त में वहां से बहुत सा धन लेकर हमलोग एक बड़े भारी वन में घुस गये। दूसरे दिन राजा के सिपाही हमारे पैरों का निशान देखते-देखते उस स्थान पर आ पहुंचे, जहां हम

अपरेद्युश्च पदान्वेषिणो राजानुचरा बहवोऽभ्येत्य धृतधनचयानस्मान्परितः परिवृत्य दृढतरं बद्ध्वा निकटमानीय समस्तवस्तुशोधनवेलायामेकस्यानर्घ्यरत्नस्याभावेनास्मद्वधाय माणिक्यादानादस्मान्किलाश्रृङ्खलयन्' इति ।

(८) श्रुतरत्नरत्नावलोकनस्थानोऽहम् 'इदं तदेव माणिक्यम्' इति निश्चित्य भूदेवदाननिमित्तां दुरवस्थामात्मनो जन्म नामधेयं युष्मदन्वेषणपर्यटनप्रकारं चाभाष्य समयोचितैः संलापैर्मैत्रीमकार्षम् । ततोऽर्धरात्रे तेषां मम च शृङ्खलाबन्धनं निर्भिद्य तैरनुगम्यमानो निद्रितस्य द्वाःस्थगणस्यायु-

* बालविबोधिनी *

राशिर्यैस्तान् । परितः समन्तात् । परिवृत्य संवेष्ट्य । समस्तवस्तूनां सकलपदार्थानां शोधनवेलायां परीक्षणसमये अन्वेषणकाले इति यावत् । अनर्घ्यरत्नस्य महामूल्यमाणिक्यस्य । अभावेन अप्राप्त्या । माणिक्यादानात्—माणिक्यस्य दानं यावत् । तन्माणिक्यं यावन्न प्रत्यर्पयिष्यामस्तावत्कालपर्यन्तम् । अशृङ्खलयन शृङ्खलितानकुर्वन् ।

(८) श्रुतमधिगतं रत्नस्य माणिक्यस्य तदवलोकनस्य च स्थानं येन सः । इदं—यन्मया भूसुराय दत्तमित्यर्थः । तदेव—लाटेश्वरगृहात् चौरैरपहृतम् । भूदेवाय ब्राह्मणाय दानं निमित्तं कारणं यस्यास्ताम् विप्रार्पणसमुद्भूतामित्यर्थः । दुरवस्थां दुर्दशाम् । युष्माकं भवतां राजवाहनादीनामित्यर्थः अन्वेषणाय पर्यटनस्य भूभ्रमणस्य प्रकारं स्वरूपं प्रणालीमिति शेषः । समयोचितैस्तत्कालयोग्यैः । संलापैरालापैः । तेषां चोरवीराणाम् । निर्भिद्य भंक्त्वा । द्वारि

* बालक्रीडा *

वह धनराशि लेकर डेरा डाले हुए थे । उन्हो ने हमलोगों को चारों ओर से घेर कर खूब मजबूती से बाँध लिया और राजा के पास ले आये । जब वस्तुयें सहेजी जाने लगीं तो उन में से एक बेशकीमती रत्न नहीं मिला । इस पर हमलोगों को मार डालने की आज्ञा हुई । बस, वही एक रत्न वसूल करने के लिये हमें इस तरह बांध कर डाल दिया गया है ।

(८) उस उत्तम रत्न को जहाँ मैंने पायाथा, यह सब बातें सुनकर मैंने समझ लिया कि वह वही रत्न था । इसके बाद ब्राह्मण को वह रत्न देने से अपने पर जो विपत्ति आपड़ी वह, अपना कुल, नाम और आपलोगो को खोजने के लिए मैं कहाँ—कहाँ और किस—किस तरह घूमता रहा; यह सब वृत्तान्त बतला कर तथा

धजालमादाय पुररक्षान्पुरतोऽभिमुखागतान्पटुपराक्रमलीलयाभिद्राव्य मानपालशिबिरं प्राविशम्। मानपालो निजकिंकरेभ्यो मम कुलाभिमानवृत्तान्तं तत्कालीनं विक्रमं च निशम्य मामार्चयत्।

(९) परेद्युर्मत्तकालेन प्रेषिताः केचन पुरुषा मानपालमुपेत्य 'मन्त्रिन्, मदीयराजमन्दिरे सुरुङ्गया बहुधनमपहृत्य चोरवीरा भवदीयं कटकं प्राविशन्। तानर्पय। नो चेन्महाननर्थः संभविष्यति' इति क्रूरतरं वाक्य-

* बालविबोधिनी *

तिष्ठन्ति ये ते द्वाःस्था दौवारिकाः तेषां गणः समूहस्तस्य। आयुधजालं शस्त्रसमूहम्। पुररक्षान् नगररक्षणे नियुक्तान्। पुरतः अग्रतः। अभिमुखागतान् अस्मत्संमुखमागतान्। पटुः समर्था या पराक्रमलीला तया। निजपराक्रमेणेत्यर्थः। अभिद्राव्य दूरमपवाह्य प्रपलाय्येति यावत्। तत्कालीनं तस्मिन् काले कारागृहान्निर्गमनसमये सर्वं जातम्। आर्चयत् सत्कृतवान्।

(९) परेद्युः तत्परदिने। कटकं सैन्यमण्डलम्। अनर्थः अहितम्। रोषेण क्रोधेन अरुणिते रक्ते नेत्रे नयने यस्य सः। तेन सहेति शेषः। वराकस्य निकृष्टस्य। निरभर्त्सयत् अतर्जयत्। विप्रलापं विरुद्धवचनम्। तथैव यथाश्रुतं तथैव। दोर्वीर्यस्य भुजविक्रमस्य गर्वेणाहङ्कारेण। पूर्वमेव प्रागेव। कृतो रणस्य युद्धस्य निश्चयो निर्णे-

* बालक्रीडा *

समयोचित वार्तालाप करके मैंने उन बन्दियों के साथ मित्रता कर ली। इसके बाद उसी रोज आधीरात को मैंने उनके बन्धन खोल दिये और उन्होंने मेरे। अब सबलोग साथ-साथ निकले। फाटक के पहरेदार सो रहे थे। हमने उनके शस्त्रों को ले लिया और आगे बढ़े। आगे चलकर कुछ नगररक्षक सिपाहियों का सामना हुआ। उन्हें हमलोगों ने अपने प्रबल पराक्रम से मार भगाया और मानपाल के शिविर में घुस गये। मानपाल ने अपने सेवकों द्वारा मेरे कुल का सम्मान तथा उस समय की वीरता की गाथा सुनी तो मेरा बहुत कुछ आदर किया।

(९) दूसरे दिन सबेरे मत्तकाल के भेजे हुए कुछ सेवकों ने आकर मानपाल से बड़े क्रूरभाव से कहा—'मन्त्रिन्! बहुत से चोर सेंध लगाकर मेरे राजशिविर से बहुत सा धन चुराकर आपकी छावनी में घुस आये हैं। उन्हें आप मेरे हवाले कर दें, नहीं तो बड़ा अनर्थ होगा।' यह सुनकर क्रोध से लाल आँखें किये हुए

मब्रुवन् । तदाकर्ण्य रोषारुणितनेत्रो मन्त्री 'लाटपतिः कः, तेन मैत्री का, पुनरस्य वराकस्य सेवया किं लभ्यम्' इति तान्निरभर्त्सयत् । ते च मानपालेनोक्तं विप्रलापं मत्तकालाय तथैवाकथयन् । कुपितोऽपि लाटपतिर्दोर्वीर्यगर्वेणाल्पसैनिकसमेतो योद्धुमभ्यगात् । पूर्वमेव कृतरणनिश्चयो मानी मानपालः संनद्धयोधो युद्धकामो भूत्वा निःशङ्कं निरगात् । अहमपि सबहुमानं मन्त्रिदत्तानि बहुलतुरंगमोपेतं चतुरसारथि रथं च दृढतरं कवचं मदनुरूपं चापं च विविधबाणपूर्णं तूणीरद्वयं रणसमुचितान्यायुधानि गृहीत्वा युद्धसंनद्धो मदीयबलविश्वासेन रिपूद्धरणोद्युक्तं मन्त्रिणमन्वगाम् ।

* बालविबोधिनी *

यो येन सः । युद्धमवश्यम्भावीति प्रागेव निर्द्धारितमित्यर्थः । संनद्धाःयुद्धाय सज्जिता योधा भटा यस्य सः । सबहुमानं सादरं क्रियाविशेषणमेतत् । बहुलैरसंख्यैस्तुरङ्गमैरश्वैरुपेतं युक्तम् । चतुरो दक्षः सारथिर्यस्य तम् । रथमित्यस्य विशेषणम्, कवचं वर्म्म तूणीरद्वयं इषुधियुग्मम् । रणसमुचितानि युद्धयोग्यानि । मदीयबलस्य विश्वासेन सकलरिपुसैन्यविनाशे सर्वथा समर्थोऽहमिति निर्णायेत्यर्थः । रिपूणां शत्रूणामुद्धरणे समुच्छेदे उद्युक्तं प्रवृत्तम् । मन्त्रिणं मानपालम् । परस्परमत्सरेण

* बालक्रीडा *

मन्त्री ने कहा—'लाटपति कौन है ? उस से मेरी मित्रता कब की है ? उस बेचारे की सेवा से मुझे क्या मिल जायगा ?' ऐसा कहकर उसने उनको फटकार दिया । सेवकों ने लौटकर मत्तकाल को ज्यों को त्यों सब बातें कह सुनायीं । यह सुनकर मत्तकाल बहुत नाराज़ हुआ और अपने बाहुबल के अभिमान में मतवाला होकर थोड़ी सी सेना साथ ले लड़ने के लिये चढ़ आया । मानी मानपाल तो लड़ने का निश्चय पहले ही से किये बैठा था । इस लिये वह उसने तुरन्त अपने सैनिकों को तैयार किया और निर्भीकभाव से लड़ने के लिये सामने आ डटा । मैं भी बहुत सम्मान से दिये हुए कई घोड़ों से जुते और चतुर सारथी युक्त रथ, खूब मजबूत कवच, अपने योग्य धनुष, विविध प्रकार के बाणों से भरे हुए दो तरकस तथा लड़ाई के योग्य विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध के लिये तैयार मन्त्री के साथ-साथ आया । मन्त्री को मेरे बलपर विश्वास था कि यह उस शत्रु को उखाड़ फेंकने में समर्थ है । मैं भी परस्पर द्वेष वश क्रोधातुर उन दोनों

परस्परमन्सरेण तुमुलसंगरकरमुभयसैन्यमतिक्रम्य समुल्लसद्भुजाटोपेन बाणवर्षं तदङ्गे विमुञ्चन्नरातीन्प्राहरम्।

(१०) ततोऽतिरयतुरंगमं मद्रथं तन्निकटं नीत्वा शीघ्रलङ्घनोपेततदीयरथोऽहमरातेः शिरःकर्तनमकार्षम्। तस्मिन्पतिते तदवशिष्टसैनिकेषु पलायितेषु नानाविधहयगजादिवस्तुजातमादाय परमानन्दसंभृतो मन्त्री मामनेकविधां संभावनमकार्षीत्।

(११) मानपालप्रेषितात्तदनुचरादेनमखिलमुदन्तजातमाकर्ण्य संतुष्ट-

* बालविबोधिनी *

अन्योन्यद्वेषेण। तुमुलसंगरकरं संकुलयुद्धकारि। अतिक्रम्य लङ्घयित्वा। समुल्लसतो भ्राजमानयोः बाह्वोराटोपेन गर्वेण तदङ्गे तेषां शत्रुसैन्यानां शरीरे।

(१०) अतिरया अतिवेगवन्तस्तुरङ्गमा अश्वा यस्मिन् तम्। मद्रथमित्यस्य विशेषणम्। तस्य लाटपतेः निकटं समीपम्। शीघ्रलङ्घनेन सत्वराक्रमणेन उपेतः प्राप्तस्तदीयो लाटपतेरित्यर्थः रथो येन स तादृशोऽहम्। अरातेः शत्रोः। लाटपतेरित्यर्थः। शिरःकर्तनं मस्तकच्छेदनम्। तस्मिन् लाटेश्वरे। पतिते मृते इत्यर्थः। तस्य लाटेश्वरस्य अवशिष्टेषु सैनिकेषु युद्धानन्तरं स्थितेषु बलेषु। नानाविधं बहुप्रकारं हयगजादिवस्तुजातं गजाश्वादिवस्तुसमूहम्। आदाय गृहीत्वा मदर्थमुपायनीकर्तुमित्यादाय। परमानन्देन संभृतः पूर्णः। सम्भावनां सत्कारम्।

(११) सन्तुष्टं मनो यस्य सः प्रीतचित्तः। राजा वीरकेतुः। अभ्युद्गतः

* बालक्रीडा *

सेनाओं को लांघकर बीच में जा पहुँचा और अपना बाहुबल दिखाता तथा घनघोर बाणवर्षा करता हुआ शत्रुओं पर प्रहार करने लगा।

(१०) तदनन्तर अतिशय वेगवान् घोड़ोंवाले अपने रथ को जल्दी से कुदाकर मैं मत्तकाल के रथ के समीप पहुँच गया। वह अपना रथ निकाल कर भागना चाहता था उसके पहले ही मैंने उसका सिर काट लिया। उस के गिर जाने पर उसके सैनिक भी भाग खड़े हुए। विविध शत्रु पक्ष के प्रकार के हाथी, घोड़े आदि वस्तुएँ प्राप्त करके बड़े आनन्दित मन्त्री मानपाल ने मेरा बहुत तरह से सम्मान किया।

(११) मन्त्री मानपाल के भेजे हुए सेवक से मत्तकाल के वध का समाचार

मना राजाभ्युद्गतो मदीयपराक्रमे विस्मयमानः समहोत्सवममात्यबान्धवानुमत्या शुभदिने निजतनयां मह्यमदात् । ततो यौवराज्याभिषिक्तोऽहमनुदिनमाराधितमहीपालचित्तो वामलोचनयानया सह नानाविधं सौख्यमनुभवन्भवद्विरहवेदनाशल्यसुलभवैकल्यहृदयः सिद्धादेशेन सुहृज्जनावलोकनफलं प्रदेशं महाकालनिवासिनः परमेश्वरस्याराधनायात्र पत्नीसमेतः समागतोऽस्मि । भक्तवत्सलस्य गौरीपतेःकारुण्येन त्वत्पदारविन्दसंदर्शनानन्दसंदोहो मया लब्धः' इति ।

* बालविबोधिनी *

सम्माननार्थमागतः । विस्मयमानः आश्चर्यमनुभवन् । निजतनयां बालचन्द्रिकाम् । युवा चासौ राजा चेति युवराजः तस्य भावो यौवराज्यं तस्मिन् अभिषिक्तो नियुक्तः । आराधितं सन्तोषितं महीपालस्य राज्ञः चित्तं मनो येनसः । भवतस्तव राजवाहनस्येत्यर्थः । विरहवेदना विच्छेदव्यथैव शल्यं शङ्कुस्तेन सुलभं अनायासप्राप्यं वैकल्यं विह्वलता हृदये यस्य सः । भवद्विरहदुःखाकुलचेता इत्यर्थः । सिद्धादेशेन सिद्धदेशावशात् । सुहृज्जनस्य मित्रस्यावलोकनं दर्शनमेव फलं प्रयोजनं यत्र तम्—प्रदेशविशेषणमेतत् । अस्मिन् प्रदेशे त्वत्प्रार्थितं मित्रदर्शनं भविष्यतीति सिद्धेनादिष्टम् । महाकालो नामोज्जयिन्यां प्रसिद्धं महादेवस्थानम् । आराधनायार्चनाय । भक्तेषु सेवकेषु वत्सलो दयालुः तस्य । तव पदारविन्दयोश्चरणकमलयोः सन्दर्शनेन अवलोकनेन य आनन्दो हर्षस्तस्य । सन्दोहोऽतिशयः ।

* बालक्रीडा *

सुनकर राजा बहुत प्रसन्न हुआ । उसे मेरे पराक्रम पर बड़ा आश्चर्य हुआ और अपने बन्धु—बान्धवों से सलाह करके शुभदिन को उसने अपनी कन्या का मेरे साथ विवाह कर दिया । कुछ दिनों बाद राजाने मुझे अपने राज्यके युवराजपद पर अभिषिक्त कर दिया । मैं भी कुछ दिनों तक राजा को प्रसन्न करता हुआ इस वामलोचना के साथ विविध प्रकार के सुखों का उपभोग करता रहा । किन्तु आपलोगों के वियोगरूपी कांटे से विकल हृदय होकर एक सिद्ध पुरुष के आदेश से अपने मित्रों को देखने की अभिलाषा से महाकालनिवासी श्रीशिवजी की आराधना करने के लिये अपनी पत्नी के साथ मैं यहां आया हूं । भक्तवत्सल श्रीशिवजी की कृपा से ही आज मैं इन चरणकमलों के दर्शन का आनन्द प्राप्त कर सका ।

(१२) तन्निशम्याभिनन्दितपराक्रमो राजवाहनस्तन्निरपराधदण्डे दैवमुपालभ्य तस्मै क्रमेणात्मचरितं कथयामास। तस्मिन्नवसरे पुरतः पुष्पोद्भवं विलोक्यससंभ्रमं निजनिटिलतटस्पृष्टचरणाङ्गुलिमुदञ्जलिममुं गाढमालिङ्ग्यानन्दबाष्पसंकुलसंफुल्ललोचन 'सौम्य सोमदत्त, अयं स पुष्पोद्भवः' इति तस्मै तं दर्शयामास।

(१३) तौ च चिरविरहदुःखं विसृज्यान्योन्यालिङ्गनसुखमन्वभूताम्। ततस्तस्यैव महीरुहस्य च्छायायामुपविश्य राजा सादरहासमभाषत— 'वयस्य, भूसुरकार्यं करिष्णुरहं मित्रगणो विदितार्थः सर्वथान्तरायं करि-

* बालविबोधिनी *

(१२) अभिनन्दित प्रशंसित पराक्रम सोमदत्तस्य विक्रमो येन स। तस्य सोमदत्तस्य निरपराधदण्डे अपराधाभावेऽपि प्राप्ते दण्डे विषये। दैवमदृष्टम् उपालभ्य विनिन्द्य। तस्मै सोमदत्ताय। ससम्भ्रमं सचकितम्। निजस्य स्वस्य निटिलतले भालस्थले स्पृष्टा संसक्ताश्चरणाङ्गुल्यो राजवाहनस्येति शेष येन तम्। उदञ्जलिं कृताञ्जलिम्। अमुं पुष्पोद्भवम्। आनन्दबाष्पेण हर्षजनिताश्रुणा सकुले व्याप्ते संफुल्ले विकसिते लोचने नेत्रे यस्य स. तस्मै सोमदत्ताय। तं पुष्पोद्भवम्।

(१३) तौ सोमदत्तपुष्पोद्भवौ। चिरविरहदुःख दीर्घकालादर्शनजनितक्लेशम्। तस्यैव पूर्ववर्णितस्य। सादरो हासो यस्मिन् तत् क्रियाविशेषणमिदम्

* बालक्रीडा *

(१२) यह सब वृत्तान्त सुनकर राजवाहन ने उसके पराक्रम की सराहना की और इस निरपराधी को दिये हुए दण्ड के लिये दैव को कोसकर क्रमशः उससे अपना सब वृत्तान्त कह सुनाया। उसी समय अपने मस्तक को चरण की अंगुली में लगाकर स्पर्श कराते हुए पुष्पोद्भव को सामने देखा। उन्होंने झटपट उठकर उसे गले मे लगाया और आनन्दाश्रु भरे हुए नेत्रों से निहारते हुए कहा—'सौम्य सोमदत्त ! यह पुष्पोद्भव भी आगया।' ऐसा कहकर उसे दिखाया।

(१३) उन वे दोनों भी बहुत दिनों के वियोगजनित दुःख को दूर करके आपस में गले लगकर मिलन का आनन्द लूटने लगे। इस के बाद उसी वृक्ष की छाया में बैठकर राजा ने आदरपूर्वक हँसते हुए कहा—'मित्र ! उस ब्राह्मण का कार्य करने की इच्छा से 'यदि मेरे मित्र यह बात जानेंगे तो विघ्न डालेंगे' ऐसा सोच-

ष्यतीति निद्रितान्भवतः परित्यज्य निरगाम् । तदनु प्रबुद्धो वयस्यवर्गः किमिति निश्चित्य मदन्वेषणाय कुत्र गतवान् । भवानेकाकी कुत्र गतः' इति। सोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः सविनयमलपत् ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते सोमदत्तचरितं नाम तृतीय उच्छ्वासः ।

चतुर्थोच्छ्वासः ।

(१) 'देव, महीसुरोपकारायैव देवो गतवानिति निश्चित्यापि देवेन गन्तव्यं देशं निर्णेतुमशक्नुवानो मित्रगणः परस्परं वियुज्य दिक्षु देवमन्वेष्टुमगच्छत् ।

* वालविवोधिनी *

आदरेण स्मित्वेत्यर्थः । भूसुरकार्यं विप्रकृत्यम् । मित्रगणः यूयमित्यर्थः । विदितार्थः अवगतविषयः । अन्तरायं विघ्नम् । प्रबुद्धो जागरितः । भवान् पुष्पोद्भव इत्यर्थः। ललाटतटं चुम्बद् अञ्जलिपुटं यस्य सः शिरसि अञ्जलिं वद्ध्वेत्यर्थः ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां वालविवोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरित व्याख्यायां तृतीय उच्छ्वासः ।

(१) महीसुरोपकारायैव ब्राह्मणस्य साहाय्यं कर्तुमेव । देवो भवान् राजवाहन इत्यर्थः । निश्चित्यापि निर्णीयापि । देवेन भवता । निर्णेतुमवधारयितुम् । वियुज्य पृथग्भूय । दिक्षु विभिन्नदेशेषु ।

* वालक्रीडा *

कर जब आपलोग सो रहे थे, तभी आप सबको छोड़कर मैं चला गया । हां, मेरे चले जाने के बाद जब मेरे मित्र जागे, तब उन्होंने क्या निश्चय किया और मुझे खोजने के लिये कहां गये और आप अकेले कहां चले गये थे ? सो कहिये ।'पुष्पद्भव भी हाथ जोड़ मस्तक पर लगाकर विनीतभाव से अपना हाल कहने लगा—

इनि श्रीदशकुमारचरितपूर्वपीठिकायां वालक्रीडाभिधहिन्दीटीकायां तृतीय उच्छ्वासः।

(१) देव ! यद्यपि हमलोगों ने यह समझ लिया था कि आप उस ब्राह्मण का उपकार करनेके लिये गये हैं, फिर भी हम यह निश्चय नहीं कर सके कि आप किस ओर गये हैं । अन्त में हम सब मित्र अलग अलग होकर आप को खोजने के लिए चल पड़े ।

(२) अहमपि देवस्यान्वेषणाय महीमटन्कदाचिदम्बरमध्यगतस्याम्बरमणेः किरणमसहिष्णुरेकस्य गिरितटमहीरुहस्य प्रच्छायशीतले तले क्षणमुपाविशम्। मम पुरोभागे दिनमध्यसङ्कुचितसर्वावयवां कूर्माकृतिं मानुषच्छायां निरीक्ष्योन्मुखो गगनतलान्महारयेण पतन्तं पुरुषं कंचिदन्तराल एव दयोपनतहृदयोऽहमवलम्ब्य शनैरवनितले निक्षिप्य दूरापातवीतसंज्ञं तं शिशिरोपचारेण विबोध्य शोकातिरेकेणोद्गतबाष्पलोचनं तं भृगुपतनकारणमपृच्छम्।

* बालविबोधिनी *

(२) अहम् पुष्पोद्भव । महीमटन् भुवं भ्रमन् । अम्बरमध्यगतस्य आकाशमध्यमारूढस्य अम्बरमणेः सूर्यस्य । किरणं तापम् । पुरोभागे सम्मुखे । दिनस्य दिवसस्य मध्ये मध्यभागे मध्याह्न इत्यर्थः । सङ्कुचिताः संक्षिप्ताः सर्वे निखिलाः अवयवाः अङ्गानि यस्यास्ताम्। मध्याह्ने सूर्यस्योपरिस्थिति छायासंकोचश्च प्रसिद्ध एव। कूर्माकृतिं कच्छपाकाराम्। उन्मुखः ऊर्ध्वमुखः अहमिति शेषः । महारयेण अतिवेगेन। अन्तराले मध्ये भूमिपतनात्पूर्वमेवेत्यर्थः । दयया करुणया उपनतं नम्रं हृदयं चित्तं यस्य सः । अवलम्ब्य गृहीत्वा । निक्षिप्य संस्थाप्य । दूराद् दूरदेशादापातः पतनं तेन वीताऽपगता संज्ञा चेतना यस्य तम् । तं पतन्तं पुरुषम् । शिशिरोपचारेण जलसेकादिना । विबोध्य प्रकृतिस्थं कृत्वा । शोकातिरेकेण–दुःखातिशयेन । उद्गतं निर्गतं बाष्पमश्रु याभ्यां तादृशी लोचने यस्य तम् । भृगोः प्रपातात् पतनस्य कारणं हेतुम् । प्रपातस्त्वतटो भृगुरित्यमरः । प्रच्छधातोर्द्विकर्मकत्वात्कर्मद्वयम् ।

* बालक्रीडा *

(२) हम भी आप को खोजने के लिये पृथ्वी में घूमते–घूमते एक दिन धूप मे परेशान होकर पर्वत के किनारे एक सघन छायावाले वृक्ष के नीचे थोड़ी देर विश्राम करने की इच्छा से बैठ गये । क्षणभर बाद कुछ आहट पाकर मैंने दोपहर के समान कछुए के समान आकृति की किसी मनुष्य की छाया देखी । मैं दौड़कर समीप पहुँचा तो बहुत ऊँचाई से बड़े जोरों में एक पुरुष को नीचे गिरता देखा । मुझे दया आगयी और मैंने उसे बीच में ही सम्हाल लिया । फिर उसे जमीन पर बैठा जल आदि का छींटा देकर मैं होश में लाया । शोक की अधिकता से उसके नेत्रों में आँसू भरे थे । इसी समय मैंने उस से पर्वत से नीचे कूदने का कारण पूछा ।

(३) सोऽपि कररुहैरश्रुकणानपनयन्नभाषत—'सौम्य, मगधाधिनाथामात्यस्य पद्मोद्भवस्यात्मसंभवो रत्नोद्भवो नामाहम् । वाणिज्यरूपेण कालयवनद्वीपमुपेत्य कामपि वणिक्कन्यकां परिणीय तया सह प्रत्यागच्छन्नम्बुधौ तीरस्यानतिदूर एव प्रवहणस्य भग्नतया सर्वेषु निमग्नेषु कथंकथमपि दैवानुकूल्येन तीरभूमिमभिगम्य निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे प्लवमानः कस्यापि सिद्धतापसस्यादेशादरेण षोडश हायनानि कथंचिन्नीत्वा

* बालविबोधिनी *

(३) सोऽपि पुरुषोऽपि । कररुहैर्नखैरङ्गुलिभिरिति भावः । अश्रुकणान् नेत्रजलबिन्दून् । अपनयन् दूरीकुर्वन् । सौम्य सुन्दर । मगधाधिनाथामात्यस्य राजहंसमन्त्रिणः । आत्मसम्भवः तनयः । वाणिज्यरूपेण वाणिज्याभिलाषेण । परिणीय विवाह्य । प्रत्यागच्छन् तस्माद्द्वीपान्निवर्तमानः । अम्बुधौ समुद्रे । अनतिदूरे समीपे प्रवहणस्य पोतस्य नौकाया इति यावत् । सर्वेषु पोतस्थितेषु निखिलजनेषु । निमग्नेषु सागरे इति शेषः । कथंकथमपि अतिकष्टेन । दैवानुकूल्येन भागधेयसाहाय्येन । अभिगम्य प्राप्य । निजायाः स्वकीयाया अङ्गनायाः पत्न्या यद्वियोगदुःखं विनाशक्लेशः स एवार्णवः सागरस्तस्मिन् । प्लवमानः सन्तरन् । आदेशादरेण वचनविश्वासेन । हायनानि वत्सरान् । कथञ्चित् महता कष्टेन । नीत्वा यापयित्वा ।

* बालक्रीडा *

(३) वह भी अपनी हथेलियों से आँसू पोंछता हुआ कहने लगा—'भद्र ! मैं मगध देश के राजमन्त्री पद्मोद्भव का पुत्र रत्नोद्भव हूं । रोजगार के सिलसिले में मैं कालयवनद्वीप में चला गया था । वहीं एक बनिये की लड़की से मेरा व्याह होगया । कुछ दिनों बाद मैं उस अपनी पत्नी के साथ अपने देश को वापस चला । मेरा जहाज जेटी से कुछ ही दूर आगे बढ़ा था कि एक चट्टान से टकराकर टूट गया और उसके सभी यात्री डूब गये । अकेला मैं सौभाग्यवश किसी किसी तरह बहकर किनारे लग गया । अब अपनी पत्नी के वियोगरूपी समुद्र में बहता हुआ एक सिद्ध तपस्वी के पास जा पहुंचा । उसके उपदेश पर विश्वास करके मैंने बड़ी कठिनाई से सोलह वर्ष बिताया । इसके बाद अपने दुःख का ओर-

दुःखस्य पारं अनवेक्षमाणः गिरिपतनमकार्षम्' इति ।

(४) तस्मिन्नेवावसरे किमपि नारीकूजितमश्रावि—'न खलु समुचितमिदं यत्सिद्धादिष्टे पतितनयमिलने विरहमसहिष्णुर्वैश्वानरं विशसि' इति ।

(५) तन्निशम्य मनोविदितजनकभावं तमवादिषम्—'तात, भवते विज्ञापनीयानि बहूनि सन्ति । भवतु । पश्चादखिलमाख्यातव्यम् । अधुना नारीकूजितमनुपेक्षणीयं मया । क्षणमात्रमत्र भवता स्थीयताम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

दुरवस्थापारं दुर्दशाशेषम् । अनवेक्ष्यमाणोऽपश्यन् ।

(४) अवसरे समये । नारीकूजितं स्त्रीक्रन्दितम् । अश्रावि श्रुतं मयेति शेषः । समुचितं युक्तम् । सिद्धादिष्टे सिद्धकथिते । पत्युः स्वामिनस्तनयस्य पुत्रस्य च मिलने सम्मेलने । षोडशवर्षानन्तरं ते पतिपुत्रसमागमो भविष्यतीति सिद्धेन कथिते सतीत्यर्थः । असहिष्णुः सोढुमशक्नुवन् । वैश्वानरमग्निम् । विशसि त्वमिति अनुचितमिदमिति कयाचिदुच्यते ।

(५) मनसा चित्तेन ममेति शेषः विदितो ज्ञातो जनकभावो मत्पितृत्वं यस्य तम् अयमेव मे पितेति मया निश्चयविषयीकृतमिति भावः । तं पुरुषम् । अवादिषम् उक्तवानहमिति शेषः । भवते तुभ्यम् । विज्ञापनीयानि अवश्यवक्तव्यानि । पश्चात् नारीकूजितश्रवणानन्तरम् । अखिलं सर्वम् आख्यातव्यं कथनीयं मयेति शेषः । अनुपेक्षणीयं उपेक्षितुमनुचितम् ।

* बालक्रीडा *

छोर न देखकर मरने के लिये पहाड़ से नीचे कूदने को उद्यत हो गया ।

(४) उसी समय मैंने एक स्त्री का रोदन सुना । वह कह रही थी—'जब एक सिद्ध ने कह दिया है कि तुम्हारे पति और पुत्र दोनों मिल जायँगे, तब विरह का कष्ट सहने में असमर्थ होकर आपका आग में कूदना उचित नहीं है ।'

(५) यह सुनकर मैंने मन ही मन समझ लिया कि ये मेरे पिता हैं मैं कहने लगा-'तात ! अभी आपको मुझे बहुत सी बातें बतानी हैं । अस्तु, और बातें पीछे बताऊँगा । इस समय मैं उस स्त्री के रोदन की उपेक्षा नहीं कर सकता । आप क्षण भर यहीं ठहरिए ।'

(६) तदनु सोऽहं त्वरया किंचिदन्तरमगमम् । तत्र पुरतो भयंकरज्वालाकुलहुतभुगवगाहनसाहसिकां मुकुलिताञ्जलिपुटां वनितां कांचिदवलोक्य ससंभ्रममनलादपनीय कूजन्त्या वृद्धया सह मत्पितुरभ्यर्णमभिगमय्य स्थविरामवोचम् 'वृद्धे, भवत्यौ कुत्रत्ये । कान्तारे निमित्तेन केन दुरवस्थानुभूयते । कथ्यताम्' इति ।

(७) सा सगद्गदमवादीत्—'पुत्र, कालयवनद्वीपे कालगुप्तनाम्नो वणिजः कस्यचिदेषा सुता सुवृत्ता नाम रत्नोद्भवेन निजकान्तेनागच्छन्ती-

* बालविबोधिनी *

(६) तदनु तदनन्तरम् । सोहं तथाविध एव । त्वरया वेगेन । अन्तरं दूरम् । पुरतोऽग्रतः भयंकरज्वालाभिः भीषणशिखाभिराकुले व्याप्ते हुतभुजि वह्नौ अवगाहने प्रवेशे साहसिकां कृतोत्साहाम्—अनलम्प्रवेष्टुमुद्यतामित्यर्थः । मुकुलिताञ्जलिपुटां बद्धाञ्जलिम् । ससम्भ्रमं सत्वरम् अनलाद् अग्नेः । अपनीय दूरीकृत्य । कूजन्त्या क्रन्दन्त्या । अभ्यर्णं समीपम् । अभिगमय्य प्रापय्य । अभिपूर्वकगमेर्णिजन्ताल्ल्यप् । स्थविरां वृद्धाम् । भवत्यौ त्वमेषा च । कुत्रत्ये कस्मात् स्थानादागते । निमित्तेन कारणेन । दुरवस्था एतादृशी दुर्दशा अनुभूयते भवतीभ्यामिति शेषः ।

(७) सा वृद्धा । सगद्गदं वाष्परुद्धकण्ठम् । निजकान्तेन स्वभर्त्रा । फलकं काष्ठखण्डम् । कूलं तीरमुपेता प्राप्ता । आसन्नः प्राप्तः प्रसवसमयो यया सा । मन्द-

* बालक्रीडा *

इस के बाद मैं बड़ी जल्दी-जल्दी थोड़ी दूर आगे चला गया । वहां मैंने देखा कि एक स्त्री हाथ जोड़े हुए बैठी है और वह सामने भयानक लपटों युक्त अग्नि में कूदने को तैयार है । बस, झटपट मैं उसके समीप पहुंचा और उसे आग से दूर कर दिया । फिर पास ही रोती हुई एक वृद्धा को तथा उस स्त्री को साथ लिये हुए अपने पिता के पास गया । वहां मैंने उस वृद्धा से पूछा—'वृद्धे ! तुम दोनों कौन हो और कहां रहती हो ? इस वन में क्यों इस तरह कष्ट झेल रही हो ? बताओ ।'

(७) वह गद्गद होकर कहने लगी—'पुत्र ! कालयवनद्वीपमें कालगुप्तनामका का कोई वैश्यरहता था। यह उसकी सुवृत्तानामकी की कन्या है। यह अपने पति रत्नो-

जलधौ मग्ने प्रवहणे निजधात्र्या मया सह फलकमेकमवलम्ब्य दैवयोगेन कूलमुपेतासन्नप्रसवसमया कस्यांचिदटव्यामात्मजमसूत । मम तु मन्दभाग्यतया बाले वनमातङ्गेन गृहीते मद्द्वितीया परिभ्रमन्ती 'षोडशवर्षानन्तरं भर्तृपुत्रसंगमो भविष्यति' इति सिद्धवाक्याद्विश्वासादेकस्मिन्पुण्याश्रमे तावन्तं समयं नीत्वा शोकमपारं सोढुमक्षमा समुज्ज्वलिते वैश्वानरे शरीरमाहुतीकर्तुमुद्युक्तासीत्' इति ।

(८) तदाकर्ण्य निजजननीं ज्ञात्वा तामहं दण्डवत्प्रणम्य तस्यै मदुदन्तमखिलमाख्याय धात्रीभाषणफुल्लवदनं विस्मयविकसिताक्षं जन-

* बालविबोधिनी *

भाग्यतया दुरदृष्टवशेन । बाले शिशौ । वनमातङ्गेन आरण्यगजेन । मद्द्वितीया अहं द्वितीया यस्याः सा मच्छरणेत्यर्थः । तावन्तं षोडशवर्षमितम् । नीत्वा यापयित्वा । अपारं अनन्तम् । अक्षमा असमर्था । समुज्ज्वलिते प्रज्वलिते । आहुतीकर्तुं प्रक्षेप्तुं भस्मसात्कर्तुमित्यर्थः ।

(८) निजजननीं ज्ञात्वा इयमेव मे मातेति निश्चित्य तस्यै मातृे मदुदन्तं मद्वृत्तान्तम् । धात्र्याः वृद्धायाः भाषणेन वचनश्रवणेन फुल्लं हर्षविकसितं वदनमाननं

* बालक्रीडा *

द्रव्यके साथ जहाज पर आ रही थी । एकाएक जहाज डूब गया और हम तथा ये दोनों एक तख्ते के सहारे बहती बहती भाग्यवश किनारे आ लगीं । इस के जल्द ही सन्तान होनेवाली थी । इस लिये किसी वन में इसने यह पुत्र उत्पन्न किया । हमारे अभाग्य से बालक को एक जङ्गली हाथी उठा ले गया । तब से यह बेचारी मेरे साथ चक्कर काट रही है । इसे किसी सिद्ध पुरुष ने बतलाया था कि 'सोलह वर्ष बाद तुम्हारा पति और पुत्र मिल जायगा' उसी बात विश्वास करके एक पवित्र आश्रम में रहकर इसने सोलह वर्ष बिताये । समय पूरा हो जाने पर भी जब इसे इसका पति और पुत्र नहीं मिला, तब इस अपार शोक को सहने में असमर्थ होकर यह जलती हुई आग में कूदने को उद्यत हो गयी ।'

(८) इसकी बातें सुनकर मुझे मालूम हो गया कि यह मेरी मा है । अब मैंने इसे दण्डवत् प्रणाम किया और अपनी सारी आपबीती सुना गया । तदनन्तर

कमदर्शयम् । पितरौ तौ साभिज्ञानमन्योन्यं ज्ञात्वा मुदितान्तरात्मानौ विनीतं मामानन्दाश्रुवर्षेणाभिषिच्य गाढमाश्लिष्य शिरस्युपाघ्राय कस्यांचिन्महीरुहच्छायायामुपाविशताम् ।

(९) 'कथं निवसति महावल्लभो राजहंसः' इति जनकेन पृष्टोऽहं तस्य राज्यच्युतिं त्वदीयजननं सकलकुमारावाप्तिं तव दिग्विजयारम्भं भवतो मातङ्गानुयानमस्माकं युष्मदन्वेषणकारणं सकलमभ्यधाम् । ततस्तौ कस्यचिदाश्रमे मुनेरस्थापयम् । ततो देवस्यान्वेषणपरायणोऽहमखिलका-

* बालविबोधिनी *

यस्य तम् । विस्मयेन आश्चर्यरसेन विकसिते उत्फुल्ले अक्षिणी नेत्रे यस्य तम् । अदर्शयं दर्शितवानहमिति शेषः । माता च पिता चेति पितरौ । साभिज्ञानं परस्परपरिचयसूचकचिह्नेन । मुदितो हृष्टोऽन्तरात्मा ययोस्तौ । विनीतं प्रश्रयावनतम् । आनन्दाश्रुवर्षेण हर्षजनितनेत्रजलवर्षणेन । गाढं दृढम् । आश्लिष्य आलिङ्ग्य शिरसि मस्तके । उपाघ्राय घ्राणं कृत्वा । महीरुहच्छायायां वृक्षच्छायायाम् । उपाविशताम् उपविष्टौ ताविति शेषः ।

(९) कथं केन प्रकारेण । महीवल्लभो राजा । तस्य राजहंसस्य । राज्यच्युतिं राज्यभ्रंशं । त्वदीयजननं त्वदीयोत्पत्तिम् । मातङ्गानुयानं तदाख्य ब्राह्मणस्याऽनुसरणम् । अभ्यधाम् अकथयम् । तौ मातापितरौ । देवस्य भवतः । अखिलानि

* बालक्रीडा *

मैंने धायकी बातें सुनकर विकसितवदन और विस्मय से विकस्वर नेत्रवाले अपने पिता का दर्शन कराया । इस तरह परिचय होजाने पर मेरे माता–पिता दोनों ने एक दूसरे को पहचान लिया और प्रसन्न होकर उन दोनों ने मुझे अपने हृदयसे लगाते हुए आँसुओं से भिगो दिया । उन्होंने मेरा माथा सूँघा और हमलोग एक वृक्ष की छाया में बैठ गये ।

(९) 'महाराज राजहंस का क्या हाल है ?' पिताजी के यह पूछने पर उनका राज्यसिंहासन से उतरना, आपका जन्म, सब कुमारों का मिलना, आपका दिग्विजय के लिये प्रस्थान, आपका हाथी का पीछा करना और आपलोगों के खोजने का कारण आदि सब बातें मैंने कह सुनायीं । तत्पश्चात् मैंने उन दोनों को एक ऋषि के आश्रम पर ले जाकर टिका दिया । इस के बाद फिर मैं आपकी खोज में लग

र्यनिमित्तं वित्तं निश्चित्य भवदनुग्रहाल्लब्धस्य साधकत्वस्य साहाय्यकरण-दक्षं शिष्यगणं निष्पाद्य विन्ध्यवनमध्ये पुरातनपत्तनस्थानान्युपेत्य विविधनिधिसूचकानां महीरुहाणामधोनिहितान्वसुपूर्णान्कलशान् सिद्धाञ्जनेन ज्ञात्वा रक्षिषु परितः स्थितेषु खननसाधनैरुत्पाद्य दीनारानसंख्यान् राशीकृत्य तत्कालागतमनतिदूरे निवेशितं वणिक्कटकं कंचिदभ्येत्य तत्र बलिनो बलीवर्दान् गोणीश्च क्रीत्वान्यद्रव्यमिषेण वसु तद्गोणीसंचितं तैरुह्यमानं शनैः कटकमनयम् ।

* बालविबोधिनी *

सम्पूर्णानि कार्याणि तेषां निमित्तं साधनम् । वित्तं धनम् । साधकत्वस्य सिद्धादेशकत्वस्य । साहाय्यकरणे दक्षं निपुणम् । निष्पाद्य एकीकृत्य । पुरातनपत्तनस्थानानि प्राचीननगरभूमीः । विविधनिधिसूचकानां नानारत्नकुम्भस्थितिनिर्देशकानां महीरुहाणां वृक्षाणाम् । वसुपूर्णान् धनपूरितान् । सिद्धाञ्जनेन नयनदत्तकज्जलेन । रक्षिषु रक्षापुरुषेषु । परितः समन्तात् । स्थितेषु वर्तमानेषु । खननसाधनैः खनित्रादिखननोपायैः । उत्पाद्य भूमिमध्यादुत्थाप्य । दीनारान् स्वर्णमुद्रादीन् । तत्कालागतं तस्मिन् समये तत्रोपस्थितम् । अनतिदूरे निकटे निवेशितं स्थापितम् । वणिक्कटकं वणिक्शिबिरम् । अभ्येत्य गत्वा । बलिनो बलवतः पुष्टानित्यर्थः । बलीवर्दान् वृषभान् । गोणीः धान्यादिवहनार्थाधारविशेषान् । अन्यद्रव्यमिषेण द्रव्यान्तरच्छलेन । तैः बलीवर्दैः । शनैर्मन्दं मन्दं क्रमशः इति भावः ।

* बालक्रीडा *

गया । एक दिन मैंने सोचा कि धन से ही सब काम बनते हैं । आपकी कृपा से उसी समय मुझे साधना की एक युक्ति भी मिल गयी । अब अपनी सहायता करने के योग्य कुछ शिष्यों को मैंने तैयार किया और विन्ध्य पर्वत के एक पुराने खंडहर में जा पहुंचा । अपने सिद्धाञ्जन द्वारा विविध प्रकार के खजानों की सूचना देनेवाले वृक्षों के नीचे गडे हुए धन से भरे कलशों को मैंने जान लिया था । अब उनके चारों ओर मैंने रक्षक नियुक्त कर दिये और फरसा–कुदाल इत्यादि से खोद–खोद कर अगणित अशर्फिंयें इकट्ठी कीं । तदनन्तर तुरन्त के आये और पास ही पड़ाव डाले हुए बनियों के समुदाय में पहुँचा । उन से मैंने कुछ बलवान् बैल तथा खारें खरीदे और दूसरी चीज ढोने का बहाना करके वह सब धन उन्हीं खारों में भर और बैलों पर लादकर धीरे–धीरे उस पड़ाव पर ले आया ।

(१०) तदधिकारिणा चन्द्रपालेन केनचिद्वणिक्पुत्रेण विरचितसौहृदोऽहममुनैव साकमुज्जयिनीमुपाविशम् । मत्पितरावपि तां पुरीमभिगमय्य सकलगुणनिलयेन बन्धुपालनाम्ना चन्द्रपालजनकेन नीयमानो मालवनाथदर्शनं विधाय तदनुमत्या गूढवसतिमकरवम् । ततः काननभूमिषु भवन्तमन्वेष्टुमुद्युक्तं मां परममित्रं बन्धुपालो निशम्यावदत्-'सकलं धरणितलमपारमन्वेष्टुमक्षमो भवान्मनोग्लानिं विहाय तूष्णीं तिष्ठतु । भवन्नायकालोकनकारणं शुभशकुनं निरीक्ष्य कथयिष्यामि'इति ।

(११) तल्लपितामृताश्वासितहृदयोऽहमनुदिनं तदुपकण्ठवर्ती कदा-

* बालविबोधिनी *

(१०) तदधिकारिणा कटकस्वामिना । विरचितं कृतं सौहृदं मैत्री येन सः । अमुना चन्द्रपालेन । उपाविशं न्यवसम् । मत्पितरौ मदीयां जननीं जनकञ्च । तां पुरीमुज्जयिनीम् । अभिगमय्य प्रापय्य । सकलानां सर्वेषां गुणानां शौर्यदाक्षिण्यादीनां निलय आधारस्तेन । मालवनाथदर्शनं उज्जयिनीपतिसन्दर्शनम् । तदनुमत्या तस्य मालवनाथस्यानुमत्याऽऽज्ञया । गूढवसतिं गुप्तवासम् । अपारमनन्तम् । अक्षमोऽसमर्थः । मनोग्लानिं निर्वेदम् । भवतस्तव नायकस्य प्रभोरालोकनस्य दर्शनस्य कारणं निमित्तम् । शुभशकुनं मङ्गलचिह्नम् ।

(११) तस्य बन्धुपालस्य लपितं भाषितमेवामृतं तेन । आश्वासितं निर्वृतं

* बालक्रीडा *

(१०) बनियों के उस जत्थे के स्वामी चन्द्रपाल नामके वैश्य से मैंने मित्रता कर ली और उसी के साथ-साथ उज्जयिनी चला आया । कुछ समय बाद मैं अपने माता-पिता को भी वहाँ ले आया । सभी गुणों के आगार चन्द्रपाल के पिता बन्धुपाल के साथ आकर मैंने मालवपति का दर्शन किया और उनकी अनुमति से छिपकर मैं इसी नगरी में रहने लगा । एक दिन वन में मुझे आपको ढूंढ़ते देखकर मेरे परम मित्र बंधुपाल ने कहा—'आप इस अपार पृथ्वीमण्डल भर में अपने मित्र को नहीं ढूंढ़ सकते । इस लिए अब चुपचाप बैठिए । समय आने पर मैं समझकर आपको शुभ शकुन बताऊँगा । उस समय आपको आपके स्वामी मिल जायँगे ।'

(११) उसके उन अमृत सदृश वाक्यों को सुनकर मेरे हृदय को बहुत

चिदिन्दुमुखीं नवयौवनावलीढावयवां नयनचन्द्रिकां बालचन्द्रिकां नाम तरुणीरत्नं वणिङ्मन्दिरलक्ष्मीं मूर्तामिवावलोक्य तदीयलावण्यावधूतधीरभावो लतान्तबाणबाणलक्ष्यतामयासिषम् ।

(१२) चकितबालकुरङ्गलोचना सापि कुसुमसायकसायकायमानेन कटाक्षवीक्षणेन मामसकृन्निरीक्ष्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेवाकम्पत । मनसाभिमुखैः समाकुञ्चितै रागलज्जान्तरालवर्तिभिः साङ्गवर्तिभिरीक्षणविशेषै-

* बालविबोधिनी *

हृदय स्वान्तं यस्य स । अह पुष्पोद्भव । तस्य बन्धुपालस्य उपकण्ठवर्ती समीपवर्ती । नवयौवनेन अवलीढा व्याप्ता अवयवा अङ्गानि यस्यास्ताम् नयनयोर्नेत्रयोः चन्द्रिका ज्योत्स्नारूपिणी ताम् । मूर्तां मूर्तिमतीम् । तदीयेन बालचन्द्रिकासम्बन्धिना लावण्येन सौन्दर्येण अवधूतस्तिरस्कृतो धीरभावो धैर्यं यस्य स । लतान्ताः कुसुमानि बाणाः शरा यस्य स काम इत्यर्थ तस्य बाणलक्ष्यता शरव्यत्वम् । अयासिषमगमम् । तदीयलावण्यदर्शनात्कामबाणविद्धोऽहमभवामिति तात्पर्यम् ।

(१२) चकितस्य भीतस्य बालकुरङ्गस्य चपलमृगस्य लोचने नयने इव लोचने यस्याः सा । चञ्चलनयनेत्यर्थ. । सापि बालचन्द्रिकापि । कुसुमसायकस्य कामस्य सायक. शर इवाचरतीति तेन—कामबाणसदृशेनेत्यर्थः । असकृद् वारं वारम् । मन्दमारुतेन धीरसमीरेण आन्दोलिता कम्पिता । मनसा हृदयेन । अभिमुखैः सम्पर्पितै. । समाकुञ्चितैर्लज्जया सर्वाङ्कृतैः असमग्रपातिभिरिति भाव । रागोऽनुरागः लज्जा त्रपा तयोरन्तराले मध्ये वर्तन्ते ये तै —अनुरागव्यञ्जकैरपि सल-

* बालक्रीडा *

कुछ दाइम बँध गया और मैं बराबर उसी के पास रहने लगा । एक दिन मैंने मूर्तिमती लक्ष्मी के समान सुन्दरी बालचन्द्रिका नाम की उसकी पत्नी को देखा । चन्द्रमा के सदृश उसका मुख था । उसके सारे शरीर से जवानी फटी पड़ती थी और आँखों से एक विशेष प्रकार की ज्योति निकल रही थी । उसके सौन्दर्य को देखते ही मेरा धैर्य जाता रहा और मैं कामदेव के बाणों का लक्ष्य बन गया ।

(१२) चौकन्ने मृग के बच्चे के समान नेत्रोंवाली वह सुन्दरी भी कामदेव के कुसुममय बाणों की नाईं अपने कटाक्षों से बार-बार मुझे निहार कर मन्द-मन्द चलती हवा से डोलती हुई लता के समान काँपने लगी । प्रेम और लज्जा, इन

निजमनोवृत्तिमकथयत् ।

(१३) चतुरगूढचेष्टाभिरस्या मनोऽनुरागं सम्यग्ज्ञात्वा सुखसंगमोपायमचिन्तयम् । अन्यदा बन्धुपालः शकुनैर्भवद्गतिं प्रेक्षिष्यमाणः पुरोपान्तविहारवनं मया सहोपेत्य कस्मिंश्चिन्महीरुहे शकुन्तवचनानि शृण्वन्नतिष्ठत् ।

(१४) अहमुत्कलिकाविनोदपरायणो वनान्तरे परिभ्रमन्सरोवरतीरे चिन्ताक्रान्तचित्तां दीनवदनां मन्मनोरथैकभूमिं बालचन्द्रिकां व्यलोकयम् ।

* बालविबोधिनी *

ज्ञैरित्यर्थः । अङ्गभङ्गया सह वर्त्तमानैः साङ्गभङ्गिभिः । एतानि ईक्षणविशेषैरित्यस्य विशेषणानि । ईक्षणविशेषैः कटाक्षैरिति भावः । निजमनोवृत्तिं स्वमनोव्यापारम्—अभिलाषमिति यावत् । अकथयत् प्राकाशयत् ।

(१३) चतुराः पेशला गूढा गुप्ताश्च याश्चेष्टाः कटाक्षादयस्ताभिः । अस्या बालचन्द्रिकायाः । सुखेनानायासेन यः सङ्गमो मिलनं तस्योपायं साधनम् । अन्यदा अन्यस्मिन् समये । शकुनैः निमित्तैः सामुद्रिकादिशास्त्रप्रदर्शितैश्चिह्नविशेषैः । भवद्गतिं भवतो राजवाहनस्येत्यर्थः । गतिं प्रचारप्रकारम् । प्रेक्षिष्यमाणः द्रक्ष्यन् । पुरस्य नगरस्योपान्ते समीपे विहारवनं क्रीडोद्यानम् । शकुन्तानां पक्षिणां वचनानि परस्परभाषितानि । शकुन्तपक्षिशकुनिशकुन्तशकुनद्विजा इत्यमरः ।

(१४) उत्कलिकाया उत्कण्ठायाः विनोदेऽपनोदने परायणस्तत्परः । वनान्तरे अन्यवने । चिन्तया ध्यानेन आक्रान्तं पर्याकुलं चित्तं हृदयं यस्यास्ताम् ।

* बालक्रीडा *

दोनों के बीच में रहनेवाले प्रत्यक्ष हाव–भावों तथा विचित्र प्रकार से देख देखकर उसने भी मुझे अपने मन की सारी बातें बता दीं ।

(१३) अब मैं अपनी चतुराई और गुप्त चेष्टाओं से अच्छी तरह उसका हार्दिक अनुराग जानकर उसके साथ विहार करने का उपाय सोचने लगा । एक दिन बन्धुपाल मेरे साथ शकुनों द्वारा आपका हाल-चाल जानने के लिए शहर के बाहरएक बाग में गया और पास ही वृक्ष पर बोलते हुए पक्षियों की वाणी सुनता हुआ खड़ा होगया ।

(१४) और मैं अपनी हार्दिक उत्कण्ठा को भुलाने की इच्छा से घूमता-

(१५) तस्याः ससंभ्रमप्रेमलज्जाकौतुकमनोरमं लीलाविलोकनसुखमनुभवन्सुदत्या वदनारविन्दे विषण्णभावं मदनकदनखेदानुभूतं ज्ञात्वा तन्निमित्तं ज्ञास्यंल्लीलया तदुपकण्ठमुपेत्यावोचम्—'सुमुखि, तव मुखारविन्दस्य दैन्यकारणं कथय' इति।

(१६) सा रहस्यसंजातविश्रम्भतया विहाय लज्जाभये शनैरभाषत—'सौम्य, मानसारो मालवाधीश्वरो वार्धकस्य प्रबलतया निजनन्दनं

* बालविबोधिनी *

दीनवदनां विषण्णाननाम्। मम मनोरथस्याभिलाषस्यैकभूमिं प्रधानाश्रयभूताम्। त्वामहं निरन्तरमभिलषामीति भावः।

(१५) सम्भ्रमेण त्वरया सह वर्तमानानि ससम्भ्रमाणि—प्रेमा अनुरागश्च लज्जा त्रपा च कौतुकमौत्सुक्यं चेति द्वन्द्वः। ससम्भ्रमाणि च तानीति कर्मधारयः—तैर्मनोरमं मनोहरम्। लीलया विलासेन यद्विलोकनमवलोकनं तेन यत्सुखमानन्दस्तत्। सुदत्याः शोभना दन्ता यस्याः सा सुदती तस्याः। मदनस्य कामस्य कदनखेदेन पीडनायासेन अनुभूतं विषण्णभावमित्यस्य विशेषणम्—अस्या विषण्णभावो नान्यनिमित्तकः किन्तु कामजनितपीडाहेतुक एवेति भावः। तस्य विषण्णभावस्य निमित्तं कारणम्। बालचन्द्रिकाया उपकण्ठं समीपम्।

(१६) रहस्ये गोप्यविषये संजात उत्पन्नो विश्रम्भो विश्वासो यस्यास्तस्या भावस्तया। वार्धकस्य वृद्धावस्थाया जराया इति यावत्। प्रबलतया आधिक्येन।

* बालक्रीडा *

घूमता दूसरे बाग में एक सरोवर के तीर जा पहुँचा। वहाँ चिन्तित मन, उदास मुख, एकमात्र मेरी प्राप्ति की कामना को मन में रखकर बैठी हुई बाल-चन्द्रिका को मैंने देखा।

(१५) उस सुन्दर दाँतोंवाली युवती के घबराहट, प्रेम तथा लज्जामिश्रित-भाव से रमणीक मुखके अवलोकनजनित आनन्द को लूटता हुआ उस के विषाद भरे भाव एवं कामदेव के सताने से उसे व्याकुल जानकर उस व्याकुलताका कारण जानने के विचार से मैंने उसके समीप जाकर पूछा—'ओ सुन्दर मुखवाली सुन्दरी! तुम्हारे मुख पर इस प्रकार की दीनता क्यों बरस रही है? तुम मुझ से कहो।'

(१६) एकान्तता के कारण उसे मौका मिल गया और लज्जा तथा भय

दर्पसारमुज्जयिन्यामभ्यषिञ्चत् । स कुमारः सप्तसागरपर्यन्तं महीमण्डलं पालयिष्यन्निजपैतृष्वस्रेयावुद्दण्डकर्माणौ चण्डवर्मदारुवर्माणौ धरणीभरणे नियुज्य तपश्चरणाय राजराजगिरिमभ्यगात् ।

(१७) राज्यं सर्वमसपत्नं शासति चण्डवर्मणि दारुवर्मा मातुलाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य पारदार्यपरद्रव्यापहरणादि दुष्कर्म कुर्वाणो मन्मथसमानस्य भवतो लावण्यात्तचित्तां मामेकदा विलोक्य कन्यादूषणदोषं दूरीकृत्य बलात्कारेण रन्तुमुद्युङ्क्ते तच्चिन्तया दैन्यमगच्छम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

सप्त सागराः समुद्राः पर्यन्तः सीमान्तो यस्य तत् । महीमण्डलमित्यस्य विशेषणम् । निजपैतृष्वस्रेयौ–पितृस्वसुरपत्यं पुमानिति पैतृष्वसेयः, पितृभगिन्यास्तनयस्तौ । धरणीभरणे राज्यपालने । तपश्चरणाय तपस्यां कर्तुम् । राजराजगिरिं कैलासपर्वतं राजराजः कुवेरस्तस्य गिरिः कैलासः । राजराजो धनाधिपः इत्यमरः ।

(१७) असपत्नं निःशत्रु निष्कण्टकमिति यावत् । शासति पालयति सति । मातुलाग्रजन्मनोः दर्पसारचण्डवर्मणोः । अतिक्रम्योल्लङ्घ्य । पारदार्यं परदाराभिमर्शः परद्रव्यापहरणं चौर्यं ते आदी यस्य तत् । मन्मथसमानस्य कामसदृशस्य । लावण्येन सौन्दर्येणात्तं गृहीतं चित्तं हृदयं यस्यास्ताम् । कन्याया अपरिणीतायाः

* बालक्रीडा *

त्याग कर धीरे-धीरे वह कहने लगी–'सौम्य ! मालवा राज्य के राजा मानसार ने बुढ़ौती के कारण राज-काज चलाने में असमर्थ होकर अपने बेटे दर्पसार का उज्जयिनी में अभिषेक कर दिया । कुमार दर्पसार–इस सप्तसागरा पृथ्वी का पालक होने के विचार से, अपनी बुआ के दो उद्दण्ड लड़कों चण्डवर्मा और दारुवर्मा को राज्य का काम सौंपकर–हिमालय पर्वत पर तपस्या करने के लिए चला गया ।

(१७) उन दोनों में से चण्डवर्मा शत्रुरहित समस्त राज्य का शासन करने लगा और दारुवर्मा मामा के बड़े भाई की आज्ञा न मानकर पराई स्त्री और पराया धन अपहरण आदि पापकर्म करता हुआ उत्पात मचाने लगा । मैं तो कामदेव सरीखे आपके सौन्दर्य पर आसक्त थी । इसी बीच एक रोज उसने मुझे देख लिया और कन्या के साथ पाप करने से उत्पन्न होने वाले पातक का ख्याल न करके उसने मेरे साथ जबर्दस्ती व्यभिचार करना चाहा ।' उसी चिन्ता

(१८) तस्या मनोगतम्, रागोद्रेकं मन्मनोरथसिद्धयन्तरायं च निशम्य बाष्पपूर्णलोचनां तामाश्वास्य दारुवर्मणो मरणोपायं च विचार्य वल्लभामवोचम्–'तरुणि, भवदभिलाषिणं दुष्टहृदयमेनं निहन्तुं मृदुरुपायः कश्चिन्मया चिन्त्यते। यक्षः कश्चिदधिष्ठाय बालचन्द्रिकां निवसति। तदाकारसंपदाशाशृङ्खलितहृदयो यः संबन्धयोग्यः साहसिको रतिमन्दिरे तं यक्षं निर्जित्य तया एकसखीसमेतया मृगाक्ष्या संलापामृतसुखमनुभूय कुशली

* बालविबोधिनी *

दूषणं धर्षणादि तदेव दोषस्तम्। दूरीकृत्य परिहृत्य। उद्युंक्ते चेष्टते।

(१८) तस्या बालचन्द्रिकाया। मनोगत अभिलाषम्। रागोद्रेक अनुरागातिरेकम्। मम मनोरथस्य सिद्धेरन्तराय विघ्न सर्वमेतन्निशम्येत्यस्य कर्म। बाष्पेति–साश्रुनयनामित्यर्थ.। आश्वास्य सान्त्वयित्वा। वल्लभा प्रिया बालचन्द्रिकामिति यावत्। भवन्यास्तव अभिलाषिणमाकाङ्क्षिणम्। दुष्ट हृदयं यस्य त दुर्जनमित्यर्थ। एनं दारुवर्माणम्। मृदु कोमल। अधिष्ठाय आविश्य आक्रम्येत्यर्थ। तदाकारेति–तस्या बालचन्द्रिकाया आकारसम्पदः सुन्दराकृतेराशया शृङ्खलित बद्ध हृदयं यस्य स। तद्रूपाकृष्टचित्त इत्यर्थ.। सम्बन्धयोग्य अनुरूप। साहसिक साहस कर्तुं समर्थ। रतिमन्दिरे सुरतगृहे। निर्जित्य विजित्य। एकया एकमात्रया सख्या सहचर्या समेतया युक्तया। संलापामृतसुखं आलापजनितानन्दम्। कुशली

* बालक्रीडा *

से मैं उदास हूँ।

(१८) उसके मन की बात जान और अपने में उसका अनुराग देख और अपने मनोरथ की सिद्धि में दारुवर्मा को विघ्नरूप समझकर मैंने उसे मारने का उपाय सोचा और अपनी प्रेयसी को आश्वासन देते हुए कहा–'सुन्दरी! तुमको चाहने वाले उस दुष्टहृदय दारुवर्मा को मारने के लिए मैं कोई सरल उपाय सोचता हूं। अच्छा, तुम आज से यह बात लोगों से कहो कि 'मुझे एक सिद्ध पुरुष ने बताया था कि बालचन्द्रिका के सिर पर कोई यक्ष रहता है। उसके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर उसके साथ भोग-विलास की इच्छा रखने वाला जो साहसी और योग्य वर रतिमन्दिर में उस यक्ष को जीतकर एक सखी के साथ विराजमान उस सुन्दरी के साथ बातचीत करके सकुशल लौट आयेगा, उसी के साथ उस चक्रवाक के

निर्गमिष्यति, तेन चक्रवाकसंशयाकारपयोधरा विवाहनीयेति सिद्धेनैकेनावादीति पुरजनस्य पुरतो भवदीयैः सत्यवाक्यैर्जनैरसकृत्कथनीयम्। तदनु दारुवर्मा वाक्यानीत्थंविधानि श्रावंश्रावं तूष्णीं यदि भिया स्थास्यति तर्हि वरम्, यदि वा दौर्जन्येन त्वया सङ्गमङ्गीकरिष्यति, तदा स भवदीयैरित्थं वाच्यः—

(१९) 'सौम्य, दर्पसारवसुधाधिपामात्यस्य भवतोऽस्मन्निवासे साहसकरणमनुचितम्। पौरजनसाक्षिकं भवन्मन्दिरमानीतया अनया तोयजाक्ष्या सह क्रीडन्नायुष्मान्यदि भविष्यति तदा परिणीय तरुणीं मनोरथान्निर्विश'

* बालविबोधिनी *

अक्षतशरीरः। तेन तादृशेन पुरुषेण। चक्रवाकस्य संशयः सन्देहो यस्मिन् तादृश आकारः स्वरूपं ययोस्तादृशौ पयोधरौ कुचौ यस्याः सा। विवाहनीया परिणेया। इति इत्थम्। पुरजनस्य पुरतः—नागरिकान् प्रति भवदीयैः भवत्पक्षीयैः। सत्यवाक्यैः प्रामाणिकैः। असकृत् पुनः पुनः। भिया भयेन। यदि वा पक्षान्तरे। दौर्जन्येन दुर्जनतया हेतुना। त्वया सहेति शेषः। सङ्गमासक्तिम्। अङ्गीकरिष्यति स्वीकरिष्यति। स दारुवर्मा। इत्थं वक्ष्यमाणम्। वाच्यः कथनीयः।

(१९) दर्पसारवसुधाधिपस्य दर्पसारनृपतेरमात्यस्य मन्त्रिणः। अस्मन्निवासे अस्माकं गृहे। साहसकरणं साहसकार्यानुष्ठानम्। पौरजनाः साक्षिणो यस्मिंस्तथा तथेति क्रियाविशेषणम्। पुरजनानां समक्षमित्यर्थः। भवतो मन्दिरं गृहम्। तोयजे कमले इवाक्षिणी यस्यास्तया। क्रीडन् विहरन्। आयुष्मान् कुशली। परिणीय

* बालक्रीडा *

समान स्तनों वाली बालचन्द्रिका का विवाह होगा।' बार-बार यह बात कहकर लोगों में विख्यात कर देनी चाहिए। यदि दारुवर्मा इस बात को सुनकर डर जाय और कोई उत्पात न करे तब तो ठीक ही है, किन्तु यह सुनकर भी दुष्टता वश वह तुम्हारा पीछा करे तो तुम्हारे घर वाले उससे कहें कि—

(१९) 'हे सौम्य! आप महाराज दर्पसार के मन्त्री हैं। मेरे घर में आपका ऐसा साहस करना उचित नहीं है। पुरवासियों के समक्ष इस कमलनयनी को अपने घर में ले जाकर आनन्द करते हुए सकुशल रह सकें तो इस तरुणी के साथ विवाह करके अपनी इच्छा पूर्ण कर लीजिए।' वह

इति। सोऽप्येतदङ्गीकरिष्यति। त्वं सखीवेषधारिणा मया सह तस्य मन्दिरं गच्छ। अहमेकान्तनिकेतने मुष्टिजानुपादाघातैस्तं रभसान्निहत्य पुनरपि वयस्यामिषेण भवतीमनु निःशङ्कं निर्गमिष्यामि। तदेनमुपायमङ्गीकृत्य विगतसाध्वसलज्जा भवज्जनकजननीसहोदराणां पुरत आवयोः प्रेमातिशयमाख्याय सर्वथास्मत्परिणयकरणेताननुनयेः। तेऽपि वंशसंपल्लावण्याढ्याय यूने मह्यं त्वां दास्यन्त्येव। दारुवर्मणो मारणोपायं तेभ्यः कथयित्वा तेषामुत्तरमाख्येयं मह्यम्' इति।

(२०) सापि किंचिदुत्फुल्लसरसिजानना मामब्रवीत्—'सुभग, क्रूर-

* बालविबोधिनी *

विवाह्य। निर्विश उपभुंक्ष्व। सोऽपि दारुवर्माऽपि। एतत् यन्मयोक्तमिति भावः। त्वं बालचन्द्रिका। मया पुष्पोद्भवेनेत्यर्थः। तस्य दारुवर्मणः। एकान्तनिकेतने निर्जने गृहे। मुष्ट्या जानुना पादेन च ये आघाता प्रहारास्तैः। रभसाद् वेगात्। वयस्यामिषेण सखीव्याजेन। भवतीं अनु तव पश्चात्। विगतेऽपगते साध्वसलज्जे भयत्रपे यस्याः सा। त्वमिति शेषः। प्रेम्णोऽनुरागस्य अतिशयमाधिक्यम्। सर्वथा सर्वप्रकारेण। तान् जनकादीन्। अनुनयेः प्रीणयेः। वंशसम्पदा कुलगौरवेण लावण्येन सौन्दर्येण चाढ्याय सम्पन्नाय। यूने तरुणाय। तेभ्यो जनकादिभ्यः। तेषामुत्तरं—ते एतत् सर्वं श्रुत्वा यत् कथयिष्यन्ति तत्। आख्येयं कथनीयम्।

(२०) किञ्चिदुत्फुल्लं ईषद्विकसितं सरसिजं कमलमिवाननं वदनं यस्याः सा।

* बालक्रीडा *

इस बात को स्वीकार कर लेगा। उस समय सखी के रूप में मैं ही तुम्हारे साथ रहूँगा। बस, तुम मेरे साथ उसके घर चली चलना। अवसर पाकर मैं एकान्त में मुक्कों और लातों की मार से उसे मार डालूँगा और तुम्हारी सखी बन कर मजे में निकल आऊँगा। तुम मेरी यह बात मान लो और भय तथा लज्जा दूरकर अपने माता-पिता से अपने प्रेम की प्रचुरता वृत्तान्त कहकर हमारे साथ विवाह कर देने के लिए उनसे प्रार्थना करो। वे लोग भी मेरी कुलीनता देखकर मुझ सुन्दर युवक के साथ तुम्हारा विवाह कर ही देंगे। अपने घर वालों से दारुवर्मा के मारनेका मेरा बताया उपाय बतलादो और वे लोग जो उत्तर दें, वह मुझे बताओ।'

(२०) मेरी बात से उसका मुखकमल खिल गया और मुझसे कहने लगी—

कर्माणं दारुवर्माणं भवानेव हन्तुमर्हति । तस्मिन्हते सर्वथा युष्मन्मनोरथः फलिष्यति । एवं क्रियताम् । भवदुक्तं सर्वमहमपि तथा करिष्ये' इति मामसकृद्विवृत्तवदना विलोकयन्ती मन्दं मन्दमगारमगात् । अहमपि बन्धुपालमुपेत्य शकुनज्ञात्तस्मात् 'त्रिंशद्दिवसानन्तरमेव भवत्सङ्गः संभविष्यति' इत्यशृणवम् । तदनु मदनुगम्यमानो बन्धुपालो निजावासं प्रविश्य मामपि निलयाय विससर्ज ।

(२१) मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन दारुवर्मणा रतिमन्दिरे रन्तुं समाहूता बालचन्द्रिका तं गमिष्यन्ती दूतिकां मन्निकटमभिप्रेपितवती ।

* बालविबोधिनी *

सुभग सौम्येति सम्बोधनम् । युष्मन्मनोरथः मत्पाणिग्रहणरूपः । तथा=यथा भवतोपदिष्टम् । असकृत्पुनः पुनः । विवृत्तं परावृत्तं वदनं यथा सा । पश्चात् स्थितं मामवलोकयितुमिति भावः । अगारं गृहम् । शकुनज्ञात् निमित्तज्ञानकुशलात् । तस्मात् बन्धुपालात् । भवत्सङ्गः भवता सह मिलनम् । मदनुगम्यमानः मया अनुस्रियमाणः । निजावासं स्वगृहम् । निलयाय (मम) निलयं गन्तुम् । निलयो गृहम् । विससर्ज विसृष्टवान् प्रेपयामासेति यावत् ।

(२१) मन्मायेति—मम मायया कपटेन य उपायः स एव वागुरापाशो बन्धनरज्जुस्तत्र लग्नो बद्धस्तेन । मया तस्य विनाशार्थं ये कपटोपाया रचितास्तान् लङ्घितुमसमर्थेनेति भावः । तं–तत्समीपम् । गमिष्यन्ती प्रस्थास्यमाना ।

* बालक्रीडा *

'सुभग ! उस क्रूर कर्मकारी दारुवर्मा को आप ही मार सकेंगे । आप यदि उसे मार डालेंगे तो आपकी सब इच्छायें पूर्ण हो जायँगी । आप ऐसा ही करें । मैं भी आपके बताये अनुसार सब काम करूंगी ।' ऐसा कहकर विकसित नेत्रों से मुझे बार–बार निहारती हुई अपने घर चली गयी । मैं भी लौटकर शकुनविद्या के विज्ञ बन्धुपाल के पास आया । उसने शकुन देखकर मुझे बताया कि 'तीस दिन के बाद तुम्हारे साथियों से तुमसे भेंट होजायगी ।' तदनन्तर बन्धुपाल मेरे साथ-साथ अपने घर आया और मुझे भी उसने अपने घर जाने की दे दी ।

(२१) मेरे उपायरूपी बन्धन में बँधे हुए दारुवर्मा ने बालचन्द्रिका को अपने कमरे में विहार करने के लिए बुलाया । वह वहाँ जाने लगी तब उसने

अहमपि मणिनूपुरमेखलाकङ्कणकटकताटङ्कहारक्षौमकज्जलं वनितायोग्यं मण्डनजातं निपुणतया तत्तत्स्थानेषु निक्षिप्य सम्यगङ्गीकृतमनोज्ञवेषो वल्लभया तया सह तदागारद्वारोपान्तमगच्छम्।

(२२) द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन सादरं विहिताभ्युद्गतिना तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण मदन्विता बालचन्द्रिका संकेतागारमनीयत। नगरव्याकुलां यक्षकथां परीक्षमाणो नागरिकजनोऽपि कुतूहलेन दारु-

* बालविबोधिनी *

मणिनूपुरो मञ्जीर, मेखला रशना कङ्कणकटके वलयभेदौ, ताटङ्कं कर्णभूषणं, हारो मुक्तासर, क्षौमं दुकूलम्, कज्जलमञ्जनं तत्सर्वं पादादिभूषणम्। वनितायोग्यं स्त्रीजनोचितम्। निपुणतया कौशलेन। तत्तत्स्थानेषु तत्तदङ्गेषु। निक्षिप्य परिधाय। सम्यग् निपुणं यथा स्यात्तथा अङ्गीकृत स्वीकृतो धृत इति यावत्, मनोज्ञो मनोरमो वेषो येन स। स्त्रीवेश विधृत्येत्यर्थ। वल्लभया प्रियया। तया बालचन्द्रिकया। तदागारेति-तस्य दारुवर्मण आगारद्वारस्य गृहद्वारस्य उपान्तं समीपम्।

(२२) द्वाःस्थेति-द्वाःस्थैर्दौवारिकैः कथितं विज्ञापितं अस्माकमागमनं यस्मै तेन। विहिता कृता अभ्युद्गतिरभ्युत्थानं येन तेन। तेन दारुवर्मणा। द्वारोपान्ते द्वारसमीपे निवारिता रुद्धा. अशेषा निखिला. परिवाराः परिजना येन तेन। मदन्विता मया अन्विता-मत्पुरोवर्त्तिनीत्यर्थ। संकेतागारं पूर्वनिर्दिष्टस्थानम्। अनीयत नीता। अनीयतेति नीञ् प्रापणे इत्यस्य धातो कर्मणि लङ्। द्विकर्मकत्वाच्च बाल-

* बालक्रीडा *

अपनी दासी को मेरे पास भेज दिया। मैंने भी मणिजटित नूपुर, करधनी, कंकण, बिजायठ, कर्णफूल, हार, रेशमी कपड़े आदि पहन लिये और आखों में काजल लगा लिया यानी स्त्रियोचित सभी वेष-भूषा से भली भाँति सुसज्जित होकर अपना बड़ा सुन्दर वेष बना लिया और अपनी प्रेयसी बालचन्द्रिका के साथ दारुवर्मा के उस कमरे के दरवाजे तक गया।

(२२) दरवाजे से ही मैंने अपने आने का इशारा कर दिया। यह ज्ञात होने पर दारुवर्मा उठकर खड़ा होगया और कमरे के भीतर या बाहर और आस-पास जो लोग थे, उन्हें हटा दिया। इसके बाद वह हम दोनों को एकान्त के कमरे में ले गया। इधर उस यक्ष की अफवाह से व्याकुल नागरिक जनता भी

चर्मणः प्रतीहारभूमिमगमत् ।

(२३) विवेकशून्यमतिरसौ रागातिरेकेण रत्नखचितहेमपर्यङ्के हंसतूलगर्भशयनमानीय तरुणीं तस्यै मह्यं तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय मनोरमस्त्रीवेषाय च चामीकरमणिमयमण्डनानि सूक्ष्माणि चित्रवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं हरिचन्दनं कर्पूरसहितं ताम्बूलं सुरभीणि कुसुमानीत्यादिवस्तुजातं समर्प्य मुहूर्तद्वयमात्रं हासवचनैः संलपन्नतिष्ठत् ।

* वालविवोधिनी *

चन्द्रिकेत्यत्र मुख्ये कर्मणि प्रथमा । नगरव्याकुलां पुरव्याप्ताम् । परीक्षमाणः सत्या न वेति निर्धारयन् । प्रतीहारभूमिं द्वारदेशम् ।

(२३) विवेकेन सदसद्विचारेण शून्या रहिता मतिर्बुद्धिर्यस्यासौ । असौ दारुचर्मा । रागातिरेकेण अनुरागातिशयेन । रत्नैर्मणिभिः खचितः स्यूतः यो हेम्नः सुवर्णस्य पर्यङ्कः खट्वा तस्मिन् । हंसवत् स्वच्छस्तूलः हंसतूलः, स गर्भेऽभ्यन्तरे यस्य तादृशं शयनं शय्याम् । आनीय आरोप्य । तरुणीमिति शेषः । तस्यै तरुण्यै वालचन्द्रिकायै । मह्यं स्त्रीवेषधारिणे पुष्पोद्भवायेत्यर्थः । तमिस्रेति—तमिस्रायां तामस्यां रात्रौ सम्यक् स्पष्टं अनवलोकितः अदृष्टः पुम्भावः पुरुषभावो यस्य तस्मै । मनोरमः सुन्दरः स्त्रीवेषो यस्य तस्मै । विशेषणद्वयमेतत् मह्यमित्यस्य । सम्प्रदाने चतुर्थी । चामीकरमणिमयानि सुवर्णरत्नविकाराणि मण्डनानि भूषणानि । सूक्ष्माणि श्लक्ष्णानि । चित्रवस्त्राणि मनोरमवासांसि । कस्तूरिकामिलितं मृगमदवासितम् । हरिचन्दनं गन्धद्रव्यविशेषः । सुरभीणि—सुगन्धीनि । वस्तुजातं द्रव्यसमूहम् । समर्प्य दत्त्वा । हासवचनैः हास्ययुक्तवाक्यैः । संलपन् आलापं कुर्वन् ।

* वालक्रीडा *

कौतूहल वश दारुवर्मा के सदर दरवाजे पर आकर खड़ी हुई थी ।

(२३) मूर्ख दारुवर्मा वासना की प्रवलता से रत्नजटित सुनहले पलँग पर-जिस पर हंस के पखनों से भरा गद्दा विछा था—ले जाकर विठाया और वालचन्द्रिका तथा मुझे अनेक जड़ाऊ आभूषण, महीन तथा विविध ढंग के वस्त्र, कस्तूरी मिला भया चन्दन, कर्पूरयुक्त पान और सुगन्धित फूल आदि नाना प्रकार की वस्तुयें लाकर दीं । मनोहर स्त्री का वेष धारण किये हुए मुझको अँधेरे के कारण वह विलकुल नहीं पहिचान सका । उपर्युक्त वस्तुयें देने के वाद वह वैठ

(२४) ततो रागान्धतया सुमुखीकुचग्रहणे मतिं व्यधत्त। रोषारुणितोऽहमेनं पर्यङ्कतलान्निःशङ्को निपात्य मुष्टिजानुपादघातैः प्राहरम्। नियुद्धरभसविकलमलंकारं पूर्ववन्मेलयित्वा भयकम्पितां नताङ्गीमुपलालयन्मन्दिराङ्गणमुपेतः साध्वसकम्पित इवोच्चैरकूजमहम्—'हा, बालचन्द्रिकाधिष्ठितेन घोराकारेण यक्षेण दारुवर्मा निहन्यते। सहसा समागच्छ। पश्य तेमम्' इति।

* बालबोधिनी *

(२४) तत इति। रागेण कामजनितविषयाभिलाषेण अन्धतया मत्ततया। हेतौ तृतीया। सुमुख्या सुवदनाया बालचन्द्रिकाया कुचयोः स्तनयोः ग्रहणे पीडने। मतिं बुद्धिम् अभिलाषमिति यावत्। व्यधत्त अकरोत्। रोषेण क्रोधेन अरुणितः रक्तवर्णः। अहं वक्ता पुष्पोद्भव इत्यर्थः। एनं दारुवर्माणम्। पर्यङ्कतलात् खट्वायाः। मुष्टेः जानुनोः पादयोश्च घातैः प्रहारैः। नियुद्धेति-नियुद्धस्य बाहुयुद्धस्य रभसेन वेगेन विकलं विपर्यस्तम्। अलङ्कारं भूषणम्। मया धृतमिति शेषः। पूर्ववत् प्रागिव। मेलयित्वा यथास्थानं निवेश्य। भयकम्पितां भयेन कम्पवतीम्। नताङ्गीं बालचन्द्रिकाम्। उपलालयन् आश्वासयन् सान्त्वयन् वा। मन्दिरस्य दारुवर्मगृहस्य अङ्गणं चत्वरम्। उपेतः उपगतः प्राप्त इत्यर्थः। साध्वसेन भयेन कम्पित इव न तु सत्यमेव कम्पित इति भावः। उच्चैरकूजम्—उच्चैः स्वरेण आक्रन्दम्। आक्रन्दनस्य प्रकारमाह—हेत्यादि—हा इति खेदसूचकमव्ययम्। बालचन्द्रिकाम्

* बालक्रीडा *

गया और दो मुहूर्त तक हँसी-दिल्लगी की बातें करता रहा।

(२४) अब कामके आवेग से अन्ध होकर उसने उस सुन्दरी का कुच पकड़ना चाहा। इससे मुझे क्रोध आगया जिससे मेरा सारा शरीर लाल होगया। बस, निःशङ्क होकर मैंने उसे उठा कर पलँग के नीचे दे मारा और उसकी छाती पर चढ़ कर मुक्कों, केहुनियों और लातों से मारते-मारते उसे वहीं ठण्ढी कर दिया। इस तरह हाथा-पाई करने में मेरे आभूषण कुछ तितर-बितर होगये थे। उन्हें ठीक किया। फिर भय से घबरायी हुई अपनी प्रेयसी को पुचकारता हुआ आँगन में आया। वहाँ भय से कँपकँपी भरे स्वर से मैं बड़े जोर-जोर चिल्ला कर कहने लगा—'हाय-हाय! बालचन्द्रिका के सिर पर रहने वाला वह भयानक यक्ष दारु-

(२५) तदाकर्ण्य मिलिता जनाः समुद्यद्बाष्पा हाहानिनादेन दिशो बधिरयन्तः 'बालचन्द्रिकामधिष्ठितं यक्षं बलवन्तं शृण्वन्नपि दारुवर्मा मदान्धस्तामेवायाचत । तदसौ स्वकीयेन कर्मणा निहतः । किं तस्य विलापेन' इति मिथो लपन्तः प्राविशन् । कोलाहले तस्मिंश्चटुललोचनया सह नैपुण्येन सहसा निर्गतो निजावासमगाम् ।

(२६) ततो गतेषु कतिपयदिनेषु पौरजनसमक्षं सिद्धादेशप्रकारेण

* बालविबोधिनी *

अधिष्ठितः आक्रम्य स्थितस्तेन । घोरो भयङ्कर आकारः स्वरूपं यस्यासौ तेन । सहसा सत्वरम् ।

(२५) मिलिताः तत्र सम्मिलिता उपस्थिता इति यावत् । समुद्यद् उद्गच्छद् बाष्पं नेत्रजलं येषां ते । हाहानिनादेन हाहेति शब्देन । दिशः काष्ठाः । द्वितीया-बहुवचनस्य रूपम् बधिरयन्त इत्यस्य कर्म । बधिरयन्तः बधिरा इव कुर्वन्तः--अन्यशब्दग्रहणेऽसमर्थाः कुर्वन्त इति यावत्–उच्चैराक्रोशन्त इति भावः । बधिरयन्त इति नामधातो रूपम् । शृण्वन्नपि जानन्नपि । मदान्धः मदगर्वितः । तामेव बालचन्द्रिकामेव । स्वकीयेन कर्मणा स्वदोषेण । मिथः परस्परम् । लपन्तः कथयन्तः । कोलाहले कलकले सञ्जाते इति शेषः । चटुले चपले लोचने यस्यास्तया । बालचन्द्रिकयेत्यर्थः । नैपुण्येन दक्षतया । सहसा सत्वरम् ।

(२६) पौरजनानां नागरिकाणां समक्षं सम्मुखे । सिद्धस्य सिद्धपुरुषस्यादेशः

* बालक्रीडा *

वर्मा को मारे डालता है । जल्दी दौड़ो—इसकी मदद करो ।'

(२५) मेरी आवाज़ सुनकर वहाँ के सब लोग आँखों में आँसू भरे, हाहाकार के घनघोर निनाद से सब दिशाओं बधिर करते और—'इस मदान्ध ने यद्यपि पहले ही से सुन रखा था कि बालचन्द्रिका के ऊपर भयानक यक्ष है । फिर भी इसने उसे माँगा । यह अपनी करतूत से ही मारा गया है। तब इसके लिए विलाप करने की क्या आवश्यकता !' इस तरह आपस में बातें करते हुए वे लोग भीतर आये । उसी कोलाहल में चालाकी से मैं उस चंचल नेत्रों वाली सुन्दरी के साथ बाहर निकलकर अपने घर चला आया ।

(२६) कुछ दिन बीतने के बाद उस सिद्ध के बताये तरीके से मैंने

विवाह्य तामिन्दुमुखीं पूर्वसंकल्पितान्सुरतविशेषान्यथेष्टमन्वभूवम्। बन्धुपालशकुननिर्दिष्टे दिवसेऽस्मिन्निर्गत्य पुराद्बहिर्वर्तमानो नेत्रोत्सवकारि भवदवलोकनसुखमप्यनुभवामि' इति।

(२७) एवं मित्रवृत्तान्तं निशम्याम्लानमानसो राजवाहनः स्वस्य च सोमदत्तस्य च वृत्तान्तमस्मै निवेद्य सोमदत्तम् 'महाकालेश्वराराधनानन्तरं भवद्वल्लभां सपरिवारां निजकटकं प्रापय्यागच्छ' इति नियुज्य पुष्पोद्भवेन सेव्यमानो भूस्वर्गायमानमवन्तिकापुरं विवेश। तत्र 'अयं मम स्वामिकु-

* बालविबोधिनी *

कथनं तस्य प्रकारस्तेन। यथा सिद्धेनादिष्टं तथैवेत्यर्थः। पूर्वसंकल्पितान् प्रागेव मनस ईप्सितान्। सुरतविशेषान् क्रीडाविशेषान्। यथेष्टं यथाभिलाषम्। अन्वभूवम्–अनुभूतवान् अहमिति शेषः। बन्धुपालस्य तदाख्यमित्रस्य शकुनेन शुभसूचकेन निर्दिष्टे कथिते। पुरात् नगरात्। बहिः बहिः प्रदेशे। नेत्रोत्सवकारि नयनानन्दजनकम्। भवतः तव राजवाहनस्येति शेषः। अवलोकनस्य दर्शनस्य सुखमानन्दम्।

(२७) अम्लानेति–अम्लानं स्वच्छं मानसं मनो यस्यासौ प्रफुल्लहृदय इत्यर्थः। अस्मै पुष्पोद्भवाय। महाकालेश्वरस्य उज्जयिनीस्थमहादेवस्याराधनस्य पूजायाः अनन्तरं पश्चात्। भवतस्तव सोमदत्तस्येति शेषः। वल्लभां पत्नीम्। सपरिवारां सपरिजनाम्। निजकटकं स्ववसतिम्। प्रापय्य नीत्वा। नियुज्य आदिश्य सोमदत्तमिति शेषः। भूस्वर्गेति–भुवि पृथिव्यां स्वर्ग इवाचरदिति भूस्वर्गायमाणं=स्वर्ग-

* बालक्रीडा *

इन्दुमुखी के साथ विवाह कर लिया और पूर्वनिश्चित विविध प्रकार के भोग भोगता हुआ रहने लगा। बन्धुपाल के बताये शकुन से आज मैं नगर से बाहर यहाँ चला आया और नेत्रों को परम प्रिय आपका दर्शनसुख भी प्राप्त हो गया।

(२७) इस प्रकार मित्र का वृत्तान्त सुनकर राजवाहन का मन बहुत प्रसन्न हुआ और उसने अपना और सोमदत्त का भी सब हाल कह सुनाया। इसके बाद सोमदत्त से कहा–'भगवान् महाकाल का पूजन कर लेने के बाद अपनी स्त्री तथा परिवार के लोगों को अपने डेरे पर पहुँचा कर मेरे पास चले आओ।' इस तरह सोमदत्त को नियुक्त करके राजवाहन पुष्पोद्भव के साथ-साथ पृथ्वी पर

मारः' इति बन्धुपालादये बन्धुजनाय कथयित्वा तेन राजवाहनाय बहुविधां सपर्यां कारयन्सकलकलाकुशलो महीसुरवर इति पुरि प्रकटयन्पुष्पोद्भवोऽमुष्य राज्ञो मज्जनभोजनादिकमनुदिनं स्वमन्दिरे कारयामास ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते पुष्पोद्भवचरितं नाम चतुर्थ उच्छ्वासः ।

पञ्चमोच्छ्वासः ।

(१) अथ मीनकेतनसेनानायकेन मलयगिरिमहीरुहनिरन्तरावासि·

* वालविवोधिनी *

तुल्यमित्यर्थः । स्वामिकुमारः प्रभुपुत्रः । बन्धुपाल आदिर्यस्य तस्मै । तेन बन्धुजनेन=प्रयोज्यकर्त्रा । सपर्यां पूजाम् । सकलासु कलासु विद्यासु कुशलः पटुः महीसुरवरः द्विजश्रेष्ठः । इति एतत् । पुरि नगरे । प्रकटयन् प्रकाशयन् । राजवाहनस्य नृपत्वं गोपयन्निति भावः । मज्जनभोजनादिकं स्नानाशनादिकम् । अनुदिनं प्रतिदिवसम् । स्वमन्दिरे निजगृहे पुष्पोद्भवस्येति शेषः ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां वालविवोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितपूर्वपीठिकाव्याख्यायां चतुर्थ उच्छ्वासः ।

(१) अथेति । अथानन्तरं वसन्तसमयः समाजगामेत्यग्रिमेणान्वयः । मीनेति–मीनकेतनस्य कामस्य सेनायाः सैन्यस्य नायकः प्रधानवीरः सेनापतिरित्यर्थः

* वालक्रीडा *

स्वर्ग के समान सुन्दर अवन्तिकापुरी को चले गये । वहाँ पहुँचने पर पुष्पोद्भव अपने बन्धुपाल आदि साथियों से कहा कि–'ये हमारे स्वामी के पुत्र है ।' इस उन लोगों ने तरह तरह की सामग्रियों से राजवाहन का पूजन किया । शहर राजवाहन का परिचय देते हुए पुष्पोद्भव ने यह कहला दिया कि–'आप स कलाओं में निपुण ब्राह्मण हैं' तदनन्तर उसने अपने उस विशाल भवन में राजवाहन को स्नान भोजन आदि कराया ।

इति श्रीदशकुमारचरिते पं० रामतेजपाण्डेयकृत भाषानुवादे चतुर्थ उच्छ्वासः ॥४॥



(१) इसके कुछ ही दिन बाद वसन्तकाल आ उपस्थित हुआ । जिस

भुजंगमभुक्तावशिष्टेनेव सूक्ष्मतरेण धृतहरिचन्दनपरिमलभरेणेव मन्दगतिना दक्षिणानिलेन वियोगिहृदयस्थं मन्मथानलमुज्ज्वलयन्, सहकारकिसलयमकरन्दास्वादनरक्तकण्ठानां मधुकरकलकण्ठानां काकलीकलकलेन दिक्चक्रं वाचालयन्, मानिनीमानसोत्कलिकामुपनयन्, माकन्दसिन्दुवार-

* बालविबोधिनी *

तेन । मलयानिलस्य अत्यन्तकामोद्दीपकत्वाश्चायकत्वमुक्तम् । मलयगिरेर्मलयपर्वतस्य महीरुहेषु वृक्षेषु निरन्तरं निरवच्छिन्नं निविडमिति यावत्, आवासिना वासं कुर्वता भुजङ्गमानां सर्पाणां भुक्तस्य खादितस्यावशिष्टेन अतिरिक्तेनेव, अत एव सूक्ष्मतरेण मन्दतरेण । भुजङ्गमानां पवनाशनत्वाद् यावान् वायुर्मलयाचलाच्चलितस्तस्य प्रचुरोंऽशस्तैः खादितस्ततोऽवशिष्ट अत एव मन्दतर इति भावः । मन्दतरत्वे हेतुरुत्प्रेक्षित । धृतेति—धृत स्वीकृतो हरिचन्दनस्य वृक्षविशेषस्य परिमलभर आमोदातिशयो येन तेनेव मन्दगतिना धीरेण । भाराक्रान्तत्वं मन्दगतित्वे हेतु स चोत्प्रेक्षित । गृहीतभारस्य मन्दगतित्वञ्च स्वभावसिद्धम् । दक्षिणानिलेन मलयवायुना करणेन । वियोगिनां विरहिणां हृदयेषु चित्तेषु तिष्ठतीति वियोगिहृदयस्थं विरहिहृद्गतम् । मन्मथानलं कामाग्निम् । उज्ज्वलयन् उद्दीपयन्—उज्ज्वलयन्नित्यादि शत्रन्तपदानि वसन्तसमय इत्यस्य विशेषणानि । सहकारेति—सहकाराणामाम्रतरूणां किसलयमकरन्दयोः पल्लवपुष्परसयोः स्वादनेन भक्षणेन रक्तो मधुररागयुक्त इति यावत् कण्ठस्वरो येषां तेषाम् । मधुकरा भ्रमराश्च कलकण्ठाः कोकिलाश्च ते तेषाम् । काकलीकलकलेन काकलीकोलाहलेन । दिशां चक्रं मण्डलम् । वाचालयन् मुखरयन् । मानिनीनां मानवतीनां मानसस्य मनस उत्क-

* बालक्रीडा *

सेनापति स्वयं कामदेव था। मलयपर्वतीय (चन्दन) वृक्षों पर रहने वाले सर्पों के पीने से बची और चन्दन की सुगन्धि से मिश्रित मन्द-मन्द चलती हुई दक्षिणी हवा के द्वारा वसन्त ने वियोगियों के हृदय में कामाग्नि उद्दीप्त कर दी। आम्रमंजरी के मकरन्द का आस्वादन करने से लाल कण्ठवाले कोकिल की मधुर ध्वनि और भौंरों की गुञ्जार के द्वारा कामदेवने दसों दिशाओं को मुखरित कर दिया। मानिनी स्त्रियों को हार्दिक उत्कण्ठा जागृत कर दी। आम, निर्गुण्डी, रक्त अशोक, पलाश और तिलक, इन वृक्षों में नयी नयी कोपलें उत्पन्न कर दीं और मदन—

रक्ताशोककिंशुकतिलकेषु कलिकामुपपादयन्, मदनमहोत्सवाय रसिकमनांसि समुल्लासयन्, वसन्तसमयः समाजगाम ।

(२) तस्मिन्नतिरमणीये कालेऽवन्तिसुन्दरी नाम मानसारनन्दिनी प्रियवयस्यया बालचन्द्रिकया सह नगरोपान्तरम्योद्याने विहारोत्कण्ठया पौरसुन्दरीसमवायसमन्विता कस्यचिच्चूतपोतकस्य छायाशीतले सैकततले गन्धकुसुमहरिद्राक्षतचीनाम्बरादिनानाविधेन परिमलद्रव्यनिकरेण मनोभवमर्चयन्ती रेमे ।

* बालविबोधिनी *

लिकामुत्कण्ठाम् । उपनयन् प्रापयन् । माकन्दः सहकारश्च सिन्दुवारो निर्गुण्डी च रक्ताशोकश्च किंशुकः पलाशश्च तिलकस्तिलवृक्षश्च ते तेषु । कलिकां कोरकम् । उपपादयन् जनयन् । मदनमहोत्सवाय मदनमहोत्सवार्थम् । रसिकानां कामिजनानां मनांसि मानसानि । उल्लासयन् उत्साहयन् ।

(२) तस्मिन् पूर्वोक्ते । काले वसन्त इत्यर्थः । मानसारस्य तदाख्यमालवेश्वरस्य नन्दिनी कन्या । अवन्तिसुन्दरीति नामधेया । प्रियवयस्यया प्रियसख्या । नगरस्योपान्ते सीमायां यद् रम्यं मनोहरमुद्यानमुपवनं तत्र । विहारार्थं क्रीडार्थमुत्कण्ठया व्याकुलतया । पुरे भवाः पौराश्च ताः सुन्दर्यस्तासां पौराङ्गनानां समवायेन मण्डलेन समन्विता युक्ता । चूतपोतकस्य शिशुसहकारस्य । छायया शीतलं तस्मिन् सैकततले सिकतामयप्रदेशे । गन्धश्चन्दनं, कुसुमं पुष्पं, हरिद्रा, अक्षतास्तण्डुलाः चीनाम्बरं सूक्ष्मवस्त्रं इत्यादिनानाविधेन अनेकप्रकारेण । परिमलद्रव्यनिकरेण गन्धद्रव्यसमूहेन । मनोभवं कामम् । रेमे चिक्रीड ।

* बालक्रीडा *

महोत्सव मनाने के लिए रसिकजनों के हृदयों में एक विशेप प्रकार का उल्लास भर दिया

(२) ऐसे सुहावने समय में महाराज मानसार की पुत्री अवन्तिसुन्दरी वालचन्द्रिका नाम की एक प्रिय सहेली के साथ विचरने की इच्छा से नगर के पास वाले वगीचे में पहुँची । उसके साथ वहुत-सी नगर की स्त्रियां भी थीं । वहाँ जाकर उसने किसी आम के छोटे से वृक्ष के नीचे वैठकर चन्दन, पुष्प हल्दी, अक्षत तथा चीन देश के वने रेशमी कपड़ों तथा विविध प्रकार की सुगन्धित सामग्रियों से भगवान् कामदेव का पूजन किया । इसके वाद खेलने-कूदने लगी

(३) तत्र रतिप्रतिकृतिमवन्तिसुन्दरीं द्रष्टुकामः काम इव वसन्तसहायः पुष्पोद्भवसमन्वितो राजवाहनस्तदुपवनं प्रविश्य तत्रतत्र मलयमारुतान्दोलितशाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुमफलसमुल्लसितेषु रसालतरुषु कोकिलकीरालिकुलमधुकराणामालापाञ्श्रावंश्रावं किञ्चिद्विकसदिन्दीवरकह्लारकैरवराजीवराजीकेलिलोलकलहंससारसकारण्डवचक्रवालक-

* बालविबोधिनी *

(३) तत्र तस्मिन् समये । रते कामपत्न्याः प्रतिकृतिं प्रतिमां ताम् । वसन्तः सहायो यस्य स वसन्तद्वितीय इत्यर्थः । मलयेति—मलयमारुतेन दक्षिणानिलेन आन्दोलितासु कम्पितासु शाखासु निरन्तरं निरवच्छिन्नं समुद्भिन्नैर्विकसितैः किसलयकुसुमफलैः पल्लवपुष्पफलैः समुल्लसितेषु शोभितेषु । रसालतरुषु—आम्रवृक्षेषु । कोकिलेति-कोकिलाः पिकाश्च कीरा शुकाश्च अलिकुलं भ्रमरसमूहश्च मधुकरा भ्रमराश्च ते तेषाम् । आलापान् शब्दान् । श्रावं श्रावं वारं वारं श्रुत्वा । आभीक्ष्ण्ये णमुल् । किञ्चिदिति–किञ्चिदीषद् विकसन्तीषु प्रस्फुटन्तीषु इन्दीवराणां, कह्लाराणां सौगन्धिकानां, कैरवाणां कुमुदानां, राजीवानां कमलानां च राजीषु श्रेणिषु केलिलोलाः क्रीडासक्ता ये कलहंसाः कादम्बाः सारसाः पुष्कराह्वाः कारण्डवाः मद्गव—(मद्गुः कारण्डवः प्लवः इत्यमरः) चक्रवाकाश्चक्राह्वाश्च तेषां यच्चक्रवालं मण्डलं तस्य कलरवेण अव्यक्तमधुरध्वनिना व्याकुलानि व्याप्तानि विमलानि स्वच्छानि शीतलानि शिशिराणि यानि सलिलानि जलानि तैर्ललितानि मनोरमाणि । सरांसि सरोवराणि दर्शं दर्शं वारं वारं दृष्ट्वा । अत्रापि पूर्ववण्णमुल् ।

* बालक्रीडा *

(३) उसी समय काम की स्त्री रति के समान मनोहर अवन्तिसुन्दरी को देखने के लिए, जैसे वसन्त के साथ कामदेव आ उपस्थित हुआ हो, उसी प्रकार पुष्पोद्भव के साथ साथ राजवाहन वहाँ जा पहुँचे । मलयानिल के झोंकों से झूमते हुए नये-नये अङ्कुरों, फूलों और फलों के बोझ से लदे आम के वृक्षों पर कोयल तथा तोतों की झुण्डों और भौंरों के मीठे आलापों को सुनते हुए, कुछ-कुछ खिले हुए नील तथा श्वेत कमल, कुमुदिनी और राजीव (साधारण कमल) के समूह पर क्रीडा करते हुए चञ्चल कलहंस, सारस और चकवों के झुण्डों के कोमल कलरव से व्याकुल, निर्मल तथा शीतल जल भरे सरोवरों की छटा को बार बार

लरवव्याकुलविमलशीतलसलिलललितानि सरांसि दर्शदर्शममन्दलीलया ललनासमीपमवाप ।

(४) वालचन्द्रिकया 'निःशङ्कमित आगम्यताम्' इति हस्तसंज्ञया समाहूतो निजतेजोनिर्जितपुरुहूतो राजवाहनः कृशोदर्या अवन्तिसुन्दर्या अन्तिकं समाजगाम ।

(५) या वसन्तसहायेन समुत्सुकतया रतेः केलीशालभञ्जिकाविधित्सया कञ्चन नारीविशेषं विरच्यात्मनः क्रीडाकासारशारदारविन्दसौन्दर्येण पादद्वयम्, उद्यानवनदीर्घिकामत्तमरालिकागमनरीत्या लीलालसग-

* वालविवोधिनी *

ललनासमीपं अवन्तिसुन्दरीनिकटम् । अवाप प्राप्तवान् राजवाहन इति शेषः ।

(४) निःशङ्कं निर्भयम् । हस्तसंज्ञया करचेष्टया । समाहूत आकारितः । निजतेजसा स्वप्रतापेन निर्जितः पराजितः पुरुहूत इन्द्रो येन सः । कृशमुदरं यस्याः सा कृशोदरी तस्याः । क्षीणमध्याया इत्यर्थः ।

(५) या अवन्तिसुन्दरी निर्मितेव रराजेत्यग्रिमेणान्वयः । वसन्तः सहायो यस्य तेन कामेनेत्यर्थः । समुत्सुकतया रत्यर्थमुत्कण्ठिततया । रतेः स्वपत्न्याः । केली क्रीड़ा–तदर्थं या शालभञ्जिका कृत्रिमपुत्रिका तस्या विधित्सा निर्मातुमिच्छा तया । कञ्चनेति अनिर्वचनीयमित्यर्थः । विरच्य निर्माय । आत्मनः स्वस्य । क्रीड़ाकासारे विहारसरसि यत् शारदं शरत्कालसम्बन्धि अरविन्दं कमलं तस्य सौन्दर्येण

* वालक्रीडा *

देखते हुए वे दोनों अवन्तिसुन्दरी के पास पहुंचे ।

(४) वालचन्द्रिका दूर से ही राजवाहन को देखकर हाथ का संकेत करके वुलाती हुई कहने लगी—'वेधड़क चले आइए ।' यह सुनकर अपने तेज से इन्द्र को भी परास्त करने वाले राजवाहन उस कृशोदरी अवन्तिसुन्दरी के समीप पहुँचे ।

(५) उस समय वह इस तरह दीख रही थी कि मानो कामदेव ने अपनी पत्नी (रति) का मन वहलाने के लिए स्त्रीजाति की एक पुतली (गुड़िया ?) वनायी है । उन्होंने अपने क्रीड़ा सरोवर के शरत्कालीन कमलों की शोभा से उसके दोनों पैर वनाये हैं । अपने उद्यान की झील में मस्ती के साथ घूमनेवाली हंसिनी के

तिविलासम्, तूणीरलावण्येन जङ्घे, लीलामन्दिरद्वारकदलीलालित्येन मनोज्ञमूरुयुगम्, जैत्ररथचातुर्येण घनं जघनम्, किञ्चिद्विकसल्लीलावतंसकह्लारकोरककोटरानुवृत्त्या गङ्गावर्तसनाभि नाभिम्, सौधारोहणपरिपाट्या वलित्रयम्, मौर्वीमधुकरपङ्क्तिनीलिमलीलया रोमावलिम्, पूर्णसुवर्णकलशशोभया कुचद्वन्द्वम्, (लतामण्डपसौकुमार्येण बाहू), जयशङ्खाभिख्यया कण्ठम्, कमनीयकर्णपूरसहकारपल्लवरागेण प्रतिबिम्बीकृत-

* बालबोधिनी *

कान्त्या। माराविन्देति पाठान्तरम्। तत्र सारं सारभूत यदरविन्दमित्यर्थ। तेन पादद्वय चरणयुगलं नारीविशेषस्येति शेष। विधायेत्यग्रिमेणान्वय। एवमग्रेऽपि सर्वत्र। उद्यानवने उपवने या दीर्घिका वापी तस्या या मत्तमरालिका हंसी तस्या गमनरीति गतिपरिपाटी तया। लीलया विलासेनालसं मन्दं गतिविलास गमनप्रकारम्। मरालवन्मन्दगमनेनेति भाव। तूणीरौ विपुधी तयोर्लावण्येन सौन्दर्येण जङ्घे—तूणाकारं जङ्घाद्वयमित्यर्थ। लीलामन्दिरस्य मदनक्रीडागृहस्य द्वारे या कदली रम्भातरुस्तस्या लालित्येन सौन्दर्येण। जैत्रो जयनशीलो रथो जैत्ररथ कामस्येति शेष। तस्य चातुर्येण निर्माणपरिपाट्या। घनं निविडम्। किञ्चिदीषद् विकसन् प्रस्फुटन् लीलावतस विलासकर्णभूषण य कह्लारकोरक सौगन्धिककलिका तस्य कोटरं मध्यदेशस्तस्यानुवृत्त्या सादृश्येन। गङ्गाया आवर्तो भ्रमिस्तस्य सनाभि सदृशम्।

* बालक्रीडा *

चाल लेकर उन्होंने इस सुन्दरी की अलसाई हुई चाल की रचना की है। इसी तरह अपने तरकस की शोभा से इसकी दोनों जाँघें, अपने लीलामन्दिर के द्वार पर लगे हुए केले की शोभा समेट कर दोनों घुटने, जैत्ररथ की शोभा से सँटा हुआ जघनभाग, रति के कानों में पड़े कमल की कली की शोभा से कुछ-कुछ खिले हुए लीलावतंस कर्णभूषण और गङ्गा के भौंरों के समान घुमावदार उसकी नाभि बनायी है। इसी प्रकार अँटारी पर जाने की लगी हुई सीढ़ी की तरह त्रिवली, धनुष के अग्रभाग में लगे फूलों पर मँडराते हुए भ्रमरों की कालिमा से रोमावली, पूर्ण सुवर्ण कलश की शोभा से उसके दोनों कुच, लतामण्डप की कोमलता से उसके दोनों हाथ, जयशङ्ख की शोभा से उसका कण्ठ, सुन्दर कर्णफूल के स्थान पर लगी सहकारमञ्जरी की लालिमा से बिम्बफल के समान रक्तवर्ण के

बिम्बं रदनच्छदम् , बाणायमानपुष्पलावण्येन शुचि स्मितम् , अग्रदूतिकाकलकण्ठिकाकलालापमाधुर्येण वचनजातम् , सकलसैनिकनायकमलयमारुतसौरभ्येण निःश्वासपवनम् , जयध्वजमीनदर्पेण लोचनयुगलम् , चापयष्टिश्रिया भ्रूलते, प्रथमसुहृदः सुधाकरस्यापनीतकलङ्कया कान्त्या

* बालविबोधिनी *

आरुह्यतेऽनेनेति आरोहणं । करणे ल्युट् । सौधस्य प्रासादस्य यदारोहणं सोपानं तस्य परिपाट्या अनुक्रमेण । सोपानपंक्तितुल्यं वलित्रयमित्यर्थः । मौर्वी ज्यैव मधुकरपङ्क्तिः रोलम्बमाला तस्या यो नीलिमा नैल्यं तस्य लीलया सौन्दर्येण रोमावलीं रोमपङ्क्तिम् । पूर्णो जलपूर्णो यः सुवर्णकलशः स्वर्णघटस्तस्य शोभया कान्त्या कुचद्वन्द्वं स्तनयुगम् । कुचौ तस्याः, कामस्य द्वारदेशस्थितशुभसूचककनककलशाकारावित्यर्थः । लतामण्डपस्य सौकुमार्येण कोमलतया बाहू हस्तद्वयम् । जयशङ्खस्याभिख्यया शोभया कण्ठं ग्रीवाम् । सा कम्बुग्रीवेति भावः । कमनीयः सुन्दरो यः कर्णपूरः कर्णभूषणीभूतः सहकारपल्लवो रसालकिशलयं तस्य र[illegible] रक्तिम्ना, प्रतिबिम्बीकृतं प्रतिबिम्बवत्कृतं बिम्बं बिम्बफलं येन तादृशं, यत्पूर्वं बिम्बमासीत्तदेवास्या अधरनिर्माणादनन्तरं प्रतिबिम्बं जातमित्यर्थः । प्रसिद्धबिम्बफलापेक्षयाऽप्यस्या अधरोष्ठयो रागोऽधिक इति तात्पर्यम् । रदनच्छदमोष्ठम् । बा[illegible] वदाचरतीति बाणायमानं यत् पुष्पं तस्य लावण्येन सौन्दर्येण । शुचि शुद्धम् । स्मितं हास्यम् । अग्रदूतिका प्रथमदूती कामस्येति शेषः । या कलकण्ठिका को[illegible] वधूस्तस्या यः कलो मधुर आलापो ध्वनिस्तस्य माधुर्येण मधुरतया । वचनजातं वाक्यसमूहम् । सकलसैनिकानां निखिलभटानां कामस्येति शेषः । नायको नेता सेनापतिरिति यावत्—मलयमारुतो मलयवायुस्तस्य सौरभ्येण सौगन्ध्येन । निःश्वासपवनं श्वासवायुम् । जयसूचको ध्वजो जयध्वजस्तथाभूतो यो मीनो मत्स्यस्तस्य दर्पेणाहङ्कारेण । मीनाकारं नयनयुगमिति भावः । चापयष्टिर्धनुर्लता तस्य

* बालक्रीडा *

दोनों ओष्ठ, बाण के आकार वाले फूलों की शोभा से सुन्दर और मन्द मुसकान पहले-पहल भेजी जाने वाली कामकी दूती तथा कोकिला की मीठी वाणी से उस[illegible] वाक्यावली, काम की समस्त सेना के सेनापति मलयपवन की सुगन्धि से [illegible] श्वास की वायु, जयकी सूचना देने वाली ध्वजा में लगी हुई मछली के आक[illegible]

वदनम्, (लीलामयूरबर्हभङ्ग्या केशपाशं) च विधाय समस्तमकरन्द-कस्तूरिकासम्मितेन मलयजरसेन प्रक्षाल्य कर्पूरपरागेण सम्मृज्य निर्मितेव रराज।

(६) सा मूर्तिमतीव लक्ष्मीर्मालवेशकन्यका स्वेनैवाराध्यमानं सङ्कल्पितवरप्रदानायाविर्भूतं मूर्तिमन्तं मन्मथमिव समालोक्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेव मदनावेशवती चकम्पे। तदनु क्रीडाविश्रम्भान्निवृत्ता लज्जया

* बालविबोधिनी *

श्रिया कान्त्या। वक्रे भ्रूलते इत्यर्थः। प्रथमसुहृदः प्रधानमित्रस्य कामस्येति शेषः। अपनीतो दूरीकृतः कलङ्को लाञ्छनं यस्यास्तया। निष्कलङ्कसुधाकरसदृशं वदनमिति भावः। लीलार्थो मयूरः लीलामयूरः क्रीडामयूरः कामस्येति शेषः। तस्य बर्हं पिच्छं तस्य भंग्या रचनया—तत्सदृशमिति भावः। केशपाशं केशकलापम्। विधाय कृत्वा। समस्ताभ्यामेकीकृताभ्यां मकरन्दकस्तूरिकाभ्यां पुष्परसमृगमदाभ्यां संमितेन युक्तेन मिलितेनेत्यर्थः। मलयजरसेन चन्दनद्रवेण। प्रक्षाल्य—आद्राकृत्य। कर्पूरपरागेण कर्पूरचूर्णेन। सम्मृज्य सर्वतः समाकृत्य। निर्मितेव रचितेव कामेनेति शेषः।

(६) मूर्त्तिमतीव शरीरिणीव, साक्षादित्यर्थः। स्वेनैव स्वयमेव। आराध्यमानमुपास्यमानम्, अत एव सङ्कल्पितवरप्रदानाय सङ्कल्पितस्य अभिलषितस्य अवन्तिसुन्दर्य्येति शेषः। वरस्य प्रदानाय प्रदानार्थमाविर्भूतमुपस्थितम्। तं राजवाहनम्। मन्दमारुतेन धीरसमीरेणान्दोलिता कम्पिता। मदनस्य कामस्यावेश

* बालक्रीडा *

से उसके दोनों नेत्र, धनुष की डण्डी की शोभा से दोनों टेढी भौहें, अपने प्रथम मित्र चन्द्रदेव की कलङ्कहीन शोभा से उसका मुख और मनोविनोद के लिए पले हुए मयूर के पखनों की शोभा से केशपाश बनाकर सब प्रकार की सुगन्धित स[...] भियों, कस्तूरी और चन्दनमिश्रित जल से नहला और शरीर भर में क[पूर] का चूर्ण मलकर बैठा दिया है, इस तरह वह सुन्दर मालूम पडती थी। मूर्तिमती लक्ष्मी के समान सुन्दरी मालवदेश की कन्या अपने ही द्वारा आराध्यमान और पूर्व सङ्कल्पित वर प्रदान करने के लिए आते हुए मूर्तिमान् कन्दर्प के

कानि कान्यपि भावान्तराणि व्यधत्त ।

(७) 'ललनाजनं सृजता विधात्रा नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता। नो चेदब्जभूरेवंविधो निर्माणनिपुणो यदि स्यात्तर्हि तत्समानलावण्यामन्यां तरुणीं किं न करोति' इति सविस्मयानुरागं विलोकयतस्तस्य समक्षं

* बालविबोधिनी *

आविर्भावस्तद्वती । चकम्पे यथा समीरसम्पर्केण लता कम्पिता भवति तथा सापि कामावेशवशात् कम्पिताऽभवत् । एतेन तस्या राजवाहने रतिरुत्पन्नेति ज्ञायते, सात्त्विकभावस्य कम्पनस्यानुभावरूपत्वात । तदनु एतदवस्थाप्राप्त्यनन्तरम् । क्रीडायां विश्रम्भो विश्वासोऽनुरागविशेषस्तस्मात् । कानि कान्यपि अनिर्वचनीयानीत्यर्थः । भावान्तराणि तदवस्थासमुचितान् नानाभावान् ।

(७) ललनाजनमित्यादि न करोतीत्यन्तं विलोकयतः इत्यस्याः क्रियायाः कर्म । न करोतीत्येतत्पर्यन्ता राजवाहनस्य चिन्ता । एषा अवन्तिसुन्दरी । घुणाक्षरन्यायेन काकतालीयसंयोगन्यायेन । घुणः प्रसिद्धः काष्ठकीटो यदृच्छया काष्ठं भिन्दन् सञ्चरति—तथा तस्य सञ्चारेण काष्ठे कदाचिदक्षराकाराणि चिह्नानि जायन्ते । अयमेव घुणाक्षरन्यायः । यथा घुणः अविदित्वैव अक्षराणि निर्माति तथैव इयमपि अविदितैव विधातृहस्तान्निर्गता । नोचेत्—अन्यथा । अब्जाद्भवतीति अब्जभूर्ब्रह्मा । एवंविधाया अवन्तिसुन्दरीसदृश्या निर्माणे सृष्टौ निपुणः कुशलः । तस्याः समानं तुल्यं लावण्यं सौन्दर्यं यस्यास्ताम् । अन्यामपराम् । किं कथम् । सविस्मयानुरागं विलोकयत इति क्रियाया विशेषणम् । विस्मयेनानुरागेण चेत्यर्थः । तस्य राजवाहनस्य । समक्षं पुरस्तात् । किञ्चिदीषत् सखीजनेन सहचर्या अन्तरितं

* बालक्रीडा *

समान सुन्दर राजवाहन को देखकर काम के वशीभूत होती हुई वह मन्द-मन्द बहती वायु से हिलती हुई लता के समान काँपने लगी। तदनन्तर लज्जा के कारण उसने अपना खेलवाड़ बन्द कर दिया और एक तरफ चुपचाप बैठ कर न मालूम क्या क्या सोचने लगी ।

(७) 'मालूम होता है कि जब ब्रह्मा स्त्रियों को बना रहे थे तो घुणाक्षर न्यायसे अपने आप यह अकेली ऐसी सुन्दरी कन्या उनके हाथों बन गयी । यदि ऐसा न होता और ब्रह्मा ऐसी सुन्दरियों को बनाने में निपुण होते तो संसार की और लड़कियाँ इसी के समान सुन्दर न बनी होतीं !' विस्मय और प्रेम के साथ

स्थातुं लज्जिता सती किञ्चित्सखीजनान्तरितगात्रा तन्नयनाभिमुखैः किञ्चिदाकुञ्चितै रञ्जितभ्रूलतैरपाङ्गवीक्षितैरात्मनः कुरङ्गस्यानायमानलावण्यं राजवाहनं विलोकयन्त्यतिष्ठत्।

(८) सोऽपि तस्यास्तदोत्पादितभावरसानां सामग्र्या लब्धबलस्येव विषमशरस्य शरव्यायमाणमानसो बभूव।

(९) सा मनसीत्थमचिन्तयत्—'अनन्यसाधारणसौन्दर्येणानेन क-

* बालविबोधिनी *

व्यवहितं गात्रं शरीरं यस्याः सा तथाभूता। तस्य राजवाहनस्य नयनयोर्नेत्रयोरभिमुखैः सन्मुखवर्तिभिः। किञ्चिदाकुञ्चितैरीषत्सङ्क्षिप्तैः। रञ्जिते शोभिते भ्रूलते यैस्तैः। अपाङ्गवीक्षितैः कटाक्षैः। आत्मनः कुरङ्गस्य—कुरङ्गभूतस्य आत्मनः इत्यर्थः। आनायो जालं तदिवाचरतीति = आनायमानं लावण्यं यस्येति विग्रहः। यथा कश्चिद् आनाये कुरङ्गं बध्नाति तथा राजवाहनः स्वलावण्येन अवन्तिसुन्दरीं समाचकर्षेति भावः।

(८) सोऽपि राजवाहनोऽपि। तस्या अवन्तिसुन्दर्याः। तदा तस्मिन् काले उत्पादिता जनिता ये भावा विकारा एव रसास्तेषां सामग्र्या समग्रतया पूर्णतयेत्यर्थः लब्धं प्राप्तं बलं सामर्थ्यं येन तस्य। अन्योऽपि रसायनोपयोगाल्लब्धबलो भवतीति प्रसिद्धमेव। विषमा अयुग्मसंख्यकाः पञ्च शरा बाणा यस्य तस्य, कामस्येत्यर्थः। शरव्यं लक्ष्यं तदिवाचरन् शरव्यायमाणं मानसं यस्य सः। सोऽपि तदा मदनबाणवेध्यो बभूवेत्यर्थः।

(९) अनन्यसाधारणं अद्वितीयं सौन्दर्यं यस्य तेन। पुरि नगर्याम्। लोच-

* बालक्रीडा *

उसे निहार निहार कर इस प्रकार सोचते हुए राजवाहन के समक्ष अवन्तिसुन्दरी नहीं बैठ सकी, बल्कि अपनी सखियों के कुछ पीछे छिपकर बैठी और राजवाहन के नेत्रों की कुछ तिरछी भौंहों, कटाक्षों में देखने के ढंग और मृग को फँसाने वाले जाल के समान मोहनी डालनेवाली शोभा को निहारने लगी।

(८) इधर राजवाहन का मन भी जैसे अवन्तिसुन्दरी के सरस भावों से बल पाये हुए कामदेव के बाणों से विद्ध सा हो गया।

(९) अवन्तिसुन्दरी अपने मन में यह सोचने लगी कि—'ये साधारण सौन्दर्य-

स्यां पुरि भाग्यवतीनां तरुणीनां लोचनोत्सवः क्रियते । पुत्ररत्नेनामुना पुरन्ध्रीणां पुत्रवतीनां सीमन्तिनीनां का नाम सीमन्तमौक्तिकीक्रियते । कास्य देवी । किमत्रागमनकारणमस्य । मन्मथो मामपहसितनिजलावण्यमेनं विलोकयन्तीमसूययेवातिमात्रं मथ्नन्निजनाम सान्वयं करोति । किं करोमि । कथमयं ज्ञातव्यः' इति ।

(१०) ततो बलिचन्द्रिका तयोरन्तरङ्गवृत्तिं भावविवेकैर्ज्ञात्वा कान्तासमाजसन्निधौ राजनन्दनोदन्तस्य सम्यगाख्यानमनुचितमिति लोकसाधारणैर्वाक्यैरभाषत—'भर्तृदारिके, अयं सकलकलाप्रवीणो देवतासा-

* बालविबोधिनी *

नोत्सवो नयनानन्दः । कुत्रायं निवसतीति भावः । पुत्रेषु रत्नमिव, पुत्रश्रेष्ठ इत्यर्थस्तेन । सीमन्तिनीनां कामिनीनां मध्ये सीमन्तमौक्तिकीक्रियते शिरोभूषणी क्रियते । या खल्वस्य जननी सा तु सर्वसीमन्तिनीनां शिरोमणिरिति भावः । देवी महिषी । अपहसितं उपहासविषयीकृतं निजं स्वकीयं लावण्यं सौन्दर्यं कामस्येति शेषः येन तम् । एनमित्यस्य विशेषणम् । असूयया अक्षमया । मथ्नन् पीडयन् । निजनाम मन्मथेति स्वनाम सान्वयं सार्थकम् ।

(१०) तयोरवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोः । अन्तरङ्गवृत्तिं मनोवृत्तिम् । भावानां मानसविकाराणां विवेकैर्विज्ञानैः । राजनन्दनोदन्तस्य राजवाहनवृत्तान्तस्य । सम्यगाख्यानं विशेषेण कथनम् । लोकसाधारणैः लौकिकैः । भर्तृदारिके ! प्रभुपुत्रि !

* बालक्रीडा *

शाली राजकुमार किस नगर के रहनेवाले होंगे । वहां की भाग्यवती स्त्रियें इन्हें अच्छी तरह देखकर अपने नेत्रों को सफल करती होंगी । पति-पुत्रवती कौन सी ऐसी स्त्री होगी, जो इन्हें अपना पुत्र कहकर आनन्दित होती हुई सब स्त्रियों में श्रेष्ठ कही जाती होगी ! इसकी स्त्री न मालूम कौन होगी ! ये यहाँ किस लिए आये होंगे ! मन्मथ (कामदेव) भी इनकी शोभा से पराजित होकर ईर्ष्या के साथ इन्हें देखती हुई मुझ बालिका के मन को मथता हुआ अपना (मन्मथ) नाम सार्थक कर रहा है । मैं क्या करूँ ? कैसे इनका परिचय प्राप्त करूँ ?'

(१०) बालचन्द्रिका ने इन दोनों की भावभंगियों से उनके मन की बात जान ली । फिर यह सोचा कि स्त्रियों के बीच में यह बताना अनुचित होगा कि

न्निध्यकरण आहवनिपुणो भूसुरकुमारो मणिमन्त्रौषधिज्ञः परिचर्यार्हो भवत्या पूज्यताम्' इति ।

(११) तदाकर्ण्य निजमनोरथमनुवदन्त्या बालचन्द्रिकया सन्तुष्टान्तरङ्गा तरङ्गावली मन्दानिलेनेव सङ्कल्पजेनाकुलीकृता राजकन्या जितमारं कुमारं समुचितासनासीनं विधाय सखीहस्तेन शस्तेन गन्धकुसुमाक्षतघनसारताम्बूलादिनानाजातिवस्तुनिचयेन पूजां तस्मै कारयामास । राजवाहनोऽप्येवमचिन्तयत्—'नूनमेषा पूर्वजन्मनि मे जाया यज्ञवती । नो चेदेतस्यामेवंविधोऽनुरागो मन्मनसि न जायेत । शापावसानसमये तपो-

* बालविबोधिनी *

राजनन्दिनीत्यर्थः । सकलासु कलासु नृत्यगीतादिषु प्रवीणः कुशलः । देवतानां सान्निध्यं साक्षात्कारं करोतीति तथा मन्त्रादिसाधनज्ञ इत्यर्थः । आहवनिपुणो युद्धकुशलः । परिचर्यार्हः सत्कारयोग्यः ।

(११) निजमनोरथमनुवदन्त्या स्वाभिलाषानुरूपं कथयन्त्या । तरङ्गावली कल्लोलमाला । सङ्कल्पजेन मनोभवेन । जितो विजितो मारः कन्दर्पो येन तम् । शस्तेन प्रशस्तेन मनोहारिणा वस्तुनिचयेनेत्यस्य विशेषणम् । नूनं निश्चयेन । एषा अवन्तिसुन्दरी । जाया पत्नी । शापावसानसमये—यदा शापस्य समाप्ति-

* बालक्रीडा *

ये राजकुमार हैं।' इस लिए उसने साधारण तौर से बातचीत के सिलसिले में कहा—'राजकुमारी ! आप सभी कलाओं में निपुण, देवताओं को प्रसन्न करने में पटु, युद्धविद्या में प्रवीण, मणि, मन्त्र तथा औषधियों के विशेषज्ञ और आप से आदर पाने के अधिकारी एक ब्राह्मणकुमार हैं । आप इनका पूजन करें ।'

(११) यह सुनकर राजकुमारी बड़ी प्रसन्न होती हुई अपने मन की बात कहने वाली बालचन्द्रिका के साथ उठ खड़ी हुई और मन्द मन्द चलती हुई हवा के झोंके से हिलती तरंगमाला के समान कामदेव से आकुलित होकर उसने अपनी अलौकिक शोभा से कामदेव की शोभा को परास्त करने वाले राजवाहन को एक उत्तम आसन पर बैठाला । फिर सखियों के हाथ से जुटाये गये गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप और पान आदि विविध भाँति की सामग्रियें लेकर उनकी पूजा करायी ।

निधिदत्तं जातिस्मरत्वमावयोः समानमेव। तथापि कालजनितविशेषसूचकवाक्यैरस्या ज्ञानमुत्पादयिष्यामि' ।

(१२) तस्मिन्नेव समये कोऽपि मनोरमो राजहंसः केलीविधित्सया तदुपकण्ठमगमत् । समुत्सुकया राजकन्यया मरालग्रहणे नियुक्तां बालचन्द्रिकामवलोक्य समुचितो वाक्यावसर इति सम्भाषणनिपुणो राजवाहनः सलीलमलपत्—'सखि, पुरा शाम्बो नाम कश्चिन्महीवल्लभो मनोवल्लभया सह विहारवाञ्छया कमलाकरमवाप्य तत्र कोकनदकदम्बसमीपे निद्राधीनमानसं राजहंसं शनैर्गृहीत्वा बिसगुणेन तस्य चरणयुगलं निगड-

* बालविबोधिनी *

भविष्यति तदा । तपोनिधिना तापसेन येन पूर्वं शापो दत्तस्तेन दत्तं विहितम् । जातिस्मरत्वं पूर्वजन्मस्मरणम् कालेन दीर्घसमयेन जनित उत्पादितो यो विशेषस्तस्य सूचकानि प्रकाशकानि यानि वाक्यानि तैः ।

(१२) तस्या अवन्तिसुन्दर्या उपकण्ठं समीपम् । समुचितो योग्यः । वाक्यावसरः अस्मिन्नेव समये किञ्चिद्वक्तव्यमित्यर्थः । महीवल्लभो राजा । मनोवल्लभया स्वप्रियया । कमलाकरं सरोवरम् । कोकनदानां रक्तोत्पलानां कदम्बं समूहस्तस्य समीपे । निद्राधीनमानसं निद्रया आक्रान्तम् । बिसगुणेन मृणालतन्तुना ।

* बालक्रीडा *

राजवाहन ने अपने मनमें सोचा—'अवश्य ही यह पूतात्मा मेरी पूर्व जन्म की पत्नी है । यदि ऐसा न होता तो मेरे हृदय में इसके प्रति इतना अनुराग न उत्पन्न होता । शापसमाप्ति के अवसर पर उस तपस्वी ने पूर्व जन्म की बातें याद रहने का जो आशीर्वाद दिया था, वह हममें और इसमें समान भाव से घटित हो रहा है । फिर भी बहुत दिनों बाद हममें जो विशेषता जागी है, उसको सूचित करने वाली बातें कहकर मैं इसे पूर्व जन्म की बातों की याद दिलाऊँगा ।

(१२) इसी समय एक सुन्दर राजहंस खेलवाड़ करने के लिए अवन्तिसुन्दरी के पास आ पहुंचा । जिसे देखकर राजकुमारी उत्सुक हो उठी और उसे पकड़ने के लिए बालचन्द्रिका को भेज दिया । बात करने में निपुण राजवाहन बातचीत करने का अच्छा अवसर पाकर कहने लगे—'सखी ! बहुत दिनों की बात है, शाम्ब नाम का एक राजा अपनी प्रियतमा के साथ विहार करने की इच्छा से एक सरोवर के समीप गया । वहीं कमलवन में झपकियें लेते हुए

यित्वा कान्तामुखं सानुरागं विलोकयन्मन्दस्मितविकसितैककपोलमण्डल-स्तामभाषत—'इन्दुमुखि, मया बद्धो मरालः शान्तो मुनिवदास्ते। स्वेच्छ-यानेन गम्यताम्' इति।

(१३) सोऽपि राजहंसः शाम्बमशपत्—'महीपाल, यदस्मिन्नम्बुज-खण्डेऽनुष्ठानपरायणतया परमानन्देन तिष्ठन्तं नैष्ठिकं मामकारणं राज्यगर्वे-णावमानितवानसि तदेतत्पाप्मना रमणीविरहसन्तापमनुभव' इति। वि-षण्णवदनः शाम्बो जीवितेश्वरीविरहमसहिष्णुर्भूमौ दण्डवत्प्रणम्य सवि-नयमभाषत—'महाभाग, यदज्ञानेनाकरवं तत्क्षमस्व' इति। स तापसः

* बालविबोधिनी *

तस्य हंसस्य। निगडयित्वा बद्ध्वा। मन्दस्मितेन ईषद्धसितेन विकसितं प्रफुल्लं एकं कपोलमण्डलं गण्डस्थलं यस्य स। तां स्वकान्ताम्। अनेन हंसेन।

(१३) अम्बुजखण्डे कमलसमुदाये। अनुष्ठाने ध्यानादिकरणे परायण. प्रस-क्तस्य भावस्तया। नैष्ठिकं ब्रह्मचारिणम्। अवमानितवान् अवज्ञातवान्। पाप्मना पापेन अपराधेनेति यावत्। रमण्या दयिताया विरहस्य विच्छेदस्य सन्तापं क्लेशम्। असहिष्णुः सोढुमशक्नुवन्। करुणया आक्रृष्टं चेतो यस्य स दयापरवशचित्त। शा-पफलाभाव.। शापस्य फलं न भविष्यतीत्यर्थ.। अमोघतया अव्यर्थतया। भाविनि भविष्यति। जनने जन्मनि। जनुर्जननजन्मानि जनिरुत्पत्तिरुद्भव इत्यमर.।

* बालक्रीडा *

एक राजहंस को धीरे से राजा ने पकड़लिया और उसके दोनों पाँवों को मृणाल से बाँध दिया। फिर प्रेम के साथ अपनी प्रेयसी का मुख देखते और मन्द मुसकान से अपने कपोलों को विकसित करते हुए राजा साहब कहने लगे—'इन्दुमुखि! मैंने राजहंस को बाँध दिया। अब यह एक मुनि की तरह शान्त होकर चुपचाप बैठा है। अच्छा, अब इसे छोड़ दो, यह जिधर चाहे जाय।

(१३) उसी समय राजहंस ने राजा शाम्ब को शाप दिया—'राजन्! इस कमलवन में ध्यानपरायण होकर परम आनन्द से बैठे हुए मुझ ब्रह्मचारी को अभि-मान वश जो तुमने व्यर्थ अपमानित किया है, इस पाप से तुम्हें अपनी स्त्री के विरह का सन्ताप भोगना पड़ेगा। इससे राजा का मुख उदास हो गया और अपनी प्राणेश्वरी के वियोग का दुःख सहन करने में असमर्थ होकर उन्होंने दण्डवत्

करुणाकृष्टचेतास्तमवदत्—'राजन्, इह जन्मनि भवतः शापफलाभावो भवतु। मद्वचनस्यामोघतया भाविनि जनने शरीरान्तरं गतायाः अस्याः सरसिजाक्ष्या रसेन रमणो भूत्वा मुहूर्तद्वयं मच्चरणयुगलबन्धकारितया मासद्वयं शृङ्खलानिगडितचरणो रमणीवियोगविषादमनुभूय पश्चादनेककालं वल्लभया सह राज्यसुखं लभस्व' इति।

(१४) तदनु जातिस्मरत्वमपि तयोरन्वगृह्णात्। 'तस्मान्मरालबन्धनं न करणीयं त्वया' इति। सापि भर्तृदारिका तद्वचनाकर्णनाभिज्ञातस्वपुरातनजननवृत्तान्ता 'नूनमयं मत्प्राणवल्लभः' इति मनसि जानती रागपल्ल-

* बालविबोधिनी *

शरीरान्तरगतायाः अन्यदेहं प्राप्तायाः। रसेन अनुरागेण। रमणो वल्लभः। मुहूर्त्तेति—त्वया तु मुहूर्त्तद्वयमेव मच्चरणयुगलस्य बन्धनं कृतं तेन पुनर्मासद्वयं तत्फलं त्वया भोक्तव्यमित्यर्थः। शृङ्खलया निगडितौ बद्धौ चरणौ यस्य सः। अनेककालं दीर्घकालं यावत्।

(१४) अन्वगृह्णात् अनुज्ञातवान्। तद्वचनस्य राजवाहनवाक्यस्य आकर्णनेन श्रवणेन अभिज्ञातः स्मृतः स्वपुरातनजननस्य निजपूर्वजन्मनो वृत्तान्तो यया

* बालक्रीडा *

प्रणाम करते हुए बड़े विनय के साथ कहा—'महाभाग! मैंने अनजान में ऐसी भूल की है, आप क्षमा करें।' दया के वशवर्ती होकर उस तपस्वी ने राजा से कहा—'राजन्! इस जन्म में तुम पर मेरा शाप कुछ असर नहीं करेगा, किन्तु अगले जन्म में शरीरान्तर प्राप्त कर के यही कमलनयनी तुम्हारी पत्नी होगी और तुम इसके पति होओगे। उस समय, तुम जो आज दो मुहूर्त के लिए मेरे पैर बाँधे हो, इसके फलस्वरूप दो महीने तक तुम बेड़ियों में जकड़े पड़े रहोगे और अपनी स्त्री के वियोग का दुःख भोगोगे। उसके बाद बहुत दिनों तक तुम अपनी प्रियतमा के साथ रहते हुए राज्यसुख का भोग करोगे।'

(१४) कुछ देर बाद उस तपस्वी ने उन दोनों को जातिस्मरत्व (पूर्वजन्म की बात याद रहने का) वरदान भी दे दिया। इस लिए मैं आप से आग्रह करता हूं कि आप उस हंस को बाँधियेगा नहीं।' राजकुमारी को भी राजकुमार की बातें सुनने से पूर्वजन्म की बात याद आगयी और उसे विश्वास होगया कि

वितमानसा समन्दहासमवोचत्—'सौम्य, पुरा शाम्बो यज्ञवतीसन्देशपरिपालनाय तथाविधं हंसबन्धनमकार्षीत्। तथा हि लोके पण्डिता अपि दाक्षिण्येनाकार्यं कुर्वन्ति' इति। कन्याकुमारावेवमन्योन्यपुरातनजन्मनामधेये परिचिते परस्परज्ञानाय साभिज्ञमुक्त्वा मनोजरागपूर्णमानसौ बभूवतुः।

(१५) तस्मिन्नवसरे मालवेन्द्रमहिषी परिजनपरिवृता दुहितृकेलीविलोकनाय तं देशमवाप। बालचन्द्रिका तु तां दूरतो विलोक्य ससम्भ्रमं रहस्यनिर्भेदभिया हस्तसंज्ञया पुष्पोद्भवसेव्यमानं राजवाहनं वृक्षवाटिका·

* बालविबोधिनी *

सा। रागेणानुरागेण पल्लवितं प्रफुल्लं मानसं यस्याः सा। दाक्षिण्येन परच्छन्दानुरोधेन। अकार्यमनुचितम्। कन्याकुमारौ अवन्तिसुन्दरीराजवाहनौ। एवमित्थम्। अन्योन्येति—परस्परपूर्वजन्मनामनी। परस्परज्ञानाय परस्परप्रतिबोधनाय। साभिज्ञं सप्रमाणम्। मनोजः कामः रागोऽनुरागस्ताभ्यां पूर्णं मानसं ययोस्तौ।

(१५) तां महिषीम्। ससम्भ्रमं सत्वरम्। रहस्यनिर्भेदभिया—राजमहिषी यदि तथाविधं राजपुत्रं पश्येत्तदा रहस्यं निर्भिद्येतेति शङ्कया। हस्तसंज्ञया हस्तचेष्टया। वृक्षवाटिकायां गृहोद्याने अन्तरितं गोपितं गात्रं शरीरं यस्य तथाविधम्। राजहंस-

* बालक्रीडा *

'ये मेरे प्राणपति ही हैं।' मनमें यह निश्चय हो जाने पर प्रेम से उसका हृदय खिल उठा और वह मन्द-मन्द मुसकाती हुई कहने लगी—'महाशय! उस समय शाम्ब ने अपनी पत्नी यज्ञवती की आज्ञा का पालन करने के लिए राजहंस को बाँधा था। इससे ज्ञात होता है कि संसार में समझदार लोग भी भोलेपन से कभी-कभी कोई अनुचित कार्य कर बैठते हैं।' इस तरह वे दोनों राजकुमारी और राजकुमार एक दूसरे के पूर्वजन्म का हाल जानकर परस्पर याद दिलाने वाली बातें कहते हुए कामदेव के वशीभूत होकर गद्गद हो गये।

(१५) इसी समय मालव देश की राजरानी अपने बहुत से परिजनों को साथ लियेहुए अपनी कन्या का खेल-कूद देखने के विचार से वहाँ आ पहुँची। बालचन्द्रिका ने दूर ही से उनको आती देख लिया। बस, भागती हुई राजवाहन के पास गयी और संकेत से पुष्पोद्भव के साथ-साथ उन्हें वृक्षों की झुरमुट में

न्तरितगात्रमकरोत् । सा मानसारमहिषी सखीसमेताया दुहितुर्नानाविधां विहारलीलामनुभवन्ती क्षणं स्थित्वा दुहित्रा समेता निजागारगमनायोद्युक्ता बभूव । मातरमनुगच्छन्ती अवन्तिसुन्दरी 'राजहंसकुलतिलक, विहारवाञ्छया केलिवने मदन्तिकमागतं भवन्तमकाण्ड एव विसृज्य मया समुचितमिति जनन्यनुगमनं क्रियते-तदनेन भवन्मनोरागोऽन्यथा मा भूत्' इति मरालमिव कुमारमुद्दिश्य समुचितालापककलापं वदन्ती पुनः पुनः परिवृत्तदीननयना वदनं विलोकयन्ती निजमन्दिरमगात् ।

* बालविबोधिनी *

कुलतिलकेति सम्बोधनं श्लिष्टं, राजहंसस्य पक्षिविशेषस्य कुले मण्डले तिलक इवेति पक्षे राजहंसस्य तदाख्यनृपस्य कुले वंशे तिलको भूषणभूत इवेति चार्थद्वययोगात् । विहारवाञ्छया विहर्त्तुमिच्छया । अकाण्डे असमये सहसेति यावत् । समुचितमिति कर्त्तव्यमिति हेतोः । भवन्मनोरागः भवतो मनोवृत्तिः । अन्यथा विपरीतः । मयि कोपं मा कार्षीरित्यर्थः । मरालमिवेति—यथा राजहंसकुलतिलक इत्यनेन मराल उद्दिष्टस्तथा कुमारोऽपीत्यर्थः । परिवृत्ते विवृत्ते दीने विषण्णे नयने यया सा । वदनं मुखं राजपुत्रस्येति शेषः मन्दिरं गृहम् ।

* बालक्रीडा *

छिपा दिया । उसने ऐसा इस लिए किया कि जिससे महारानी को इन दोनों के प्रेम का रहस्य न मालूम होसके । महाराज मानसार की राजमहिषी सखियों के साथ विविध प्रकार के खेल करती हुई राजकुमारी के साथ थोड़ी देर तक वहां रही । इसके बाद पुत्री को साथ लेकर राजभवन जाने को उद्यत हुई । माता के पीछे-पीछे जाती हुई अवन्तिसुन्दरी ने कहा—'राजहंसश्रेष्ठ ! तुम इस विहारवाटिका में मेरे साथ विहार करने के लिए आये थे । लेकिन मैं अकारण ही तुम्हें यह सोच कर छोड़े जा रही हूं कि इस समय माता के साथ चली जाना ही उचित है । मेरे इस कार्य से आप अपना हार्दिक अनुराग व्यर्थ न समझिएगा ।' इस प्रकार हंस के बहाने राजवाहन से कहती और अपने दीनता भरे नयनों से कुमार को बार-बार निहारती हुई वह अपने घर चली गयी ।

(१६) तत्र हृदयवल्लभकथाप्रसङ्गे बालचन्द्रिकाकथिततदन्वयनामधेया मन्मथबाणपतनव्याकुलमानसा विरहवेदनया दिनेदिने बहुलपक्षशशिकलेव क्षामक्षामा आहारादिसकलं व्यापारं परिहृत्य रहस्यमन्दिरे मलयजरसक्षालितपल्लवकुसुमकल्पिततल्पतलावर्तितनुलता बभूव ।

(१७) तत्र तथाविधावस्थामनुभवन्तीं मन्मथानलसंतप्तां सुकुमारीं कुमारीं निरीक्ष्य खिन्नो वयस्यागणः काञ्चनकलशसंचितानि हरिचन्दनोशीरघनसारमिलितानि तदभिषेककल्पितानि सलिलानि बिसतन्तुमयानि

* बालविबोधिनी *

(१६) तत्र निजमन्दिरे । बालचन्द्रिकया कथिते प्रकाशिते तदन्वयनामधेये राजपुत्रस्य कुलनामनी यस्यै सा । दिने दिने प्रतिदिनम् । बहुलपक्षे कृष्णपक्षे या शशिकला ज्योत्स्ना सेव । अतिक्षीणेत्यर्थः । क्षामक्षामा अतिकृशा । रहस्यमन्दिरे निर्जनगृहे । मलयजरसेन चन्दनद्रवेण क्षालितैः सिक्तैः पल्लवैः किसलयैः कुसुमैश्च कल्पितं रचितं यत् तल्पतलं तत्र आवर्तिनी लुठन्ती तनुलता यस्याः सा ।

(१७) खिन्नो विषण्णः । वयस्यागणः सखीवर्गः । हरिचन्दनं चन्दनविशेषः । उशीरं नलदं घनसारः कर्पूरं तैर्मिलितानि मिश्रितानि । तस्या अवन्तिसुन्दर्या अभिषेकाय स्नानाय कल्पितानि स्थापितानि । बिसतन्तुमयानि मृणालसूत्ररचितानि । अशिशिरयत् शीतलीचकार । सलिलमिव तप्ततैले—तप्ततैले जलनि-

* बालक्रीडा *

(१६) घर पहुँच कर उसकी विचित्र दशा हो गयी । जब उसे बालचन्द्रिका के मुख से अपने हृदयवल्लभ (राजवाहन) के वंश और नाम का पता चला तो कामदेव के बाणों से उसका मन और भी व्याकुल हो गया । विरह की वेदना से कृष्णपक्ष के चन्द्रमा की कला के समान उसका शरीर बराबर कृश होता जाता था । भोजन-शयन आदि उसके सभी व्यापार छूट गये थे । वह एक एकान्त के कमरे में चन्दन-जल से सिंचे फूलों और पत्तों के बिछौने पर चुपचाप लोटती पड़ी रहती थी ।

(१७) उस की सखियों ने जब कामबाण से संतप्त सुकुमारी राजकुमारी की यह दशा देखी तो उन्हें बहुत दुःख हुआ । अब उन्हों ने एक सुवर्ण के घड़े में मलयागिरि चन्दन, खस, कपूर आदि मिलाकर नहलाने के लिए जल तैयार किया ।

वासांसि च नलिनीदलमयानि तालवृन्तानि च संतापहरणानि बहूनि संपाद्य तस्याः शरीरमशिशिरयत्। तदपि शीतलोपचरणं सलिलमिव तप्ततैले तदङ्गे दहनमेव समन्तादाविश्चकार। किंकर्तव्यतामूढां विषण्णां बालचन्द्रिकामीषदुन्मीलितेन कटाक्षवीक्षितेन बाष्पकणाकुलेन विरहानलोष्णनिःश्वासग्लपिताधरया नताङ्ग्या शनैः शनैः सगद्गदं व्यलापि— 'प्रियसखि, कामः कुसुमायुधः पञ्चबाण इति नूनमसत्यमुच्यते। इयमहमयोमयैरसंख्यैरिषुभिरनेन हन्ये। सखि. चन्द्रमसं वडवानलाद-

* बालविबोधिनी *

क्षेपाद् यथा तैलस्याधिकतप्तता जायते तद्वत् तस्याः शरीरे कृतेन शीतलोपचारेण तस्या दाहाधिक्यमेव जातमिति भावः। दहनं अग्निम्। किंकर्त्तव्यतामूढां अधुना किं कर्त्तव्यं तन्निश्चेतुमशक्नुवानाम्। विरह एवानलस्तस्योष्णनिःश्वासेन ग्लपितः म्लानोऽधरो यस्यास्तया। काम इति—कामस्य आयुधानि कुसुमानि तस्य बाणा अपि पञ्चसंख्यका एवेति यदुच्यते तन्मिथ्या। यतः अयोमयैर्लोहनिर्म्मितैरसंख्यैः संख्यातुमशक्तैः इषुभिर्बाणैः अनेन कामेन हन्ये हतास्मि। अहमिति शेषः। यस्मिन्निति। यस्मिन् चन्द्रमसि। अस्तसमये चन्द्रः पारावारे प्रविशति तदा पारावारस्य वृद्धिर्न भवति, उदयसमये तु पारावारस्य वृद्धिर्भवति—अतो ब्रवीमि चन्द्र-

* बालक्रीडा *

कमलनाल के वस्त्र, कमल के पत्तों के पंखे तथा सन्ताप हरण करनेवाली विविध प्रकार की सामग्रियें जुटायीं। उन्हीं से उसका शरीर ठंढा किया गया। किन्तु ये ठंढक पहुँचानेवाली वस्तुयें भी उसे शीतलता न पहुँचाकर इस तरह सन्ताप बढ़ानेवाली सावित हुईं, जैसे खौलते हुए तेल में पानी का छींटा पड़ जाय। 'क्या करें क्या नहीं' इस विचार से व्याकुल बालचन्द्रिका को उसने आँसू भरे नेत्रों से निहारा। उस समय विरह की आग के गरम उच्छ्वास से उसका मुख कुम्हला गया था और उसके अङ्ग-प्रत्यंग झुक गये थे। वह गद्गद वाणी में धीरे-धीरे विलाप करती हुई कहने लगी-'प्रिय सखी! कामदेव के पाँचों बाण फूल के होते हैं, संसार का यह कथन मुझे तो एक दम झूठ मालूम पड़ता है। वह हमको तो अगणित लौहमय बाणों से मार रहा है। हे सखी! जिस चन्द्रमा को लोग हिमराशि कहते हैं, वह मुझे तो वडवानल से भी अधिक सन्तापदायक मालूम देता

तितापकरं मन्ये। यदस्मिन्नन्तः प्रविशति शुष्यति पारावारः, सति निर्गते तदैव वर्धते। दोषाकरस्य दुष्कर्म किं वर्ण्यते मया। यदनेन निजसोदर्याः पद्मालयाया गेहभूतमपि कमलं विहन्यते।

(१८) विरहानलसंतप्तहृदयस्पर्शेन नूनमुष्णीकृतः स्वल्पीभवति मलयानिलः। नवपल्लवकल्पितं तल्पमिदमनङ्गाग्निशिखापटलमिव संतापं तनोस्तनोति। हरिचन्दनमपि पुरा निजयष्टिसश्लेषवदुरगरदनलिप्तोल्ब

* बालविबोधिनी *

स्यान्तःस्थित्या पारावारः शुष्यति निर्गमेण च वर्धत इति। अतएव च वाडवाग्नेरधिकतापकरं पारावार इति। दोषा रात्रिं करोतीति दोषाकरश्चन्द्रः, दोषाणामाकरश्च। निजसोदर्याः स्वभगिन्याः। लक्ष्मीचन्द्रौ समुद्राज्जाताविति प्रसिद्धिः। विहन्यते मुकुलीक्रियते।

(१८) विरहानलेन सन्तप्तस्य हृदयस्य स्पर्शेन—उष्णीकृत उत्तप्तीकृतो मलयानिलः स्वल्पीभवति नूनं मन्ये। उष्णवस्तुसंसर्गादन्योऽपि शुष्यति अतः स्वल्पीभावः च उष्णत्वञ्च तस्य भवतीति भावः। नवपल्लवकल्पितं नूतनकिसलयरचितम्। पुरा प्राक्। निजयष्टयाः स्वशाखायाः सश्लेषवतः सम्पर्किणः उरगस्य सर्पस्य रदनेन दन्तेन लिप्तं युक्तं यदुल्वणं तीव्रं गरलं विषं तेन सकलितं व्याप्तम्। चन्दनतरौ सर्पाणां वासः प्रसिद्धः। हरिचन्दनमपि विषलिप्ततया शरीरस्य तापजनक-

* बालक्रीडा *

है। मेरी धारणा सच है, तभी तो जब यह (कृष्णपक्ष में) समुद्र में डूब जाता है तब समुद्र सूखने लगता है और (शुक्लपक्ष में) जब यह बाहर निकल जाता तो समुद्र बढ़ने लगता है। मैं इस चन्द्रमा के दोष कहाँ तक बताऊँ ? यह अपनी सगी बहन लक्ष्मी के आश्रयभूत कमल को भी सम्पुटित कर देता है।

(१८) मेरे विरहानल से सन्तप्त हृदय के स्पर्श से गरम होकर मलयानिल भी न्यून होजाता है। नवपल्लव से बना हुआ यह बिछौना कामाग्नि के शिखासमूह के समान शरीर को झुलसाये डालता है। मलयागिरि चन्दन तो शरीर को इस तरह सन्ताप देता है मानो उसके तनों पर लिपटे सर्पों के विषैले दाँतों का विष उस में उतर आया हो। इस वास्ते अब इन ठंडक पहुँचाने वाली वस्तुओं का उपचार व्यर्थ है। अपनी शोभा से कामदेव को भी परास्त करनेवाले राज-

णगरलसंकलितमिव तापयति शरीरम् । तस्मादलमलमायासेन शीतलोपचारे । लावण्यजितमारो राजकुमार एवागदंकारो मन्मथज्वरापहरणे । सोऽपि लब्धुमशक्यो मया । किं करोमि' इति ।

(१९) बालचन्द्रिका मनोजज्वरावस्थापरमकाष्ठां गतां कोमलाङ्गीं तां राजवाहनलावण्याधीनमानसामनन्यशरणामवेक्ष्यात्मन्यचिन्तयत्—

'कुमारः सत्वरमानेतव्यो मया । नो चेदेनां स्मरणीयां गतिं नेष्यति मीनकेतनः। तत्रोद्याने कुमारयोरन्योन्यावलोकनवेलायामसमसायकः समं मुक्तसायकोऽभूत् । तस्मात्कुमारानयनं सुकरम्' इति । ततोऽवन्तिसुन्दरीरक्षणाय समयोचितकरणीयचतुरं सखीगणं नियुज्य राजकुमारमन्दिर-

* बालविबोधिनी *

त्वेनोत्प्रेक्ष्यते । तस्मादिति—युष्माभिर्यद् यत् शीतलतयोपन्यस्यते तत्सर्वमेव मे सन्तापदायकं भवति–अतो निरर्थकमेव–युष्माभिर्निवर्त्यताम् इति भावः । अगदंकारश्चिकित्सकः ।

(१९) परमकाष्ठाम् अतिशयम् । अनन्यशरणामनन्यगतिकाम् । स्मरणीयां गतिं—कथाशेषतां मृत्युमिति शेषः । कुमारयोः कुमारी च कुमारश्चेत्येकशेषः तयोः । असमसायकः विषमबाणः काम इत्यर्थः । समं युगपत् । द्वयोरेवोपरि । सुकरं सुसाध्यम् । समयेति—तस्मिन् समये तस्यामवस्थायां वा यत्करणीयं तत्र चतुरं पेशलम् । पुष्पबाणस्य कामस्य ये बाणास्तेषां तूणीरवदाचरन् मानसं यस्ये-

* बालक्रीडा *

कुमार ही इस कामज्वर को दूर करने में समर्थ (चिकित्सक) हो सकते हैं । लेकिन वे भी तो नहीं मिल सकते । अब मैं क्या करूँ ? "

(१९) बालचन्द्रिका ने देखा कि उसकी कोमलांगी सखी कामज्वर की चरम सीमा पर पहुँच गयी है । सका मन राजवाहन के अधीन होगया है । ऐस असहाय दशा में वह मन ही मन सोचने लगी–'मुझे कुमार को शीघ्र ले आना चाहिए । नहीं तो कामदेव इसे मार ही डालेगा । उस समय बाग में जब इन दोनों की देखा–देखी हुई थी, तब कामने एक ही समय दोनों पर अपना बाण चलाया था । इस लिए कुमार को यहाँ ले आना सहज है ।' इस केबाद कुमारी की रक्षा के लिए निपुण सखियों को नियुक्त करके वह राजकुमार के महलों

मवाप। पुष्पबाणबाणतूणीरायमाणमानसोऽनङ्गज्वरानलवदङ्गसंपर्कपरिम्लानपल्लवशयनमधिष्ठितो राजवाहनः प्राणेश्वरीमुद्दिश्य सह पुष्पोद्भवेन संलपन्नागतां प्रियवयस्यामालोक्य पादमूलमन्वेषणीया लतेव बालचन्द्रिकागतेति संतुष्टमना निटिलतटमण्डनीभवदम्बुजकोरकाकृतिलसदञ्जलिपुटाम् 'इतो निषीद' इति निर्दिष्टसमुचितासनासीनामवन्तिसुन्दरीप्रेषितं सकर्पूरं ताम्बूलं विनयेन ददतीं तां कान्तावृत्तान्तमपृच्छत्। तया सविनयमभाणि—'देव, क्रीडावने भवदवलोकनकालमारभ्य मन्मथमथ्यमाना पुष्पतल्पादिषु तापशमनमलभमाना वामनेनेवोन्नततरुफलमलभ्यं त्वदुरःस्थलालिङ्गनसौ-

* बालविबोधिनी *

ति विग्रहः—बाणास्तूणीरे तिष्ठन्ति पुष्पबाणस्य बाणा राजवाहनस्य मानसरूपे तूणीरे तदा आसन्निति भावः। प्रियवयस्या प्रियसखीम्। बालचन्द्रिकामित्यर्थः। अन्वेषणीया लतेवेति—महौषधत्वाल्लता यथा रोगार्तैरन्वेषणयोग्या भवति तथा सा बालचन्द्रिकाऽपि तदानीं राजवाहनस्य मन्मथज्वरापहरणे महौषधिरेवासीदिति भावः। निटिलतटेत्यादि—शिरसि अञ्जलिपुटं निधाय प्रणमन्तीमित्यर्थः। निषीद उपविश। *वामनेनेति—वामनेन यथा अलभ्यं उन्नततरुफलं लब्धुमिष्यते*

* बालक्रीडा *

को चला गया। वहाँ कामदेव के बाणों के तरकस के समान मनवाले और कामज्वर के कारण उष्ण अवयवों के सम्पर्क मे कुम्हलाये हुए पत्तों के बिछौने पर बैठे राजवाहन को बालचन्द्रिका ने देखा। वे उस समय अपनी प्राणेश्वरी को उद्देश करके कामदेव से कुछ बातें कर रहे थे। इसी अवसर पर अवन्तिसुन्दरी की प्रिय सखी को उन्हों ने उपस्थित देखा तो उन को ऐसा लगा कि जैसे किसी लता (औषधि) को खोज रहे हों और वह पैरों तले पड़ी मिल जाय। इस से उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। इन के सामने पहुँचते ही बालचन्द्रिका ने, मस्तक पर शोभा के लिए लगे कमल दल की तरह दोनो हाथ जोड़ा और 'आओ, यहाँ बैठो' ऐसी आज्ञा पाकर वह उचित आसन पर जा बैठी। इसके बाद बड़े प्रेम से अवन्तिसुन्दरी के दिये हुए कर्पूरमिश्रित पान के बीड़ों को उसने बड़े विनय के साथ कुमार को दिया। जिसे लेकर कुमार ने अपनी प्रेयसी का समाचार पूछा। उसने विनयपूर्वक कहा—'कुमार! उस रोज क्रीडावन में जब से आप को उन्होंने देखा है, तभी से उन्हें कामदेव बुरी तरह सता रहा है।

ख्यं स्मरान्धतया लिप्सुः सा स्वयमेव पत्रिकामालिख्य 'वल्लभायैनामर्पय' इति मां नियुक्तवती' । राजकुमारः पत्रिकां तामादाय पपाठ—

(२०) 'सुभग कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम् ।
मम मानसमभिलषति त्वं चित्तं कुरु तथा मृदुलम् ॥'

(२१) इति पठित्वा सादरमभाषत–'सखि, छायावन्मामनुवर्तमानस्य पुष्पोद्भवस्य वल्लभा त्वमेव तस्या मृगीदृशो वहिश्चराः प्राणा इव वर्तसे ।

* वालविवोधिनी *

तद्वत् सापि कामान्धतया विवेकशून्यतया दुर्लभं भवदुरःस्थलालिङ्गनसौख्यं लब्धुमिच्छुरिति भावः । वल्लभाय दयिताय । एनां पत्रिकाम् ।

(२०) सुभगेति—हे सुभग प्रियतम, कुसुममिव सुकुमारं सुकोमलं, जगति संसारे अनवद्यं अनिन्द्यं निर्दोषमिति यावत् । ते तव रूपं सौन्दर्यं वपुर्वा विलोक्य दृष्ट्वा मम मानसं कर्तृ अभिलषति वाञ्छति प्रार्थयति वा यत् त्वं स्वचित्तं मानसं तथास्वरूपवत् मृदुलमतिपेलवं कुरु विधेहीति । तव वपुरतिकोमलं किन्तु चित्तं ते अतिकठिनमिति भावः ।

(२१) छायया तुल्यं छायावत् यथा छाया पुरुषं सर्वथा अनुसरति तद्वदित्यर्थः । अनुवर्तमानस्य अनुसरतः सर्वदैव मां सेवमानस्येत्यर्थः । वहिश्चराः प्राणाः

* बालक्रीडा *

पुष्प-पल्लव आदि की शय्याओं पर उन्हें चैन नहीं मिली, तब उस बौने के समान कि जो ऊँचे वृक्ष पर कोई फल लगा हो उसे पा न सके, आपके हृदयालिङ्गन-सुख को अलभ्य समझ कर भी कामान्ध होकर उसे प्राप्त करने की अभिलाषा से यह चिट्ठी लिख कर मुझे दी और कहा कि 'इसे लेजाकर तुम मेरे प्रियतम को दे दो ।' इस तरह उन्होंने मुझे भेजा है । राजकुमार वह चिट्ठी लेकर पढ़ने लगे—

(२०) हे सुन्दर ! फूल की तरह कोमल तुम्हारे सुन्दर स्वरूप को देख कर मेरा मन तुम्हें चाहने लगा है । तुम अपने मन को भी अपने शरीर के समान ही कोमल बना लो ।

(२१) इसे पढ़कर कुमार ने बड़े आदर के साथ कहा–'सखी ! पुष्पोद्भव परछाईं की तरह मेरे साथ रहता है । सो पुष्पोद्भव की प्रेयसी तुम, उस मृगनयनी की प्यारी सखी बनकर बाहर घूमने–फिरनेवाले प्राण हो रही हो । इस प्र..

त्वच्चातुर्यमस्यां क्रियालतायामालवालमभूत्। यत्तवाभीष्टं येन प्रियामनोरथः फलिष्यति तदखिलं करिष्यामि। नताङ्ग्या मन्मनःकाठिन्यमाख्यातम्। यदा केलीवने कुरङ्गलोचना लोचनपथमवर्तत तदैवापहृतमदीयमानसा सा स्वमन्दिरमगात्। सा चेतसा माधुर्यकाठिन्ये स्वयमेव जानाति। दुष्करः कन्यान्तःपुरप्रवेशः। तदनुरूपमुपायमुपपाद्य श्वः परश्वो वा नताङ्गीं संगमिष्यामि। मदुदन्तमेवमाख्याय शिरीषकुसुमसुकुमाराया यथा शरीरबाधा न जायेत तथाविधमुपायमाचर' इति।

(२२) बालचन्द्रिकापि तस्य प्रेमगर्भितं वचनमाकर्ण्य संतुष्टा कन्यापु-

* बालविबोधिनी *

द्वितीयमिव जीवितम्। क्रिया कार्यं मत्प्रयोजनमित्यर्थः। सैव लता तस्याम्। आलवालं जलसेकभूमिः। (आलवालं विना लतायाः पुष्टिर्यथा न भवति तथा त्वच्चातुर्यं विना मत्प्रयोजनमपि न सेत्स्यतीति भावः) मम मनसः काठिन्यं कठोरता अपहृतं चोरितं मदीयं मानसं चित्तं यया सा। माधुर्यं कोमलता च काठिन्यं कठोरता च ते। उपपाद्य कृत्वा श्वः आगामिदिने। परश्वः—द्वितीयदिने।

(२२) प्रेम्णा गर्भितं प्रेमपूर्णम्। तत्रोद्याने। चकोरस्येव दीर्घे लोचने यस्याः सा तया। अवचितानि छिन्नानि पल्लवानां कुसुमानां च निकुरम्बाणि समूहा यस्य तम्

* बालक्रीडा *

रूपी लता में तुम्हारी चतुराई थाले का काम कर रही है। तुम्हारी जो इच्छा हो और जिस से मेरी प्रेयसी की अभिलाषा पूर्ण हो सके, मैं वह सब करूँगा। उस नताङ्गीने मेरे मन को कठोर बताया है। उस समय क्रीडावन में जब मैंने उस मृगनयनी को देखा, उसी समय वह मेरा मन चुराकर अपने घर चली गयी। वह मेरे चित्त की कोमलता और कठिनाई को स्वयं समझती है। किसी कुमारी कन्या के अन्तःपुर में घुसना कोई मामूली बात नहीं है। उस के अनुरूप कोई उपाय सोचकर कल या परसों मैं उन से मिलूँगा। इस तरह मेरा हाल कहकर तुम ऐसा कोई यत्न करो, जिस से सिरस पुष्प के समान सुकुमार अंगोंवाली अवन्तिसुन्दरी के शरीर को कोई कष्ट न पहुँचे।

(२२) बालचन्द्रिका राजकुमार के प्रेमपूर्ण वाक्य सुनकर प्रसन्न मन से राजकुमारी के अन्तःपुर को वापस चली गयी। राजवाहन भी वहाँ से उठकर

रमगच्छत्। राजवाहनोऽपि यत्र हृदयवल्लभावलोकनसुखमलभत तदुद्यानं विरहविनोदाय पुष्पोद्भवसमन्वितो जगाम। तत्र चकोरलोचनावचितपल्लवकुसुमनिकुरम्बं महीरुहसमूहं शरदिन्दुमुख्या मन्मथसमाराधनस्थानं च नताङ्गीपदपङ्क्तिचिह्नितं शीतलसैकततलं च सुदतीभुक्तमुक्तं माधवीलतामण्डपान्तरपल्लवतल्पं च विलोकयँल्ललनातिलकविलोकनवेलाजनितशेषाणि स्मारंस्मारं मन्दमारुतकम्पितानि नवचूतपल्लवानि मदनाग्निशिखा इव चकितो दर्शंदर्शं मनोजकर्णेजपानामिव कोकिलकीरमधुकराणां क्वणितानि श्रावंश्रावं मारविकारेण क्वचिदप्यवस्थातुमसहिष्णुः परिबभ्राम।

* बालविबोधिनी *

नताङ्गया अवन्तिसुन्दर्याः पदपंक्त्या चरणचिह्नेन चिह्नितम्। सुदत्या आदौ भुक्तमुपभुक्तं पश्चान्मुक्तं त्यक्तम्। माधवीलतामण्डपस्यान्तरे मध्ये यत्पल्लवतल्पं किसलयशय्या तत्। ललनातिलकस्य कामिनीभूषणभूताया अवन्तिसुन्दर्या विलोकनवेलायां दर्शनसमये जनित उत्पादितः शेषो येषां तथाभूतानिव (क्यानीति शेषः)। मनोजस्य कामस्य कर्णेजपा मन्त्रिणः सहायास्तेषाम्। कामोद्दीपकानामित्यर्थः।

* बालक्रीडा *

विरहजनित वेदना को दूर करने के विचार से उद्यान के उस स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ उन्होंने प्राणप्रिया के प्रथम दर्शन का आनन्द प्राप्त किया था। उनके साथ पुष्पोद्भव भी था। वहाँ चकोर के सदृश नेत्रोंवाली अपनी प्रियतमा द्वारा एकत्रित किये हुए फूलों, पत्तों और वृक्ष के झुण्डों तथा उस चन्द्रमुखी के कामदेव के पूजन स्थान एवं उस नम्र अंगवाली राजकुमारी के चरणचिह्न से चिह्नित बालुकामयी भूमि, उस सुन्दर दाँतोंवाली रमणी के द्वारा उपभुक्त माधवी लतामण्डप के भीतर पड़े पत्तों के बिछौने को देखते तथा प्रथम समय में उस सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी के हाव भावों का स्मरण करते, मन्द-मन्द चलती वायु के झोंके से काँपते आम के नवीन पौधों के पत्तों को कामाग्नि की शिखाके समान समझकर देखते और कामदेव के गुप्तचर कोयल, सुए तथा भौरों के शब्दों को सुनते हुए कामवेदना से विह्वल होकर कहीं भी ठहरने में असमर्थ होकर इधर-उधर घूमने लगे।

(२३) तस्मिन्नवसरे धरणीसुर एकः सूक्ष्मचित्रनिवसनः स्फुरन्मणिकुण्डलमण्डितो मुण्डितमस्तकमानवसमेतश्चतुरवेषमनोरमो यदृच्छया समागतः समन्ततोऽभ्युल्लसत्तेजोमण्डलं राजवाहनमाशीर्वादपूर्वकं ददर्श। राजा सादरम् 'को भवान्, कस्यां विद्यायां निपुणः' इति तं पप्रच्छ। स च 'विद्येश्वरनामधेयोऽहमैन्द्रजालिकविद्याकोविदः विविधदेशेषु राजमनोरञ्जनाय भ्रमन्नुज्जयिनीमद्यागतोऽस्मि' इति शशंस। पुनरपि राजवाहनं सम्यगालोक्य 'अस्यां लीलावनौ (पाण्डुरतानिमित्तं) किम्' इति साभिप्रायं विहस्यापृच्छत्। पुष्पोद्भवश्च निजकार्यकरणं तकं मन्त्रेनमादरेण

* बालविबोधिनी *

(२३) धरणीसुरो ब्राह्मण । सूक्ष्म श्लक्ष्णं चित्रं नानावर्णं निवसनं वासो यस्य स । मुण्डितं मस्तक यस्य तादृशेनापरेण मानवेन समेतो युक्तः। यदृच्छया अकस्मात्। कोविद. पण्डित । लीलावनौ उद्यानभूमौ। पाण्डुरताया निःश्रीकतायाः निमित्त कारणं किम् "विहारभूमौ तिष्ठन्नपि पाण्डुवदनं किमर्थं बिभर्षि" इति राजवाहन प्रत्यैन्द्रजालिकस्य प्रश्न.। साभिप्राय साभिनिवेशम्। सख्यस्य मित्रताया.। आभाषणं पूर्वं यस्मिंस्तस्य भावस्तया । आभाषणमात्रेणैव सता मैत्री भव-

* बालक्रीडा *

(२३) उसी समय अपने आप एक ब्राह्मण वहाँ आपहुँचा। वह महीन -तथा रंगीन कपड़े पहने हुए था। उस के कानों में मणिजटित कुण्डल झूल रहे थे। मूड़ मुड़ाये हुए एक दूसरा मनुष्य उस के साथ था। उसकी वेश-भूषा से ज्ञात होता था कि यह कोई चतुर व्यक्ति है और देखने में भी वह बड़ा भला मालूम होता था। उस के चारों ओर उसका तेज फैल रहा था। राजवाहन के समीप आकर उसने उनको आशीर्वाद दिया। इस पर उन्होंने बड़े विनय के साथ पूछा—'आप कौन हैं और किस विद्या के पण्डित हैं?' उसने जवाब दिया—'मेरा नाम विद्येश्वर है। मैं इन्द्रजाल (बाजीगर–जादूगर) विद्या का पण्डित हूँ। विविध देशों के राजाओं के मनोरञ्जनार्थ घूमता-फिरता आज ही आप की उज्जयिनी नगरी में आया हूँ।' इस के बाद उसने राजवाहन को एक बार फिर अच्छी तरह देखा और हँस कर पूछा—'इस क्रीडावन में आप पीले क्यों दिखायी दे रहे हैं?' पुष्पोद्भव ने उससे अपने काम में कुछ सहायता पाने की आशा से प्रेरित होकर बड़े

चभाषे—'ननु सतां सख्यस्याभाषणपूर्वतया चिरं रुचिरभाषणो भवानस्माकं प्रियवयस्यो जातः। सुहृदामकथ्यं च किमस्ति। केलीवनेऽस्मिन्वसन्तमहोत्सवायागताया मालवेन्द्रसुताया राजनन्दनस्यास्य चास्मिकद्दर्शनेऽन्योन्यानुरागातिरेकः समजायत । सततसंभोगसिद्ध्युपायाभावेनासावीदृशीमवस्थामनुभवति' इति। विद्येश्वरो लज्जाभिरामं राजकुमारमुखमभिवीक्ष्य विरचितमन्दहासो व्याजहार—'देव, भवदनुचरे मयि तिष्ठति तव कार्यमसाध्यं किमस्ति। अहमिन्द्रजालविद्यया मालवेन्द्रं मोहयन्पौरजनसमक्षमेव तत्तनयापरिणयं रचयित्वा कन्यान्तःपुरप्रवेशं कारयिष्यामीति वृत्तान्त एष राजकन्यकायै सखीमुखेन पूर्वमेव कथयितव्यः'

* बालविबोधिनी *

तीति भावः। चिरं दीर्घसमयं यावत्। सुहृदां मित्राणां सकाशे। अकथ्यं अप्रकाश्यम्। अन्योन्यानुरागातिरेकः परस्परप्रेमातिशयः। असौ राजवाहनः। लज्जया अभिरामं मनोज्ञदर्शनम्। व्याजहार उवाच। अनिमित्तं निष्कारणम्। प्रकटीकृतं

* बालक्रीडा *

आदर से कहा–'अच्छे लोग छेड़कर पहले भाषण करते हैं। इस नीति के अनुसार आप हमारे प्रिय मित्र होगये। क्यों कि आपकी बातें बड़ी सुन्दर हैं। तब फिर मित्र के सामने छिपाने की बात ही कौनसी हो सकती है। सुनिए, सवेरे इसी क्रीडा-उपवन में वसन्तमहोत्सव के निमित्त मालवनरेश की पुत्री अवन्तिसुन्दरी आयी हुई थी। परस्पर एक दूसरे को देखकर उस राजकन्या और हमारे इन राजकुमार में प्रेम होगया है। किन्तु इसकी सिद्धिका उपाय नहीं दीख रहा है कि जिससे ये दोनों चिरकालतक संभोगसुख प्राप्त कर सकें। इसी से इन की यह दशा हो रही है। लज्जा से सुन्दर राजकुमार का मुख देखकर मन्द-मन्द मुसकाते हुए विद्येश्वरने कहा—'देव, आप का सेवक मैं विद्यमान हूँ, तब भला संसार में कोई भी कार्य असाध्य क्यों कर हो सकता है? आप किसी सखी द्वारा उस राजकन्या से कुछ समय पहले ही कहला दें कि 'मैं इन्द्रजाल की विद्याद्वारा मालवाधिपति महाराज मानसार को मोहकर पुरवासियों के समक्ष तुम्हारे साथ विवाह करके तुम्हें अपने राजमहल में ले आऊँगा।' उसकी बात सुनकर राजवाहन बड़े

इति । संतुष्टमना महीपतिरनिमित्तं मित्रं प्रकटीकृतकृत्रिमक्रियापाटवं विप्रलम्भकृत्रिमप्रेमसहजसौहार्दवेदिनं तं विद्येश्वरं सबहुमानं विससर्ज ।

(२४) अथ राजवाहनो विद्येश्वरस्य क्रियापाटवेन फलितमिव मनोरथं मन्यमानः पुष्पोद्भवेन सह स्वमन्दिरमुपेत्य सादरं बालचन्द्रिकामुखेन निजवल्लभायै महीसुरक्रियमाणं संगमोपायं वेदयित्वा कौतुकाकृष्टहृदयः 'कथमिमां क्षपां क्षपयामि' इत्यतिष्ठत् । परेद्युः प्रभाते विद्येश्वरो रसभावरीतिगतिचतुरस्तादृशेन महता निजपरिजनेन सह राजभवनद्वारान्तिकमुपेत्य दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः सहसोपगम्य सप्रणामम् 'ऐन्द्रजालिकः समागत' इति द्वाःस्थैर्विज्ञापितेन तद्दर्शनकुतूहलाविष्टेन समुत्सुका-

* बालविबोधिनी *

प्रकाशीकृत कृत्रिमक्रियाया इन्द्रजालकर्मणि पाटवं चातुर्यं येन तम् । विप्रलम्भ प्रतारणं कृत्रिमप्रेम कपटानुराग सहजसौहार्दं निष्कपटमित्रता—तानि वेत्तीति तम् । सबहुमानं बहुसत्कारपूर्वकम् ।

(२४) क्रियापाटवेन कार्यकौशलेन । फलितमिव सिद्धप्रायम् । महीसुरेण ब्राह्मणेन ऐन्द्रजालिकेनेत्यर्थः । क्रियमाणमनुष्ठीयमानम् । वेदयित्वा ज्ञापयित्वा । क्षपा रात्रिम् । क्षपयामि यापयामि । रसाः शृङ्गारादय , भावोऽभिप्रायादयः, रीतिगतयः इन्द्रजालक्रिया तत्र चतुरः । तादृशेन तत्तद्गुणवता । दौवारिकैः द्वारपालैर्निवेदि-

* बालक्रीडा *

प्रसन्न हुए । उस अकारण साथी और ठगहारी, बनावटी तथा स्वाभाविक प्रेम के रहस्यको जाननेवाले विद्येश्वर को उन्होंने बड़े सम्मान के साथ विदा किया ।

(२४) इसके बाद राजवाहन ने विद्येश्वर के कौशल से मानो अपनी अभिलाषा पूर्ण समझ ली और पुष्पोद्भव के साथ-साथ अपने घर को लौट गये । वहाँ बालचन्द्रिका को बड़े आदर के साथ बुलवा उस ब्राह्मण द्वारा किये जाने वाले सम्मिलन के उपायको बताकर वे उत्सुकतापूर्ण हृदय से बैठे और यह सोचने लगे कि यह रात कैसे बिताऊँ । दूसरे दिन सवेरे रस, भाव, रीति तथा व्यवहार में चतुर विद्येश्वर अपने बहुत से साथियों को साथ लिये हुए राजद्वार पर पहुचा । उसने द्वारपालके द्वारा महाराज के पास अपने आगमन का सन्देश भेजवाया । द्वारपाल नेमहाराज से कहा—'महाराज ! एक जादूगर आया है ।' अब महाराज और रानियों ने बड़ी उत्सुकता के साथ उसे बुलवाया । वह उनके समीप

वरोधसहितेन मालवेन्द्रेण समाहूयमानो विद्येश्वरः कक्षान्तरं प्रविश्य सविनयमाशिषं दत्त्वा तदनुज्ञातः परिजनताड्यमानेषु वाद्येषु नदत्सु, गायकीषु मदनकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु, समधिकरागरञ्जितसामाजिकमनोवृत्तिषु पिच्छिकाभ्रमणेषु, सपरिवारं परिवृत्तं भ्रामयन्मुकुलितनयनः क्षणमतिष्ठत् । तदनु विषमं विषमुल्बणं वमंतः फणालंकरणा रत्नराजिनीराजितराजमन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः ।

* वालविबोधिनी *

तः प्रकशितो निजवृत्तान्तः स्वपरिचयो येन सः । समुत्सुकः द्रष्टुमुत्कण्ठितोऽवरोधो राजस्त्रियस्तेन । मालवेन्द्रेण मानसारेण । नदत्सु ध्वनत्सु । मदकलानां मदमत्तानां कोकिलानामिव मञ्जुलो मनोहरो ध्वनिर्यासां तासु। गायकीविशेषणमेतत् । समधिकेनातिशयितेन रागेणानुरागेण रञ्जिता आकृष्टा सामाजिकानां सभ्यानां मनोवृत्तिर्येन तेषु । पिच्छिकाभ्रमणेष्वित्यस्य विशेषणम् पिच्छिका ऐन्द्रजालिकानामुपकरणभूताः मयूरादिपुच्छगुच्छाः । ऐन्द्रजालिकाः पिच्छिकां भ्रामयित्वा जनान् मोहयन्तीति प्रसिद्धम् । परिवृत्तं मण्डलाकारम् । मुकुलितनयनो मुद्रितलोचनः उल्बणं तीव्रम् । वमन्तः उद्गिरन्तः । फणा फणा अलंकरणं भूषणं येषां ते । रत्नराजिभिः शिरःस्थितरत्नश्रेणिभिः नीराजित उज्ज्वलीकृतो राजमन्दिरस्याभोगः प्रदेशो यैस्ते । भोगिनः सर्पाः । निश्चेरुः चरन्तिस्म ।

* वालक्रीडा *

पहुँचा और दूसरा कक्ष लांघकर उसने वड़े विनय के साथ राजा को आशीर्वाद दिया। उस समय विद्येश्वर की आज्ञा से उसके साथी तरह २ के वाजे वजाने लगे। गायिकायें मतवाले कोकिल के समान मीठे गले से गाने लगीं और वह स्वयं मोर के पखनों के मुरछल को मन्त्र पढ़ पढ़ कर इस वास्ते घुमाने लगा कि दर्शकों की चित्तवृत्ति एकदम अपनी ओर आकृष्ट हो जाय। उसके सभी साथी उसके चारों ओर घूमने लगे और वह आँखें मूंदकर क्षणभर चुपचाप वैठा रहा। इसके वाद सहसा वड़े वड़े फनवाले वहुत से साँप निकल पड़े। वे अपने मुख से भयानक विष उगल रहे थे और उनके मस्तक के मणि उस राजमन्दिर के आँगन को देदीप्यमान कर रहे थे। उन्हें देखकर वहाँ के सभी लोग भयभीत होगये।

(२५) गृध्राश्च बहु स्तुण्डैरहिपतीनादाय दिवि समचरन्। ततोऽग्रजन्मा नरसिंहस्य हिरण्यकशिपोर्दैत्येश्वरस्य विदारणमभिनीय महाश्चर्यान्वितं राजानमभाषत—'राजन्, अवसानसमये भवता शुभसूचकं द्रष्टुमुचितम्। ततः कल्याणपरम्परावाप्तये भवदात्मजाकारायास्तरुण्या निखिललक्षणोपेतस्य राजनन्दनस्य विवाहः कार्यः' इति। तदवलोकनकुतूहलेन महीपालेनानुज्ञातः स सङ्कल्पितार्थसिद्धिसंभावनसंफुल्लवदनः सकलमोहजनकमञ्जनं लोचनयोर्निक्षिप्य परितो व्यलोकत। सर्वेषु 'तदैन्द्रजालिकमेव कर्म' इति साद्भुतं पश्यत्सु रागपल्लवितहृदयेन राजवाहनेन पूर्वसंकेतसमागता-

* बालविबोधिनी *

(२५) गृध्राः पक्षिविशेषाः। तुण्डैर्मुखैः अहिपतीन् सर्पश्रेष्ठान्। दिवि गगने। अग्रजन्मा ब्राह्मणः। विदारणं वक्षश्छेदनम्। अभिनीय दर्शयित्वा। अवसानसमये क्रीडासमाप्तौ। कल्याणानां परम्परा श्रेणिस्तस्या अवाप्तये प्राप्तये। भवत आत्मजा नन्दिनी तस्या आकार इवाकारो यस्यास्तस्याः भवत्कन्यासदृश्या इत्यर्थः। निखिललक्षणोपेतस्य सर्वसुलक्षणयुक्तस्य। अनुज्ञात आदिष्टः। सङ्कल्पितस्य अभीष्टस्य अर्थस्य प्रयोजनस्य (अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोर्विवाहरूपस्येत्यर्थः) सिद्धेः सम्भावनेन सम्भवतया संफुल्लं हर्षविकसितं वदनमाननं यस्य सः। सकलमोहजनकं

* बालक्रीडा *

(२५) उसी समय बहुत से गृध्र आये और उन बड़े बड़े साँपों को अपनी चोंच में दाबकर आकाश में उड़ने लगे। इस के बाद उस ब्राह्मण ने नृसिंह भगवान् के द्वारा हिरण्यकशिपु की छाती फाड़ने का विस्मयजनक अभिनय दिखाया और अन्त में राजा से कहा—'राजन्! अब खेल के अन्त में एक शुभसूचक खेल देखना उचित है। सो बराबर कल्याण की परम्पराओं को प्राप्त कराने के विचार से मैं आपकी कन्या के आकार की एक तरुणी का सब प्रकार के शुभ लक्षणों युक्त एक राजकुमार के साथ विवाह कराऊँगा।' इस खेल को देखने के लिए महाराज के हृदय में और भी उत्कण्ठा जागी, जिससे उन्होंने तुरन्त खेल दिखाने की आज्ञा दी। विद्येश्वर ने अपनी इच्छा पूर्ण होने की सम्भावना देखी तो उसका चेहरा खिल उठा। उसने तत्काल समस्त जनसमुदाय को मोहित करनेवाला एक विशेष प्रकार का अञ्जन निकाला और उसे अपनी दोनों आंखों में

मनेकभूषणभूषिताङ्गामवन्तिसुन्दरीं वैवाहिकमन्त्रतन्त्रनैपुण्येनाग्निं साक्षीकृत्यसंयोजयामास । क्रियावसाने सति 'इन्द्रजालपुरुषाः, सर्वे गच्छन्तु भवन्त.' इति द्विजन्मनोच्चैरुच्यमाने सर्वे मायामानवा यथायथमन्तर्भावं गताः । राजवाहनोऽपि पूर्वकल्पितेन गूढोपायचातुर्येणेन्द्रजालिकपुरुषवत्कन्यान्तःपुरं विवेश । मालवेन्द्रोऽपि तदद्भुतं मन्यमानस्तस्मै वाडवाय प्रचुरतरं धनं दत्त्वा विद्येश्वरम् 'इदानीं साधय' इति विसृज्य स्वं समन्तमन्दिरं जगाम । ततोऽवन्तिसुन्दरी प्रियसहचरीवरपरिवारा वल्लभोपेता सुन्दरं मन्दिरं ययौ । एवं दैवमानुषबलेन मनोरथसाफल्यमुपेतो राजवा-

* बालविबोधिनी *

सर्वेषां द्रष्टॄणां भ्रमोत्पादकम् । अञ्जनं कज्जलम् । लोचनयोः स्वनेत्रयोः । परितः समन्तात् । पूर्वसङ्केतेन प्राक्सूचनानुसारेण समागतामुपस्थिताम् । वैवाहिका विवाहसम्बन्धिनो ये मन्त्रतन्त्रास्तेषु यन्नैपुण्यं पाटवं तेन । यथाविधीत्यर्थः । मायामानवाः कल्पितपुरुषाः । अन्तर्भावमदृश्यताम् । वाडवाय ब्राह्मणाय । द्विजात्यग्रजन्मभूदेववाडवा इत्यमरः । साधय गच्छ । दैवमदृष्टजनितं मानुषमैन्द्रजालिकविहितं च

* बालक्रीडा *

लगाकर चारों ओर देखने लगा । वहां के सब लोग यही समझ रहे थे कि यह भी कोई तमाशा ही है और चकित होकर देखने लगे । विद्येश्वर ने ववाहिक मंत्रों को उच्चारण करते हुए अग्नि को साक्षी करके पहले ही से अनेक प्रकार के वस्त्राभूषण धारण करके आयी हुई अवन्तिसुन्दरी के साथ राजवाहन का विवाह करा दिया । कार्य समाप्त होजाने के बाद जब ब्राह्मणने कहा—'खेल में कार्य करने वाले सब खेलाड़ी चले जायँ ।' तो वे सभी मायावी पुरुष धीरे-धीरे गायब होगये । राजवाहन पहले से निश्चित और गुप्तरूप से छिपने की चतुराई से राजकन्या के अन्तःपुर में घुस गये । मालवनरेशने ब्राह्मण के कार्यों को अद्भुत समझकर उसे बहुत सा धन दिया और कहा—'अब आप जाकर आराम करिए' और स्वयं भी अपने महलों को चले गये । इस के बाद अवन्तिसुन्दरी अपनी प्रिय सखियों और प्राणपति के साथ अपने सुन्दर अन्तःपुर को चली

द्रुन: सरसमधुरचेष्टाभि: शनै:शनैर्हरिणलोचनाया लज्जामपनयन्सुरतराग-मुपनयन्रहो विश्रम्भमुपजनयन्संलापे तदनुलापपीयूषपानलोलश्चित्रचित्रं चित्तहारिणं चतुर्दशभुवनवृत्तान्तं श्रावयामास।

इति श्रीदण्डिन: कृतौ दशकुमारचरितेऽवन्तिसुन्दरीपरिणयो नाम पञ्चम उच्छ्वास: ।

समाप्तेयं दशकुमारचरितपूर्वपीठिका ।

* बालविबोधिनी *

यद्वलं तेन । अपनयन् दूरीकुर्वन् । उपनयन् प्रापयन् । रह निर्जने । विश्रम्भं विश्वासम् । संलापे इति शेष । संलाप: परस्परालाप । तदनुलापेति तस्या अनुलाप एव पीयूषममृतं तस्य पाने सानुरागाकर्णने लोलश्चञ्चल । चित्रचित्रं अत्याश्चर्यजनकम् । चतुर्दशाना भुवनाना वृत्तान्तमाख्यायिकाम् । श्रावयामास अवन्तिसुन्दरीमिति शेष । आख्यायिकाश्रवणे युवतीना बलवती स्पृहा भवतीति ध्येयम् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृताया बालविबोधिनीसमाख्याया दशकुमारचरितव्याख्याया पञ्चमोच्छ्वास ।

समाप्ता पूर्वपीठिका ।

* बालक्रीडा *

गयी। इस प्रकार भाग्य और मनुष्य के बल से अपना अभीष्ट सिद्ध करके अपनी सरस और मधुर चेष्टाओं से धीरे-धीरे उस मृगनयनी का संकोच दूर करते, एकान्त में संभोग सुख भोगते, बातचीत से उसके हृदय में अपने प्रति भरोसा उत्पन्न करते और उसकी तरह-तरह की अमृत सदृश मीठी बातों को सुनते हुए राजवाहन ने उसे चौदहों भुवनों का कह वृत्तान्त सुनाया। जिसे सुनकर अवन्तिसुन्दरी गद्गद होगयी।

इति श्रीरामतेजपाण्डेयकृतदशकुमारचरितबालक्रीडाटीकाया पञ्चम उच्छ्वास समाप्त ।

इति दशकुमारचरितपूर्वपीठिका समाप्ता ।

श्रीः

दशकुमारचरितम् ।

उत्तरपीठिकायाम् ।

प्रथमोच्छ्वासः ।

(१) श्रुत्वा तु भुवनवृत्तान्तमुत्तमाङ्गना विस्मयविकसिताक्षी सस्मितमिदमभाषत—'दयित, त्वत्प्रसादादद्य मे चरितार्था श्रोत्रवृत्तिः। अद्य मे मनसि तमोपहस्त्वया दत्तो ज्ञानप्रदीपः। पक्वमिदानीं त्वत्पादपद्मपरिचर्या

---

* बालविबोधिनी *

(१) उत्तमा निखिलनायिकागुणभूषिता अङ्गना कामिनी अवन्तिसुन्दरीति शेषः। विस्मयेन नानाविधाख्यायिकाश्रवणजनिताश्चर्यरसेन विकसिते प्रफुल्ले अक्षिणी नयने यस्याः सा। सस्मितं सहासम्। चरितार्था सफला। श्रोत्रवृत्तिः श्रवणेन्द्रियमित्यर्थः। तमः अपहन्तीति तमोपहोऽज्ञाननाशकः। ज्ञानमेव प्रदीपः। तव पादपद्मयोश्चरणकमलयोः परिचर्यायाः सेवायाः फलम् परिपाकः। त्वत्प्रसादस्य भुवनवृत्तान्तश्रावणरूपस्येत्यर्थः। किमुपकृत्य कीदृशमुपकारं कृत्वा। प्रत्युपकृतवती कृतप्रत्युपकारा। अभवदीयं न भवदीयम्। मत्सम्बद्धं मदीयम्—यतोऽहमपि भवत एवातो यदेव मदीयं तदपि भवदीयमेवेति भावः। अथवा पक्षान्तरे पूर्वोपरितोपे इत्याशयः। अस्यापि जनस्य ममेत्यर्थः। क्वचित् कुत्रापि। प्रभुत्वं

* बालक्रीडा *

(१) चौदहों भुवनों का वृत्तान्त सुनकर उस सुन्दरी रमणी के नेत्र आश्चर्य से विकसित हो उठे। और उसने मुसकराकर कहा—प्रियतम ! आप की कृपा से आज मैंने सब बातें सुन लीं। आज आपने मेरे अँधेरे हृदय में ज्ञान का दीपक जला दिया। आप के चरणों की सेवा का फल आज परिपक्व हो गया। आपने मेरे पर जो कृपा की है, उस के बदले में कौन उपकार करके अपने को प्रत्युपका-

फलम्। अस्य च त्वत्प्रसादस्य किमुपकृत्य प्रत्युपकृतवती भवेयम्। अभवदीयं हि नैव किञ्चिन्मत्सम्बद्धम्। अथवास्त्येवास्यापि जनस्य क्वचित्प्रभुत्वम्। अशक्य हि मदिच्छया विना सरस्वतीमुखग्रहणोच्छेषणीकृतो दशनच्छद एष चुम्बयितुम्।

(७) 'अम्बुजासनास्तनतटोपभुक्तमुरःस्थलं चेदमालिङ्गयितुम्' इति प्रियोरसि प्रावृडिव नभस्युपास्तीर्णगुरुपयोधरमण्डला प्रौढकन्दलीकुड्मल

* बालविबोधिनी *

स्वातन्त्र्यम्—मदाज्ञया विना तत्तद्भवतापि कर्तुं न शक्यत इति भाव। तदेव विशदीकरोति—अशक्यमित्यादिना। सरस्वत्या वाण्या मुखग्रहणेन आननाधिकारेण उच्छेषणीकृत उच्छिष्टीकृतः। दशनच्छदस्य विशेषणम्। सरस्वत्या तु प्रागेव भवतो वदनकमलमधिष्ठितम्—मुखमधिष्ठाय सा वसतीत्यर्थ। दशनच्छद ओष्ठः। चुम्बयितुमिति णिजन्तम्। अन्यया कामिन्येति शेष.।

(२) अम्बुजासना लक्ष्मीस्तस्याः स्तनतटाभ्यां पयोधराभ्यामुपभुक्तं समालिङ्गितमित्यर्थः। उर स्थलं वक्ष स्थलं राजवाहनस्येत्यर्थ.। आलिङ्गयितुमित्यपि णिजन्तम्—अन्ययेति शेष। इति उक्त्वेति शेष। प्रावृट् वर्षा तद्वत्। नभसि आकाशे। उपास्तीर्णं विस्तारितमिति प्रावृट्पक्षे अवन्तिसुन्दरीपक्षे तु स्थापितं गुरु विशालमुभयत्र समानम् पयोधरमण्डलमेकत्र मेघसमूहोऽन्यत्र स्तनयुगलं यया सा। प्रौढाया पुष्टाया कन्दल्या द्रोणपर्णीति प्रसिद्धाया कुड्मलं मुकुलमिव। हृदः

* बालक्रीडा *

रिणी समझूँ? मेरे पास तो कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जो आप की न हो। फिर भी ध्यान से देखने पर मुझे ऐसा लगता है कि मेरा आधिपत्य भी किसी वस्तु पर अवश्य है। सरस्वती के द्वारा जूठा किया हुआ आपका यह होंठ मेरे सिवाय और कोई भी स्त्री नहीं चूम सकती। क्योंकि इस पर मेरी प्रभुता है।

(७) दूसरे लक्ष्मी के स्तनों से संस्पृष्ट आप के इस उर स्थल का भी आलिंगन मेरे सिवाय और कोई नहीं कर सकता।' ऐसा कहकर उसने सावन मास के साथ वर्षा ऋतु की तरह बड़े-बड़े कुचों वाली अपनी छाती उस के हृदय से सटा दी और द्रोणपर्णी की कोपल के समान प्रेमातिरेक से कुछ लालिमा लिये

र्लमिव रूढरागरूपितं चक्षुरुल्लासयन्ती बर्हिबर्हावलीविडम्बयता कुसुमचन्द्रकशारेण मधुकरकुलव्याकुलेन केशकलापेन स्फुरदरुणकिरणकेसरकरालं कदम्बमुकुलमिव कान्तस्याधरमणिमधीरमाचुचुम्ब ।

(३) तदारम्भस्फुरितया च रागवृत्त्या भूयोऽप्यावर्ततातिमात्रचित्रो-

* बालविबोधिनी *

उत्पन्नो यो रागो रक्तिमा अनुरागश्च तेन रूपितं भूपितम् । चक्षुर्विशेषणमिदम् । तादृशं चक्षुरुल्लासयन्ती विशदीकुर्वाणा; बर्ही मयूरस्तस्य बर्हावलीः पिच्छपंक्तीः विडम्बयता अनुकुर्वता । कुसुमानि शिरःस्थितपुष्पाण्येव चन्द्रिका मेचकास्तैः शारेण विचित्रेण । मधुकरकुलव्याकुलेन कुसुमामोदलुब्धभ्रमरव्याप्तेन । सर्वमेतत्केशकलापस्य विशेषणम् । केशकलापेनेति उपलक्षणे तृतीया ।तथाविधकेशपाशोपलक्षिता अवन्तिसुन्दरीत्यर्थः । स्फुरदिति—स्फुरन्तः शोभमाना अरुणा रक्तवर्णाः किरणा एव केसराणि किञ्जल्कास्तैः करालं दन्तुरम् । अतएव कदम्बसाम्यमस्य । अधरमणेर्विशेषणमेतत् । कदम्बमुकुलं नीपकलिकामिव । कान्तस्य दयितस्य राजवाहनस्येत्यर्थः । अधरो मणिरिव तम् अधरमणिमधरबिम्बम् । अधीरमवशं यथा तथा आचुचुम्ब चुम्बितवती ।

(३) तदारम्भेति—तस्यारम्भस्तदारम्भस्तेन चुम्बनारम्भेण स्फुरितया उद्दीप्तया । रागवृत्त्या अनुरागसमृद्धया । भूयोऽपि बाहुल्येनेति भावः । आवर्तत प्रवृत्तोऽभवत् । अतिमात्रमत्यर्थं चित्रेण नानाविधेन विस्मयोत्पादकेन वा उपचारेण सुरतसाधनेन शांफरो रमणीयः । सुरतस्य खेदः श्रमस्तेन सुप्तयोः निद्रितयोः ।

* बालक्रीडा *

हुए लोचनों से टकटकी बाँधकर निहारने लगी । उसके केशपाश में जो फूल गुँथे थे, वे मयूरपंख के चमकीले चन्द्रक के समान चमचमाते मालूम पड़ते थे । उन फूलों का मधुपान करने के लिए लोभी भौंरों का झुण्ड मँडरा रहा था । इसी समय भावावेश से अधीर होकर उसने कदम्ब की कोपल के सदृश लाल-लाल अपने प्रियतम के होंठ चूम लिये ।

(३) इस चुम्बन से उस की कामवासना उद्दीप हो उठी और वह उस के साथ भोग-विलास करने लगा । बहुत देर तक विलास करके थक जाने

पचारशीकरो रतिप्रबन्धः । सुरतखेदसुप्तयोस्तु तयोः स्वप्ने बिसगुणनिगडितपादो जरठः कश्चिज्जालपादोऽदृश्यत । प्रत्यबुध्येतां चोभौ ।

(४) अथ तस्य राजकुमारस्य कमलमूढशशिकिरणरज्जुदामनिगृहीतमिव रजतशृङ्खलोपगूढं चरणयुगलमासीत् । उपलभ्यैव च 'किमेतत्' इत्यतिपरित्रासविह्वला मुक्तकण्ठमाचक्रन्द राजकन्या । येन च तत्सकल-

* बालविबोधिनी *

तयोः अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोः । स्वप्ने स्वप्नावस्थायाम् । बिसगुणेन मृणालतन्तुना निगडितौ बद्धौ पादौ चरणौ यस्य सः । जरठो वृद्धः । जालपादो हंसः । अदृश्यत ताभ्यां दृष्टोऽभवदित्यर्थः । प्रत्यबुध्येतां जागरितौ ।

(४) अथ हंसदर्शनानन्तरम् । कमलेन पद्मेन मूढो भ्रान्तो यः शशी चन्द्रस्तस्य किरणा एव रज्जुदाम गुणसमूहस्तेन निगृहीतं बद्धमिव—इदं कमलमिति भ्रान्त्या चन्द्रः स्वमयूखजालेन रज्ज्वा चरणयुगलं बबन्धेति भावः । चन्द्रपद्मयोः वैरं तु प्रसिद्धम् । रजतशृंखलया उपगूढं वेष्टितम् । उपलभ्य ज्ञात्वा । किमेतत् ? एतत् किं जातमिति अतिपरित्रासेन अत्यन्तभयेन विह्वला व्याकुला । मुक्तकण्ठं उच्चैः । आचक्रन्द रुरोद । येन आक्रन्देन । कन्यान्तःपुरं कन्यानिवासः । अग्निना अनलेन परीतं व्याप्तम् । पिशाचेनोपहृतं भूताविष्टम् । वेपमानं कम्पमानम् । अनिरूप्येति—न निरूप्यमाणो न निर्णीयमानः तदात्वस्य तत्कालस्य आय-

* बालक्रीडा *

पर जब वे दोनों सोगये तो उन्होंने स्वप्न में एक वृद्ध हंस देखा । जिसके पैर मृणालतन्तु से बँधे हुए थे । इसी समय उन दोनों की आँख खुल गयी ।

(४) उठकर राजकुमार ने देखा कि कमल के भ्रम से चन्द्रमा की किरणों के समान चाँदी की जंजीर से उस के पैर जकडे हुए हैं । राजकुमारी ने अपने प्रियतम को जो इस दशा में देखा तो अत्यन्त भयभीत होकर बड़ी जोर से चीख उठी । उसका चीत्कार सुनकर राजकन्या का सारा अन्तःपुर व्याकुल हो उठा और इस प्रकार कोलाहल मचने लगा–जैसे आग लग गयी हो अथवा पिशाचों की विशाल सेना ने आक्रमण कर दिया हो । वहाँ के सब लोग भय के मारे काँप रहे थे । उस समय लोगों को न यही सूझ रहा था कि इस समय क्या

मेव कन्यान्तःपुरमग्निपरीतमिव पिशाचोपहतमिव वेपमानमनिरूप्यमाणतदात्वायतिविभागमगण्यमानरहस्यरक्षासमयमवनितलविप्रविध्यमानगात्रमाक्रन्दविदीर्यमाणकण्ठमश्रुस्रोतोऽवगुण्ठितकपोलतलमाकुलीबभूव ।

(५) तुमुले चास्मिन्समयेऽनियन्त्रितप्रवेशाः 'किं किम्' इति सहसोपसृत्य विविशुरन्तर्वंशिकपुरुषाः । ददृशुश्च तदवस्थं राजकुमारम् । तद-

बालविबोधनी

तेरुत्तरकालस्य च विभागः कृत्यं येन तत् । तत्कालस्य तदात्वं स्यादुत्तरः काल आयतिरित्यमरः । न गण्यमानः न विचार्यमाणः रहस्यस्य निर्जनोत्पन्नस्य विषयस्य रक्षायाः समयो व्यवस्था येन तत्—रहस्यरक्षार्थं केनापि न यत्यत इति भावः । अवनितले भूतले विप्रविध्यमानं ताड्यमानं गात्रं शरीरं यस्य तत् । आक्रन्देन रुदितेन विदीर्यमाणः भिद्यमानः कण्ठो यस्य तत् । सर्वमेतत्कन्यान्तःपुरमित्यस्य विशेषणम् । आकुलीबभूव व्याकुलं सञ्जातम् ।

(५) तुमुले संकुले । न नियन्त्रितो निवारितः प्रवेशो येषां ते—अनिवारितप्रवेशाः । अन्तर्वंशिकपुरुषाः अन्तःपुराधिकृताः । अन्तःपुरे त्वधिकृतः स्यादन्तर्वंशिको जन इत्यमरः । तदवस्थमिति—सा अवस्था यस्येति विग्रहः । शृङ्खलितचरणयुगलम् । तदनुभावेति–तस्य राजकुमारस्य अनुभावेन प्रतापेन निरुद्धा प्रति-

* बालक्रीडा *

करना चाहिए और न वे यही कल्पना कर पा रहे थे कि आगे चलकर क्या किया जायगा । उन लोगों को इसका भी कोई उपाय नहीं दिखायी दे रहा था कि राजकुमारी को इस लाञ्छन से किस प्रकार बचाया जाय । सब लोग गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहे थे और उनके नेत्रों द्वारा इतने प्रबल वेग से आँसू बह रहा था कि सब का कपोलप्रदेश आँसुओं से भींग गया था ।

(५) इस प्रकार हंगामा मचने पर सभी पुराने नौकर–चाकर 'क्या बात है, क्यों शोर मच रहा है' कहते हुए भीतर घुस आये और उन्हों ने बंधन में बँधे हुए राजकुमार को देख लिया । राजपुरुषों की तो हिम्मत पड़ी नहीं कि

नुभावनिरुद्धनिग्रहेच्छास्तु सद्य एव ते तमर्थं चण्डवर्मणे निवेदयाञ्चक्रुः ।

(६) सोऽपि कोपादागत्य निर्दहन्निव दहनगर्भया दृशा निशाम्योत्पन्नप्रत्यभिज्ञः 'कथं स एवैष मदनुजमरणनिमित्तभूतायाः पापाया बालचन्द्रिकायाः पत्युरत्यभिनिविष्टवित्तदर्पस्य वैदेशिकवणिक्पुत्रस्य पुष्पोद्भवस्य मित्रं रूपमत्तः कलाभिमानी नैकविधविप्रलम्भोपायपाटवावर्जि-

* बालविबोधिनी *

-हता निग्रहेच्छा पराभवाभिलाषो येषां ते । ते अन्तर्वंशिकपुरुषाः । अर्थं विषयम् ।

(६) सोऽपि चण्डवर्माऽपि । निर्दहन्निव भस्मीकुर्वन्निव । दहनोऽग्निर्गर्भे मध्ये यस्यास्तया । दृशा नेत्रेण । निशाम्य अवलोक्य । उत्पन्ना प्राप्ता प्रत्यभिज्ञा सोऽयमित्याकारिका स्मृतिर्यस्य सः । मदनुजस्य दारुवर्मणो मरणस्य मृत्योर्निमित्तभूताया कारणभूतायाः । पत्युः स्वामिनः । अति अतिशयेन अभिनिविष्ट उत्पन्नो वित्तदर्पो धनगर्वो यस्य तथाभूतस्य । मित्रं सखा । नैकविधेषु नानाप्रकारेषु विप्रलम्भस्य परवञ्चनस्योपायेषु यत्पाटवं कौशलं तेनावर्जितो वशीकृतो मूढोऽज्ञो यः पौरजनस्तेन मिथ्यारोपितो वितथो निष्फलो देवतानुभावो दैवप्रभावो यस्मिन् सः ।

* बालक्रीडा *

राजकुमारको पकड़ लें, इस वास्ते वे लोग चण्डवर्मा के पास दौड़ गये और उसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया ।

(६) उसने जैसे ही यह खबर सुनी, तुरन्त कुपित होकर अन्तःपुर में जा पहुंचा और आग उगलती हुई लाल-लाल आँखों से वहाँ की सब परिस्थिति देखते ही समझ ली । उसी आवेश में वह कहने लगा-'हुँ, यही वह दुष्ट है ? जिसके कारण मेरा छोटा भाई मारा गया था, उस बालचन्द्रिका के पति पुष्पोद्भव बनिये का मित्र क्या यही है ? जिस को अपने धन पर बड़ा गर्व था । जो अपने रूप पर बड़ा गर्व करता था और जो अपने को असाधारण कलाकार समझता था, वह क्या यही है ? जिसने ठगहारी के अनेक ढंग रचकर मूर्ख पुरवासियों की दृष्टि में अपने को देवता साबित कर दिया था ? जो कपटी धर्म का आडम्बर रचकर जन आभरण को ओढा देता फिरता था ? जिसने छिप-छिप कर न जाने

तमूढपौरजनमिथ्यारोपितवितथदैवतानुभावः कपटधर्मकञ्चुको निगूढ-पापशीलश्चपलो ब्राह्मणब्रुवः।

(७) कथमिवैनमनुरक्ता मादृशेष्वपि पुरुषसिंहेषु सावमाना पापेयमवन्तिसुन्दरी। पश्यतु पतिमद्यैव शूलावतंसितमियमनार्यशीला कुलपांसनी' इति निर्भर्त्सयन्भीषणभ्रुकुटिदूषितललाटः काल इव काललोहदण्ड-कर्कशेन बाहुदण्डेनावलम्ब्य हस्ताम्बुजे रेखाम्बुजरथाङ्गलाञ्छने राजपुत्रं सरभसमाचकर्ष।

* बालविबोधिनी *

कपटं छलमेव धर्मकञ्चुकं आवरणं यस्य सः। निगूढपापशीलः यः खलु गुप्तरूपेण पापमाचरतीत्यर्थः। ब्राह्मणब्रुवो ब्रह्मणाधमः।

(७) कथमिवेति—कथमिव केन प्रकारेण। एनं राजवाहनम्। अनुरक्ता जातेति शेषः। पुरुषसिंहेषु पुरुषश्रेष्ठेषु। सावमाना सतिरस्कारा। पापा पापशीला। शूले अवतंसितमारोपितम्। अनार्यं शीलं यस्याः सा—दुष्टस्वभावा। कुलपांसनी कुलदूषणी। भीषणया भ्रुकुट्या दूषितं ललाटं यस्य सः। कालो यमः। कालः कृष्णवर्णो यो लोहदण्डस्तद्वत् कर्कशेन कठोरेण। बाहुदण्डेनेत्यस्य विशेषणम्। रेखारूपाणि अम्बुजानि पद्मानि, रथाङ्गानि चक्राणि च लाञ्छनानि चिह्नानि ययोस्तादृशे। हस्ताम्बुजे इत्यस्य विशेषणम् अवलम्ब्य इत्यस्य च कर्म। सरभसं सवेगम्। क्रियाविशेषणमिदम्।

* बालक्रीडा *

कितने पाप किये थे? जो स्वभाव का अतिशय चंचल है और अपने को ब्राह्मण कहता है, वह दुष्ट यही है?

(७) कुछ समझ में नहीं आता कि यह पापिन अवन्तिसुन्दरी हम जैसे पुरुषसिंहों का अपमान कर के इससे क्यों प्रेम करती है। अच्छा, आज ही तो यह कुलकलंकिनी अपने प्रीतम को सूली पर लटकता देखेगी।' इस प्रकार धमकाता और अपनी भीषण भ्रुकुटियों से ललाट को दूषित करता हुआ वह काल की तरह आगे बढ़ा और लोह के समान अपने मजबूत हाथों से राजकुमार का हाथ पकड़-कर झटका देते हुए अपनी ओर खींच लिया।

(८) स तु स्वभावधीरः सर्वपौरुषातिभूमिः सहिष्णुतैकप्रतिक्रियां दैवीमेव तामापदमवधार्य 'स्मर तस्या हंसगामिनि, हंसकथायाः। सहस्व वामु मासद्वयम्' इति प्राणपरित्यागरागिणीं प्राणसमां समाश्वास्यारिवश्यतामयासीत्।

(९) अथ विदितवार्तावार्तौ महादेवीमालवेन्द्रौ जामातरमाकारपक्षपातिनावात्मपरित्यागोपन्यासेनारिणा जिघांस्यमानं ररक्षतुः। न शेकतुस्तु तमभ्रमुत्वादुत्तारयितुमापदः। स किल चण्डशीलश्चण्डवर्मा सर्वमिदमुद-

बालविबोधिनी *

(८) स तु राजवाहनस्तु। सर्वेषां पौरुषाणां पुरुषार्थानाम्। अतिभूमिरधिष्ठानम्। सहिष्णुतैव एका केवला प्रतिक्रिया प्रतीकारो यस्यास्ताम्। या आपत् सहनमन्तरेण अन्योपायसाध्या नेत्यर्थः। वामु वाले। सम्बोधनमेतत्। प्राणपरित्यागरागिणी प्राणविसर्जनकाङ्क्षिणीम्। अरिवश्यतां शत्रुवशंवदताम्। अयासीत् प्रापत्। गत्यर्थाना प्राप्त्यर्थकत्वात्।

(९) विदितेति—विदिता वार्त्ता याभ्यां तौ—ज्ञातवृत्तान्तौ अत एवार्तौ पीडितौ। महादेवीमालवेन्द्रौ अवन्तिसुन्दरीपितरौ। जामातरं राजवाहनम्। आकारपक्षपातिनौ आकृतिं दृष्ट्वैव पक्षपातिनौ जातावित्यर्थः। आत्मपरेति—आत्मपरित्यागस्य स्वदेहविसर्जनस्य उपन्यासेन कथनेन—यद्येनं राजपुत्रं घातयिष्यसि

* बालक्रीडा *

(८) राजकुमार स्वभावतः धैर्यशाली थे। सब प्रकार के पुरुषार्थ भी उन में थे। किन्तु इस समय सहनशीलता के सिवाय और किसी तरह इस दैवी विपत्ति को टालने का उपाय ही नहीं था। खूब अच्छी तरह सोच-समझ कर उन्हों ने अपनी प्रेयसी से कहा—'प्रिये! तुम उस हंसकी वार्ता का स्मरण कर दो महीने तक धीरज धरो।' प्राण त्यागने के लिए उद्यत राजकन्या को इस प्रकार समझा बुझाकर राजकुमार ने अपने आप को शत्रु के हाथ में सौंप दिया।

(९) जब महादेवी और मालवेन्द्र को इस प्रकार राजकुमार के फँसने का हाल मालूम हुआ तो वे बहुत दुःखी हुए। क्यों कि उन्होंने राजकुमार की आकृति देखते ही पहचान लिया था कि यही मेरा भावी दामाद है। अन्त में महादेवी

न्तजातं राजराजगिरौ तपस्यते दर्पसाराय सन्दिश्य सर्वमेव पुष्पोद्भवकुटुम्बकं सर्वस्वहरणपूर्वकं सद्य एव बन्धने क्षिप्त्वा कृत्वा च राजवाहनं केसरिकिशोरकमिव दारुपञ्जरनिबद्धं मूर्धजजालविलीनचूडामणिप्रभाव-

* बालविबोधिनी *

तदा आवामपि प्राणान् परित्यक्ष्याव इत्युक्त्वेत्यर्थः । जिघांस्यमानं हन्तुमिष्यमाणम् । इदं तु जामातरमित्यस्य विशेषणम् । शेकतुः शक्तौ । तं राजवाहनम् । अप्रभुत्वात् असामर्थ्यात् । उत्तारयितुं—उद्धर्तुम् । चण्डशीलः क्रूरस्वभावः । उदन्तजातं वृत्तान्तसमूहम् । राजराजगिरौ कैलासपर्वते । तपस्यते तपःकुर्वाणाय दर्पसारोऽवन्तिसुन्दरीभ्राता—तस्मै । सन्दिश्य निवेद्य । बन्धने कारागृहे । केसरिणः सिंहस्य किशोरः तरुणस्तमिव । दारुपञ्जरनिबद्धं काष्ठनिर्मितपञ्जरमध्यस्थं । कृत्वेत्यस्य कर्म । मूर्द्धजजाले केशसमूहे विलीनस्य गुप्तस्य चूडामणेः मातङ्गदत्तमणिविशेषस्य प्रभावेण माहात्म्येन विक्षिप्तो दूरीकृतः क्षुत्पिपासादिखेदो यस्य तम् । तं राजावाहनम् । अवधूतेति—अवधूता तिरस्कृता दुहितुः कन्यायाः अम्बालिका-

* बालक्रीडा *

और मालवराज ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर—अर्थात् 'यदि तुम इसे मारडालोगे तो हम दोनों भी अपनी जान दे देंगे' यह कहकर राजकुमार का प्राण बचाया । फिर भी उस समय न उन के हाथ में कोई अधिकार था और न शक्ति ही थी । इस लिए वे पूर्णरूप से राजकुमार का इस विपत्ति–महासागर से पार नहीं उतार सके । क्रोधी चण्डवर्मा ने कैलास पर्वत पर तपस्या करते हुए दर्पसार के पास यह समस्त वृत्तान्त कहला भेजा । इस के बाद पुष्पोद्भव का सर्वस्व छीन लिया और उसे तथा उसके कुटुम्बियों को पकड़कर कारागार में डाल दिया और साथ ही सिंह के बच्चे के समान वीर राजवाहन को भी उसने काठ के बने पींजरे में बन्द कर दिया । यद्यपि उसे कई दिन से खाने-पीने को कुछ भी नहीं मिला, फिर भी उसे भूख–प्यास बिल्कुल नहीं लगी । क्यों कि उस के बालों में एक चूड़ामणि छिपा था । उसका यही प्रभाव था कि चाहे कितने ही समय तक खाने को न मिले, उस के प्रभाव से न कमजोरी आसकती थी और न व्याकुलता ही । उससे यद्यपि बड़ी दीनता के साथ चण्डवर्मा

विच्छिन्नक्षुत्पिपासादिखेदं च तमवधूतदुहितृप्रार्थनस्याङ्गराजस्योद्धरणायाङ्गानभियास्यन्ननन्यविश्वासान्निनाय । रुरोध च बलभरदत्तकम्पश्चम्पाम् ।

(१०) चम्पेश्वरोऽपि सिंहवर्मा सिंह इवासह्यविक्रमः प्राकारं भेदयित्वा महता बलसमुदायेन निर्गत्य स्वप्रहितदूताहूतानां साहाय्यदानायातिसत्वरमापततां धरापतीनामचिरकालभाविन्यपि सन्निधावदत्तापेक्षः

* बालविबोधिनी *

या: प्रार्थना येन तस्य । उद्धरणाय उन्मूलनाय । अङ्गान् अङ्गदेशान् । अनन्यविश्वासात् अन्यस्मिन् विश्वासाभावात् । हेतौ पञ्चमी । बलभरेण सैन्यसमूहेन दत्तः कम्पो येन स । चण्डवर्मणो विशेषणमेतत् । चम्पां अङ्गदेशराजधानीम् ।

(१०) प्राकारं प्राचीरम् । बलसमुदायेन सैन्यसमूहेन । स्वप्रहितेति—स्वप्रहितेन स्वयं प्रेषितेन दूतजातेन दूतसमूहेन आहूतानां आकारितानाम् । साहाय्यदानाय निमन्त्रितानामित्यर्थः । आपतताम् आगच्छताम् । अचिरभाविनि शीघ्रभाविनि । सन्निधौ सन्निधाने । उपस्थिताविति यावत् । अदत्तापेक्षः अपेक्षामकुर्वे-

* बालक्रीडा *

से यह प्रार्थना की कि 'यह राजकन्या हम को चाहती है और मैं भी इस से प्रेम करता हूँ । इस लिए हमलोगों के इस पवित्र प्रेम में किसी प्रकार की बाधा न डाली जाय, पर उसने एक भी नहीं सुना । इसी समय सिंहवर्मा को उखाड़ फेंकने के विचार से चण्डवर्मा ने उस पर चढ़ाई कर दी । अपने किसी भृत्य पर पूरा भरोसा न रहने कारण युद्ध में जाते समय वह राजवाहन को भी अपने साथ लेता गया । अङ्गराज की राजधानी के पास पहुँचकर उसने सिंहवर्मा की चम्पा नगरी को चारों ओर से घेर लिया ।

(१०) सिंह के समान असाधारण पराक्रमी चम्पेश्वर महाराज सिंहवर्मा भी बहुत बड़ी सेना साथ लेकर सामना करने को आये । उन्हों ने अपने प्रबल पराक्रम से उसका व्यूह तोड़ डाला और बड़ी वीरता से मुकाबला किया । इसी समय उन्हों ने दूतों द्वारा पास-पड़ोस के राजाओं के पास भी खबर भेज दी थी, जिस से वे लोग भी ठीक मौके से सहायता देने को आ पहुँचे । लेकिन उस

साक्षादिवावलेपो वपुष्मानक्षमापरीतः प्रतिबलं प्रतिजग्राह ।

(११) जगृहे च महति संपराये क्षीणसकलसैन्यमण्डलः प्रचण्डप्रहरणशतभिन्नमर्मा सिंहवर्मा करिणः करिणमवप्लुत्यातिमानुषप्रमाणबलेन चण्डवर्मणा । स च तद्दुहितर्यम्बालिकायामबलारत्नसमाख्यातायामतिमात्राभिलाषः प्राणैरेनं न व्ययूयुजत् । अपि त्वनीनयदपनी-

* बालविबोधिनी *

त्यर्थः । साक्षात् अग्रतः स्थितः । वपुष्मान् मूर्त्तिमान् । अवलेपो गर्वः । अक्षमापरीतः कोपाक्रान्तः । प्रतिबलं शत्रुसैन्यम् । प्रतिजग्राह आक्रान्तवान् ।

(११) जगृहे गृहीतः चण्डवर्मणा सिंहवर्मेत्यन्वयः । सम्पराये युद्धे । क्षीणं नष्टं सकलं सैन्यमण्डलं यस्य सः । प्रचण्डेन भीषणेन प्रहरणशतेन शस्त्रसहस्रेण भिन्नं विदीर्णं मर्म यस्य सः । करिणः करिणमिति—एकस्मात् गजात् अन्यं गजम् अवप्लुत्य आरुह्य । अतिमानुषं मनुष्यादप्यधिकं प्राणबलं यस्य तेन । स च चण्डवर्मा च । तद्दुहितरि सिंहवर्मकन्यायाम् । अबलारत्नं स्त्रीरत्नमिति समाख्यातायां प्रसिद्धायाम् । अतिमात्रं अभिलाषो यस्य सः—अत्यन्तासक्त इत्यर्थः । एनं सिंहवर्माणम् । न व्ययूयुजत् न पृथक् चकार न जघानेत्यर्थः । विपूर्वकाद् युजेर्णिजन्ताल्लुङ् । अपितु किन्तु । अनीनयत् प्रापयामास । णीञ् प्रापणे इत्यस्य धातोर्णिजन्तस्य लुङि रूपम् । अपनीताशेषशल्यं दूरीकृतनिखिलशस्त्रव्रणम् । एनमित्यस्य

* बालक्रीडा *

वीर ने उन की सहायता की कुछ भी इच्छा नहीं की और मूर्तिमान् गर्व के समान क्रुद्ध होकर शत्रु से जा भिड़ा । उसने बहुत देरतक वीरता के साथ युद्ध किया ।

(११) किन्तु चण्डवर्मा उस से बहुत प्रबल पड़ता था । उसके पास शस्त्रबल बहुत अधिक था । इस कारण जैसे एक हाथी को कोई दूसरा—उससे प्रबल हाथी धर दबोचे, इसी प्रकार समस्त सेना के नष्ट हो जाने पर चण्डवर्मा ने सिंहवर्मा को चारों ओर से छोप लिया । चण्डवर्मा सिंहवर्मा की पुत्री—जो अपनी सुन्दरता के कारण स्त्रियों में रत्न कही जाती थी, उस—अम्बालिका को बहुत चाहता था । इसी कारण उसने सिंहवर्मा को जान से नहीं मारा, बल्कि शिविर में लेजाकर मरहम—पट्टी करायी और अपने कारागार में बन्द कर दिया ।

तारोपशल्यमकल्पसंधो बन्धनम् । अजीगणच्च गणकसंघैः 'अद्यैव क्षपावसाने विवाहनीया राजदुहिता' इति ।

(१२) कृतकौतुकमङ्गले च तस्मिन्नेकपिङ्गाचलात्प्रतिनिवृत्त्यैणजङ्घो नाम जङ्घाकरिकः प्रभवतो दर्पसारस्य प्रतिसन्देशमावेदयत्—'अयि मूढ, किमस्ति कन्यातःपुरदूषकेऽपि कश्चित्कृपावसरः । स्थविरः स राजा जराविलुप्तमानावमानचित्तो दुश्चरितदुहितृपक्षपाती यदेव किञ्चित्प्रलपति

* बालविबोधिनी *

वेशेषणम् । अकल्पा अचिन्त्या सन्धा प्रतिज्ञा यस्य स । सत्यप्रतिज्ञ इति भावः । बन्धन कारागृहम् । बन्धनमिति द्वितीय कर्म, नयतेर्द्विकर्मकत्वात् । अजीगणत् गणयामास । गणकसघै. ज्योतिषिकैः । क्षपावसाने रात्रिशेषे ।

(१२) कृतकौतुकेति—कृतं विहितं कौतुकं मङ्गलं विवाहसम्बन्धि कृत्यं येन तस्मिन् । तस्मिन् चण्डवर्मणि । एकपिङ्गाचलात् तदाख्यपर्वतात् । प्रतिनिवृत्त्य आगत्य । जंघाकरिकः वेगगामी दूत । प्रभवतः प्रभोः । प्रतिसन्देशं प्रत्युत्तरम् । अयि मूढेति चण्डवर्मणः सम्बोधनम् । कन्यान्त पुरेति य कन्यान्त पुरं प्रविश्य दूषयति तस्मिन् । अत्र राजवाहने इत्यर्थः । कृपावसर करुणाया अवकाशः । अस्ति किं नास्तीत्यर्थः । स्थविरो वृद्ध. । स राजा मानसारः । जरेति—जरया

* बालक्रीडा *

उसी समय ज्योतिषियों को बुलाकर उसने 'आज ही रात को इस की कन्या अम्बालिका के साथ विवाह होजाय ।' यह मन्तव्य प्रगट करके विवाह का मुहूर्त भी निकलवा लिया ।

(१२) विवाहसम्बन्धी आभ्युदयिक (मङ्गल) कार्य हो जाने पर एणजंघ नाम का हरकारा कैलास पर्वत से महाराज दर्पसार का प्रतिसंदेश लेकर आपहुँचा और कहने लगा कि महाराज का कथन है–ओ मूर्ख ! राजकन्या के अन्त.पुर में घुसकर बदमाशी करने वाले पर भी क्या कृपा करने की कुछ गुंजाइश रह जाती है ? वह राजा तो अतिशय वृद्ध हो गया है । इस लिए उस के हृदय में मान और अपमान का भाव न रहना स्वभाविक बात है । ऐसी दशा में यदि वह अपनी दुराचारिणी लड़की का पक्षपात करता हुआ कुछ बकवास करता है तो क्या तू भी उसी के

त्वयापि किं तदनुमत्या स्थातव्यम् । अविलम्बितमेव तस्य कामोन्मत्तस्य चित्रवधवार्ताप्रेषणेन श्रवणोत्सवोऽस्माकं विधेयः । सा च दुष्टकन्या सहानुजेन कीर्तिसारेण निगडितचरणा चारके निरोद्धव्या इति।

(१३) तच्चाकर्ण्य 'प्रातरेव राजभवनद्वारे स च दुरात्मा कन्यान्तःपुरदूषकः संनिधापयितव्यः। चण्डपोतश्च मातङ्गपतिरुचितकल्पनोपपन्नस्तत्रैव समुपस्थापनीयः । कृतविवाहकृत्यश्चोत्थायाहमेव तमनार्यशीलं तस्य हस्तिनः कृत्वा क्रीडनकं तदधिरूढ एव गत्वा शत्रुसाहाय्याय प्रत्या-

* बालविबोधिनी *

चार्द्धकेन विलुप्तौ नाशितौ मानापमानौ यस्य तादृशं चित्तं यस्य सः । चित्रवधेति— चित्रेण प्रकारेण यो वधस्तस्य वार्ताप्रेषणेन—अद्भुतोपायेन तं निहत्य तद्वृत्तान्तज्ञापनेनेत्यर्थः । श्रवणयोः कर्णयोरुत्सव आनन्दः । निगडितचरणा निबद्धपादयुगला । चारके बन्धनालये । इत्यन्तं दर्पसारस्य सन्देशवचनम् ।

(१३) सन्निधापयितव्यः सन्निधौ स्थापयितव्यः । चण्डपोतस्तदाख्यो मातङ्गपतिर्गजराजः। उचिताभिर्योग्याभिः कल्पनाभिरलङ्कारादिसाधनैरुपपन्नो युक्तः। तत्रैव राजभवनद्वारे । समुपस्थापनीयः आनेतव्यः । अनार्यशीलं दुष्टस्वभावम् । तं राजवाहनम् । क्रीडनकं क्रीडनसाधनं खेलनमिति यावत् । तदधिरूढः— तमेव गजमधिरुह्येत्यर्थः । शत्रुसाहाय्याय शत्रोः सिंहवर्मणः साहाय्यं कर्त्तुम् । प्रत्यासीदतः समीपमागच्छतः । राजन्यकस्य क्षत्रियसमूहस्य । अवग्रहणं प्रतिबन्धं

* बालक्रीडा *

कहे पर चलेगा ? इस लिए तू तत्काल क्रूरतापूर्वक उस के वध का वृत्तान्त भेज कर मेरी आत्मा को प्रसन्न कर और उसके लघुभ्राता कीर्तिसार के हाथ-पैर बांधकर कारागार में डाल दे ।

(१३) यह समाचार सुनते ही उसने अपने सेवकों को आज्ञा दी–'ठीक सवेरे ही दुष्ट राजवाहन राजद्वार पर हाजिर किया जाय । हाथियों में श्रेष्ठ चण्डपोत हाथी भी सजकर वहीं खड़ा रहे'। विवाहसम्बन्धी कार्य समाप्त होते ही मैं वहाँ आ पहुँचूँगा और अपने सामने उसे हाथी से कुचलवा कर समाप्त कर दूँगा । इस के बाद उसी हाथी पर सवार होकर मैं उन दुष्ट राजाओं पर आक-

सीदतो राजन्यकस्य सकोशवाहनस्यावग्रहणं करिष्यामि' इति पार्श्वच-रानवेक्षांचक्रे । निन्ये चासावहन्यन्यस्मिन्नुन्मिषत्येवोपरागे राजपुत्रो राजाङ्गणं रक्षिभिः । उपतस्थे च क्षरितगण्डश्चण्डपोतः ।

(१५) क्षणे च तस्मिन्मुमुचे तदङ्घ्रियुगलं रजतशृङ्खलया । सा चैनं चन्द्रलेखाच्छविः काचिदप्सरा भूत्वा प्रदक्षिणीकृत्य प्राञ्जलिर्व्यजिज्ञपत्—'देव, दीयतामनुग्रहार्द्रं चित्तम् । अहमस्मि सोमरश्मिसम्भवा

* बालविबोधिनी *

बन्धनमिति यावत् । पार्श्वचरान् पार्श्वस्थवीरान् । अवेक्षांचक्रे ददर्श, सावधानांश्चक्रे वा । निन्ये चेति—असौ राजपुत्रः राजवाहनः अन्यस्मिन् अहनि दिवसे उन्मिषति स्फुरति उपरागे प्रभातसम्बन्धिरक्तिम्नि रक्षिभिः रक्षाधिकृतैः राजाङ्गणं निन्ये नीत । उपतस्थे—उपस्थितोऽभवत् । क्षरितगण्डः स्रवत्कपोलः ।

(१४) मुमुचे मुक्तमभवत् । तदङ्घ्रियुगलं—राजवाहनचरणद्वयम् । सा रजतशृङ्खला । एनं राजवाहनम् । चन्द्रलेखाया ज्योत्स्नाया छविरिव छविर्यस्याः सा । काचित्—अनिर्वचनीया । व्यजिज्ञपत् निवेदितवती । दीयतामनुग्रहार्द्रं चित्तं अनुग्रहेण कृपया आर्द्रं सिक्तं—चित्तमित्यस्य विशेषणम् । मयि प्रसन्नो भवेति भावः । सोमरश्मिसम्भवा—तदाख्यगन्धर्वकन्या । सुरसुन्दरी अप्सराः । नभसि

* बालक्रीडा *

मण कर दूँगा, जो सिंहवर्मा की सहायता करने के लिए आये थे । मैं उन पर धावा बोलकर उन की सेना और कोष पर कब्जा कर लूँगा । चण्डवर्मा की आज्ञानुसार अरुणोदय होते ही सन्तरियों ने राजवाहन को लेआकर राजद्वार पर हाजिर कर दिया । हाथियों में श्रेष्ठ हाथी चण्डपोत भी वहाँ खड़ा था । उस के गण्डस्थल से मद की धारा बह रही थी ।

(१४) उस समय राजवाहन के दोनों पैरों की वह चाँदी वाली जंजीर अपने आप खुल गयी और वह शृंखला एक स्त्रीरूप में प्रगट हो करके उस के सामने हाथ जोड़कर कहने लगी—देव ! मेरे पर दया करिए । मैं चन्द्रमा की किरण से उत्पन्न सुरतमञ्जरी नाम की अप्सरा हूँ । एक समय मैं स्वेच्छानुसार आकाश में विचर रही थी । उसी समय एक कलहंस उड़ता हुआ

सुरतमञ्जरी नाम सुरसुन्दरी । तस्या मे नभसि नलिनलुब्धमुग्धकलहंसानुबद्धवक्त्रायास्तन्निवारणलोभविच्छिन्नविगलिता हारयष्टिर्यदृच्छया जातु हैमवते मन्दोदके मग्नोन्मग्नस्य महर्षेर्मार्कण्डेयस्य मस्तके मणिकिरणद्विगुणितपलितमपतत् ।

(१५) पातितश्च कोपितेन कोऽपि तेन मयि शापः—'पापे, भजस्व लोहजातिमजातचैतन्या सती' इति । स पुनः प्रसाद्यमानस्त्वत्पादपद्मद्वयस्य मासद्वयमात्रं सन्दानतामेत्य निस्तरणीयामिमामापदमपरिक्षीणश-

* बालविबोधिनी *

आकाशे । नलिने पद्मे लुब्ध आसक्तो मुग्धो मूढो यः कलहंसो राजहंसस्तेनानुबद्धमनुसृतं वक्त्रं मुखं यस्यास्तथाभूतायाः मन्मुखं नलिनं बुद्ध्वा कलहंसस्तदनुसरतीत्यर्थः । मे इत्यस्य विशेषणम् । तन्निवारणेति–तस्य कलहंसस्य निवारणे यः क्षोभश्चाञ्चल्यं तेन विच्छिन्ना त्रुटिता अतएव विगलिता भ्रष्टा—हारयष्टिर्हारलता । यदृच्छया स्वेच्छया । जातु कदाचित् । हैमवते मन्दोदके हिमालयसम्बन्धिनि स्वल्पजले । मग्नोन्मग्नस्य स्नानं कुर्वतः । मणिकिरणेति – क्रियाविशेषणम् । मणिकिरणैर्हारस्थरत्नमयूखैर्द्विगुणितं बर्द्धितं पलितं जराजनितशौक्ल्यं यत्र तद्यथा तथा ।

(१५) पातितो दत्तः । कोपितेन क्रुद्धेन । कोपः सञ्जातोऽस्येतीतच् । लोहजातिं लोहभावम् । अजातचैतन्या चैतन्यरहिता । सः मार्कण्डेयः । प्रसाद्यमानः प्रसन्नीक्रियमाणः । मयेति शेषः । त्वत्पादेति–तव भवतो राजवाहनस्येत्यर्थः । पादपद्मद्वयस्य चरणकमलयुगलस्य । मासद्वयं प्रमाणमस्येति मात्रच्प्रत्ययः । सन्दानतां

* बालक्रीडा *

आया और उसने मेरे मुख को कमल समझ कर ढाँक लिया । इस से मैं घवड़ा उठी । घवड़ाहट के साथ उसे हटाते समय अनजान में मेरे गले का हार टूट गया । उसी समय हिमवान् पर्वत के एक सरोवर में महर्षि मार्कण्डेय डुबकियें लगा-लगा कर स्नान कर रहे थे । मेरा वह हार जाकर उनके उज्ज्वल और लम्बी-लम्बी जटाओं वाले मस्तक पर गिरा ।

(१५) इस से वे कुपित हो गये और मुझे शाप देते हुए उन्होंने कहा–'ओ पापिनो ! तू चेतनाहीन लोहजाति की हो जा ।' उनका शाप सुनकर जब मैंने बहुत

त्विं चेन्द्रियाणामकल्पयत् । अनल्पेन च पाप्मना रजतशृङ्खलीभूतां मामैक्ष्वाकस्य राज्ञो वेगवतः पौत्रः, पुत्रो मानसवेगस्य, वीरशेखरो नाम विद्याधरः शङ्करगिरौ समभ्यगमत् । आत्मसात्कृता च तेनाहमासम् ।

(१६) अथासौ पितृप्रयुक्तवैरे प्रवर्तमाने विद्याधरचक्रवर्तिनि वत्सराजवंशवर्धने नरवाहनदत्ते चिरसाशयस्तदुपकारक्षमोऽयमिति तपस्यता

* बालविबोधिनी *

बन्धनत्वं । 'सन्दानं पादबन्धनमित्यमरः ।' एत्य प्राप्य । निस्तरणीयां उद्धरणीया समाप्यामिति यावत् । इमामापद-शृङ्खलात्वप्रातिरूपाम् । अपरिक्षीणशक्तित्वं अनष्टस्वस्वविषयग्रहणसामर्थ्यम् । इन्द्रियाणां चक्षुरादीनाम् । अकल्पयत् सम्पादयामास । पाप्मना पापेन । ऐक्ष्वाकस्य इक्ष्वाकुवंशीयस्य वेगवतः वेगवानिति नाम्नः । शङ्करगिरौ कैलासे । समभ्यगमत् प्राप । मामिति शेषः । आत्मसात्कृता गृहीता ।

(१६) असौ वीरशेखरः । पित्रा स्वजनकेन मानसवेगेनेत्यर्थः । प्रयुक्तं कृतं यद्वैरं शत्रुत्वं तस्मिन् । प्रवर्त्तमाने तिष्ठति । वत्सराजवंशवर्द्धने वत्सराजकुलोत्पन्ने ।

* बालक्रीडा *

अनुनय-विनय किया, तब दया करके उन्होंने केवल दो महीने के लिए मुझे आपके पैर का बन्धन बनाकर उस शाप से मुक्त हो जाने की अवधि बाँध दी । साथ ही यह सुविधा भी कर दी कि अचैतन्य अवस्था में भी मुझे इन्द्रियज्ञान तथा मेरी शक्ति बनी रहे । इस प्रकार एक असाधारण अपराध के लिए मुझे चाँदी की जंजीर बनना पड़ा । जब मैं शाप के अनुसार इस दशा को प्राप्त हो गयी, उसी समय इक्ष्वाकुवंशी राजा वेगवान का पौत्र और मानसवेग का पुत्र वीरशेखर नाम का विद्याधर कैलास पर्वत पर आ पहुँचा । उसने जंजीररूप में मुझे देखा तो उठाकर अण्टी में रख लिया ।

(१६) कुछ समय बाद वीरशेखर और उनके पिता में वैर हो गया । जिससे वह विद्याधरों के चक्रवर्ती और वत्सराज के वंश के असाधारण पुरुष नरवाहनदत्त से जा मिला, किन्तु उसमें कोई सहायता नहीं मिली और उसे वहां से निराश होना पड़ा । बहुत सोच-विचार कर वह कैलास पर्वत पर तपस्या

दर्पसारेण सह समसृज्यत। प्रतिश्रुतं च तेन तस्मै स्वसुरवन्तिसुन्दर्याः प्रदानम् ।

(१७) अन्यदा तु वियति व्यवदायमानचन्द्रिके मनोरथप्रियतमामवन्तिसुन्दरीं दिदृक्षुरवशेन्द्रियस्तादिन्द्रमन्दिरद्युति कुमारीपुरमुपासरत् । अन्तरितश्च तिरस्करिण्या विद्यया । स च तां तदा त्वदङ्कापाश्रयां सुरत-

* बालविबोधिनी *

विरसाशयः क्रूरान्तःकरणः । तदपकारेति—तस्य नरवाहनदत्तस्यापकारे विग्रहे क्षमः समर्थोऽयं दर्पसार इति मत्वा। तपस्यता तपस्कुर्वता । समसृज्यत मिलितोऽभवत् । प्रतिश्रुतं प्रतिज्ञातम् । तेन दर्पसारेण । तस्मै वीरशेखराय। स्वसुः भगिन्याः।

(१७) अन्यदा अन्यदिने । वियति आकाशे । व्यवदायमानचन्द्रिके निर्मलज्योत्स्ने व्यवपूर्वकस्य दैप् शोधन इत्यस्य धातो रूपम् । मनोरथेति—मनोरथेनैव असम्पन्नविवाहत्वान्मनसैव नतु कर्मणेति भावः, प्रियतमा वल्लभा ताम् । अवशानि विकलानि इन्द्रियाणि यस्य स वीरशेखर इति शेषः । इन्द्रमन्दिरस्य महेन्द्रगृहस्य द्युतिरिव द्युतिः शोभा यस्य तत् । कुमारीपुरमित्यस्य विशेषणम् । उपासरत् अगच्छत् । अन्तरित आच्छादितः । तिरस्करिण्या अन्तर्धानकारिण्या । स च वीरशेखरश्च । तां अवन्तिसुन्दरीम् । त्वदङ्केति—तव भवतो राजवाहनस्येत्यर्थः । अङ्के=क्रोड़देशे अपाश्रयः शिरोभागो यस्यास्ताम् । सुरतखेदसुप्तगात्रीं

* बालक्रीडा *

करते हुए राजा दर्पसार से जा मिला । क्योंकि उसे यह भरोसा था कि दर्पसार अवश्य मेरे पिता का गर्व खर्व कर सकता है । वीरशेखर ने दर्पसार से मिलकर उसे वचन दिया कि यदि आप मेरी सहायता करेंगे तो मैं अपनी बहिन अवन्तिसुन्दरी का विवाह आपके साथ कर दूँगा ।

(१७) इसके कुछ समय बाद एक दिन रात को जब चन्द्रमा की चाँदनी सारे जगतीतल में छिटकी हुई थी, तब दर्पसार विकल होकर अपनी अभिलषित प्रियतमा अवन्तिसुन्दरी से मिलने के लिए इन्द्रभवन के समान सुन्दर उस के अन्तःपुर में पहुँचा । उस समय वह तिरस्करिणी विद्या से अपने आपको छिपाये हुए था । उसने वहां पहुँचकर देखा कि उसकी प्रेयसी सुरत-खेद से सुस्त होकर तुम्हारी गोद में पड़ी सो रही है । वह तुम्हारे द्वारा तीनों भुवनों

खेदसुप्तगात्रीं त्रिभुवनसर्गयात्रासंहारसंबद्धाभिः कथाभिरमृतस्यन्दिनीभिः प्रत्यानीयमानरागपूरां न्यरूपयत्।

(१८) स तु प्रकुपितोऽपि त्वदनुभावप्रतिबद्धानिग्रहान्तराध्यवसायः समालिङ्ग्य चेतरेतरमत्यन्तसुखसुप्तयोर्युवयोर्दैववशात्तोत्साहः पाण्डुलोहशृङ्खलात्मना मया पादपद्मयोर्युगलं तव निगडयित्वा सरोषरभसमपासरत्। अवसितश्च ममाद्य शापः। तत्र मासद्वयं तव पारतन्त्र्यम्। प्रसीदेदानीम्। किं तव करणीयम्' इति प्रणिपतन्तीं 'वार्तयानया मत्प्राणसमां ममा-

* बालविबोधिनी *

रतिखेदनिश्चलावयवाम्। त्रिभुवनेति—त्रिभुवनस्य सर्ग उत्पत्तिः यात्रा स्थितिः संहारः प्रलयश्च तैः सम्बद्धाभिः संसृष्टाभिः। अमृतस्यन्दिनीभिः सुधास्राविणीभिः। प्रत्यानीयमान उत्पाद्यमानो रागपूरोऽनुरागातिशयो यस्यास्ताम्। न्यरूपयत् ददर्श।

(१८) सः वीरशेखरः। त्वदनुभावेति—तव भवतोऽनुभावेन प्रतापेन प्रतिबद्धो रुद्धः निग्रहान्तरस्य शृङ्खलया पादबन्धनं विना अन्यविधनिग्रहस्य अध्यवसायोऽभिप्रायो यस्य सः। इतरेतरं परस्परम्। युवयोः अवन्तिसुन्दर्याः राजवाहनस्य चेत्यर्थः। पाण्डुलोहेति—पाण्डुलोहस्य रजतस्य शृङ्खला आत्मा स्वरूपं यस्यास्तया। मयेत्यस्य विशेषणम्। मया सुरतमञ्जर्या इत्यर्थः। निगडयित्वा बद्ध्वा। निगडितं करोतीति नामधातुः। सरोषरभसं सक्रोधवेगम्। अपासरत्

* बालक्रीडा *

की यात्रासम्बन्धी अमृतमयी कहानी सुनकर गद्गद हो गयी थी और तुम्हारे प्रति उसके हृदय में प्रेम की तरंगें उछाल मारने लगी थीं।

(१८) इस प्रकार अपनी कामनापूर्ति में तुम्हें बहुत बड़ा अन्तराय समझकर दर्पसारको बहुत क्रोध आया, पर तुम्हारे प्रताप के सामने वह कुछ करने में असमर्थ था। अन्त में तुम्हारे दुर्भाग्य वश—जब तुम दोनों एक दूसरे से लिपटे हुए आनन्द के साथ सो रहेथे—उसने मुझ (चाँदी की जंजीर) से तुम्हारे दोनों पैर कसकर बाँध दिये और तभी क्रोध के आवेश में बड़ी शीघ्रता से भाग गया। आज मेरे शापकी अवधि समाप्त होगयी। क्योंकि दो महीने तक मैं परतन्त्र रह चुकी। अब मेरे पर कृपा करो और यह बताओ कि मैं तुम्हारी कौन सेवा कर सकती हूँ।' ऐसा कहकर प्रणाम करती हुई उस अप्सरा से राजवाहन ने कहा—

श्वासय' इति व्यादिश्य विससर्ज ।

(१९) तस्मिन्नेव क्षणान्तरे 'हतो हतश्चण्डवर्मा सिंहवर्मदुहितुरम्बालिकायाः पाणिस्पर्शरागप्रसारिते बाहुदण्ड एव बलवदवलम्ब्य सरभसमाकृष्य केनापि दुष्करकर्मणा तस्करेण नखप्रहारेण राजमन्दिरोद्देशं च शवशतमयमापादयन्नचकितगतिरसौ विहरति' इति वाचः समभवन्। श्रुत्वा चैतत्तमेव मत्तहस्तिनमुदस्ताधोरणो राजपुत्रोऽधिरुह्य रंहसोत्तमेन

* बालविबोधिनी *

अन्तर्दधौ । अवसितः समाप्तः । पारतन्त्र्यं पराधीनता । व्यादिश्य कथयित्वा । वार्त्तयेत्यादिसमाश्वासयेत्यन्तमस्य कर्म ।

(१९) पाणिस्पर्शेति—पाणिस्पर्शे करग्रहणे विवाहे इति यावत् , यो रागोऽनुरागस्तेन प्रसारिते विस्तारिते । बाहुदण्डे भुजदण्डे । बलवद् दृढम् । अवलम्ब्य गृहीत्वा । सरभसं सवेगम् । तस्करेणेति हत इति क्रियायाः कर्त्तरि तृतीया । नखप्रहारेण छुरिकाघातेन । करणे तृतीया । राजमन्दिरोद्देशं नृपगृहप्रदेशम् । आपादयन् कुर्वन् । अचकितगतिः अत्रस्तगमनः । असौ तस्करः । इति वाचः एवम्भूताः गिरः । समभवन् उद्भूताः । तमेव चण्डवर्माधिष्ठितम् । उदस्तो दूरीकृत आधोरणो हस्तिपको येन सः । राजपुत्र इत्यस्य विशेषणम् । रंहसा वेगेन ।

* बालक्रीडा *

'बस, तुम मेरा सारा वृत्तान्त कहकर मेरी प्रियतमा को धैर्य देदो ।' यह कहकर उसने उसे विदा कर दिया ।

(१९) इसके क्षण ही भर बाद यह शोर मचने लगा कि 'चण्डवर्मा मार डाला गया । जिस समय उसने सिंहवर्मा की पुत्री अम्बालिका का पाणिग्रहण करने के लिए अपना प्रेमपूर्ण हाथ बढ़ाया, उसी समय किसी ने उसका हाथ पकड़कर जबर्दस्ती खींच लिया और मारडाला । उस अकेले, किन्तु साहसी चोर ने अपने नख के प्रहार से राजमहल के फाटक पर सैकड़ों राजपुरुषों को मारकर शव का ढेर लगा दिया है । अब भी वह निर्भीक भाव से उसी जगह विचर रहा है ।' यह कोलाहल सुनते ही राजवाहन ने उस मतवाले हाथी के हाथीवान को अलग कर दिया और स्वयं हाँकता हुआ बड़े वेग के साथ राजभवन

राजभवनमभ्यवर्तत ।

(२०) स्तम्बेरमरयावधूतपदातिदत्तवर्त्मा च प्रविश्य वेश्माभ्यन्तर- मदभ्राभ्रनिर्घोषगम्भीरेण स्वरेणाभ्यधात्—'कः स महापुरुषो येनैतन्मानुषमात्रदुष्करं महत्कर्मानुष्ठितम्। आगच्छतु मया सहेमं मत्तहस्तिनमारोहतु । अभय मदुपकण्ठवर्तिनो देवदानवैरपि विगृह्णानस्य' इति ।

(२१) निशम्यैवं स पुमानुपोढहर्षो निर्गत्य कृताञ्जलिराक्रम्य सञ्ज्ञासंकुचित कुञ्जरगात्रमसक्तमभ्यरुक्षत् । आरोहन्तमेवैन निर्वर्ण्य हर्षोत्फुल्लदृष्टिः 'अये, प्रियसखोऽयमपहारवर्मैव' इति पश्चान्निपीदतोऽस्य बाहु-

* बालविबोधिनी *

उत्तमेन अतिशयितेन । अभ्यवर्त्तत प्राचलत् ।

(२०) स्तम्बेरमेति—स्तम्बेरमस्य हस्तिनो रयेण वेगेन अवधूता दूरीकृता ये पदातयः पत्तयस्तैर्दत्तं वर्त्म मार्गो यस्यासौ । हस्तिपदपेषणभयात्पदातयो मार्गं परिहृत्य दूरंगता इति भावः । अदभ्रेति–अदभ्रो बहुलो योऽभ्रनिर्घोषो मेघगर्जितं तद्वद् गम्भीरेण । अभ्यधात् अकथयत् । मानुषमात्रेण साधारणमानवेन दुष्करं कर्त्तुमशक्यम् । महत्कर्म चण्डवर्मनारणरूपम् । अनुष्ठितं कृतम् । मदुपकण्ठवर्त्तिनः मत्समीपस्थितस्य । विगृह्णानस्य विरोधं कुर्वत' ।

(२१) निशम्य श्रुत्वा । उपोढः प्राप्तो हर्षो येन सः । आक्रम्य पादविक्षेपेणागत्य । संज्ञया सङ्केतेन सङ्कुचितं खर्वीकृतम्। कुञ्जरगात्रं हस्तिशरीरम् । असक-

* बालक्रीडा *

की ओर गया ।

(२०) हाथी के वेग से चलने के कारण सब लोग रास्ता देते जाते थे, इसलिए वह बहुत शीघ्र राजद्वार पर पहुंच गया । पहुँचते ही भवन के भीतर जाकर उसने मेघगर्जन के सदृश गंभीर स्वर में कहा—'वह कौन महापुरुष है, जिसने मनुष्य की शक्ति से बाहर का इतना बड़ा कार्य क्षणमात्र में कर डाला है ? वह आवे और मेरे साथ इस मतवाले हाथी पर सवार हो ले। देवताओं तथा दानवों से भी शत्रुता करने वाला पुरुष मेरे पास आकर अभय हो जाता है ।'

(२१) यह वाणी सुनकर उस पुरुष को बड़ी प्रसन्नता हुई और हाथ जोड़कर राजवाहन के समक्ष आ उपस्थित हुआ । राजवाहन के संकेत से हाथी बैठ-

दण्डयुगलमुभयभुजमूलप्रवेशितमग्रेऽवलम्ब्य स्वमङ्गमालिङ्गयामास। स्वयं च पृष्ठतो वलिताभ्यां भुजाभ्यां पर्यवेष्टयत ।

(२२) तत्क्षणोपसंहृतालिङ्गनव्यतिकरश्चापहारवर्मा चापचक्रकणपकर्पणप्रासपट्टिशमुसलतोमरादिप्रहरणजातमुपयुञ्जानान्बलावलिप्तान्प्रतिव-

* बालविबोधिनी *

क्रमलग्नं यथा तथा । हस्तिनमस्पृष्ट्वेत्यर्थः । निर्वर्ण्य दृष्ट्वा । हर्षोत्फुल्लदृष्टिः प्रीतिविकसितनयनः । अये विस्मयसूचकमव्ययमेतत् । प्रियसखः प्रियमित्रम् । निषीदतः उपविष्टस्य । अस्य अपहारवर्मणः । उभयभुजमूले स्वस्योभयकक्षे प्रवेशितं विन्यस्तम् । अग्रे अग्रभागे । अवलंब्य गृहीत्वा । स्वं स्वकीयं राजवाहनस्येत्यर्थः । अङ्गं शरीरम् । आलिङ्गयामास तेनापहारवर्मणेति शेषः । पृष्ठतः पृष्ठभागे । वलिताभ्यां वक्रीकृताभ्याम् । पर्यवेष्टयत् समालिलिङ्ग अपहारवर्माणमिति शेषः । अभिमुखं स्थितयोरेव द्वयोरालिङ्गनं स्वाभाविकं भवति अत्र तु गजपृष्ठमधिरूढयोस्तयोस्तदसम्भवमतः प्रातिलोम्येन कथंचिदङ्गसम्मेलनं जातमिति निष्कर्षः ।

(२२) तत्क्षणेति—तस्मिन् क्षणे समये उपसंहृतः समाप्त आलिङ्गनस्याश्लेषस्य व्यतिकरः सम्पर्को येनासौ । चापेति—चापो धनुः, चक्रं, कणपो लोहस्तम्भः, कर्पणः शरावाकारोऽस्त्रविशेषः, प्रासः कुन्तः, पट्टिशः शस्त्रविशेषः मुसलं मुसलाकारशस्त्रविशेषः, तोमरो लोहगुच्छनिर्म्मितं शस्त्रमित्यादि प्रहरणजातं शस्त्र-

* बालक्रीडा *

गया और वह पुरुष उस पर सवार हो गया। किन्तु उसने हाथी पर इस ढंग से बैठना चाहा कि राजवाहन के शरीर से उसके शरीर का स्पर्श न हो । लेकिन जिस समय वह हाथी पर चढ़ आया और राजवाहन ने ध्यान देकर उस पुरुष की आकृति देखी तो देखते ही पहचान लिया और तुरन्त अपने भुजपाश में जकड़कर छाती से लगाते हुए कहा–'ओह ! तुम तो मेरे प्रिय मित्र अपहारवर्मा हो !' ऐसा कहकर उसे अपने सामने बैठा लिया । वह स्वयं पीछे की ओर सरककर बैठा और उसे भुजाओं में कस कर लिपट गया ।

(२२) उस समय अपहारवर्मा ने क्षण ही भर में यह मिलनकार्य समाप्त कर दिया और धनुष, चक्र, कणप (एक प्रकार का लौहदंण्ड) कर्पण (एक प्रकार टेढ़ा शस्त्रविशेष) प्रास (कुन्त) पट्टिश, मुसल तथा तोमर आदि,

लवीरान्बहुप्रकारायोधिनः परिक्षिपत. क्षितौ विचिक्षेप । क्षणेन चाद्राक्षी-तदपि सैन्यमन्येन समन्ततोऽभिमुखमभिधावता बलनिकायेन परिक्षितम्।

(२३) अनन्तरं च कश्चित्कर्णिकारगौरः कुरुविन्दसवर्णकुन्तलः कमलकोमलपाणिपादः कर्णचुम्बिदुग्धधवलस्निग्धनीललोचनः कटितटनिविष्टरत्ननखः पट्टनिवसनः कृशाकृशोदरोरःस्थलः कृतहस्ततया रिपुकुलमि-

* बालविबोधिनी *

समूहमुपयुञ्जानान् निक्षिपत । बलवलिप्तान् बलगर्वितान् । प्रतिबलवीरान् शत्रुपक्षीययोधान् । बहुभिः प्रकारैरायोधिनः युद्धं कुर्वतः । परिक्षिपतः पातयतो लोकानिति शेषः । एते प्रतिबलवीरानित्यस्य विशेषणे । विचिक्षेप पातयामास । क्षणेन मुहूर्तमात्रेण । समन्ततः सर्वतः । अभिमुखं सम्मुखम् । अभिधावता आगच्छता बलनिकायेन सैन्यसमूहेन । परिक्षितमाक्रान्तम् । सैन्यमित्यस्य विशेषणमेतत् ।

(२३) कर्णिकारो द्रुमोत्पलः स्थलपद्मवृक्षस्तद्वद् गौरो धवलः । कुरुविन्देन मेघनाम्ना मुस्ताविशेषेण सवर्णास्तुल्या कुन्तलाः केशा यस्यासौ । कमल-

* बालक्रीडा *

उन सब शस्त्रों को–जो गर्वीले वीरों का गर्व ध्वंस करने के लिए थे–फेंक दिया । क्योंकि वे अपने प्रिय मित्र से मिलने में बाधा दे रहे थे । क्षण ही भर बाद उसने देखा कि उस राजद्वार पर विद्यमान सेना को भी किसी दूसरी सेना ने आकर चारों ओर से घेर लिया है ।

(२३) इसके अनन्तर कर्णिकार–कुसुम सरीखा गोरा एक पुरुष दिखायी पड़ा । कुरुविन्द के पुष्प समान उसके नीले केश थे । कोमल और सुन्दर उसके हाथ-पैर थे । कानों के पास तक फैली हुई और दूध की तरह उज्ज्वल पलकों युक्त उसकी काली-काली आँखें थीं । उसकी कमर में रत्नजटित बघनखा खुँसा हुआ था । उसके सभी वस्त्र रेशमी थे । उसकी चौड़ी छाती थी और कृश उदर था। वह अपने फुर्तीले हाथों से शत्रुओं पर लगातार बाणवर्षा करता जा रहा था। वह अपने पैर के अंगूठे को निर्दयता के साथ दबाकर अपने हाथी को तेजी के साथ चलाता हुआ तुरन्त राजवाहन के समक्ष आ खड़ा हुआ और पूर्व परिचय के अनुसार पहचानकर कहा–'ये ही हमारे स्वामी राजवाहन हैं ।' इसके अनन्तर उसने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और उनकी ओर आदर भरी दृष्टि से निहारता हुआ कहने

पुवर्षेणाभिवर्षन्पादाङ्गुष्ठनिष्ठुरावघृष्टमूलेन प्रजविना गजेन संनिकृष्य पूर्वोपदेशप्रत्ययात् 'अयमेव स देवराजवाहनः' इति प्राञ्जलिः प्रणम्यापहारवर्मणि निविष्टदृष्टिराचष्ट—'त्वदादिष्टेन मार्गेण संनिपातितमेतदङ्गराजसाहाय्यदानायोपस्थितं राजकम् । अखिलं च विहितविध्वस्तं स्त्रीबालहार्यशस्त्रं वर्तते । किमन्यत्कृत्यम्' इति ।

(२४) हृष्टस्तु व्याजहारापहारवर्मा—'देव, दृष्टिदानेनानुगृह्यतामय-

* बालविबोधिनी *

वत् कोमलौ पाणिपादौ करचरणौ यस्यासौ । कर्णौ चुम्बत इति कर्णचुम्बिनी आकर्णविश्रान्ते, दुग्धवत् क्षीरवद्धवले शुभ्रे, स्निग्धे नीले नीलवर्णे लोचने नयने यस्यासौ । कटितटे कटिदेशे निविष्टो रत्ननखः रत्नयुक्तछुरिका यस्य सः । पट्टं दुकूलं निवसनं वासो यस्य सः । कृशं चाकृशं चेति कृशाकृशे उदरं च उरःस्थलं चेति उदरोरःस्थले यस्येति विग्रहः । कृशोदरः, अकृशोरःस्थलश्चेत्यर्थः । एतत्सर्वं कश्चिदित्यस्य विशेषणम् । कृतहस्ततया शिक्षिततया । इषुवर्षेण बाणवृष्ट्या । पादाङ्गुष्ठाभ्यां निष्ठुरमतिकर्कशं यथा तथा अवघृष्टं घर्षितं कर्णमूलं यस्य तेन । प्रजविना वेगवता । द्वे गजेनेत्यस्य विशेषणे । संनिकृष्य समीपमागत्य । पूर्वोपदेशप्रत्ययात् प्रागुक्तपरिचयज्ञानात् । निविष्टदृष्टिर्दत्तनेत्रः । आचष्ट अकथयत् । त्वया अपहारवर्मणेत्यर्थः, आदिष्टेन कथितेन । मार्गेण पथा । संनिपातितं आनीतम् । राजकं राजसमूहः । विहितविध्वस्तं कृतध्वंसम् । स्त्रीभिर्बालैश्च हार्यं धार्यं शस्त्रं यत्र तत् । स्त्रियो बालाश्च अवशिष्टा अन्ये सर्वे मृता इति भावः । कृत्यं करणीयम् ।

(२४) व्याजहार उवाच । आज्ञाकरः सेवकः । सोऽपि धनमित्रोऽपीत्यर्थः । अहमेव किन्तु अमुना दृश्यमानेन रूपेणाकारेण धनमित्राख्यया धनमित्रेति नाम्ना

* बालक्रीडा *

लगा—'आपके बताये रास्ते से मैं अङ्गराज की सहायता के लिये राजाओं की यह विशाल सेना लेकर आ उपस्थित हुआ हूँ । इस सेना ने शत्रु की सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया है । अब वे इतने निर्बल हो गये हैं कि नन्हे-नन्हे बच्चे और स्त्रियाँ भी उनके शस्त्र छीन सकती हैं । इतना काम तो मैं कर चुका । अब और क्या काम बाकी है ?'

(२४) उसे देखकर अपहारवर्मा प्रसन्न हुआ और कहने लगा—'स्वामिन् !

माज्ञाकरः। सोऽप्यहमेव ह्यमुना रूपेण धनमित्राख्यया चान्तरितो मन्तव्यः। स एवाय निर्गमय्य बन्धनादङ्गराजमपवर्जितं च कोशवाहनमेकीकृत्यास्मद्गृह्येणामुना सह राजन्यकेनैकान्ते सुखोपविष्टमिह देवमुपतिष्ठतु यदि न दोषः' इति।

(२५) देवोऽपि 'यथा ते रोचते तमाभाष्य गत्वा च तन्निर्दिष्टेन मार्गेण नगराद्बहिरतिमहतो रोहिणद्रुमस्य कस्यचित्क्षौमावदातसैकते गङ्गा-

* बालविबोधिनी *

च अन्तरितः पृथक्कृतः। मन्तव्यो ज्ञातव्यः। ममैवात्मा धनमित्रनाम्ना तदाकारेण च आच्छादितो वर्त्तते—अभिन्नहृदयावावामिति भावः। स एवायं–धनमित्रः। निर्गमय्य मोचयित्वा। बन्धनात् कारागृहात्। अङ्गराजमिति शेषः। अपवर्जितं इतस्ततो विक्षिप्तम्। एकीकृत्य संगृह्य। अस्मद् गृह्येण अस्मत्पक्षीयेण। एकान्ते निर्जने। देवं भवन्तम्। उपतिष्ठतु समीपे तिष्ठतु।

(२५) देवोऽपि राजवाहनोऽपि। ते तुभ्यं रुच्यर्थानामिति चतुर्थी। तमपहारवर्माणम्। रोहिणद्रुमस्य वटवृक्षस्य। तले इत्यनेनान्वयः। क्षौमेति—क्षौमवत् पट्टवस्त्रवत् अवदातं निर्मलं यत् सैकतं सिकतामयप्रदेशस्तस्मिन्। गङ्गेति—गङ्गायास्तरङ्गपवनस्य तरङ्गयुक्तवायोः पातेन पतनेन शीतले। तले इत्यस्य विशेषणम्। द्विरदाद् गजात्। प्रथमसमवतीर्णेन प्रागेव गजादवरूढेन। स्वहस्तेन निजकरेण

* बालक्रीडा *

इस आज्ञाकारी सेवक पर दया दृष्टि करके अनुग्रह करिए। मैं ही अब तक इस देश में धनमित्र नाम से विख्यात होकर छिपा छिपा फिरता था। इस धनमित्र ने ही अङ्गराज को बन्धन से छुड़ाया और विध्वस्त कोष तथा वाहन को फिर से एकत्र किया है। अब जब कि हमारे पक्ष के राजे उनके साथ एकान्त में सुख से बैठे हैं, यदि आप कुछ हर्ज न समझें तो चलकर उनसे भेंट कर लीजिये।

(२५) राजवाहन ने कहा–'जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो।' बस, उसी हाथी पर सवार होकर वे दोनों वहाँ से चल पड़े। अपहारवर्मा के बताये मार्ग से चलकर नगर के बाहर थोड़ी ही दूरी पर एक बहुत बड़े वटवृक्ष के नीचे रुके। उस स्थल पर रेशम की तरह स्वच्छ बालुका फैली हुई थी, जो गंगा के तरंग से टकरा कर आती हुई हवा के झोंके से शीतल हो रही थी। वहाँ वे हाथी से

तरङ्गपवनपातशीतले तले द्विरदादवततार। प्रथमसमवतीर्णेनापहारवर्मणा च स्वहस्तसत्वरसमीकृते मातङ्ग इव भागीरथीपुलिनमण्डले सुखं निपसाद।

(२६) तथा निषण्णं च तमुपहारवर्मार्थपालप्रमतिमित्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुतैर्मैथिलेन च प्रहारवर्मणा, काशीभर्त्रा च कामपालेन, चम्पेश्वरेण सिंहवर्मणा, सहोपागत्य धनमित्रः प्रणिपपात। देवोऽपि हर्षाविद्धमभ्युत्थितः 'कथं समस्त एष मित्रगणः समागतः को नामायमभ्युदयः' इति कृतयथोचितोपचारान्निर्भरतरं परिरेभे। काशीपतिमैथिलाङ्गराजांश्च सुहृ-

* बालविबोधिनी *

अपहारवर्मणेति शेषः; सत्वरं शीघ्रं समीकृते मार्जनादिना समानीकृते। मातङ्ग इव गजे यथा सुखेन निषसाद तद्वत्। भागीरथीपुलिनमण्डले गङ्गातटे। निषसाद उपविष्टो बभूव।

(२६) तथा तेन प्रकारेण सुखेनेत्यर्थः। तं राजवाहनम्। मैथिलेन मिथिलाधिपेन। काशीभर्त्रा काशीश्वरेण। तृतीयान्तादिपदानि सहेत्यनेनान्वितानि। देवः राजवाहनः। हर्षाविद्धं सहर्षं क्रियाविशेषणमेतत्। अभ्युदयः परमोन्नतिः, कल्याणपरम्परेति यावत्। कृतेति—कृतो विहितः यथोचितो यथायोग्य उपचारः सम्मानादिर्येषां तान् उपहारवर्मादीन् इत्यर्थः। निर्भरतरं गाढतरम्। परिरेभे आलिलिङ्ग। सुहृदा धनमित्रेण निवेदितान् निर्दिष्टान्। पितृवत् पित्रा तुल्यान्। वृद्ध-

* बालक्रीडा *

उतर पड़े। अपहारवर्मा राजवाहन के पहले ही उतर पड़ा और उसने जल्दी जल्दी अपने हाथ से उसी बालू का एक समतल चबूतरा बना दिया। जिस पर राजवाहन बड़े आनन्द के साथ बैठ गये।

(२६) क्षण भर बाद अपहारवर्मा, अर्थपाल, प्रमति, मित्रगुप्त, मैथिल, प्रहारवर्मा, काशीपति कामपाल, चम्पापति सिंहवर्मा आदि के साथ आकर धनमित्र ने राजवाहन को प्रणाम किया। राजवाहन ने प्रसन्नता के साथ उठकर उनका स्वागत करते हुए कहा—'एक साथ सब मित्र आ मिले ? आज हमारा सबसे बड़ा अभ्युदय हुआ है।' ऐसा कहकर वे एक एक करके सब लोगों से गले लगकर मिले और यथोचित आदर-सत्कार किया। अपहारवर्मा द्वारा परिचय पाकर राजवाहन ने काशीनरेश, मिथिलेश और अङ्गदेश के महाराज को पिता के

त्रिरेदितान्पितृवदपश्यत् । तैश्च हर्षकम्पितपलित सरभसोपगूढः परमभिननन्द ।

(२७) ततः प्रवृत्तासु प्रीतिसकथासु प्रियवयस्यगणानुयुक्तः स्वस्य च सोमदत्तपुष्पोद्भवयोश्चरितमनुवर्ण्य सुहृदामपि वृत्तान्तं क्रमेण श्रोतुं कृतप्रस्तावस्तांश्च तदुक्तावन्वयुङ्क्त । तेषु प्रथमं प्राह स्म किलापहारवर्मा—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते राजवाहनचरितं नाम प्रथम उच्छ्वासः ।

बालविबोधिनी

त्वात् तान् जनकवत् सम्मानयामास । तैः काशीपतिप्रमुखैः । हर्षेण कम्पितानि पलितानि शुक्लकेशा यस्मिन्कर्मणि यथा तथा । सरभसं सवेगं उपगूढः आलिङ्गितः । परम् अत्यर्थम् । अभिननन्द राजवाहन इति शेषः ।

(२७) प्रवृत्तासु आरब्धासु । प्रियवयस्येति—प्रियवयस्यगणेन अनुयुक्तः पृष्टः । स्वस्य निजस्य राजवाहनस्येत्यर्थः । चरितम् आचरणम् । कृतः प्रस्ताव उपक्रमो येनासौ । तान् सुहृदः । तदुक्तौ वृत्तान्तवर्णने । अन्वयुङ्क्त नियुक्तवान् । तेषु सुहृत्सु मध्ये । प्रथमं प्राक् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायां राजवाहनचरितं नाम प्रथमोच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

समान समझकर उनका आदर किया । जब उन वृद्ध राजों ने भी मारे प्रेम के उनको हृदय मे लगा लिया, तब राजवाहन ने अपना सौभाग्य समझा ।

(२७) इस प्रकार मेल-मिलाप हो जाने के बाद जब सब लोग आनन्द के साथ बैठ गये और उन अनन्य प्रेमियों में परस्पर प्रेमालाप होने लगा तब राजवाहन ने पहले अपना और सोमदत्त तथा पुष्पोद्भव का वृत्तान्त बताकर अन्य मित्रों पर बीती हुई घटनाओं को सुनने के विचार से उन मित्रों को भी अपना-अपना हाल बताने लिये कहा । उनमें सर्व प्रथम अपहारवर्मा अपनी आप बीती सुनाने लगा ।

इति श्रीरामतेजपाण्डेयकृतदशकुमारचरितभाषानुवादे राजवाहनचरितं नाम प्रथमोच्छ्वासः ।

द्वितीयोच्छ्वासः ।

(१) देव त्वयि तदावतीर्णे द्विजोपकारायासुरविवरं त्वदन्वेषणप्रसृते च मित्रगणे अहमपि महीमटन्नङ्गेषु गङ्गातटे वहिश्चम्पायाः कश्चिदस्ति तपःप्रभावोत्पन्नदिव्यचक्षुर्मरीचिर्नाम महर्षिरिति कुतश्चित् संलपतो जनसमाजादुपलभ्यामुतो बुभुत्सुस्त्वद्गतिं तमुद्देशमगमम् ।

(२) न्यशामयं च तस्मिन्नाश्रमे कस्यचिच्चूतपोतकस्य छायायां कमप्युद्विग्नवर्णं तापसम् । अमुना चातिथिवदुपचरितः क्षणं विश्रान्तः

* बालविबोधिनी *

(१) अथापहारवर्मा कथयति । देव कुमार । त्वयि भवति राजवाहने इत्यर्थः तदा तस्यां रात्रौ । अवतीर्णे प्रविष्टे । द्विजस्य ब्राह्मणस्य मातङ्गस्येत्यर्थः उपकाराय उपकारं कर्तुम् । असुरविवरं पातालम् । त्वदेति–तव भवतः राजवाहनस्येत्यर्थः, अन्वेषणाय मार्गणाय प्रसृते निर्गते । अहमपि अपहारवर्माऽपि महीं पृथ्वीम् । अटन् भ्रमन् । चम्पाया अङ्गदेशराजधान्याः । तपः प्रभावेण तपस्यामाहात्म्येन उत्पन्नं प्रादुर्भूतं दिव्यचक्षुर्ज्ञाननयनं यस्यासौ । कुतश्चिद् अज्ञातपरिचयात् । संलपतः परस्परभाषमाणात् । उपलभ्य ज्ञात्वा । अमुतः अस्मान्मरीचेः सकाशात् । अदस्शब्दात् पञ्चम्यास्तसिल् । त्वद्गतिं भवत्प्रचारं । बुभुत्सुः ज्ञातुमिच्छुः बुधेः सन्नन्तादुः प्रत्ययः । उद्देशं प्रदेशं, मरीचिर्यत्रासीदिति शेषः ।

(२) न्यशामयम् अपश्यम् । चूतपोतकस्य तरुणाम्रतरोः । उद्विग्नवर्णं अनुतापमलीमसम् । अमुना तत्रोपविष्टेन तापसेन । उपचरितः सत्कृतः । अहमिति

* बालक्रीडा *

(१) हे देव ! जब आप उस ब्राह्मणका उपकार करनेके लिए उस कन्दरामें उतरे और आपके सभी मित्र जब आपको खोजनेके लिए इधर-उधर फैल गये, तब मैं अङ्गदेशकी पृथिवीपर गङ्गाके किनारे और चम्पा नगरीके बाहर ही बाहर विचरता रहा । इसी बीच मैंने परस्पर बातें करते हुए कुछ लोगोंसे सुना कि, मरीचि नामके कोई एक महर्षि हैं । उन्होंने अपनी तपस्याके बलसे दिव्यदृष्टि पायी है । बस, उनकेद्वारा आपका पता लगानेके निमित्त चल पड़ा।

(२) उनके आश्रमपर जा करके मैंने देखा कि, छोटेसे आम्रवृक्षतले एक

कामौ भगवान् मरीचि तस्मादहमुपलिप्सु प्रसङ्गप्रोषितस्य सुहृदो गतिम् आश्चर्यज्ञानविभवो हि स महर्षिर्मह्यां विश्रुत इत्यवादिषम्।

(३) अथामावुष्णमायतञ्च निःश्वस्याशासत—आसीत्तादृशो मुनिरस्मिन्नाश्रमे। तमेकदा काममञ्जरी नामाङ्गपुरीवतंसस्थानीया वारयुवतिरश्रुबिन्दुतारकितपयोधरा सनिर्वेदमभ्येत्य कीर्णशिखण्डास्तीर्णभूमिरभ्यवन्दिष्ट।

* बालविबोधिनी *

शेषः। तस्मात् मरीचेः सकाशात्। उपलिप्सुः ज्ञातुमिच्छुः। प्रसङ्गेति—प्रसङ्गेन केनापि कारणेन प्रोषितस्य देशान्तरगतस्य। सुहृदः मित्रस्य, राजवाहनस्येत्यर्थः। गतिं प्रचारम्। आश्चर्यजनको ज्ञानस्य विभवो माहात्म्यं यस्यासौ। विश्रुतः प्रसिद्धः। अवादिषम्। अकथयम्।

(३) अथ मद्वचनश्रवणानन्तरम्। असौ विवर्णमुखस्तापसः। आयत दीर्घं। उष्णमायत चेति पदद्वयं क्रियाविशेषणम्। अशासत अकथयत्। तादृशः त्वदुक्तगुणयुक्तः। तं मुनिम्। अङ्गपुरी अङ्गदेशराजधानी चम्पेति ख्याता तस्या-वतंसस्थानीया शेखरभूता—वतंसः कर्णभूषणं शिरोभूषणयोरिति कोशात्। वारयुवतिर्वेश्या। अश्रुबिन्दुभिर्नेत्रजलकणिकाभिस्तारकितौ व्याप्तौ पयोधरौ स्तनौ यस्याः सा रुदतीत्यर्थः। सनिर्वेदं सवैराग्यं सर्वत्र विरक्त्या सहेति शेषः। कीर्णेति—कीर्णः प्रसृतो यः शिखण्डः केशपाशस्तेनास्तीर्णा व्याप्ता भूमिर्यया सा। स्वकेश-

* बालक्रीडा *

घबडाये हुए तपस्वीजी बैठे हैं। उन्होंने अतिथिकी भाँति मेरा सत्कार किया। क्षणभर विश्राम करनेके अनन्तर मैंने तपस्वीजीसे पूछा—"भगवन्! महर्षि मरीचि कहाँ हैं? प्रसङ्गवश मेरे मित्रका विछोह हो गया है। मैं उसका पता लगाना चाहता हूँ। मैंने सुना है कि, उनके पास आश्चर्यजनक ज्ञानका वैभव है।"

(३) मेरी बात सुन करके तपस्वीजीने गरम तथा लम्बी साँस ली और कहा—हाँ, इस आश्रममें एक वैसा मुनि था। एक समय काममञ्जरी नामकी एक वेश्या—जो चम्पापुरीका अलङ्कार मानी जाती थी—उसके पास गयी और पृथ्वीपर माथेके बाल बखेर करके बड़ी वेदनाके साथ प्रणाम किया। उस समय उसके कुचोंपर

(४) तस्मिन्नेव च क्षणे मातृप्रमुखस्तदाप्तवर्गः सानुक्रोशमनुप्रधावितस्तत्रैवाविच्छिन्नपातमपतत् । स किल कृपालुस्तं जनमार्द्रया गिराश्वास्यार्तिकारणं तां गणिकामपृच्छत् । सा तु सव्रीडेव सविषादेव सगौरवेव चाब्रवीत्—'भगवन्, ऐहिकस्य सुखस्याभाजनं जनोऽयमामुष्मिकाय श्वोवसीयायार्ताभ्युपपत्तिवित्तयोर्भगवत्पादयोर्मूलं शरणमभिप्रपन्नः'–इति ।

* बालविबोधिनी *

कलापेन भूमिमाच्छाद्य नमस्कृतवतीत्यर्थः ।

(४) मातृप्रमुखो जनन्यादिः । तस्याः काममञ्जर्या आप्तवर्ग आत्मीयगणः । सानुक्रोशं सदयम् । अनुप्रधावितः पश्चादागतः । तत्रैव मरीचेःपुरतः अविच्छिन्नपातं पुनः पुनर्निपत्य । सः महर्षिः । तं जनम्–आप्तवर्गम् । आर्द्रया स्निग्धया । गिरा वचनेन । आर्त्तिकारणं निर्वेदनिदानम् । गणिकां वेश्यां काममञ्जरीमिति यावत् । सा काममञ्जरी । सव्रीड़ेव सलज्जेव । सविषादेव सनिर्वेदेव । स गौरवेव साभिमानेव । अत्र सलज्जत्वादिकं सर्वमेव कृत्रिमं न तु वास्तवम् । स्वोत्तमताप्रकटनार्थं सलज्जेति । स्वनिर्वेदस्य मुनेः प्रत्ययार्थं सविषादेति । अहमस्य मुनेर्मानसमावर्जयितुं क्षमेत्यभिमानात् सगौरवत्वम् । इह–अस्मिन् जन्मनि भवमैहिकं तस्य । अभाजनम् अस्थानमपात्रमित्यर्थः । अयं जनः–मल्लक्षणो वेश्याजनः । अमुष्मिन् जातमामुष्मिकं पारलौकिकमिति यावत् तस्मै । श्वोवसीयाय कल्याणाय । श्वःश्रेयसं स्यात्कल्याणं श्वोवसीयं शिवं शुभमिति कोपः । ऐहिकं सुखं तावन्न लब्धं मया–अनन्तरं च पारलौकिकं मङ्गलं स्वर्गभोगादिकं यथा मे स्यात्तदर्थमिति भावः । आर्त्तेति–आर्त्तानां पीड़ितानां विपन्नानामिति यावत्–

* बालक्रीडा *

पड़ी आँसूकी बूँदें झलक रही थीं ।

(४) उसी समय काममञ्जरीके आत्मीयजन मारे शोकके कारण व्याकुलभावसे पीछे–पीछे दौड़ते हुए आये और महर्षि मरीचिके सम्मुख बार–बार गिरने लगे । तब उन दयालु महर्षिने उन लोगोंको प्रेमार्द्र वचनोंसे ढाढ़स बँधा करके काममञ्जरीसे दुःखका कारण पूछा । उस वेश्याने लज्जा, विषाद, किन्तु अभिमानपूर्वक कहा–"भगवन् ! इस प्राणीने (मैंने) इस जीवनमें कोई सुख नहीं पाया ।

(५) तस्यास्तु जनन्युदञ्जलिः पलितशारशिखण्डबन्धस्पृष्टमुक्तभूमिरभाषत—'भगवन्, अस्या मे दोपमेपा वो दासी विज्ञापयति। दोपश्च मम स्वाधिकारानुष्ठापनम्।

(६) एष हि गणिकामातुरधिकारो यद्दुहितुर्जन्मनः प्रभृत्येवाङ्गक्रिया, तेजोबलवर्णमेधासंवर्धनेन दोषाग्निधातुसाम्यकृता मितेनाहारेण

* बालविबोधिनी *

अभ्युपपत्त्या अनुग्रहेण परिपालनेनेति यावत्-विश्रुतयोः ख्यातयोः सर्वत्र प्रसिद्धयोरिति यावत्। भगवत्पादयोर्विशेषणमेतत्। भगवतः तव महर्षेरिति शेषः। पादयोश्चरणयोः। मूल-मन्तिकम्। अभिप्रपन्ना-प्राप्ता।

(५) तस्याः काममञ्जर्याः। जननी माता। उदञ्जलि ऊर्ध्वीकृतकरपुटा। पलितेति-पलितेन जरसा शौक्ल्येन शारः शवलो यः शिखण्डबन्धः केशपाशबन्धनं तेनादौ स्पृष्टा पश्चान्मुक्ताभूमिर्यया सा। शिरःस्पृष्टभूतलं यथा तथा प्रणम्येत्यर्थः। अस्या भवत्पुरोवर्तमानायाः मे मम दोषं दूषणं अपराधमिति शेषः। एषा पुरोदृश्यमाना। वो युष्माकं दासी मत्कन्येत्यर्थः। स्वस्य आत्मनो गणिकामातुर्यः अधिकारः कन्याया वेश्योचितव्यवहारशिक्षणं तस्यानुष्ठापनं तदुचिताचरणाय प्रेरणम्।

(६) दुहितुः कन्यायाः। जन्मनः प्रभृति-जन्मसमयमारभ्य। अङ्गक्रिया उद्वर्तनादिशरीरसंस्कारः। तेजः प्रभावः, बलं सामर्थ्यं, वर्णो गौरत्वादिकं मेधा प्रज्ञा-

* बालक्रीडा *

सो अब पारलौकिक कल्याणके निमित्त मैं आपके इन चरणोंके शरणमें आ पड़ी हूँ जो दुखी जनोंपर अनुग्रह करके उनका दुःख दूर कर दिया करते हैं।"

(५) इसी समय कुछ सफेद और कुछ काले बालोंके कारण चितकबरे जूड़ेवाली उसकी माताने हाथ जोड़ करके और मस्तकको भूमिमें स्पर्श करा करके कहा—"भगवन्! आपकी दासी (काममञ्जरी) मेरा अपराध बताती है। किन्तु, मेरा दोष यही है कि, मैंने इससे वेश्याजनोचित कार्य करानेकी चेष्टा की है।

(६) और यह प्रत्येक वेश्याकी माताका अधिकार है कि, जन्मसे ही वह अपनी पुत्रीको उबटन आदि लगावे। तेज, बल (शारीरिकबल) वर्ण (रूप)

शरीरपोषणम् , आपञ्चमाद्वर्षात्पितुरप्यनतिदर्शनम् , जन्मदिने पुण्यदिने चोत्सवोत्तरो मङ्गलविधिः, अध्यापनमनङ्गविद्यानां साङ्गानाम् , नृत्यगीतवाद्यनाट्यचित्रास्वाद्यगन्धपुष्पकलासु लिपिज्ञानवचनकौशलादिषु च सम्यग्विनयनम् , शब्दहेतुसमयविद्यासु वार्तामात्रावबोधनम् , आजीवज्ञाने

* बालविबोधिनी *

चैतेषां संवर्धनेन वृद्धिकारिणा तथा दोषाणां वातपित्तकफानाम्–अग्नेर्जठरानलस्य, धातूनां त्वङ्मांसादीनां साम्यकृता समभावं कुर्वता–तथा मितेन परिमितेन, नात्यल्पेन नातिविस्तरेण वेति भावः । पदत्रयमेतत् आहारेणेत्यस्य विशेषणम् । आपञ्चमात् पञ्चमादारभ्य । पितुः स्वजनकस्यापि अन्येषां तु का कथेति भावः । अनतिदर्शनम् अधिकदर्शनाभावः । प्रायेण पितृदर्शनाभावः कन्याया लज्जाभयाद्यभावं सूचयति । जन्मदिने कन्याया उत्पत्तिदिवसे । पुण्यदिने पुण्यतिथौ संक्रमणादि समय इत्यर्थः । उत्सवोत्तरः उत्सवप्रधानः । मङ्गलविधिः माङ्गल्यानुष्ठानम् । अध्यापनं–शिक्षादानम् । अनङ्गविद्यानाम्–कामशास्त्राणाम् । साङ्गानाम्–अङ्गसहितानाम् । नृत्येति–नृत्यं च गीतं च वाद्यं च नाट्यमभिनयश्च चित्र मालेख्यकर्म च आस्वाद्यं भोज्यं मिष्टान्नादि च गन्धश्च पुष्पं च तानीति द्वन्द्वसमासः–तेषां कलासु विद्यासु । कलाशब्दस्य सर्वैः सहान्वयः तेन नृत्यकला गीतकलेत्यादि प्राप्तम् लिपिज्ञानं अक्षरज्ञानम् , वचनकौशलं श्लेषादि । विनयनं शिक्षणम् । शब्दो व्याकरणविद्या, हेतुस्तर्कविद्या समयो ज्यौतिषविद्या तासु । वार्त्तामात्रावबोधनं वृत्तान्तमात्रज्ञानम् । केन शास्त्रेण कियल्लभ्यते इत्येतावन्मात्रबोधः । आजीवज्ञाने–जीविकापरिचये । ममेयं जीविकेति ज्ञाने इति भावः ।

* बालक्रीडा *

तथा बुद्धिको बढ़ाने और वात–पित्तादि दोषों, जठराग्नि एवं रस आदि धातुओं को समभावमें रखनेवाला परिमित आहार दे करके उसके शरीरका पोषण करे । कन्याका पाँचवाँ वर्ष समाप्त होते ही वेश्याकी माता उसे पितातककी दृष्टिसे दूर रखे । जन्मके दिन तथा संक्रान्ति आदि पवित्र दिनोंमें उत्सवके साथ मङ्गल कार्य करे । सभी अङ्गों समेत अनङ्गविद्या (कामशास्त्र) पढ़ावे । नृत्य, गीत, वाद्य, नाट्य, (अभिनय) चित्रकला, भोज्य–पदार्थ (पकवान आदि), गन्ध, पुष्प,

क्रीडाकौशले सजीवनिर्जीवासु च द्यूतकलास्वभ्यन्तरीकरणम् , अभ्यन्तरकलासु वैश्वासिकजनात्प्रयत्नेन प्रयोगग्रहणम् , यात्रोत्सवादिष्वादरप्रसाधिताया स्फीतपरिवर्हाया प्रकाशनम् , प्रसङ्गवत्यां संगीतादिक्रियायां पूर्वसंगृहीतैर्ग्राह्यवाग्भिः सिद्धिलम्भनं दिङ्मुखेषु तत्तच्छिल्पवित्तकैर्यशःप्रख्यापनम् , कार्तान्तिकादिभिः कल्याणलक्षणोद्घोषणम् , पीठमर्दविट-

* बालविबोधिनी *

सजीवनिर्जीवासु द्यूतकलास्वित्यस्य विशेषणम् । सजीवा द्यूतकला यथा कुक्कुटादिद्वन्द्वयुद्धं निर्जीवा च अक्षक्रीडादि । अभ्यन्तरीकरणं तेषु अन्तःप्रवेशनं स्वायत्तीकरणमिति शेषः । अभ्यन्तरकलासु रतिक्रीडासु । वैश्वासिकजनात् प्रामाणिकपुरुषात् । प्रयत्नेन आदरातिशयेन । प्रयोगग्रहणं कर्त्तव्यताशिक्षणम् । आदरसाधितायाः सादरमलंकृतायाः । स्फीतेति—स्फीता अतिशयिनाः प्रोज्ज्वला इति यावत् परिवर्हाः परिच्छदा यस्या स्तथाविधायाः । परिच्छदे नृपार्हेऽर्थे परिवर्हः इत्यमरः । प्रकाशनं वहिः प्रकटनम् । प्रसङ्गवत्या—केनचित्प्रसङ्गेन कार्यविशेषेण वा संजातायाम् । पूर्वसंगृहीतैः—प्रागेव धनादिना स्वायत्तीकृतैः ग्राह्यवाग्भिः । ग्राह्या सर्वैः स्वीकार्या वाक् येषां तैः । सिद्धिलम्भनं कार्येषु सिद्धिलाभः । दिङ्मुखेषु दिगन्तरेषु तत्तच्छिल्पवित्तकैः प्रसिद्धकलाशास्त्रनिष्णाते वैणिकमार्दङ्गिकादिभिः यशःप्रख्यापनं स्वकीर्त्तिसमुद्घोषणम् । कार्त्तान्तिको लक्षणज्ञः । कल्याणेति—अस्या गणिकाया सर्वाणि शरीरलक्षणानि कल्याणसूचकानीत्यादिख्यापनम् । पीठमर्दो नायकप्रधानसहायः । विटो विदूषकश्च नायकस्य शृङ्गारसहायौ।

* बालक्रीडा *

आदिकी कलाओं तथा पढ़ने-लिखने और बात-चीतमें पूर्ण निपुण करे। व्याकरण, तर्क और सिद्धान्त (ज्योतिष) विद्याके वृत्तान्त मात्रका ज्ञान करा दे, सजीव द्यूतकला (जुआ) अर्थात् मुर्गे आदिकी लडाई और पासा आदि एवं रतिक्रियाका मर्म समझा दे । किसी प्रकारकी यात्रा और उत्सव आदिके अवसरपर बड़े आदरके साथ कन्याका शृङ्गार करके इस तरह लोगोंके समझ ले जाय कि, उसके चिक्कने तथा चमकीले केश लहरा रहे हों । यदि कोई प्रसङ्ग आ पड़े तो पहले हीसे धन आदि दे करके अपने वशमें किये हुए गुणी लोगोंद्वारा विश्वस-

विदूषकैर्भिक्षुक्यादिभिश्च नागरिकपुरुषसमवायेषु रूपशीलशिल्पसौन्दर्यमाधुर्यप्रस्तावना, युवजनमनोरथलक्ष्यभूतायाः प्रभूततमेन शुल्केनावस्थापनम्, स्वतो रागान्धाय तद्भावदर्शनोन्मादिताय वा जातिरूपवयोऽर्थशक्तिशौचत्यागदाक्ष्यदाक्षिण्यशिल्पशीलमाधुर्योपपन्नाय स्वतन्त्राय प्रदानम्, अधिकगुणायास्वतन्त्राय प्राज्ञतमायाल्पेनापि बहुव्यपदेशेनार्पणम्,

* बालविबोधिनी *

शृङ्गारेऽस्य सहाया विटचेटविदूषकाद्याःस्युरिति साहित्यदर्पणः। भिक्षुकी परिव्राजिका। नागरिकपुरुषसमवायेषु चतुरजनसमाजेषु। रूपं वर्णः, शीलं स्वभावः, सौन्दर्यं लावण्यं, माधुर्यं मनोहरत्वं तेषां प्रस्तावना प्रसङ्गः प्रख्यापनमिति यावत्। युवजनेत्यादि गणिकाया विशेषणम्। प्रभूततमेन प्रचुरतरेण। शुल्केन पणेन। अवस्थापनं युवकस्य समीपे स्थापनम्। स्वतः स्वयमेव रागान्धाय अनुरागवशीभूताय। तद्भावेति—तस्य गणिकाया भावस्य विलासादेर्दर्शनेनावलोकनेन उन्मादिताय उन्मत्तीकृताय। जातीति—जातिर्ब्राह्मणत्वादिः, रूपं लावण्यं, वयो यौवनं, अर्थो धनं, शक्तिः सामर्थ्यं, त्यागो दानं, दाक्ष्यं नैपुण्यं, दाक्षिण्यं, सरलता, शिल्पं कलाचातुर्यं, शीलं चारित्रं, माधुर्यं जनमनोरञ्जकत्वं एतैरुपपन्नाय युक्ताय। स्वतन्त्राय स्वाधीनाय नत्वन्यपरतन्त्रायेत्यर्थः। प्रदानमर्पणं गणिकाया इति शेषः। अधिकगुणाय अधिकगुणशालिने अस्वतन्त्राय पराधीनाय। प्राज्ञ

* बालक्रीडा *

सनीय वाक्योंको कहला करके कन्याका गुण-गान कराये। विविध लक्षणोंको जाननेवाले लोगोंद्वारा कन्याके शुभ लक्षण कहलावे। कन्याको चाहनेवाले नायकके प्रिय मित्र, विट, विदूषक और भिक्षुकी आदिकेद्वारा नागरिकोंके समवायमें अपनी कन्याके रूप, शील, कौशल, सौन्दर्य और माधुर्यका बखान करावे युवकोंके मनोरथकी लक्ष्यभूमि बना करके कन्याका अधिकसे अधिक मूल्य निर्धारित करे। यदि स्वतः रागान्ध अथवा कन्याके हाव-भावसे उन्मत्त, जाति, रूप, वय, धन, शक्ति, शुचिता, त्याग, दक्षता, दाक्षिण्य, शिल्प और माधुर्य से युक्त एवं स्वतन्त्र प्रेमी मिले तो, कन्याको उसके हवाले कर दे। जिस प्रणयीमें गुण तो अधिक हों किन्तु वह स्वतन्त्र न हो ऐसे अतिशय बुद्धिमान् प्रेमीको बहुत-

अस्वतन्त्रेण वा गान्धर्वसमागमेन तद्गुरुभ्य: शुल्कापहरणम्, अलाभेऽर्थस्य कामस्वीकृते स्वामिन्यधिकरणे वा साधनम, रक्तस्य दुहित्रैकचारिणीव्रतानुष्ठापनम्, नित्यनैमित्तिकप्रीतिदायकतया हृतशिष्टानां गम्यधनानां चित्रैरुपायैरपहरणम्, अददता लुब्धप्रायेण च विगृह्यासनम्,

* बालविबोधिनी *

तमाय विद्वत्तमाय। अल्पेन, अल्पधनेन, अल्पं गृहीत्वापीत्यर्थः, बहुव्यपदेशेन मयास्य सकाशाद् बहुधनं गृहीतमिति प्रख्याप्येत्यर्थः। अस्वतन्त्रेण पराधीनेन, यस्तु युवा पित्राद्यधीनस्तेन सहेत्यर्थः। गान्धर्वसमागमेन गान्धर्वविवाहेन तद्गुरुभ्य तस्य यून पित्रादे सकाशात्। अयं ते पुत्रो गान्धर्वेण विधिना मद्दुहितरं परिणीतवानिति कथयित्वेति भावः। शुल्कापहरणं धनग्रहणम्। अलाभेऽप्राप्तौ। कामस्वीकृते कामेन वशीकृते। विषये सप्तमी। स्वामिनि तत्पित्रादेः समीपे। अधिकरणे व्यवहारालये। साधनम् अभियोगकरणम्। रक्तस्य अनुरक्तस्य पुरुषस्य सम्बन्धे। दुहित्रेति-दुहित्रा स्वकन्यया एकचारिणीव्रतस्य एक पुरुषासक्तिरूपस्य व्रतस्यानुष्ठापनं प्रवर्त्तनम्। नित्येति-गणिका खलु नित्येन नैमित्तिकेन च विधिना प्रीतिदायिका भवति तेन हेतुना हृतशिष्टानां हृतेभ्यो गृहीतेभ्यो धनेभ्यः। शिष्टानामवशिष्टानाम्। गम्यधनानां विटजनद्रव्याणाम्। गम्यो विटः पल्लविको भुजङ्ग इति भागुरि। चित्रैर्नानाविधैः। अददता अर्थमिति

* बालक्रीडा *

कुछ बढ़ानेके बाद कन्या अर्पण करे। कदाचित् किसी पराधीन प्रेमीके साथ कन्याका सम्पर्क हो जाय तो, प्रणयीके गुरुजनोंसे अपनी कन्याका शुल्क वसूल करे। यदि धन न मिल सके और कन्या आप प्रेमीको अङ्गीकार कर ले तो प्रेमीके बड़े बूढ़ों तथा अधिकारियों-(अफसरों-) के पास नालिश करके कार्य साधन करे। प्रेमीके प्रति अपनी कन्याद्वारा पातिव्रत-धर्म पालन करावे। प्रेमीसे नित्य-नैमित्तिक रूपमें आये हुए धनसे अवशिष्ट धनको तरह-तरहके कौशलसे खींचे। यदि प्रेमी लोभवश धन न दे तो उसे लड़ करके अलग कर दे। कन्याके प्रेमीके पड़ोसियोंमें ऐसा भाव भर दे कि, जिससे वे प्रेमीकी त्यागशक्तिको प्रोत्साहित करें। जब प्रेमीके पास कुछ न रहे तो, जली-कटी बातोंको कह करके कोसे।

प्रतिहस्तिप्रोत्साहनेन लुब्धस्य रागिणस्त्यागशक्तिसंधुक्षणम् , असारस्य वाक्संतक्षणैर्लोकोपक्रोशनैर्दुहितृनिरोधनैर्व्रीडोत्पादनैरन्याभियोगैरवमानै-श्चापवाहनम् , अर्थदैरनर्थप्रतिघातिभिश्चानिन्द्यैरिभ्यैरनुबद्धार्थानर्थसंश-यान्विचार्य भूयोभूयः संयोजनमिति ।

* बालविबोधिनी *

शेषः । लुब्धप्रायेण प्रायशो लोलुपेन विगृह्य विरोध्य । विग्रहं कारयित्वेत्यर्थः । आसनमवस्थानम् । असनमिति पाठे क्षेपणं नायकस्य तिरस्कार इत्यर्थः । प्रति-हस्तिना प्रतिद्वन्द्विना प्रतिवासिना वा यत्प्रोत्साहनमुद्दीपनं तेन । प्रतिहस्ती प्राति-वेश्य इति कोषः । लुब्धस्य अर्थलोलुपस्य कृपणस्येत्यर्थः । त्यागशक्तेर्दानसाम-र्थ्यस्य संधुक्षणमुद्दीपनम् । असारस्य निर्धनस्य । वाक्संतक्षणैः वाक्पीडनैः कटुवाक्यैरिति यावत् । लोकोपक्रोशनैः लोकेषु जनसमाजेषु निन्दनैः । दुहितृनि-रोधनैः स्वकन्याया गमननिवारणैः । व्रीडोत्पादनैः लज्जाप्रदानैः । अन्येति अन्यविधैरभियोगैः धर्माधिकरणव्यवहारैः । अपवाहनं गृहाद् बहिष्करणम् । अर्थदैः । धनप्रदैः । अनर्थप्रतिघातिभिः आपत्प्रतीकारसमर्थैः । अनिन्द्यैः समा-जेषु शिष्टत्वेन परिगणितैः । इभ्यै धनिकैः । अनुबद्धार्थान् अनुबद्धः संश्लिष्टोऽर्थो येषां तान् , सम्बन्धयुक्तानित्यर्थः । अर्थसंशयान् अर्थस्य शुल्कस्य प्राप्तिविषये संशयो येभ्यस्तान् । विचार्य विविच्य, अर्थप्राप्तौ कापि बाधा न भविष्यतीति विचार्येति भावः । संयोजनं गणिकायाः सम्मेलनम् । इति–एतत्पर्यन्तं गणिका-मातुरधिकारकथनम् ।

* बालक्रीडा *

अपनी कन्याको उससे न मिलने दे। लज्जा उत्पन्न करनेवाली बातें कह–कह करके उसपर नाना प्रकारके अभियोग लगावे और अन्तमें उसका अपमान करके भगा दे। जिससे धन अधिक मिल सके और किसी प्रकारकी विघ्न–बाधा न आवे ऐसी अनिन्द्य बातें सोच–सोच करके धनिकोंके साथ कन्याका मेल करावे। किन्तु, उसमें भी इस बातका ध्यान रखे कि, सम्बन्ध सदा ऐसोंके साथ ही करे कि, जहाँसे धन मिलनेमें कोई संशय न हो।

(७) गणिकायाश्च गम्यं प्रति सज्जतैव न सङ्गः । सत्यामपि प्रीतौ न मातुर्मातृकाया वा शासनातिवृत्तिः । एवं स्थितेऽनया प्रजापतिविहितं स्वधर्ममुल्लङ्घ्य क्वचिदागन्तुके रूपमात्रधने विप्रयूनि स्वेनैव धनव्ययेन रममाणया मासमात्रमत्यवाहि । गम्यजनश्च भूयानर्थयोग्यः प्रत्याचक्षाणयानया प्रकोपितः । स्वकुटुम्बकं चावसादितम् 'एषा कुमतिर्न कल्याणी,

* बालविबोधिनी *

(७) अधुना गणिकाया अधिकारः कथ्यते । गम्यं विटम् । सज्जता सुन्दरपरिच्छदादि प्रदर्शनमेव कार्यमिति शेषः—न तु सङ्गः सहवासादिः गणिकया कार्य इति शेषः । प्रीतौ अनुरागे । मातुर्जनन्याः । मातृकायाः मातामह्याः धात्र्या वा । मातुर्माता तु मातृकेति वैजयन्ती । मातेव मातृकेति इवार्थे कन् प्रत्ययो वा । उपमातृका धात्रीत्यर्थः । शासनातिवृत्तिः आज्ञालङ्घनम् । गणिकया सर्वदा मातुर्मातृकाया वा शासने वर्त्तितव्यमिति भावः । एवं स्थिते—एतादृश्यां मर्य्यादायाम् । अनया काममञ्जर्या । प्रजापतिविहितं विधिनिर्दिष्टम् । स्वधर्मं गणिकोचितकर्त्तव्यम् । क्वचित् अपरिचिते । रूपमात्रं धनं यस्य तस्मिन्, यस्य सौन्दर्यमेव वर्त्तते न तु धनमिति भावः । विप्रयूनि ब्राह्मणयुवके । स्वेनैव धनव्ययेन काममञ्जर्या एव धनव्ययेन । रममाणया विहरन्त्या । अत्यवाहि यापितम् । गम्यजनः विटजनः । भूयान् अधिकः । अर्थयोग्यः धनप्रदानसमर्थः प्रत्याचक्षाणया प्रत्याख्यानं कुर्वत्या । अनया काममञ्जर्या । प्रकोपितः रोषितः । स्वकुटुम्बकं निजपरिवारवर्गः । अवसादितं—धनाभावादवसन्नीकृतम्, कष्टं प्रापितमिति भावः । एषा एतादृशी । कुमतिः कुबुद्धिस्तवेति शेषः । कल्याणी शुभप्रदा । मयि काम-

* बालक्रीडा *

(७) प्रत्येक वेश्याका कर्तव्य है कि, वह प्रेमीके ऊपरी ठाट-बाटको ही देख करके न रीझ जाय—बल्कि तत्त्व भी देखे । यदि किसीमें प्रीति हो जाय तो भी, वेश्या अपनी माताकी आज्ञाका उल्लङ्घन न करे । ऐसी दशामें इसने भगवान् प्रजापतिके निर्मित धर्मका अतिक्रमण करके किसी रूपमात्रके धनी परदेशी युवकपर रीझ करके अपना ही व्यय करती हुई एक महीनेका समय बिताया । इसी बीच कितने ही बड़े-बड़े धनी-मानी आये, जिसके साथ यह सुखसे रह सकती थी,

इति निवारयन्त्यां मयि वनवासाय कोपात्प्रस्थिता। सा चेदियमहार्य निश्चया सर्व एष जनोऽत्रैवानन्यगतिरनशनेन संस्थास्यते, इत्यरोदीत्।

(८) अथ सा वारयुवतिस्तेन तापसेन 'भद्रे, ननु दुःखाकरोऽयं वन वासः। तस्य फलमपवर्गः स्वर्गो वा। प्रथमस्तु तयोः प्रकृष्टज्ञानसाध्यः प्रायो दुःसंपाद एव, द्वितीयस्तु सर्वस्यैव सुलभः कुलधर्मानुष्ठायिनः। तद

* बालविबोधिनी *

मञ्जर्या मातरि। वनवासाय अरण्यवासं कर्त्तुम्। कोपात् क्रोधमाश्रित्य। इयं काममञ्जरी। अहार्यनिश्चया अहार्यः हर्त्तुं निवारयितुमशक्यो निश्चय प्रतिज्ञा यस्याः सा। दृढनिश्चयेत्यर्थः। एष जनः अस्मदादिः। अत्रैव भवत्पु रत एव। संस्थास्यते मरिष्यति। संस्थानं मरणं मतमिति वैजयन्ती। अरोदीत विललाप, सा वृद्धा गणिकामातेति शेषः।

(८) अथानन्तरं तेन पूर्वोक्तेन तापसेन मरीचिना सा वयुवतिर्गणिका। काममञ्जरीति यावत्। सानुकम्पं सदयमभिहितेति समन्वयः। दुःखाकरो दुःख- जनकः। तस्य वनवासस्य। अपवर्गो मोक्षः। प्रथमः अपवर्गः। तयोः अपवर्ग स्वर्गयोः। प्रकृष्टज्ञानसाध्यो ब्रह्मज्ञानादिनिष्पाद्यः। प्रायो बाहुल्येन। दुःसंपादः अशक्यः। द्वितीयः स्वर्गः। कुलधर्मानुष्ठायिनः कुलधर्ममनुतिष्ठतीति कुलधर्मा नुष्ठायी.तस्य स्वजात्युचितकर्त्तव्यपरायणस्य सर्वस्येत्यनेन सम्बन्धः। तत् तस्मात

* बालक्रीडा *

किन्तु, इसने उनका तिरस्कार करके नाराज कर दिया। अपने कुटुम्बियोंको भी बहुत तकलीफ दी। जब मैंने 'यह कुमति ठीक नहीं है' यों कह करके वैसा करनेसे रोका तो, मारे क्रोधके यह वनवासके लिए घरसे निकल पड़ी। सो यदि इसका यह दृढ़ निश्चय है तो, असहाय भावसे सारा कुटुम्ब अनशन करता हुआ इसी जगह मर मिटेगा।

(८) इसके बाद उन तपस्वीजीने उस वेश्यासे कहा—"भद्रे ! वनवास दुःखकी खान है। इसका फल मोक्ष अथवा स्वर्ग ही हो सकता है। सो मोक्ष तो, अतिशय प्रखर ज्ञानसे ही साध्य हो सकता है और उसमें विविध प्रकारके क्लेश मिलते हैं। रही स्वर्गकी बात—सो वह अपने कुल—धर्मका अनुष्ठान करनेवाले सभी प्राणि-

शक्यारम्भादुपरम्य मातुर्मते वर्तस्व' इति सानुकम्पमभिहिता 'यदीह भगवत्पादमूलमशरणम्, शरणमस्तु मम कृपणाया हिरण्यरेता देव एव इत्युदमनायत ।

(९) स तु मुनिरनुविमृश्य गणिकामातरमवदत्—'सम्प्रति गच्छ गृहान् । प्रतीक्षस्व कानिचिद्दिनानि यावदियं सुकुमारा सुखोपभोगसमुचिता सत्यरण्यवासव्यसनेनोद्वेजिता भूयोभूयश्चास्माभिर्विबोध्यमाना प्रकृतावेव स्थास्यति' इति ।

* बालविबोधिनी *

कारणात् । अशक्यारम्भात् असाध्यकर्मणः । उपरम्य निवृत्य मातुर्मते वर्तस्व-मातुरुपदेशं पालयेत्यर्थः । इह मपारे । भगवत्पादमूल भगवतस्तव तापसस्येति शेषः पादमूलं चरणमूलम् । अशरणम् अरक्षकम् ममेति शेषः । मम काममञ्जर्याः । कृपणायाः दीनायाः । हिरण्यरेता अग्निः । शरणमस्तु–अग्नौ प्रवेक्ष्यामीति भाव. । उदमनायत उन्मना इव बभूव ।

(९) अनुविमृश्य विचिन्त्य विचार्य वा । सुखेति–सुखस्योपभोगे समुचिता अभ्यस्ता । अरण्यवासव्यसनेन वनवासजनितदुःखेन । उद्वेजिता व्याकुला । विबोध्यमाना उपदिश्यमाना । प्रकृतौ स्वभावे ।

* बालक्रीडा *

योंके लिए सुलभ है । अत एव तुम ऐसे अशक्य उद्योगसे विरत हो करके अपनी माताकी बात मानो ।" इस प्रकार मुनिकी दयाभरी वाणी कहनेपर वेश्याने कहा–"यदि यहाँ आपके चरणोंमें भी मुझे शरण नहीं मिलेगी, तब तो, मुझ अभागिनके लिए एक-मात्र अग्निदेव ही शरण होंगे ।" यों कह करके वह बिलखने लगी ।

(९) तदनन्तर कुछ विचार करके तपस्वीजीने वेश्याकी मातासे कहा–"अब तुम घर जाओ और कुछ समय प्रतीक्षा करो । तबतक सब प्रकारके सुखोपभोगके लिए अभ्यस्त यह सुकुमारी वनवासके क्लेशसे ऊब करके और हम लोगोंके बार-बार समझानेसे प्रकृतिस्थ हो जायगी ।

(१०) 'तथा' इति तस्याः प्रतियाते स्वजने सा गणिका तमृषिमलघुभक्तिर्धौतोद्गमनीयवासिनी नात्यादृतशरीरसंस्कारा वनतरुपोतालवालपूरणैर्देवतार्चनकुसुमोच्चयावचयप्रयासैर्नैकविकल्पोपहारकर्मभिः कामशासनार्थे च गन्धमाल्यधूपदीपनृत्यगीतवाद्यादिभिः क्रियाभिरेकान्ते च त्रिवर्गसंबन्धिनीभिः कथाभिरध्यात्मवादैश्चानुरूपैरल्पीयसैव कालेनान्वरञ्जयत्।

* बालविबोधिनी *

(१०) तथा—तथाऽस्तु इति कथयित्वा। प्रतियाते प्रतिनिवृत्ते। अलघुभक्तिः दृढभक्तिः। धौतेति-धौतं शुद्धं उद्गमनीयं उपस्थानयोग्यं वसनं वस्ते इति तद्वासिनी। उद्गमनीयं धौतवस्त्रयुगं वा। तत्स्यादुद्गमनीयं यद् धौतयोर्वस्त्रयोर्युगमित्यमरः। नात्यादृतेति—नात्यादृतः नाभिलषितः शरीरस्य संस्कारः परिकर्मादि यया सा। वनेति—वनतरुपोतानां वनस्थबालवृक्षाणामालवालस्य जलाधारवेष्टनस्य पूरणैर्जलेनेति शेषः। देवतेति—देवतानामर्चनार्थं यः कुसुमोच्चयः पुष्पराशिस्तस्यावचयः संग्रहस्तस्य प्रयासैः प्रयत्नैः। नैकेति—नैकेऽनेके विकल्पाः प्रकारा येषां तानि यान्युपहारकर्माणि बलिकर्माणि तैः। कामस्य शासनः कामशासनो महादेवस्तदर्थे तन्निमित्तम्। एकान्ते रहसि। त्रिवर्गसम्बन्धिनीभिः धर्मार्थकामविषयाभिः। अध्यात्मवादैः आत्मतत्त्वचिन्तनैः। अनुरूपैर्योग्यैः। अन्वरञ्जयत्। सन्तोषयमास मुनिमिति शेषः।

* बालक्रीडा *

(१०) "बहुत अच्छा" कह करके जब उस वेश्याके कुटुम्बी घर लौट गये, तब वह बड़ी श्रद्धाके साथ उन मुनिराजकी सेवा-शुश्रूषा करने लगी। वह धुले हुए केवल एक जोड़े कपड़े से अपना काम चलाती। शरीरको एक दम सँवारती सिंगारती नहीं। तपोवनके छोटे-छोटे पौधोंके थालोंमें जल भरती। देवपूजनके निमित्त फूल जुटाती। विविध प्रकारके उपचार एकत्र करती। श्रीशिवजीके पूजनके निमित्त चन्दन, माला, धूप, दीपका जुगाड़ करती और नृत्य-गीत-वाद्य करके उन्हें प्रसन्न करती। कभी-कभी एकान्तमें अर्थ-धर्म-कामसे सम्बन्ध रखनेवाली अथवा अध्यात्मसे सम्बद्ध अनुरूप बातें करती थी। ऐसा करके उसने थोड़े ही समयमें उन मुनिका मन मोह लिया।

(११) एकदा च रहसि रक्तं तमुपलक्ष्य 'मूढः खलु लोको यत्सह धर्मेणार्थकामावपि गणयति' इति किंचिदस्मयत। 'कथय वासु, केनांशेनार्थकामातिशायी धर्मस्तवाभिप्रेतः' इति प्रेरिता मरीचिना लज्जामन्थरमारभताभिधातुम्-'इतः किल जनाद्भगवतस्त्रिवर्गबलाबलज्ञानम्। अथवैतदपि प्रकारान्तरं दासजनानुग्रहस्य। भवतु, श्रूयताम्।

(१२) ननु धर्मादृतेऽर्थकामयोरनुत्पत्तिरेव। तदनपेक्ष एव धर्मो

* बालविबोधिनी *

(११) रक्तमनुरक्तम्। तम् मरीचिम्। मूढः अज्ञः। धर्मेण सहार्थकामावपि गणयति धर्मेण सहार्थकामयोर्गणना नोचितेति भावः। अस्मयत-स्मितमकरोत्। वासु बाले। सम्बोधनमेतत्। केनांशेन कया विधया। अर्थकामौ अतिशेते श्रेष्ठत्वेनोल्लंघ्य वर्तते इति तथा। अभिप्रेतः इष्टः। इति एवं प्रकारेण। प्रेरिता अनुयुक्ता पृष्टेति यावत्। लज्जामन्थरं सव्रीडमन्दम्। क्रियाविशेषणमिदम्। इतो जनात्-अस्मान्मल्लक्षणाज्जनात्। मत्त इति यावत्। भगवतस्तव। त्रिवर्गेति-त्रिवर्गस्य धर्मार्थकामानां बलाबलयोरुत्कर्षापकर्षयोर्ज्ञानम्। मादृशजनाद् भवादृशमहर्षेस्त्रिवर्गबलाबलज्ञानमसम्भवमेव। तथापि यद्भवता जिज्ञासितं तदपि मयि भवतोऽनुग्रहस्य चिह्नमिति भावः। भवतु-यथावाऽस्तु।

(१२) धर्मादृते-धर्मेण विना। अनुत्पत्तिरभावः। तदनपेक्षः अर्थकामनि-

* बालक्रीडा *

(११) एक दिन एकान्तमें मुनिको अपनेपर आसक्त देख करके उस वेश्याने सोचा-"यह संसार कितना मूर्ख है कि, जो धर्मके साथ-साथ अर्थ और कामकी भी गणना करता है।" ऐसा विचार आनेपर उसे कुछ विस्मय भी हुआ। इसी समय महर्षि मरीचिने कहा-"हे बाले ! अर्थ और कामसे भी बढ़ करके धर्मको तुमने क्यों करके माना ?" तब वह लज्जावश धीरे-धीरे बोली-"इस दासीकी अपेक्षा आपको त्रिवर्ग (अर्थ-धर्म-काम) का बलाबल ज्ञान अधिक है। अथवा यह भी अपने सेवकोंपर कृपा करनेका एक प्रकारान्तर है। अच्छा, सुनिए

(१२) धर्मके बिना अर्थ और कामकी उत्पत्ति ही नहीं हो पाती। इसलिए

निवृत्तिसुखप्रसूतिहेतुरात्मसमाधानमात्रसाध्यश्च । सोऽर्थकामवद्बाह्यसाधनेषु नात्यायतते । तत्त्वदर्शनोपबृंहितश्च यथाकथंचिदप्यनुष्ठीयमानाभ्यां नार्थकामाभ्यां बाध्यते । बाधितोऽपि चाल्पायासप्रतिसमाहितस्तमपि दोषं निर्हृत्य श्रेयसेऽनल्पाय कल्पते ।

(१३) तथाहि पितामहस्य तिलोत्तमाभिलाषः, भवानीपतेर्मुनिपत्नीसहस्रसंदूषणम् , पद्मनाभस्य षोडशसहस्रान्तःपुरविहारः, प्रजापतेः

* बालविबोधिनी *

क्षः । निवृत्तिसुखप्रसूतिहेतुः निवृत्त्या यत् सुखं तस्य प्रसूतेरुत्पत्तेः हेतुः कारणम् मोक्षसुखनिदानम् । आत्मेति–आत्मनः स्वस्य समाधानमात्रेणैकाग्र्येण साध्यः सम्पाद्यः । सः धर्मः । बाह्यसाधनेषु लोकव्यवहारेषु । अत्यायतते आयत्तीभवतीत्यर्थः' । तत्त्वदर्शनेन यथार्थविचारेण उपबृंहितो वर्द्धितो धर्मः कथंचिदपि–केनापि प्रकारेण । अनुष्ठीयमानाभ्या सेव्यमानाभ्याम् । बाध्यते प्रतिहन्यते । अल्पायासेन स्वल्पप्रयत्नेन प्रतिसमाहितः समाधानं प्रापितः । निर्हृत्य दूरीकृत्य । अनल्पाय श्रेयसे मोक्षाय । कल्पते समर्थो भवति ।

(१३) तथाहि–यथा ब्रह्मादयो देवा अर्थकामाभ्या प्रतिहतेऽपि धर्मे पुनरप्यल्पायासेन तं दोषं परिहृत्य निरतिशयसुखं लब्धवन्तस्तदेवोदाहरणमुखेन प्रदर्श्यत इत्यर्थः । पितामहस्य ब्रह्मणः । तिलोत्तमा काचिदप्सराः । भवानीपतेः शिवस्य । संदूषणमुपभोगः । पद्मनाभस्य श्रीकृष्णस्य । अन्तःपुरं स्त्रीवर्गः ।

* बालक्रीडा *

कहा जा सकता है कि, धर्म काम और अर्थकी अपेक्षा नही करता, यह धर्म ही निवृत्ति सुखकी उत्पत्तिका मूल कारण है और चित्तकी एकाग्रता मात्रसे यह सिद्ध हो जाता है धर्म अर्थ और कामकी तरह बाह्य साधनोंके अधीन नहीं रहता। तत्त्वज्ञानसे उत्कर्षको प्राप्त धर्म किसी भी तरह यदि अर्थ और कामका अनुष्ठान करनेपर भी उनसे बाधित नहीं होता। कदाचित् उनसे बाधित हो भी जाय तो, यह तनिकसे प्रयाससे समाहित हो करके उस दोषको भी नष्ट करके,विपुल श्रेयका कारण बन जाता है।

(१३) और फिर पितामहका तिलोत्तमापर मोहित होना, शिवजीका हजारों

स्वदुहितर्यपि प्रणयप्रवृत्ति', शचीपतेरहल्याजारता, शशाङ्कस्य गुरुतल्पगमनम्, अंशुमालिनो वडवालङ्घनम, अनिलस्य केसरिकलत्रसमागमः, बृहस्पतेरुतथ्यभार्याभिसरणम, पराशरस्य दाशकन्यादूषणम्, पाराशर्यस्य भ्रातृदारसङ्गतिः अत्रेर्मृगीसमागम इति।

(१४) अमराणां च तेषु तेषु कार्येष्वासुरविप्रलम्भनानि ज्ञानबलान्न धर्मपीडामावहन्ति। धर्मपूते च मनसि नभसीव न जातु रजोऽनुषज्यते।

* बालविबोधिनी *

प्रजापतेः विधातुः। स्वदुहितरि निजकन्यायाम्। शचीपतेरिन्द्रस्य। शशाङ्कस्य चन्द्रस्य। गुरुतल्पगमनं बृहस्पतिपत्नीधर्षणम्। तल्पं शय्याट्टदारेष्विति कोषः। अंशुमालिनः सूर्यस्य। वडवा अश्वी। अनिलस्य वायोः। केसरिकलत्रेति-केसरिणस्तन्नामकवानरस्य कलत्रं स्त्री अञ्जना नाम्नी तया सह समागमः सङ्गमः। उतथ्यो नाम बृहस्पतेरग्रजः। पराशरस्य व्यासपितुः। दाशकन्या कैवर्तदुहिता योजनगन्धेति प्रसिद्धा। पाराशर्यस्य व्यासस्य। पराशरस्यापत्यं पुमानिति गर्गादिभ्यो यञ्। तस्य भ्राता विचित्रवीर्यस्तस्य दारेषु पत्नीषु संगतिः समागमः। अत्रे स्तदाख्यमहर्षेः।

(१४) अमराणां देवानाम्। आसुरविप्रलम्भनानि अधर्मत्याचरणानि। ज्ञानबलात् ज्ञानोत्कर्षात्। धर्मपीडां धर्मबाधाम्। आवहन्ति जनयन्ति। नभसि आकाशे। जातु कदाचित्। रजो रजोगुणः धूलिश्च। अनुषज्यते सम्बध्यते।

* बालक्रीडा *

मुनि पत्नियोंका धर्म बिगाड़ना, श्रीकृष्णका सोलह हजार स्त्रियोंके अन्तःपुरमें विहार करना, प्रजापतिका अपनी कन्यापर बुरी दृष्टि करना, इन्द्रका अहल्याके साथ दुराचार करना, चन्द्रमाका गुरुपत्नीको दूषित करना, सूर्यका वडवा-(घोड़ी) को धर-दबोचना, वायुका केसरी बन्दरकी पत्नीसे समागम करना, बृहस्पतिका उतथ्यकी पत्नीसे अभिसार करना, महर्षि पराशरका धीवरकी कन्याके साथ दुराचार करना, व्यासदेवका अपने भाईकी स्त्रियोंके साथ समागम करना और अत्रिभग वानका मृगीके साथ संभोग करना आदि।

(१४) इस प्रकार देवताओंके दुराचार भी ज्ञानबलसे युक्त पुरुषोंको नहीं सताते। धर्मसे पुनीत मनसे रजोगुणका समावेश उसी तरह नहीं हो पाता जैसे

तन्मन्ये नार्थकामौ धर्मस्य शततमीमपि कलां स्पृशतः इति ।

(१५) श्रुत्वैतद्दपिरुदीर्णरागवृत्तिरभ्यधात्–'अयि विलासिनि, साधु पश्यसि न धर्मस्तत्त्वदर्शिनां विपयोपभोगेनोपरुध्यत इति । किंतु जन्मनः प्रभृत्यर्थकामवार्तानभिज्ञा वयम् । ज्ञेयौ चेमौ किंरूपौ किंपरिवारौ किंफलौ च' इति ।

(१६) सा त्ववादीत्–'अर्थस्तावदर्जनवर्धनरक्षणात्मकः, कृपिपाशु-

* बालविबोधिनी *

तन्मन्य इत्यादि–अर्थकामौ धर्मस्य शततमांशेनापि समानौ न भवितुमर्हत इति मां प्रतिभातीत्यर्थः ।

(१५) एतत्–काममञ्जर्युक्तम् । ऋषिर्मरीचिः । उदीर्णा उद्रिक्ता वृद्धिं गतेति यावत् रागवृत्तिरनुरागव्यापारः कामाभिलाप इति वा यस्यासौ । अभ्यधात् कथयामास । अयि विलासिनीति सम्बोधनेन स्वानुरागप्रकटनम् । साधु सम्यक् । पश्यसि विचारयसि । तत्त्वदर्शिनां तत्त्वसाक्षात्कारवताम् । उपरुध्यते क्षीयते । जन्मनः प्रभृति–आजन्म । अर्थकामवार्त्तानभिज्ञाः अर्थकामयोर्नामापि न जानीम इति भावः । ज्ञेयौ–ज्ञातव्यौ । इमौ–अर्थकामौ । किं रूपौ कीदृशस्वरूपौ । किं परिवारौ–अनयोरङ्गभूतानि कानीत्यर्थः । केन प्रकारेणेमौ साध्याविति भावः । किं फलौ–अनयोः परिणामः कीदृश इत्यर्थः ।

(१६) सा–काममञ्जरी । अर्जनेति–अर्जनमुपार्जनं सम्पादनमिति यावत् ।

* बालक्रीडा *

आकाशमें धूल नहीं रुकती । अत एव मेरा तो, विश्वास है कि, अर्थ और काम धर्मकी सौवीं कलाको भी नहीं पहुंच सकते ।

(१५) इन बातोंको सुन करके मुनिराजकी इच्छाशक्ति प्रबल हो उठी और उन्होंने कहा–"ओ विलासिनि ! तुम्हारा कथन यथार्थ है । यह सच है कि, तत्त्वज्ञानी पुरुषोंका धर्म विषय-भोगसे नष्ट नहीं होता । लेकिन, जन्मसे लेकर आजतक हम लोग अर्थ और कामकी वातोंसे अनभिज्ञ रहते आये हैं । इसलिए यह जानना आवश्यक है कि, इनका क्या स्वरूप है, इनके कौन–कौनसे परिवार हैं और इनका क्या फल है।"

(१६) उस वेश्याने कहा–"अर्जन (संचय) वर्धन (व्यापार आदिकेद्वारा

पाल्यवाणिज्यसंधिविग्रहादिपरिवार, तीर्थप्रतिपादनफलश्च। कामस्तु विषयातिसक्तचेतसो' स्त्रीपुंसयोर्निरतिशयसुखस्पर्शविशेष। परिवारस्त्वस्य यावदिह रम्यमुज्ज्वलं च। फलं पुन परमाह्लादनम्, परस्परविमर्दजन्म, स्मर्यमाणमधुरम्, उदीरिताभिमानमनुत्तमम्, सुखमपरोक्ष स्वसंवेद्यमेव। तस्यैव कृते विशिष्टस्थानवर्तिन कष्टानि तपांसि, महान्ति

* बालविबोधिनी *

वर्धनं उपचय'। रक्षण चौरादिभ्य. पालनमेतत्स्वरूपोऽर्थ इति। कृषीति–कृषिः कर्षण पाशुपाल्य गवादिपशुपालनम् वाणिज्य वणिक्कर्म क्रयविक्रयादि, सन्धिविग्रहौ राजनीत्युक्तौ एते परिवारः परिकरा. साधनानीति यावद् यस्य सः। तीर्थेति—तीर्थे सत्पात्रे प्रतिपादन दानं फलं परिणामो यस्य सः। विषयेति–विषयेषु स्रक्चन्दनाद्युपभोग्यपदार्थेषु अतिसक्तम् अत्यन्तलग्न चेतो मानसं ययो-स्तयाविधयोः। स्त्री च पुमांश्चेति स्त्रीपुंसौ। 'अचतुर' इत्यादिना निपातात्। *निरतिशयेति–श्रेष्ठसुखसाक्षात्कारस्वरूप' आलिङ्गनादिरूप इत्यर्थ.। अस्य कामस्य।* यावत् साकल्येन। इह संसारे। रम्यं मनोहरमुज्ज्वलमुत्कृष्टञ्च। संसारे यावन्तो रमणीया उत्कृष्टाश्च पदार्थाः सन्ति सर्वं एव ते कामस्य परिवारा इति भावः। परमाह्लादन उत्कृष्टानन्दजनकम्। परस्परविमर्दजन्म–अन्योन्यालिङ्गनादिजन्यम्। स्मर्यमाणमपि मधुर—यस्य स्मरणेऽपि माधुर्य का कथा तस्य साक्षादनुभवे इति भावः। उदीरिताभिमानम्–उद्दीपिताहङ्कारम्। अनुत्तमं श्रेष्ठम्। न विद्यते

* बालक्रीडा *

उसे बढ़ाना) और उसे नष्ट होनेसे बचाना ही अर्थका तत्त्व है। कृषि (खेती) पशुपालन, व्यापार, सन्धि और विग्रह, ये ही अर्थके परिवार हैं। सत्पुरुषोंको दान देना ही अर्थका फल है। स्त्री–पुरुष वासनावश परस्पर अत्यन्त आसक्त चित्तसे जिसमें स्पर्श–सुखका अनुभव करते हैं, उसे काम कहते हैं। रमणीयता और उज्ज्वलता ही इसके परिवार हैं। इस कामका फल परमानन्द है। वह आनन्द स्त्री–पुरुषके परस्पर आलिंगन चुम्बन आदिसे उत्पन्न होता है। स्मरण करनेमें यह बड़ा ही मधुर लगता है। यह अभिमानको प्रोत्साहन देता है और आनन्दसे उत्तम वस्तु और कोई है ही नहीं। यह प्रत्यक्ष सुख अनुभवगम्य है। इसीके निमित्त स्थान विशेषमें रहनेवाले लोग तरह–तरहके कष्ट सहते, तप करते, बड़े

दानानि, दारुणानि युद्धानि, भीमानि समुद्रलङ्घनादीनि च नराः समाचरन्ति' इति ।

(१७) निशम्यैतान्नियतिवलान्नु तत्पाटवान्नु स्वबुद्धिमान्द्यान्नु स्वनियममनादृत्य तस्यामसौ प्रासजत् । सा सुदूरं मूढात्मानं च तं प्रवहणेन नीत्वा पुरमुदारशोभया राजवीथ्या स्वभवनमनैषीत् । अभूच्च घोषणा 'श्वः कामोत्सवः' इति । उत्तरेद्युः स्नातानुलिप्तमारचितमञ्जुमालमारब्ध-

* बालविबोधिनी *

उत्तमं यस्मात्तदिति विग्रहः । अपरोक्षं-प्रत्यक्षम् । स्वसंवेद्यं स्वयमेवानुभवनीयं नत्वन्यवाक्येनेति शेषः । सर्वमेतत् सुखमित्यस्य विशेषणम् । तस्यैव-सुखस्यैव । कृते निमित्तम् । विशिष्टस्थानवर्त्तिनः-प्रसिद्धतीर्थादिक्षेत्रवासिनः । नरा इत्यस्य विशेषणम् । दारुणानि भयानकानि । भीमानि भयंकराणि । समाचरन्ति-कुर्वन्ति ।

(१७) निशम्य-श्रुत्वा । एतत्-काममंजरीवाक्यम् । नियतिबलात्-दैवप्रभावात् । तत्पाटवात्-तस्याः काममंजर्याः पाटवाच्चातुर्यात् । स्वस्य मरीचेरित्यर्थः बुद्धिमान्द्यात्-मतिदौर्बल्यात् । सर्वत्र नु वितर्के । स्वनियमं-मुनिजनोचित-तपश्चरणादिकम् । अनादृत्य-परित्यज्य । तस्यां गणिकायाम् । असौ-मरीचिः । प्रासजत् आसक्तोऽभवत् । सा-काममञ्जरी अनैषीदित्यस्य कर्त्तृपदम् । सुदूरं अतिदूरवर्त्ति । पुरमित्यस्य विशेषणम् । मूढात्मानं-मुग्धचित्तम् । तं-मरीचिम् । प्रवहणेन यानविशेषेण । नीत्वेत्यस्य दुहादित्वात् तं पुरञ्चेति कर्मद्वयम् । उदारशोभया-प्रशस्तसौन्दर्यशालिन्या । राजवीथ्या-राजमार्गेण । स्वभवनं काममञ्जरीगृहम् । घोषणा डिण्डिमादिना प्रचारः । श्वः-आगामिदिने । उत्तरेद्युः-परदिने ।

* बालक्रीडा *

बड़े दान देते, भयानक युद्ध करते और विकराल समुद्र लाँघने आदिका दुष्कर कर्म करते हैं ।

(१७) उसके ये वचन सुन करके दैवबलसे, उस वेश्याके कौशलसे अथवा बुद्धि मन्द पड़ जानेके कारण उन मुनिराजने अपने नियमोंको त्याग दिया और काममंजरीमें आसक्त हो गये । तदनन्तर उस मूढ़ात्मा मुनिको कर्णीरथपर बिठा करके उत्कृष्ट शोभासम्पन्न राजवीथीसे चल करके अपने नगरके भवनमें ले गयी उसी दिन राज दरबारमें घोषणा हुई कि, 'कल कामोत्सव मनाया जायगा ।' दूसरे

कामिजनवृत्तं निवृत्तस्ववृत्ताभिलापं क्षणमात्रे गतेऽपि तया विना दूयमानं समृद्धिमता राजमार्गेणोत्सवसमाजं नीत्वा क्वचिदुपवनोद्देशे युवतिजनशतपरिवृतस्य राज्ञः सन्निधौ समासदत्। स्मितमुखेन तेन 'भद्रे' भगवता सह निषीद' इत्यादिष्टा सविभ्रमं कृतप्रणामा सस्मितं न्यषीदत्।

(१८) तत्र काचिदुत्थाय बद्धाञ्जलिरुत्तमाङ्गना 'देव, जितानया-

* बालविबोधिनी *

स्नातानुलिप्तं आदौ स्नानं पश्चादनुलिप्तत्वम्। स्नानानन्तरं चन्दनादिनालिप्तसर्वाङ्गमित्यर्थः। आरचिता परिहिता मञ्जुर्मनोहरा माला येन तम्। आरब्धं प्रक्रान्तं कामिजनस्य विलासिनो वृत्तमाचरणं येन। कामुकवद्व्यवहरन्तमित्यर्थः। निवृत्तोऽपगतः स्ववृत्तस्य निजाचारस्य तपोनुष्ठानरूपस्याभिलापो यस्य तम्। क्षणमात्रे मुहूर्तमात्रे। तया काममञ्जर्या। दूयमानं–दुःखमनुभवन्तम्। तस्या दर्शनं विना क्षणमात्रमपि स्थातुमपारयन्तमित्यर्थः। एतानि तमित्यस्य विशेषणानि। तं मरीचिम्। ऋद्धिमता—समृद्धेन। उत्सवसमाजं क्रीडासभाम्। युवतिजनेति—तरुणगणिकागणवेष्टितस्य। राज्ञः–चम्पापतेः सिंहवर्मणः। समासदत् आगतवती। तेन राज्ञा। भगवता मुनिना। निषीद–उपविश। आदिष्टा अनुमता। सविभ्रम-सविलासम्।

(१८) तत्र उत्सवसमाजे। काचिद् अनिर्दिष्टनाम्नी। देव–राजन्। अनया-

* बालक्रीडा *

दिन महर्षि मरीचिने स्नान करके सुगन्धित तेल लगाया। सुन्दर माला पहनी। इस तरह कामी पुरुषों जैसा बानक बनाया। उस समय वे अपने पूर्ववृत्त (ऋषि-जीवन) को एकदम भूल गये। क्षणमात्रके लिए भी काममंजरीका वियोग होनेसे वे विह्वल हो उठते थे। इसी समय वह वेश्या समृद्धिसम्पन्न राजमार्गसे चल करके उनको, सैकड़ों युवतियोंसे आवेष्टित महाराजके पास किसी उपवनमें विद्यमान, राजदरबारमें ले गयी। राजा काममंजरीको देख करके मुसकराये और उन्होंने कहा–"भद्रे! भगवान् मरीचिके साथ बैठो" महाराजकी यह आज्ञा पा करके उसने भावभंगीके साथ प्रणाम किया और मन्द–मन्द मुसकाती हुई बैठ गयी।

(१८) इसी समय एक उत्तम श्रेणीकी स्त्री हाथ जोड़, खड़े हो, कहने लगी,

हम् । अस्यै दास्यमद्यप्रभृत्यभ्युपेतं मया' इति प्रभुं प्राणंसीत् । विस्मयहर्षमूलश्च कोलाहलो लोकस्योदजिहीत । हृष्टेन च राज्ञा महार्हैं रत्नालंकारैर्महता च परिबर्हेणानुगृह्य विसृष्टा वारमुख्याभिः पौरमुख्यैश्च गणशः प्रशस्यमाना स्वभवनमगत्वैव तमृषिमभाषत—'भगवन्, अयमञ्जलिः, चिरमनुगृहीतोऽयं दासजनः, स्वार्थइदानीमनुष्ठेयः' इति ।

(१९) स तु रागादशनिहत इवोद्भ्राम्याब्रवीत्–'प्रिये, किमेतत् । कुत

* बालविबोधिनी *

काममञ्जर्या । अस्यै–एतदर्थम् । काममञ्जर्या इत्यर्थः । दास्यं–दासीत्वम् । अभ्युपेतम्–अङ्गीकृतम् । प्रभुं–राजानम् । प्राणंसीत्–प्रणनाम । विस्मयेति–विस्मयश्चमत्कारो हर्ष आनन्दश्चेति विस्मयहर्षौ मूलं यस्य स तथा । लोकस्य–तत्रस्थ जनसमूहस्य । उदजिहीत–उत्थितोऽभवत् । ओहाङ्गतावित्यस्य लङि रूपम् । महार्हैः–बहुमूल्यैः । परिबर्हेण राजोचितपरिच्छदेन, हस्त्यश्वादिभिरित्यर्थः । अनुगृह्य–परितोष्य काममञ्जरीमिति शेषः । विसृष्टा–गमनायानुज्ञाता । वारमुख्याभिः–श्रेष्ठवाराङ्गनाभिः । पौरमुख्यैः नागरिकप्रधानैः । गणशः–संघशः । प्रशस्यमाना अभिनन्द्यमाना काममञ्जरीति शेषः । अयमञ्जलिः–प्रणमामीति भावः । अयं दासजनः–अहमित्यर्थः स्वार्थः–स्वकीयप्रयोजनम् अनुष्ठेयः–अनुष्ठीयताम् ।

(१९) स महर्षिः । रागाद् अनुरागात् । अशनिहतो वज्राहतः । उद्भ्रम्य–

* बालक्रीडा *

हुई और बोली–"देव ! इसने मुझे जीत लिया । आजसे मैं इसकी दासी हो गयी ।" यह कह करके उसने राजाको प्रणाम किया । इसपर राज-दरबारमें आश्चर्य और हर्षभरा कोलाहल होने लगा । महाराजने प्रसन्न हो करके बेश कीमती रत्न-जटित अलङ्कार अच्छे-अच्छे वस्त्र दे करके काममंजरीको विदा किया । तब झुण्डके झुण्ड वेश्याओं और पुरवासियोंने उसकी प्रशंसा की । अपने घर पहुंचनेके पहले ही काममंजरीने मरीचिसे कहा–"भगवन् ! मैं हाथ जोड़ती हूँ । आपने इस दासीपर बड़ी कृपा की । अब जा करके आपना काम करिये ।

(१९) प्रेमातिरेकके कारण अपनी प्रियाके कठोर वचन सुन करके महर्षि इस तरह तिलमला उठे जैसे उन पर वज्र गिर पड़ा हो । उन्होंने कहा 'प्रिये !

इदमौदासीन्यम्। क्व गतस्तव मय्यसाधारणोऽनुराग.' इति। अथ सा सस्मितमवादीत्—'भगवन्, ययाद्य राजकुले मत्त पराजयोऽभ्युपेतस्तस्याश्च मम च कस्मिंश्चित्संघर्षे 'मरीचिमावर्जितवतीव श्लाघसे' इति तयास्म्यहमधिक्षिप्ता। दास्यपणबन्धेन चास्मिन्नर्थे प्रावर्तिषि। सिद्धार्था चास्मि त्वत्प्रसादात्' इति। स तया तथावधूतो दुर्मतिः कृतानुशय शून्यव-

* बालविबोधिनी *

उद्भ्रान्तो भूत्वा। कुत –कस्माद्धेतोः। औदासीन्य–विरागः। सा काममञ्जरी। यया–गणिकया। राजकुले–राजसकाशे। मत्तः मम सकाशात्। संघर्षे–विवादे। आवर्जितवतीव–वशीकृतवतीव। श्लाघसे–स्वगौरव प्रकटयसि। अधिक्षिप्ता–तिरस्कृता। दास्यमेव पणस्तस्य बन्धो दृढनियमस्तेन। यद्यह मरीचिमावर्जयितुं शक्नुयां तदा त्वं मे दासी भविष्यसि, अन्यथाऽह तव दासी भविष्यामीति पणस्य स्वरूपम्। अर्थे–विषये–भवदावर्जनरूपे इत्यर्थः। प्रावर्तिषि–प्रवृत्ता। सिद्धार्था–कृतकृत्या। सः-मरीचिः। तया–काममञ्जर्या। तथा–तेन प्रकारेण अवधूतः–तिरस्कृतः। कृतानुशयः–कथमहमनया वञ्चित इति कृतपश्चात्तापः, । शून्यवत्–शून्यहृदय इव। न्यवर्तिष्ट स्वस्थान प्रति परावृत्तोऽभवत्। यस्तपस्वी–अहमित्यर्थः। तया काममञ्जर्या। एवं कृत.–पापे निमज्जित' तमेव–मरीचिमेव। मन्य-

* बालक्रीडा *

यह क्या ? ऐसी उदासीनता तुममें क्यों आ गयी ? मुझपर तुम्हारा जो असाधारण अनुराग था, वह कहाँ चला गया ? तब उसने मुसकाकर कहा—'भगवन् ! जिस स्त्रीने राज-दरबारमें अपनी पराजय मानी है, उसके साथ किसी समय मेरा संघर्ष हो गया। उस समय उसने ताना दे करके कहा था–'ओ हो ! तुम तो, इतनी हैकड़ी दिखाती हो, मानो तुमने महर्षि मरीचिको मोहित कर लिया है।' अन्तमें जब उसने मेरी दासी होनेकी शर्त मान ली, तब मैं इस काम–(आपको मोहित करनेके काम–) में प्रवृत्त हुई। और आपकी कृपासे मनोरथ भी सिद्ध हो गया। उसकेद्वारा इस प्रकार तिरस्कृत हो करके दुर्मति मरीचि बहुत पछताये और शून्य मनसे आश्रमपर लौट आये। इस तरह जिस तपस्वीकी छीछालेदर हुई थी, हे महाभाग। वह मैं ही हूँ। उस कुलटाने अपने अर्पित

न्यवतिष्ट । यस्तयैवं कृतस्तपस्वी तमेव मां महाभाग, अवेस्व । स्वशक्तिनिषिक्तं रागमुद्धृत्य तयैव बन्धक्या महद्वैराग्यमर्पितम् । अचिरादेव शक्य आत्मा त्वदर्थसाधनक्षमः कर्तुम् । अस्यामेव तावदङ्गपुर्यां चम्पायाम्' इति

(२०) अथ तन्मनश्च्युततमःस्पर्शभियेवास्तं रविरगात् । ऋषिमुक्तश्च रागः संध्यात्वेनास्फुरत् । तत्कथादत्तवैराग्याणीव कमलवनानि समकुचन् । अनुमतमुनिशासनस्त्वहममुनैव सहोपास्य संध्यामनुरूपाभिः

* बालविबोधिनी *

स्व–जानीहि । महाभागेति सम्बोधनमपहारवर्मणः । स्वशक्तिनिषिक्तं–निजसामर्थ्यनिःक्षितम्–काममञ्जर्या स्वयमेव जनितमित्यर्थः । रागम्–अनुरागम् । उद्धृत्य–उत्पाट्य । बन्धक्या–कुलटया । महद्वैराग्यमर्पितं–रागस्थाने वैराग्यं स्थापितम् । त्वदर्थेति । तवापहारवर्मणोऽर्थस्य प्रयोजनस्य सुहृद्गतिनिर्णयरूपस्य साधने सम्पादने क्षमः समर्थः । अल्पेनैव कालेन पुनरहं पूर्वशक्ति सम्पन्नो भविष्यामीत्यर्थः । वस–तिष्ठ–प्रतिपालयेति यावत् ।

(२०) अथेति–तस्य मरीचेर्मनसो मानसाच्च्युतं गलितं यत्तमोऽज्ञानरूपं तस्य स्पर्शभिया संपर्कभयेनेवेत्युत्प्रेक्षा । रवितमसोर्वैरं प्रसिद्धमेव । ऋषिणा मरीचिना मुक्तस्त्यक्तो रागो गणिकाविषयकः सन्ध्यात्वेन सन्ध्यारूपेणास्फुरत् प्रकटीबभूव । तत्कथेति—तस्य मरीचेः कथया वार्त्तया दत्तं वैराग्यं येभ्यस्तानि । समकुचन्–संकुचितानि बभूवुः । कमलवनानां संकोचे तत्कथादत्तवैराग्यमेव कारणत्वेनोत्प्रेक्षितम् । अनुमतमङ्गीकृतं मुनेर्मरीचेः शासनमादेशो येन स तथा ।

* बालक्रीडा *

अनुरागको दूर करके मुझे असाधारण वैराग्य प्रदान किया है । शीघ्र ही मेरी आत्मा आपका कार्य साधन करनेको समर्थ हो जायगी । तबतक आप इसी अङ्गपुरीमें निवास करिये ।

(२०) इसी समय जैसे उस तपस्वीके मनसे निःसृत अज्ञानान्धकारके स्पर्शभयसे सूर्य भगवान अस्त हो गये । उन्हीं महर्षिसे परित्यक्त अनुराग संध्याके रूपमें परिणत हो गया । उनकी बातोंसे जैसे वैराग्य प्राप्त करके कमलवन संकुचित हो गया । तदनन्तर उन्हीं मुनिराजकी अनुमतिसे मैंने उनके

कथाभिस्तमनुशय्य नीतरात्रिः प्रत्युन्मिषत्युदयप्रस्थदावकल्पे कल्पद्रुमकिसलयावधीरिण्यरुणार्चिषि त नमस्कृत्य नगरायोदचलम्।

(२१) अदर्शं च मार्गाभ्याशवर्तिन कस्यापि क्षपणकविहारस्य बहिर्विविक्ते रक्ताशोकखण्डे निषण्णमस्पृष्टसमाधिमाधिक्षीणमग्रगण्यमनभिरूपाणां कृपणवर्णं कमपि क्षपणकम्। उरसि चास्य शिथिलितमलनि-

* बालविबोधिनी *

अमुना–मुनिना। अनुरूपाभि. तत्कालयोग्याभि। तमनुशय्य तेन मुनिना सह शयित्वा। नीतरात्रि–यापितनिशः। प्रत्युन्मिषति–प्रकाशमाने। उदयति सतीत्यर्थः। उदयेति–उदयः उदयपर्वतस्तस्य प्रस्थः–सानु तस्मिन्। दावकल्पे वनाग्निसदृशे। कल्पद्रुमेति–कल्पद्रुमस्य कल्पवृक्षस्य किसलयानि पल्लवानि अवधीरयति तिरस्करोतीति तस्मिन्। कल्पद्रुमपल्लवापेक्षयाधिकरक्तवर्णे इत्यर्थः। अरुणार्चिषि–अरुणा रक्तवर्णा अर्चिषो यस्य तस्मिन्–सूर्ये इत्यर्थः। तं–मुनिं नगराय नगरं गन्तुम्। उदचलं प्रस्थितोऽभवम्।

(२१) मार्गाभ्यासवर्तिनः–पथिपार्श्वस्थितस्य। क्षपणकविहारस्य–बौद्धमन्दिरस्य। विविक्ते–निर्जने पवित्रे वा। रक्ताशोकखण्डे–रक्तवर्णाशोकतरुकदम्बे। निषण्णमुपविष्टम्। अस्पृष्टेति–अस्पृष्टोऽलब्धः समाधियोगो येन त ध्यानशून्यमित्यर्थः। आधिक्षीणं मनोव्यथाभिः कृशम्। अग्रगण्य श्रेष्ठम्। अनभिरूपाणां कुरूपाणाम्। कृपणवर्णं दीनवर्णं विषण्णमिति यावत्। उरसि–वक्षसि। अस्य–

*बालक्रीडा *

साथ संध्या की। रातको उनके साथ ही सोया और तरह–तरहकी बातें करते हुए वह रात बितायी। सबेरे जब दवानलके सदृश नया कल्पवृक्षकी कोंपलोंको नीचा दिखानेवाली अरुण किरणें उदयाचलपर उदित हुई, तब मैंने उनको प्रणाम किया औ नगरकी ओर चल पड़ा।

(२१) एक स्थानपर मैंने मार्गके किनारे ही विद्यमान बौद्ध विहारके बाहर रक्त अशोक वनमें बैठे नियमहीन, मानसी पीड़ासे दुर्बल, कुरूप पुरुषोंके अग्रणी एवं अति दीन वर्ण एक बौद्ध भिक्षुको देखा। और उसकी छातीपर गिरते हुए उन आँसुओंको भी देखा जो उसके मुखकी मैल धो रहे थे। मैं उसके समीप जा बैठा और पूछा–'भगवन्! कहाँ तपस्या और कहाँ रोदन!

चयान्मुखान्निपततोऽश्रुबिन्दूनलक्षयम्। अप्राक्षं चान्तिकोपविष्टः–'क्व तपः, क्व च रुदितम्। न चेद्रहस्यमिच्छामि श्रोतुं शोकहेतुम्' इति।

(२२) सोऽब्रूत—'सौम्य, श्रूयताम्। अहमस्यामेव चम्पायां निधिपालितनाम्नः श्रेष्ठिनो ज्येष्ठसूनुर्वसुपालितो नाम। वैरूप्यान्मम विरूपक इति प्रसिद्धिरासीत्। अन्यश्चात्र सुन्दरक इति यथार्थनामा कलागुणैः समृद्धो वसुना नातिपुष्टोऽभवत्। तस्य च मम च वपुर्वसुनी निमित्तीकृत्य वैरं वैरोपजीविभिः पौरधूर्तैरुदपाद्यत। त एव कदाचिदावयोरुत्स-

* बालविबोधिनी *

क्षपणकस्य। शिथिलितेति शिथिलितो धारापातेन विस्रंसितो मलनिचयो मलराशिर्यैस्तानिति अश्रुबिन्दुविशेषणम्। शिथिलितोमलनिचयो यत्र तस्मादिति विग्रहे तु मुखादित्यस्य विशेषणमपि भवितुमर्हति न तन्मनोरमम्। अलक्षयम् अपश्यम्। अप्राक्षम्–पृष्टवानस्मि। क्व तप इति–अत्र क्व द्वयं तपोरुदितयोरसामानाधिकरण्यं सूचयति। रहस्यं गोप्यम्। शोकहेतुं शोकनिदानम्।

(२२) स-क्षपणकः। श्रेष्ठिनः–वणिक्प्रधानस्य। ज्येष्ठसूनुः ज्येष्ठपुत्रः। वैरूप्यात्–कुत्सितरूपवत्त्वाद्धेतोः। अत्र–चम्पायाम्। यथार्थेति–यथार्थं सार्थकं नाम यस्यासौ। नामानुरूपं सौन्दर्यमप्यासीदिति भावः। कलागुणैः–शिक्षामाहात्म्यैः। समृद्धः–पुष्टः। वसुना धनेन नातिपुष्टः साधारणः धनस्य प्राचुर्यं नासीदिति भावः। तस्य सुन्दरकस्य। वपुर्वसुनी–आकृतिधने। निमित्तीकृत्य कारणीकृत्य। पौरधूर्तैर्यद्वैरमुत्पादितं तत्र सुन्दरकस्य शरीरसौन्दर्यं मम धनं च कारणमासीदित्यर्थः। वैरोपजीविभिः-ये खलु द्वयोः परस्परं वैरमुत्पाद्य जीविकां

* बालक्रीडा *

यदि कोई छिपानेकी बात न हो तो, मैं आपके शोकका कारण जानना चाहता हूँ।'

(२२) उसने कहा–'हे सौम्य ! सुनिये–मैं इसी चम्पानगरीके निवासी निधिपालित नामक सेठका बड़ा बेटा वसुपालित हूँ। मैं कुरूप हूँ, इस कारण 'विरूपक' इस नामसे प्रसिद्ध था। मेरा दूसरा भाई 'सुन्दरक' नामका था। उसका यह नाम उसके अनुरूप था। क्योंकि, उसमें सभी कलाओं और गुणों का समावेश था। हाँ, धन उसके पास उतना अधिक नहीं था, सो नगरके वैरोपजीवी धूर्तोंने उसके सौन्दर्य और मेरे धनकी आड़में वैर खड़ा कर

वसमाजे स्वयमुत्पादितमन्योन्यावमानमूलमधिक्षेपवचनव्यतिकरमुपशमय्य 'न वपुर्वसु वा पुंस्त्वमूलम् , अपि तु प्रकृष्टगणिकाप्रार्थ्ययौवनो हि य स पुमान् । अतो युवतिललामभूता काममञ्जरी य वा कामयते स हरतु सुभगपताकाम्' इति व्यवास्थापयन् ।

(२३) अभ्युपेत्यावां प्राहिणुव तस्यै दूतान् । अहमेव किलामुष्याः स्म-

* बालविबोधिनी *

निर्वाहयन्ति ते चैरोपजीविनस्तैः । पौरधूर्त्तैः नागरिकवञ्चकै, । उदपाद्यत-उत्पादितम् । ते एव-पौरधूर्त्ता एव । आवयोः सुन्दरकस्य मम च । स्वयमुत्पादितं-पौरधूर्त्तैरेव प्रारब्धम् । अन्योन्येति-अन्योन्यस्य परस्परस्यावमानोऽपमान एव मूल निदान यस्य तमिति अधिक्षेपवचनव्यतिकरमित्यस्य विशेषणम् । अधिक्षेपवचनव्यतिकर-तिरस्कारसूचकवाक्यप्रपञ्चम् । उत्तरोत्तरवर्धमानमिति शेषः । उपशमय्य-शमयित्वा । न वपुरिति-शरीरेण धनेन वा पुरुषः पुरुषपदवाच्यो न भवति किन्तु यः श्रेष्ठगणिकाभिः प्रार्थनीयो भवति स एव पुरुष इति भाव. । युवतिललामभूता-तरुणी कुलालंकारस्वरूपा । सुभगपताका सौभाग्यचिह्नम् । हरतु प्राप्नोतु । व्यवास्थापयत् निर्णीतवन्तः ।

(२३) अभ्युपेत्य स्वीकृत्य तन्निर्णयमिति शेष' । आवां-सुन्दरकोऽहञ्च । प्राहिणुव-प्रेषितवन्तौ । तस्यै काममञ्जर्यै तदर्थमित्यर्थः । अमुष्या काममञ्जर्याः । स्मरोन्मादहेतुः स्मरेण कामेन य उन्माद. पारवश्यं तत्र हेतुर्निमित्तभूत.; रूपव-

* बालक्रीडा *

दिया । उन्हीं लोगोंने किसी उत्सवके अवसरपर स्वय उत्पन्न परस्पर अपमानके कारणस्वरूप तिरस्कारका उपशमन करके व्यवस्था दी 'केवल सौन्दर्य अथवा धन ही मनुष्यके पुंस्त्वका कारण नहीं हो सकता । सच्चा पुरुष तो वही हो सकता है जिसको कोई उत्तम वेश्या चाहे । इस लिए युवतियोंकी मुकुटमणिस्वरूपा काममञ्जरी तुम दोनोंमेंसे जिसे पसन्द करे, वही सौभाग्यशाली माना जाय ।' इसे अङ्गीकार करके हम दोनोंने उसके पास दूत भेजे ।

(२३) अन्तमें उस सुन्दरी काममञ्जरीने मुझको ही अपना प्रेमी चुना । जब हम दोनों एक साथ बैठे हुए थे, तब वह आयी और दोनोंमेंसे हमपर ही अपने नीलकमलनीय नेत्रोंसे कटाक्ष फेंकती हुई मेरे प्रतिद्वन्द्वीका मुख म्लान

रोन्मादहेतुरासम् । आसीनयोश्चावयोर्मामेवोपगम्य सा नीलोत्पलमयमिवापाङ्गदामाङ्गे मम मुञ्चन्ती तं जनमपत्रपयाधोमुखं व्यधत्त। सुभगंमन्येन च मया स्वधनस्य स्वगृहस्य स्वगणस्य स्वदेहस्य स्वजीवितस्य च सैवेश्वरी कृता । कृतश्चाहमनया मलमल्लकशेषः । हृतसर्वस्वतया चापवाहितः प्रपद्य लोकोपहासलक्ष्यतामक्षमश्च सोढुं धिक्कृतानि पौरवृद्धानामिह जैनायतने मुनिनैकेनोपदिष्टमोक्षवर्त्मा सुकर एष वेषो वेशनिर्गतानामित्युदीर्णवैरा-

* बालविबोधिनी *

न्तमपि सुन्दरकं विहाय धनिकतया मामेव स्वीकृतवतीति भावः । आसीनयोः उत्सव समाजे समुपविष्टयोः । उपगम्य वल्लभत्वेनाङ्गीकृत्य । सा–काममञ्जरी । नीलोत्पलमयमिव-नीलकमलरचितमिव । अपाङ्गदाम–कटाक्षपरम्पराम् । मुञ्चन्ती–विसृजन्ती । तं सुन्दरकम् । अपत्रपया लज्जया । व्यधत्त-कृतवती । आत्मानं सुभगं सौभाग्यवन्तं मन्यत इति सुभगम्मन्यस्तेन । स्वगणस्य स्वजनवर्गस्य । सैव काममञ्जर्येव । ईश्वरी स्वामिनी । अनया काममञ्जर्या । मलमल्लकशेषः–कौपीनमात्रावलम्बनः । कौपीनं मलमल्लकमिति वैजयन्ती । अपवाहितः गृहान्निष्काशितः । प्रपद्य प्राप्य । लोकोपहासलक्ष्यतां जनानामुपहासविषयताम् । पौरवृद्धानां नागरिकश्रेष्ठानाम् । जैनायतने सौगतमन्दिरे । एकेन–केनचित् । उपदिष्टेति–उपदिष्टं प्रदर्शितं मोक्षस्यापवर्गस्य वर्त्म मार्गो यस्मै तथाभूतः । सुकरः सुसाध्यः । वेशनिर्गतानां वेश्यागृहनिष्क्रान्तानाम् । उदीर्णवैराग्यः समु-

* बालक्रीडा *

के मारे नीचा कर दिया । अब मैंने अपने को सुन्दर मान करके काममंजरीको ही अपने धन, अपने घर, अपने गण, अपने शरीर और अपने जीवनतककी अधीश्वरी बना दिया । और उसने भी सर्वस्व हड़प करके मुझे कौपीनावशेष कर दिया । कुछ शेष न रहनेपर उसने मुझे घरसे निकाल दिया । संसारके लोगोंने मुझे उपहासका लक्ष्य बनाया और जब नगरके बड़े-बूढ़ोंके धिक्कार-भरे वचन सहनेमें मैं असमर्थ हो गया तब इस जैनमठमें भाग आया । यहाँ एक मुनिने मुझे मोक्षमार्गका उपदेश दिया । अब तो, मेरा यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि, वेश्याओंद्वारा तिरस्कृत पुरुषोंके लिए यह (निहंग) वेश ही

न्यस्तदपि कौपीनमजहाम्।

(२४) अथ पुनः प्रकीर्णमलपङ्कः प्रबलकेशलुञ्चनव्यथः प्रकृष्टतमक्षुत्पिपासादिदुःखः स्थानासनशयनभोजनेष्वपि द्विप इव नवग्रहो बलवतीभिर्यन्त्रणाभिरुद्वेजितः अत्यर्थमामृशम्। 'अहमस्मि द्विजातिः। अस्वधर्मो ममैष पाषण्डपथावतारः। श्रुतिस्मृतिविहितेनैव वर्त्मना मम पूर्वजाः प्रावर्तन्त।

* बालविबोधिनी *

दीपितवैराग्यः। अजहाम् अत्यजम्।

(२४) अथ–कौपीनत्यागानन्तरम्। प्रकीर्णेति—प्रकीर्णः प्रसृतो व्याप्त इति यावत् मलपङ्कः सान्द्रीभूतरजःसमूहो यत्र सः। बौद्धाना देहमार्जननिषेधात् सर्वशरीरव्याप्तमल इत्यर्थः। प्रबलेति–प्रबला अत्यधिका केशानां लुञ्चनेनोत्पाटनेन व्यथा पीडा यस्य स तथा। बौद्धाना लुञ्चनमपि प्रसिद्धम्। प्रकृष्टेति–प्रकृष्टतम अतिप्रबलं क्षुत्पिपासादिभिर्दुःखं यस्य सः। स्थानमवस्थानं, आसनमुपवेशनं, शयनं निद्रा, भोजनमशनमित्यादिकार्येषु। द्विपो हस्ती। नवग्रहः नवो नूतनो ग्रहो ग्रहणं यस्य सः। अचिरगृहीत इत्यर्थः। यन्त्रणाभिः पीडाभिः। अचिरगृहीतो हस्ती यथा शयनभोजनादिष्वपि नितरां दुःखमनुभवति तथाहमपीतिभाव। अत्यर्थामृशम् अचिन्तयम्। द्विजातिर्वैश्यः। अस्वधर्मः–स्वधर्मो नेत्यर्थः। पाषण्डेति–पाषण्डाना वैदिकाचारभ्रष्टाना पन्थाः इति पाषण्डपथस्तत्र अवतारोऽवतरणम् बौद्धमार्गानुसरणम्। पूर्वजाः–पितृपितामहादयः। प्रावर्तन्त–प्रवृत्ता अभूवन्। निन्द्यो गर्हणीयो वेषो यस्य तम्। अमन्दस्य महतो दुःखस्य-

* बालक्रीडा *

अच्छा है। इसी वास्ते मैंने कौपीनतक त्याग दी है।

(२४) कुछ समय बाद जब मेरे शरीरमें बहुत-सा मैल जम गया, केशोंमें लटें बँध जानेके कारण पीड़ा होने लगी, अत्यन्त भूख-प्याससे असह्य वेदना हुई और खड़े होने, बैठने, सोने तथा भोजनमें भी नये पकड़े हुए हाथीकी भाँति बलवती यन्त्रणाओंसे ऊब उठा, तब मैंने सोचा– मैं द्विज (वैश्य) हूँ। मेरा इस तरह पाषण्डपथपर आना भी स्वधर्मका त्याग ही है। मेरे पूर्वज श्रुति और स्मृतिविहित धर्मपथपर ही चले थे लेकिन मुझ अभागेने इस निन्द्य वेष और अतिशय दुःखदायी जीवनको अपनाया है। विष्णु, शिव और

मम तु मन्दभाग्यस्य निन्द्यवेषममन्ददुःखायतनं हरिहरहिरण्यगर्भादिदेवतापवादश्रवणनैरन्तर्यात्प्रेत्यापि निरयफलम् अफलं विप्रलम्भप्रायमीदृशमिदमधमवर्त्म धर्मवत्समाचरणीयमासीत्' इति प्रत्याकलितस्वदुर्नयः पिण्डीषण्डं विविक्तमेतदासाद्य पर्याप्तमश्रु मुञ्चामि इति ।

(२५) श्रुत्वा चैतदनुकम्पमानोऽब्रवम्–'भद्र, क्षमस्व। कंचित्कालमत्रैव निवस। निजेन द्युम्नेनासावेव वेश्या यथा त्वां योजयिष्यति तथा यतिष्ये।

* बालविबोधिनी *

क्लेशस्यायतनं स्थानम् । हरिहरेति हरिहरौ विष्णुशंकरौ हिरण्यगर्भो ब्रह्मा–तदादिदेवतानामपवादो निन्दा तस्य श्रवणस्य नैरन्तर्यं तस्मात् । अनवरतनिन्दाश्रवणात् । प्रेत्य जन्मान्तरे । निरयफलं नरकपरिणामकम् । अफलं निष्फलं अतएव विप्रलम्भप्रायं प्रायेण वञ्चनात्मकम् एतावद् विशेषणं अधर्मवर्त्मेतस्य । इदं मत्स्वीकृतम् अधर्मवर्त्म–बौद्धमतानुसरणरूपम् । धर्मवत् धर्मेण तुल्यम् । समाचरणीयं सेव्यमाश्रयणीयमिति यावत् । प्रत्याकलितेति–प्रत्याकलितश्चिन्तितः स्वस्य दुर्नयो येन सः । पिण्डीषण्डम् अशोकसमूहम् । विविक्तं विजनम् । आसाद्य प्राप्य । पर्याप्तं प्रचुरम् । अश्रु नयनजलम् । मुञ्चामि त्यजामि ।

(२५) अनुकम्पमानो दयमानः । अहमपहारवर्मेति शेषः । क्षमस्व–सहस्वं अत्रैव जैनायतने एव । निवस तिष्ठ । द्युम्नेन धनेन । हिरण्यं द्रविणं द्युम्नमित्यमरः । असौ काममञ्जरी । यथा येन प्रकारेण । योजयिष्यति युक्तं करिष्यति धनेनेति शेषः । तथा तेन प्रकारेण । यतिष्ये–चेष्टिष्ये । उपायाः साधनानि ।

* बालक्रीडा *

ब्रह्मा आदि देवताओंके अपवाद निरन्तर सुनते रहनेके कारण यद्यपि मुझे नरक फल प्राप्त हुआ है, फिर भी इस असार और जुआ चोरीसे भरे अधर्म मार्गको मैंने धर्मकी भाँति मान रखा है । इस प्रकार अपने अनाचारको सोचकरके मैं इस एकान्त अशोकवनमें आ करके पर्याप्त आँसू बहाता हूँ ।

(२५) उसका वृत्तान्त सुन करके उसपर अनुकम्पा करते हुए मैंने कहा–'भद्र, क्षमा करो और कुछ समय यहीं रहो। तबतक मैं ऐसा उपाय करूँगा कि, जिससे वही वेश्या अपना सब धन तुम्हें लौटा दे । ऐसे बहुतेरे उपाय हैं ।' इस प्रकार

मन्त्युपायास्तादृशाः' इत्याश्वास्य तमनूत्थितोऽहम् । नगरमाविशन्नेव चोपलभ्य लोकवादाल्लुब्धसमृद्धपूर्णं पुरमित्यर्थानां नश्वरत्वं च प्रदर्श्य प्रकृतिस्थानमून्विधास्यन्कर्णीसुतप्रहिते पथि मतिमकरवम् ।

(२६) अनुप्रविश्य च द्यूतसभामक्षधूर्तैः समगंसि। तेषां च पञ्चविंशतिप्रकारासु सर्वासु द्यूताश्रयासु कलासु कौशलमक्षभूमिहस्तादिषु चात्यन्त·

* बालविबोधिनी *

आश्वास्य सान्त्वयित्वा । तं विरूपकं अनु पश्चात् । अहमपहारवर्मा । आविशन् प्रविशन् । उपलभ्य ज्ञात्वा । लोकवादात् जनमुखात् । लुब्धेति-लुब्धैः धूर्तैः समृद्धैः धनशालिभिः पूर्णं व्याप्तम् । पुरं नगरम् । इत्यन्त उपलभ्येत्यस्य कर्म । नश्वरत्वं क्षयिकत्वम् । प्रदर्श्य बोधयित्वा । अमून् पौरान् । प्रकृतिस्थान् स्वभावस्थान् सन्मार्गवर्तिन इत्यर्थः । विधास्यन् । करिष्यन् । कर्णीसुतेति-कर्णीसुतः स्तेयशास्त्रप्रवर्तकस्तेन प्रहिते प्रदर्शिते । पथि मार्गे चौरशास्त्रे इत्यर्थः ।

(२६) द्यूतसभाम्-अक्षक्रीडासभाजम् । अक्षधूर्तैः-पाशकक्रीडानिपुणैः । समगंसि-तैःसह सम्मिलितोऽभवम् । गम् धातोरात्मनेपदे लुङि उत्तमपुरुषैकवचने रूपम् । समोगम्यृच्छिभ्यामित्यनेनात्मनेपदम् । तेषामक्षधूर्तानाम् । द्यूताश्रयासु द्यूतक्रीडासम्बन्धिनीषु । कलासु शिक्षासु । अक्षेत्यादि—अक्षाः पाशकाः, भूमिस्तत्पातनस्थानं, हस्तस्तत्पातनयोग्यः करस्तदादिषु । अक्षभूमिहस्तेति पाठे अक्षाणां पाशकानां भूमिप्रघूर्णनेषु ये हस्तादयोऽपेक्ष्यन्ते तेषु । अत्यन्तेति अत्यन्तं नितरां दुरुपलक्ष्याणि दुर्ज्ञेयानि दुःखेनापि ज्ञातुमशक्यानीत्यर्थः । कूटकर्माणि कपटव्यवहारान् । तन्मूलानि-कूटकर्ममूलानि । तन्निमित्तकानि वा । सावलेपानि

* बालक्रीडा *

उसे ढाढस बँधा करके मैं उठ पड़ा । नगरमें घुसते ही मैंने सुना कि, वह नगर, लोभियोंके विपुल धनसे, भरा है । बस, मैंने धनकी नश्वरता दिखा करके उन धन लोलुपोंको प्रकृतिस्थ करनेके लिए,चौर्यशास्त्रके प्रवर्तक कर्णीसुतके विहित पथपर चलनेका संकल्प किया ।

(२६) बस, सर्व प्रथम मैं जुआड़ियोंकी मण्डलीमें घुसा और कुशल जुआड़ियोंमें घुल-मिल गया । उन लोगोंकी पचीसों प्रकारकी सभी द्यूतकला·

दुरुपलक्ष्याणि कूटकर्माणि तन्मूलानि सावलेपान्यधिक्षेपवचनानि जीवितनिरपेक्षाणि संरम्भविचेष्टितानि सभिकप्रत्ययव्यवहारान्न्यायबलप्रतापप्रायानङ्गीकृतार्थसाधनक्षमान्बलिषु सान्त्वनानि दुर्बलेषु भर्त्सितानि पक्षरचनानैपुणमुच्चावचानि प्रलोभनानि ग्लहप्रभेदवर्णनानि द्रव्यसंविभागौ-

* बालविबोधिनी *

सगर्वाणि । अधिक्षेपवचनानि तिरस्कारसूचकानि वाक्यानि । जीवितनिरपेक्षाणि प्राणधारणेपि आसक्तिशून्यानि । संरम्भविचेष्टितानि कोपकार्याणि । सभिकेत्यादि-सभिकस्य द्यूतकारकस्य प्रत्ययो विश्वासस्तदुचितव्यवहारान् तद्योग्यानुष्ठानानि । कीदृशा व्यवहारा इति तद्विशिनष्टि न्यायेति-न्यायो युक्तिः, बलं सामर्थ्यं प्रतापः प्रभावः प्रायो बहुलो येषु तान् । पुनः किम्भूतान्-अङ्गीकृतस्य कर्त्तुं प्रतिज्ञातस्यार्थस्य प्रयोजनस्य साधने सिद्धौ क्षमान् योग्यान् । बलिषु बलवत्सु । सान्त्वनानि सामप्रयोगान् । भर्त्सितानि भीतिजनकवाक्यानि । पक्षरचनायां जयवतां पुरुषाणामात्मपक्षीयकरणे । नैपुणं पाटवम् । उच्चावचानि नानाविधानि । प्रलोभनानि लोभोत्पादकानि । ग्लहेति-ग्लहस्य पणस्य ये प्रभेदा विशेषास्तेषां वर्णनानि निरूपणानि । द्रव्येति—द्रव्यस्य द्यूतलब्धधनस्य संविभागे वण्टने-औदार्यं महत्त्वं स्वकीयांशत्यागादिनेति भावः । अन्तरान्तरा मध्ये मध्ये । कलकलान् कोलाहलान् । इत्येतानि-यावन्ति उक्तानि-अन्यानि-यान्यनुक्तानि । अनुभवन्-दृष्ट्वा श्रुत्वा च । तृप्तिं सन्तोषम् । नाध्यगच्छम् न प्राप्तवान् । द्यूत-

* बालक्रीडा *

की कुशलता, गोटियोंको रखनेकी जगह, अतिशय दुष्प्रेक्ष्य हाथकी सफाई, चालबाजियाँ और उनसे युक्त गर्व तथा आक्षेपभरे वाक्य, जीवनकी भी परवा न करके साहसके काम कर गुजरना, जुआ खेलानेवाले-(नालिया-) की जानकारी रहते हुए न्यायालयमें जा करके जीतने तथा प्रभावयुक्त स्वार्थसाधनके उपायोंको जानना, बलवानोंके साथ सान्त्वना देते हुए, दुर्बलोंको डाँट-फटकार बताना, ऊँची-नीची बातें करके अपना पक्ष प्रबल कर लेना, प्रलोभन देना, दांवके विभिन्न भेद बताना, जुएमें प्राप्त द्रव्यका बँटवारा करना, बीच-बीचमें गाली-गलौजका शोरगुल आदि तरह-तरहकी बातोंका सतत अनुभव करते

दयमन्तरान्तराश्लीलप्रायान्कलकलानित्येतानि चान्यानि चानुभवन्न तृप्तिमध्यगच्छम् ।

(२७) अहस च किंचित्प्रमाददत्तशारे क्वचित्कितवे । प्रतिकितवस्तु निर्दहन्निव क्रोधताम्रया दृशा मामभिवीक्ष्य 'शिक्षयसि रे द्यूतवर्त्म हासव्याजेन । आस्तामयमशिक्षितो वराकः । त्वयैव तावद्विचक्षणेन देविष्यामि' इति द्यूताध्यक्षानुमत्या व्यत्यषजत् । मया जितश्चासौ षोडशसहस्राणि दीनाराणाम् । तदर्धं सभिकाय सभ्येभ्यश्च दत्त्वार्धं स्वीकृत्योदतिष्ठम् ।

* बालविबोधिनी *

क्रीडा विना केवलदर्शनेन तृप्तिर्नोत्पद्यत इति भावः ।

(२७) किंचित्-ईषत् । प्रमाददत्तशारे-प्रमादेन अनवधानतया दत्तः स्थापितः शारः शारिका गुटिकेति यावत् , येन तथाविधे । क्वचित्-कस्मिंश्चित् । कितवे-धूर्तेद्यूतकरे । प्रतिकितवः-प्रतिकूलद्यूतकरः । निर्दहन्निव भस्मीकुर्वन्निव । क्रोधताम्रया-रोषारुणया । दृशा-नेत्रेण द्यूतवर्त्म-द्यूतमार्गम् । हासव्याजेन-हास्यच्छलेन । आस्ता तिष्ठतु । अशिक्षितः अपटुः । वराकः शोच्यः । विचक्षणेन पण्डितेन । देविष्यामि-क्रीडिष्यामि इति-एवमभिधाय । द्यूताध्यक्षानुमत्या सभिकसम्मतिपूर्वकम् । व्यत्यषजत्-द्यूतक्रीडाया संलग्नोऽभवत् । वि-अतिपूर्वकस्य षञ्ज सङ्गे इत्यस्य धातोर्लङि रूपम् । असौ प्रतिकितवः । दीनाराणां स्वर्णमुद्राणाम् । जितश्चेत्यत्र जिधातोरप्रधाने कर्मणि असावित्यत्र निष्ठाप्रत्ययः । तदर्धं विजितधनस्या-

* बालक्रीडा *

हुए मैं तृप्त नहीं होने आया ।

(२७) एक बार एक धूर्तके प्रमादवश गोटी दे देनेपर मुझे हँसी आ गयी तब उसका प्रतिपक्षी धूर्त क्रोधसे अपनी आँखें लाल करके मेरी ओर इस तरह ताकने लगा जैसे मुझे जलाकर भस्म ही कर देगा, कहने लगा 'अरे छोकरे ! हँसीके बहाने मुझे जुआ खेलना सिखाता है ! अच्छा, यह अशिक्षित खेलाड़ी अलग बैठे । तू जो अपनेको कुशल खेलाड़ी मानता है तो, आ, मैं तेरे ही साथ खेलूँगा ।' इसपर द्यूताध्यक्षकी भी अनुमति मिल गयी और वह मेरे साथ खेलने लगा । मैंने बातकी बातमें इसकी सोलह हजार अशर्फियाँ जीत लीं । उनमेंसे आधी द्यूताध्यक्षको और आधी की आधी सभ्योंको दे करके आधी

(२८) उदतिष्ठंश्च तत्र गतानां हर्षगर्भाः प्रशंसालापाः। प्रार्थयमानसभिकानुरोधाच्च तदगारेऽत्युदारमभ्यवहारविधिमकरवम् । यन्मूलश्च मे दुरोदरावतारः स मे विमर्दको नाम विश्वास्यतरं द्वितीयं हृदयमासीत् । तन्मुखेन च सारतः कर्मतः शीलतश्च सकलमेव नगरमवधार्य धूर्जटिकण्ठकल्माषकालतमे तमसि नीलनिवसनार्धोरुकपरिहितो बद्धतीक्ष्णकौक्षेयकः

* बालविबोधिनी *

र्धम् । स्वीकृत्य स्वयं गृहीत्वा । उदतिष्ठम् उत्थितोऽभवम् ।

(२८) तत्र गतानां—द्यूतसमाजस्थितानाम् । हर्षगर्भाः आनन्दमिश्राः । प्रशंसालापाः प्रशंसासूचकवाक्यानि । प्रार्थयमानेति—प्रार्थयमानस्य ममगृहे त्वया भोक्तव्यमिति प्रार्थनां कुर्वतः सभिकस्य द्यूताध्यक्षस्यानुरोधात् प्रार्थनानुसारेण। तदगारेऽभिकगृहे । अत्युदारमत्युत्कृष्टम् । अभ्यवहारविधिं भोजनव्यापारम् । यन्मूलः यन्निमित्तकः । दुरोदरावतारः-द्यूतक्रीड़ाप्रवेशः । विश्वास्यतर मत्यन्तविश्वासभाजनम् । द्वितीयं हृदयं परममित्रम् । तन्मुखेन विमर्दकसाहाय्येन । सारतो बलात् । कर्मतोऽनुष्ठानात् । शीलतः स्वभावाच्च । अवधार्य-के कीदृक्सारवन्तः कर्मवन्तः स्वभाववन्तश्चेति निश्चित्य । धूर्जटीति-धूर्जटेर्महादेवस्य , कण्ठेगले यत्कल्माषं कालिमा तद्वत् कालतमेऽतिकृष्णवर्णे । अतिघोरे इति भावः । तमस्यन्धकारे। नीलेति—नीलं कृष्णवर्णं यन्निवसनं वस्त्रं तस्य यदर्धोरुक मर्धोरुव्यापि अवगुण्ठनं तत्परिहितमाच्छादितं येन सः । नीलवस्त्राच्छादितशरीरः। निष्ठान्तस्य

* बालक्रीडा *

अशर्फियां अंटीमें कीं और उठ खड़ा हुआ ।

(२८) मेरे उठनेके साथ ही वहांपर विद्यमान सब लोगोंके सहर्ष प्रशंसाभरे वचनोंसे कोलाहल-सा मच गया । द्यूताध्यक्षके पुनः पुनः प्रार्थना करनेपर मैंने उसीके घर जा करके अतिशय उदारतापूर्वक भोजन किया । जिसकी बदौलत मैं इस द्यूतकर्ममें प्रवृत्त हुआ था, वह 'विमर्दक' नामका मेरा अति विश्वसनीय दूसरे हृदयके समान अभिन्न मित्र था । उसीकी जबानी मैंने अपने बल, कर्म और शीलसे सारे शहरको अपनी अच्छाईका विश्वास दिला दिया । तदनन्तर जब श्रीशिवजीके कण्ठकी तरह काला अन्धकार छा गया, तब नीले रंगका अर्धोरुक (लबादा) पहना । कमरमें अति तीक्ष्ण तलवार बांधी ।

फणिमुखकाकलीसंदंशकपुरुषशीर्षकयोगचूर्णयोगवर्तिकामानसूत्रकर्कटकरज्जुदीपभाजनभ्रमरकरण्डकप्रभृत्यनेकोपकरणयुक्तो गत्वा कस्यचिल्लुब्धेश्वरस्य गृहे संधिं छित्त्वा पटभाससूक्ष्मच्छिद्रालक्षितान्तर्गृहप्रवृत्तिरव्यथो निजगृहमिवानुप्रविश्य नीवीं सारमहतीमादाय निरगाम् ।

* बालविबोधिनी *

पर्यनिपात । कौक्षेयकः खड्गः । फणिमुखेति—अग्रे वक्ष्यमाणानि सर्वाण्येव चौर्यसाधनान्युपकरणानि । फणिमुखः फणिनो मुखमिव मुखं यस्य तत् । सुरङ्गाखननसाधनमस्त्रविशेषः । काकली-काकचञ्च्वाकारयन्त्रविशेषः कर्तरीति प्रसिद्धः । सन्दंशकः दृढनिखातकीलोत्पाटनार्थं यन्त्रविशेषः सांड़सीति भाषा । पुरुषशीर्षकं पुरुषमस्तकाकारकाष्ठमयशिरः परीक्षार्थं सुरङ्गाया प्रथमप्रवेशनार्थम् । योगचूर्णं निष्यन्नौषधिमूलादिचूर्णं गृहस्थानां गभीरनिद्रावेशसाधनम् । योगवर्तिका अग्निं विना आलोकसाधनम् । मानसूत्रं प्रमाणरज्जुः, कर्कटकः कुलीराकृतियन्त्रविशेषः । रज्जुः सौधाग्रारोहणार्थम् । दीपभाजनमालोकाधारः, भ्रमरकरण्डकः दीपनिर्वापणार्थं शलभभाण्डम्-इत्यादिभिरनेकैरुपकरणैर्युक्तः, अहमिति शेषः । लुब्धेश्वरस्य-लुब्धधनिकस्य धूर्तप्रधानस्य वा । संधिं इष्टकासंयोगम् । पटभासेति—पटभासो गवाक्षजालं तस्य सूक्ष्मेण छिद्रेण विवरेण आलक्षिता दृष्टा अन्तर्गृहे गृहमध्ये स्थितानां प्रवृत्तिर्वृत्तान्तो येनासौ । अव्यथः अश्रान्तः । नीवीं मूलधनम् । सारमहतीं सारेण श्रेष्ठरत्नादिना महतीं महामूल्यवतीम् । निरगाम् निरगच्छम् ।

* बालक्रीडा *

सेंध लगानेवाली खनरी, कैंची, सँड़सी, काष्ठ-निर्मित पुरुषका मस्तक, योगवर्तिका, (जिसके जलानेपर सर्प दीख जाते हैं) नापनेका फीता यन्त्रसाधन, रस्सी, दीपपात्र, भ्रमरकरण्डक (दीपक बुझानेवाले भौंरोंसे भरी पेटी) आदि अनेक प्रकारकी सामग्रियां ले करके गया और एक लोभी धनीके घरमें सेंध लगायी । वहां पहले मैंने झरोखेके सूक्ष्म छिद्रसे घरकी सारी स्थिति भलीभांति देख ली और तब बिना हिचकके अपने घरके समान घुस गया तथा एक बहुमूल्य करधनी चुरा करके निकल आया ।

(२६) नीलनीरदनिकरपीवरतमोनिविडितायां राजवीथ्यां झटिति शतह्रदासंपातमिव क्षणमालोकमलक्षयम् । अथासौ नगरदेवतेव नगरमोपरोपिता निःसंबाधवेलायां निःसृता संनिकृष्टा काचिदुन्मिषद्भूषणा युवतिराविरासीत् । 'कासि वासु, क यासि' इति सदयमुक्ता त्रासगद्गदमगादीत्—'आर्य, पुयस्यामर्यवर्यः कुबेरदत्तनामा वसति । अस्म्यहं तस्य कन्या । मां जातमात्रां धनमित्रनाम्नेऽत्रत्यायैव कस्मैचिदिभ्यकुमारायान्वजानाद्भार्यां मे पिता । स पुनरस्मिन्नत्युदारतया पित्रोरन्ते वित्तैर्निजैः क्षी-

* बालविबोधिनी *

(२६) नीलेति—नीलाः कृष्णा ये नीरदा मेघास्तेषां निकरः समूहस्तद्वत् पीवरं सान्द्रं यत्तमोऽन्धकारस्तेन निविड़ितायाम् व्याप्तायाम् । राजवीथ्यां राजमार्गे । शतह्रदासम्पातं विद्युत्स्फुरणम् । क्षणं मुहूर्तं यावत् । आलोकं ज्योतिः । असौ—अग्रतो निर्दिष्टा । नगरदेवतेव—नगराधिष्ठात्री देवीव । कीदृशी सेति विशिनष्टि नगरमोपेति—नगरस्य पुरस्य मोषेण अपहरणेन रोपिता कोपिता । नगरस्य यत्सारधनं मयापहृतं तेन नगराधिष्ठात्र्याः कोपः सञ्जात इति भावः । निःसम्बाधवेलायां जनसंकटरहितसमये । संकटं नातु संबाध इति कोषः । निःसृता—गृहान्निर्गता । सन्निकृष्टा—समीपस्थिता । उन्मिषद्भूषणा दीप्यमानालङ्कारा । उन्मिषन्ति भूषणानि यस्याः सेति विग्रहः । आविरासीत्-प्रकटीबभूव । उक्ता पृष्टा मयेति शेषः । त्रासगद्गदं भीतिभिन्नस्वरम् । पुरि नगरे । अर्यवर्यः वैश्यश्रेष्ठः । अर्यः स्वामिवैश्ययोरिति निपातः । जातमात्रां जन्मसमये एव । अत्रत्याय-

* बालक्रीडा *

(२६) बाहर काले बादलोंके कारण अतिशय घने अन्धकारयुक्त राजमार्गमें एकाएक बिजलीकी चमक जैसी चमकती ज्योतिको मैंने देखा । इसके बाद वह, नगरमें चोरी होनेसे रुष्ट नगरदेवीकी नाईं, इस सुनसानके समय घरसे निकल करके, जब मेरे समीप आयी, तब मैंने देखा कि, वह एक युवती स्त्री है और उसके शरीरपर विविध आभूषण आभूषित हो रहे हैं । मैंने सदय बनकरके उससे पूछा—'देवि ! तुम कौन हो ? कहां जा रही हो ?' अब जैसे मारे भयके गद्गदवाणीमें उसने कहा—'आर्य ! इस पुरीमें वैश्यवर्य कुबेरदत्त रहते हैं । मैं उनकी पुत्री हूँ । मैं जन्मी, तैसे ही मेरे पिताने यहांके निवासी एक धनी

त्वेवार्थिवर्गाद्दारिद्र्य दरिद्राति सत्यथोदारक इति च प्रीतलोकाधिरोपिता-
परश्लाघ्यनामनि वरयत्येव तस्मिन्मां तरुणीभूतामधन इत्यदर्त्वार्थ-
पतिनाम्ने कस्मैचिदितरस्मै यथार्थनाम्ने सार्थवाहाय दित्सति मे पिता।
तदमङ्गलमद्य किल प्रभाते भावीति ज्ञात्वा प्रागेव प्रियतमदत्तसंकेता
वञ्चितस्वजना निर्गत्य बाल्याभ्यस्तेन वर्त्मना मन्मथाभिसरा तदगारम-

* बालविबोधिनी *

एतद्देशोत्पन्नाय। इभ्यकुमाराय—धनिकपुत्राय भार्याम् अन्वजानात्—पत्नीत्वेन दातुं प्रतिज्ञातवान्। स. मम पिता। अस्मिन् धनमित्रे। अत्युदारतया—दानशौण्डतया पित्रो मातापित्रोः। अन्ते अवसाने मरणानन्तरमित्यर्थ। निजैः स्वकीयैः। वित्तैर्धनै। अर्थिवर्गाद् याचकसमूहात्। दारिद्र्य दरिद्रताम्। क्रीत्वेव गृहीत्वेव। दरिद्राति सति दारिद्र्यमनुभवति सति। अतिदातृत्वेनार्थिभ्यः स्वधन वितीर्य स्वयमेव दरिद्रोऽभवदिति भाव। प्रीतेति—प्रीतेन सन्तुष्टेन लोकेन जनेनाधिरोपितं दत्तम् उदारक इत्यपरमन्यत् श्लाघ्य प्रशंसनीय नाम अभिधान यस्य तस्मिन्। वरयति प्रार्थयति। तस्मिन् धनमित्रे। अधनो नि॰स्व इति कारणात्। इतरस्मै अन्यस्मै। यथार्थनाम्ने वस्तुतो धनिकायेति भावः। सार्थवाहाय वणिजे। दित्सति दातुमभिलषति। तदमङ्गलम्—अर्थपतये मद्दानरूपमशुभ कर्म। भावि-भविष्यति। प्रागेव—दानात्पूर्वमेव। प्रियतमेन धनमित्रेण दत्तः कृतः संकेतो यस्यै सा। वञ्चितः प्रतारितः स्वजन आत्मीयवर्गो यया सा। निर्गत्य स्वगृहादिति शेषः।

* बालक्रीडा *

वैश्यपुत्रके साथ मेरा विवाह करनेका संकल्प कर लिया था। माता-पिताके गुजर जानेपर उस वैश्यकुमारने अपना सब धन याचकोंको दे करके उनकी दरिद्रता मोल ले ली और गरीबीके दिन बिता रहा है। इन्हीं लोगोंने उसको 'उदारक' यह उपाधि दे दी है। वह श्लाघनीय नामवाला वैश्य मुझ तरुणी-के साथ विवाह करना चाहता है। किन्तु, मेरे पिता धनहीन समझ करके उसके साथ मेरा विवाह न करके अर्थपति नामक किसी धनी और विदेशी वैश्यके साथ मेरा विवाह करना चाहते हैं। यह अमंगल सवेरे ही होनेवाला है, यह पता पा करके मैं अपने प्रियतमके पूर्व संकेतानुसार, अपने कुटुम्बवालोंसे आँख बचा-करके. अभी ही निकल पड़ी और बाल्यकालसे अभ्यस्त मार्गसे उसके घर जा

भिसरामि तन्मां मुञ्च । गृहाणैतद्भाण्डम्' इत्युन्मुच्य मह्यमर्पितवती ।

(३०) दयमानश्चाहमब्रवम्—'एहि साध्वि, त्वां नयेयं त्वत्प्रियावसथम्' इति त्रिचतुराणि पदान्युदचलम् । आपतच्च दीपिकालोकपरिलुप्यमानतिमिरभारं यष्टिकृपाणपाणि नागरिकबलमनल्पम् । दृष्ट्वैव प्रवेपमानां कन्यकामवदम्—'भद्रे, मा भैषीः । अस्त्ययमसिद्वितीयो मे बाहुः । अपि तु मृदुरयमुपायस्त्वदपेक्षया चिन्तितः । शयेऽहं भावितविषवेगवि-

* बालविबोधिनी *

बाल्याभ्यस्तेन–परिचितेन । मन्मथाभिसरा–मदनसहाया । तदगारं धनमित्रगृहम् । अभिसरामि गच्छामि । भाण्ड मलङ्कारजातम् । उन्मुच्य स्वदेहादुत्तार्य ।

(३०) दयमानः कृपायुक्तः । नयेयं प्रापयेयम् । त्वत्प्रियावसथं त्वद्दयितगृहम् । त्रिचतुराणि–त्रीणि चत्वारि वा । उदचलं चलितवान् । आपतत्–एतदन्तरे समागच्छत् । नागरिकबलमित्यनेन सम्बध्यते । दीपिकेति दीपिकायाः हस्तदीपस्य 'मशाल्' इति भाषाप्रसिद्धस्यालोकेन प्रकाशेन परिलुप्यमानो नाश्यमानस्तिमिरभारोऽन्धकारसमूहो यत्रेति क्रियाविशेषणम् । यष्टिर्दण्डः कृपाणः खड्गस्तौ पाणौ यस्य तत् । नागरिकबलस्य विशेषणमेतत् । बलं सैन्यम् । अनल्पं बहु । प्रवेपमानां भयेन कम्पमानाम् । असिद्वितीयः खड्गसहायः । असिर्द्वितीयो यस्येति विग्रहः । अपि तु–किन्तु । मृदुः–कोमलः । त्वदपेक्षया भवत्यां अनुरोधेन । चिन्तितः स्थिरीकृतः । शये–सुप्तो भवामि । भावितेति–भाविता प्रकटिता विषस्य

* बालक्रीडा *

रही हूँ । इसलिए आप मुझे छोड़ दें और मेरे पास जो भाण्ड है, उसे आप ले लें ।' ऐसा कह करके उसने मुझे वह भाण्ड अर्पण कर दिया ।

(३०) अब मुझे उसपर दया आ गयी और मैंने कहा—'हे साध्वि ! आओ, मैं तुम्हें तुम्हारे प्रियतमके घर पहुँचा दूँ ।' यों कह करके मैं तीन-चार कदम चला होगा कि, इतनेमें दीपकके प्रकाशसे अन्धकार राशिको दूर करता हुआ हाथमें लाठी और तलवार लिये नागरिकोंका एक बड़ा झुण्ड आ पहुँचा । उसे देखते ही मारे भयके कांपनेवाली उस कन्यासे मैंने कहा—'मत डरो । मेरे भी भुजायें हैं और भुजाओंमें तलवार है । तथा तुम्हारे अनुरोधसे मैंने एक उपाय सोच लिया है । मैं बनावटी विषवेगसे व्याकुल हो करके यहां लेट

क्रिय । त्वयाप्यमी वाच्या. 'निशि वयमिमा पुरीं प्रविष्टा. । दृष्टश्च ममैष नायको दर्वीकरेणामुष्मिन्सभागृहकोणे । यदि व कश्चिन्मन्त्रवित्कृपालु स एनमुज्जीवयन्मम प्राणानाहरेदनाथाया' इति ।

(३१) सापि बाला गत्यन्तराभावाद्भयगद्गदस्वरा बाष्पदुर्दिनाक्षी बद्धवेपथु कथंकथमपि गत्वा मदुक्तमन्वतिष्ठत् । अशयिषि चाहं भावितविषविक्रिय । तेषु कश्चिन्नरेन्द्राभिमानी मां निर्वर्ण्य मुद्रातन्त्रमन्त्रध्यानादिभिश्चोपक्रम्याकृतार्थे, 'गत एवायं कालदष्ट । तथा हि स्तब्धश्या-

* बालविबोधिनी *

वेगेन विक्रिया विकारो येन सः। विषमूर्च्छितमिवात्मानं दर्शयामीति भावः। अमी उपस्थिता जनाः। वाच्याः कथनीयाः। नायको वल्लभ. । दर्वीकरेण सर्पेण। व युष्माकं मध्ये। मन्त्रवित् मन्त्रौषधिज्ञः। आहरेद् उद्धरेत्।

(३१) गत्यन्तराभावात् उपायान्तरासत्वात् । बाष्पदुर्दिनाक्षी–अश्रुपूर्णनयना। बद्धवेपथुः सञ्जातकम्पा। अन्वतिष्ठत्–यथा मयोक्तं तथैव कृतवती। अशयिषि शयितोऽभवम्। तेषु नागरिकेषु। नरेन्द्राभिमानी–विषवैद्यम्मन्य. । नरेन्द्रो वार्त्तिके राज्ञि विषवैद्येऽपीति कोष. । मां शयितमपहारवर्माणम्। निर्वर्ण्य–सावधानं निरीक्ष्य। मुद्रेति–मुद्रातन्त्रादिप्रयोगैः। उपक्रम्य चिकित्सामारभ्य। अकृतार्थे. अकृतकार्यः। विषापनयनं कर्तुमपारयन्नित्यर्थः। गतः मृतः। कालदष्टः कालेन मृत्युना दष्टो भक्षित. । मरणचिह्नानि दर्शयति तथाहीति–

* बालक्रीडा *

जाता हूँ। ये आयें तो कहना कि, 'हम परदेशी हैं और इसी रात इस नगरीमें आये हैं। इस सभागृहके कोनेमें मेरे पतिको सापने काट लिया है। आप लोगोंमेंसे कोई दयालु यदि मंत्र जानता हो तो, इसे जीवित करके मुझ अनाथिनीके प्राणोंको बचा ले।

(३१) और कोई उपाय न देखकर उस तरुणीने, भी भयसे गद्गदस्वरमें आसू बहाती हुई, काँपती-काँपती मेरे कथनका अनुसरण किया। अब मैं बनावटी विषके विकारसे व्याकुल होकर लोट गया। तदनन्तर उनमेंसे अपनेको वैद्य माननेवाले एक पुरुषने मुझे भली भाँति देखा और मुद्रा, तन्त्र, मन्त्र तथा ध्यान आदिकेद्वारा अनेक उपाय करके भी असमर्थ रहा, तब उसने

वमङ्गम् , रुद्धा दृष्टिः, शान्त एवोष्मा । शुचालं वासु, श्वोऽग्निसात्करिष्यामः । कोऽतिवर्तते दैवम्' इति सहेतरैः प्रायात् ।

(३२) उत्थितश्चाहमुदारकाय तां नीत्वाब्रवम्—'अहमस्मि कोऽपि तस्करः । त्वद्गतेनैव चेतसा सहायभूतेन त्वामिमामभिसरन्तीमन्तरोपलभ्य कृपया त्वत्समीपमनैषम् । भूषणमिदमस्याः' इत्यंशुपटलपाटितध्वान्तजालं तदप्यर्पितवान् । उदारकस्तु तदादाय सलज्जं च सहर्षं च ससं-

* बालविबोधिनी *

स्तब्धं निश्चलं श्यावं धूम्रवर्णमङ्गं शरीरम् । दृष्टि दर्शनशक्तिः रुद्धा नष्टा । उष्मा शरीरतापः । शान्तोऽपगतः । शुचा शोकेनालं प्रयोजनन्नास्ति । श्वः आगामि दिने । अग्निसात्करिष्यामः धक्ष्यामः । अतिवर्त्तते-अतिक्रामति । इति-इत्युक्त्वा । इतरै रन्यैः । प्रायादगच्छत् ।

(३२) उदारकाय तां नीत्वा-तां कन्यामुदारकसमीपं प्रापय्य । त्वद्गतेन त्वत्पक्षपातिना । चेतसा—हृदयेन । सहायभूतेन सहायकेन । स्वहृदयमेव सहायीकृत्येत्यर्थः । त्वां भवत्समीपम् अभिसन्तीम् आगच्छन्तीम् इमां भवत्पत्नीम् । अन्तरा मार्गमध्ये । उपलभ्य प्राप्य । कृपया दयया । अनैषम्-आनीतवानस्मि । इति इदमुक्त्वा । अंशुपटलेति अंशुपटलेन किरणसमूहेन पाटितं नाशितं ध्वान्तजालमन्धकारसमूहो येन तत् । तदपि-भूषणमपि । तदादाय-भूषणं गृहीत्वा । सलज्जं सव्रीड़म् । सहर्षं सानन्दम् । ससम्भ्रमं साश्चर्यम् । सलज्ज-

* बालक्रीडा *

कहा—'इसे सर्पने नहीं, बल्कि कालने काटा है, इसलिए अब यह चल बसा इसके सब अङ्ग शिथिल और श्याम हो गयेहैं । आँखें पथरा गयी हैं और शरीर ठण्ढा पड़ गया है । देवि ! शोक करना व्यर्थ है । सवेरे हम लोग आकर इसे जला देंगे । विधिके विधानको भला कौन मेट सकता है ?' यों कहकर वह अपने साथियोंके साथ चला गया । तब मैं भी उठा और उस कन्याको उदारकके पास ले जाकर कहा—'आर्य ! मैं एक चोर हूं । तुम्हारेमें इस कन्याका मन लगा हुआ था, उसी मनका सहायक बनकर, मार्गमें मिली हुई, इस कन्याको तुम्हारे समीप ले आया हूँ । ये इसके गहने हैं ।' ऐसा कहकर अपनी दीप्तिसे अन्धकार राशिको नष्ट करते हुए उन आभूषणोंको उसे दे दिया । उसे

श्रम च मामभापत—'आर्य, त्वयैवेयमस्या निशि प्रिया मे दत्ता। वा क्पुनर्ममापहृता। तथा हि न जाने वक्तु त्वत्कर्मैतदद्भुतमिति। ननु ते स्वशीलमद्भुतवत्प्रतिभाति। नैवमन्येनापि कृतपूर्वमिति प्रतिनियतैव वस्तुशक्ति'। न हि त्वय्यन्यदीया लोभादय। त्वयाद्य साधुतोन्मीलितेति तत्प्रायस्त्वत्पूर्वावदानेभ्यो न रोचते। दृष्टमिदानीमौदार्यस्य स्वरूपमिति

* बालविबोधिनी *

मित्यत्र स्वरहस्यज्ञान लज्जाया', महर्षमित्यत्र अद्भुतोपायेन प्रियाप्राप्ति हर्षस्य समम्भ्रममित्यत्र च तस्करस्यालौकिककर्मदर्शनं सम्भ्रमस्य कारणम्। एतानि च अभापतेति क्रियाविशेषणानि। मे मह्यम्। अपहृता गृहीता। अत्र प्रियाविनिमयेन वागपहरणात् परिवृत्तिरलङ्कारः। परिवृत्तिर्विनिमयो न्यूनाभ्यधिकयोर्मिथ- इति लक्षणात्। मम वचनसामर्थ्यं नास्ति इति यदुक्तं तदेव विशदयति–तथाहीत्यादिना। एतत्त्वत् कर्म–प्रियादानरूपमद्भुतमाश्चर्यजनकमिति वक्तु नजाने वचनसामर्थ्यं मम नास्ति। तादृशशक्तेरभावात्। न जाने इत्यनेनानन्तरोक्ताना मर्वेषामित्यन्तवाक्यानामन्वय'। ते तव स्वशीलं स्वभावः चोरस्यापि भूगादि- समर्पणरूपः अद्भुतमिव प्रतिभाति। एवमीदृश कर्म अन्येनापि भवद्व्यतिरिक्तेनापि न कृतपूर्वं पूर्वं नाचरितमित्यपि वक्तुं न जाने यतो वस्तुशक्तिः पदार्थस्वभाव' प्रतिनियता तत्तद्व्यक्तिनिष्ठैव। एकस्य शक्तिरेकत्रैव तिष्ठति नान्यत्रात एतादृश कर्म पूर्वमन्येन न कृतमिति वचनस्यावसरोऽपि नास्तीति भावः। अन्यदीया अन्यपुरुषसाधारणाः लोभादयस्त्वयि न सन्ति नोपलभ्यन्ते। अद्य साम्प्रतं साधुता सज्जनता उन्मीलिता प्रकटीकृतेति यत्तत् प्रायो बाहुल्येन त्वत्पूर्वावदानेभ्य. पूर्वकृतमहाकर्मभ्यो न रोचते स्वदते। पूर्वमपि भवता ईदृशानि

* बालक्रीडा *

लेकर उदारकने लज्जा, हर्ष और घबड़ाहटभरी वाणीमें कहा—'आर्य ! तुम्होंने इस रातके समय मेरी प्रियाको मेरे पास पहुँचाया है। तुमने अपने कार्यसे मेरी जबान ही बन्द कर दी है। कुछ सूझता ही नहीं कि, क्या कहकर मैं तुम्हारे इस अद्भुत कार्यकी सराहना करूँ। नि:सन्देह तुम्हारा स्वभाव विचित्र है। यह तो निश्चित ही है कि, किसी चोरने कभी ऐसा नहीं किया है। और लोगोंके समान तुम्हारेमें लोभ आदि दुर्गुण नहीं हैं। तुमने आज जिस

त्वदाशयमननुमान्य न युक्तो निश्चयः। त्वयामुना सुकृतेन क्रीतोऽयं दासजन इत्यसारमतिगरीयसा क्रीणासीति स ते प्रज्ञाधिक्षेपः। प्रियादानस्य प्रतिदानमिदं शरीरमिति तदलाभे निधनोन्मुखमिदमपि त्वयैव दत्तम्। अथवैतावदत्र प्राप्तरूपम्। अद्यप्रभृति भर्तव्योऽयं दासजनः' इति मम पादयोरपतत्।

* बालविबोधिनी *

कर्माणि न कृतानीत्यपि वक्तुं नाभिलषामीति भावः। अवदानं कर्मवृत्तमिति कोषः। औदार्यस्य उदारतायाः स्वरूपमिदानीं दृष्टमित्यपि वक्तुं न जाने यत स्त्वदाशयं भवदभिप्रायम् अननुमान्य सम्यगविदित्वा निश्चयो निर्णयो न युक्त उचितः। सुकृतेन सुकर्मणा। दासजनः सेवकः। क्रीतः स्वाधीनीकृतः इत्यपि वक्तुं न जाने यतोऽति गरीयसा अतिमहता वस्तुनेति शेषः असारं निकृष्टं वस्त्विति शेषः क्रीणासीति यत्तदपि ते प्रज्ञाधिक्षेपः बुद्धेर्निन्दा। न कोऽपि सचेता उत्कृष्टेन वस्तुना निकृष्टं क्रीणातीति भावः। प्रतिदानं प्रतिरूपदानम् इदं मम शरीर मित्यपि वक्तुं न पारयामि यतः तदलाभे प्रियाया अप्राप्तौ निधनोन्मुखं मरणायोद्यतमिदं शरीरं भवतैव मह्यं दत्तमतः कथमेतत्प्रतिदानं भवितुमर्हति। मच्छरीरं भवदीयमेवेति भावः, एतावत्–इति कथनमेवात्र प्राप्तरूपं युक्तियुक्तम्। भर्तव्यः पालनीयः। इति–इति कथयित्वा।

* बालक्रीडा *

सज्जनताका परिचय दिया है, उससे तुम्हारे पूर्वकृत्य-(चोरी आदि-) का मेल नहीं खाता। इस समय तो, मैंने तुममें उदारताका प्रत्यक्ष स्वरूप देख लिया है। तुम्हारा अभिप्राय समझे बिना कोई निश्चय कर लेना उचित न होगा। 'तुमने अपने सुकृतसे इस दासको मोल ले लिया है' यदि यह कहूँ तो तुम्हारी बुद्धिकी निन्दा होगी। तुमने मुझे जो मेरी प्रियतमा दी है, उसके बदलेमें मेरा यह शरीर अर्पित है। यदि यह न मिली होती तो, यह शरीर भी न रह जाता। अत एव शरीर भी तुम्हींने दिया है। अस्तु, यह बहुत ही अच्छा हुआ। आजसे आप अपने इस दासपर दया रखियेगा।' यों कहकर वह मेरे पैरोंपर गिर पड़ा।

(३३) उत्थाप्य चैनमुरसोपश्लिष्याभाषिषि—'भद्र, कास्ते प्रतिपत्तिः' इति। सोऽभ्यधत्त—'न शक्नोमि एनामत्र पित्रोरनभ्यनुज्ञयोपयम्य जीवितुम्। अतोऽस्यामेव यामिन्यां देशमिमं जिहासामि। को वाहम्, यथा त्वमाज्ञापयसि' इति। अथ मयोक्तम्—'अस्त्येतत्। स्वदेशो देशान्तरमिति नेयं गणना विदग्धस्य पुरुषस्य। किन्तु बालेयमनल्पसौकुमार्या। कष्टाः प्रत्यवायभूयिष्ठाश्च कान्तारपथाः। शैथिल्यमिव किञ्चित्प्रज्ञासत्त्वयोरनर्थेनेदृशेन देशत्यागेन सम्भाव्यते। तत्सहानया सुखमि-

* बालविबोधिनी *

(३३) उत्थाप्य पादपतनादिति शेषः। एनं धनमित्रम्। उरसा वक्षसा। उपश्लिष्य-आलिङ्ग्य। अभाषिषि-उक्तवानस्मि। प्रतिपत्तिः-कर्तव्यबुद्धिः। अभ्यधत्त अकथयत्। एनां-कुबेरदत्तकन्याम्। पित्रोः तन्मातापित्रोः। अनभ्यनुज्ञया अननुमत्या। उपयम्य विवाह्य। जिहासामि त्यक्तुमिच्छामि। को वाहं एतत्करणे मम प्रभुत्वं नास्तीत्यर्थः। अस्त्येतत्-सत्यमेव त्वयोक्तम्। देशान्तरं परदेशः। गणना विचारः। विदग्धस्य चतुरस्य। विद्वान् सर्वत्र पूज्यत इति भावः। बाला कन्या। अनल्पसौकुमार्या-अतिकोमला। कष्टाः क्लेशजनकाः। प्रत्यवायभूयिष्ठाः-विघ्नबहुलाः। कान्तारपथाः अरण्यमार्गाः। शैथिल्यमिवेति-अनर्थेन विघ्नपूर्णेन ईदृशेन पूर्वोक्तप्रकारेण देशत्यागेन स्वदेशं त्यक्त्वाऽन्यत्रगमनेन प्रज्ञासत्त्वयोर्बुद्धिसामर्थ्ययोः किञ्चित् ईषत् शैथिल्यं ह्रास इव सम्भाव्यते विविच्यते। बुद्धिहीना दुर्बलाश्च देशत्यागिनो भवन्तीति भावः। तत् तस्मात् कार-

* बालक्रीडा *

(३३) तब मैंने उसे उठाकर छातीसे लगा लिया और कहा—'भद्र! अब तुम क्या चाहते हो? उसने कहा—'इसके माता-पिताकी, अनुमति पाये बिना इसके साथ विवाह करके मैं जीवित नहीं रह सकता। अत एव इसी रातको यह देश त्यागकर मैं चल देना चाहता हूँ। अथवा मैं (अपने मनकी करने वाला) हूँ ही कौन? आप जैसी आज्ञा दें, वैसा करूँ।' तब मैंने कहा—'तुम्हारा कथन यथार्थ है। 'स्वदेश' और 'विदेश' में समझदार लोग कोई अन्तर नहीं मानते। किन्तु, यह युवती बड़ी ही सुकुमार है। वनके मार्ग बड़े दुखदायी और विविध विघ्न-बाधाओंमे भरे रहते हैं। तुम्हारे इस तरह देश

हैव वस्तव्यम्। एहि। नयावैनां स्वमेवावासम्' इति।

(३४) अविचारानुमतेन तेन सद्य एवैनां तद्गृहमुपनीय तयैवापसर्पभूतया तत्र मृद्भाण्डावशेषमचोरयाव। ततो निष्पत्य क्वचिन्मुषितकं निधाय समुच्चलन्तौ नागरिकसंपाते मार्गपार्श्वशायिनं कंचिन्मत्तवारणमुपरिपुरुषमाकृष्याध्यारोहाव। ग्रैवेयप्रोतपादयुगलेन च भयोत्थाप्यमान

* बालविबोधिनी *

णात्। अनया त्वद्भार्यया। सहैव अस्यामेव नगर्याम्। वस्तव्यं वसतिः कर्त्तव्या। नयाव-प्रापयाव आवामिति शेषः। आवासं गृहम्।

(३४) अविचारानुमतेन-निर्विचारस्वीकृतेन। तेन धनमित्रेण-तद्द्वारेणेत्यर्थः। एनां कन्याम्। तद्गृहं-तस्याः कन्याया गृहम्। उपनीय-नीत्वा। अपसर्पभूतया-चररूपया। अपसर्पश्चरः स्पश इत्यमरः। तत्र कुबेरदत्तगृहे। मृद्भाण्डेति-मृद्भाण्डानामवशेषो यस्मिंस्तद् यथा तथा। एवं चोरितं येन मृत्पात्राण्येव अवशिष्टानीति भावः। अचोरयाव आवामपहृतवन्तौ। तत स्तस्मान्नगरात्। निष्पत्य-निर्गत्य। मुषितकं-अपहृतद्रव्यम्। निधाय-संस्थाप्य। समुच्चलन्तौ-स्वगृहं गन्तुमुद्यतौ। नागरिकसंपाते-नगररक्षिणां संमर्द्दे सति। मार्गपार्श्वशायिनं पथिप्रान्तशयितम्। मत्तवारणं मत्तहस्तिनम्। अध्यारोहावेत्यस्याः क्रियायाः कर्म। उपरिपुरुषम्-उपरि हस्ति पृष्ठेस्थितं पुरुषं-आधोरणमित्यर्थः। आकृष्येति क्रियायाः कर्म आकृष्य-निपात्य ग्रैवेयेति-ग्रैवेये कण्ठरज्ज्वां प्रोतं प्रवेशितं पादयुगलं येन तेन। उत्थाप्यमानः ऊर्द्ध्वमुत्क्षिप्यमाणः। गज इत्यस्य विशेषणम्। पातितेति-पातिजस्य गजपृष्ठादाकृष्टस्याधोरणस्य हस्तिपकस्य पृथुले विस्तृते

* बालक्रीडा *

त्याग देनेपर लोग बुद्धि और बलका शैथिल्य ही समझेंगे। इसलिए तुम इसके साथ सुखपूर्वक यहां रहो। चलो, इसे अपने घर ले चलें।

(३४) विना सोचे-विचारे उसने मेरी बात मान ली और तत्काल सुन्दरीको उसके घर पहुँचा दिया तथा उसी नारीको अगुआ बनाकर उस घरके मृद्भाण्डमें जो अवशिष्ट धन था, सो भी, हम दोनोंने चुरा लिया। वहांसे चलकर चोरी करनेके सब उपकरण एक स्थानपर रख दिये और आगे बढ़े। मार्गमें एक जगह मनुष्योंकी बड़ी भीड़ एकत्रित थी। पास ही राहके किनारे

एव पातिताधोरणपृथुलोरःस्थलपरिणत पुरीतल्लतापरीतदन्तकाण्डः स रतिकबलमक्षिणोत् । अध्यसयाव चामुनैवार्थपतिभवनम् । अपवाह्य च क्वचन जीर्णोद्याने शाखाग्राहिकया चावातराव । स्वगृहगतौ च स्नातौ शयनमध्याशिश्रियाव ।

(३५) तावदेवोदगादुदधेरुदयाचलेन्द्रपद्मरागशृङ्गकल्प कल्पद्रुमहेमपल्लवापीडपाटल पतङ्गमण्डलम् । उत्थाय च धौतवक्त्रौ प्रगेतनानि

* बालविबोधिनी *

उरःस्थले वक्षसि परिणतस्तिर्यग्दन्तप्रहारो । तिर्यग्दन्तप्रहारस्तु गजः परिणतो मत इति हलायुध. । पुरीतदिति पुरीतल्लतया अन्त्रवल्ल्या परीत वेष्टित दन्तकाण्ड यस्य सः । स–गजः । रतिकबलं–नगररक्षिसैन्यम् । अक्षिणोत् नयमनयत् । अध्यसयाव–आवा ध्वंसितवन्तौ । अमुना–गजेन । अपवाह्य–नीत्वा । शाखाग्राहिकया वृक्षशाखाग्रहणेन । अवातराव अवतीर्णौ । स्नातौ कृतस्नानौ । शयन शय्याम् । अध्याशिश्रियाव अधिष्ठितवन्तौ आवामिति शेषः ।

(३५) तावदेव–तस्मिन्नेवकाले । उदगाद् उत्थितमभवत् । उदधेः–सागरात् उदयेति–उदयाचलेन्द्रस्य उदयपर्वतराजस्य यत् पद्मरागशृङ्ग शोणमणिशिखरं तस्मादीषदून तत्सदृशमित्यर्थः । कल्पद्रुमस्य देवतरोर्ये हेमपल्लवाः सुवर्णकिसलयानि तेषामापीडः समूहस्तद्वत्पाटल श्वेतरक्तवर्णम् । पतङ्गमण्डलं सूर्यबि·

* बालक्रीडा *

एक मतवाला हाथी पड़ा सो रहा था। उसपर सवार फीलवानको पकड़कर हम दोनों उस हाथीपर चढ़ गये। मैंने तत्काल उसके गलेमें डाली हुई रस्सीमें दोनों पाव डालकर जैसे ही उठाया, उसी समय उसने हाथीवान को जमीनमें गिरा दिया और उसकी छातीमें अपना दात गड़ाकर अतड़ियाँ निकाल लीं और उन्हें दातमें लपेटकर रक्षकोंके झुण्डकी ओर झपटा। उसी हाथीके द्वारा मैंने अर्थपतिका भवन ढहा दिया। जब वह हम दोनोंको अपनी पीठपर लादकर कुछ दूर ले गया तो, एक उजाड़ उपवनमें वृक्षकी शाखा पकड़कर उतर आया। अन्तमें अपने घर जाकर हम दोनोंने स्नान किया और सो गये।

(३५) इसी समय उदयाचलके पद्मरागमणिके शिखर सदृश एवं कल्पवृक्षके स्वर्णपल्लव समूहकी भाँति रक्तवर्णका सूर्यमण्डल समुद्रसे निकल

मङ्गलान्यनुष्ठायास्मत्कर्मतुमुलं पुरमनु विचरन्तावशृणुव वरवधूगृहेषु कोलाहलम् । अथार्थैरर्थपतिः कुबेरदत्तमाश्वास्य कुलपालिकाविवाहं मासावधिकमकल्पयत् । उपह्वरे पुनरित्यशिक्षयं धनमित्रम्—'उपतिष्ठ सखे, एकान्त एव चर्मरत्नभस्त्रिकामिमां पुरस्कृत्याङ्गराजम् । आचक्ष्व च जानात्येव देवो नैककोटिसारस्य वसुमित्रस्य मां धनमित्रं नामैकपुत्रम् । सोऽहं

* बालविबोधिनी *

न्वम् । उदगादित्यस्य कर्त्तृपदम् । उत्थाय शयनादिति शेषः । धौतवक्त्रौ प्रक्षालितमुखौ आवामिति शेषः । प्रगेतनानि—प्रभातोचितानि । प्रगे इत्येकारान्तमव्ययं तस्मात् 'साय चिरमि'त्यादिना ट्युल् प्रत्ययस्तुडागमश्च । अनुष्ठाय परिसमाप्य । अस्मदिति—अस्माकं कर्मणा चौर्येण तुमुलं भयसङ्कुलम् । पुरस्य विशेषणम् । वरवधूगृहेषु—वरस्यार्थपतेर्वध्वाः कुबेरदत्तकन्यायाश्च गृहेषु । उभयत्रैव सर्वद्रव्यापहरणं जातमिति भावः । कोलाहलमार्त्तनादम् । अर्थैर्धनैः । कुबेरदत्तं कन्यापितरम् । आश्वास्य सान्त्वयित्वा । कुलपालिका कुबेरदत्तकन्या तस्या विवाहस्तम् । मासावधिकं—मासोऽवधिर्यस्य तम् । एकमासाभ्यन्तरे कदापि भविष्यतीति अकल्पयत्—निरधारयत् । उपह्वरे एकान्ते । इति—वक्ष्यमाणम् । अशिक्षयं शिक्षितवानस्मि । उपतिष्ठ—भजस्व । चर्मेति—चर्मणा निर्मिता रत्न भस्त्रिका रत्नप्रसविनी भस्त्रा ताम् अथवा चर्मरत्नेन उत्तमचर्मणा निर्मिता भस्त्रिका ताम् । पुरस्कृत्य अग्रे धृत्वा । अङ्गराजं अङ्गदेशाधिपतिम् । आचक्ष्व—ब्रूहि । देवो—भवान् । नैककोटिसारस्य अनेककोटिद्रव्यवतः, महाधनिकस्येत्यर्थः । मूलहरत्वं लुप्तमूलधनत्वम्—

* बालक्रीडा *

आया । तब उठकर हम दोनोंने मुंह धोया प्रातःकालोचित सब कार्य सम्पन्न किये । तदनन्तर घूमने निकले तो, वहीं एक वर–वधूके घरोंमें कोलाहल सुना । इसके बाद अर्थपति-(वर-) ने बहुत सा धन देकर कुबेरदत्त-(कन्याके पिता-) को आश्वासन दिया और महीनेभर बाद कुलपालिका- (कन्या-) के साथ उसका विवाह निश्चित हो गया । इसके बाद एकान्तमें मैंने धनमित्रको यह शिक्षा दी–मित्र ! तुम यह उत्तम चर्मकी बनी भाथी लेकर अङ्गराजसे मिलो । उनसे कहना कि, आप यह जानते ही होंगे कि, मैं अनेक करोड़ धनके अधिपति वसुमित्रका एक पुत्र धनमित्र हूँ । अब मेरी सब पूँजी समाप्त हो गयी है,

मूलहरत्वमेत्याथिवर्गादप्यवज्ञात। मदर्थमेव संवर्धितायां कुलपालिकाया मद्दारिद्र्यदोषात्पुनः कुबेरदत्तेन दुहितर्यर्थपतये दित्सितायामुद्वेगादुज्झितुमसूनुपनगरभव जरद्वनमवगाह्य कण्ठन्यस्तशस्त्रिकः केनापि जटाधरेण निवार्यैवमुक्त—'किं ते साहसस्य मूलम्' इति।

(३६) मयोक्तम्-'अवज्ञासोदर्यं दारिद्र्यम्' इति। स पुनरेव कृपालुरन्वग्रहीत्—'तात, मूढोऽसि। नान्यत्पापिष्ठतममात्मत्यागात्। आत्मा-

* बालविबोधिनी *

दारिद्र्यमित्यर्थः। एत्य-प्राप्य-अर्थिवर्गादिनिशेषः। अवज्ञात निःस्वतया तिरस्कृत मदर्थं मन्निमित्तम्। संवर्धितायां पालितायाम्। कुलपालिका कन्याम्। दुहितरि-कन्यायाम्। दित्सिताया दातुमिष्टायाम्। उद्वेगात् शोकात्। उज्झितु त्यक्तुम्। असून् प्राणान्। उपनगरभव नगरसन्निकटस्थम्। जरद्वनं जीर्णारण्यम्। लोकप्रचाररहितमिति यावत्। अवगाह्य प्रविश्य। कण्ठेति-कण्ठे गलदेशे न्यस्ता निहिता शस्त्रिका छुरिका येन सः। केनापि-अज्ञातनाम्ना। निवार्य निषिध्य। साहसस्य एतादृशोद्योगस्य। मूल निदानम्।

(३६) अवज्ञेति- अवज्ञा अवहेलना सोदर्या सहोदरा यस्य तत्। अवज्ञायाः सोदर्यं बन्धुभूतमिति वा। अनादरसहितमित्यर्थः. ईदृशं दारिद्र्यमेव मम साहसस्य मूलमिति प्रश्नोत्तरम्। स-जटाधरः। अन्वग्रहीत्-अनुगृहीतवान् मामिति शेषः। तात-वत्स। नान्यदिति-आत्मत्यागाद् आत्महत्यातः अन्यदपरं

* बालक्रीडा *

इसलिए भिखारी लोग भी मेरा तिरस्कार करते हैं। यद्यपि कुबेरदत्तने मुझे अर्पण करनेके लिए ही अपनी कन्याका पालन किया था, किन्तु, मेरी दरिद्रताके कारण वह उसे अर्थपतिको देना चाहता है। यह समाचार सुनकर मुझे इतना सन्ताप हुआ कि, मैं नगरके समीप ही सुनसान जङ्गलमें चला गया और अपने गलेपर तलवार चलानी चाही, इसी समय एक जटाधारी सन्तने मुझे रोककर कहा—'तुम ऐसा दुःसाहस किस लिए कर रहे हो?'

(३६) मैंने कहा-'अवज्ञा और दरिद्रता ही मेरे दुःसाहसका कारण है।' उस दयालुने मेरेपर अनुग्रह करके कहा—'हे तात! तुम बड़े नासमझ हो। आत्मघातसे बढ़कर और कोई पाप नहीं हो सकता। भले लोग अपनी

नमात्मनानवसाद्यैवोद्धरन्ति सन्तः। सन्त्युपाया धनार्जनस्य बहवः नैकोऽपि च्छिन्नकण्ठप्रतिसन्धानपूर्वस्य प्राणलाभस्य। किमनेन। सोऽस्म्यहं मन्त्रसिद्धः। साधितेयं लक्षग्राहिणी। चर्मरत्नभस्त्रिका। चिरमहमस्याः प्रसादात्कामरूपेषु कामप्रदः प्रजानामवात्सम्। मत्सरिण्यां जरसि भूमिस्वर्गमत्रोद्देशे प्रवेक्ष्यन्नागतः। तामिमां प्रतिगृहाण। मदन्यत्र चेयं

* बालविबोधिनी *

पापिष्ठतमं पापवत्तरमतिपातकं नास्तीत्यर्थः। आत्मानमिति—सन्तः साधवः आत्मना स्वयमात्मान मनवसाद्य अविनाश्य आत्मानमुद्धरन्ति मुक्तिं लभन्ते। छिन्नकण्ठेति—छिन्नः कर्त्तितो यः कण्ठः तस्य प्रतिसंधानं पुनः संयोग स्तदेव पूर्वं यस्य तथा भूतस्य। प्राणलाभस्य जीवनप्राप्तेः। धनार्जनस्य बहव उपायाः सन्ति किन्तु प्राणलाभस्यैकोऽप्युपायो नास्तीत्यर्थः। अनेन प्राणत्यागेन। साधिता सम्पादिता लब्धेति यावत्। लक्षं ग्राहयतीति लक्षग्राहिणी—लक्षमुद्राप्रसविनी। चिरं दीर्घकालं यावत्। अस्याः चर्मरत्नभस्त्रिकायाः। कामरूपेषु तदाख्यप्रदेशे। कामप्रदः अभीष्टदाता प्रजानामिति शेषः। अवात्सं वसति मकरवम्। मत्सरिण्यां विद्वेषिण्याम्। जरसि—जरायां वार्द्धके इति यावत्। मयि जराग्रस्ते सतीत्यर्थः। भूमिस्वर्गं भूमौ पृथिव्यां स्वर्ग इव तम्। स्वर्गतुल्यं किमपि स्थानमित्यर्थः। भूमितः स्वर्गगमनार्थं किमपि विलं वा। प्रवेक्ष्यन्नित्यस्य कर्म। उद्देशे प्रदेशे। इमां चर्मरत्नभस्त्रिकाम्। मदन्यत्र मां विहाय अपरत्र। इयं चर्मरत्नभस्त्रिका। वणिग्भ्यो वैश्येभ्यः। वारमुख्याभ्यः वाराङ्गनाभ्यः। चतुर्थी बहुवच-

* बालक्रीडा *

आत्माको कुछ कष्ट दिये विना ही अपना निस्तार कर लिया करते हैं। धन अर्जन करनेके बहुतेरे उपाय हैं। लेकिन कटे हुए गलेको जोड़नेका एक भी उपाय नहीं है। सो, ऐसा करनेकी क्या आवश्यकता। मैं एक मन्त्रसिद्ध-पुरुष हूँ। मैंने लाखोंकी सम्पत्ति प्रदान करनेवाली यह चर्मरत्नभस्त्रिका साध ली है। इसकी कृपासे कामरूप देशमें सब लोगोंकी कामनाएं पूर्ण करता हुआ बहुत समयतक रहा हूँ। मत्सर (ईर्ष्या) उत्पन्न करनेवाली वृद्धावस्थामें इस भूमिको स्वर्ग समझकर मैं घूमता-फिरता आ निकला। सो, आप इसे स्वीकार करें। यह बात नहीं है कि, यह (चर्मभस्त्रिका) हमारी ही कामना पूर्ण करती

वणिग्भ्यो वारमुख्याभ्यो वा दुग्धे इति हि तद्गता प्रतीतिः । किन्तु यत्सकाशादन्यायापहृतं तत्तस्मै प्रत्यर्पणीयम् । न्यायार्जितं तु देवब्राह्मणेभ्यस्त्याज्यम् ।

(३७) अथेयं देवतेव शुचौ देशे निवेश्याच्र्यमाना प्रातः-प्रातः सुवर्णपूर्णेव दृश्यते । स एष कल्पः' इति बद्धाञ्जलये मह्यमेनां दत्त्वा किमपि ग्रावच्छिद्रं प्राविशत् । इयं च रत्नभूता चर्मभस्त्रिका देवायानिवेद्य नोपजीव्येत्यानीता । परन्तु देवः प्रमाणम्' इति । राजा च नियतमेव वक्ष्यति—'भद्र, प्रीतोऽस्मि । गच्छ । यथेष्टमिमामुपभुङ्क्ष्व' इति । भूयश्च

* बालविबोधिनी *

नम् । दुग्धे रत्नानि प्रसूते । तद्गता—चर्मरत्नभस्त्रिका विषयिणी । प्रतीतिः प्रसिद्धिः । यत्सकाशात्—यस्य जनस्य सकाशात्समीपात् । अन्यायापहृतं—अन्यायेनानीतं तद् वस्तु तस्मै—यत्सकाशादानीतमित्यर्थः । त्याज्यं दातव्यम् ।

(३७) अथ—त्यागानन्तरम् । इयं—भस्त्रा । शुचौ—पवित्रे । निवेश्य संस्थाप्य । अर्च्यमाना—पूज्यमाना । प्रातः प्रातः—प्रतिप्रातः कालम् । कल्पः प्रकारः । बद्धाञ्जलये—कृतप्रणामाय । एनां भस्त्रिकाम् । ग्रावच्छिद्रं पर्वतविवरम् । रत्नभूता—रत्नस्वरूपा । देवाय भवते । अनिवेद्य अनुक्त्वा । नोपजीव्या न भोक्तव्या । प्रमाणं निर्णायकः । नियतमवश्यमेव । वक्ष्यति कथयिष्यति । यथेष्टम्—स्वेच्छा-

* बालक्रीडा *

हो, बल्कि, यह तो वैश्यों और वेश्याओंकी भी इच्छा पूर्ण करती है । यह बात विख्यात हो चुकी है । लेकिन, यह बात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि, यदि अन्यायसे किसीका कुछ अपहरण कर लिया जाय तो, वह उसे लौटा देना चाहिए । और न्यायसंगत रीतिसे जो उपलब्ध हो उसे देवताओं और ब्राह्मणोंके काम खर्च करना उचित है ।

(३७) यदि किसी पवित्र स्थानपर रखकर देवताकी भाँति इसका पूजन किया जाय तो, प्रतिदिन यह सुवर्णसे पूर्ण दीखेगी । यही इसका विधान है !' अञ्जलि बाँधकर खड़े मुझ दाससे यों कह कर वह जटाधारी किसी पर्वतकी कन्दरामें घुस गया । यह रत्नस्वरूपा भस्त्रिका आपको अर्पण किये अपने काममें लाना अनुचित जानकर ही आपके समीप ले आया हूँ । अब आप जो उचित

ब्रूहि—'यथा न कश्चिदेनां मुष्णाति तथानुगृह्यताम्' इति । तदप्यवश्यमसावभ्युपैष्यति । ततः स्वगृहमेत्य यथोक्तमर्थत्यागं कृत्वा दिने दिने वरिवस्यमानां स्तेयलब्धैरर्थैर्नक्तमापूर्य प्राह्णे लोकाय दर्शयिष्यसि । ततः कुबेरदत्तस्तृणाय मत्वार्थपतिमर्थलुब्धः कन्यकया स्वयमेव त्वामुपस्थास्यति ।

(३८) अथ कुपितोऽर्थपतिर्व्यवहर्तुमर्थगर्वादभियोक्ष्यते । तं च भूयश्चित्रैरुपायैः कौपीनावशेषं करिष्यावः । स्वकं चौर्यमनेनैवाभ्युपायेन सुप्रच्छन्नं भविष्यति' इति । हृष्टश्च धनमित्रो यथोक्तमन्वतिष्ठत् । तदहरेव

* बालविबोधिनी *

नुरूपम् । इमां भस्त्रिकाम् । भूयः पुनरपि । मुष्णाति चोरयति । असौ राजा । अभ्युपैष्यति स्वीकरिष्यति । अर्थत्यागं धनदानम् । वरिवस्यमानाम् अर्च्यमानाम् । भस्त्रिकामिति शेषः । स्तेयलब्धैः चौर्येणाधिगतैः । नक्तं रात्रौ । आपूर्य रत्नैः पूरयित्वा । प्राह्णे प्रभाते । तृणाय मत्वा तृणवज्ज्ञात्वा अवज्ञायेत्यर्थः । उपस्थास्यति–आराधयिष्यति ।

(३८) व्यवहर्त्तुं विवादं कर्त्तुम् । अर्थगर्वात् धनमदात् । अभियोक्ष्यते–राजद्वारे अभियोगं करिष्यति । एनम् अर्थपतिम् । चित्रैर्नानाविधैः । स्वकं स्वकीयम् ।

* बालक्रीडा *

समझें सो, करें । इसपर राजा अवश्य कहेगा–'भद्र ! मैं तुमपर प्रसन्न हूँ । जाओ और इच्छानुसार इसका उपयोग करो । तब तुम कहना कि, 'कृपा करके श्रीमान् कोई ऐसा प्रबन्ध कर दें कि, जिससे इसे कोई चुरा न सके ।' राजा तुम्हारी बात अवश्य मानेगा । तदनन्तर अपने घर आकर पूर्वोक्त रीतिसे धन दान करके सतत पूजित इस भस्त्रिकाको रातके समय चोरी करके प्राप्त धन से भर दिया करना । और सवेरे लोगोंको दिखाना । तब धनका लोभी कुबेरदत्त अर्थपतिको तृणकी भांति समझकर अपनी कन्याको साथ लेकर तुम्हारे पास आयेगा ।

(३८) इस बातसे अर्थपति क्रुद्ध होगा और धनके गर्ववश वह तुमसे द्वेष करने लगेगा । उसे हम दोनों विविध उपायोंसे कौपीनावशेष कर डालेंगे । चोरीका अपना दुष्कर्म इसी उपाय से छिपेगा ।' धनमित्रने प्रसन्न मनसे मेरे

मन्त्रियोगाद्विमर्दकोऽर्थपतिसेवाभियुक्तस्तस्योदारके वैरमभ्यवर्धयत। अथ लुब्धश्च कुबेरदत्तो निवृत्त्यार्थपतेर्धनमित्रायैव तनयां सानुनयं प्रादित्सत। प्रत्यबध्नाच्चार्थपतिः।

(३९) एष्वेव दिवसेषु काममञ्जर्याः स्वसा यवीयसी रागमञ्जरी नाम पञ्चवीरगोष्ठे सङ्गीतकमनुष्ठास्यतीति सान्द्रादरः समागमन्नागरजनः। स चाहं सह सख्या धनमित्रेण तत्र सन्यविधि। प्रवृत्तनृत्यायां च तस्यां

* बालविबोधिनी *

अनेन-पूर्वोक्तेन। सुप्रच्छन्नं गुप्तम्। तदह तस्मिन् दिने। मन्त्रियोगात्-ममाशया। विमर्दकः एतन्नामकः कश्चित्। अर्थपतीति-अर्थपतेः सेवायामाराधनेऽभियुक्तः संलग्नः। तस्य अर्थपतेः। उदारके धनमित्रे। वैरं द्वेषम्। अभ्यवर्धयत् वर्धयामास। निवृत्य परावृत्य। अर्थपतेः सकाशात्। प्रादित्सत-प्रदातुमैच्छत। प्रत्यबध्नात् प्रतिबन्धं विरोधमिति यावत् चकार।

(३९) स्वसा भगिनी। यवीयसी कनिष्ठा। पञ्चवीरगोष्ठे जानपदसभायाम् तत्पञ्चवीरगोष्ठं तु यत्तु जानपदं सद इति कोशसारः। सङ्गीतकं गानादि। यदाह गीतं वाद्यं च नृत्यञ्च त्रिभिः सङ्गीतमुच्यते इति। अनुष्ठास्यति विधास्यति। सान्द्रादरः-तद्गानश्रवणे गाढस्पृहः। समागमत्-सम्मिलितोऽभवत्। अहम्। अपहारवर्मेत्यर्थः। सन्यविधि सन्निहितोऽभवम्। सन्निपूर्वकाद्धाधातोर्लुङि आत्मनेपदस्योत्तमपुरुषैकवचने रूपम्। प्रवृत्तनृत्यायां प्रारब्धनर्तनायाम्। तस्यां रागमञ्जर्याम्। रङ्गपीठं नृत्यस्थानम्। निरन्तरस्मर्यमाणतया मन्मानसे नृत्यमकरोदिति

* बालक्रीडा *

कहे हुए सब कार्य सम्पन्न कर दिये। उसी दिन मेरी प्रेरणानुसार विमर्दकने अर्थपतिके यहां नौकरी कर ली और उसमें और धनमित्रमें वैर बढ़ाने लगा। ऐसा करनेसे लोभी कुबेरदत्तका मन अर्थपतिकी ओरसे फिर गया और उसने धनमित्रको ही अपनी कन्या प्रदान की। अर्थपतिने भी इस कार्यमें सभी सम्भव विघ्न डाले।

(३९) इन्हीं दिनों काममञ्जरीकी छोटी बहिन रागमंजरीका नागरिक सभामें नाच-गाना होनेवाला है, यह सुनकर बड़े आदरके साथ बहुतेरे नागरिक एकत्र हुए। मैं भी अपने मित्र धनमित्रके साथ वहां जा पहुँचा। जब वह गणिका

द्वितीयं रङ्गपीठं ममाभून्मनः । तद्दृष्टिविभ्रमोत्पलवनसच्चापाश्रयश्च पञ्चशरो भावरसानां सामग्र्यात्समुदितवल इव मामतिमात्रमव्यथयत् ।

(४०)अथासौ नगरदेवतेव नगरमोषरोपिता लीलाकटाक्षमालाशृङ्खलाभिर्नीलोत्पलपलाशश्यामलाभिर्मामवध्नात् । नृत्योत्थिता च सा सिद्धिलाभशोभिनी-'किं विलासात्, किमभिलापात, किमकस्मादेव वा,

* बालविबोधिनी *

भावः । तद्दृष्टीति-तस्या रागमञ्जर्या दृष्टिविभ्रमः कटाक्ष एवोत्पलवनं नीलकमलमाला तदेव सदुत्तमं चापं धनु राश्रयो यस्य तादृशः । पञ्चशरः कामः । भावरसानां भावानां प्राधान्येनाञ्जितव्यभिचारिणा निर्वेदादीनां रसानां शृङ्गारादीनाञ्च । सामग्र्यात् सम्पूर्णतया । समुदितवलः प्राप्तसामर्थ्यः । अतिमात्रं गाढम् अव्यथयत् अपीड्यत् ।

(४०) अथ कामपीड़नानन्तरम् । असौ रागमञ्जरी । लीलेति-लीलया विलासेन याः कटाक्षमालाः दृष्टिपंक्तयस्ता एव शृङ्खला बन्धन साधनानि ताभिः । नीलोत्पलेति-नीलोत्पलाना यानि पलाशानि पत्राणि तद्वत् श्यामलाभिः कृष्ण वर्णाभिः शृङ्खला विशेषणमेतत् । अवध्नात् ववन्ध । नृत्योत्थिता नर्त्तनाद्विरता । सिद्धिलाभशोभिनी-मनोरथप्राप्तिशालिनी । सिद्धमनोरथेति यावत् । विलासाद् विभ्रमात् । अभिलापात् स्वेच्छया । अकस्मात् विना कारणमित्यर्थः । असकृत् वारं वारम् । मामिति अभिवीक्ष्येत्यस्य कर्म । अनुपलक्षितेन अनवलोकितेन । गुप्तरूपेणेति भावः । अपाङ्गप्रेक्षितेन-कटाक्षावलोकनेन । सविभ्रमेति-

* बालक्रीडा *

नाचने लगी तब मेरा मन दूसरी रङ्गभूमि बन गया । उसकी नैनके कमलवनका निवासी कामदेव सभी भावों और सभी रसोंसे सम्पन्न एवं बलवान बनकर बहुत बुरी तरह सताने लगा ।

(४०) तदनन्तर नगरमें चोरीके करनेके कारण रोपिता नगरदेवीके सदृश उस सुन्दरी रागमंजरीने अपने नीले कमलके पत्रोंके तुल्य आभावाले विलासी श्यामल कटाक्षोंकी शृंखला-(सीकड़ी-) से मुझे बद्ध कर लिया तथा नृत्यसे विरत होकर वह मनोरथप्राप्तिशालिनी रागमञ्जरी अपने विलाससे या अभिलापसे या अकस्मात् (विना करण ही) न मालूम क्यों सखियोंसे भी छिपाकर अपने

न जाने,—असकृन्मां सखीभिरप्यनुपलक्षितेनापाङ्गप्रेक्षितेन सविभ्रमारेचितभ्रूलतमभिवीक्ष्य, सापदेशं च किंचिदाविष्कृतदशनचन्द्रिकं स्मित्वा, लोकलोचनमानसानुयाता प्रातिष्ठत ।

(४१) सोऽहं स्वगृहमेत्य दुर्निवारयोत्कण्ठया दूरीकृताहारस्पृहः शिरःशूलस्पर्शनमपदिशन्विविक्ते तल्पे मुक्तैरवयवैरशयिषि । अतिनिष्णातश्च मदनतन्त्रे मामभ्युपेत्य धनमित्रो रहस्यकथयत्—'सखे, सैव धन्या गणिकादारिका, यामेव भवन्मनोऽभिनिविशते । तस्याश्च मया सु-

* बालविबोधिनी *

सविभ्रमं सविलासं यथा तथा आरेचिते वक्रीकृते भ्रूलते भ्रूद्वयं यस्मिंस्तद्यथा तथा । अभिवीक्ष्य दृष्ट्वा । सापदेशं सकपटम् । किञ्चिदिति–किञ्चिदीषत्–आविष्कृता प्रकटिता दशनचन्द्रिका दन्तप्रभा यत्र तद्यथा तथा । स्मित्वा ईषद्विहस्य । लोकेति–लोकानां जनानां लोचनैर्नेत्रैः मानसैश्चित्तैश्च अनुयाता अनुसृता । जनानां नेत्राणि तामेव अनुसरन्तिस्म मानसानि प्रस्थानानन्तरमपि तामेव ध्यायन्तिस्मेति भावः । प्रातिष्ठत–गृहं प्रति प्रतस्थे ।

(४१) दुर्निवारया निवारयितुमशक्यया । दूरीकृताहारस्पृहः–परित्यक्तभोजनाभिलाषः । शिरःशूलेति–शिरःशूलं शिरोवेदना रोगविशेषस्तस्य स्पर्शनमनुभवं अपदिशन् ख्यापयन् । तद्व्याजेनेत्यर्थः । विविक्ते विजने तल्पे शय्यायाम् । मुक्तैः प्रसारितैरवयवैरङ्गैः । अशयिषि शयितोऽभवम् । अतिनिष्णातः

* बालक्रीडा *

अपांगोंसे मुझे बार-बार देखती हुई एवं विलासके व्याजसे अपनी भौंहोंको टेरती हुई और गुनरीत्या (कपटसे) अपनी दन्तप्रभा दिखाती हुई-मुस्कुराती हुई—जनोंके नेत्रों और चित्तोंको अपने साथ लेती हुई घरको चली गयी ।

(४१) मैं भी अपने गृहमें आकर, उस रागमञ्जरीकी उत्कण्ठाको निवारण करनेमें असमर्थ हो (उसीसे) भोजनादिकी इच्छासे रहित होकर शिरोवेदनाके बहानेसे एकान्तमें जा करके, हाथ पैर फैला करके शय्यापर सो गया । अति पटु धनमित्रने, मुझे कामशास्त्रमें (कामजालमें) फंसे हुए (डूबे हुए) समझकर एकान्तमें, आकर कहा—"हे मित्र ! वह वेश्याकी कन्या धन्य है, जो तुम्हारे चित्तमें आ गयी है । जिसके अनुरागविशेषको मैंने देख लिया है । कामदेव अपनी बाण-

लक्षिता भाववृत्तिः । तामप्यचिरादयुग्मशरः शरशयने शाययिष्यति । स्थानाभिनिवेशिनोश्च वामयत्नसाध्यः समागमः । किन्तु सा किल वार कन्यका गणिकास्वधर्मप्रतीपगामिना भद्रोदारेणाशयेन समगिरत—'गुण शुल्काहम् , न धनशुल्का । न च पाणिग्रहणादृतेऽन्यभोग्यं यौवनम्' इति ।

(४२) तच्च मुहुः प्रतिषिध्याकृतार्था तद्भगिनी काममञ्जरी माता च माधवसेना राजानमश्रुकण्ठ्यौ व्यजिज्ञपताम्—'देव, युष्मद्दासी राग-

* बालविबोधिनी *

अतिपटुः । मदनतन्त्रे कामशास्त्रे । रहसि निर्जने । गणिकादारिका–वेश्याकन्या । एवं–अनेन प्रकारेण । भवन्मनः त्वच्चित्तम् । अभिनिविशते आकांक्षति । सुलक्षिता दृष्टा । भाववृत्तिः अनुरागावेशः । अयुग्मशरः कामः । शरशयने शरशय्यायाम् । शाययिष्यति णिजन्तमेतत् । स्थानाभिनिवेशिनोः युक्ताभिलाषवतोः । वां युवयोः । अयत्नसाध्यः अनायाससाध्यः । समागमः सम्मेलनम् । किंतु इत्यनेन किञ्चिद्वैशिष्ट्यं सूचितम् । तदेवाह–गणिकेति–गणिकायाः वेश्यायाः यः शुल्कग्रहणरूपः स्वधर्मस्तस्मात् प्रतीपगामिना विरुद्धेन । भद्रोदारेण–भद्रः कल्याणजनक उदारो महांश्च तेन । आशयेन अभिप्रायेण । समगिरत–प्रतिज्ञातवती । गुणः शुल्कं मूल्यं यस्याः सा । पाणिग्रहणात् विवाहात् । ऋते विना । अन्यभोग्यं अन्येन गुणवन्तमन्तरा अपरेण भोग्यमुपभोग्यम् ।

(४२) तच्च–तादृशीं प्रतिज्ञां च । प्रतिषिध्य–निषिध्य । अकृतार्था–असिद्धमनोरथा । अश्रुकण्ठ्यौ रुदन्त्यौ । रूपेति–रूपस्य सौन्दर्यस्यानुरूपं तुल्यं शीलं

* बालक्रीडा *

शय्यापर, उसे भी शीघ्र सुलायेगा । युक्ताभिलाषियोंका (पारस्परिक प्रेमियोंका) सम्मेलन अनायाससाध्य (सुख–साध्य) होता है । परन्तु, उस वेश्याकन्याने अपने वेश्याधर्मसे विरुद्ध कल्याणजनक उदार आशयवाली प्रतिज्ञा की है "मैं गुणशुल्का हूं" "धनशुल्का" नहीं हूं—मेरा मूल्य गुण होगा, धनपर न बिकूंगी और (मेरे साथ) बिना विवाह किये हुए कोई मेरे यौवनका उपभोग नहीं कर सकता है ।

(४२) उसकी ऐसी प्रतिज्ञापर उसकी बहिन काममञ्जरी और उसकी माता माधवसेनाने उसे (रागमञ्जरीको) बार–बार समझानेपर असिद्धमनो-

मञ्जरी रूपानुरूपशीलशिल्पकौशला पूरयिष्यति मनोरथानित्यासीदस्मा-कमतिमहत्याशा साद्य मूलच्छिन्ना। यदियमतिक्रम्य स्वकुलधर्ममर्थनिर-पेक्षा गुणेभ्य एव स्वं यौवनं विचिक्रीषते। कुलस्त्रीवृत्तमेवाच्युतमनुतिष्ठा-सति। सा चेदियं देवपादाज्ञयापि तावत्प्रकृतिमापद्येत तदा पेशलं भवेत्' इति।

(४३) राज्ञा च तदनुरोधात्तथानुशिष्टा सत्यप्यनाश्रवैव सा यदासी-त्, तदास्याः स्वसा माता च रुदितनिर्बन्धेन राज्ञे समगिरताम्-'यदि क-

* बालविबोधिनी *

स्वभावः शिल्पकौशलं कलानैपुण्यञ्च यस्याः सा। सा आशा। मूलच्छिन्ना समूलं विनष्टा। यद् यतः। इयं रागमञ्जरी। स्वकुलधर्मं गणिकावंशधर्मं धनग्र-हणादिरूपम्। अर्थनिरपेक्षा-धनाभिलाषशून्या। यौवनं तारुण्यम्। विचिक्री-षते-विक्रेतुमिच्छति कुलस्त्रीवृत्त-कुलाङ्गनाचरणम्। अच्युतं अविच्छिन्नम्। अनुतिष्ठासति-अनुष्ठातुमाचरितुमिच्छति। देवपादाज्ञया-भवदनुशासनेन। प्रकृतिं स्वस्थताम्। पेशलं-क्षेमम्।

(४३) तदनुरोधात्-तयोः माधवसेनाकाममंजर्योरनुरोधादाग्रहात्। तथा-यथा ताभ्यामुक्तं तेनैव प्रकारेण। अनुशिष्टा उपदिष्टा। अनाश्रवा-अनादृतवचना।

* बालक्रीडा *

रुष्ट होकर रोते हुए राजाको सूचना दी। 'हे देव! आपकी दासी रागमञ्जरीने सौन्दर्यके अनुरूप स्वभाव, कलानिपुणता पायी है। जिससे हम लोगोंको यह आशा थी, कि, यह हम लोगोंके मनोरथोंको पूरा करेगी, किन्तु, आज वह आशा समूल विनष्ट हो गयी। क्योंकि, यह रागमञ्जरी अपने धर्मको (धनग्रहण करना आदि गणिकाओंके धर्मको) छोड़कर धनकी अभिलाषासे शून्य होकर गुणियोंको अपना तारुण्य बेचनेकी इच्छा करती है। कुलाङ्गनाओंके आचर-णोंको ही अविच्छिन्नरूपसे धारण करना चाहती है। यदि यह रागमञ्जरी आपके आदेशसे भी अपनी (स्वस्थता वृत्तित्व) का आचरण करे तो, बड़ा कल्याण हो''।

(४३) राजाने, उन लोगोंके आग्रहसे, (रागमञ्जरीको बुलाकर जैसा काममञ्जरी और माधवसेनाने कहा था।) उसी प्रकारसे, उपदेश किया। तब भी उसने उस उपदेशका अनादर ही किया। जिससे उन लोगोंने अति विलाप

र्भुजङ्गोऽस्मदिच्छया विनैनां बालां विप्रलभ्य नाशयिष्यति स तस्करवद्वध्यः' इति। तदेवं स्थिते धनादृते न तत्स्वजनोऽनुमन्यते। न तु धनदायासावभ्युपगच्छतीति विचिन्त्योऽत्राभ्युपायः' इति। अथ मयोक्तम्—'किमत्र चिन्त्यम्। गुणैस्तामावर्ज्य गूढं धनैस्तत्स्वजनं तोषयावः' इति।

(४) ततश्च कांचित्काममञ्जर्याः प्रधानदूतीं धर्मरक्षितां नाम शाक्यभिक्षुकीं चीवरपिण्डदानादिनोपसंगृह्य तन्मुखेन तया बन्धक्या पणव-

* बालविबोधिनी *

अस्याः रागमञ्जर्याः। रुदितनिर्बन्धेन—अत्यन्तरोदनपूर्वकम्। राज्ञे—राजसमीपे। समगिरतां प्रतिज्ञातवत्यौ। भुजङ्गो विटः। विप्रलभ्य प्रतार्य। नाशयिष्यति—अपवाहयिष्यति। धनादृते—अर्थेन विना। तत्स्वजनः—रागमञ्जर्याः मात्रादिः। धनदाय—वित्तदायिने पुरुषाय। असौ रागमञ्जरी। अभ्युपगच्छति स्वीकरोति। इति—इति हेतोः, अत्र अस्मिन् विषये। मया—अपहारवर्मणा। आवर्ज्य वशीकृत्य। गूढं गुप्तरूपेण।

(४४) शाक्यभिक्षुकीं बौद्धसन्यासिनीम्। चीवरपिण्डदानादिना वस्त्रखण्ड भोजनादिदानेन। उपसंगृह्य वशीकृत्य। तन्मुखेन दूतीमुखेन। बन्धक्या—कुलटया। सहेति शेषः। पणबन्धं शुल्कादिदानव्यवस्थाम्। उदारकात् धनमित्रात्।

* बालक्रीडा *

करते हुए राजासे यह कहा कि, (इस विषयमें निम्नांकित आज्ञा होनी चाहिये) "यदि कोई भी विट, हम लोगोंकी इच्छाके विरुद्ध, इस बालिकाको फुसलाकर इसे प्रतारित करेगा; तो, वह चोरके समान दण्डका भागी होगा।" ऐसी स्थितिमें विना द्रव्यके उसके स्वजन माता आदि राजी ही न होंगे। और द्रव्यदाताको वह रागमञ्जरी स्वीकार न करेगी। इस विषयमें उचित उपाय विचारिये। यह श्रवण करके मैंने (अपहारवर्माने) कहा—"इसमें विचारना ही क्या है।" गुणोंसे उस रागमञ्जरीको वश करके गुप्तरूपसे द्रव्यद्वारा उसके स्वजनोंको सन्तुष्ट कर लूंगा।

(४४) इसके पश्चात्—काममञ्जरीकी, बौद्धसंन्यासिनी धर्द्दरक्षिता नामकी मुख्य दूतीको वस्त्रखण्डान्नदानद्वारा वश करके उसी दूतीके मुखसे उस कुलटा काममञ्जरीसे पणबन्ध' शुल्कादिदान व्यवस्था की कि,—"धनमित्रसे चुराकर चर्म-

न्धमकरवम्—'अजिनरत्नमुदारकान्मुषित्वा मया तुभ्य देयम् , यदि प्रतिदान रागमञ्जरी' इति। सोऽहं सम्प्रतिपन्नाया च तस्यां तथा तदर्थ मपाद्य मद्गुणोन्मादित्ताया रागमञ्जर्या' करकिसलयमग्रहीषम। यस्यां च निशि चर्मरत्नस्तेयवादस्तस्या प्रारम्भे कार्यान्तरापदेशेनाहूतेषु शृण्वत्स्वेव नागरमुख्येषु मत्प्रणिधिर्विमर्दकोऽर्थपतिगृह्यो नाम भूत्वा धनमित्रमुल्लङ्घ्य बहुतर्जयत्। उक्तं च धनमित्रेण—'भद्र, कस्तवार्थो यत्परस्य हेतोर्मामाक्रोशसि। न स्मरामि स्वल्पमपि तवापकार' मत्कृतम्' इति। स भूयोऽपि तर्जयन्निवाब्रवीत्—'स एष धनगर्वो नाम, यत्परस्य भार्यां शुल्कक्रीतां

* बालविबोधिनी *

मुषित्वा चोरयित्वा। प्रतिदानमिति–विनिमयरूपेण रागमञ्जरीं ददासि चेदित्यर्थः। सम्प्रतिपन्नाया स्वीकृतायाम्। तदर्थं तत्प्रयोजन चर्मभस्त्रिकादानरूपम्। मद्गुणोन्मादिताया–मद्गुणमुग्धाया'। करकिसलयं पाणिपल्लवम्। चर्मरत्नस्तेयवादः–चर्मभस्त्रिकाचौर्यवार्ताप्रचार', अभूदिति शेषः। तस्या' रात्रेः। प्रारम्भे—प्रदोषे इत्यर्थः। कार्यान्तरापदेशेन–अन्यकार्यच्छलेन। आहूतेषु–आकारितेषु। नागरमुख्येषु–नगरप्रधानपुरुषेषु। मत्प्रणिधिर्मम गुप्तचरः। अर्थपतिगृह्यः अर्थपतिपक्षीयः। नामेति अलीकसम्भावनायाम्। उल्लंध्य मर्यादामतिक्रम्य। बहु–अनेकप्रकारम्। अतर्जयत् भीषयामास। अर्थः प्रयोजनम्। हेतोः निमित्तम्। आक्रो-

* बालक्रीडा *

रत्नभस्त्रिका" को मैं तुम्हें दूंगा, यदि तुम मुझे उसके विनिमयमें रागमञ्जरी दो" उस कामभञ्जरीके स्वीकार करनेपर मैंने उसे चर्मरत्नभस्त्रिका का प्रबन्ध करके मेरे गुणोंसे उन्मुग्ध (प्रफुल्लित) राजमञ्जरीके पाणिपल्लवोंको ग्रहण किया। जिस रातमें चर्मरत्नभस्त्रिकाकी चौर्यवार्त्ताका प्रकाश होनेवाला था, उसके पूर्वमें ही अन्य कार्यके छलमें नगरके प्रधान पुरुषोंको एकत्र करके मेरे गुप्तचर विमर्दकने जो अर्थपतिका पक्षीय हो गया था, धनमित्रका अनादर किया और अनेक प्रकारसे डराया। धनमित्रने कहा–"इसमें आपका क्या प्रयोजन है जो आप दूसरेके निमित्त मुझे गाली देते हैं। मेरेद्वारा आपका स्वल्प भी उपकार हुआ हो इसका भी मुझे स्मरण नहीं है"। वह विमर्दक पुनः डरवाते हुए धनमित्रसे बोला–"यही धनका गर्व है, कि, दूसरेकी स्त्रीको जो धनके द्वारा

पुनस्तत्पितरौ द्रव्येण विलोभ्य स्वीचिकीर्षसि । ब्रवीषि च—'कस्तवापकारो मत्कृतः' इति, ननु प्रतीतमेवैतत् 'सार्थवाहस्यार्थपतेर्विमर्दको बहिश्चराः प्राणाः' इति ।

(४५) सोऽहं तत्कृते प्राणानपि परित्यजामि । ब्रह्महत्यामपि न परिहरामि । 'ममैकरात्रजागरप्रतीकारस्तवैष चर्मरत्नाहंकारदाहज्वरः' इति । तथा ब्रुवाणश्च पौरमुख्यैः सामर्षं निषिध्यापवाहितोऽभूत् । इयं च वार्ता कृत्रिमार्तिना धनमित्रेण चर्मरत्ननाशमादावेवोपक्षिप्य पार्थिवाय

* बालविबोधिनी *

शसि निन्दसि । मत्कृतं मयाकृतम् । अपकारमिति स्मरामीत्यस्य कर्म । स विमर्दकः । धनगर्वः अर्थमदः । शुल्कक्रीतां अर्थविनिमयेन गृहीताम् । द्रव्येण अर्थेन । स्वीचिकीर्षसि स्वीकर्त्तुमिच्छसि । प्रतीतं प्रसिद्धम् । बहिश्चराः प्राणाः परममित्रम् ।

(४५) सोऽहं-विमर्दकः । तत्कृते अर्थपतिनिमित्तम् । परिहरामि त्यजामि । ब्रह्महत्यामपि न गणयामीति भावः । एकरात्रेति-एकरात्रं जागरो जागरणमेव प्रतीकारो वैरशुद्धिर्यस्य सः । चर्मरत्नेति-चर्मरत्नस्याहङ्कारः मम चर्मरत्नमस्तीति गर्वः स एव दाहज्वर ऊष्मा । तव चर्मरत्नापहरणं ममैकरात्रजागरणसाध्यं तेन च ते चर्मरत्नाहङ्कारमपनयामीति भावः । ब्रुवाणः वदन् । सामर्षं सक्रोधम् ।

* बालक्रीडा *

खरीदी गयी थी । फिरसे उसके माता-पिताको धनके लोभमें फंसाकर उसी (परस्त्रीको) स्वीकार करना चाहते हो" । और कहते हो-"मैंने आपका कौनसा अपकार किया है ।" यह तो प्रसिद्ध ही है कि, मैं सार्थवाह अर्थपतिका परममित्र हूं ।

(४५) "मैं उसके (अर्थपतिके) लिये प्राणोंको भी त्याग सकता हूं । ब्रह्महत्याको भी नहीं गिनता हूं मेरे एक रातका जागरण तुम्हारे चर्मरत्नरूपी अहंकारके दाहज्वरकी वैरशुद्धिके लिये काफी है ।" ऐसी क्रोधपूर्ण वाणी बोलनेवाले विमर्दकको मुख्यनगरवासियोंने मनाकर हटा दिया । राजासे, उस चर्मरत्नभस्त्रिकाकी चोरीकी वार्ताका प्रथम उपक्षेप करके बनावटी पीड़ाका बहाना करनेवाले धनमित्रने निवेदित कर दिया । उस राजाने अर्थपतिको एका-

निवेदिता। स चार्थपतिमाहूयोपह्वरे पृष्टवान् 'अङ्ग, किमस्ति कश्चिद्विमर्दको नामात्र भवत' इति। तेन च मूढात्मना 'अस्ति देव, परं मित्रम्'। कश्च तेनार्थः' इति कथिते राज्ञोक्तम्—'अपि शक्नोपि तमाह्वातुम्' इति। 'बाढमस्मि शक्तः' इति निर्गत्य स्वगृहे वेशवाटे द्यूतसभायामापणे च निपुणमन्विष्यन्नोपलब्धवान्। कथं वोपलभ्येत स वराकः। स खलु विमर्दको मद्ग्राहितत्वदभिज्ञानचिह्नो मन्नियोगात्त्वदन्वेषणायोज्जयिनीं तदहरेव प्रातिष्ठत। अर्थपतिस्तु तमदृष्ट्वा तत्कृतमपराधमात्मसंबद्धं मत्वा मो-

* बालावबोधिनी *

अपवाहित दूरीकृत.। कृत्रिमार्तिना—कृत्रिमा स्वाभाविकेतरा आर्तिः पीड़ा यस्य तेन। आदौ प्रथमम्। उपश्लिष्य प्रस्तूय। पार्थिवाय राज्ञे। निवेदिता विज्ञापिता वार्तेति शेष। स पार्थिवः। उपह्वरे एकान्ते। तेन अर्थपतिना। मूढात्मना अल्पबुद्धिना। परमत्यन्तम्। तेन विमर्दकेन। अर्थः प्रयोजनम्। बाढमित्यङ्गीकारार्थकमव्ययम्। वेशवाटे वेश्यागृहमार्गे। निपुण सावधानम्। स वराकः तुच्छो विमर्दकः। मद्ग्राहितेति—मया ग्राहित बोधितं तव राजवाहनस्य अभिज्ञान चिह्नं परिचयसूचकं यस्मै सः। मन्नियोगात् मदादेशात्। त्वदन्वेषणाय—तव भवतो राजवाहनस्यान्वेषणमनुसन्धान तस्मै। तदहः। तस्मिन् दिने। प्रातिष्ठत चलितोऽभवत्। तत्कृतं विमर्दकविहितम्। आत्मसम्बद्धं-स्वकीयम्। प्रत्याख्याय विपरीत-

* बालक्रीडा *

न्तमें बुला करके पूछा—"हे अङ्ग! (मित्र!) विमर्दक नामक कोई व्यक्ति तुम्हारे यहा है?" उस मन्द बुद्धिने कहा—"हे देव! मेरा परम मित्र है।" उससे आपका क्या प्रयोजन है?" ऐसा कहनेपर राजाने कहा "क्या उसे बुला सकते हो?" (अर्थपतिने कहा—) अति समर्थ हूं।" इसके पश्चात् अर्थपतिने अपने घर जाकर विमर्दकको वेश्याओंके पथोंमें जुआखानोंमें, बाजारोंमें खोजवाया। लेकिन, वह सावधान विमर्दक न मिला। मैं उस तुच्छ (हीन) विमर्दकको कैसे पाऊं? वह विमर्दक मेरेद्वारा बोधित कराये हुए परिचय-सूचक चिह्नसे और मेरे आदेशसे आपको (राजवाहनको) खोजनेके लिए उसी दिन ही उज्जयिनी-(उज्जैन-) के लिए प्रस्थान कर चुका था। अर्थपतिने विमर्दकको न पा करके विमर्दकद्वारा किये अपराधको अपने ऊपर मान

हाद्भयाद्वा प्रत्याख्याय पुनर्धनमित्रेण विभाविते कुपितेन राज्ञा निगृह्य निगडबन्धनमनीयत।

(४६) तेष्वेव दिवसेषु विधिना कल्पोक्तेन चर्मरत्नं दोग्धुकामा काममञ्जरी पूर्वदुग्धं क्षपणीभूतं विरूपकं रहस्युपसृत्य ततोऽपहृतं सर्वमर्थजातं तस्मै प्रत्यर्प्य सप्रश्रयं च बह्वनुनीय प्रत्यागमत्। सोऽपि कथंचिन्निर्ग्रन्थिकग्रहान्मोचितात्मा मदनुशिष्टो हृष्टतमः स्वधर्ममेव प्रत्यप-

* बालविबोधिनी *

मुक्त्वा अस्वीकृत्य वा। विभाविते-प्रमाणीकृते। निगृह्य बलाद् धृत्वा। निगडबन्धनं-पादयोः शृङ्खलबन्धनम्। अनीयत प्रापितः।

(४६) विधिना-अनुष्ठानेन। कल्पोक्तेन-चर्मरत्ननियमोक्तेन। दोग्धुकामा रत्नदोहनेच्छुः। पूर्वदुग्धं-प्राग्गृहीतसर्वस्वम्। क्षपणीभूतं-बौद्धभिक्षुकम्। विरूपके-वसुपालितापरनामकम्। ततस्तस्माद्विरूपकात्। तस्मै विरूपकाय। प्रत्यर्प्य दत्त्वा। सप्रश्रयं-सविनयम्। सप्रत्ययमिति पाठे सशपथम्। प्रत्यागमत् प्रतिगतवती। सोऽपि-विरूपकोऽपि कथंचित् केनापि प्रकारेण। निर्ग्रन्थिकग्रहात्-निर्ग्रन्थिकः क्षपणकाचारः स एव ग्रह उत्पातविशेषस्तस्मात्। निर्ग्रन्थोऽर्हन् क्षपणकः श्रमणो जिन इत्यपीत्यमरः। निर्ग्रन्थस्यायमिति निर्ग्रन्थिको निर्ग्रन्थाचार इत्यर्थः। मदनुशिष्टः मया बोधितः। स्वधर्मं वैदिकधर्मम्। प्रत्यपद्यत-पुनरग्रहीत्। अश्मन्तक शेषम्। अश्मन्तकं चुल्लिः शेषोऽवशिष्टं यस्मिन् तमिति स्वमभ्युद-

* बालक्रीडा *

करके, मोहसे अथवा भयसे अस्वीकार करनेपर फिरसे धनमित्रके आविष्कृत करनेतक राजाने क्रोधसे अर्थपतिको बेड़ी पहिना दीं।

(४६) उन्हीं दिनोंमें चर्मरत्नभस्त्रिकाको नियमोक्त विधिसे दुहनेकी इच्छा करनेवाली काममञ्जरी जो पहले बौद्धभिक्षुक विरूपकका धन ले चुकी थी। उस बौद्धभिक्षुक-(क्षपणक-) को एकान्तमें बुलाया तथा उस बौद्धभिक्षुसे जो धन पहले प्राप्त किया था उस धनको बौद्धभिक्षुको विनयपूर्वक देते हुए तथा उस भिक्षुकी बहुत सम्मान्यता करके पुनः घरपर लौट आयी। वह बौद्धभिक्षु भी किसी प्रकारसे अर्हन् सिद्धान्तकी वेदनाओंसे युक्त हो करके मेरे आदेशोंसे प्रसन्न वदन होकर अपने वैदिक-धर्ममें लौटकर आ गया। काममञ्जरीने भी थोड़े ही

यत । काममञ्जर्यपि कतिपयैरेवाहोभिरश्मन्तकशेषमजिनरत्नदोहाशया स्वमभ्युदयमकरोत् ।

(४७) अथ मत्प्रयुक्तो धनमित्रः पार्थिवं मिथो व्यज्ञापयत्—'देव, येयं गणिका काममञ्जरी लोभोत्कर्षाल्लोभमञ्जरीति लोकावक्रोशपात्रमासीत्, साद्य मुसलोलूखलान्यपि निरपेक्षं त्यजति । तन्मन्ये मच्चर्मरत्नलाभं हेतुम् । तस्य खलु कल्पस्तादृशः । वणिग्भ्यो वारमुख्याभ्यश्च दुग्धे नान्येभ्य इति हि तद्वृत्ता प्रतीतिः । अतोऽमुष्यामस्ति मे शङ्का' इति । सा सद्य एव राज्ञा सह जनन्या समाहूयत ।

* बालविबोधिनी *

यमित्यस्य विधेयविशेषणम् । अश्मन्तमुद्धानमधिश्रयणीचुल्लिरन्तिकेत्यमरः । स्वमभ्युदयं स्वकीयसम्पदम् । काममञ्जरी सर्वाण्येव स्वधनानि तथा व्यतरद् यथा चुल्लिमात्रमेव गृहेऽवशिष्टमासीदिति भावः ।

(४७) मत्प्रयुक्तः मयोपदिष्टः । पार्थिवं राजानम् । लोभोत्कर्षात् लोभातिशयात् । लोकावक्रोशपात्रं जनापवादभाजनम् । निरपेक्षं निर्विचारं यथा तथा । त्यजति ददाति । तत्—तस्मात्कारणात् । मच्चर्मरत्नलाभं मदीयचर्मरत्नप्राप्तिम् । हेतुं तादृशदानस्य कारणम् । मन्ये—निश्चिनोमि । तस्य चर्मरत्नस्य । कल्पो नियमः । तादृशः पूर्वोक्तप्रकारः । अमुष्यां काममञ्जर्याम् । शङ्का—चौर्यसन्देहः । सा काममञ्जरी । सद्यः तस्मिन्नहनि । जनन्या रागमञ्जरीमात्रा । सहेति सम्बध्यते ।

* बालक्रीडा *

दिनोंमें अपने अभ्युदयके लिये चर्मरत्नभस्त्रिका दुहनेकी इच्छासे, सब धनको दान करके केवल चूल्हीमात्र अवशिष्ट अपनेको बना डाला ।

(४७) तत्पश्चात् मेरेद्वारा उपदिष्ट धनमित्रने एकान्तमें राजासे कहा—" "हे देव ! आजकल जो यह काममञ्जरी वेश्या है । वह अतिशय लोभके कारण लोभमञ्जरीकी तरह जनोंकेद्वारा अपवादधारिणी हो रही है । वह आज मूसल, ओखली भी अविचारसे त्याग रही है । उस चर्मरत्नभस्त्रिकाकी दोहनक्रिया इसी रीतिसे है । वेश्या और बनिया ही इसे दुह सकते हैं। अन्य लोग नहीं दुह सकते । इसलिए उसीपर विश्वास होता है कि, उसी वेश्याने मेरी चर्मरत्नभस्त्रिका प्राप्तकी है। उसीपर शङ्का है। राजाकेद्वारा वह काममञ्जरी माताके साथ तुरत बुलायी गयी।

(४८) व्यथितवर्णेनेव मयोपह्वरे कथितम्—'नूनमार्ये, सर्वस्वत्यागादतिप्रकाशादाशङ्कनीयचर्मरत्नलाभा । तदनुयोगायाङ्गराजेन समाहूयसे । भूयोभूयश्च निर्बद्धया त्वया नियतमस्मि तदागतित्वेनाहमपदेश्यः । ततश्च मे भावी चित्रवधः । मृते च मयि न जीविष्यत्येव ते भगिनी । त्वं च निःस्वीभूता । चर्मरत्नं च धनमित्रमेव प्रतिभजिष्यति । तदियमापत्समन्ततोऽनर्थानुबन्धिनी । तत्किमत्र प्रतिविधेयम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

(४८) व्यथितवर्णेन-दैन्यपूर्णेन । मया अपहारवर्मणा । उपह्वरे एकान्ते । अतिप्रकाशात्-सर्वजनसंवेद्यात् । आशंकनीयेति-आशङ्कनीयः संशयनीयः चर्मरत्नस्य लाभो यस्याः सा । त्वया चर्मरत्नं लब्धमिति सर्वे संशेरत इति भावः । तदनुयोगाय-तत्प्रश्नं कर्त्तुम् । भूयो भूयः पुनः पुनः । निर्बद्धया साग्रहं पृष्टया । नियतं अवश्यम् । तदागतित्वेन चर्मरत्नप्राप्तिहेतुत्वेन । अपदेश्यः वक्तव्यः । चित्रवधः-विचित्रनिधनम् । अस्वाभाविकं मरणमिति भावः । ते भगिनी-रागमञ्जरी । निःस्वीभूता-दरिद्रीकृता । प्रतिभजिष्यति-प्राप्स्यति । समन्ततः सर्वतः। अनर्थानुबन्धिनी-अनर्थोत्पादिका । अत्रास्मिन् विषये । प्रतिविधेयं कर्त्तव्यम् ।

* बालक्रीडा *

(४८) मैंने (अपहारवर्माने) बनावटी दुःखमयवेष करके काममञ्जरीसे एकान्तमें जा करके कहा—"हे आर्य्ये ! आपने अपना सम्पूर्ण धन दान कर दिया है इस हेतुसे सबको पूर्ण सन्देह हो गया है कि, आपके (काममञ्जरीके) पास चर्मरत्नभस्त्रिका है । उसीके विषयमें पूछपांछके लिये राजाने आपको बुलाया है। राजाद्वारा आग्रहपूर्वक बार-बार पूछे जानेपर कि, यह चर्मरत्नभस्त्रिका आपको (काममञ्जरीको) कैसे मिली ? कहां मिली ? आदि तो आप (काममञ्जरी) अवश्य मेरा नाम बतलावेंगी । उसपर मेरा विचित्र रीतिसे निधन हो जायगा" । मेरे (अपहारवर्माके) इस अस्वाभाविक रीतिके मरणसे आपकी बहिन रागमञ्जरी भी जीवित न रहेगी । आप (काममञ्जरी) दरिद्रावस्थामें हैं ही । चर्मरत्नभस्त्रिका—जिससे धनकी प्राप्ति होनेकी आशा है वह भी—धनमित्रको ही मिल जायगी । इस कारणसे यह आपत्ति सर्वथा अनर्थकारिणी है अत एव इस विषयमें क्या उपाय करना चाहिये ।

(४६) तथा तज्जनन्या चाश्रूणि विसृज्योक्तम्—'अस्त्येवैतदस्मद्बालिश्यान्निर्भिन्नप्रायं रहस्यम। राज्ञश्च निर्बन्धाद्द्वित्रिश्चतुर्निह्नुत्यापि नियतमागतिरपदेश्यैव चोरितस्य त्वयि। त्वयि त्वपदिष्टे सर्वमस्मत्कुटुम्बमवसीदेत्। अर्थपतौ च तदपयशो रूढम्। अङ्गपुरप्रसिद्धं च तस्य कीनाशस्यास्माभिः सङ्गतम्। अमुनैव तदस्मभ्यं दत्तमित्यपदिश्य वरमात्मा गोपायितुम्' इति मामभ्युपगमय्य राजकुलमगमताम्। राज्ञानुयुक्ते

* बालविबोधिनी *

(४६) तथा काममञ्जर्या। तज्जनन्या तन्मात्रा च। अस्त्येवैतत्—सत्यमेवैतत्। अस्मद्बालिश्यात्—अस्माकं मूर्खतया। निर्भिन्नप्रायं—बाहुल्येन प्रकाशितम्। निर्बन्धात्। आग्रहातिशयात्। द्विः द्विवारम्। त्रिः त्रिवारं चतुश्चतुर्वारम्। द्वित्रिचतुर्भ्यः सुर्जितसुच् प्रत्ययः। निह्नुत्य सगोप्य। आगतिः प्राप्तिहेतुत्वम्। चोरितस्य अपहृतस्य पदार्थस्य। अपदिष्टे कीर्तिते चोरत्वेनेति शेषः। अवसीदेत् विनश्येत्। तदपयशः—चर्मरत्नचौर्यापवाद। रूढं प्रसिद्धम्। तस्य-अर्थपतेः। कीनाशस्य—क्षुद्रस्य। सङ्गतं मैत्री। अमुना अर्थपतिना। तत्—चर्मरत्नम्। वरं मनागिष्टः। गोपायितुं रक्षितुम्। अभ्युपगमय्य बोधयित्वा। अगमतां गतवत्यौ। अनुयुक्ते-पृष्टे। न्यायः नियमो रीतिर्वा। वेशकुलस्य वेश्याजनस्य दातुरपदेशः

* बालक्रीडा *

(४६) इसपर वह काममञ्जरी और उसकी माता माधवसेनाने आँखोंमे आँसुओंको छोड़ते हुए कहा—"यह सर्वदा सत्य है कि, हम लोगोंकी मूर्खताके कारण ही यह रहस्य बहुलतासे प्रकाशित हो गया है। राजाके अतिशय आग्रहसे यदि आपने दो बार तीन बार चार बार उस बातको छिपानेपर फिर अपहृत (चोरी की हुई) वस्तुके विषयमें कह दिया तो, आपपर ही चोरीका सन्देह हो जायगा। और आपके नाम कथनसे हमारा सारा परिवार विनष्ट हो जायगा। यह चर्मरत्नभस्त्रिकाका चौर्यापवाद अर्थपतिके लिए प्रसिद्ध हो चुका है। अङ्गपुरमें यह प्रसिद्धि है ही कि, उस क्षुद्र अर्थपतिके साथ हम लोगोंकी मैत्री है। ऐसी अवस्थामें हम लोग यह कह करके अपनी रक्षाका उपाय ठीक सोचती हैं कि, यह चर्मरत्नभस्त्रिका मुझे उसी अर्थपतिने दी है। "ऐसा मुझे समझा करके वे लोग राजदरबारमें चली गयीं। राजाद्वारा पूछे जानेपर—

च 'नैष न्यायो वेशकुलस्य यद्दातुरपदेशः । न ह्यर्थैर्न्यायार्जितैरेव पुरुषा वेशमुपतिष्ठन्ति' इत्यसकृदतिप्रणुद्य कर्णनासाच्छेदोपक्षेपभीषिताभ्यां दग्धबन्धकीभ्यां स एव तपस्वी तस्करत्वेनार्थपतिरग्राह्यत ।

(५०) कुपितेन च राज्ञा तस्य प्राणेषूद्यतो दण्डः । प्राञ्जलिना धनमित्रेणैव प्रत्यषिध्यत—'आर्य, मौर्यदत्त एष वरो वणिजाम् ईदृशेष्वपराधेष्वसुभिरवियोगः । यदि कुपितोऽसि हृतसर्वस्वो निर्वासनीयः पाप

* बालविबोधिनी *

दातृनामकीर्त्तनम् । नहीति–अन्यायार्जितेनार्थेनैव प्रायो वेश्यासु आसक्ता भवन्ति पुरुषा इति भावः । असकृत् पुनः पुनः । अतिप्रणुद्य परिहृत्य निहृत्य वा । कर्णयोर्नासायाश्च छेदः कर्त्तनं तस्योपक्षेपः प्रस्तावस्तेनभीषिताभ्यां तर्जिताभ्याम् । यदि पुनर्मिथ्याकथयिष्यसि तदा कर्णनासिकच्छेदं करिष्यामीति भयं प्रदर्शितमिति भावः । दग्धबन्धकीभ्यां भाग्यहीनगणिकाभ्यां काममञ्जरीतज्जननीभ्याम् । तपस्वी निर्दोषः । अग्राह्यत ग्राहितो राज्ञेति शेषः ।

(५०) तस्य अर्थपतेः । उद्यत ऊर्ध्वीकृतः । प्राणदण्डो विहित इत्यर्थः । प्रत्यषिध्यत निवारितः । मौर्यदत्तः–मौर्येण चन्द्रगुप्तेन नीतिशास्त्रकर्त्रा दत्तोऽर्पितः । वणिजां वैश्यानाम् । ईदृशेषु–चौर्यादिषु । असुभिः प्राणैः । अवियोगः अविच्छेदः । एतादृशेनापराधेन वैश्यानां प्राणदण्डो न कर्त्तव्य इति भावः । हृतस-

* बालक्रीडा *

(उन्होंने कहा)—"राजन् ! यह वेश्याओंका धर्म नहीं है कि, वे दाताओंका नाम बतलावें । और यह भी बात नहीं है कि, जो धन वेश्याओंके यहां आता है वह न्यायार्जित ही हो, (क्योंकि)–प्रायः अन्यायार्जित धनवाले पुरुष वेश्याओंपर आसक्त होते हैं—, और न्यायार्जित धनवाले ही पुरुष वेश्याओंके यहां आते हों ।" ऐसे वाक्योंसे बार–बार छिपानेपर भी जब भाग्यहीना उन वेश्याओंको कान–नाक काटनेकी धमकी दी गयी तो, उन लोगोंने डर करके निर्दोष अर्थपतिको चोर बतलाया ।

(५०) राजाने क्रोध करके उस अर्थपतिके लिए प्राणदण्डकी आज्ञा दे दी । ऐसी आज्ञापर धनमित्रने हाथ जोड़ करके आज्ञाका प्रतिरोध करते हुए राजासे कहा—"हे आर्य ! नीतिशास्त्रकर्ता महाराज चन्द्रगुप्त मौर्यका ऐसा मत

एष.' इति। तन्मूला च धनमित्रस्य कीर्तिरप्रथत। अप्रीयत च भर्ता। पटच्चरच्छेदशेषोऽर्थपतिरर्थमत्त. सर्वपौरजनसमक्ष निरवास्यत। तस्यैव द्रव्याणां तु केनचिदवयवेन सा वराकी काममञ्जरी चर्मरत्नमृगतृष्णिकापविद्धसर्वस्वा सानुकम्प धनमित्राभिनोदितेन भूपेनान्वगृह्यत। धनमित्रश्चाहनि गुणिनि कुलपालिकामुपायस्त। तदेव सिद्धसकल्पो रागमञ्जरीगृह हेमरत्नपूर्णमकरवम।

* बालविबोधिनी *

र्वस्व गृहीतधन.। निर्वासनीय देशान्निष्कासनीय। तन्मूला—अर्थपतिप्राणरक्षणनिमित्ता। अप्रथत-विख्याताऽभवत्। भर्ता स्वामी—राजेत्यर्थः। पटच्चरेति—पटच्चर जीर्णवस्त्र तस्य च्छेद' खण्डः शेषोऽवशिष्टो यस्य सः। कौपीन मात्राव शेष इत्यर्थ.। तस्यैव अर्थपतेरेव। द्रव्याणा धनानाम्। अवयवेन अशेन। चर्मरत्नेति—चर्मरत्नस्य मृगतृष्णिकया मरीचिकया अपविद्ध नाशितं सर्वस्वं यया सा। सानुकप सकृपम्। धनमित्राभिनोदितेन धनमित्रप्रेरितेन। अन्वगृह्यत अनुगृहीता। गुणिनि प्रशस्ते अहनीत्यस्य विशेषणम्। उपायंस्त परिणीतवान्। सिद्धसंकल्पः सिद्धमनोरथ.। अपहारवर्मेति शेषः।

* बालक्रीडा *

है कि, ऐसे अपराधोंके लिए वैश्योंके प्राणोंको न लेना चाहिये। अपितु, उनका सर्वस्व हरण करके उन्हें राज्यसे निर्वासित कर देना चाहिये।" यदि आप कुपित ही हैं, तो, इसका सर्वस्व अपहरण कर लें और इसे निर्वासित कर दें। यही इसके पापका दुष्परिणाम होगा। अर्थपतिके प्राण बचानेके कारण धनमित्रकी कीर्ति भी फैल गयी। और राजा भी धनमित्रपर प्रसन्न हो गया। कौपीनवेश बना करके सब पुरवासियोंके सामने ही अर्थपतिको राज्य-निर्वासित करा दिया। उसी अर्थपतिके धनका कुछ भाग उस तुच्छा काममञ्जरीको भी दिला दिया जो चर्मरत्नभस्त्रिकाकी दुहनेकी इच्छासे अपना सर्वस्व दान कर चुकी थी। धनमित्रकी प्रेरणासे राजाने प्रसन्नता प्रकट की। धनमित्रने शुभ दिवसमें कुलपालिकाके साथ पाणिग्रहण कर लिया। मैंने (अपहारवर्म्माने) भी इस प्रकारसे सिद्धमनोरथ होनेपर रागमञ्जरीके गृहको सुवर्ण, रत्न आदिसे परिपूर्ण कर दिया।

(५१) अस्मिंश्च पुरे लुब्धसमृद्धवर्गस्तथा मुषितो यथा कपालपाणिः स्वैरेव धनैर्मद्विश्राणितैः समृद्धीकृतस्यार्थिवर्गस्य गृहेषु भिक्षार्थमभ्रमत् । न ह्यलमतिनिपुणोऽपि पुरुषो नियतिलिखितां लेखामतिक्रमितुम् । यतोऽहमेकदा रागमञ्जर्याः प्रणयकोपप्रशमनाय सानुनयं पायितायाः पुनःपुनः प्रणयसमर्पितमुखमधुगण्डूषमास्वादमास्वादं मदेनास्पृश्ये । शीलं हि मदोन्मादयोरमार्गेणाप्युचितकर्मस्वेव प्रवर्तनम् । यदहमुपोढमदः 'नगरमिदमेकयैव शर्वर्या निर्धनीकृत्य त्वद्भवनं पूरयेयम्' इति प्रत्यर्थितप्रियतमा-

* बालविबोधिनी *

(५१) लुब्धेति लुब्धानां धूर्त्तानां समृद्धानां धनिनां वर्गः समूहः । कपालपाणिः-खर्परहस्तः । स्वैरेव निजैरेव । मद्विश्राणितै मयादत्तैः । समृद्धीकृतस्य पुष्टस्य धनीकृतस्येति यावत् । लुब्धानां धनान्यपहृत्य मया याचकेभ्यो दत्तानि । साम्प्रतं लुब्धानां धनेनैव ये समृद्धा याचकास्तेषां गृहेष्वेव ते लुब्धा भिक्षार्थं गच्छन्तीति भावः । अलं समर्थः । अतिनिपुणः अतिचतुरः । नियतिलिखितां विधिनिर्दिष्टां लेखां गणनाम् । अतिक्रमितुमुल्लंघयितुम् । अहमपहारवर्मा । प्रणयकोपप्रशमनाय मानभञ्जनाय । पायितायाः कृतपानायाः सुरामिति शेषः । प्रणयेति-प्रणयेन प्रेम्णा समर्पितं दत्तं यन्मुखमधुनो मुखामृतस्य गण्डूषं तत् । आस्वादमास्वादम्-पुनः पुनरास्वाद्य । णमुल् । मदेन मत्ततया । अस्पृश्ये स्पृष्टोऽभवम् ।

* बालक्रीडा *

(५१) इस नगरमें जितने भी धूर्त्त धनिक समुदाय थे, उनके धनोंको इस रीतिसे आहरण करा दिया । जिससे उनके पास केवल एक-एक खर्परमात्र हाथोंमें अवशिष्ट रह गया । मेरेद्वारा वितरित किये हुए अपने ही धनको वे लोग उन याचकोंके घरपर मांगते डोलने लगे, जिन्हें मैंने समृद्ध कर दिया था । परम प्रवीण मनुष्य भी ब्रह्माकी लिखित रेखाको मिटानेमें सर्वदा असमर्थ ही रहते हैं । एक दिनकी घटना है कि, मैंने रागमञ्जरीके प्रणयकोपके शमनार्थ प्रेमसे उसके मुखके अमृत गण्डूषका बार-बार आस्वादन किया । और मैं प्रेमसे पान करता हुआ, मदोन्मत्त हो गया । मद और उन्माद दोनोंका यही स्वभाव है कि, उनके वशीभूत होनेपर भी मनुष्य पूर्वकी अभ्यस्त उचित प्रवृत्तिकी ओर ही प्रवृत्त होता है । मैं उस कालमें अति मदोन्मत्त था । "मैं एक ही रातमें इस नगरको निर्धन बना करके

प्रणामाञ्जलिशपथशतातिवर्ती मत्तवारण इव रभसच्छिन्नश्रृङ्खलः कयापि धात्र्या शृगालिकाख्ययानुगम्यमानो नातिपरिकरोऽसिद्वितीयो रंहसा परेणोदचलम् । अभिपततोऽपि नागरिकपुरुषानशङ्कमेव विगृह्य तस्कर इति तैरभिहन्यमानोऽपि नातिकुपित क्रीडन्निव मदावसन्नहस्तपतितेन निस्त्रिंशेन द्वित्रानेव हत्वावघूर्णमानताम्रदृष्टिरपतम् ।

* बालविबोधिनी *

मत्तोऽभवमित्यर्थः । शीलं स्वभावः । मदोन्मादयो.-मदो मत्तता-उन्मादः चित्तता तयोः शीलमित्यनेन सम्बन्धः । अमार्गेण विरुद्धमार्गेण । उचितकर्मसु अभ्यस्तकार्येषु । प्रवर्त्तनं प्रवृत्तिः । एतदेव शीलं मदोन्मादयोः । उपोढमदः अतिशयमत्तः । प्रव्यथितेति-प्रव्यथिता दुःखिता या प्रियतमा रागमञ्जरी तस्याः प्रणामाञ्जलिना यत् शपथशतं तदतिक्रम्य वर्तते इति । रभसच्छिन्नश्रृङ्खलः-रभसेन वेगेन च्छिन्ना श्रृङ्खला बन्धनरज्जुर्येन सः । नातिपरिकरः 'स्वल्पपरिजनः' । असिद्वितीयः खड्गमात्रसहायः । रंहसा वेगेन । परेण अतिशयितेन । अभिपततः सन्मुखमागच्छतः । विगृह्य युद्धं कृत्वा । अभिहन्यमानस्ताड्यमानः । मदेति-मदेन मत्ततया अवसन्नः शिथिलो यो हस्तस्तस्मात् पतितेन भ्रष्टेन । निस्त्रिंशेन खड्गेन द्वित्रान्-द्वौ वा त्रयो वा परिमाणमेषामिति द्वित्रा स्तान् । अवघूर्णेति-अवघूर्णमाना विह्वला ताम्रा रक्तवर्णा दृष्टिर्नयने यस्य सः । अपतम् भूमाविति शेषः ।

* बालक्रीडा *

तुम्हारे घरको धनसे पाट दूंगा ।" (आदि बक रहा था) । दुःखिता प्रियतमा रागमञ्जरीद्वारा बार-बार हाथ जोड़ करके प्रणाम करनेको तथा शपथादि खानेको न मान करके मैं उस मतवाले हाथीके समान हो गया जो बड़े वेगसे अपनी लोहेकी सीकड़ी आदि तोड़ देता है । कोई शृगालिका नामक दूती जो (मुझे समझाने) मेरे पीछे आ रही थी । उससे अनुगम्यमान मैं स्वल्पपरिजनवाला एक हाथमें तलवार लिये हुए वेगसे मार्गपर आ गया । नगररक्षक पुरुष जो मुझे चोर समझ करके पकड़ने आये उनसे युद्ध करके तथा उनमेंसे दो-तीनको ताड़ित कर दिया मैं (अपहारवर्मा) मदके जोशमें विह्वल हो करके शिथिल हाथों युक्त तलवार रहित होकर एवं लाल-लाल नेत्रोंको किये हुए भूमिपर गिर पड़ा ।

(५२) अनन्तरमार्तरवान्विसृजन्ती शृगालिका ममाभ्याशमगमत् । अवध्ये चाहमरिभिः । आपदा तु मदापहारिण्या सद्य एव बोधितस्तत्क्षणोपजातया प्रतिभया व्यचीचरम्—'अहो, ममेयं मोहमूला महत्यापदापतिता । प्रसृततरं च सख्यं मया सह धनमित्रस्य, मत्परिग्रहत्वं च रागमञ्जर्याः । मदेनसा च तौ प्रोर्णुतौ श्वो नियतं निग्रहीष्येते । तदियमिह प्रतिपत्तिर्यथानुष्ठीयमानया मन्नियोगतस्तौ परित्रास्येते । मां च कदाचिदनर्थादितस्तारयिष्यति' इति कमप्युपायमात्मनैव निर्णीय शृगालिकाम-

* बालविबोधिनी *

(५२) आर्त्तरवान्–पीड़ासूचकध्वनीन् । विसृजन्ती–मुञ्चन्ती । रुदतीत्यर्थः । अभ्यांशं समीपम् । अबध्ये बद्धोऽभवम् । बध्यतेः कर्मणि लङ् । मदापहारिण्या—मत्ततानाशिन्या । प्रतिभया—प्रज्ञया । व्यचीचरं विचारितवानस्मि । मोहमूला अज्ञाननिबन्धना । आपतिता आगता । प्रसृततरं प्रसिद्धतरम् । मत्परिग्रहत्वं मद्भार्यात्वम् । मदेनसा मदपराधेन तौ–रागमञ्जरीधनमित्रौ । प्रोर्णुतौ–आच्छादितौ अभिभूताविति यावत् । श्वः–आगामिदिने । निग्रहीष्येते निग्रहं प्राप्स्यतः । प्रतिपत्तिः कर्त्तव्यम् । यया–प्रतिपत्त्या । अनुष्ठीयमानया–क्रियमाणया । मन्नियोगतः–मदादेशात् । तौ–रागमञ्जरीधनमित्रौ । कदाचित्–पक्षान्तरेण । अनर्थात्–विपदः । इतः–अस्मात् । तारयिष्यति

* बालक्रीडा *

(५२) इसके अनन्तर पीड़ा सूचक शब्दोंको करती हुई शृगालिका भी मेरे पास आ गयी । मैं (अपहारवर्मा) शत्रुओंद्वारा (नगर–रक्षकोंद्वारा) बांध लिया गया । उन्मादत्वको नाश करनेवाली आपत्तिने तत्क्षणमें ही मुझे बुद्धि दी और उसी उत्पन्न हुई प्रज्ञासे (बुद्धिसे) मैंने विचार किया । "अहो ! मेरे अज्ञान निबन्धनसे यह विपुला आपत्ति आ पड़ी है । मेरे साथ धनमित्रकी प्रगाढ़ मित्रता और रागमञ्जरीका मेरे साथ पाणिग्रहण क्रिया प्रसिद्धि पा रही हैं । मेरे इस पापसे वे दोनों धनमित्र और रागमञ्जरी अपराधी हो जायंगे । (अरे !) कल वे लोग अवश्य पकड़े जायंगे । इसलिए अब ऐसा कोई कर्त्तव्य करना चाहिये । जिसके करनेसे ये दोनों रागमञ्जरी और धनमित्र मेरे नियोग (आदेश) से बच जायं । क्योंकि—बचे रहनेसे कदाचित् वे लोग मुझे भी बचा सकें ।"

गादियम्-'अपेहि जरतिके, या तामर्थलुब्धां दग्धगणिकां रागमञ्जरिकामजिनरत्नमत्तेन शत्रुणा मे मित्रच्छद्मना धनमित्रेण संगमितवती, सा हतासि। तस्य पापस्य चर्मरत्नमोषाद्दुहितुश्च ते साराभरणापहारादहमद्य निःशल्यमुत्सृजेय जीवितम्' इति।

(५३) सा पुनरुद्घट्टितज्ञा परमधूर्ता साश्रुगद्गदमुदञ्जलिस्तान्पुरुषान्सप्रणाममासादितवती सामपूर्वं मम पुरस्तादयाचत—'भद्रकाः, प्रतीक्ष्यतां कंचित्कालं यावदस्मादस्मदीयमेवं मुषितमर्थजातमवगच्छेयम्'

* बालविबोधिनी *

उद्धरिष्यति। आत्मनैव स्वयमेव। अपेहि-अपसर दूरङ्गच्छेति यावत्। जरतिके वृद्धे। सम्बोधनमेतत्। या त्वमित्यर्थः। अजिनरत्नमत्तेन-चर्मरत्नगर्वितेन। मित्रच्छद्मना-कपटमित्रेण। संगमितवती संयोजितवती। सा त्वम्। हता विनष्टा। पापस्य दुरात्मनो धनमित्रस्य। चर्मरत्नमोषात्-चर्मरत्नापहरणात्। दुहितुः कन्याया रागमञ्जर्या इत्यर्थः। सारेति-सारो मूलधनम् आभरणमलङ्कारस्तयोरपहारादपहरणात्। निःशल्यं निर्बाधमवश्यमिति यावत्। उत्सृजेय त्यजेयम्।

(५३) सा शृगालिका। उद्घट्टितज्ञा-उद्घट्टितं सूचितं जानातीति तथा। प्रत्युत्पन्नमतिरिति भावः। उदञ्जलिर्बद्धाञ्जलिः। तान् ये खलु अपहारवर्माणमबध्नन् आसादितवती प्राप्तवती। सामपूर्वं सविनयम्। भद्रकाः सौम्याः सम्बो-

* बालक्रीडा *

इस प्रकारकी कोई तरकीब अपने आप ही सोच करके शृगालिकासे बोला—'ओ वृद्धे। दूर भाग। उस धनलोभिनी भाग्यहीना वेश्या रागमञ्जरीसे और चर्मरत्न-भस्त्रिकासे उन्मत्त मेरे शत्रु धनमित्रसे मित्रता करानेके छलसे तुमने समागम कराया है। सो अब तुम मारी गयी। उस पापी धनमित्रकी चर्मरत्न भस्त्रिकाके चुरानेसे तथा तुम्हारी कन्या रागमञ्जरीके आभूषणोंके अपहरणरूपी दोषसे मैं (अपहारवर्मा) आज अवश्य प्राणोंको विसर्जित करूंगा।"

(५३) वह सूचितज्ञा (प्रत्युत्पन्नमतिवाली) परम कुटिलप्रवीणा आंसू भर करके और बद्धाञ्जलि होकर एवं प्रणाम करती हुई उन नगररक्षकोंसे गद्गद वाणीमें विनयके साथ मेरे सामने ही बोली—"हे सौम्यो। आप लोग कुछ समयतक प्रतीक्षा करें जिससे मैं इस चोरसे अपने चोरी गये हुए सब

इति । तथेति तैः प्रतिपन्ने पुनर्मत्समीपमासाद्य 'सौम्य, क्षमस्वास्य दासीजनस्यैकमपराधम् । अस्तु स कामं त्वत्कलत्राभिमर्शी वैरास्पदं धनमित्रः । स्मरंस्तु चिरकृतां ते परिचर्यामनुग्रहीतुमर्हसि दासीं रागमञ्जरीम् । आकल्पसारो हि रूपाजीवाजनः । तद्ब्रूहि क निहितमस्या भूषणम्' इति पादयोरपतत् ।

(५४) ततो दयमान इवाहमब्रवम्—'भवतु, मृत्युहस्तवर्तिनः किं

* बालविबोधिनी *

धनम् । प्रतीक्ष्यताम्-अपेक्ष्यतां युष्माभिरिति शेषः । अस्मात् तस्करात् । मुषितं अपहृतम् । अवगच्छेयं जानीयाम् । तथा-तथास्तु । तैः पुरुषैः । प्रतिपन्ने स्वीकृते । अस्य दासीजनस्य ममेत्यर्थः । स धनमित्रः । कामं यथेष्टम् । त्वत्कलत्रेति-त्वत्कलत्रं तव भार्या रागमञ्जरीमित्यर्थः अभिमृष्टवान् धर्षितवान् इति तथा । अतएव वैरास्पदं शत्रुताभाजनम् । चिरकृतां बहुकालविहिताम् । परिचर्यां सेवाम् । आकल्पसारः भूषणप्रधानः । हि यस्मात् । रूपाजीवाजनः-वेश्याजनः । रूपेण आजीवति जीविकां करोतीति रूपाजीवा । निहितं स्थापितम् । अस्या रागमञ्जर्याः ।

(५४) दयमानः कृपां कुर्वन् । भवतु यथावास्तु । श्रूयतां वा । संवादे वर्तमानमिदमव्ययम् । मृत्युहस्तवर्त्तिनः यमहस्तगतस्य । अमुष्या रागमञ्जर्याः ।

* बालक्रीडा *

धनका पता लगा लूं ।" उन रक्षकोंसे "तथास्तु" ऐसी स्वीकृति पानेपर (वह) मेरे पास आयी और बोली—"हे सौम्य ! आप इस दूतीका एक अपराध क्षमा करें । आपकी भार्या रागमञ्जरीका अभिगामी वह धनमित्र आपका पूर्ण शत्रु रहे । किन्तु, बहुकालसे परिचर्या करनेवाली (अपनी) दासी रागमञ्जरीके ऊपर तो, अनुग्रह करनेकी कृपा करें । "रूपाजीवा—रूपसे जीवनवृत्ति चलानेवाली—वेश्याओंका अलंकार ही मुख्य होता है । अत एव आप बतायें कि, उस रागमञ्जरीका गहना (आभूषण) कहां पर धरा हुआ है ।" इतना कह करके वह मेरे पैरोंपर गिर पड़ी ।

(५४) तत्पश्चात् मैं (अपहारवर्मा) कृपालु पुरुषके समान बोला—"होगा, मैं (अपहारवर्मा) तो, अधुना, यमराजके हाथोंमें पड़ा हूं । अब मुझे

ममामुष्या वैरानुबन्धेन' इति तद्ब्रुवन्निव कर्णे एवैनामशिक्षयम्—'एवमेव प्रतिपत्तव्यम्' इति। सा तु प्रतिपन्नार्थेव जीव चीरम्, प्रसीदन्तु ते देवता', देवोऽप्यङ्गराजः पौरुषप्रीतो मोचयतु त्वाम्, एतेऽपि भद्रमुखास्तव दयन्ताम्, इति क्षणादपासरत्। आनीये चाहमारक्षिकनायकस्य शासनाच्चारकम्।

(५५) अथोत्तरेद्युरागत्य दृप्ततरः सुभगमानी सुन्दरंमन्यः पितुरत्ययादचिराधिष्ठिताधिकारस्तारुण्यमदादनतिपक्व कान्तको नाम नागरिकः

* बालविबोधिनी *

वैरानुबन्धेन—शत्रुताचरणेन। एना शृगालिकाम्। प्रतिपत्तव्यम्—विधातव्यम्। सा शृगालिका। प्रतिपन्नार्था गृहीतार्था यत्तेनोक्तं तत् सर्वं तया बुद्ध मिति भंग्या प्रकाशयन्तीत्यर्थः। पौरुषप्रीतः तव पुरुषकारेण सन्तुष्टः। एते नगररक्षकाः। दयन्तां कृपां कुर्वन्तु—रक्षन्तु इति यावत्। अपासरत् अपसृताऽभवत्। आनीये—आनीतः। आरक्षिकनायकस्य नगरपालाध्यक्षस्य। शासनादादेशात्। चारकं कारागृहम्।

(५५) उत्तरेद्युः परदिने। दृप्ततरः अतिगर्वितः। सुभगमानी—आत्मानं सुभगं मन्यतेऽसौ। सुन्दरम्मन्यः सौन्दर्याभिमानी। पितुरत्ययात् पितृमरणात्। अचिरेति—अचिरेण स्वल्पकालेन अधिष्ठितः प्राप्तः अधिकारो येन सः। तारुण्य-

* बालक्रीडा *

रागमञ्जरीसे शत्रुताका आचरण करनेसे क्या लाभ ?" ऐसा कहते हुए मैंने उस दासीके कानोंमें शिक्षा दी। कि—"इस इस प्रकारसे उपाय करो।" वह शृगालिका सब बातोंको ग्रहण करके (मुझे आशीर्वचन देने लगी) आप दीर्घायु हों! आपपर देवतागण प्रसन्न हों। अंगराज नृपति भी आपके पौरुषसे सन्तुष्ट होकर आपको छोड़ दें। ये भद्र पुरुषगण (नगररक्षकगण) आपपर दया करें।" ऐसा कह करके वह एक क्षणमें ही चली गयी। मैं (अपहारवर्मा) नगरपालाध्यक्षकी आज्ञासे कारागारमें लाया गया।

(५५) इसके अनन्तर दूसरे दिन, अत्यन्त गर्वित अपनेको सुभग माननेवाला सौन्दर्याभिमानी कान्त नामक काराध्यक्ष जो अपने पिताकी मृत्युके कारण थोड़े ही दिनोंमें उस स्थानपर आरूढ़ हुआ था। जिसे यौवनगर्वके हेतुसे उक्त अधिकारमें स्वायत्त अधिकारकी परिपक्वतामयी जानकारी भी न थी। उसने विर-

किंचिदिव भर्त्सयित्वा मां समभ्यधत्त-'न चेद्धनमित्रस्याजिनरत्नं प्रतिप्रयच्छसि, न चेद्वा नागरिकेभ्यश्चोरितकानि प्रत्यर्पयसि, द्रक्ष्यसि पारम्पर्यादशानां कारणानामन्ते च मृत्युमुखम्' इति ।

(५६) मया तु स्मयमानेनाभिहितम्-'सौम्य, यद्यपि दद्यामाजन्मनो मुषितं धनं न त्वर्थपतिदारापहारिणः शत्रोर्मे मित्रमुखस्य धनमित्रस्य चर्मरत्नप्रत्याशां पूरयेयम् । अदत्त्वैव तदयुतमपि यातनानामनुभवेयम् । इयं मे साधीयसी संधा' इति । तेनैव क्रमेण वर्तमाने सान्त्वनतर्जनप्राये

* बालविबोधिनी *

मदात् यौवनगर्वात् । अनतिपक्वः-अपरिणतः । नागरिकः काराध्यक्षः । माम्-अपहारवर्माणम् । समभ्यधत्त अकथयत् । प्रतिप्रयच्छसि-प्रत्यर्पयसि नागरिकेभ्यः पुरवासिभ्यः । चोरितकानि मुषितानि धनानि । कारणानां यातनानाम् । कारणातु यातना तीव्रवेदनेत्यमरः । मृत्युमुखमित्यस्य द्रक्ष्यसीत्यनेनान्वयः ।

(५६) मया अपहारवर्मणेत्यर्थः । स्मयमानेन ईषद्धास्यं कुर्वता । आजन्मनः-जन्मन आरभ्य । मुषितं चोरितम् । मित्रमुखस्य कपटमित्रस्य । जन्मन आरभ्यैतावत्कालं यन्मया चोरितं तत्सर्वं दातुं शक्नुयां किन्तु धनमित्रस्य चर्मरत्नप्राप्त्याशां न पूरयिष्यामीति भावः । तत्-चोरितधनम् । अयुतं दशसहस्रम् । साधीयसी दृढतरा । सन्धा प्रतिज्ञा । तेनैव क्रमेण-पूर्वोक्तप्रकारेण । वर्त्तमाने-

* बालक्रीडा *

स्कार करके मुझसे (अपहारवर्मासे) कहा—"यदि धनमित्रकी चर्मरत्न-भस्त्रिका न दोगे ! ······ यदि पुरवासियोंके चोरी किये द्रव्यको न लौटाओगे, तो, अठारहों तरह की कारगारकी यातनाओंके भोगनेके पश्चात् मृत्युके मुखमें प्राप्त होगे ।"

(५६) मैंने (अपहारवर्माने) मुस्कराते हुए कहा—"हे सौम्य ! मैंने अपने जीवनभरमें जो कुछ चोरी करके प्राप्त किया है । वह सब तो, मैं दे दूंगा, परन्तु, अर्थपतिकी स्त्रीको हरण करनेवाले अपने (मेरे) कपटी मित्र धनमित्रकी चर्मरत्न-भस्त्रिकासे प्राप्त धनकी प्रत्याशाको पूरी न होने दूंगा । चाहे मुझे ऐसा करनेपर दश हजार कठिन वेदनाओंको क्यों न सहन करना पड़े । यह मेरी दृढ़ प्रतिज्ञा है ।" इसी रीतिसे नित्य सान्त्वना और तिरस्कारके प्रश्न

प्रतिदिनमनुयोगव्यतिकरेऽनुगुणान्नपानलाभात्कतिपयैरेवाहोभिर्विरोपितव्रणः प्रकृतिस्थोऽहमासम ।

(५७) अथ कदाचिदच्युताम्बरपीतातपत्विपि क्षयिणि वासरे हृष्टवर्णा शृगालिकोज्ज्वलेन वेषेणोपसृत्य दूरस्थानुचरा मामुपश्लिष्याब्रवीत्-'आर्य, दिष्ट्या वर्धसे । फलिता तव सुनीतिः । यथा त्वयादिश्ये तथा धनमित्रमेत्याब्रवम्-'आर्य, तवैवमापन्न सुहृदित्युवाच-'अहमद्य वेशसंसर्गसुलभात्पानदोषाद्रुद्ध' । त्वया पुनरविशङ्कमद्यैव राजा विज्ञापनीयः-

* बालविबोधिनी *

चलति मतिः । सान्त्वनतर्जनप्राये सान्त्वनभर्त्सनबहुले । अनुयोगव्यतिकरे प्रश्नप्रकारे । अनुगुणेति-मदनुकूलभोज्यपेयप्राप्तेः । विरोपितव्रणः उपशान्तनागरिकप्रहारजनितक्षतः । प्रकृतिस्थः स्वस्थः ।

(५७) अच्युतेति—अच्युतस्य कृष्णस्य यदम्बरं वसनं तद्वत् पीता पिङ्गलवर्णा आतपस्य सूर्यालोकस्य त्विट् प्रभा यस्मिन् तस्मिन् । वासर इत्यस्य विशेषणम् । क्षयिणि क्षयं गच्छति । सायं काले इत्यर्थः । हृष्टवर्णा प्रफुल्लाकृतिः । उपसृत्यागत्य । दूरस्थानुचरा व्यवधानस्थितपरिजना । कारागारे सर्वेषां प्रवेशाभावात् । उपश्लिष्य समीपमागत्य । फलिता सिद्धा । आदिश्ये आदिष्टाऽभवम् । एवम् अनेन प्रकारेण । आपन्नः विपन्नः । सुहृन्मित्रम् । अपहारवर्मेति

* बालक्रीडा *

विनिमय करते हुए, मेरे अनुकूल भोजनाच्छादन मिलनेसे कुछ दिनोंमें, मेरे घाव, जो नगररक्षकोंसे युद्धमें हो गये थे, अच्छे हो गये मैं स्वस्थ हो गया।

(५७) स्वस्थ होनेके पश्चात् भगवान् कृष्णके पीले वस्त्रोंकी आभाके समान जिस समय सूर्यकी प्रभा पीली पड़ गयी थी तथा जिस समय सूर्यकी गति कम हो रही थी। ऐसे समय अर्थात् एक दिन सायंकालमें प्रफुल्लाकृतिवाली सुन्दर वेशको धारण किये हुए शृगालिकाने मेरे समीप आ करके, जिस समय कारागारके रक्षितजन कुछ दूरपर थे, कहा—"हे आर्य! हर्षकी बात है। आपकी सुन्दर नीति सिद्ध हुई। जिस प्रकारसे आपने मुझे समझाया था। उसी प्रकारसे मैंने धनमित्रसे सब बातें समझा दीं। वे बातें इस प्रकारसे हैं-"हे आर्य! (धनमित्र!) आपके मित्र अपहारवर्माने आपत्तिमें फंसकर ये बातें आपके पास

'देव, देवप्रसादादेव पुरापि तदजिनरत्नमर्थपतिमुषितमासादितम् । अथ तु भर्ता रागमञ्जर्याः कश्चिदक्षधूर्तः कलासु कवित्वेषु लोकवार्तासु चातिवैचक्षण्यान्मया समसृज्यत । तत्संबन्धाच्च वस्त्राभरणप्रेषणादिना तद्भार्यां प्रतिदिनमन्ववर्ते । तदसावशङ्किष्ट निकृष्टाशयः कितवः । तेन च कुपितेन हृत तच्चर्मरत्नमाभरणसमुद्गकश्च तस्याः । स तु भूयः स्तेयाय

*बालविबोधिनी *

यावत् । इति वक्ष्यमाणम् । अहमपहारवर्मा । वेशसंसर्गसुलभात् वेशसंसर्गेण गणिकासम्पर्केण सुलभात् सहजसाध्यात् । बद्धो धृतः नागरिकैरिति शेषः । त्वया धनमित्रेण । अविशङ्कं निर्भयं यथा तथा। पुरापि पूर्वमपि । आसादितं प्राप्तं मयेति शेषः । भर्त्ता पतिः । अक्षधूर्त्तः द्यूतनिपुणः । कलासु नृत्यगीतादिषु लोकवार्तासु लोकव्यवहारेषु । अतिवैचक्षण्यात्-अतिचतुरतया । समसृज्यत सम्मिलितोऽभवत् । तत्सम्बन्धात् अक्षधूर्त्तसम्पर्कात् । तद्भार्यां अक्षधूर्त्तपत्नीम् । रागमञ्जरीमित्यर्थः । अन्ववर्त्ते सङ्गतोऽभवम् । अशङ्किष्ट जारत्वेन सन्दिग्धवान् । निकृष्टाशयः नीचान्तःकरणः । कितवो धूर्त्तः । आभरणसमुद्गकः भूषणसंपुटकः । पेटिकेति यावत् । तस्याः रागमञ्जर्याः । स्तेयाय-चौर्यं कर्त्तुम् । परिचारिकायै सेविकायै शृगालिकायै । पूर्वप्रणयानुवर्त्तिना पूर्वप्रणयमनुस्मृत्येत्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

कहीं हैं ।"—"मैं (अपहारवर्मा) आज वेश्याके संसर्गदोषसे सहजसाध्य मद्यपानके अपराधमें बंध गया हूं । आप निर्भयतापूर्वक राजासे जाकर आज ही कहें ।"—"हे देव ! (अंगराज !) आपकी (स्वामीकी ही) कृपासे पूर्व-कालमें भी वह चर्मरत्नभस्त्रिका जो अर्थपतिद्वारा चुरायी गयी थी मैंने प्राप्त की थी । अब फिर रागमञ्जरी नामकी वेश्याका पति जो द्यूतनिपुण (जुआमें प्रवीण) है । नाचने-गानेकी कलामें, कवित्वशक्तिमें, लोकव्यवहारमें जो अति प्रवीण है । उसने (अपनी उपर्युक्त) प्रवीणतासे ही मुझे अपने सम्पर्कमें मिला लिया । अर्थात् मुझसे उसने मित्रता कर ली । उसके सखापनके सम्बन्धसे मैं उसकी स्त्रीके पास रोज कपड़े, गहने आदि भेज देता था । इन उपहारोंके भेजनेके कारण उसने अपने नीचाशयद्वारा मुझे अपनी (द्यूतनिपुणकी) पत्नीका (रागमञ्जरीका) उपपति (जार) समझनेका सन्देह कर लिया है । और इसपर उस

भ्रमन्नगृह्यत नागरिकपुरुषैः। आपन्नेन चामुनानुसत्य रुदत्यै रागमञ्जरीपरिचारिकायै पूर्वप्रणयानुवर्तिना तद्भाण्डनिधानोद्देशः कथितः। ममापि चर्मरत्नमुपायोपक्रान्तो यदि प्रयच्छेदिह देवपादैः प्रसादः कार्यः।' इति। तथा 'निवेदितश्च नरपतिरसुभिरमुमवियोज्योपच्छन्दनैरेव स्वं ते दापयितुं प्रयतिष्यते। तन्नः पथ्यम्' इति।

(५८) श्रुत्वैव च त्वदनुभावप्रत्ययादनतिक्रमेणुना तेन तत्तथैव संपादितम्। अथाह त्वदभिज्ञानप्रत्ययिताया रागमञ्जर्याः सकाशादर्थेप्सि-

* बालविबोधिनी *

तद्भाण्डेति-तस्या रागमञ्जर्याः यद्भाण्डं भूषणं तस्य निधानोद्देशः सरक्षणस्थानम्। उपायोपक्रान्तः-उपायेन केनचिदुपक्रान्तो वशीकृतः। इह अस्मिन् विषये। देवपादैः राज्ञा इत्यर्थः। तथा-तेन प्रकारेण। निवेदितः विज्ञापितः। अवियोज्य मत्प्राणदण्डमकृत्वा। उपच्छन्दनैः सान्त्वनावचनैः। स्वं धनम् चर्मरत्नरूपम्। ते-तुभ्यं धनमित्रायेत्यर्थः। नोऽस्माकम्। पथ्यं हितकरमनुकूलमिति शेषः।

(५८) त्वदनुभावप्रत्ययात्-त्वत्प्रतापज्ञानात्। धनमित्रोऽपहारवर्मणः प्रतापं

* बालक्रीडा *

अक्षधूर्त्त (द्यूतनिपुण) ने कुपित हो करके उस चर्मरत्न-भस्त्रिकाको तथा रागमञ्जरीके आभूषणोंकी पेटीको चुरा लिया। पुनः उसने चोरीकी अभिलाषासे इधर-उधर नगरमें फेरा लगाया और इसी फेरा लगाते समय वह नगररक्षकोंके द्वारा पकड़ लिया गया। उसका अनुसरण करती हुई तथा उसके पीछे रोती हुई रागमञ्जरीकी सेविका शृगाली भी उसी समय वहां आयी। पूर्व प्रेमका संस्मरण करके उसके आभूषणोंकी पेटिका कहां पर है वह स्थान उसने (अपहारवर्माने) उससे कह दिया। मेरी चर्मरत्नभस्त्रिका येनकेनप्रकारेण (किसी उपायसे) दे दे ऐसा उपाय कर देना आपकी (प्रभुकी) प्रसन्नतापर निर्भर है।" ऐसा निवेदन करनेसे अंगराज भी सान्त्वनासे ही मुझसे आपकी (धनमित्रकी) चर्मरत्नभस्त्रिका देनेके लिए आग्रह करेंगे तथा मेरे प्राणोंको भी न लेंगे। वे सान्त्वनारूपी आदेश मेरे लिए हितकर होंगे।

(५८) यह श्रवण करके आपके (अपहारवर्माके) प्रतापके अभिमानसे

तानि वसूनि लभमाना राजदुहितुरम्बालिकाया धात्रीं माङ्गलिकां त्वदादिष्टेन मार्गेणान्वरञ्जयम् । तामेव च संक्रमीकृत्य रागमञ्जर्याश्चाम्बालिकायाः सख्यं परमवीवृधम् । अहरहश्च नवनवानि प्राभृतान्युपहरन्ती कथाश्चित्राश्चित्तहारिणीः कथयन्ती तस्याः परं प्रसादपात्रमासम् । एकदा

* बालविबोधिनी *

सम्यगेव जानातीति हेतोरिति भावः । अनतित्रस्नुना-नातिभीतेन । तेन धनमित्रेण । तत्-अपहारवर्मोक्तम् । तथैव-तत्कथितेनैव प्रकारेण । अहं-शृगालिका त्वदभीति-तव भवतोऽभिज्ञानेन विश्वासोत्पादकचिह्नेन प्रत्ययिताया विश्वासं गमितायाः । राजदुहितुः अङ्गदेशाधिपतिकन्यायाः । धात्री मुपमातरम् । त्वदादिष्टेन भवत्प्रदर्शितेन । मार्गेणोपायेन । अन्वरञ्जयम् अनुरञ्जितवती-आकृष्टवतीति यावत् । ताम् माङ्गलिकाम् । संक्रमीकृत्य द्वारीकृत्य । अवीवृधम् अवर्धयम् वृधेर्णिजन्ताल्लुङ् । प्राभृतानि-उपायनानि । प्राभृतं तु प्रदेशनम् । उपायनमुपग्राह्यमित्यमरः । चित्रा नानाविधाः । चित्तहारिणीः मनोहारिणीः । परमत्यर्थम् । हर्म्यगतायाः प्रासादस्थितायाः । तस्या अम्बालिकायाः । स्थानस्थितं स्वस्थानस्थितम् । कर्णकुवलयं कर्णोत्पलम् । स्तं भ्रष्टम् । समादधती संयोजयन्ती । प्रमत्तेव-अनवहितेव । प्रच्याव्य कर्णात् भ्रंशयित्वा । उत्क्षिप्य-उत्थाप्य । भूमे

* बालक्रीडा *

उस धनमित्रने नातिसयभीतिसे आपकेद्वारा कहा हुआ कार्य तथा आपके कथितप्रकारके अनुसारही सम्पादित कर दिया । इसके अनन्तर मैंने आपके विश्वसनीय चिह्नद्वारा रागमञ्जरीको सब बातोंका विश्वास करा करके उस रागमञ्जरीसे इच्छानुकूल धन प्राप्त किया । फिर अङ्गदेशाधिपतिकी राजकुमारी अम्बालिकाकी मांगलिका नामक धात्रीसे आपके आदेशानुसार उपायोंसे घनिष्ठता की । उसी मांगलिका धात्रीकेद्वारा मैंने रागमञ्जरी और अम्बालिकामें परस्पर परममित्रत्व करा दिया । नित्यप्रति नये-नये उपहारोंको ले जाती हूं और अनेकों मनोहर कथा-वार्ताओंके कथनसे उस अम्बालिका राजकुमारीकी कृपापात्री बन गयी हूं । एक दिन प्रासादके ऊपर स्थित अम्बालिका कुमारीका कर्णफूल अपने स्थानपर रहनेपर भी गिरनेवाला है ऐसा कहती हुई मैंने असावधानता करके (पागलके सदृश) गिरा दिया । पुनः पृथिवीसे उठा करके किसी बहानेसे कन्याके अन्तः

च हर्म्यंगतायास्तस्याः स्थानस्थितमपि कर्णकुवलयं स्रस्तमिति समादधती प्रमत्तेव प्रच्याव्य पुनरुत्क्षिप्य भूमेस्तेनोपकन्यापुरं कारणेन केनापि भवनाङ्गणं प्रविष्टस्य कान्तकस्योपरि प्रवृत्तकुहरपारावतत्रासनापदेशात्प्रहसन्ती प्राहार्षम् ।

(५९) सोऽपि तेन धन्यमन्य. किंचिदुन्मुख. स्मयमानो मत्कर्मप्रहासिताया राजदुहितुर्विलासप्रायमाकारमात्माभिलापमूलमिव यथा संकल्पयेत्तथा मयापि सज्ञयैव किमपि चतुरमाचेष्टितम । आकृष्टधन्वना च

* बालविबोधिनी *

भूतलात् । तेन–कर्णकुवलयेन । उपकन्यापुर कन्यान्तःपुरसमीपे । केनापि–अज्ञातेनेत्यर्थः । कान्तकस्य–प्रागुक्तकाराध्यक्षस्य । प्रवृत्तेति–प्रवृत्तकुहरस्य प्रारब्धसुरतस्य पारावतस्य कपोतस्य त्रासनापदेशात् भयप्रदर्शनच्छलात् । प्राहार्षं प्रहार कृतवती ।

(५६) सोऽपि–कान्तकोऽपि । तेन कर्णोत्पलप्रहारेण । किञ्चिदुन्मुखः ईषदूर्ध्वमुखः । स्मयमानः ईषद्धसन् । मत्कर्मप्रहासितायाः–मम कर्मणा तत्प्रहाररूपेणाचरणेन प्रहासिताया हास्यं गमितायाः । विलासप्राय कटाक्षादिबहुलम् । आकारं-स्वरूपम् । आत्मेति–आत्मनि स्वस्मिन् योऽभिलापः आकाङ्क्षा स एव मूलं निदान यस्य तम् । सकल्पयेत् चिन्तयेत् । मयापि शृगालिकयापि । संज्ञया इङ्गितेन । चतुरमाचेष्टितं-चातुर्यं प्रदर्शितम् । आकृष्टधन्वना-सज्यकार्मुकेण । आकृष्टं धनुर्येनेति

* बालक्रीडा *

पुरके भवनके आंगनमें प्रवेश करनेवाले कान्तकके (जो कारागाराध्यक्ष था) ऊपर, सुरतक्रीड़ामें प्रवृत्त हुए पारावतों (कबूतरों) को भय दर्शानेके छलसे, फेंककर मार दिया ।

(५६) वह कान्तक भी उस कर्णोत्पलके प्रहारसे कृतकृत्य होता हुआ मुस्करा करके कुछ ऊर्ध्वमुख हो करके (देखने लगा)। मेरी कर्मक्रियाओंसे हास्य करनेवाली राजकुमारी (अम्बालिका) के विलासमय रूपको उस कान्तकने अपने लिए समझ लिया और चिन्तित हो गया । मैंने (शृगालिकाने) भी इशारेसे चातुर्य प्रदर्शित कर दिया । (कान्तकने समझा कुमारी मेरेपर राग करके हँसी तथा मैंने उसे और पुष्ट कर दिया) । उस मुग्ध कान्तकको अज्जित धनुषसे युक्त

मनसिजेन विद्धः सन्दिग्धफलेन पत्रिणातिमुग्धः कथंकथमप्यपासरत् । सायं च राजकन्याङ्गुलीयकमुद्रितां वासताम्बूलपट्टांशुकयुगलभूषणावयवगर्भां च वङ्गेरिकां कयाचिद्बालिकया ग्राहयित्वा रागमञ्जर्या इति नीत्वा कान्तकस्यागारमगमम् ।

(६०) अगाधे च रागसागरे मग्नो नावमिव मामुपलभ्य परमहृष्यत । अवस्थान्तराणि च राजदुहितुः सुदारुणानि व्यावर्णयन्त्या मया स दुर्मतिः सुदूरमुदमाद्यत । तत्प्रार्थिता चाहं त्वत्प्रियाप्रहितमिति ममैव मुखताम्बूलोच्छिष्टानुलेपनं निर्माल्यं मलिनांशुकं चान्येद्युरुपाहरम् । तदी-

* बालविबोधिनी *

विग्रहः । विद्धो भिन्नः । सन्दिग्धफलेन–विषलिप्तमुखेन । पत्रिणा बाणेन । अपासरत् तत्स्थानान्निरगच्छत् । राजकन्येति–राजकन्याया अङ्गुलीयकेन मुद्रिकया मुद्रितां कृतचिह्नाम् । राजकन्ययैव प्रेषितमिति सूचनार्थं मुद्रया चिह्नितमकरोदिति भावः । वासेति–वासताम्बूलं कर्पूरादिना सुगन्धीकृतं ताम्बूलं पट्टांशुकयुगलं क्षौमवस्त्रयुगं भूषणावयवाः अलंकारभेदाश्च गर्भेऽभ्यन्तरे यस्यास्ताम् । वङ्गेरिकां वेत्रपुटिकाम् । वङ्गेरी वेत्रपुटिकेति वैजयन्ती । झांपीति प्रसिद्धाम् । रागमञ्जर्या इति–पेटिकेयं रागमञ्जर्यर्थं नीयत इति कपटेन कथयित्वेत्यर्थः ।

(६०) अगाधे अतिगभीरे । राग एव सागर स्तस्मिन् । अनुराग समुद्रे । नावं नौकाम् । उपलभ्य प्राप्य । परमत्यर्थं महृष्यत हृष्टोऽभवत् कान्तक इति शेषः। अवस्थान्तराणि कामदशाविशेषान् । सुदारुणानि सोढुमशक्यानि । व्यावर्णयन्त्या विशेषेण कीर्त्तयन्त्या । स कान्तकः । सुदूरमत्यन्तम् । उदमाद्यत उन्म-

* बालक्रीडा *

कामदेवने विषलित मुखवाले बाणोंसे ऐसा वेधा कि, वह कान्तक किसी प्रकारसे वहांसे हटनेमें समर्थ हुआ । सायंकालमें मैं, राजपुत्री (अम्बालिका) की अंगूठीकी मोहरके साथ एक बेंतकी पिटारीमें सुगन्धित पान, रेशमी साड़ी और चादर (ओढ़नी) तथा गहने रख करके एक बालिकाद्वारा उस पिटारीको कान्तकके गृह ले गयी

(६०) अति गम्भीर (गहिरे) अनुराग समुद्रमें निमग्न हुए उस कान्तकने मुझे नावके समान पा करके अत्यन्त हर्ष प्राप्त किया । राजकुमारी अम्बालिकाकी कामदेवकी अत्यन्त पीड़ितावस्था मेरेद्वारा वर्णन किये जानेपर वह- दुर्मति

यानि च राजकन्यार्थमित्युपादाय च्छन्नमेवापोढानि । इत्थं च संधुक्षितमन्मथाग्निः स एवैकान्ते मयोपमन्त्रितोऽभूत्—'आर्य, लक्षणान्येव तवाविसंवादीनि । तथा हि मत्प्रातिवेश्यः कश्चित्कार्तान्तिकः 'कान्तकस्य हस्ते राज्यमिदं पतिष्यति, तादृशानि तस्य लक्षणानि' इत्यादिक्षत् ।

(६१) तदनुरूपमेव च त्वामियं राजकन्यका कामयते । तदेकाप-

* बालविबोधिनी *

त्सीकृतः । तत्प्रार्थिता—तेन कान्तकेन याचिता । त्वत्प्रियेति—तव वल्लभया प्रेषितमित्युक्त्वा । मुखताम्बूलं चर्वितावशिष्टताम्बूलं, उच्छिष्टानुलेपनमुपभुक्तावशिष्टाङ्गरागम् । निर्माल्यं भुक्तावशिष्टपुष्पम् । मलिनांशुकं परिहितवस्त्रम् । अन्येद्युरपरदिवसे । उपाहरम् उपहृतवती तस्मै दत्तवतीत्यर्थः । तदीयानि कान्तकसम्बन्धीनि राजकन्यार्थं राजकन्यायाः कृते नयामीति कथयित्वेत्यर्थः । छन्नमेव गुप्तमेव । अपोढानि त्यक्तानि मयेति शेषः । इत्थमनेन प्रकारेण । संधुक्षितमन्मथाग्निः प्रज्वलितमदनानलः । स कान्तकः । उपमन्त्रितः उपदिष्टः । लक्षणानि हस्तपदादिचिह्नानि । अविसंवादीनि अविरुद्धानि शोभनानीति यावत् । प्रातिवेश्य-प्रतिवेशी । कार्तान्तिकः सामुद्रिकः । आदिक्षत् अकथयत् ।

(६१) तदनुरूपं कार्तान्तिकादेशानुकूलम् । तदेकापत्यः सा कन्यैव एक-

* बालक्रीडा *

अत्यन्त उन्मत्त हो गया । जब उस कान्तकने याचना की तब मैंने (शृगालिकाने) उसे यह बताया कि, आपकी वल्लभाने यह चर्वित पान, उपभुक्त किया हुआ लेपन जो देहमें लगाया जाता है कार्यमें उपभोग किये हुए पुष्प और काममें लाये हुए कपडे दिये हैं । जिन्हें मैं ही अपने पाससे ले गयी थी । उस कान्तकके द्वारा प्रदत्त उपहार राजकन्याके लिये ला गुप्त रीति छिपाकर फेंक दिया । इस रीतिसे उसकी कामाग्नि प्रज्वलित करके उस कान्तकसे ही एकान्तमें एक दिन मैंने उपदेश दिया । "हे आर्य ! (राजकन्याके) पद हस्त आदिके चिह्न आपके अनुकूल हैं । क्योंकि, मेरे सन्निकटमें रहनेवाले एक सामुद्रिकने यह कहा था (आपके विषयमें) कि " यह राज्य कान्तकको मिलेगा, क्योंकि, उसको ऐसी रेखाएं पड़ी हैं ।"

(६१) सामुद्रिकके कथनानुसार यह 'राजकन्या आपको चाहती है ।

स्यश्च राजा तया त्वां समागतमुपलभ्य कुपितोऽपि दुहितुर्मरणभयान्नोच्छेत्स्यति । प्रत्युत प्रापयिष्यत्येव यौवराज्यम् । इत्थं चायमर्थोऽर्थानुबन्धी । किमिति तात, नाराध्यते । यदि कुमारीपुरप्रवेशाभ्युपायं नावबुध्यसे । ननु बन्धनागारभित्तेर्व्यामत्रयमन्तरालमारामप्राकारस्य केनचित्तु हस्तवतैकागारिकेण तावतीं सुरङ्गां कारयित्वा प्रविष्टस्योपवनं

* बालविबोधिनी *

मद्वितीयमपत्यं यस्य सः । तया राजकन्यया । समागतं सम्मिलितम् । उपलभ्य-ज्ञात्वा । नोच्छेत्स्यति तव प्राणान्न नाशयिष्यतीत्यर्थः । प्रत्युत वैपरीत्येन । अयमर्थः इदं प्रयोजनम् । अर्थानुबन्धी प्रयोजनान्तरसाधकः । तातेति सप्रणयमामन्त्रणम् । आराध्यते सेव्यते क्रियत इति यावत् । नावबुध्यसे न जानासि । ननु तर्हीत्यर्थः बन्धनागारभित्तेः कारागृहकुड्यात् । व्यामत्रयं व्यामः परिमाणविशेषस्तस्य त्रयम् । व्यामो बाह्वोः सकरयोस्ततयोस्तिर्यगन्तरमित्यमरः । अन्तरालं व्यवधानम् । आरामप्राकारस्य—उपवनप्राचीरस्य । हस्तवता क्षिप्रकारिणा । ऐकागारिकेण चौरेण । चौरैका गारिकस्तेनदस्युतस्करमोषकाः इत्यमरः । तावतीं तत्प्रमाणाम् । सुरङ्गां बिलम् । उपरिष्टा दग्रे—उपवनप्रवेशानन्तरमित्यर्थः । अस्मदायत्ता अस्मदधीना । रक्षा गुप्तिः । अनन्तरं वयमेव त्वां रक्षिष्याम इति भावः । रक्ततरः अतिशयेनानुरक्तः । तस्याः राजकन्यायाः । परिजनः सेवकवर्गः । रहस्यं

* बालक्रीडा *

राजाको एक ही सन्तान है अत एव उसके साथ समागमकी वार्ता जाननेपर भी यदि राजा क्रोधित भी हुए तो आपको मारेंगे नहीं । क्योंकि, आपके मरणसे कन्यामरण हो जायगा । प्रत्युत, आपको युवराजपदाधिकारी नियुक्त कर देंगे । इस तरहसे यह बात राजरूपार्थसाधिका है । हे तात ! आप इसे आरम्भ क्यों नहीं करते ? यदि आप राजकुमारीके अन्तःपुर (रनिवास) के प्रवेशका मार्ग नहीं जानते हैं तो, (सुनिये) रनिवासके बागकी चहारदीवारी (दीवार) आपके कारागारकी दीवारसे केवल तीन हाथकी दूरी पर है । किसी क्षिप्रकारीमें कुशल चोरसे उतने स्थानकी पृथिवीमें बिल (सुरंग) लगवाओ । (और) प्रवेश करो । पुनः प्रवेश पानेके बाद वहां अन्तःपुरकी रक्षा तो, हम लोगोंके हाथोंमें है । (वहां हम लोग आपकी रक्षा कर लेंगी) । उस राजकुमारीके

तवोपरिष्टादस्मदायत्तैव रक्षा। 'रक्तरो हि तस्याः परिजनो न रहस्यं भेत्स्यति' इति।

(६२) सोऽब्रवीत्—'साधु भद्रे, दर्शितम्। अस्ति कश्चित्तस्करः खननकर्मणि सगरसुतानामिवान्यतमः। स चेल्लब्धः क्षणेनैतत्कर्म साधयिष्यति' इति। 'कतमोऽसौ, किमिति न लभ्यते' इति मयोक्ते 'येन तद्धनमित्रस्य चर्मरत्नं मुषितम्' इति त्वामेव निरदिक्षत्। 'यद्येवमेहि, त्वयास्मिन्कर्मणि साधिते चित्रैरुपायैस्त्वामहं मोचयिष्यामीति शपथपूर्वं

* बालविबोधिनी *

गोपनीयम्। भेत्स्यति प्रकाशयिष्यति।

(६२) सः कान्तकः। साधु सम्यक्। सगरसुताना सगरराजपुत्राणाम्। ये खलु यज्ञीयाश्वान्वेषणाय पृथ्वीं खनित्वा पातालं गतवन्तस्ते खननकर्मणि दक्षतमा इति भावः। लब्धः प्राप्तः स्यादिति शेषः। मया शृगालिकया। त्वामेव भवन्तमेव। अपहारवर्माणमित्यर्थः। निरदिक्षत् निर्दिष्टवान्। यद्येवमेहीत्यादि न सवनीयन्त वाक्य शृगालिकायाः। त्वया-चर्मरत्नचोरेणापहारवर्मणेत्यर्थः अस्मिन् कर्मणि खननकार्ये। तेन चोरेण। अभिसन्धाय प्रतिज्ञा कृता। निगडयित्वा बद्ध्वा। उपक्रान्त चिकित्सितः उपदेशादिना बोधितः। धाष्टर्यभूमिः धृष्टः। प्रगल्भ.

* बालक्रीडा *

परिजनवर्ग इतने अनुकूल हैं कि, वे रहस्यको कभी प्रकट न करेंगे।

(६२) उस कान्तकने कहा—"हे कल्याणि! आपने ठीक कहा, एक चोर सुरंग लगानेमें राजा सगरके पुत्रोंके सदृश अद्वितीय है। (जैसे-राजा सगरके पुत्रोंने पृथ्वी खोद डाली थी उन्हींके समान खोदनेमें निपुण) यदि वह मिल गया तो, यह कार्य क्षणभरमें हो जायगा।" "वह कहा पर है, क्यों नहीं उसे प्राप्त करते हो?" मेरे ऐसे कहनेपर उस कान्तकने कहा—"जिसने धनमित्रकी उस चर्मरत्नभस्त्रिकाको चुराया है।" ऐसा कहते हुए उसने आपको (अपहारवर्माको) निर्देश किया है। यदि ऐसा है, तो, (शृगालिकाने उससे कहा) कि, आप उससे कहें तुम्हें (अपहारवर्माको) मैं (कान्तक) अनेक प्रकारके यत्नोंसे कारागार (जेलखाने) से मुक्त कर दूंगा, यदि तुम मेरा यह काम (सेंध लगाना) कर दोगे। इस प्रकारसे उससे शपथपूर्वक प्रतिज्ञा करा

तेनाभिसंधाय सिद्धेऽर्थे भूयोऽपि निगडयित्वा 'योऽसौ चोरः स सर्वथोपक्रान्तः, ननु धाष्टर्यभूमिः प्रकृष्टवैरस्तदङ्गिनरत्नं दर्शयिष्यति' इति राज्ञे विज्ञाप्य 'चित्रमेनं हनिष्यसि, तथा च सत्यर्थः सिद्धयति, रहस्यं च न स्रवति' इति मयोक्ते सोऽतिहृष्टः प्रतिपद्य 'मामेव त्वदुपप्रलोभने नियुज्य बहिरवस्थितः । प्राप्तमितः परं चिन्त्यताम्' इति ।

(६३) प्रीतेन च मयोक्तम्—'मदुक्तमल्पम् , त्वन्नय एवात्र भूयान् । आनयैनम्' इति । अथानीतेनामुना मन्मोचनाय शपथः कृतः, अहं च

* बालविबोधिनी *

इत्यर्थः । प्रकृष्टवैरः बद्धवैरः । चित्रं विचित्रेणोपायेनेत्यर्थः । एनं चोरमपहारवर्माणम् । तथा च सति–एवं जाते । अर्थः प्रयोजनम् । स्रवति क्षरति प्रकाशत इति यावत् । मया शृगालिकया । सः कान्तकः । प्रतिपद्य स्वीकृत्य । मां शृगालिकाम् । त्वदुपप्रलोभने–तवापहारवर्मण उपप्रलोभने वशीकरणे । बहिः कारागृहबहिर्भागे । प्राप्तम् अनन्तरकरणीयम् ।

(६३) मया अपहारवर्मणा । मदुक्तमित्यादि–मया यदुक्तं तदल्पमेव किन्तु त्वन्नय स्त्वन्नीतिरेव भूयानधिक इति । एनं कान्तकम् । आनय मत्समीपमिति शेषः । अहमपहारवर्मा । रहस्यानिर्भेदाय रहस्याप्रकाशाय । विनिगडीकृतः

* बालक्रीडा *

करके कार्य हो जानेपर उसे फिर बांध करके अंगराजसे कहना कि, "जो चोर जेलखानेमें है, उसे सदा उपदेश ही दिया जाता है । लेकिन, वह बड़ा प्रगल्भ है । धनमित्रसे पूरी शत्रुता रखता है । चर्मरत्नभस्त्रिकाके विषयमें कुछ नहीं कहता है ।" "इसको विचित्र तरहसे प्राणदण्ड दिया जाय ।" ऐसा होनेपर—उसके मर जानेपर–अपना काम भी सिद्ध हो जायगा और रहस्य भी न प्रकाशित होगा । इस रीतिसे, मेरी उक्तिपर, वह अति पुलकित हो गया और (मेरी राय) स्वीकार करके मुझे ही आपको (अपहारवर्माको) वशमें लानेके लिये, नियुक्त किया है । और स्वयं बाहर बैठा हुआ है । इसके विषयमें जो कर्त्तव्य आप समझें सो करें ।"

(६३) मैंने प्रसन्नतापूर्वक कहा—"मैंने तुमसे (शृगालिकासे) थोड़ा कहा था किन्तु, तुम्हारी नीतिने इसे अधिकरूपमें रच दिया । उस कान्तकको

रहस्यानिर्भेदाय विनिगडीकृतश्च स्नानभोजनविलेपनान्यनुभूय नित्यान्धकाराद्भित्तिकोणादारभ्योरगास्येन सुरङ्गामकरवम्। अचिन्तयं चैवम्—'हन्तुमनसैवामुना मन्मोचनाय शपथः कृतः। तदेनं हत्वापि नासत्यवाददोषेण स्पृश्ये' इति। निष्पततश्च मे निगडनाय प्रसार्यमाणपाणेस्तस्य पादेनोरसि निहत्य पातितस्य तस्यैवासिधेन्वा शिरो न्यकृन्तम्। अकथयं च शृगालिकाम्—'भण भद्रे, कथंभूतः कन्यापुरसंनिवेशः? महानयं

* बालविबोधिनी *

बन्धनान्मोचितः। अनुभूय कृत्वा। नित्यान्धकारात् सततान्धकाराच्छन्नात्। उरगास्येन—सर्पमुखाकारास्त्रविशेषेण। हन्तुमनसा मां हन्तुकामेन। अमुना कान्तकेन। असत्यवाददोषेण मिथ्यावचनरूपापराधेन। स्पृश्ये स्पृष्टो भवामि। निष्पततः कारागृहान्निर्गच्छतः। प्रसार्यमाणपाणेः प्रसारितकरस्य। तस्य कान्तकस्य। पादेन मम चरणेन। पातितस्य भूमाविति शेषः। तस्यैव कान्तकस्यैव। असिधेन्वा छुरिकया। न्यकृन्तम्। अच्छिन्दम्। भण—कथय। कथम्भूतः कीदृशः। कन्यापुरसन्निवेशः कन्यान्तःपुरसंस्थानम्। प्रयासः श्रमः माभूत्—न भवतु। मा योगे

* बालक्रीडा *

बुला लाओ।" कान्तकके आनेके अनन्तर उसने मेरे लिये छोड़ देनेकी शपथ की। मैंने रहस्य न प्रकट करनेकी शपथ खायी। शपथादिके बाद उसने मेरी बेड़िया खोल दी। स्नान, भोजन, तैल,इत्र आदिसे मेरा स्वागत सम्मान किया। मैंने भी सदा अन्धेरी रहनेवाली दीवालके कोनेमें सर्पमुखाकार कुदालसे खोदना प्रारम्भ किया और सेंध लगा दी। मनमें मैंने विचार किया कि, "इस कान्तकने मुझे मार डालनेकी इच्छासे ही यह शपथ, मुझे छोड़नेके बहानेसे, ली है। यदि मैं ही इसे मार डालूं, तो, मुझे मिथ्या वचनरूपापराधदोष न लगेगा।" (ऐसा सोच करके) ज्यों ही कारागाराध्यक्ष कान्तकने मुझे बद्ध करनेके लिए हाथोंको बढ़ाया त्यों ही मैंने उसकी छातीमें लात मारी और उसे पटक दिया। उसके गिर पड़नेपर मैंने उसीकी छूरीसे उसका सिर काट डाला। शृगालिकासे कहा—"हे भद्रे! बताओ, राजकुमारीका अन्तःपुरका कैसा सन्निवेश (स्थान) है। जिससे यह महान परिश्रम व्यर्थ न होवे। अर्थात्—ठीक

प्रयासो मा वृथैव भूत्। अमुत्र किंचिच्चोरयित्वा निवर्तिष्ये' इति ।

(६४) तदुपदर्शितविभागं चावगाह्य कन्यान्तःपुरं प्रज्वलत्सु मणिप्रदीपेषु नैकक्रीडाखेदसुप्तस्य परिजनस्य मध्ये महितमहार्घरत्नप्रसुप्तसिंहाकारदन्तपादे हंसतूलगर्भशय्योपधानशालिनि कुसुमलवच्छुरितपर्यन्ते पर्यङ्कतले दक्षिणपादपार्ष्ण्यधोभागानुवलितेतरचरणाग्रपृष्ठम् , ईषद्विवृ-

* बालविबोधिनी *

लुङ् अड़ागमप्रतिषेधश्च । अमुत्र कन्यान्तः पुरे । निवर्तिष्ये परावर्त्तितो भविष्यामि ।

(६४) तदुपदर्शितविभागं—शृगालिकाकथितप्रदेशम् । इदं कन्यान्तःपुरस्य विशेषणम् । अवगाह्य प्रविश्य । मणिप्रदीपेषु रत्नदीपेषु । नैकेति—नैकाभिः अनेकविधाभिः क्रीड़ाभिः केलिभिर्यः खेदः परिश्रमस्तेन सुप्तस्य निद्रितस्य । महितेति—महितैरुत्कृष्टैर्महार्घरत्नैर्बहुमूल्यहीरकादिभिः प्रत्युप्ताः खचिताः सिंहाकाराः सिंहाकृतयो दन्तपादा गजदन्तनिर्म्मिताः पर्यङ्कपाददेशा यस्य तस्मिन् । हंसेति—हंसवत् शुभ्रा स्तूला गर्भे—अभ्यन्तरे ययो स्तादृशाभ्यां शय्योपधानाभ्यामास्तरणोपबर्हाभ्यां शालते शोभते यत्तस्मिन् । कुसुमेति—कुसुमानां पुष्पाणां लवै र्लेशैश्छुरितो व्याप्तः पर्यन्तः प्रान्तभागो यस्य तस्मिन् । एतानि पर्यङ्कतलविशेषणानि । पर्यङ्कतले खट्वायाम् । दक्षिणेति—दक्षिणपादस्य पार्ष्णेः पश्चाद्भागस्याधोभागेन निम्नप्रदेशेन अनुवलितं युक्तं इतरच्चरणस्य वामपादस्याग्रपृष्ठमग्रभागोपरितलं यस्मिन् कर्मणि

* बालक्रीडा *

रास्ता बतादो तो, मैं वहां चला जाऊं । वहांसे कन्यान्तःपुरसे कुछ चुरा करके लौटना चाहिये ।"

(६४) शृगालिकाद्वारा बताये हुए प्रदेशसे कन्यातःपुरमें पहुंच करके, (वहांका जो दृश्य देखा उसका वर्णन इस प्रकार है) देखा कि, रत्नप्रदीप प्रकाशित हो रहा है । अनेकों रीतिकी केलियोंद्वारा उत्पन्न परिश्रमसे सोते हुए परिजनोंके बीचमें बहुमूल्य रत्न हीरकादिसे जटित सिंहाकार (सिंहके आकारवाले) हाथी दांतके पैरोंवाले हंसके समान सफेद आस्तरण (चांदनी, तकिया तोपक) आदिसे शोभित फूलोंके किसलयोंसे परिव्याप्त पलंगके ऊपर दाहिने पैरके ऊपर बायें पैरका पिछला हिस्सा जिसमें थोड़ी मनोहर गुल्फोंकी टेहुनेकी सन्धि प्रकटित है । थोड़े संकुचित एवं परस्पर सटे हुए जंघास्तम्भोंसे युक्त और थोड़े संकुचित

तमधुरगुल्फसंधि, परस्पराश्लिष्टजङ्घाकाण्डम्, आकुञ्चितकोमलोभयजानु, किंचिद्वेल्लितोरुदण्डयुगलम्, अधिनितम्बस्रस्तमुक्तैकभुजलताग्रपेशलम्, अपाश्रयान्तनिमिताकुञ्चितेतरभुजलतोत्तानतलकरकिसलयम्, आभुग्नश्रोणिमण्डलम्, अतिश्लिष्टचीनांशुकान्तरीयम्, अनतिवलिततनुतरोदरम्, अतनुतरनिःश्वासारम्भकम्पमानकठोरकुचकुड्मलम्, आतिरश्चीनबन्धुरशि-

* बालविबोधिनी *

तद् यथा-तयेति इद वक्ष्यमाणानि च क्रियाविशेषणानि । ईषदिति-ईषद्विवृतः किञ्चित्प्रकटितो मधुरो मनोहरो गुल्फयो घुंटिकयो सन्धिः संयोगो यस्मिन् तद् यथा तथा । परस्परेति-परस्परमन्योन्यमाश्लिष्टं संलग्नो जंघाकाण्डो यस्मिंस्तद् यथा तथा । आकुञ्चितेति-आकुञ्चिते ईषद्वक्रीकृते कोमले उभयजानुनी यस्मिंस्तद् यथा तथा । किञ्चिदिति किञ्चिद्वेल्लितमीषत्सङ्कुचितमूरुदण्डयुगलं यस्मिंस्तद् यथा तथा । अधिनितम्बेति—अधिनितम्बं नितम्बस्योपरिस्रस्तं शिथिलं यथा स्यात्तथा मुक्तं निःक्षिप्तं यदेकस्या भुजलताया अग्रमग्रभागस्तेन पेशलं मनोज्ञं यथा तथा । अपाश्रयेति-अपाश्रयस्य पर्यङ्कशिरोभागस्यान्ते प्रान्ते निमितं निःक्षितम् आकुञ्चितेतरायाः प्रसारिताया भुजलताया बाहुवल्ल्याः, उत्तानं तलं यस्य तादृशः करः किसलयमिव करकिसलयं यस्मिंस्तद् यथा तथा । आभुग्नश्रोणिमण्डलं ईषद्वक्रीकृतनितम्बम् । अतिश्लिष्टेति-अतिश्लिष्टं अतिशयेन शरीरलग्नं चीनांशुकस्य चीनदेशीयसूक्ष्मवस्त्रस्यान्तरीयमधोवस्त्रं यस्मिंस्तद् यथा तथा । अनतीति—अनतिवलितमीषत्कम्पितं तनुतरमतिक्षीणमुदरं कुक्षिदेशो यस्मिंस्तद्यथा तथा । अतनुतरेति—अतनुतरेण दीर्घेण निःश्वासारम्भेण कम्पमाने चंचले कठोरे अति दृढे कुचकुड्मले स्तनमुकुले यस्मिंस्तद्यथा तथा निद्रिताया निःश्वासाधिक्यादतनुतरेणेति । आतिरश्चीनेति आतिरश्चीने ईषद्वक्रे बन्धुरे

* बालक्रीडा *

कोमल दोनों जानुओं (घुटनों) से युक्त, एवं कुछ संकुचित उरु दण्डों (जांघों) परिव्याप्त तथा नितम्ब भागके ऊपर एक शिथिल लतारूपी हस्त बड़ा सुन्दर दीख रहा है । पलंगके शिरो भागमें संकुचित करके धरा हुआ दूसरा लतारूपी हाथ जिसका तल (हथेली) उत्तान है । पल्लवके समान सुन्दर

रोधरोद्देशदृश्यमाननिष्ट्यततपनीयसूत्रपर्यस्तपद्मरागरुचकम्, अर्धलक्ष्याधरकर्णपाशनिभृतकुण्डलम्, उपरिपरावृत्तश्रवणपाशरत्नकर्णिकाकिरणमञ्जरीपिञ्जरितविषमव्याविद्धाशिथिलशिखण्डबन्धम्, आत्मप्रभापटलदुर्लक्ष्यपाटलोत्तराधरविवरम्, गण्डस्थलीसंक्रान्तहस्तपल्लवदर्शितकर्णावतंस-

* बालविबोधिनी *

उन्नतावनते शिरोधरोद्देशे ग्रीवाप्रदेशे दृश्यमानं लक्ष्यमाणं निष्ट्यते गलिते तपनीयसूत्रे सुवर्णतन्तौ पर्यस्तं लम्बमानं पद्मरागरुचकं पद्मरागनिर्मितग्रीवाभरणविशेषो यस्मिंस्तद् यथा तथा। अर्धलक्ष्येति–अर्धलक्ष्यः अर्धदृश्यमानः अधरः अधोभागो यस्य तादृशमिति कुण्डलविशेषणं कर्णपाशे शोभनकर्णे निभृतं निश्चलं कुण्डलं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा । उपरीति–उपरि ऊर्ध्वदेशे परावृत्तः समुत्तानो यः श्रवणपाशः कर्णपाशस्तस्य रत्नकर्णिकायाः रत्ननिर्मितकर्णाभरणस्य किरणमञ्जरीभिर्मयूखमालाभिः पिञ्जरितः पिशङ्गीकृतः विषमव्याविद्धः। विषमरूपेण बद्धः वेणीकृत इति यावत् अतएवाशिथिलः अस्रस्तः शिखण्डबन्धः केशकलापो यस्मिंस्तद्यथातथा। आत्मप्रभेति–आत्मनः स्वस्यैव प्रभापटलेन कान्तिनिचयेन दुर्लक्ष्यमविभाव्यं पाटलस्य श्वेतरक्तस्य उत्तराधरस्योष्ठस्य विवरं छिद्रं यस्मिंस्तद्यथा तथा। गण्डस्थलीति–गण्डस्थल्यां कपोलदेशे संक्रान्तो मिलितो यः करपल्लवः करकिसलयं तेन दर्शितं प्रकटितं कर्णावतंसस्य कर्णभूषणस्य कृत्यं कार्यं यस्मिंस्तद्यथा तथा। कपोलसंक्रान्तकर एव

* बालक्रीडा *

दिखायी दे रहा है। जिसने अपना नितम्बस्थल थोड़ा संकुचित कर लिया है। जिसके शरीरके अधो भागमें अतिशय करके चीन देशके बारीक रेशमी वस्त्र शोभा दे रहे हैं। जिसका अति क्षीण अक्षि प्रदेश कुछ कम्पित हो रहा है। दीर्घ निश्श्वासोंके आनेसे कठोर कुचमंडल कम्पमान हो रहा है। (क्योंकि सोनेमें सांस वेगसे चलती है) जिसके गलेमें पद्मराग मणिकी माला है जो सुवर्णके तारोंसे गूंथी हुई कुछ इधर-उधर तिरछी पड़ी हुई है। जिसके कानोंका आधा हिस्सा दिखायी दे रहा है ऐसे सुन्दर कानोंमें जिसने कुण्डल धारण किये हैं। जिसने अपने कानोंके ऊपरी भागमें रत्ननिर्मित कर्णिकाभूषण धारण किया है जिसकी किरण जालोंकी प्रभासे, विषम रूपसे बांधे गये जिससे कुछ ढीले भी

कृत्यम्, उपरिकपोलादर्शतलनिपक्तचित्रवितानपत्रजातजनितविशेषकक्रियम्, आमीलितलोचनेन्दीवरम्, अविभ्रान्तभ्रूपताकम्, उद्भिद्यमानश्रमजलपुलकभिन्नशिथिलचन्दनतिलकम्, आननेन्दुसमुखालकलतं च विश्रब्धप्रसुप्तामतिधवलोत्तरच्छदनिमग्नप्रायैकपार्श्वतया चिरविलसनखेदनि-

* बालविबोधिनी *

तस्याः कर्णपल्लवोऽभवदिति भाव.। उपरीति–उपरिकपोल. उत्तानगण्डप्रदेशः स एवादर्शो मुकुरस्तस्य तले निपक्तेन प्रतिबिम्बितेन चित्रवितानस्य नानावर्णोल्लोचस्य पत्रजातेन पत्राकार चिह्नसमूहेन जनिता उत्पादिता विशेषकक्रिया तिलकक्रिया यस्मिंस्तद्यथा तथा। आमीलितेति–आमीलिते निमीलिते लोचने इन्दीवरे नीलोत्पले इव यस्मिंस्तद्यथा तथा। अविभ्रान्तेति–अविभ्रान्ते निश्चले भ्रुवौ पताके इव यस्मिन् तद्यथा तथा। उद्भिद्यति–उद्भिद्यमानेन निर्गच्छता श्रमजल पुलकेन घर्मजनितरोमाञ्चेन भिन्न मिश्रितमत एव शिथिल कपालाद् गलित चन्दनतिलक यस्मिंस्तद्यथा तथा। आननेति–आननेन्दो मुखचन्द्रस्य सम्मुखे अलकाश्चूर्णकुन्तला लता इव यस्मिंस्तद्यथा तथा। अत्रालकाना कलङ्कसाम्यं बोद्धव्यम्। विश्रब्धप्रसुप्ता निःशङ्कनिद्रिताम्। अतिधवलेति–अतिधवलेऽतिशुभ्रे उत्तरच्छदे आस्तरणे निमग्नप्रायः बाहुल्येन मग्न· एक· पार्श्वो यस्या

* बालक्रीडा *

गड गये हैं ऐसे केशकलापोंकी, शोभा (कृष्णत्व) को पीला बना दिया है। जिसने अपनी कान्तिके पुञ्जसे पाटल (श्वेतरक्त) अपने ओष्ठविवरको दुर्लक्ष्य बना दिया है। जिसने गालोंपर रखे हुए पल्लवरूपी हाथोंसे अपने कर्णावतंसके कृत्यको प्रकट कर दिया है। (उसके कपोल संक्रान्त हाथ ही कर्णपल्लव थे)। जिसका ऊपरी कपोलप्रदेश ही मानो. सीसा हो, उसी सीसेके तलपर प्रतिबिम्बित अनेकवर्णों के उल्लोच वही मानो पत्र हों उसीपर उत्पन्न पत्राकार रूपमेंसमूहके जो तिलकक्रिया (ऐसी) जिसने अपने नीले कमलके समान नेत्र बन्द कर लिये हैं। जिसकी निश्चल भौंहें झण्डेके समान हैं। जिसके तिलकका चन्दन घर्मजनित रोमाञ्चसे उत्पन्न पसीनेके जलसे कुछ आर्द्र होकर बहने लगा है। मुखचन्द्रके सम्मुख चूर्णकुन्तल बाल लताके समान है। अत्यन्त सफेद आस्तरणके ऊपर एक करवटसे घोर निद्रामें सोयी हुई है। और जो अत्यन्त विस्फुरणके

श्चलां शरदम्भोधरोत्सङ्गशायिनीमिव सौदामनीं राजकन्यामपश्यम् ।

(६५) दृष्ट्वैव स्फुरदनङ्गरागश्चकितश्चोरयितव्यनिस्पृहस्तयैव तावच्चोर्यमाणहृदयः किंकर्तव्यतामूढः क्षणमतिष्ठम् । अतर्कयम् च-'न चेदिमां वामलोचनामाप्नुयां न मृष्यति मां जीवितुं वसन्तबन्धुः । असंकेतितपरामृष्टा चेयमतिबाला व्यक्तमार्तस्वरेण निहन्यान्मे मनोरथम् । ततोऽहमेवाहन्येय । तदियमत्र प्रतिपत्तिः' इति ।

* बालविबोधिनी *

स्तस्या भावः तया । चिरेति—चिरं दीर्घकालं विलसनेन स्फुरणेन यः खेदः श्रमस्तेन निश्चलां स्थिराम् । शरदिति-शरदम्भोधरस्य शारदमेघस्योत्सङ्गे क्रोडे शेते तच्छीलाम् सौदामनीं विद्युतम् ।

(६५) स्फुरदनङ्गरागः स्फुरन् वर्धमानः अनङ्गस्य कामस्य राग आवेशो यस्य सः । चकितः सम्भ्रान्तः । चोरयितव्यनिस्पृहः चोरयितव्ये चौर्यकर्मणि निस्पृहो निरभिलाषः । तया राजकन्यया । चोर्यमाणहृदयः अपह्रियमाणचित्तः । किंकर्त्तव्यतामूढः-किंकर्त्तव्यतायां साम्प्रतं किं कर्त्तव्यमिति ज्ञानशून्यः । आप्नुयां लभेय । मृष्यति सहते । वसन्तबन्धुः मदनः । असंकेतितपरामृष्टा संकेतमकृत्वैव स्पृष्टा । व्यक्तं प्रकाशम् । आर्त्तस्वरेण आर्त्तस्वरं कृत्वेत्यर्थः । निहन्यान्नाशयेत्–विफलीकुर्यादिति यावत् । ततः-यदि मे मनोरथो नश्येत्तर्हि । आहन्येय-आहतो भविष्यामीत्यर्थः । आङ्पूर्वकात् हन्धातोः कर्मणि विधिलिङ्युत्तमपुरुषैकवचनम् । आघ्नीयेति पाठो न साधीयान् अर्थप्रतीतेरभावात् । इयमत्र प्रतिपत्तिः–इदमत्र विधेयम् ।

* बालक्रीडा *

परिश्रमसे निश्चलसी दीख रही है । वह मानो, शरत्कालीन मेघके उत्संग (गोद) में सोयी हुई विद्युत्के समान है । ऐसी राजकुमारीको देखा ।

(६५) देखते ही मैं कामदेवके रागसे विह्वल होकर चोरीकी इच्छा भूल गया, और किंकर्त्तव्यविमूढ (ज्ञानशून्य) हो करके स्वयं ही अपने चित्तको चुराया हुआ जान करके क्षणभर बैठ गया । मैं (अपहारवर्मा) तर्कसे सोचने लगा—"यदि मैं इस सुन्दर नेत्रोंवाली स्त्रीको न पा सका तो, यह मदन मेरे जीवनको नाश कर देगा । यदि मैं विना संकेत किये हुए इसका स्पर्श करूं तो यह चिल्ला देगी और उस कारणसे मेरे मनोरथ ही नष्ट हो जायेंगे । तथा

(६६) नागदन्तलग्नंनिर्यासकल्कवर्णितं फलकमादाय मणिसमुद्गकाद्वर्णवर्तिकामुद्धृत्य तां तथाशयानां तस्याश्च मामाबद्धाञ्जलि चरणलग्नमालिखमार्यां चैताम्—

'त्वामयमाबद्धाञ्जलि दासजनस्तमिममर्थमर्थयते ।
स्वपिहि मया सह सुरतव्यतिकरखिन्नैव मा मैवम् ॥'

* बालविबोधिनी *

(६६) नागदन्तेति—नागदन्तेऽवलम्बन काष्ठे लग्नं सम्बद्धं च तत् निर्यासकल्केन चिक्कणद्रव्यकायेन वर्णितं रञ्जितं चेति कर्मधारयः। फलकं काष्ठपट्टिकाम्। आदाय गृहीत्वा। मणिसमुद्गकात्—रत्नसम्पुटकात्। वर्णवर्तिका तूलिकाम्। उद्धृत्य बहिष्कृत्य। तां राजकन्याम्। तथा पूर्वोक्त प्रकारेण। शयानां निद्रिताम्। मां मपहारवर्माणम्। आबद्धाञ्जलिं कृतनमस्कारम्। चरणलग्नं पादपतितम्। तां राजकन्याम् आर्यां वक्ष्यमाणं पद्यं चेत्युभयमेव आलिखमिति क्रियायाः कर्म। त्वामिति—अयं दासजनः सेवकः अहमित्यर्थः। त्वां भवतीं राजकन्यकाम्। आबद्धाञ्जलि सप्रणामं इमं वक्ष्यमाणमर्थं अर्थयते याचते सुरतव्यतिकरखिन्नैव सुरतश्रान्तैव त्वं मया सह स्वपिहि। एवं सुरतखेदं विना मा मानस्वपिहीत्यर्थः। हेमकरण्डात्—सुवर्णपेटकात्। वासताम्बूलवीटिका सुवासितताम्बूलम्। कर्पूरगुटिका कर्पूरचूर्णम्। पारिजातकं सुवासितखदिरसारम्। उपयु-

* बालक्रीडा *

मनोरथोंके नष्ट होनेपर मैं ही मार डाला जाऊंगा। अत एव अब यह कर्त्तव्य है।"

(६६) वहीं खूंटीपर टंगी (लटकी) हुई रंगीन चिकनी लाहसे परिमार्जित एक काठकी पट्टीको उतार लिया और जड़ाऊ कलमदानसे कलमको निकाल करके (उसी पट्टीपर) मैंने उस राजपुत्रीका (उसी स्वप्नावस्थाका) ज्योंका त्यों चित्र खींचा और अपनेको उसके पैरोंके नीचे हाथ जोड़े हुए खींचा तथा वहींपर आर्यावृत्त भी लिख दिया—यह सेवक (अपहारवर्मा) कृताञ्जलि हो करके आपसे इसी निमित्त प्रार्थना करता है कि, सुरतके खेदसे खिन्न हो करके मेरे पास सोवें और विना सुरतके नहीं सोवें।"

तत्पश्चात् सुवर्णकी पेटीसे सुवासित पान और कपूरके चूर्णको तथा कत्थे (खैर) को खा करके महावरके रसके समान उस पानकी पीक (थूंक)को

हेमकरण्डकाच्च वासताम्बूलवीटिकां कर्पूरगुटिकां पारिजातकं चोपयुज्यालक्तकपाटलेन तद्रसेन सुधाभित्तौ चक्रवाकमिथुनं निरष्ठीवम् । अङ्गुलीयकविनिमयं च कृत्वा कथंकथमपि निरगाम् ।

(६७) सुरङ्गया च प्रत्येत्य बन्धागारं तत्र बद्धस्य नागरिकवरस्य सिंहघोपनाम्नस्तेष्वेव दिनेषु मित्रत्वेनोपचरितस्य 'एवं मया हतस्तपस्वी कान्तकः, तत्त्वया प्रतिभिद्य रहस्यं लब्धव्यो मोक्षः' इत्युपदिश्य सह श्रृगालिकया निरक्रामिषम् । नृपतिपथे च समागत्य रक्षिकपुरुषैरगृह्ये ।

* बालविबोधिनी *

ज्य-भक्षयित्वा । अलक्तकपाटलेन अलक्तकवत् रक्तवर्णेन । तद्रसेन तेषां ताम्बूलादीनां द्रवेण । सुधाभित्तौ-सुधाधवलितकुड्ये । चक्रवाकमिथुनं कोकद्वन्द्वम् । निरष्ठीवम्-निष्ठीवनेन चक्रवाकमिथुनं चित्रितवान् । अङ्गुलीयकविनिमयं-तस्या अङ्गुलीयकं गृहीत्वा तत्स्थाने स्वकीयमङ्गुलीयकं परिधाप्येत्यर्थः । कथंकथमपि-अतिकष्टेन ।

(६७) प्रत्येत्य-प्रतिनिवृत्य । तत्र बन्धनागारे । बद्धस्य निगड़ितस्य । तेष्वेव दिनेषु-यदाहमपि तत्र बद्धोऽभवमित्यर्थः । मित्रत्वेनोपचरितस्य-सुहृत्त्वेनारोपितस्य । मित्रभावं गतस्येति यावत् । एवं-एतादृशेनोपायेन । प्रतिभिद्य प्रकाश्य मोक्षः बन्धनमोचनम् । निरक्रामिषं निष्क्रान्तोऽभवम् । नृपतिपथे-राजमार्गे ।

* बालक्रीडा *

चूनेकी दीवालपर ऐसा थूंक करके रच दिया कि, वहां चित्रगत चक्रवाक दम्पती प्रतीत होने लगे । साथ ही मैंने अंगूठियों का आदान-प्रदान करके उस महलसे किसी प्रकार रास्ता लिया ।

(६७) सुरंगसे कारागार वापस आनेपर, वहांपरके एक कैदी सिंहघोपसे मेरी उन दिनों मित्रता हो गयी थी । मैंने निर्दोष कान्तकको इस तरह मार-डाला है । और तुम इस तरहसे राजासे प्रार्थना करके मुक्ति पा लेना । ऐसा कह करके मैं श्रृगालिकाके साथ निकल आया । राजमार्गमें रक्षापुरुषोंने पकड़ लिया । मैंने विचार किया-"यद्यपि मैं इन लोगोंसे झगड़ करके बड़े वेगसे दौड़ करके भागनेमें समर्थ हूं। परन्तु, यह निर्दोप श्रृगालिका पकड़ जायगी । अतः इस समय यह उपाय ठीक होगा ।" ऐसा सोच करके मैंने अपने दोनों हाथोंको

अचिन्तय च—'अलमस्मि जवेनापसर्तुमनामृष्ट एवैभि. । एषा पुनर्वराकी गृह्येत । तदिदमत्र प्राप्तरूपम्' इति तानेव चपलमभिपत्य स्वपृष्ठसमर्पित-कूर्पर. पराङ्मुख' स्थित्वा 'भद्रा, यद्यहमस्मि तस्कर., वध्नीत माम् । युष्माकमयमधिकार, न पुनरस्या वर्षीयस्या' इत्यवादिषम् ।

(६८) सा तु तावतैवोन्नीतमदभिप्राया तान्सप्रणाममभ्येत्य 'भद्र-मुखा., ममैष पुत्रो वायुग्रस्तश्चिर चिकित्सित । पूर्वेद्यु प्रसन्नकल्प. प्रकृ'ऽस्थ एव जात । जातास्थया मया बन्धनान्निष्क्रमय्य स्नापितोऽनु-

* बालविबोधिना *

अगृह्ये गृहीतोऽभवम् । ग्रह्धातो. कर्मणि लङ उत्तमपुरुषैकवचनम् । अलम् समर्थः । अपसर्तुं पलायितुम् । अनामृष्ट । अस्पृष्टः ।एभिः-रक्षिक पुरुषैः। एषा-शृगालिका । वराकी तपस्विनी । गृह्येत ध्रियेत । अत्र अस्मिन् काले । प्राप्तरूप युक्तम् । इति-एव चिन्तयित्वा तान् रक्षिपुरुषान् । चपल सत्वरम् । अभिपत्य समीप गत्वा । स्वपृष्ठेति-स्वस्य पृष्ठे पृष्ठ देशे समर्पितौ निहितौ कूर्परौ कफोणी येन सः । स्यात्कफोणिस्तु कूर्पर इत्यमरः । पराङ्मुख' विपरीतमुखः । वर्षीयस्या वृद्धाया. शृगालिकाया इत्यर्थः ।

(६८) सा शृगालिका । तावता एतावन्मात्रवचनेन । उन्नीतेति-उन्नीत ऊहित मदभिप्रायो यन्मेऽत्रभिप्रेतमासीत्तद् यया सा । तान् रक्षिपुरुषान् । वायु-ग्रस्त. वातुलः । उन्मत्त इति यावत् । चिरं दीर्घकालम् पूर्वेद्युः गतदिने । प्रस-न्नकल्पः प्रायेण प्रसन्नः । प्रकृतिस्थः स्वभावस्थः । जातास्थया संजातादरया । मया शृगालिकयेत्यर्थः । निष्क्रमय्य मोचयित्वा । अनुलेपितः गन्धादिना सुवा-

* बालक्रीडा *

अपनी पीठकी ओर कर और उनके पास जाकर उनके पराङ्मुख खड़े हो करके कहा—'हे सौम्यो ! (भद्रो !) यदि मैं चोर हूं तो, मुझे बांधिये—क्योंक, यह अधिकार आप लोगोंका है परन्तु, इस वृद्धाका नहीं है ।"

(६८) उस शृगालिकाने मेरे अभिप्रायोंका विचार करके उन रक्षापुरुषों-के पास जा तथा उन्हें प्रणाम करके कहा-"हे सौम्यो ! यह मेरा पुत्र उन्मत्त हो गया था, मैंने बहुत समयतक इसकी चिकित्सा करायी । गत दिन (कल) यह प्राय- प्रसन्न हो गया था और पूर्ववत् स्वस्थ दिखायी देने लगा । अच्छे

लेपितञ्च परिधाप्य निष्प्रवाणियुगलमभ्यवहार्य परमान्नमौशीरेऽद्य कामचारः कृतोऽभूत् । अथ निशीथे भूय एव वायुनिघ्नः 'निहत्य कान्तकं नृपतिदुहित्रा रमेय इति रंहसा परेण राजपथमभ्यपतत् । निरूप्य चाहं पुत्रमेवंगतमस्यां वेलायामनुधावामि । तत्प्रसीदत । बद्ध्वैनं मह्यमर्पयत' इति यावदसौ क्रन्दति तावदहं 'स्थविरे, केन देवो मातरिश्वा बद्धपूर्वः । किमेते काकाः शौङ्गेयस्य मे निग्रहीतारः । शान्तं पापम्' इत्यभ्यधावम् ।

* बालविबोधिनी *

सितः । निष्प्रवाणि युगलं-नूतनवस्त्रयुग्मम् । अनाहतं निष्प्रवाणि तन्त्रकञ्च नवाम्बरे इत्यमरः । अभ्यवहार्य भोजयित्वा । परमान्नं पायसम् । औशीरे शयनासनविषये । कामचारः स्वेच्छाचारः । निशीथेऽर्द्धरात्रे । भूय एव पुनरपि । वायुनिघ्नः उन्मादरोगायत्तः । निहत्यादि–उन्मत्तस्य तस्य प्रलापोऽयम् । रंहसा वेगेन परेण महता । निरूप्य अवलोक्य एवं गतम्–एतदवस्थम् । अनुधावामि अनुसरामि । बद्ध्वा बन्धनं कृत्वा । एनं मत्पुत्रम् । असौ शृगालिका । अहमपहारवर्मा । स्थविरे वृद्धे । सम्बोधनम् । मातरिश्वा–वायुः । बद्धपूर्वः पूर्वं बद्धः । न केनापीति भावः । एते–रक्षिपुरुषाः । शौङ्गेयस्य विहङ्गानां शत्रोः पक्षिविशेषस्य । यथा वायसाः शौङ्गेयं निग्रहीतुं न समर्थास्तथा एतेऽपि मां बन्धुं न शक्नुवन्तीति भावः । इति इत्युक्त्वा । अभ्यधावम् धावितवान् ।

* बालक्रीडा *

होनेका विश्वास करके मैंने (शृगालिकाने) इसे बन्धन मुक्त कर दिया । और स्नान कराकर तैल चन्दन आदिसे सुवासित कर दिया । इसे नये कपड़ेके जोड़े धारण कराये तथा खीर खिलायी और शयनासन (सज्जित पलंगपर) पर सोनेको स्वतन्त्र कर दिया । किन्तु, (सोनेके बाद) आधी रातमें वह फिर उन्माद रोगसे आक्रान्त हो गया । "कान्तकको मार करके राजकुमारीसे रमण करूंगा ।" ऐसा जोरोंसे बकते हुए राजमार्गमें आ गया । पुत्रकी ऐसी दशासे मैं, इसके पीछे दौड़ती हुई इस समय, (आधी रातमें) फिर रही हूं । इसलिये आप लोग कृपा करें और इसे बांध करके मुझे दे दें ।"

(६९) असावप्यमीभिः 'त्वमेवोन्मत्ता यानुन्मत्त इत्युन्मत्तं मुक्तवती । कस्तमिदानीं बध्नाति' इति निन्दिता कदर्थिता रुदत्येव मामन्वधावत्। गत्वा च रागमञ्जरीगृह चिरविरहखेदविह्वलामिमां बहुविधं समाश्वास्य त निशाशेषमनयम । प्रत्यूषे पुनरुदारकेण च समगच्छे ।

(७०) अथ भगवन्त मरीचि वेशकृच्छ्रादुत्थाय पुन प्रतितप्ततपः

* बालविबोधिनी *

(६९) असौ शृगालिका अमीभि रक्षिपुरुषैः । अनुन्मत्त इति उन्मत्तो न भवतीति कृत्वा मुक्तवती त्यक्तवती । कदर्थिता-तिरस्कृता । मा मपहारवर्माणम् । चिरेति-चिरविरहेण दीर्घविच्छेदेन यः खेदो दुःख तेन विह्वला व्याकुलाम् । इमा रागमञ्जरीम् । निशाशेषं रात्रेरवशिष्टभागम् । अनयम् अयापयम् । उदारकेण-धनमित्रेण । समगच्छे संमिलितोऽभवम् ।

(८०) भगवन्तम् ऐश्वर्यशालिनम् । मरीचिं तन्नामकमहर्षिम् । वेशकृच्छ्रात् वेश्याव्यसनात् । उत्थाय निर्मुक्तो भूत्वेत्यर्थः । पुनरिति-पुनः प्रतितप्तं पुनः समाचरित यत्तपस्तस्या तस्य प्रभावेण माहात्म्येन प्रत्यापन्नं पुनः प्राप्तं

* बालक्रीडा *

जब शृगालिका ऐसा कथन उन राजपुरुषोंसे कर रही थी, तब मैंने कहा— "अरे वृद्धे ! क्या कभी पहिले भी पवनको किसीने पकड़ा है । क्या ये कौए मेरे ऐसे बाजको पकड़ सकते हैं । शान्त हो !" ऐसा कह करके मैं दौड़ गया ।

(६९) तत्पश्चात्-यह शृगालिका उन रक्षितपुरुषोंकेद्वारा फटकारी गयी- "तुम्हीं पगली हो । क्योंकि, तुमने पागलको बन्धन रहित किया । अब यह अभी कैसे बंध सकता है !" ऐसे वाक्योंसे डांटी जानेपर शृगालिका रोती हुई मेरे पीछे दौडी । दौड करके मैं रागमञ्जरीके घरपर आया, और वहाँ रागमञ्जरीको जो बहुत दिनोंके विरहके खेदमे विह्वल हो रही (दुःखी हो रही) थी उसे समाश्वासन दे करके उस रात्रिके अवशिष्ट भागको वहींपर बिताया । फिर सवेरे उदारक (धनमित्र) के पास सम्मिलित हुआ ।

(७०) इसके अनन्तर ऐश्वर्यवान् मरीचि नामक मुनिके समीप मैं गया । जो मरीचि मुनि वेश्याके व्यसनसे दुःखी हो करके, पुनः अपने तपके प्रभावमे दिव्य चक्षुत्वको प्राप्त कर चुके थे । उन्हीं मरीचि मुनिमे आपके (राजवाहनके)

प्रभावप्रत्यापन्नदिव्यचक्षुषमुपसंगम्य तेनास्म्येवभूतत्वद्दर्शनमवगमितः । सिंहघोषश्च कान्तकापचारं निर्भिद्य तत्पदे प्रसन्नेन राज्ञा प्रतिष्ठापितः तेनैव चारकसुरङ्गापथेन कन्यापुरप्रवेशं भूयोऽपि मे समपादयत् । समगंसि चाहं शृगालिकामुखनिसृतवार्तानुरक्तया राजदुहित्रा ।

(७१) तेष्वेव दिवसेषु चण्डवर्मा सिंहवर्मावधूतदुहितृप्रार्थनः कुपि-

*बालविबोधिनी *

दिव्यमार्षं चक्षुर्येन तादृशम् । तेन मरीचिना । एवंभूत मेवं प्रकारेण त्वद्दर्शनं तव राजवाहनस्यावलोकनम् । अवगमितः ज्ञापितः । अस्मि अहमिति शेषः । दिव्यदृष्ट्या विलोक्य मरीचिनैव एवमुक्तं यदेतादृशसमये एतादृशेन प्रकारेण भवद्दर्शनं मे भविष्यतीति भावः । सिंहघोषः कारागृहस्थो मम सुहृत् । कान्तकापचारं–कान्तकस्यापराधम् । निर्भिद्य प्रकाश्य । तत्पदे–कान्तकस्थाने । प्रतिष्ठापितः–काराध्यक्षः कृतः । तेनैव मत्कृतेनैव । चारकसुरङ्गा पथेन–कारागृहस्थविलमार्गेण । भूयोऽपि पुनरपि । समपादयत् अकारयत् । तस्यैव साहाय्येन पुनरप्यहं कन्यान्तःपुरं प्रविष्टवानस्मि इत्यर्थः । समगंसि मिलितोऽभवम् । संपूर्वकाद गम् धातोर्लुङि आत्मनेपदस्योत्तमपुरुषैकवचनम् । शृगालिकेति–शृगालिकाया मुखाद् वदनान्निःसृतया निर्गतया कथितयेत्यर्थः वार्त्तया वृत्तान्तेन अनुरक्तया आसक्तया राजदुहित्रा राजकन्यया समगंसि अहमिति शेषः ।

(७१) तेष्वेव दिवसेषु तदानीम् । चण्डवर्मा राजवाहन शत्रुः । सिंहवर्मेति–सिंहवर्मणा चम्पाधीश्वरेण अवधूता तिरस्कृता अस्वीकृतेति यावत् दुहितुः स्वकन्याया अम्बालिकायाः प्रार्थना यस्यासौ । अत एव क्रुद्धः । अभियुज्य आक्रम्य । पुरं सिंहवर्मनगरम् । अवारुणत् अवरुरोध । अमर्षणः असहनः । अङ्ग-

* बालक्रीडा *

दर्शनका समाचार ज्ञात किया । सिंहघोषने कान्तकको मार डाला और राजाने प्रसन्नतासे उसे काराध्यक्ष बना दिया । उसी कारागारकी सुरंगसे मैं फिर कन्यान्तपुरमें जाने–आने लगा । शृगालिकाके मुखसे निकली मेरी प्रशंसापर राजकन्या मुझपर अनुराग करने लगी ।

(७१) उन्हीं दिनों चण्डवर्माने जो राजवाहनका शत्रु था, चम्पा नगरके स्वामी सिंहवर्मापर क्रुद्ध हो करके उस सिंहवर्माके नगरपर आक्रमण करके उसके नगरको घेर लिया (क्रोधका कारण यह था कि, चण्डवर्माने अपना

तोऽभियुज्य पुरमवारुणत्। अमर्षणश्चाङ्गराजो यावदरिः पारग्रामिकं विधिमाचिकीर्षति तावत्स्वयमेव प्राकारं निर्भिद्य प्रत्यासन्नानपि सहायान-प्रतीक्षमाणो निर्गत्याभ्यधिकबलेन विद्विषा महति संपराये भिन्नवर्मा सिंहवर्मा बलादगृह्यत। अम्बालिका च बलवदभिगृह्य चण्डवर्मणा हठात्परिणेतुमात्मभवनमनीयत। कौतुकं च स किल क्षपावसाने विवाह इत्यबध्नात्।

*** बालविबोधिनी ***

राजा सिंहवर्मा। अरिः शत्रुः=चण्डवर्मा। पारग्रामिकं परराज्यास्कन्दनोचितं। विधिमनुष्ठानम्। चिकीर्षति कर्तुमिच्छति। यावत्तावदित्यनेन अतिशीघ्रता सूचिता। स्वयमेव सिंहवर्मैव। प्राकारं प्राचीरम्। प्रत्यासन्नान्-समीपमागतानपि। सहायान् साहाय्यकारिणो नृपतीन्। अप्रतीक्षमाणः अनपेक्षमाणः। अभ्यधिकबलेन बहुतरसैन्यसमन्वितेन विद्विषा शत्रुणा। संपराये युद्धे। भिन्नवर्मा छिन्नकवचः। अगृह्यत गृहीतश्चण्डवर्मणेति शेषः। अभिगृह्य बलात्कारेण गृहीत्वा। हठात् अविमृश्यकारित्वेन। परिणेतुं विवोढुम्। आत्मभवनं चण्डवर्मगृहम्। अनीयत नीता। अम्बालिकेति शेषः। कौतुकं-मङ्गलसूत्रम्। स चण्डवर्मा। क्षपावसाने-रात्रिशेषे। विवाहो भविष्यतीति हेतोः। अबध्नात् बबन्ध कौतुकमिति शेषः।

*** बालक्रीडा ***

विवाह सिंहवर्माकी पुत्री अम्बालिकासे करनेकी प्रार्थना सिंहवर्माके पास की थी, जिस प्रार्थनाको सिंहवर्माने अस्वीकार कर दिया था) अंगराज सिंहवर्मा इस बातको न सहन कर सका। जबतक शत्रु चण्डवर्मा परराज्यास्कन्दनोचित विधिको करनेकी इच्छा कर रहा था, तबतक सिंहवर्माने स्वयं ही प्राचीरको तोड़ करके तथा अपने सहायक राजाओंको, जो नगरके बहुत पास आ गये थे, उनकी प्रतीक्षा किये बिना ही बहुत बड़ी सेनावाले शत्रुसे जा करके युद्ध ठान दिया। युद्धमें छिन्नकवच सिंहवर्मा चण्डवर्माद्वारा परिबद्ध कर लिया गया। राजकुमारी अम्बालिका भी चण्डवर्माद्वारा बलात्कारसे परिबद्ध कर ली गयी। और बलपूर्वक विवाहके लिये चण्डवर्मा उसे अपने भवनमें ले आया। चण्डवर्माने मंगलसूत्र भी (यह समझते हुए) धारण कर लिया है कि, रात्रिसमाप्त होनेपर विवाह होगा।

(७२) अहं च धनमित्रगृहे तद्विवाहायैव पिनद्धमङ्गलप्रतिसरस्त-मेवमवोचम्—'सखे, समापतितमेवाङ्गराजाभिसरं राजमण्डलम्। सुगूढ-मेव संभूय पौरवृद्धैस्तदुपावर्तय। उपावृत्तश्च कृत्तशिरसमेव शत्रुं द्रक्ष्य-सि' इति।

(७३) 'तथा' इति तेनाभ्युपगते गतायुषोऽमुष्य भवनमुत्सवाकुल-मुपसमाधीयमानपरिणयोपकरणमितस्ततः प्रवेशनिर्गमप्रवृत्तलोकसंबाध-

* बालविबोधिनी *

(७२) अहमपहारवर्मा। तद्विवाहाय—अम्बालिकापरिणयार्थम्। पिनद्धे-ति-पिनद्धो बद्धः मङ्गलप्रतिसरो माङ्गलिकहस्तसूत्रं येन सः। तं धनमित्रम्। एवम् इत्थम्। समापतितं समागतम्। अङ्गराजाभिसरं अङ्गराजसाहय्यकारि। राज-मण्डलं नृपतिचक्रम् सुगूढं सुगुप्तम्। सम्भूय मिलित्वा। पौरवृद्धैरिति शेषः। तत्–राजमण्डलम्। उपावर्त्तय प्रतिनिवर्त्तय; भवतां साहाय्यं नापेक्ष्यते प्रागेव राज्ञा तत् कृतमतो भवन्तः प्रतिगच्छन्तु इति भावः। उपावृत्तः परावृत्तस्त्वमिति शेषः। कृत्तशिरसं छिन्नमस्तकम। शत्रुं चण्डवर्माणम्।

(७३) तेन धनमित्रेण। अभ्युपगते स्वीकृते। गतायुषः स्वल्पायुषः। अ-मुष्य चण्डवर्मणः। उत्सवाकुलं उत्सवपूर्णम्। उपसमाधीयेति—उपसमाधीयमा-नानि सम्पाद्यमानानि परिणयोपकरणानि विवाहोचितद्रव्यजातानि यत्र तत्। इत-स्ततः समन्तात्। प्रवेशेति—प्रवेशनिर्गमेषु गमनागमनेषु प्रवृत्तैः व्याप्तैर्लोकैर्जनैः

* बालक्रीडा *

(७२) मैंने (अपहारवर्माने) भी धनमित्रके गृहमें ही उस राजपुत्री अम्बा-लिकासे परिणय करनेके निमित्त मंगलसूत्र धारण करके धनमित्रसे कहा—'हे सखे ! अङ्गराजके सहायक राजागण अपने दल–बलके साथ चले आ रहे हैं। अतः तुम पौरवृद्धोंके साथ उन राजोंसे गुप्तरीतिसे मिल करके उन्हें रोक दो। और समझा दो। वे लोग थोड़ी देरमें आवें तो शत्रुको कटे हुए शिरमें पावेंगे।"

(७३) धनमित्रकेद्वारा "तथा" (ठीक उसी प्रकारसे करूंगा) ऐसी स्वीकृति पाकर मैं (अपहारवर्मा) स्वल्पायुष्यवान् चण्डवर्माके अन्तःपुरमें चला गया। वहां देखा कि, राजभवन विवाहोचित अनेकों वस्तुओंसे परिपूर्ण है। इधर–उधर लोगोंके गमनागमनसे प्रवेशमार्गपर बड़ी कठिनता प्रतीत हो रही है। मैं भी गुप्त

मलक्ष्यशास्त्रिकः सह प्रविश्य मङ्गलपाठकैरम्बालिकापाणिपल्लवमग्नौ साक्षिण्याथर्वणेन विधिनार्प्यमाणमादित्समानस्यायामिनं बाहुदण्डमाकृष्य च्छुरिकयोरसि प्राहार्षम्। स्फुरतश्च कतिपयानन्यानपि यमविषयमगमयम्। हतविध्वस्ते च तद्गृहमनु विचरन्वेपमानमधुरगात्रीं विशाललोचनामभिनिशाम्य तदालिङ्गनसुखमनुबुभूषुस्तामादाय गर्भगृहमविक्षम्। अ-

* बालविबोधिनी *

संबाध संकटम्। विशेषणद्वयमिदं भवनस्य। अलक्ष्यशास्त्रिकः अलक्ष्याऽदृश्या शस्त्रिका छुरिका यस्य सः गुप्तशस्त्र इत्यर्थः। मङ्गलपाठकैः स्तुतिपाठकैः ब्राह्मणैः। अग्नौ साक्षिणि सति—अग्निसाक्षिकम्। आथर्वणेन अथर्ववेदोपदिष्टेन पुरोधसा वा। विधिना अनुष्ठानेन। पुरोधसेति पक्षे विधिपूर्वकम्। अर्प्यमाणं सम्प्रदीयमानम् अम्बालिकापाणिपल्लवमित्यस्य विशेषणम्। आदित्समानस्य ग्रहीतुमिच्छतः। चण्डवर्मण इति शेषः। आयामिनं दीर्घं प्रसारितमिति यावत्। प्राहार्षं प्रहृतवानहमिति शेषः। स्फुरतः चण्डवर्मविनाशजनितकोपेन ज्वलतः। कतिपयान् अल्पसङ्ख्याकान् अन्यान् चण्डवर्मव्यतिरिक्तान्। यमविषयं यमालयम्। अगमयम् प्रापितवान्। हतविध्वस्ते हता नष्टा विध्वस्ताश्च जना यत्र तत्। तद्गृहं चण्डवर्मभवनम्। अनु विचरन् सर्वतो भ्रमन्। वेपमानमधुरगात्रीं कम्पमानकोमलावयवाम्। अभिनिशाम्य—श्रावयित्वा मत्परिचयमिति शेषः। अनुबुभूषुः अनुभवितुमिच्छुः। ताम् अम्बालिकाम्। गर्भगृहं गृहाभ्यन्तरम्।

* बालक्रीडा *

छुरीके सहित मंगलाचरण करनेवाले ब्राह्मणोंके झुण्डके साथ उस राजभवनमें चला गया। वहा प्रवेश करके मैंने देखा कि, अम्बालिका कुमारीके कोमलकरोंको अथर्ववेदकी रीतिसे अग्नि देवताके सम्मुख साक्षीभूत कराया जा रहा है और उसका पाणिग्रहण करनेके लिये चण्डवर्माने अपने विशाल हाथको उसी समय बढ़ाया। उसी क्षण मैंने उस चण्डवर्माको खींच करके उसके हृदयमें छुरी भोंक दी। और कुछ अन्योंको भी मार करके यमपुरी भेज दिया। जिस भवनमें प्राणी मारे गये उसी हतविध्वस्त राजभवनमें—चण्डवर्माके भवनमें—विचरण करते हुए मैंने, काँपती हुई सुन्दर शरीरवाली और दीर्घ नयनवाली, राजपुत्रीसे अपना परिचय सुना करके उसके साथ आलिंगन सुखकी अभिलाषासे उसको

स्मिन्नेव क्षणे तवास्मि नवाम्बुवाहस्तनितगम्भीरेण स्वरेणानुगृहीतः' इति ।

(७४) श्रुत्वा च स्मित्वा च देवोऽपि राजवाहनः 'कथमसि कार्कश्येन कर्णीसुतमप्यतिक्रान्तः' इत्यभिधाय पुनरवेक्ष्योपहारवर्माणम् आचक्ष्व, तवेदानीमवसरः इत्यभाषत । सोऽपि सस्मितं प्रणम्यारभताभिधातुम्—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरितेऽपहारवर्मचरितं नाम द्वितीय उच्छ्वासः ।

* बालविबोधिनी *

अविक्षम् प्रविष्टवान् । विश्प्रवेशे लुङ् । क्षणे अवसरे । तव भवतो राजवाहनस्येत्यर्थः । नवेति—नवाम्बुवाहस्य नूतनमेघस्य स्तनितं गर्जितं तद्वद् गम्भीरेण धीरेण स्वरेणेत्यस्य विशेषणम् । अनुगृहीतः अनुकम्पितोऽहमिति शेषः ।

(७४) श्रुत्वा एतद्वृत्तान्तमिति शेषः । स्मित्वा ईषद्विहस्य । कार्कश्येन—कठोरतया । कर्णीसुतं स्तेयशास्त्रप्रवर्त्तकम् । अतिक्रान्तः उल्लंघितस्त्वमिति शेषः । अवेक्ष्य दृष्ट्वा । आचक्ष्व कथय । तव उपहारवर्मणः । अवसरः समयः । सः उपहारवर्मा । अभधातुं कथयितुम् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचायकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायामपहारवर्मचरितं नाम द्वितीयोच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

ले करके गृहाभ्यन्तरमें रति-गृहमें प्रवेश किया । उसी क्षण नूतन मेघके गर्जनके सदृश गम्भीर स्वरसे आपने (राजवाहनने) मुझे अनुकम्पित कर दिया ।

(७४) इस वृत्तान्तको श्रवण करके तथा मुस्कुरा करके देव राजवाहनने कहा—"आपने तो इस कठोरतासे कर्णीसुत (स्तेयशास्त्र-प्रवर्त्तक) को भी मात कर दिया ।" फिर उपहारवर्माको देख करके कहा—"आपका अब समय है ।" उस उपहारवर्माने भी हंसकर, कहना प्रारम्भ किया ।

इस प्रकारसे दशकुमार-चरितके अपहारवर्म-चरित नामक द्वितीयोच्छ्वासकी बालक्रीड़ा नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई ।

तृतीयोच्छ्वासः ।

(१) एषोऽस्मि पर्यटन्नेकदा गतो विदेहेषु । मिथिलामप्रविश्यैव वहिः कचिन्मठिकायां विश्रमितुमेत्य कयापि वृद्धतापस्या दत्तपाद्यः क्षण-मलिन्दभूमाववास्थिषि । तस्यास्तु मद्दर्शनादेव किमप्यावद्धधारमश्रु प्राव-र्तत । 'किमेतदम्ब, कथय कारणम्' इति पृष्टा सकरुणमाचष्ट—'जैवातृक, ननु श्रूयते पतिरस्या मिथिलायाः प्रहारवर्मा नामासीत् । तस्य खलु मगधराजो राजहंसः परं मित्रमासीत् । तयोश्च वल्लभे वलशम्बलयोरिव

*** बालविबोधिनी ***

(१) एषोऽस्मीति—साम्प्रतमुपहारवर्मा स्वचरितं वर्णयति । एषः अहमु-पहारवर्मेति शेषः । पर्यटन् इतस्ततो भ्रमन् । मिथिलां विदेहराजधानीम् । मठि-कायां क्षुद्रमठे । दत्तं पाद्यं यस्मै सः-दत्तपादोदकः । पाद्यं पादाय वारिणि इत्यमरः । अलिन्दभूमौ-बहिर्द्वारप्रकोष्ठे । अवास्थिषि उपाविशम् । अवपूर्वक स्था धातोर्लुङि आत्मनेपदस्य रूपम् । किमपि अज्ञातकारणम् आवद्धधारं सन्तत-धारम् । जैवातृक-आयुष्मन् सम्बोधनमेतत् । जैवातृकः स्यादायुष्मानित्यमरः । तयोः राजहंसप्रहारवर्मणोः । वल्लभे दयिते पत्न्याविति शेषः । बलः शम्बल-श्चेति द्वावसुरौ तयोरिव-तौ यथा परस्परमित्रतामापन्नौ तथैव एतावपि मित्रत्व-

*** भाऊभीदा ***

(१) एक समय मैं (उपहारवर्मा) पर्यटन करते हुए विदेहपुरीमें गया । (वहाँ) विदेहपुरीमें प्रवेश करके उस पुरीके बाहर भागमें एक मठमें, विश्राम करनेके निमित्त, गया । वहांपर एक वृद्धाद्वारा मुझे पाव धोनेके लिये पानी दिया गया, जिससे मैंने अपने पाव धोये और मैं दरवाजेके समीप प्रकोष्ठक-में बैठ गया । वह वृद्धा मुझे देखते ही फूट-फूटकर (धाराप्रवाहरूपमें) रोने लगी । मैंने कहा—"हे मातः । यह क्या, आप किस कारणसे रोती हैं ।" इस तरह पूछनेपर उस वृद्धाने करुणाक्रान्त हो करके उत्तर दिया—"हे आयुष्मन् । ऐसा सुना जाता है कि, इस विदेहपुरीके स्वामी प्रहारवर्मा नामक राजा थे । उनकी प्रगाढ मित्रता मगधराज राजहंसके साथ हो गयी थी । उनकी वसुमती और प्रियम्वदा नामक पत्नियोंमें भी, बल और शम्बलकी मित्रताके

वसुमतीप्रियंवदे सख्यमप्रतिममधत्ताम् । अथ प्रथमगर्भाभिनन्दितां तां च प्रियसखीं दिदृक्षुः प्रियंवदा वसुमतीं सह भर्त्रा पुष्पपुरमगमत् ।

(२) तस्मिन्नेव च समये मालवेन मगधराजस्य महज्जन्यमजनि । तत्र लेशतोऽपि दुर्लक्ष्यां गतिमगमन्मगधराजः । मैथिलेन्द्रस्तु मालवेन्द्रप्रयत्नप्राणितः स्वविषयं प्रतिनिवृत्तो ज्येष्ठस्य संहारवर्मणः सुतैर्विकटवर्मप्रभृ-

* बालविबोधिनी *

मापन्नाविति भावः । वसुमती प्रियवदे-वसुमती राजहंसस्य, प्रियंवदा च प्रहारवर्मणः इत्यर्थः । अप्रतिमम् अतुलनीयम् । प्रथमगर्भेण अभिनन्दितां सुशोभिताम् । तां वसुमतीम् । भर्त्रा स्वामिना प्रहारवर्मणेत्यर्थः । पुष्पपुरं राजहंस राजधानीम् ।

(२) मालवेन मालवदेशाधिपतिना मानसाराख्येन सह । मगधराजस्य राजहंसस्य । जन्यं युद्धम् । तत्र युद्धे । लेशतोऽपि दुर्लक्ष्यां किञ्चिदपि निश्चेतुमशक्याम् । गतिं दशाम् । सारथिशून्यत्वाद् अश्वाः राजहंसस्य रथं कुत्र निन्युरिति न केनापि विदितमिति भावः । मैथिलेन्द्रः प्रहारवर्मा । मालवेन्द्रस्य मानसारस्य प्रयत्नेन चेष्टया प्राणितो जीवितो रक्षित इति यावत् । स्वविषयं स्वदेशम् । ज्येष्ठस्य भ्रातुरिति शेषः । व्यात माक्रान्तम् । स्वस्त्रीयाद् भागिनेयात् । सुह्मपतेः

* बालक्रीडा *

समान, बड़ी मित्रता हो गयी थी । कुछ दिनोंके पश्चात् वसुमतीको प्रथम गर्भकी प्राप्ति हुई जिसके अभिनन्दनके लिये प्रियम्वदा अपने स्वामीके साथ पुष्पपुरको गयी ।

(२) उसी समय मालवदेशके अधिपति मानसारके साथ मगधराज राजहंसका युद्ध आरम्भ हो गया । उस युद्धमें मगधराज राजहंस कुछ भी वर्णन करनेकी अयोग्य परिस्थितिमें प्राप्त हुए । मगधराज राजहंसका सहायताकारी मैथिल देशका अधिपति प्रहारवर्मा मालवदेशके अधिपति मानसारकी दयासे येन-केन-प्रकारेण अपने जीवित प्राणोंको लेकर अपने देशको लौट गया । वहां लौट करके उसने (प्रहारवर्माने) सुना कि, उसका राज्य उसके बड़े भाई संहारवर्माके पुत्र विकटवर्मा आदिने आक्रान्त कर लिया है । ऐसा ज्ञात करके

तिभिर्व्याघ्र राज्यमाकर्ण्य स्वसीयात्सुह्मपतेर्दण्डावयवमादित्सुरटवीपथमवगाह्य लुब्धकलुसितसर्वस्वोऽभूत्।

(२) तत्सुतेन च कनीयसा हस्तवर्तिना सहैकाकिनी वनचरशरवर्षभयपलायिता वनमगाहिषि। तत्र च मे शार्दूलनखावलीढनिपतितायाः पाणिभ्रष्टः स बालकः कस्यापि कपिलाशवस्य क्रोडमभ्यलीयत। तच्छ्वा-

* बालविबोधिनी *

सुलाकर्ण्यदेशाधिपात्। दण्डावयव दण्डस्य सङ्ग्रामस्यावयवमुपकरणं हस्त्यश्वादिकम्। आदित्सुर्ग्रहीतुमिच्छुः। अटवीपथमरण्यमार्गम्। अवगाह्य प्रविश्य लुब्धके व्याधै र्लून हृत सर्वस्व यस्य तादृशः।

(३) तत्सुतेन प्रहारवर्मपुत्रेण। हस्तवर्तिना मम हस्तस्थितेन। एकाकिनी असहाया। वनचरेति-वनचराणां किरातानां शरवर्षात् बाणानि-क्षेपाद् भयेन पलायिता अहमिति शेषः। अगाहिषि आविशम्। तत्र वने। शार्दूलस्य व्याघ्रस्य नखै अवलीढा विद्धा अतएव निपतिता भूमाविति शेषः, तस्या स्तथा भूतायाः। मे इत्यस्य विशेषणम्। पाणिभ्रष्टो हस्तच्युतः। कपिलाशवस्य मृतधेनोः। क्रोड वक्षःस्थलम्। अभ्यलीयत तत्र लीनोऽभवत्। तच्छवं कपिलाशव व्याकर्षतीति तस्य। असून् प्राणान्। इषु बाणः। इष्वसनेति-अस्यतेऽनेनेति असनम्-इषोरसनमिष्वसनं धनुस्तदेव यन्त्रस्तस्मान्मुक्तस्त्यक्त। इषुरित्यस्य

* बालक्रीडा *

उस प्रहारवर्माने अपने बहिनके पुत्र, (भानजे), जिसका नाम सुह्मपति था, से सेना सामग्री (हाथी घोड़े आदि) की सहायता लेनेकी इच्छा की और अरण्यके मार्गसे अपने भानजेके पास जा रहा था कि, अरण्यवासी कोल भीलोंने उसके पास जो भी था लूट लिया।

(३) मेरी गोदीमें प्रहारवर्माका छोटा शिशु था कोल भीलोंके बाणोंकी वर्षाके भयसे मैं अकेली उसे (शिशुको) लिए हुए जगलमें घुस गयी। उस जगलमें मैं शेरके झपटनेसे—उसके नाखूनकी खरोंच आदिके—लगनेसे भूमिपर गिर पड़ी। मेरे हाथसे वह शिशु छूट करके किसी कपिला धेनु (गौके) मृत शवके गोदमें गिर पड़ा। जब वह शेर उस कपिला गौके मृत शवकी ओर

कर्पिणश्च व्याघ्रस्यासूनिपुरिष्वसनयन्त्रमुक्तः क्षणादलिक्षत् । भिल्लदारकैः स बालोऽपाहारि ।

(४) सा त्वहं मोहसुप्ता केनापि वृष्णिपालेनोपनीय स्वं कुटीरमावेश्य कृपयोपक्रान्तव्रणा स्वस्थीभूय स्वभर्तुरन्तिकमुपतिष्ठासुरसहायतया यावद्व्याकुलीभवामि तावन्ममैव दुहिता सह यूना केनापि तमेवोद्देशमागमत् । सा भृशं रुरोद । रुदितान्ते च सा सार्थघाते स्वहस्तगतस्य राजपुत्रस्य किरातभर्तृहस्तगमनम् , आत्मनश्च केनापि वनचरेण व्रणविरोपणम् ,

* बालविबोधिनी *

विशेषणम् । अलिक्षत् आस्वादयत्–प्राणान् जहारेत्यर्थः । लिह आस्वादे इत्यस्य धातोर्लुङ् । भिल्लदारकैः किरातबालकैः । अपाहारि अपहृतः ।

(४) मोहसुप्ता मोहेन मूर्च्छया सुप्ता निद्रिता । वृष्णिपालेन मेषपालेन । मेष वृष्णय एड़का इत्यमरः । उपक्रान्तव्रणा ।चिकित्सितव्याघ्रकृतक्षता । स्वभर्तु विदेहराजस्य । उपतिष्ठासुर्गन्तुमिच्छुः । सार्थघा ते संघभ्रंशे । राजपुत्रस्य विदेहराजापरपुत्रस्य । तेन वनचरेण । उपयन्तुं चिन्तितायाः परिणेतुमभिलषि-

* बालक्रीडा *

आकर्षित हो रहा था, ठीक उसी समयमें ही किसीके धनुषसे निकले हुए बाणके द्वारा वह (शेर) मार डाला गया । भीलके बालकोंके द्वारा वह शिशु भी अपहरण कर लिया गया ।

(४) मुझे, जो मैं शेरके आक्रमणसे मूर्छित हो गयी थी, एक गोप निश्चेष्टितावस्थामें ही अपनी कुटीमें ले गया । वहां ला करके उस गोपने दया करके मेरी चिकित्सा आदि की तथा सेवा-शुश्रूषा करके मुझे स्वस्थ कर दिया । स्वस्थ होनेपर मैं (वृद्धा) अपने स्वामी विदेहाधिपतिके समीप जानेके लिए सहायताहीन होनेसे जब व्याकुल हो रही थी, तब (उसी समयमें) मेरी पुत्री किसी युवकके साथ उस स्थान में आ पहुंची । वह आ करके अत्यन्त रोने लगी । रोनेके पश्चात् उस पुत्रीने साथ छूटनेपर राजाके दूसरे पुत्रका किरातके पतिके हाथमें जाना, किसी वनेचरद्वारा अपनी सेवा-शुश्रूषाका होना तथा शेरके नखक्षतोंका उपचार होना, स्वस्थ होनेपर उसी वनेचरद्वारा विवाहका प्रस्ताव किया जाना,

स्वस्थायाश्च पुनस्तेनोपयन्तु चिन्तिताया निकृष्टजातिससर्गवैक्लव्यात्प्रत्याख्यानपारुष्यम् , तदक्षमेण चामुना विविक्ते विपिने स्वशिरःकर्तनोद्यम , अनेन यूना यदृच्छया दृष्टेन तस्य दुरात्मनो हननम् , आत्मनश्चोपयमनमित्यकथयत् ।

(५) स तु पृष्टो मैथिलेन्द्रस्यैव कोऽपि सेवकः कारणविलम्बी तन्मार्गानुसारी जातः । सह तेन भर्तुरन्तिकमुपसृत्य पुत्रवृत्तान्तेन श्रोत्र-

* बालविबोधिनी *

ताया । निकृष्टजातीति—नीचजातीयकिरातसंसर्गदोपदुष्टतया तद्विवाहस्य प्रत्याख्यानेनास्वीकारेण यत्पारुष्य कार्कश्यम् । तथा कृतमितिशेषः । तदक्षमेण तत्सोढुमशक्नुवता । अमुना किरातेन । विविक्ते निर्जने । स्वशिरःकर्तनोद्यमः मद्दुहितुर्मस्तकच्छेदनप्रयासः । यदृच्छया दैवगत्या सहसा वा । उपयमनं विवाहस्तेन यूना सहेत्यर्थः ।

(५) सः मद्दुहितुः परिणेता । मैथिलेन्द्रस्य विदेहाधिपप्रहारवर्मणः । सेवको भृत्यः । कारणविलम्बी प्रयोजनवशेन कृतविलम्बः । तन्मार्गानुसारी तस्य राज्ञो मार्गानुसारी येन मार्गेण राजा जगाम तेनैव सोऽपि तमनुससारेति भावः ।

* बालक्रीडा *

नीच जातिके संसर्गसे व्याकुल होना, विवाहके प्रस्तावका विरोध करनेसे उस वनेचरको स्वयं (पुत्रीद्वारा) कर्कश वचन कहा जाना वनेचरद्वारा, कर्कश वचनोंके प्रतिवादमें, उसको निर्जन वनमें लेजा करके शिर काटनेका उद्योग करना, दैवगतिसे इस युवकका (-जो साथ में था) उस जंगलमें आना, तथा, उस वनेचरका वध करना, एवं अपना, विवाह उस युवकके साथ होनेका समाचार सुनाना आदि । (सभी बातें अपनी मातासे कह सुनायीं) ।

(५) इसके पश्चात् पूछे जानेपर उस कन्याके पतिने कहा कि, मैं भी मैथिलेन्द्रका ही एक सेवक हूं तथा किसी कारणवश विलम्ब करके उन्हीं मैथिलेन्द्र प्रहारवर्माके मार्गका अनुसरण करके जा रहा हूं । उसी युवकके साथ हम दोनों स्वामी प्रहारवर्माके सन्निकट पहुंची । वहांपर देवी प्रियम्वदासे तथा राजासे पुत्रके

मस्य देव्याः प्रियंवदायाश्चादहाव । स च राजा दिष्टदोषाज्ज्येष्ठभ्रातृपुत्रैश्चिरं विगृह्य पुनरसहिष्णुतयातिमात्रं चिरं प्रयुध्य बद्धः । देवी च बन्धनं गमिता । दग्धा पुनरहमस्मिन्नपि वार्धके हतजीवितमपारयन्ती हातुं प्रव्रज्यां किलाग्रहीषम् । दुहिता तु मम हतजीविताकृष्टा विकटवर्ममहादेवीं कल्पसुन्दरीं किलाशिश्रियत् । तौ चेद्राजपुत्रौ निरुपद्रवावेवावर्धिष्येताम्, इयता कालेन तवेमां वयोवस्थामस्प्रक्ष्येताम् । तयोश्च सतोर्न दा-

*** बालविबोधिनी ***

भर्तुः प्रभोः । अस्य भर्तुः प्रहारवर्मणः । श्रोत्रं श्रवणेन्द्रियं कर्णौ वा । अदहाव अप्रियवृत्तान्तकथनेन कर्णयोर्महतीं पीडामजनयाव आवामिति शेषः । दिष्टदोषात् भाग्यदोषात् । विगृह्य विग्रहं कृत्वा विरोध्येति यावत् । अतिमात्रम् अत्यर्थम् । चिरं दीर्घकालं यावत् । देवी प्रियंवदा । गमिता प्रापिता । दग्धा हतभाग्या । हतजीवितं व्यर्थजीवनम् । हातुं त्यक्तुम् । प्रव्रज्यां सन्यासम् । विकट वर्मणः प्रहारवर्मज्येष्ठभ्रातृपुत्रस्य महादेवीं पट्टमहिषीम् । अशिश्रियत् जीविकार्थमाश्रितवती । निरुपद्रवौ निर्विघ्नौ । अवर्धिष्येताम् । वर्द्धितौ अभविष्यताम् । इयता कालेन एतावद्भि दिवसैः, साम्प्रतमिति यावत् । वयोऽवस्थां त्वत्सदृशं वयः । अस्प्रक्ष्येतां स्पृष्टौ भविष्यतः । लृङि रूपद्वयम् । सतोः वर्तमानयोः । जीवतो

*** बालक्रीडा ***

वृत्तान्तोंको कह करके उन दोनोंके कानोंको पीड़ाएं दीं—क्योंकि, अप्रिय कथनसे पीड़ा ही होती है । वह राजा प्रहारवर्मा भी भाग्यके दोषसे दीर्घकालतक ज्येष्ठ भ्राताके पुत्रोंके साथ युद्ध करके न जीते । फिर उन सबका अपकार न सह करके विकट युद्ध करनेसे स्वयं ही पकड़ लिये गये । रानी भी पकड़ ली गयीं । हतभागिनी मैं, इस वृद्धापनमें भी अपने जीवनको नष्ट करनेमें असमर्थ हो करके, संन्यस्त धारिणी हो गयी । मेरी पुत्री भी व्यर्थ जीवनके आकर्षणसे विकटवर्मा (प्रहार वर्माके ज्येष्ठ भाईका पुत्र) की पटरानी महादेवी कल्पसुन्दरीके आश्रयमें पड़ी है । यदि वे दोनों राजकुमार निर्विघ्नतापूर्वक पाल करके बढ़ाये जाते तो, इस समयतक वे आपकी अवस्थाके हुए होते । और उन दोनोंके होनेसे, राजा प्रहारवर्माका कोई दायाद (पट्टीदार) बलात्कारसे राज्यापहरणकारी न रह पाता ।”

यादा नरेन्द्रस्य प्रसह्यकारिणो भवेयु' इति प्रमन्युरभिरुरोद।

(६) श्रुत्वा च तापसीगिरमहमपि प्रवृद्धबाष्पो निगूढमभ्यधाम्—'यद्येवमम्ब, समाश्वसिहि। नन्वस्ति कश्चिन्मुनिस्त्वया तदवस्थया पुत्राभ्युपपादनार्थं याचितस्तेन स लब्धो वर्धितश्च। वार्तेयमतिमहती। किमनया। सोऽहमस्मि। शक्यश्च मयासौ विकटवर्मा यथाकथचिदुपश्लिष्य व्यापादयितुम्'। अनुजा पुनरतिबहव, तैरपि घटन्ते पौरजानपदाः। मां

* बालविबोधिनी *

रिति भावः। दायादा' भ्रातृपुत्रादयः। प्रसह्यकारिणो बलात्कारेण राज्यापहारिणः। प्रमन्यु' प्रवृद्धशोका।

(६) प्रवृद्धबाष्प. रुदन्नित्यर्थ। निगूढ सुगुप्तम्। समाश्वसिहि आश्वस्ता भव। तदवस्थया तथा विपन्नया। पुत्रस्य बालकस्याभ्युपपादनार्थं पोषणार्थम्। तेन मुनिना। स बालः। अतिमहती सुदीर्घा। किमनया तद्वार्त्तावर्णनेनालमिति भावः। सोऽहमस्मि अहमेव स बाल इत्यर्थ.। यथा कथञ्चित् केनापि प्रकारेण। उपश्लिष्य सन्निधान गत्वा। व्यापादयितु हन्तुम्। शक्य इत्यनेनान्वयः। अनुजाः विकटवर्मणो भ्रातरः। घटन्ते मिलिता स्तिष्ठन्ति। विकटवर्मणि हतेऽपि पौरजानपदैः सह समिलिता स्तदनुजा एव राज्य करिष्यन्ति अतो मत्कृतं विकट-

* बालक्रीडा *

ऐसा कह करके वह वृद्धा घोर सन्तापसे जोर–जोरसे रोने लगी।

(६) इस वृत्तान्तको उस वृद्धा तापसीके मुखसे सुन करके मैंने गुप्तरीतिसे अपने आखोंके आसुओंको रोक करके बातचीत की। "हे अम्ब! यदि ऐसा वृत्तान्त है, तो धीरज धरिये। कोई एक ऐसा ऋषि है जिस ऋषिसे आपने विपन्नावस्थामें पुत्रोंको पालने और संवर्धन करनेके लिए प्रार्थना की थी। उन ऋषिने आपके उन बच्चोंको प्राप्त करके पालन-पोषण किया है। यह वार्त्ता अति विस्तारवाली है (अथवा) इससे क्या प्रयोजन! वह बालक मैं ही हूं। मुझे इतनी शक्ति है कि, मैं विकटवर्माके समीप जा करके उसे मार डाल सकूंगा। परन्तु, उस विकटवर्माके बहुतसे छोटे भाई हैं। वे सब पौरजानपदों (सामन्त आदिकों) से सहायता ले करके राज्यका उपभोग करने लगेंगे। इससे मेरा मारना व्यर्थ हो

तु न कश्चिदिहत्य ईदृक्तया जनो जानाति । पितरावपि तावन्मां न संविदाते, किमुतेतरे । तदेनमर्थमुपायेन साधयिष्यामि' इत्यगादिषम् ।

(७) सा तु वृद्धा सरुदितं परिष्वज्य मुहुः शिरस्युपाघ्राय प्रस्नुतस्तनी सगद्गदमगदत्—'वत्स, चिरं जीव । भद्रं तव । प्रसन्नोऽद्य भगवान्विधिः । अद्यैव प्रहारवर्मण्यधि विदेहा जाताः, यतः प्रलम्बमानपीनबाहुर्भवानपारमेतच्छोकसागरमद्योत्तारयितुं स्थितः । अहो, महद्भागधेयं

* बालविबोधिनी *

वर्महननं वृथैव भविष्यतीति भावः । इहत्यः अत्रत्यः । अव्ययात्त्यबिति त्यप् । ईदृशस्य भाव ईदृक्ता तया अहमेव प्रहारवर्मणः पुत्र इत्येवं रूपेणेत्यर्थः । संविदाते जानीतः । तत् तस्मात् ।

(७) प्रस्नुतस्तनी स्रवत्क्षीरपयोधरा वात्सल्यादितिभावः । भद्रं मङ्गलम् । प्रहारवर्मण्यधि प्रहारवर्माधीनाः मन्ये सर्वमेव विदेहराज्यं पुनरपि प्रहारवर्मणाधिकृतमिति भावः । "अधिरीश्वरे" इत्यनेन यस्मादधिकं यस्येत्यादिना च कर्मप्रवचनीयता सप्तम्यौ । यतः यस्मात्कारणात् । प्रलम्बेति–प्रलम्बमानौ प्रसारितौ–दीर्घौ वा पीनौ मांसलौ बाहू भुजौ यस्य सः । भागधेयं भाग्यम् । हर्षनिर्भरा

* बालक्रीडा *

जायगा । मुझे तो यहांके निवासी कोई भी उस तरीकेपर नहीं जानते हैं जिस तरीकेपर प्रहारवर्माके पुत्रोंको जानते हैं । माता-पिता भी मुझे नहीं जानते हैं । तो फिर अन्योंकी बात ही क्या है । इसलिये इस कार्यको उपायद्वारा साधूंगा (करूंगा) ।" ऐसे वाक्य उससे । मैंने कहे ।

(७) उस वृद्धाने रोते हुए बार-बार आलिंगन किया और मेरा मस्तक सूंघने लगी तथा स्तनोंसे दूध टपकाती हुई बोली । 'हे वत्स ! दीर्घायु हो ! तुम्हारा कल्याण हो ! आज भगवान् ब्रह्मदेव प्रसन्न हुए । आजसे ही प्रहारवर्माके अधीन विदेहपुरीका राज्य हुआ । क्योंकि आपके प्रलम्बमान दीर्घ और मांसल बाहु प्रहारवर्माको इस शोकसमुद्रसे तारनेके लिए साक्षात् आविर्भूत हो गये अहा ! देवी प्रियम्वदाका कैसा जबर्दस्त भाग्य है ।" इस प्रकारसे हर्षके वेगसे उसने

देव्या प्रियवदाया' इति हर्षनिर्भरा स्नानभोजनादिना मामुपाचरत् । अशिश्रियं चास्मिन्मठैकदेशे निशि कटशय्याम् । अचिन्तयं च 'विनोपधिनायमर्थो न साध्य. । स्त्रियश्चोपधीनामुद्भवक्षेत्रम् । अतोऽन्त.पुरवृत्तान्तमस्या अवगम्य तद्द्वारेण किंचिज्जालमाचरेयम्' इति ।

(८) चिन्तयत्येव मयि महार्णवोन्मग्नमार्तण्डतुरगमश्वासरयावधू, तेव व्यावर्तत त्रियामा । समुद्रगर्भवासजडीकृत इव मन्दप्रतापो दिवसकर:

* बालविबोधिनी *

सातिशयहर्षवती । उपाचरत् असेवत । अशिश्रियम् आश्रितवान् । कटशय्या तृणरचितशयनम् । उपधिना कपटेन । अर्थो विषय· । साध्यः साधयितुं शक्यः । उद्भवक्षेत्रम् उत्पत्तिस्थानम् । अस्या इति पञ्चम्यन्तम् वृद्धाया· सकाशादित्यर्थः । जालं कपटम् ।

(८) चिन्तयत्येव मयि–मच्चिन्तासमकालमेव । महार्णवेत्यादि महार्णवात् सागरात् उन्मग्नस्य उत्थितस्य मार्त्तण्डस्य सूर्यस्य तुरङ्गमाणा मश्वाना श्वासरयेण निःश्वास वायुवेगेन अवधूता कम्पितेवेत्युत्प्रेक्षा । त्रियामा रात्रि· । व्यावर्त्तत अपासरत् प्रभातेति यावत् । समुद्रेति–समुद्रगर्भे सागरमध्ये वासेन स्थित्या जडीकृतः शीतलीकृत इव । उदयसमये सूर्यस्य मन्दप्रतापत्वं प्रसिद्धमेव, समुद्रगर्भवासस्तु न तस्य हेतुरित्यहेतो हेतुत्वेनोत्प्रेक्षणाद्धेतूत्प्रेक्षा । मन्दप्रतापः अनुष्णः ।

* बालक्रीडा *

स्नान भोजन आदिसे मेरा स्वागत सत्कार किया । मैंने भी रातमें उसी मठके अन्दर एक जगह तृणरचित शय्यापर आश्रय लिया । और विचार किया कि," विना छल किये यह कार्य सिद्ध न हो सकेगा । छलका मूलस्थान स्त्रिया होती है । अतः इस वृद्धासे अन्तःपुरका वृत्तान्त विदित करके कोई जाल (छल) रचूगा ।"

(८) मैं इस प्रकारसे विचार कर रहा था कि, महासमुद्रसे आविर्भूत होते हुए भगवान् सूर्यके घोड़ोंके निःश्वासोंसे कम्पित रात्रि मारे भयके व्यतीत हो गयी । समुद्रके अन्दर देरतक निवास करनेसे, मानो, सूर्यका तेज शीतल हो

प्रादुरासीत्। उत्थायावसायितदिनमुखनियमविधिस्तां मे मातरमवादिषम्- 'अम्ब, जाल्मस्य विकटवर्मणः कच्चिदन्तःपुरवृत्तान्तमभिजानासि' इत्यनवसितवचन एव मयि काचिदङ्गना प्रत्यदृश्यत। तां चावेक्ष्य सा मे धात्री हर्षाश्रुकुण्ठितकण्ठमाचष्ट—'पुत्रि पुष्करिके, पश्य भर्तृदारकम्। अयमसावकृपया मया वने परित्यक्तः पुनरप्येवमागतः' इति।

(६) सा तु हर्षनिर्भरनिपीडिता चिरं प्ररुद्य बहु विलप्य शान्ता पुनः स्वमात्रा राजान्तःपुरवृत्तान्ताख्याने न्ययुज्यत। उक्तं च तया—'कुमार,

* बालविबोधिनी *

अवसायितेति-अवसायितः समापितो दिनमुखस्य प्रातःकालस्य नियमविधिर्नित्यकृत्यं येन तथाविधः। तां वृद्धां धात्रीम्। जाल्मस्य मूर्खस्य। अनवसितवचने असमाप्तवाक्ये। प्रत्यदृश्यत मया दृष्टाऽभवत्। हर्षाश्रुणा आनन्दजनितबाष्पेण कुण्ठितोऽवरुद्धः कण्ठो यस्मिंस्तद्यथा तथा। क्रियाविशेषणमेतत्। बाष्पगद्गदकण्ठमित्यर्थः। भर्तृदारकं प्रभुपुत्रम्। अकृपया निर्दयया। एवं एवम्प्रकारेण।

(६) सा पुष्करिका। हर्षनिर्भरेण हर्षातिशयेन निपीडिता आक्रान्ता। चिरं दीर्घकालम्। शान्ता आश्वस्ता। स्वमात्रा पूर्वोक्तवृद्धया। तया पुष्करि-

* बालक्रीडा *

गया हो, प्रातःकालिक मन्द तेजवाले सूर्यका उदय हुआ। मैंने उठ करके प्रातःकालकी नित्य-क्रिया की और फिर अपनी धात्रीसे कहा—"हे मातः! मूर्ख विकटवर्माके अन्तःपुरका कुछ वृत्तान्त आप जानती हैं?" यह वाक्य समाप्त भी न कर पाया था कि, कोई अंगना मुझको वहांपर दिखायी पड़ी। उस वनिताको देखते ही मेरी धात्री आनन्दातिरेकसे अश्रुयुक्त रुद्ध कण्ठसे बोलने लगी—"हे पुत्रि! पुष्करिके!! मेरे स्वामीके पुत्रको देखो। इस पुत्रको मैंने निर्दयतापूर्वक वनमें परित्यक्त कर दिया था। वही पुत्र इस युवकके रूपमें पुनः प्राप्त हुआ है।

(६) वह पुष्करिका पुत्रागमन सुन करके, हर्षातिरेकसे विह्वल होकर, घोर विलाप करके रोने लगी। जब विलापके पश्चात् वह शान्त हुई। तब उसकी

कामरूपेश्वरस्य कलिन्दवर्मनाम्न कन्या कल्पसुन्दरी कलासु रूपे चाप्सरसोऽप्यतिक्रान्ता पतिमभिभूय वर्तते । तदेकवल्लभ , स तु वह्ववरोधोऽपि विकटवर्मा' इति ।

(१०) तामवोचम्–'उपसर्पैनां मत्प्रयुक्तैर्गन्धमाल्यै । उपजनय चासमानदोषनिन्दादिना स्वभर्तरि द्वेषम् । अनुरूपभर्तृगामिनीनां च वासवदत्तादीनां वर्णनेन ग्राहयानुशयम् । अवरोधनान्तरेषु च राज्ञो विलसितानि

* बालविबोधिनी *

कथा । कलासु नृत्यगीतादिषु । रूपे कान्तौ । अतिक्रान्ता अत्युत्कृष्टेत्यर्थः । अभिभूय आक्रम्य सर्वथा तत्राधिपत्य विस्तार्येति भावः । तदेकेति–सैव कल्पसुन्दर्येव एका अद्वितीया वल्लभा दयिता यस्य सः वह्ववरोधोऽपि बहुपत्नीकोऽपि ।

(१०) उपसर्प उपचर सेवस्वेतियावत् । एनां कल्पसुन्दरीम् । मत्प्रयुक्तैः मया प्रेषितैः । उपजनय उत्पादय । द्वेषमिति शेषः । असमानेति–असमानोऽसदृशो यो दोषस्तस्य निन्दादिना गर्हणादिना–स्त्रीपुरुषौ सदृशावेव भवितुमुचितौ–स्त्रिया असमानो यदि पुरुषः स्यात्तदा तयोर्विवाहो दोष एवेत्यादि कथनेनेति भावः। स्वभर्तरि निजपत्यौ विकटवर्मणीत्यर्थः । अनुरूपभर्तृगामिनीनां लब्धयोग्यपतिका-

* बालक्रीडा *

वृद्धा माताने उसे राजाके अन्तःपुरका वृत्तान्त सुनानेके लिए नियुक्त किया। उस पुष्करिकाने कहा—"हे कुमार ! कामरूपदेशके कलिन्दवर्मानामक राजाकी लड़की जिसका नाम कल्पसुन्दरी है जो नृत्यगीतादि कलाओंमें निपुण है। जिसने अपने रूपके लावण्यसे अप्सराओंको भी तिरस्कृत कर दिया है। वही अपने पति विकटवर्मा को मोहित करके राज-प्रासादमें रहती है। यद्यपि विकटवर्मा नृपतिको अनेकों रानिया हैं, परन्तु, वह इसीको अपनी पटरानी समझता है।

(१०) इसके अनन्तर मैंने उस पुष्करिकासे कहा—"हेदेवि ! यह मेरी दी हुई सुगन्धित मालाको कल्पसुन्दरीके समीप जा करके धर दो। और उससे उसके पतिके दोषोंको उससे (कल्पसुन्दरीसे) निन्दाके रूपमें प्रकट करो कि, यह पति तुम्हारे असदृश है तुम स्वरूपा हो, वह कुरूप है आदि । तथा वासवदत्ता आदि सुयोग्य रमणियोंका अपने अनुकूल पति पानेका वर्णन करो एवं

सुगूढान्यपि प्रयत्नेनान्विष्य प्रकाशयन्ती मानमस्या वर्धय' इति । पुनरिदमम्बामवोचम्—'इत्थमेव त्वयाप्यनन्यव्यापारया नृपाङ्गनासावुपस्थातव्या । प्रत्यहं च यद्यत्तत्र वृत्तं तदस्मि त्वयैव बोध्यः, मदुक्ता पुनरियमुदर्कस्वादुनोऽस्मत्कर्मणः प्रसाधनाय च्छायेवानपायिनी कल्पसुन्दरीमनुवर्तताम्' इति । ते च तमर्थं तथैवान्वतिष्ठताम् ।

(११) केषुचिद्दिनेषु गतेष्वाचष्ट मां मदम्बा 'वत्स, माधवीव पिचुमन्दाश्लेषिणी यथासौ शोच्यमात्मानं मन्येत तथोपपाद्य स्थापिता । किं

बालबोधिनी ।

नाम् । अनुशयं पश्चात्तापम् । अवरोधनान्तरेषु अन्यस्त्रीषु । राज्ञः विकटवर्मणः । विलसितानि विहारादीनि । अन्विष्य अनुसन्धानेन आविष्कृत्य । मानं कोपम् । अनन्येति-नास्ति अन्यो व्यापारो यस्यास्तया परित्यक्तान्यकार्यया । उपस्थातव्या सेव्या । वृत्तं सञ्जातम् । बोध्यः ज्ञापनीयः । इयं पुष्करिका । उदर्को भाविफलं स्वादु मधुरं यस्य तस्य-शुभपरिणामस्येत्यर्थः । प्रसाधनाय सम्पादनाय । अनपायिनी अविच्छिन्ना । अनुवर्तता मनुसरतु । ते वृद्धा-पुष्करिके । तथैव यथा मयोक्तं तेनैवप्रकारेण ।

(११) गतेषु व्यतीतेषु । मा मुपहारवर्माणम् । माधवी वासन्तीलता । पिचुमन्दाश्लेषिणी-निम्बवृक्षाश्रिता । पिचुमन्दं निम्बवृक्ष माश्लिष्यतीति

* बालक्रीडा *

पश्चात्ताप कराओ । तथा राजा विकटवर्माका दूसरी रमणियोंसे अधिक विलास आदि करना इस बातको प्रयत्नके साथ खोज करके कल्पसुन्दरीको बता दो और उसके मनमें क्रोध उत्पन्न करा दो ।" फिर मैंने उस वृद्धा मातासे यह कहा—"हे मातः ! आप भी सभी दूसरे कर्मों को त्याग करके केवल कल्पसुन्दरी रानीकी सेवा करें । प्रत्येक दिवस वहांपर जो भी समाचार मिले उसे आप स्वयं मुझसे आ करके कहें । इस पुष्करिकाको मेरे कहे वचनोंपर छायाके समान सदा रानी कल्पसुन्दरीकी सेवामें अविच्छिन्नरूपेण आरूढ़ रहना चाहिए । क्योंकि इस कार्यसे अन्तमें सुन्दर सुपरिणाम होनेवाला है ।" वे दोनों मेरे कहे वाक्योंपर दृढ़ रह करके वैसा ही करने लगीं ।

(११) कुछ दिवसोंके बीतनेपर मेरी वृद्धा माताने मुझसे उपहारवर्मासे

भूय' कृत्यम्' इति । पुनरहमभिलिख्यात्मनः प्रतिकृतिम् 'इयममुष्यै नेया । नीता चैनां निर्वर्ण्य सा नियतमेव वक्ष्यति । 'नन्वस्ति कश्चिदीदृशाकारः पुमान्' इति । प्रतिब्रूह्येनाम्—'यदि स्यात्तत किम्' इति । तस्य यदुत्तरं सा दास्यति 'तदहमस्मि प्रतिबोधनीय' इति ।

(१२) सा 'तथा' इति राजकुलमुपसक्रम्य प्रतिनिवृत्ता मामेकान्ते

***बालविबोधिनी ***

तथोक्ता । असौ कल्पसुन्दरी । शोच्य शोचनीयम् । निम्बवृक्षाश्रयणेन माधवीलताया यथा शोचनीयता भवति तथा कल्पसुन्दर्या अपि विकटवर्मपत्नीत्व स्वीकारेणेति भाव. । उपपाद्य सम्पाद्य भूयः पुन अग्रे इति यावत् । कृत्य कर्तव्यम् । अभिलिख्य चित्रयित्वा । प्रतिकृति प्रतिमूर्त्तिम् । इय प्रतिकृति. । अमुष्यै–कल्पसुन्दर्यै–तदर्थमित्यर्थः । नेया आपणीया । नीता प्रापिताम् । एना प्रतिकृतिम् । निर्वर्ण्य दृष्ट्वा । सा कल्पसुन्दरी । नियतम् अवश्यम् । एवं वक्ष्यमाणम् । ईदृशाकारः ईदृश एवम्भूत आकार आकृतिर्यस्य सः । प्रतिब्रूहि–प्रत्युत्तरय । यदिस्यात्–ईदृशाकारः पुरुषो यदि लभ्येत । तत स्तर्हि । किम् भविष्यतीति शेषः । तस्य वचनस्य । उत्तर प्रतिवचनम् । सा राजपत्नी । तत् प्रतिवचनम् । प्रतिबोधनीयः विज्ञापनीयः त्वयेति शेषः ।

(१२) सा वृद्धा तापसी । तथा–तथास्तु इति प्रतिज्ञाय । राजकुलं नृपति-

*** बालक्रीडा ***

आ करके कहा—"हे वत्स ! जैसे वासन्तीलताकी दशा नीमके वृक्षपर शोचनीया होती है । उसी प्रकारसे मैंने रानी कल्पसुन्दरीकी शोचनीया दशा कर दी है । अब इसके पश्चात् मुझे जो आज्ञा हो वैसा कार्य मैं करूं ।" तदनन्तर मैंने अपना चित्र खींच करके उसे दिया और कहा कि, "यह चित्र उस रानी कल्पसुन्दरीको दे दो । इस चित्रको अवलोकन करके वह रानी अवश्य कुछ कहेगी क्या इस प्रकारके रूपवाला कोई पुरुष है ?" तब तुम उस रानीसे प्रत्युत्तर देना कि, "यदि हो तो, क्या करनेकी आज्ञा है ?" इस प्रत्युत्तरका जो उत्तर हो वह तुम मुझसे आ करके कहना ।

(१२) उस वृद्धा माताने "तथा" ठीक है ऐसा स्वीकार किया और राजम

न्यवेदयत्—'वत्स, दर्शितोऽसौ चित्रपटस्तस्यै मत्तकाशिन्यै । चित्रीयमाणा चासौ भुवनमिदं सनाथीकृतं यद्देवेऽपि कुसुमधन्वनि नेदृशी वपुःश्रीः संनिधत्ते । चित्रमेतच्चित्रतरम् । न च तमवैमि य ईदृशमिदमिहत्यो निर्मिमीते । केनेदमालिखितम्' इत्यादृतवती व्याहृतवती च । मया च स्मेरयोदीरितम्—'देवि, सदृशमाज्ञापयसि । भगवान्मकरकेतुरप्येवं सुन्दर इति न शक्यमेव संभावयितुम् । अथ च विस्तीर्णेयमर्णवनेमिः ।

* बालविबोधिनी *

मन्दिरम् । उपसंक्रम्य गत्वा । प्रतिनिवृत्ता प्रत्यागता राजकुलादिति शेषः । मामुपहारवर्माणमित्यर्थः । चित्रपटः प्रतिकृतिः । मत्तकाशिन्यै वराङ्गनायै । चित्रीयमाणा–आश्चर्यम्मन्यमाना । असौ राजपत्नी । सनाथीकृतं नाथवद् विहितम् । कुसुमधन्वनि-कामे । वपुः श्रीः–शरीरकान्तिः । न संनिधत्ते–न समीपमायाति, नास्तीत्यर्थः । चित्रं चित्रपटः । तं तादृशं पुरुषम् । अवैमि जानामि पश्यामीत्यर्थः। ईदृशं अतिसुन्दरमित्यर्थः । इदं चित्रम् । इहत्यः एतद्देशस्थः । निर्मिमीते चित्रयति । आदृतवती आदरं दर्शितवती । व्याहृतवती उक्तवती । मया वृद्धयेत्यर्थः । स्मेरया सहासया । सदृशं युक्तम् । मकरकेतु मदनः । एवं एतादृशः । अर्णवनेमिः

* बालक्रीडा *

न्दिरमें चली गई । और वहांसे लौटनेपर उस वृद्धाने मुझसे एकान्तमें निवेदन किया–"हे वत्स ! मैंने यह चित्रपट उस सुन्दर अङ्गोंवाली रानीको दिखाया । आश्चर्यमन्यमाना उस रानी कल्पसुन्दरीने कहा–"इस लोकको इस पुरुषने सनाथ कर दिया है । तथा इसके मुकाविले सौन्दर्य कामदेवके शरीरमें भी सन्निहित नहीं है । अथवा–चित्रपट देख करके रानीने अपने मनमें उस चित्रगत पुरुषको पतिके समान मान लिया । यह चित्र अत्यन्त आश्चर्यकारी है । मुझको मालूम नहीं होता कि, ऐसे चित्रका रचयिता कोई पुरुष इस लोकमें है । किसने इस चित्रको खींचा है ?' इस प्रकारसे इस चित्रका आदर करने लगी और मुझसे (वृद्धासे) पूछने लगी । मैंने मन्द हास्य करके कहा--"हे देवि ! आप युक्तियुक्त कहती हैं । क्योंकि भगवान् मकरकेतु (कामदेव) भी इतना सुन्दर है ऐसी सम्भावना करनेका सामर्थ्य भी किसीमें नहीं है । फिर यह पृथ्वी बड़ी विस्तीर्ण है । भाग्यवश कहींपर ऐसा रूपवान् प्राप्त हो सकता है । और यदि

क्वचिदीदृशमपि रूपं दैवशक्त्या संभवेन्न। अथ तु यद्येवंरूपो रूपानुरूप-शिल्पशीलविद्याज्ञानकौशलो युवा महाकुलीनश्च कश्चित्संनिहितः स्यात्, स किं लप्स्यते' इति।

(१३) तयोक्तम्—'अम्ब, किं ब्रवीमि। शरीरं हृदयं जीवितमिति सर्वमिदमल्पमनर्हं च। ततो न किंचिल्लप्स्यते। न चेदयं विप्रलम्भस्त-स्यामुष्य दर्शनानुभवेन यथेदं चक्षुश्चरितार्थं भवेत्तथानुग्रहः कार्यः' इति।

* बालविबोधिनी *

पृथिवी। क्वचित्–कुत्रापि। अथतु–आस्ताम्। एवंरूपः एतादृशः। रूपानुरूपेति–रूपस्य सौन्दर्यस्यानुरूपं सदृशं शिल्पं कलाविद्या, शीलं स्वभावः, विद्या अष्टादश प्रकारा, ज्ञानं लिप्यादि ज्ञानं कौशलं नैपुण्यञ्च यस्यासौ। युवा तरुणः। महाकु-लीनः उच्चवंशोद्भवः। संनिहितः निकटवर्त्ती। स तादृशो युवा। किं लप्स्यते—चित्रदर्शनसन्तुष्टाया भवत्याः सकाशात् कं पुरस्कारं प्राप्स्यतीत्यर्थः।

(१३) तया राजपत्न्या। शरीरं ममदेहः हृदयं चित्तं जीवितं प्राणाश्च, लप्स्यत इत्यनेनान्वयः। सर्वमिदं–यन्मया शरीरादिकं दास्यते तदखिलं, अल्पं तुच्छं अनर्हं तस्यायोग्यञ्च। ततः–यतः शरीरादिकं मे तस्यायोग्यं तस्मात्। न किञ्चिल्लप्स्यते–किमपि न प्राप्स्यति। विप्रलम्भः वंचनम्–त्वं यदि मिथ्या न

* बालक्रीडा *

ऐसा ही सौन्दर्यानुरूपवाला, शिल्पकलामें निपुण, शीलवान्, विद्यावान्, वि-ज्ञानवेत्ता, कलाकौशलवाला, उच्चवंशवाला कोई युवक मिल गया तो, वह क्या पुरस्कार पावेगा?"

(१३) उस रानी कलसुन्दरीने उत्तर दिया—"हे अम्ब! क्या कहूं। मेरी देह, हृदय, जीवन, ये सब उसके लिये थोड़े और अनुरूप नहीं होंगे। इससे—शरीरादिसे अधिक और कुछ नहीं वह पा सकेगा। यह मैं प्रवञ्चना नहीं करती हूं। अपितु, (हे वृद्धे!) जिस रीतिसे हो उस रीतिसे उस पुरुषके दर्शन करा करके मेरी आखोंको चरितार्थ करनेकी दया करो।" तत्पश्चात् मैंने (वृद्धाने) उस बातको पुष्ट करनेके निमित्त रानीसे (अर्थात्—रानीका आप पर प्रेम है कि, नहीं इसे जाननेके लिये) कहा—"हे कलसुन्दरि! इस नगरमें

भूयोऽपि मया दृढतरीकर्तुमुपन्यस्तम्—'अस्ति कोऽपि राजसूनुर्निगूढं चरन्। अमुष्य वसन्तोत्सवे सहसखीभिर्नगरोपवनविहारिणी रतिरिव विग्रहिणी यदृच्छया दर्शनपथं गतासि। गतश्चासौ कामशरैकलक्ष्यतां मामन्ववर्तिष्ट। मया च वामन्योन्यानुरूपैरन्यदुर्लभैराकारादिभिर्गुणातिशयैश्च प्रेर्यमाणया तद्रचितैरेव कुसुमशेखरस्रगनुलेपनादिभिश्चिरमुपासितासि। सादृश्यं च स्वमनेन स्वयमेवाभिलिख्य त्वत्समाधिगाढत्वदर्श-

* बालविबोधिनी *

कथयसि तर्हीति तात्पर्यम्। तस्य-पूर्वोक्तस्य। अमुष्य-तरुणस्य। यथा-येन-प्रकारेण। इदं चक्षु मम नयनम्। चरितार्थं सार्थकम्। कृतकृत्यमिति यावत्। तथा तेन प्रकारेण। अनुग्रहः-कृपा। कार्यः विधेयस्त्वयेति शेषः। मया वृद्धयेत्यर्थः। दृढतरीकर्त्तुं-त्वयि तस्या अनुराग निश्चलीकर्त्तुम्। उपन्यस्तं=कथितम्। निगूढं-सुगुप्तम्। अमुष्य-राजपुत्रस्य। नगरोपवनविहारिणी-पुरोद्यानविहरणशीला। विग्रहिणी-मूर्त्तिमती। यदृच्छया दैववशात्। दर्शनपथं-नयनमार्गं गतासि-दृष्टासीत्यर्थः। असौ राजपुत्रः। कामशरैकलक्ष्यतां मदनबाणवेध्यताम् गत-इत्यनुषज्यते। मां वृद्धामित्यर्थः। अन्ववर्त्तिष्ट-अनुसृतवान्। वां युवयोः। राजपत्न्यास्तव चेत्यर्थः। अन्योन्यानुरूपैः तुल्यरूपैः। प्रेर्यमाणया नोद्यमानया। तद्रचितैः तेन राजसूनुना निर्मितैः। कुसुमेति-कुसुमशेखरः आपीड़ः, स्रक् माल्यं अनुलेपनं गन्धादि तैः। उपासिता सेविता। सादृश्यं प्रतिकृतिम्। स्वं स्वकीयम्।

* बालक्रीडा *

कोई राजपुत्र गुप्त वेशसे घूमता है। वसन्तोत्सवके समय, अपनी सखी सहेलियोंके सहित अपनी विरोधिनी रतिदेवीके सदृश सुन्दर रूपवाली अपनी इच्छासे नगरकी वाटिकाओंमें विचरण करनेवाली, आप उस राजपुत्रद्वारा देखी गयीं हैं। आपको देखते ही वह राजपुत्र कामबाणसे वेधित हो करके मेरे समीप आया। मैंने भी सोचा कि, आप दोनोंके समान स्वरूप हैं, अन्योंमें अप्राप्य आकृतियां हैं, समान अतिशय गुण हैं, अतः उससे प्रेरित हो करके मैंने उस राजपुत्रकेद्वारा रचित आपीड़, माला, गन्धादि अनुलेपनद्वारा आपकी दीर्घकालसे सेवा की है। अपनी प्रतिकृति आपको दिखानेके हेतु उस राजपुत्रने, अपने हाथोंसे अपनी तस्वीर खींच

नाय प्रेषितम्। एष चेदर्थो निश्चितस्तस्यामुष्यातिमानुषप्राणसत्त्वप्रज्ञाप्रकर्षस्य न किंचिद्दुष्करं नाम। तमद्यैव दर्शयेयम्। सङ्केतो देय' इति।

(१४) तया तु किंचिदिव ध्यात्वा पुनरभिहितम्—'अम्ब, तव नैतदिदानीं गोप्यतमम्। अतः कथयामि। मम तातस्य राज्ञा प्रहारवर्मणा सह महती प्रीतिरासीत्। मातुश्च मे मानवत्याः प्रियवयस्या देवी प्रियंवदासीत्। ताभ्यां पुनरजातापत्याभ्यामेव कृतः समयोऽभूत्—'आवयोः पुत्र-

* बालविबोधिनी *

अनेन राजपुत्रेण। अभिलिख्य चित्रयित्वा। त्वदिति तव समाधेश्चित्तैकाग्रयस्य गाढत्वं गभीरत्वं द्रष्टुमित्यर्थः। एषः—यस्त्वया प्रागेवोक्तोऽर्थो विषयः। निश्चितः नियतो दृढ इति यावत्। अमुष्य राजसूनोः। अतिमानुषेति—अतिमानुषः मानुषमतिक्रान्तः अलौकिक इत्यर्थः प्राणाना सत्त्वस्य पराक्रमस्य प्रज्ञाया बुद्धेश्च प्रकर्षः उत्कर्षो यस्य तथा भूतस्य। दुष्करं असाध्यम्। सङ्केतः इङ्गितं। देयस्त्वयेति शेषः।

(१४) तया राजकन्यया। ध्यात्वा विचिन्त्य। तव या खलु मदर्थं दुष्करमप्येतत्कार्यं साधयितुं प्रवृत्ता तथाविधायाः सम्बन्धे। गोप्यतमं अतिशयेन गोप्यमिति मम तातस्य—मत्पितुः। प्रियंवदा—प्रहारवर्ममहिषी, उपहारवर्मजननी च। ताभ्यां—मानवतीप्रियंवदाभ्याम्। अजातेति—न जातमुत्पन्नमपत्यं सन्ततिर्ययो

* बालक्रीडा *

करके, आपके प्रति अपना गम्भीर प्रेम प्रकट करनेके लिए ही, मेरेद्वारा भेजी है। यदि आपका अभीष्ट निश्चितरूपसे दृढ है तो, उस अलौकिक राजपुत्रसे, जो बल बुद्धि और दक्षतामें निपुण है, कोई भी कार्य असाध्य नहीं है। मैं आज ही उस राजपुत्रको आपके पास मिला सकती हूं। आप सङ्केत तो, दें।"

(१४) वह रानी कन्दुकसुन्दरी कुछ देरतक ध्यानमग्ना हो करके सोचने लगी और फिर बोली—"हे अम्ब! तुमसे अब मेरी कोई भी वार्त्ता गुप्त नहीं है। इससे (कुछ पूर्वकथा) कहती हूं। मेरे पिताकी प्रहारवर्मा नृपतिके साथ प्रगाढ मित्रता थी। मेरी माताकी मित्रता देवी प्रियम्वदाके साथ थी। (जो प्रियम्वदा प्रहारवर्माकी महिषी और उपहारवर्मा की जननी थीं।) उन दोनों

वत्याः पुत्राय दुहितृमत्या दुहिता देया' इति । तातस्तु मां जातां प्रनष्टापत्या प्रियंवदेति प्रार्थयमानाय विकटवर्मणे दैवाद्दत्तवान् ।

(१५) अयं च निष्ठुरः पितृद्रोही नात्युपपन्नसंस्थानः कामोपचारेष्वलब्धवैचक्षण्यः कलासु काव्यनाटकादिषु मन्दाभिनिवेशः शौर्योन्मादी दुर्विकत्थनोऽनृतवादी चास्थानवर्षी । नातिरोचते मे एषभर्ता

* बालविबोधिनी *

स्ताभ्याम् मम जन्मतः प्रागेवेत्यर्थः । समयः शपथः प्रतिज्ञेति यावत् । आवयोर्द्वयोर्मध्ये । पुत्रवत्याः-सञ्जातपुत्रायाः । दुहितृमत्या-कन्यकाजनन्या । प्रनष्टापत्या-मृतपुत्रा । इति इतिहेतोः । प्रार्थयमानाय याचमानाय ।

(१५) अयं विकटवर्मा । निष्ठुरः-निर्दयः । पितृद्रोही-पितुरनिष्टकारकः । पितृव्यस्य पितृतुल्यत्वादत्र पितृपदम् । नात्युपपन्नेति-नात्युपपन्नं अननुगुणं = संस्थानमवयवसन्निवेशो यस्यासौ । दुर्लक्षणयुक्तशरीरावयवः कुरूप इति यावत् । कामोपचारेषु मदनव्यापारेषु । अलब्धवैचक्षण्यः अप्राप्तनैपुण्यः । कलासु चतुःषष्टिप्रकारासु । मन्दाभिनिवेशः शिथिलाग्रहः । शौर्योन्मादी-बलदर्पोन्मत्तः । दुर्विकत्थनः-दुष्टः आत्मश्लाघानिरतश्च । अनृतवादी-मिथ्याभाषणशीलः । अस्थानवर्षी-अयोग्यपात्रे दानशीलः । नातिरोचते प्रीतिकरो न भवति । मे-मह्यम्

* बालक्रीडा *

मानवती और प्रियम्वदाको जिस समय कोई सन्तान भी उत्पन्न न हुई थी, उसी समय दोनों सखियोंने आपसमें शपथ ले ली थी कि, हम दोनोंमें जिसे पुत्र हो तथा जिसे पुत्री हो उन दोनों भावी सन्तानोंका विवाह परस्पर होवे। परन्तु, मेरे पिताने, देवी प्रियम्वदाके पुत्रको अरण्यमें नष्ट हुआ जान करके दैवयोगसे विवाहकी प्रार्थना करनेवाले विकटवर्माके साथ मेरा विवाह कर दिया।

(१५) यह विकटवर्मा अत्यन्त निठुर है, बापके साथ द्रोह करनेवाला है, इसके शरीरकी बनावट भी अच्छी नहीं है। रति-लीलामें पटु नहीं है। चौसठ प्रकारकी कलाओंमें तथा काव्य नाटकादिमें भी शिथिल है । वीरतामें मदोन्मत्त है । आत्मप्रशंसा करनेवाला है। असत्यवादी है। और अयोग्योंको दान देनेवाला है । इस तरीकेका दुर्विनीत पति मुझे नहीं अच्छा लगता है । विशेष

विशेषतश्चैषु वासरेषु यदयमुद्याने मदन्तरङ्गभूतां पुष्करिकामप्युपान्तवर्तिनीमनादृत्य मयि बद्धसापत्न्यमत्सरामनात्मज्ञामात्मनाटकीयां रमयन्तिकां नामापत्यनिर्विशेषं मत्संवर्धितायाश्चम्पकलताया स्वयमवचिताभिः सुमनोभिरलमकार्षीत्। मदुपभुक्तमुक्ते चित्रकूटगर्भवेदिकागते रत्नतल्पे तया

* बालविबोधिनी *

रुच्यर्थप्रयोगे चतुर्थी। विशेषतश्च–इतोऽप्यधिकम्। एषु वासरेषु–साम्प्रतम्। यत्–यस्मात्। अयं विकटवर्मा। मदन्तरङ्गभूताम्। आत्मीयाम्। पुष्करिका एतन्नामिकाम्। उपान्तवर्तिनीं समीपस्थिताम्। अनादृत्य–अवज्ञाय। बद्धेति–बद्धः धृतः सापत्न्यस्य सपत्नीत्वस्य मत्सरोऽसहनीयता यया ताम्। धृतसापत्न्यविद्वेषामित्यर्थः। अनात्मज्ञा–स्वयोग्यताज्ञानरहिताम्। आत्मनाटकीया स्वकीयनर्त्तकीम्। रमयन्तिकेति नर्त्तक्या नाम। अपत्यनिर्विशेषं स्वसन्तानवत्। मत्संवर्द्धितायाः–मया संवर्द्धितायाः जलसेकादिना पुष्टिं गमितायाः। चम्पकलतेति वृक्षविशेषः। स्वयम् स्वहस्तेन। अवचिताभिः–लूनाभिः। सुमनोभिः कुसुमैः। सुमनः शब्दस्य स्त्रीलिङ्गत्वात्तद्विशेषणस्य स्त्रीत्वम्। अलमकार्षीत्–भूषयामास। मदुपभुक्तेति–मया आदौ उपभुक्तमनुभूतं पश्चान्मुक्तं त्यक्तं यत्तस्मिन्। चित्रकूटेति–चित्रकूटः क्रीड़ापर्वतस्तस्य गर्भे गुहायां या वेदिका परिष्कृतभूमिस्तत्र गतं तस्मिन्। रत्नतल्पे–रत्ननिर्मितशयने। तया रमयन्तिकया। व्यहार्षीत् विहार मकरोत्। अयोग्यश्चेति

* बालक्रीडा *

करके आजकलके दिनोंमें यह मेरा पति विकटवर्मा मेरी आत्मीया तथा सदा समीप रहनेवाली पुष्पकरिका का अनादर करता है। तथा जो मेरी समृद्धि नहीं पसन्द करती ऐसी एवं जो मुझसे सौतपना (सापत्न्य भाव) रखती है ऐसी और जो अपने स्वरूपके ज्ञानको भी नहीं जानती ऐसी रमयन्तिका नामक नर्त्तकीको चाहता है। जिस चम्पकलताको मैंने पुत्रके समान सींच करके बनाया है। उसी चम्पकलताके फूलोंको अपने हाथोंमे चुन करके उस रमयन्तिका नर्त्तकीका शृंगार करता है। मेरेद्वारा उपभोग करके त्यागी हुई, क्रीड़ा-पर्वतमें स्थित, मणियोंकी शय्यापर उस नर्त्तकी रमयन्तिकाके साथ रमण करता है। यह मेरा पति मूर्ख है और इसीसे अन्योंका तिरस्कार करनेमें प्रवृत्त हुआ है। मैं अब

सह व्यहार्षीत्। अयोग्यश्च पुमानवज्ञातुं च प्रवृत्तः। तत्किमित्यपेक्ष्यते। परलोकभयं चैहिकेन दुःखेनान्तरितम्। अविषह्यं हि योषितामनङ्गशरनिषङ्गीभूतचेतसामनिष्टजनसंवासयन्त्रणादुःखम्। अतोऽऽमुना पुरुषेण ममाद्योद्यानमाधवीगृहे समागमय। तद्वार्ताश्रवणमात्रेणैव हि ममातिमात्रं मनोऽनुरक्तम्। अस्ति चायमर्थराशिः। अनेनामुष्य पदे प्रतिष्ठाप्य तमे-

* बालविबोधिनी *

यः पुरुषः स्वयमयोग्यो मूर्खत्वादिदोषयुक्तः स पुनरन्यं तिरस्कर्तुं प्रवृत्तः एतदेवाश्चर्यमिति भावः। तत् तस्मात् कारणात्। किमिति—कथम्। अपेक्ष्यते—नैवापेक्ष्यते मयेति शेषः। तस्यापेक्षा न कार्येति भावः। परलोकभयमिति—योषितां पतिपरित्यागेन परलोकाद्भयमस्त्येव तथापि तद्भयं परलोकगमने सति भाव्यम् ऐहिकं दुःखमिहजन्मनि भोग्यमतः परलोकभयमैहिकेन दुःखेनान्तरितं व्यवधानीकृतमिति भावः। अविषह्यं सोढुमशक्यम्। अनङ्गेति—अनङ्गशराणां कामबाणानां निषङ्गीभूतं तूणीरीभूतं आधारभूतमितियावत् चेतश्चित्तं यासां तथाभूतानाम्। अनिष्टेति—अनिष्टजनेन अप्रियजनेन सह संवासश्चिरमेकत्र वसतिस्तस्य या यन्त्रणा नियमनं चिरमनेन सह त्वया वस्तव्यमित्येतद्रूपं तेन यद्दुःखं क्लेशः। अमुना त्वयोक्तेन। पुरुषेण युवकेन सहेति शेषः। मम मामित्यर्थः। उद्यानमाधवीगृहे—उद्यानस्थित वासन्तीलतागृहे। समागमय—सम्मेलय। अतिमात्रमत्यन्तम। अस्ति मत्समीप इत्यर्थः। अर्थराशिः—धनसमूहः। अनेन—अर्थराशिना अमुष्य—विकटवर्मणः। पदे—स्थाने भर्तृपद इत्यर्थ। तमेव-चित्रलिखितं युवानमेव। उप-

* बालक्रीडा *

क्यों करके उसकी अपेक्षा करूं। यदि यह कहा जाय कि, परलोकके भयसे डरूं। तो, इस लोकके दुःखोंसे परलोकका भय भी व्यवधानीभूत (बाधित) हो जाता है। कामदेवके बाणके आधारभूत अन्तःकरणवाली अबलाओंको अपनेको कष्ट देनेवाले पतिके सहवाससे जो यन्त्रणाएं (व्यथाएं) होती हैं। वे असह्य होती हैं। अतएव इस चित्रगत पुरुषके साथ आज उपवनकी माधवीलता-मण्डपमें मेरा संयोग करा दो। उस राजपुत्रकी वार्त्ताके श्रवणसे ही मेरा चित्त उसकी ओर अत्यन्त अनुरक्त हो गया है। यह जो धनकी राशि मेरे पास है। इसी धनके

वात्यन्तमुपचर्य जीविष्यामि' इति । मयापि तदभ्युपेत्य प्रत्यागतम् । अतः परं भर्तृदारकः प्रमाणम्' इति ।

(१६) ततस्तस्या एव सकाशादन्तःपुरनिवेशमन्तर्वंशिकपुरुषस्थानानि प्रमदवनप्रदेशानपि विभागेनावगम्य, अस्तगिरिकूटपातक्षुभितशोणित इव शोणीभवति भानुबिम्बे, पश्चिमाम्बुधिपयःपातनिर्वापितपतङ्गा-

* बालविबोधिनी *

चर्य-संसेव्य । इत्यन्तं कल्पसुन्दरीवाक्यम् । मया-वृद्धतापस्या । अभ्युपेत्य-एवं करिष्यामीति स्वीकृत्य । भर्तृदारको राजपुत्रः भवानित्यर्थः । प्रमाणं-यदत्र विधेयं तत्क्रियतामित्यर्थः ।

(१६) तस्या एव-वृद्धाया एव । अन्तःपुरनिवेशम् अवरोधप्रदेशम् । अन्तर्वंशिकेति-अन्तर्वंशिकपुरुषाणाम् अवरोधाधिकृतानां रक्षिपुरुषाणां स्थानानि के कुत्र तिष्ठन्तीति भावः । प्रमदवनप्रदेशान्-क्रीडोद्यानदेशान् । एतानि अवगम्येति क्रियायाः कर्मभूतानि । विभागेन पृथक् पृथग्रूपेण । अवगम्य-विदित्वा । अस्तगिरीति-अस्तगिरेरस्ताचलस्य कूटाच्छिखरात्पातेन पतनेन क्षुभितं निर्गतं शोणितं रुधिरं यस्य तस्मिन्निवेत्युत्प्रेक्षा शोणीभवति-रक्तीभवति । भानुबिम्बे सूर्यमण्डले । पश्चिमेति-पश्चिमाम्बुधेः पश्चिमसमुद्रस्य पयसि जले पातेन निमज्ज-

* बालक्रीडा *

समूहद्वारा मैं उस राजपुत्रको, इस विकटवर्मा राजाके स्थानपर, आरूढ करा करके उसी राजपुत्रकी सेवा-अर्चा करके जीवन व्यतीत करूंगी ।" मैं भी (वृद्धा भी) उस रानीको स्वीकृति दे करके यहां आयी हूं । अब इसके पश्चात् हे राजपुत्र ! आप जो चाहें सो कार्य करें ।

(१६) इसके अनन्तर मैंने उसी वृद्धासे अन्तःपुरका प्रदेश, अन्तःपुरके रक्षापुरुषोंके स्थानोंको और क्रीड़ोद्यानके प्रवेशस्थानको पृथक्-पृथक् रूपसे ज्ञान करलिया । अस्ताचलकी चोटीके ऊपरसे गिरनेके कारण निकले हुए शोणितके समान लाल-लाल जब सूर्य बिम्ब हो गया तब, तथा, जब पश्चिमके समुद्रमें सूर्यके बिम्बरूपी अगारेके बुझनेसे उत्पन्न जो धूम्र-पटल द्वारा आकाश परिव्याप्त हो गया तब, एवं जब, दूसरेकी स्त्रीके साथ समागम करनेमें निपुण मेरे

ङ्गारधूमसंभार इव भरिततमसि नभसि विजृम्भिते, परदारपरामर्शोन्मुखस्य ममाचार्यकमिव कर्तुमुत्थिते गुरुपरिग्रहश्लाघिनि ग्रहाग्रेसरे क्षपाकरे, कल्पसुन्दरीवदनपुण्डरीकेणेव मद्दर्शनातिरागप्रथमोपनतेन स्मयमानेन चन्द्रमण्डलेन संधुक्ष्यमाणतेजसि भुवनविजिगीषोद्यते देवे कुसुमधन्वनि, यथोचितं शयनीयमभजे । व्यचीचरं च—'सिद्धप्राय एवायमर्थः । किंतु

* बालविबोधिनी *

नेन निर्वापितः शान्तः पतङ्गः सूर्य एवाङ्गारो ज्वलत्काष्ठावयवस्तस्य धूमसम्भारो धूमराशिर्यस्मिन् तस्मिन्निवेत्यत्र रूपकोत्प्रेक्षयोः सङ्करः । भरिततमसि-भरितं पूर्णं तमो यस्मिन्-पूर्णान्धकारे । नभसि गगने । विजृम्भृते-विकाशं गते । परदारेति-परस्य दाराः परस्त्री तस्याः परामर्शोऽभिगमनं तत्रोन्मुखस्य प्रवृत्तस्य । आचार्यकं-आचार्यकर्म-उपदेशकत्वमिति यावत् । उत्थिते-उदिते । गुरुपरिग्रहेति-गुरोर्बृहस्पतेः परिग्रहः स्त्री तारा तां श्लाघतेऽभिलषतीति तच्छीले । ग्रहाग्रेसरे-ग्रहप्रधाने । क्षपाकरे चन्द्रे । कल्पसुन्दरीति-कल्पसुन्दर्या राजपत्न्या वदनपुण्डरीकेण मुखकमलेनेवेत्युपमा । कीदृशेन-मद्दर्शनेति मद्दर्शनाय मदवलोकनाय योऽतिरागः प्रबलेच्छा तेन प्रथमोपनतेन प्रागेव उपस्थितेन । पुनः कीदृशेन स्मयमानेन-ईषद्धसता विकसतेति भावः । सन्धुक्ष्यमाणतेजसि-प्रवृद्धप्रकाशे । भुवनेति-भुवनस्य जगतो विजीगीषया जयेच्छया उद्यते प्रवृत्ते । कुसुमधन्वनि-कामे । यथोचितं यथायोग्यम् । शयनीयं तल्पम् । अभजे आश्रितवानहमिति शेषः । व्यचीचरम् अचिन्तयम् । सिद्धप्रायः-प्रायेण बाहुल्येन सिद्धः सम्पन्नः । अर्थः प्रयोजनम् । कल्पसुन्दरीप्राप्तिपूर्वकपितृराज्यप्राप्तिरूपम् । परकलत्रलङ्घनात् परस्त्रीपरामर्शात् । धर्मपीडा-धर्मबा-

* बालक्रीडा *

आचार्यके समान (परस्त्री गमनमें मेरे गुरुके सदृश) अपनी गुरुपत्नीके साथ व्यभिचार करनेका स्वभाव रखनेवाले ग्रहोंमें श्रेष्ठ चन्द्रमाका उदय हुआ तब, तथा मेरे दर्शनकी अभिलाषाके पूर्वमें ही प्राप्त कल्पसुन्दरी देवीके मुखकमलसे विस्मित चन्द्रमाके मण्डलसे वृद्धिको प्राप्त तेजवाला तथा तीनों लोकोंके विजयकी इच्छासे पूर्ण कुसुमधन्वा कामदेवके उद्यत होते ही मैंने यथोचित शय्याका ग्रहण किया । मैं विचारने लगा कि, यह कार्य कल्पसुन्दरीकी प्राप्ति आदि तो

परकलत्रलङ्घनाद्धर्मपीडा भवेत्, साप्यर्थकामयोर्द्वयोरुपलम्भे शास्त्रकारैरनुमतैवेति गुरुजनबन्धमोक्षोपायसंधिना मया चैष व्यतिक्रमः कृतः, तदपि पापं निर्हृत्य कियत्यापि धर्मकलया मां समग्रयेदिति ।

(१७) अपि त्वेतदाकर्ण्य देवो राजवाहनः सुहृदो वा किं नु वक्ष्यन्ति' इति चिन्तापराधीन एव निद्रया परामृश्ये । अदृश्यत च स्वप्ने

* बालविबोधिनी *

धा-धर्मनाशो वा । सापि धर्मपीडापि । उपलम्भे प्राप्तौ । शास्त्रकारैर्मन्वादिधर्मशास्त्रकारैः । अनुमता न निषिद्धा । गुरुजनेति गुरुजनयोः पित्रोर्बन्धाद्बन्धनान्मोक्षे मोचने सन्धिरभिसन्धिर्यस्य तेन तथाभूतेन । व्यतिक्रम धर्मलङ्घनम् । तदपि-पाप परस्त्रीधर्षणरूपम् । निर्हृत्य दूरीकृत्य । कियत्या स्वल्पया । धर्मकलया पितृमोक्षरूपधर्मांशेन । समग्रयेत् पूरयेत् । समग्रयेदित्यस्याः क्रियायाः कर्तृत्वम् 'एष व्यतिक्रम' इति ।

(१७) अपि तु-किंतु । एतत्-मम परस्त्री परामर्शम् । चिन्तापराधीन-चिन्ताग्रस्तः। परामृश्ये अस्पृश्ये-निद्रितोऽभवमित्यर्थः। हस्तिवक्त्रः-गणेशः। आहस्म स्वप्ने गजाननः कथयामास। मास्म भूत्-न भवतु। मास्मयोगे लुङ् अड़ागमप्रतिषेधश्च। दुर्विकल्पः-दुर्विचारः मदंशः-ममावतारः। शङ्करेति-शङ्करस्य शिवस्य

* बालक्रीडा *

अब बहुत करके सिद्ध है ही, परन्तु, परस्त्रीगमनसे धर्मका नाश होगा। किन्तु, मनु आदि शास्त्रवेत्ताओंने उस धर्मनाशको निषिद्ध नहीं माना है। जिसमें अर्थ और कामकी प्राप्ति होती हो। मैं जननी-जनकको कारागारसे छुड़ानेके लिए यह धर्मनाश कर रहा हूं। यह परस्त्रीगमनरूपी पाप, मेरेद्वारा किये माता-पिताके उद्धाररूपी पुण्यके, स्वल्पांशमें धुल जायगा। और मुझे पुण्यशाली बनावेगा।

(१७) परन्तु, यह परस्त्रीगमन आदिका वृत्त सुन करके देव राजवाहन तथा अन्य मित्रगण क्या कहेंगे। इसी विचार-विमर्शमें चिन्ताग्रस्त हो करके मैं निद्राके वशीभूत हो गया। और स्वप्नगत होकर मैंने श्रीगजानन भगवान्*

नोट.—*१ किसी किसी पुस्तकके मतमें गजानन भगवान्‌की जगह भर्ग भगवान् होना चाहिये।

हस्तिवक्त्रो* भगवान् । आह स्म च–'सौम्य उपहारवर्मन्, मा स्म ते दुर्विकल्पो भूत् । यतस्त्वमसि मदंशः । † शङ्करजटाभारलालनोचिता सुरसरि-

* बालविबोधिनी *

जटाभारेण जटाजूटेन यल्लालनं धारणं तत्रोचिता अभ्यस्ता । सुरसरित्-गङ्गा ।

* बालक्रीडा *

के दर्शन किये । उन गणेश भगवान्ने कहा—"हे सौम्य ! उपहारवर्मन् !! तुम दुर्विचारग्रस्त मत हो । तुम तो, मेरे अवताररूपमें प्रकट हुए हो । और यह उत्तमा कल्पसुन्दरी शङ्कर ‡२ भगवान्के जटाजूटमें सदा रहनेवाली गङ्गा नदी

* पुस्तकान्तरेषु पाठभेदोऽत्र दृश्यते–यथा–अदृश्यत च स्वप्ने भगवान् भर्गः ।

अत्रापि पाठभेदो दृश्यते यथा—

† भवजटाभारलालनोचितामरसरिदसौ वरवर्णिनी, तांच कदाचिद् गजाननो जलक्रीडां कुर्वन्नतिव्यगाहत । सा च सपत्नीतनयविहितां विलोडनामसहमाना तमशपत; एहि मर्त्यत्वमिति । सोऽपि अहेतुकशापप्रदानात् क्रुद्धस्तामशपत् यथेह बहुभोग्या तथा प्राप्यापि मानुष्यकमनेकसाधारणी भवेति । ततस्तेन प्रतिशप्ता सा विलक्षेव मामुपसृत्य सगद्गदमगदत स्वामिन् अहमनवरत भवच्चरणवरि वस्याविधायिनी न शापार्हेति । आकर्ण्य कृपाक्रान्तमनसा मयोक्तं प्रिये नास्य शापोऽन्यथा भवितुमर्हति परं त्वदनुग्रहार्थमहमात्मनोंऽशं द्विधा विभज्य विकटवर्मन्रूपेण मिथिलापतिप्रहारवर्मात्मजोपहारवर्मात्मना च मर्त्यलोकेऽवतरिष्यामि त्वञ्च कामरूपाधिपतेः कलिङ्गवर्मनाम्नः कन्या कल्पसुन्दरी नाम भूत्वा ज्यायसा मदंशेन विकटवर्मणा प्रथममल्पीयांसमनेहसं सगता तस्मिन्न विकटवर्मनि मन्मूर्त्तावेव लयमुपगते पुनरुपहारवर्मात्मकं कनीयांसं मदंशमुपलभ्य तेन साकं विविध सुखोपभोगमनुभविष्यसि ।

‡ नोटः—*२ यहां भी अन्य पुस्तकसे पाठ भेद है जो संस्कृतमें दर्शा दिया गया है । हिन्दीमें भी देखिये—

एक समय श्रीगणेशजी अपनी सूंड़से गंगाजीके प्रवाहमें जलक्रीड़ा कर रहे थे । उस समय गंगाजी जो श्री गणेशजीकी माताकी सौतके समान मानी जाती हैं, अपने प्रवाहमें सौतके पुत्रकी जलक्रीड़ाको करना न सह सकीं । उन गंगाजीने गणेशजीको शाप दिया कि, तुम "नरत्वको प्राप्त करो ।" इस अहेतुक शापपर गणेशजी क्रोधित हो गये और उन्होंने गंगाजीको शाप दे दिया कि, "तुम मृत्युलोकमें जाकर बहु पतिगामिनी हो ।" इस शापपर गंगाजीने श्रीगणेशजीकी बड़ी स्तुति की तब गणेशजीने कहा कि, "मेरी शाप वृथा नहीं हो सकती है ।" पर तुम जो स्तुति करती हो कि, यह शाप नष्ट हो जाय' सो इसपर तुम्हारे ऊपर मैं दया करके यही कर सकता हूं कि, मैं तुम्हारे लिये अपने अंशके दो भाग करके पृथिवी पर अवतरित होऊंगा । एक

दसौ वरवर्णिनी। सा च कदाचिन्मद्विलोडनासहिष्णुर्मामशपत्—'एहि मर्त्यत्वम्' इति। अशप्यत मया च—'यथेह बहुभोग्या तथा प्राप्यापि मानुष्यकमनेकसाधारणी भव' इति। अभ्यर्थितश्चानया 'एकपूर्वा पुनस्त्वामेवोपचर्य यावज्जीव रमेय' इति। तदयमर्थो भव्य एव भवता निरा-

* बालविबोधिनी *

असौ वरवर्णिनी-कल्पसुन्दरी। सा-सुरसरित्। कदाचिदेकदा। मद्विलोडना सहिष्णुः-मया यद् विलोडनं क्रीडार्थमालोडन तत्रासहिष्णुरसहनशीला। मां गजाननमित्यर्थः। अशपत्-शाप दत्तवती। एहि प्राप्नुहि। मर्त्यत्व-नरत्वम्। अशप्यत-मयापि तस्यै शापो दत्त'। यथा येन रूपेण। इह स्वर्गे। बहुभोग्या-नदीत्वेन स्नानपानादिभिरनेकजनसेव्या। तथा तेनैवरूपेण। मानुष्यक नरजन्म। अनेकसाधारणी-अनेकभोग्या। अभ्यर्थित'-याचितोऽहमिति शेषः। अनया गङ्गया। एकपूर्वा-पूर्वमेकेन मुक्ता सती। पुनः-अनन्तरम्। त्वा द्वितीयमित्यर्थः। उपचर्य-सेवित्वा। यावज्जीवं आयुष्काल यावत्। रमेय-क्रीडा कुर्याम्। तत् तस्मात् कारणात्। अयमर्थः विषय.कल्पसुन्दरीग्रहणरूपः। भव्यः क्षेमकरः।

* बालक्रीडा *

है। उस गङ्गा नदीने किसी समयमें, जब मैं उसके प्रवाहको अपनी सूड़से विलोडित कर रहा था तब, मुझे शाप दे दिया था कि "(हे गणेश !) तुम नरत्वको प्राप्त हो।" मैंने भी उस गङ्गा नदीको शाप दे दिया था कि, "(हे गङ्गे !) जैसे तुम यहापर स्वर्गमें बहुत जनोंसे उपभोग की जाती हो वैसे ही मृत्युलोकमें भी जा करके अनेक लोगोंद्वारा स्नानादिसे उपभोगित हो।" तदनन्तर उस गङ्गाने मुझसे प्रार्थना की कि, "(हे गणेश !) मैं पूर्वमें एकसे उपभोगित हो करके पुनः यावदायु तुम्हारे साथ ही रमण करूं।" इस कारणसे यह कल्पसु-

अंश स्वल्प होगा दूसरा अंश कुछ अधिक। अतः स्वल्पांशसे मैं विकटवर्मा और बृहदंशसे मिथिलापति प्रहारवर्माका पुत्र उपहारवर्मा होऊंगा। उस समय तुम भी कामरूपाधिपति कान्तिवर्माकी पुत्री कल्पसुन्दरीके रूपमें पैदा होओगी तब प्रथम विकटवर्माके मरनेपर वह स्वल्पांश भी उपहारवर्माके रूपमें आ मिलेगा। उस समय तुम मेरे पूर्णरूप प्रहारवर्मासे उद्वाहित हो करके सदाके लिए इस शाप से मुक्त होओगी।

शङ्क्यः' इति । प्रतिबुध्य च प्रीतियुक्तस्तदहरपि प्रियासङ्केतव्यतिकरादिस्मरणेनाहमनैषम् ।

(१८) अन्येद्युरनन्यथावृत्तिरनङ्गो मय्येवेषुवर्षमवर्षत् । अशुष्यच्च ज्योतिष्मतः प्रभामयं सरः । प्रासरच्च तिमिरमयः कर्दमः । कार्दमिकनिवसनश्च दृढतरपरिकरः खड्गपाणिरुपसंभृतप्रकृतोपस्करः स्मरन्मातृदत्ता-

* बालविबोधिनी *

निराशङ्क्यः-नाशङ्कनीयः । प्रतिबुध्य-जागरित्वा । प्रीतियुक्तः-प्रफुल्लमनाः । तदहः तद्दिनम् । प्रियेति-प्रियायाः कल्पसुन्दर्याः सङ्केतव्यतिकरादीनां इङ्गितसम्मेलनादीनां स्मरणेन चिन्तनेन अनैषम्-अयापयम् ।

(१८) अन्येद्युः परदिवसे सङ्केतिते इत्यर्थः अनन्यथावृत्तिः-न वर्त्ततेऽन्यथा अन्यप्रकारा वृत्तिर्व्यापारो यस्य सः मत्पीड़नैकव्यग्रः । इषुवर्षं शरवृष्टिम् । अशुष्यत्-शुष्कतामभजत् । ज्योतिष्मतः-सूर्यस्य । प्रभामयं आलोकात्मकम् । सरः-कासारः । अस्तोन्मुखत्वात्सूर्यस्य तेजोह्रासः सञ्जात इति भावः । प्रासरत्-वृद्धिमगच्छत् । तिमिरमयः अन्धकाररूपः । कर्दमः पङ्कः । सरोवरे शुष्कतां गते यथा कर्दम एव सर्वतो निर्गच्छति तद्वत् सूर्येऽस्तङ्गते तमोऽपि सर्वत्र प्रसरतीति भावः । कार्दमिकनिवसनः कर्दमेन रञ्जितं कार्दमिकं नीलमित्यर्थः तादृशं निवसनं वस्त्रं यस्य सः । दृढतरपरिकरः-स्थिरतरोद्योगः । उपसम्भृतेति-उपसम्भृतः संगृहीतः प्रकृ-

* बालक्रीडा *

न्दरी रानीका ग्रहणरूप व्यापार कल्याणकारी है । इसमें शंका मत करो ।" मैंने जाग करके वह दिन, प्रिया कल्पसुन्दरीके संकेतादि स्मरण करनेमें बिता दिया ।

(१८) दूसरे दिन तो, कामदेवने अनन्यवृत्ति हो करके मेरे ऊपर ही बाण वर्षण करना आरम्भ कर दिया । भगवान् भास्करका प्रकाशमान् तालाब सूख गया । अन्धकाररूपी कीचड़ आकाशमें फैल गया । अर्थात्-सायंकाल हो गया और चारों ओर अन्धकार छा गया । उसी समय मैंने नीले वस्त्रोंको धारण किया । मजबूत कच्छ बांधा । हाथ में खड्ग धारण किया । और उस कामके अनुरूप सभी आवश्यक चीजोंको लेकर तथा वृद्धाधात्रीद्वारा बताये हुए कल्पसुन्दरीके महलके चिह्नोंको (संकेत स्थलोंको) स्मरण करता हुआ मैं राजमन्दिर-

न्यभिज्ञानानि राजमन्दिरपरिखामुदम्भसमुपातिष्ठम् । अथोपखात मातृगृहद्वारे पुष्करिकया प्रथमसंनिधापितां वेणुयष्टिमादाय तया शायितया च परिखाम्, स्थापितया च प्राकारभित्तिमलङ्घयम् । अधिरुह्य पक्केष्टकचितेन गोपुरोपरितलाधिरोहिणा सोपानपथेन भुवमवातरम् । अवतीर्णश्च

* बालविबोधिनी *

तः योग्योभिसारस्येति शेषः । उपस्कर साधन येन सः । साधन स्यादुपस्करे इति कोषः । मातृदत्तानि–वृद्धया धात्र्या दत्तानि । अभिज्ञानानि–कल्पसुन्दरीगृहस्य चिह्नानि । राजमन्दिरपरिखा–नृपभवनस्य समन्ततोऽवस्थित खातम् । उदम्भसं जलपूर्णाम् । उपातिष्ठ सन्निहितोऽभवमहमिति शेषः । उपखात–परिखासमीपे । मातृगृहद्वारे पूर्वोक्ताया वृद्धाया गृहद्वारे । प्रथमसन्निधापिता पूर्वमेवस्थापिताम् । वेणुयष्टि–वंशदण्डम् । आदाय गृहीत्वा । तया-वेणुयष्ट्या । शायितया–खातस्योभयकूले स्थापितया । परिखाम् अलङ्घयमिति शेषः । स्थापितया–ऊर्ध्वीकृतया । वेणुयष्ट्येति शेषः । प्राकारभित्तिम् प्राचीरकुडयम् । अधिरुह्य-आरुह्य । पक्वेष्टकचितेन-पक्वाभिर्भर्जिताभिरिष्टकाभिश्चितेन व्याप्तेन । गोपुरेति-गोपुरस्य-पुरद्वारस्य उपरितलमूर्ध्वभागमधिरोहतीति तेन विशेषणद्वयं सोपानपथेनेत्यस्य । सोपानपथेन-सोपानमार्गेण । अवातरम् अवतीर्णवान् । बकुलवीथीं बकुलवृक्षश्रेणीम् । चम्पकावलिवर्त्मना-चम्पकवृक्षश्रेणीपरिवृतमार्गेण । मनागिव ईषद्दूरम् । उपसृत्य-गत्वा । उत्तराहि-उत्तरस्यां दिशि । अव्ययमेतत्-उत्तरशब्दादाहि-

* बालक्रीडा *

की जलसे परिपूर्ण परिखाओंके समीप पहुंच गया। वहा परिखा (खाई) के पास पहुंचनेपर मैंने, मातृगृहद्वारमें पहिलेसे ही पुष्करिकाके द्वारा धरी हुई बासकी छडी ले ली तथा उस छड़ीको बेड़ी करके (सुला करके) खाई पार कर ली। तदनन्तर उसी छड़ीको खड़ी करके चहारदीवारी (प्राचीर) की दीवाल पार कर ली। ऊपर चढ करके, पक्के, ईंटोंसे बनी हुई नगरफाटकके ऊपरकी सीढ़ियोंसे पृथ्वीपर आ गया। फिर बकुलके वृक्षोंकी कतारोंको लाघ करके, चम्पकोंके वृक्षोंसे परिवृत मार्गसे कुछ दूर होकर उत्तर दिशाकी ओर

बकुलवीथीमतिक्रम्य चम्पकावलिवर्त्मना मनागिवोपसृत्योत्तराहि करुणं चक्रवाकमिथुनरवमश्रृणवम् ।

(१९) पुनरुदीचा पाटलिपथेन स्पर्शलभ्यविशालसौधकुड्योदरेण शरक्षेपमिव गत्वा पुनः प्राचा पिण्डीभाण्डीरषण्डमण्डितोभयपार्श्वेन सैकतपथेन किञ्चिदुत्तरमतिक्रम्य पुनरवाचीं चूतवीथीमगाहिषि । ततश्च गहनतरमुदरोपरचितरत्नवेदिकं माधवीलतामण्डपमीषद्विवृतसमुद्गकोन्मिषि-

* बालविबोधिनी *

प्रत्ययः । करुणं-दैन्यपूर्णम् । चक्रवाकमिथुनरवं-कोकद्वन्द्वकूजितम् ।

(१९) उदीचा-उत्तरदिग्गामिना । पाटलिपथेन-पाटलातरुराजिमार्गेण । स्पर्शलभ्येति-स्पर्शेनलभ्यं लक्ष्यं विशालमतिमहत् यत् सौधकुड्यं प्रासादभित्तिस्तस्योदरेण मध्यभागेन । शरक्षेपमिव बाणक्षेपपरिमितभूमिपर्यन्तम् । प्राचा-पूर्वदिग्गामिना । पिण्डीभाण्डीरेति-पिण्डी-अशोकवृक्षो भाण्डीरो मल्लिका तयोः षण्डः समूहस्तेन मण्डितौ शोभितावुभयपार्श्वौ यस्य तेन तथाविधेन । सैकतपथेन-बालुकामयमार्गेण । उत्तरं-उत्तरदेशम् । अवाचीं-दक्षिणदिग्गामिनीम् । चूतवीथीं-रसालश्रेणीम् । अगाहिषि-प्राविक्षम् । गहनतरं-सान्द्रतरम् । उदरेति-उदरे मध्यभागे उपरचिता निर्मिता रत्नवेदिका यस्मिन् तम् । लतामण्डपस्य विशेषणम् । ईषदिति-ईषदल्पं विवृत उद्घाटितो यः समुद्गकः सम्पुटकस्तेनोन्मिषिता निर्गता

* बालक्रीडा *

जा मैंने चक्रवाक दम्पतीके दयनीय शब्दोंको सुना । पुनः उत्तरदिशामें पाटलके तरुओंकी श्रेणियोंकी स्पर्शप्राप्तिसे जिस राजभवनकी विशाल दीवालें शोभायमान हैं उन दीवालोंके (ऊपर छाये हुए वृक्षोंकी शाखाओंके भीतरसे) बाणप्रक्षेप प्रमाण भूमिके समीप गया । तत्पश्चात् पूर्वदिशाकी ओर मैं चला । जिस पूर्वदिशामें वहांकी भूमिपर दोनों ओर अशोकवृक्ष और मल्लिका वृक्षोंकी पक्तियां राज रही थीं । पुनः मैं वालुकामय मार्गसे कुछ उत्तर दिशाको अतिक्रमण करके फिर अवाची दिशा (दक्षिण) की ओर चला । जिस दिशामें आमोंकी तरुश्रेणियां शोभित हो रही थीं । इसके अनन्तर अति गहन एवं जिसके मध्यमें रत्नोंसे जड़ी हुई एक वेदी बनी है ऐसे माधवीलता मण्डपको मैंने, उस राज-

तमाभया दीपवर्त्या न्यरूपयम्। प्रविश्य चैकपार्श्वे फुल्लपुष्पनिरन्तरकुरण्टपोतपङ्क्तिभित्तिपरिगतं गर्भगृहम्, अवनिपतितारुणाशोकलतामयमभिनवकुसुमकोरकपुलकलाञ्छितं प्रत्यग्रप्रवालपटलपाटलं कपाटमुद्घाट्य प्राविशम्।

(२०) तत्र चासीत्स्वास्तीर्णं कुसुमशयनम्, सुरतोपकरणवस्तुगर्भाश्च

*** बालविबोधिनी ***

भा दीप्तिर्यस्यास्तया। दीपवर्त्या-प्रदीपदशया। न्यरूपयम्-अवालोकयम्। एकपार्श्वे-एकस्मिन् प्रदेशे। फुल्लपुष्पेति-फुल्लं विकसितं पुष्पं कुसुमं येषां ते फुल्लपुष्पास्तेषां निरन्तराणां घनसन्निविष्टानां कुरण्टपोतानां कुरवकभेदानां पङ्क्तिः श्रेणिरेव भित्तिरावरणं तया परिगतं व्याप्तम्। गर्भगृहम् अभ्यन्तरगृहम्। अवनिपतितेति अवनौ भूमौ पतिता संलग्ना अरुणारक्तवर्णा या अशोकलता वञ्जुलवल्ली तन्मयं तद्रचितमित्यर्थः। अभिनवेति-अभिनवा नूतनाः कुसुमकोरकाः पुष्पमुकुला एव पुलकाः रोमाञ्चास्तैर्लाञ्छितं चिह्नितम्। प्रत्यग्रेति-प्रत्यग्रं नवोद्गतं यत्प्रवालपटलं पल्लवसमूहस्तेन पाटलं श्वेतरक्तवर्णम्। कपाटविशेषणे एते। कपाटं द्वाराच्छादनम्। उद्घाट्य-उन्मोच्य।

(२०) तत्र-माधवीलतामण्डपे। स्वास्तीर्णं-सुष्ठु यथा तथा आस्तीर्णं

*** बालक्रीडा ***

भवनके उपवनमें स्थित वृक्षोंके सम्पुटोंमेंसे, आये हुए, थोड़े दीपकके प्रकाशमें, देखा। उसमें प्रवेश करके मैंने अवलोकन किया कि, उस मंडपके एक भागमें एक अभ्यन्तरगृह (वासगृह) है। जो वासगृह, अत्यन्त सान्द्र एवं प्रफुल्लित कुरवक वृक्षोंकी पंक्तियोंसे ढका हुआ है—जैसे आवरणसे कोई स्थान ढका रहता है। उस गर्भागारके किवाड़ कैसे हैं—भूमितक संलग्न लाल अशोक वृक्षोंकी लताओंसे परिरम्भित एवं नवीन फूलोंके मुकुलोंसे पुलकित (रोमाञ्चित) चिह्नित हैं तथा नवोद्गत पल्लवोंके समुदायोंसे रक्तवर्णी हो रहे हैं ऐसे गर्भगृहके किवाड़ोंको खोल करके मैंने उसमें प्रवेश किया।

(२०) उस गर्भागारमें सुन्दर तोषक तकियासे सुसज्जित पुष्पशय्या पड़ी है। कमलिनीके पत्रोंके दोनोंमें चन्दन, पान, माला आदि रतिक्रीड़ाकी वस्तुएं

कमलिनीपलाशसम्पुटाः, दन्तमयस्तालवृन्तः, सुरभिसलिलभरितश्च भृङ्गारः । समुपविश्य मुहूर्तं विश्रान्तः परिमलमतिशयवन्तमाघ्रासिषम् । अश्रौषं च मन्दमन्दं पदशब्दम् । श्रुत्वैव सङ्केतगृहान्निर्गत्य रक्ताशोकस्कन्धपार्श्वव्यवहिताङ्गयष्टिः स्थितोऽस्मि ।

(२१) सा च सुभ्रूः सुषीमकामा शनैरुपेत्य तत्र मामदृष्ट्वा बलवद्-

* बालविबोधिनी *

कृतास्तरणम्—सुस्थापितं वा कुसुमशयनं-पुष्परचितशय्या । सुरतेति-सुरतस्य रतिक्रीडाया उपकरणानि साधनानि वस्तूनि द्रव्याणि स्रक्चन्दनताम्बूलादीनि गर्भे मध्ये येषां ते तथाविधाः । कमलिनीपलाशसपुटाः पद्मपत्ररचितद्रोण्यः । दन्तमयः-गजदन्तनिर्मितः । तालवृन्तः व्यजनम् । सुरभिसलिलभरितः-सुगन्धोदकपूर्णः । भृङ्गारो जलपात्रविशेषः । मुहूर्त्तं-क्षणकालम् । विश्रान्तः अपगतश्रमः । परिमलं गन्धम् । अतिशयवन्तम् अत्युत्कृष्टम् । आघ्रासिषम्-आघ्रातवान् । मन्दमन्दं-धीरम् । पदशब्दं चरणध्वनिम् । श्रुत्वैव श्रवणमात्रमेव । सङ्केतगृहात्-अत्र-माधवीलतामण्डपात् । रक्ताशोकेति-रक्ताशोकस्य स्कन्धः काण्डस्तस्य पार्श्वेन पार्श्वभागेन व्यवहिता तिरोहिता अङ्गयष्टिर्देहलता यस्य सः ।

(२१) सा कल्पसुन्दरी । सुषीमकामा-सुषीमं शिशिरं कामयते या तथा । शैत्यार्थिनी । शनैर्मन्दम् । तत्र सङ्केतागारे । मामुपहारवर्माणमित्यर्थः । बलवत्-

* बालक्रीडा *

सजी धरी हुई हैं । हाथीदांतके बने पंखे भी रखे हुए हैं । सुगन्धित जलसे परिपूर्ण जलपात्र (कलश) रखा हुआ है । उस गर्भागारमें मैंने प्रवेश करके क्षणभर विश्राम लिया । इत्र आदि सुगन्धियां खूब सूंघीं । धीर गम्भीर चरणध्वनि सुन पड़ी । चरणध्वनिके सुनते ही मैं उस गर्भागार (संकेतगृह) से निकला और लाल अशोकके झुण्डोंके बगलमें अपनी देहरूपी लताको छिपा करके खड़ा हो गया ।

(२१) वह सुन्दर भौंहवाली कल्पसुन्दरी धीरे-धीरे उस गर्भागारमें शीतलताकी अभिलाषासे आयी और उस संकेत स्थलमें मुझे न देख करके

व्यथिष्ट। व्यसृजच्च मत्तराजहंसीव कण्ठरागवल्गुगद्गदां गिरम्—'व्यक्तमस्मि विप्रलब्धा। नास्त्युपायः प्राणितुम्। अयि हृदय, किमिदमकार्यं कार्यवदध्यवसाय तदसम्भवेन किमेवमुत्ताम्यसि। भगवन्पञ्चबाण, कस्तवापराधः कृतो मया यदेवं दहसि, न च भस्मीकरोषि' इति।

(२२) अथाहमाविर्भूय विवृतदीपभाजनः 'भामिनि, ननु बह्वपराद्धं

* बालविबोधिनी *

सातिशयम्। अव्यथिष्ट-पीडिताऽभवत्। कण्ठेति-कण्ठरागेण कण्ठस्वरेण-वल्गुः सुन्दरो गद्गदोऽस्पष्टभाषणं यस्या तादृशीम्। गिरं व्यसृजत् उक्तवती। व्यक्तं-स्फुटम्। विप्रलब्धा-प्रतारिता। प्राणितुं-जीवितुम्। अयि हृदयेति स्वहृदयं सम्बोध्य ब्रवीति किमिदं किं प्रक्रान्तं त्वयेत्यर्थः। अकार्यम्-अकरणीयम्। कार्यवत्-कार्येण तुल्यम् अध्यवसाय-निश्चित्य तदसम्भवेन-कार्यासम्भवेन किं कथम्। एवं-एवंप्रकारेण। उत्ताम्यसि-खिद्यसे। तव-तव-सकाशे। दहसि-तापयसि। भस्मीकरोषि-भस्मसात्करोषि-प्राणान्नापहरसीति एतादृशात् तापान्मृत्युरपि श्रेयानिति भावः।

(२२) अथ-कल्पसुन्दरीपरिदेवनानन्तरम्। अहम् उपहारवर्मा। आविर्भूय-कल्पसुन्दर्याः पुरः प्रकटीभूय विवृतदीपभाजनः समुद्घाटितप्रदीपसम्पुटकः। भामिनि-

* भाषाटीका *

अतिशय पीड़ित हुई। उन्मत्तावस्थाको प्राप्त राजहंसीके सदृश कण्ठस्वरसे सुन्दर अस्फुट वाणीसे कहने लगी। हन्त! मैं निश्चय ही स्पष्ट रीतिसे प्रतारित हुई। अब जीवन रहनेका कोई साधन नहीं मालूम पड़ता है। (अपने चित्तको सम्बोधित करती हुई कहने लगी)—"हे चित्त! तुमने इस अकरणीय कार्यमें करणीय कार्यके समान निश्चय करके मुझे प्रवृत्त कराया और उसके असम्भव होनेपर (असिद्ध होनेपर) मुझे क्यों ताप दे रहे हो। हे भगवन्! हे पञ्चबाण!! आपका मैंने कौनसा अपराध किया है जो आप मुझे इस प्रकारसे दह रहे हैं। किन्तु, भस्म नहीं करते हैं।" (हा! ऐसे दुःखसे तो, मृत्यु अच्छी होती है।)

(२२) कल्पसुन्दरीकी ऐसी वेदनाओंके सुननेके अनन्तर मैं (उपहारवर्मा) उस गर्भागारसे प्रकट हो गया। और प्रदीप सम्पुटकको समुद्घाटित करके उस कल्पसुन्दरीसे बोला—"हे कोपने! आपकेद्वारा कामदेवके अनेकों अपराध

भवत्या चित्तजन्मनो यदमुष्य जीवितभूता रतिराकृत्या कदर्थिता, धनुर्यष्टिर्भ्रूलताभ्याम्, भ्रमरमालामयी ज्या नीलालकद्युतिभिः, अस्त्राण्यपाङ्गवीक्षितवृष्टिभिः, महारजनध्वजपटांशुकं दन्तच्छदमयूखजालैः, प्रथमसुहृन्मलयमारुतः परिमलपटीयसा निःश्वासपवनेन; परभृतमतिमञ्जुलैः प्रला-

* बालविबोधिनी *

कोपने । सम्बोधनमेतत् । बहु-अत्यन्तम् । भवत्या-त्वया । चित्तजन्मनः कामस्य । यद् यतः । अमुष्य-कामस्य । जीवितभूता प्राणस्वरूपा । रतिः स्वपत्नी । आकृत्या आकारेण, स्वशरीरसौन्दर्येण । कदर्थिता-तिरस्कृता । धनुर्यष्टिर्धनुर्लता-अमुष्येति सर्वत्र सम्बध्यते । भ्रूलताभ्यां स्वभ्रूवल्लीभ्याम्-कदर्थितेति च सर्वत्र सम्बध्यते । भ्रमरमालामयी-भ्रमरपङ्क्तिरूपा । ज्या मौर्वी । नीलालकद्युतिभिः-स्वकृष्णकुन्तलकान्तिभिः । अस्त्राणि-बाणाः । कदर्थितानीति विभक्तिविपरिणामेनात्रान्यत्राप्यन्वयः । अपाङ्गवीक्षितवृष्टिभिः-कटाक्षपातैः । भिन्नं स्यादस्य बाणैर्युवजनहृदयं स्त्रीकटाक्षेण तद्वदिति कविसमयप्रसिद्धेः । महारजनेति-महारजनं कुसुम्भं तेन रञ्जितो ध्वजपटः पताकावस्त्रं तस्य अंशुरेवांशुकम् प्रभेति यावत् । 'स्यात्कुसुम्भं' वह्निशिखं महारजनमित्यपीत्यमरः । दन्तच्छदमयूखजालैः-ओष्ठाधरकिरणपटलैः । प्रथमसुहृत् कामस्य प्रधानमित्रम् । मलयवायुः दक्षिणपवनः । परिमलेति-परिमलेन सौरभेण पटीयान् समर्थतरः-मलयानिलतिरस्कारक्षम इत्यर्थः । परभृतं-कोकिलम् अतिमञ्जुलैरतिमनोहरैः । प्रलापैः कण्ठध्व-

* बालक्रीडा *

किये गये हैं । देखिये, आपकी आकृतिके सौन्दर्यकेद्वारा कामप्रिया रति तिरस्कृत की गयी है । आपकी भ्रुकुटियोंकी लताओंकेद्वारा कामधनुष तिरस्कृत किया गया है । आपके काले एवं चमकीले केशकलापोंकेद्वारा कामकी भौरोंकी श्रेणियोंवाली प्रत्यञ्चा अनादृत की गयी है । आपके कटाक्षोंकी पातोंसे काम-बाण अनादृत किये गये हैं । आपके ओष्ठाधरके पटलोंकेद्वारा कामकी कुसुम्भी पताकाकी कान्ति तिरस्कृता की गयी है । आपके निःश्वासोंके पवनकेद्वारा कामदेवका प्रधानमित्र मलयानिल दक्षिणपवन अनादृत किया गया है । आपकी कण्ठध्वनिकेद्वारा अतिमोहर कोकिल हराया गया है । आपकी बाहुवल्लियोंकेद्वारा कामकी फूलों-

पैः, पुष्पमयी पताका भुजयष्टिभ्याम्, दिग्विजयारम्भपूर्णकुम्भमिथुनमुरोजकुम्भयुगलेन, क्रीडासरो नाभिमण्डलेन, संनाह्यरथः श्रोणिमण्डलेन, भवनरत्नतोरणस्तम्भयुगलमूरुयुगलेन, लीलाकर्णकिसलयं चरणतलप्रभाभिः । अतः स्थान एव त्वां दुनोति मीनकेतुः । मां पुनरनपराधमधिकमायासयतीत्येष एव तस्य दोषः । तत्प्रसीद सुन्दरि, जीवय

* बालविबोधिनी *

निभिः । भुजयष्टिभ्यां बाहुलताभ्याम् । दिग्विजयेति-दिग्विजयारम्भे विजययात्रायां मङ्गलसूचकं पूर्णघटयुगलम् । उरोजकुम्भयुगलेन-स्तनकलशयुग्मेन । क्रीडासरः-लीलासरोवरम् । संनाह्यरथः-युद्धार्थं सज्जीकृतस्यन्दनम् । श्रोणिमण्डलेन-नितम्बयुग्मेन । भवनेति-भवनस्य गृहस्य रत्ननिर्मितौ यौ तोरणस्तम्भौ बहिर्द्वारस्तम्भौ तयोर्युगलम् । लीलेति-लीलार्थं विलासार्थं यत् कर्णकिसलयं कर्णपल्लवम् । अतः-अस्माद्धेतोः-यतो भवदीयैराकृत्यादिभिः कामसम्बन्धिनो रत्यादयस्तिरस्कृता इत्यर्थः । स्थाने-युक्तम् । त्वां भवतीं कलसुन्दरीम् । दुनोति तापयति । मीनकेतुः-कामः । आयासयति-पीडयति । तस्य कामस्य । जीवनौषधिभिः-जीवनोपायभूतैः अपाङ्गैः कटाक्षविक्षेपैः । अनङ्गेति-अनङ्गः- काम एव भुजङ्गः, सर्पस्तेन दष्टम् । मामिति शेषः । इति-इति उक्त्वा । आश्लिष्टवान् तामालिङ्गितवानहमिति शेषः ।

* बालक्रीडा *

केद्वारा गुम्फित ध्वजा तिरस्कृता की गयी है । आपके दोनों स्तनकलशोंकेद्वारा कामके विजययात्राके मंगलसूचक दोनों पूर्ण कलश पराभूत किये गये हैं । आपकी गम्भीर नाभिके मण्डलकेद्वारा कामका लीला सरोवर तिरस्कृत किया गया है । आपके दोनों नितम्बोंकेद्वारा कामदेवके युद्धका सुसज्जित रथ अनादृत हो गया है । आपकी दोनों जाघोंकेद्वारा कामके भवनके रत्न निर्मित तोरणके दोनों खम्भे तिरस्कृत किये गये हैं । आपके चरणतलोंकी प्रभाकेद्वारा कामके विलासार्थ कर्णपल्लव पराजित किये गये हैं । अत एव कामदेव आपको ठीक ही सन्तापित कर रहा है । किन्तु, मुझ निरपराधीको जो यह कामदेव अधिक व्यथित कर रहा है—यही उसका अपराध है । इसलिए हे सुन्दरि ! मेरे ऊपर कृपा कीजिये । मेरे

मां जीवनौषधिभिरिवापाङ्गैरनङ्गभुजङ्गदष्टम्' इत्याश्लिष्टवान् ।

(२३) अरीरमं चानङ्गरागपेशलविशाललोचनाम् । अवसितार्थां चारक्तवलिते क्षणामीषत्स्वेदरेखोद्भेदजर्जरितकपोलमूलामनर्गलकलकलप्रलापिनीमरुणदशनकररुहार्पणव्यतिकरामत्यर्थपरिश्लथाङ्गीमार्तामिव लक्ष-

* बालविबोधिनी *

(२३) अरीरमं-रमितवान् । रमुङ् क्रीडायामित्यस्य धातोर्णिजन्ताल्लुङ् । अनङ्गेति-अनङ्गरागेण कामरागेण पेशले मनोरमे विशाले विस्तृते लोचने यस्यास्ताम् । अवसितार्थां समाप्तरमणाम् । आरक्तेति-आरक्तं ईषद्रक्तं समन्ताद्रक्तं वा वलितं वक्रितमीक्षणं दृष्टिर्यस्यास्ताम् । ईषदिति-ईषत्स्वेदरेखायाः स्वल्पघर्मराजेः उद्भेदेन निर्गमेण जर्जरितं क्लिष्टं कपोलमूलं गण्डमूलं यस्यास्ताम् । अनर्गलकलकलप्रलापिनीम् निरन्तराव्यक्तध्वनिप्रलपनशीलाम् । अरुणेति-अरुणो रक्तो दशनानां दन्तानां कररुहाणां नखानाञ्चार्पणेन दानेन तज्जनितक्षतेनेत्यर्थः, व्यतिकरः सम्बन्धो यस्यास्ताम् । अत्यर्थपरिश्लथाङ्गीं-अतिशिथिलावयवाम् । आर्तां क्लान्ताम् । लक्षयित्वा निरूप्य । मानसीधारणा चित्तावेशरूपा, शारीरीधारणा स्थैर्यरूपा तामुभयविधा धारणामित्यर्थः । शिथिलयन् श्लथयन् । तया-कल्पसुन्दर्या । समा-

* बालक्रीडा *

जीवनोपायभूत अपने कटाक्षोंके विक्षेपोंकेद्वारा, कामदेवरूपी सर्पकेद्वारा काटे हुए मुझको, जिलाइये। इस प्रकार कहते हुए मैंने उस कल्पसुदरीको आलिंगित कर लिया

(२३) कामके रागसे जिसके बड़े-बड़े नेत्र मनोहर लग रहे थे उस कल्पसुन्दरीके साथ मैंने रमण किया। रमण समाप्तिके अनन्तर वह रमणी मुझे लाल-लाल तिरछे नेत्रोंसे देखने लगी। रमणके पश्चात् उसके कपोलके मूलभाग (गण्डप्रदेश) से कुछ पसीना बहने लगा। वह उस समय कुछ अस्फुट ध्वनि करने लगी। वह कल्पसुन्दरी उस समय अपने अरुण दांतों तथा नाखूनोंके (नोंच कचोट आदि), रति व्यापारोंसे मुझे विभूषित करने लगी। रति व्यापारके द्वारा अत्यन्त शिथिल शरीरवाली और क्लेशित उस कल्पसुन्दरीको मैंने देखा। देख करके मेरी चित्तावेशरूपा धारणा तथा स्थैर्यरूपा धारणा शिथिल पड़ गयीं। (मैं भी उसी कल्पसुन्दरीके समान कामदेवके सिद्ध मनोरथरूप रतिसे

यित्वा मानसीं शारीरीं च धारणां शिथिलयन्नात्मानमपि तया समानार्थमापादयम्। तत्क्षणविमुक्तसङ्गतौ रतावसानिकं विधिमनुभवन्तौ चिरपरिचिताविवातिगूढविश्रम्भौ क्षणमवातिष्ठावहि। पुनरहमुष्णमायतं च निःश्वस्य किञ्चिद्दीनदृष्टिः सचकितप्रसारिताभ्यां भुजाभ्यामेनामनतिपीडं परिष्वज्य नातिविशदमचुम्बिषम्। अश्रुमुखी तु सा यदि प्रयासि नाथ,

* बालविबोधिनी *

नार्थं तुल्यप्रयोजनमात्तिमित्यर्थः। समपादयम्-अकरवम्। तत्क्षणविमुक्तसङ्गतौ-तस्मिन् क्षणे समये विमुक्त त्यक्तं सङ्गतमाश्लेषो याभ्यां तौ। त्यक्तालिङ्गनव्यापाराविरयर्थः। रतावसानिक-सुरतसमाप्त्युचितम्। विधिं-व्यापारम्। चिरपरिचितेति-चिरपरिचितौ यथा विश्रम्भं भजतस्तद्वत्। अतिगूढविश्रम्भौ-अत्यन्तगुप्तविश्वासौ। अवातिष्ठावहि-अवस्थितावावामिति शेषः। अहमुपहारवर्मेत्यर्थः। दीनदृष्टिः-दैन्यपूर्णनयनः। सचकित प्रसारिताभ्यां-सशङ्कविस्तृताभ्याम्। एनां-कल्पसुन्दरीम्। अनतिपीडं-शिथिलं मन्दमिति यावत्। नातिविशदम्-नातिस्पष्टम्। अचुम्बिषम्-चुम्बितवान्। अश्रुमुखी-सबाष्पा सा-कल्पसुन्दरी। प्रयातमेव-

* बालक्रीडा *

कृतकृत्य हो गया। जैसे वात्स्यायन ऋषिके शास्त्रानुसार स्त्री मनोरथ पूर्ण होनेपर पुरुष भी तद्वत् हो जाते हैं। वैसे ही मैं भी उस समय हो गया।) मैंने भी अपनेको उसी कल्पसुन्दरीके सदृश सम्पादित कर लिया। रतिके पश्चात् उस समय हम लोग आलिंगन त्याग करके रतिके अनन्तर जो उचित व्यापार होते हैं उनको अनुभव करने लगे। बहुत कालसे परिचित व्यक्तिके समान अत्यन्त गुप्त विश्वासी हो करके कुछ क्षणोंतक हम दोनों वहां बैठे रहे। पुनः मैंने गरम और लम्बी सांसको लेकर कुछ दैन्य दृष्टिके साथ, विस्मयके साथ भुजाओंको फैला करके उस कल्पसुन्दरीका शिथिलता और धीरताके साथ आलिंगन किया तथा धीरेसे चुम्बन भी लिया। आंसुओंको आंखोंमें भर करके उस कल्पसुन्दरीने मुझसे कहा कि, हे नाथ! यदि आप जाना चाहते हैं, तो आप यह भी समझिये कि, आपके जानेके साथ ही मेरे प्राण भी चले जायंगे। मुझे भी अपने साथ ही लेते चलिये। नहीं, तो, यह दासी कल्पसुन्दरीको निष्प्रयोजन (मृत)

प्रयातमेव मे जीवितं गणय । नय मामपि । न चेदसौ दासजनो निष्प्रयोजनः' इत्यञ्जलिमवतंसतामनैषीत् ।

(२४) अवादिषं च ताम्—'अयि मुग्धे, कः सचेतनः स्त्रियमभिकामयमानां नाभिनन्दति । यदि मदनुग्रहनिश्चलस्तवाभिसन्धिराचराविचारं मदुपदिष्टम् । आदर्शय रहसि राज्ञे मत्सादृश्यगर्भं चित्रपटम् । आचक्ष्व च किमियमाकृतिः पुरुषसौन्दर्यस्य पारमारूढा न वा' इति । 'बाढमारूढा' इति नूनमसौ वक्ष्यति । ब्रूहि भूयः—'यद्येवम्, अस्ति कापि

* बालविबोधिनी *

गतमेव । गणय-जानीहि । तव गमनेन ममापि प्राणा बहिर्गमिष्यन्तीति भावः । असौ दासजनः अहमित्यर्थः । निष्प्रयोजनः-निरर्थकः । अवतंसतां-शिरोभूषणताम् । मस्तके अञ्जलिमबध्नादित्यर्थः ।

(२४) तां कल्पसुन्दरीम् । सचेतनः-चेतनावान् पुरुषः । अभिकामयमानाम्-अभिलषन्तीम् । अभिनन्दति स्तौति आकाङ्क्षतीत्यर्थः । मदनुग्रहनिश्चलः मदनुग्रहे मामनुग्रहीतुं निश्चलः स्थिरः । अभिसन्धिरभिप्रायः । आचर-कुरु । अविचारं विनाविचारेण । मदुपदिष्टं मदुक्तम् । आदर्शय-संदर्शय । राज्ञे-विकटवर्मणे । मत्सादृश्यगर्भं-मत्सदृशरूपवन्तम् । इयं-चित्रपटस्थिता । पुरुषसौन्दर्यस्य पुरुषे यत्सौन्दर्यं सम्भवति तस्य । पारं-पराकाष्ठाम् । आरूढा-प्राप्ता । बाढं-निश्चयेन । असौ-विकटवर्मा । यद्येवं-इयमाकृतिः सौन्दर्यस्य परां काष्ठां

* बालक्रीडा *

ही समझियेगा । ऐसा कह करके उस कल्पसुन्दरीने 'अपनी अञ्जलिको अपना शिरोभूषण बना लिया ।

(२४) मैंने उस कल्पसुन्दरीसे कहा—"हे मुग्धे ! कौन-सा ऐसा चेतनावान् पुरुष होगा। जो अपने ऊपर अनुराग करनेवाली रमणीकी आकांक्षा न करेगा । यदि मेरे विषयमें आपका अनुग्रह स्थिर है एवं आपके अभिप्राय दृढ़ हैं तो, आप शङ्का त्याग करके मेरे कथनानुसार आचरण करें । एकान्तमें आप राजाको, मेरे समानरूपवाले इस मेरे चित्रको, दिखावें । और उस राजासे कहें क्या इस चित्रगतपुरुषके सौन्दर्यने अन्य पुरुषोंके सौन्दर्यको नहीं पार कर लिया

तापसी देशान्तरभ्रमणलब्धप्रागल्भ्या मम च मातृभूता । तयेदमालेख्य-रूपं पुरस्कृत्याहमुक्ता—'सोऽस्ति तादृशो मन्त्रो येन त्वमुपोषिता पर्वणि विविक्तायां भूमौ पुरोहितैर्हुतमुक्ते सप्तार्चिषि नक्तमेकाकिनी शतं चन्दन-समिधः, शतमगुरुसमिधः, कर्पूरमुष्टीः, पट्टवस्त्राणि च प्रभूतानि हुत्वा भविष्यस्येवमाकृतिः ।

(२५) अथ चालयिष्यसि घण्टाम् । घण्टापुटक्वणिताहूतश्च

* बालविबोधिनी *

प्राप्ता चेदित्यर्थः । देशान्तरेति-देशान्तराणां अनेकदेशानां भ्रमणेन गमनेन-लब्धं प्राप्तं प्रागल्भ्यं पटुत्वं अभिज्ञतेति यावद् यया सा । मातृभूता मातृस्वरूपा । तया-तापस्या । आलेख्यरूपं-चित्रसौन्दर्यम् । पुरस्कृत्य-विषयीकृत्य-अग्रे संस्थाप्येति वा । तादृश -प्रभावसम्पन्नः । येन-मन्त्रेण । उपोषिता-निराहारा । पर्वणि-अमावस्यादौ । विविक्ताया-पवित्रायाम् निर्जनायां वा । हुतमुक्ते-आदौ हुतः पश्चान्मुक्तस्तस्मिन् । सप्तार्चिषि-अग्नौ । नक्तं-रात्रौ । चन्दनस-मिधः चन्दनकाष्ठानि । अगुरुसमिधः अगुरुकाष्ठानि । कर्पूरमुष्टीः-कर्पूरचूर्णानि । पट्टवस्त्राणि-कौषेयवसनानि । एवमाकृतिः-एवमेतादृशी आकृतिर्यस्याः सा ।

(२५) अथ-तादृशाकृतिप्राप्त्यनन्तरम् । चालयिष्यसि-वादयिष्यसि ।

* बालक्रीडा *

है ? ऐसा पूछे जानेपर वह राजा अवश्य ही कहेगा कि, अवश्य ही इस आकृ-तिने सौन्दर्यका अतिक्रमण किया है । तब आप उस नृपतिसे फिरसे कहें— "यदि ऐसा है, तो, कोई एक तपस्याशीला साध्वी है । जिसने अनेक देश-देशान्तरोंमें पर्यटन करके पटुता प्राप्तकी है तथा वह साध्वी मेरी माताके सदृश भी है । उसी साध्वीने यह चित्रपट मेरे सम्मुख रख करके कहा है-'मेरे पास एक ऐसा मन्त्र है जिसकेद्वारा आप निराहार हो करके अमावास्याकी तिथिमें किसी निर्जन भूमिमें पुरोहितोंके द्वारा हवन करावें और उस हवनकी शेष अग्निमें रातके समयमें अकेली आकर एक सौ चन्दनकी लकडी, एक सौ अगुरुकी लकड़ी तथा कर्पूरके चूर्णसे एवं रेशमी वस्त्रोंसे प्रचुरमात्रामें हवन करेंगी तो आप भी इसी प्रकारकी आकृतिवाली हो जायेंगी ।

(२५) इसके पश्चात् घंटा बजा देंगी और घंटाके शब्दको श्रवण करके

भर्ता ते भवत्यै सर्वरहस्यमाख्याय निमीलिताक्षो यदि त्वामालिङ्गेत, इयमाकृतिरमुमुपसंक्रामेत् । त्वं तु भविष्यसि यथापुराकारैव यदि भवत्यै हभवत्प्रियाय चैवं रोचेत, न चास्मिन्विधौ विसंवादः कार्यः' इति । 'वपुश्चेदिदं तवाभिमतं सह सुहृन्मन्त्रिभिरनुजैः पौरजानपदैश्च संप्रधार्य तेषामप्यनुमते कर्मण्यभिमुखेन स्थेयम्' इति ।

(२६) स नियतमभ्युपैष्यति । पुनरस्यामेव प्रमदवनवाटीशृङ्गाटिकायामाथर्वणिकेन विधिना संज्ञपितपशुनाभिहुत्य मुक्ते हिरण्यरेतसि

* बालविबोधिनी *

घण्टां-वाद्यविशेषम् । घण्टापुटेति-घण्टापुटस्य क्वणितेन प्रतिशब्देनाहूत आकारितः । भर्त्ता-तव पतिः । भवत्यै तवसमीप इत्यर्थः । सर्वरहस्यं-गुप्तविषयान् । आख्याय-कथयित्वा । निमीलिताक्षः-मुद्रितनेत्रः । त्वां-भवतीं कल्पसुन्दरीमिति यावत् । अमुं-तव भर्त्तारम् । उपसंक्रामेत्-संक्रान्ता भवेत् । यथापुराकारा यथापूर्वाकृतिः । भवत्प्रियाय-त्वद्भर्त्रे । एवं-पूर्वोक्तम् । रोचेत-यद्यभिमतं स्यात् । विधौ-प्रयोजने । विसंवादः-अन्यथाबुद्धिः । इदमेतादृशम् । अभिमतं-सम्मतम् । अनुजैः सहोदरैः । पौरजानपदैः नागरिकैः । सम्प्रधार्य-निश्चित्य । तेषां-सुहृन्मन्त्र्यादीनाम् । अनुमते-संमते । अभिमुखेन-उद्युक्तेन । स्थेयं-स्थातव्यम् ।

(२६) स विकटवर्मा । नियतम् अवश्यम् । अभ्युपैष्यति-स्वीकरिष्यति । प्रमदवनेति-प्रमदवनवाट्याः क्रीडोद्यानस्य शृङ्गाटिकायां-चतुष्पथे । आथर्वणि-

* बालक्रीडा *

आपके पतिदेव आ करके अपने सभी गुप्तभेदोंको सुना करके यदि आंखें बन्द करके आपका आलिङ्गन करेंगे तो, वे भी इसी चित्रपटकी आकृतिके समान हो जायंगे । और आपकी (रानी कल्पसुन्दरीकी) आकृति फिर पूर्ववत् हो जायगी । यदि यह वार्ता आपके पतिदेवके अभिमत हो तो, इस विधिमें कोई सन्देह आदि न करें ।' फिर रानीने कहा—'यदि आपको ऐसे स्वरूपधारी बननेकी अभिलाषा है तो, आप अपने मित्रों, मन्त्रियों, अनुजों और पुरवासियोंसे विचार करके उन सबकी अनुमतिसे इस कार्यमें प्रवृत्त होवें ।

(२६) वह नृपति विकटवर्मा अवश्य ही स्वीकार करेगा । फिर इसी क्रीडोद्यानके चतुष्पथके ऊपर अथर्ववेदके विधानद्वारा हवन किये हुए पशुको

तद्धूमशमनेन संप्रविष्टेन मयास्मिन्नेव लतामण्डपे स्थातव्यम् । त्वं पुनः प्रगाढाया प्रदोषवेलायामालपिष्यसि कर्णे कृतनर्मस्मिता विकटवर्माणम्—'धूर्तोऽसि त्वमकृतज्ञश्च । मदनुग्रहलब्धेनापि रूपेण लोकलोचनोत्सवायमानेन मत्सपत्नीरभिरमयिष्यसि । नाहमात्मविनाशाय वेतालोत्थापनमाचरेयम्' इति ।

(२७) श्रुत्वेदं त्वद्वचः स यद्वदिष्यति तन्मह्यमेकाकिन्युपागत्य निवे·

* बालविबोधिनी *

केन—अथर्ववेदोपदिष्टेन विधिना अनुष्ठानेन । संशपितपशुना—संशपितो घातितः पशुश्छागादिर्यस्मिन् तेन—विधिविशेषणमेतत् । अभिहुत्य—होमं सम्पाद्य । मुक्ते—विसृष्टे । हिरण्यरेतसि—वह्नौ । तद्धूमशमनेन—तस्य धूमस्य शमनेन निवृत्त्या सहेति शेषः । मया—उपहारवर्मणेत्यर्थः । त्वं कल्पसुन्दरीत्यर्थः । प्रगाढ़ाया सान्द्रतिमिरायाम् । प्रदोषवेलाया रजनीमुखे । आलपिष्यसि—कथयिष्यसि । कर्णे—विकटवर्मश्रवणे । कृतनर्मेति—कृतं विहितं नर्मस्मितं परिहासहसितं यया सा । धूर्तः—वञ्चकः । अकृतज्ञः—अस्मृतोपकारः । मदनुग्रहलब्धेन—मत्प्रसादाधिगतेन । रूपेण—आकारेण । लोकलोचनेति—लोकलोचनानां जननयनानामुत्सवमिवाचरता । आत्मविनाशाय—स्वमरणाय । वेतालोत्थापनं भूतविशेषोत्पादनम् ।

(२७) स विकटवर्मा । ज्ञास्यामि—तदानीं यद् विधेयं तदहमेव करिष्या·

* बालक्रीडा *

हवन करा करके अवशिष्ट अग्निके धूएंकी निवृत्तिके बाद मैं (उपहारवर्मा) लतामण्डपमें प्रविष्ट हो करके बैठा रहूँगा । आप भी घोर अन्धकारवाले प्रदोष कालमें अपने पतिके कानोंमें मुसकुरा करके कहियेगा कि, (हे देव !) आप बड़े धूर्त हैं । आप बड़े अकृतज्ञ हैं !! मेरे प्रसादसे प्राप्त रूपसे जो रूप लोगोंके नयनोंको उत्सव बढानेवाला होगा । उसी रूपसे आप मेरी सौतों (सपत्नीजनों) के साथ रमण करेंगे । अतः अपना विनाश करनेके लिए वेतालका आह्वान न करूंगी ।

(२७) इन बातोंको सुन करके वह नृपति जो कहे वह आप मुझसे अकेली

दयिष्यसि । ततः परमहमेव ज्ञास्यामि । मत्पदचिह्नानि चोपवने पुष्करिकया प्रमार्जय' इति । सा 'तथा' इति शास्त्रोपदेशमिव मदुक्तमादृत्यातृप्तसुरतरागैव कथंकथमप्यगादन्तःपुरम् । अहमपि यथाप्रवेशं निर्गत्य स्वमेवावासमयासिषम् ।

(२८) अथ सा मत्तकाशिनी तथा तमर्थमन्वतिष्ठत् । अतिष्ठच्च तन्मते स दुर्मतिः । अभ्रमच्च पौरजानपदेष्वियमद्भुतायमाना वार्ता—'राजा किल विकटवर्मा देवीमन्त्रबलेन देवयोग्यं वपुरासादयिष्यति ।

* बालविबोधिनी *

मीत्यर्थः । पुष्करिकया तन्नामकदास्या मार्जय-प्रोञ्छय । सा कल्पसुन्दरी । तथा-तथा भवतु । आदृत्य-सादरंस्वीकृत्य । अतृप्तसुखरागा असम्पूर्णसुरताभिलाषा । कथं कथमपि-अतिकृच्छ्रेण । यथाप्रवेशं-येन पथा प्रविष्टस्तेनैव पथा ।

(२८) मत्तकाशिनी-वरवर्णिनी । तथा-यथा मयोक्तं तेन प्रकारेण । तं पूर्वकथितम् । अर्थं-विषयम् । अन्वतिष्ठत्-अकरोत् । तन्मते-कल्पसुन्दरीकथितेऽभिप्राये । स विकटवर्मा । अभ्रमत्-प्रससार अद्भुतायमाना-आश्चर्यवदाचरन्ती । देवीमन्त्रबलेन-पट्टमहिष्या मन्त्रप्रभावेण देवयोग्यं देवतोचितम् । आसादयिष्यति-प्राप्स्यति । नूनं निश्चयेन । विप्रलम्भः प्रतारणं, नेत्यनेन सम्बध्यते ।

* बालक्रीडा *

आ करके कह दीजियेगा । उसके अनन्तर जो कुछ होगा वह मैं समझ लूंगा । उपवनमें जो मेरे पैरोंके चिह्न हैं उन्हें पुष्करिकाद्वारा मिटवा दीजियेगा । उस रानी कल्पसुन्दरीने "तथा" (स्वीकार है) कह करके शास्त्रोंके उपदेशोंके सदृश मेरे वचनोंको माना और तथा रतिक्रीड़ासे अतृप्ति पाकर भी येनकेन प्रकारसे अन्तःपुरमें गयी । मैं भी उसी पूर्व मार्गसे निकल करके निवास स्थलपर आकरके विराम करने लगा ।

(२८) तदनन्तर उस उत्तमाङ्गना रानीने मेरे कथनानुसार सब कार्य कर दिया । उस रानी कल्पसुन्दरीके आदेशानुसार वह दुर्मति राजा विकटवर्मा भी राजी हो गया । यह आश्चर्यकारिणी वार्ता पुरवासियों और नागरिकलोकसंघोंमें फैल गयी-"राजा विकटवर्मा अपनी पटरानी कल्पसुन्दरीके मन्त्रके प्रभावसे देवताओंके अनुरूप शरीरको प्राप्त करेंगे । निश्चय ही इसमें कपट नहीं है

नूनमेष विप्रलम्भो नातिकल्याण.। कैव कथा प्रमादस्य। स्वस्मिन्नेवान्तःपुरोपवने स्वाग्रमहिष्यैव संपाद्यः किलायमर्थः। तथाहि बृहस्पतिप्रतिमबुद्धिभिर्मन्त्रिभिरप्यभ्यूह्यानुमतः। यद्येव भावि नान्यदत. परमस्ति किञ्चिदद्भुतम्। अचिन्त्यो हि मणिमन्त्रौषधीनां प्रभाव.' इति प्रसृतेषु लोकप्रवादेषु प्राप्ते पर्वदिवसे, प्रगाढायां प्रौढतमसि प्रदोषवेलायामन्तःपुरोद्यानादुदैरयद्धूर्जटिकण्ठधूम्रो धूमोद्गम । क्षीराज्यदधितिलगौरसर्षपवसामांसरुधिराहुतीनां च परिमल पवनानुसारी दिशि दिशि प्रावासीत्। प्रशान्ते

* बालविबोधिनी *

अतिकल्याणः-अतिशुभप्रदः। कैव कथा प्रमादस्य-प्रमादस्य नात्र सम्भव इत्यर्थः। स्वस्मिन् स्वकीये। स्वाग्रमहिष्या-स्वभार्यया। बृहस्पतिप्रतिमबुद्धिभिः-वाचस्पतितुल्यमतिमद्भिः। अभ्यूह्य वितर्क्य विचार्येति यावत्। अनुमतः-अनुमोदितः। भावि-भविष्यति। अतः परम्-अस्मादप्यधिकम्। अचिन्त्यः-अभावनीयः। प्रसृतेषु प्रचारितेषु। लोकप्रवादेषु-जनरवेषु। प्राप्ते-उपस्थिते। पर्वदिवसे-अमावस्यायाम्। प्रौढतमसि-घनान्धकारायाम्। उदैरयत्-उदगच्छत्। धूर्जटीति-धूर्जटेः शिवस्य कण्ठवद् गलवत् धूम्रो नीलः। धूमोद्गमः-धूमप्रवाहः। उदैरयदित्यस्य कर्तृपदमेतत्। क्षीराज्येति-क्षीरं दुग्धमाज्य घृतं दधि क्षीरविकारः, तिलाः प्रसिद्धाः, गौरसर्षपाः सिद्धार्थाः वसा वपा, मांसं पललं रुधिरं शोणितं तेषां या आहुतयस्तासाम्। परिमलो गन्धः। पवनानुसारी पवन-

* बालक्रीडा *

अपितु, यह अतिशुभप्रद है। इसमें प्रमाद (कष्ट) की तो, कोई बात ही नहीं मालूम पड़ती है। क्योंकि, अपने ही अन्तःपुरमें अपनी ही भार्याके द्वारा यह कार्य सम्पादित होगा। इसी कारणसे वाचस्पतिके सदृश बुद्धिमान मन्त्रियोंने भी, बहुत विचार करके, अनुमोदन किया है। यदि यह बात सत्य हो गयी तो, इससे अधिक आश्चर्यकी और कोई बात नहीं है। रत्न, औषधि और मन्त्रोंका प्रभाव सदा अचिन्त्य होता है। इस तरहका लोकमें प्रवाद फैल गया तथा कुछ दिनमें अमावस्या भी आ गयी। उस दिन जब प्रदोष कालमें घनान्धकार छा गया। तब अन्तःपुरके उद्यानसे महादेवजी कण्ठके समान नीला (यद्वाऽपर श्याम) धूम्रका आविर्भाव हुआ। दूध, घी, दही गौर सर्षप, वसा, मांस और शोणित

च सहसा धूमोद्गमे तस्मिन्नहमविशम् ।

(२९) निशान्तोद्यानमगाच्च गजगामिनी । आलिङ्ग्य च मां सस्मितं समभ्यधत्त—'धूर्त, सिद्धं ते समीहितम् । अवसितश्च पशुरसौ । अमुष्य प्रलोभनाय त्वदादिष्टया दिशा मयोक्तम्—'कितव, न साधयामि ते सौन्दर्यम् । एवं सुन्दरो हि त्वमप्सरसामपि स्पृहणीयो भविष्यसि, किमुत

* बालविबोधिनी *

मनुसृत्य प्रसरणशीलः । प्रावासीत् प्रासरत् । प्रपूर्वकाद्गमनार्थक वा धातोर्लुङि रूपम् । प्रशान्ते अपगते दूरीभूते इति यावत् । अविशं प्रविष्टवान् ।

(२९) निशान्तोद्यानं गृहोपवनम् । गजगामिनी–गजवन्मन्दगमनशीला–कल्पसुन्दरीति शेषः । समभ्यधत्त–उक्तवती । धूर्त–कितव । सिद्धं सम्पन्नम् । समीहितम् ईप्सितम् । अवसितः समाप्तिं गतः आसन्नमरण इति भावः । पशुः पशुवद् विवेकरहितः । असौ–विकटवर्मा । अमुष्य–विकटवर्मणः । प्रलोभनाय–प्रलोभनार्थम् । त्वदादिष्टया–त्वत्प्रदर्शितया । दिशा–मार्गेण । मया–कल्पसुन्दर्या । कितव धूर्तेति सम्बोधनम् । साधयामि–सम्पादयामि । एवं–एतादृशः । अप्सरसां स्ववेश्यानाम् । स्पृहणीयः अभिलषणीयः । किमुत–किं वक्तव्यमित्यर्थः । मधुकरो भ्रमरः । निसर्गचपलः स्वभावचञ्चलः । यत्र क्वचित्–यत्र कुत्रा-

* बालक्रीडा *

(रक्त) की आहुतियोंके द्वारा उड़ी हुई गन्ध, पवनकी गतिसे प्रत्येक दिशामें फैल गयी । उस धूम्रके प्रशान्त होते ही सहसा मैंने उद्यानमें प्रवेश किया ।

(२९) हाथीके समान मन्द गमन करनेवाली वह रानी कल्पसुन्दरी भी उस गृह उपवनमें आ गयी । मेरा आलिङ्गन करके हंसती हुई मुझसे कहने लगी–"हे कितव ! तेरा ईप्सितार्थ (मनोरथ) सिद्ध हो गया । पशुके समान अविवेकी इस राजाकी मृत्यु भी समीप है । इस नृपतिके प्रलोभनके लिए मैंने आपके आदेशानुसार, उसी रीतिसे, कहा–'हे धूर्त ! तेरी सुन्दरता मैं नहीं सम्पादित करूंगी । इतनी उत्तम सुन्दरतापर तेरे ऊपर स्वर्गकी अप्सराएंतक मोहित हो जायंगी तब मृत्यु लोककी महिलाओंकी तो बात ही क्या । भौंरेके समान तू स्वभावसे ही चञ्चल है अतः जहां कहीं भी आसक्ति हुई वहीं चिपक

मानुषीणाम् । मधुकर इव निसर्गचपलो यत्र कचिदासज्जति भवादृशो नृशसः' इति । तेन तु मे पादयोर्निपत्याभिहितम्—'रम्भोरु, सहस्व मत्कृतानि दुश्चरितानि । मनसापि न चिन्तयेयमितःपरमितरनारीम् । त्वरस्व प्रस्तुते कर्मणि' इति ।

(३०) तदहमीदृशेन वैवाहिकेन नेपथ्येन त्वामभिसृतवती । प्रागपि रागाग्निसाक्षिकमनङ्गेन गुरुणा दत्तैव तुभ्यमेषा जाया । पुनरपीमं जातवेदसं साक्षीकृत्य स्वहृदयेन दत्ता इति प्रपदेन चरणपृष्ठे निष्पीड्योत्क्षिप्तपादपार्ष्णिरितरेतरव्यतिषक्तकोमलाङ्गुलिदलेन भुजलताद्वयेन कंधरां

* बालविबोधिनी *

पि । आसज्जति लगति–आसक्तो भवतीति यावत् । 'नृशंसः–निर्दयः । तेन–विकटवर्मणा । मे–कल्पसुन्दर्याः । सहस्व–क्षमस्व । दुश्चरितानि–अपराधान् । इतरनारीम्–अन्यस्त्रियम् । त्वरस्व–शीघ्रता कुरु । प्रस्तुते–प्रारब्धे ।

(३०) तत् तस्मात् कारणात् । वैवाहिकेन–विवाहोचितेन । नेपथ्येन–वेषेण । त्वामुपहारवर्माणम् । अभिसृतवती–प्राप्तवती । प्राक्–पूर्वम् । रागाग्निसाक्षिक–रागोऽनुराग एवाग्निः साक्षी द्रष्टा यस्मिन् कर्मणि तदिति क्रियाविशेषणम् । गुरुणा–आचार्येण । दत्ता–अर्पिता । एषा मद्रूपा । जाया भार्या । जातवेदस मग्निम् । स्वहृदयेनेति–पूर्वमनङ्गेन दत्ता अधुना तु निजहृदयेनेति–विशेषः । प्रपदेन–पादाग्रेण । निष्पीड्य–पीडयित्वा । उत्क्षिप्तपादपार्ष्णिः उत्क्षिप्तौ

* बालक्रीडा *

जायगा क्योंकि तू निर्दय है ही—(और मैं बिलखा करूंगी ।) ऐसा कहनेपर उस धूर्त्तने मेरे पैरोंपर गिरकरके कहा–'हे रम्भोरु ! आप मेरे किये हुए अपराधोंको क्षमा कीजिये । अब मनसे भी अन्य रमणियोंको स्मरण न करूंगा । इस प्रारम्भित कार्यके लिए शीघ्रता कीजिये ।'

(३०) इसी कारणसे मैं इस प्रकारके विवाहके समयानुरूप वस्त्रोंको धारण करके आपके समीप आयी हूं । पूर्वमें भी अनुरागरूपी अग्निको साक्षी बना करके कामदेवरूपी आचार्यने इस जायाको आपको सौंप दिया है । अब फिर भी इस अग्निको साक्षी दे करके अपने हृदयसे (अपनेको) आपको सौंप रही हूं ।

ममावेष्ट्य सलीलमाननमानमय्य स्वयमुन्नमितमुखकमला विभ्रान्तविशालदृष्टिरसकृदभ्यचुम्बत् ।

(३१) अथैनाम् 'इहैव कुरण्टकगुल्मगर्भे तिष्ठ यावदहं निर्गत्य साधयेयं साध्यं सम्यक्' इति विसृज्य तामुपसृत्य होमानलप्रदेशमशोकशाखावलम्बिनीं घण्टामचालयम् । अकूजच्च सा तं जनं कृतान्तदूतीवाह्व-

* बालविबोधिनी *

उद्धृतौ पादयोश्चरणयोः पार्ष्णी गुल्फदेशौ यया सा । इतरेतरेति–इतरेतरमन्योन्यं व्यतिषक्तानि मिलितानि कोमलानि अङ्गुलय एव दलानि पत्राणि यस्य तेन । कंधरां–ग्रीवाम् । आवेष्ट्य–आश्लिष्य । सलीलं सविलासम् । आननं मदीयं मुखम् । आनमय्य–आनतीकृत्य । उन्नमितमुखकमला–उद्ध्र्वीकृताननपद्मा । विभ्रान्तेति–विभ्रान्ते घूर्णिते विशाले दीर्घे दृष्टी नयने यस्याः सा । असकृत्–वारंवारम् । अभ्यचुम्बत्–चुम्बितवती मामिति शेषः ।

(३१) एनां–कल्पसुन्दरीम् । कुरण्टकगुल्मगर्भे–पीतकुरवकस्तम्बमध्ये । अहमुपहारवर्मा । साधयेयं सम्पादयेयम् । साध्यं कार्यम् । उपसृत्य–प्राप्य । होमानलप्रदेशं–होमाग्निस्थानम् । अशोकेति–अशोकशाखायामाबद्धाम् । अचालय मवादयम् । अकूजत्–अध्वनत् । सा–घण्टा । तं जनं–विकटवर्माणम् ।

* बालक्रीडा *

ऐसा कहकर वह कल्पसुन्दरी रानी अपने चरणोंके अग्रिम भागोंसे मेरे चरणोंको दबाती हुई खड़ी हुई । परस्पर मिले हुए गुल्फोंसे तथा अन्योन्यमें संश्लिष्ट कोमल अङ्गुलिरूपी दलवाले (पत्रवाले) दोनों बाहुवल्लियोंसे मेरे गलेको परिवेष्टित करके उस रानीने विलाससे मेरे मुखको नीचे नवा दिया और अपने मुख कमलको, ऊंचा करके अपने विशाल नेत्रोंको बार-बार नचाते हुए मेरा मुख बेर-बेर चूमने लगी ।

(३१) इसके पश्चात् मैंने (उपहारवर्माने) उस रानीसे कहा–'तुम इसी पीले कुरवकके स्तम्बमध्यमें तबतक बैठो । जबतक मैं यहांसे निकल करके अपने साध्यकार्यको सम्पादित करता हूं ।' इस तरहसे उसे वहीं छोड़ करके मैं होमाग्निस्थानके समीप जा पहुंचा । और अशोक वृक्षकी डालीपर लटकी हुई

यन्ती । प्रावर्तिपि चाहमगुरुचन्दनप्रमुखानि होतुम् । अयासीच्च राजा यथोक्तं देशम् । शङ्कापन्नमिव किञ्चित्सविस्मयं विचार्यं तिष्ठन्तमब्रवम्—'ब्रूहि सत्यं भूयोऽपि मे भगवन्तं चित्रभानुमेव साक्षीकृत्य । न चेदनेन रूपेण मत्सपत्नीरभिरमयिष्यसि, ततस्त्वयीदं रूपं सङ्क्रामयेयम्' इति ।

(३२) स तदैव 'देव्येवेयम् नोपधिः' इति स्फुटोपजातसप्रत्ययः प्रावर्तत शपथाय । स्मित्वा पुनर्मयोक्तम्—'किं वा शपथेन । कैव हि मानुषी मां परिभविष्यति । यद्यप्सरोभिः सङ्गच्छसे, सङ्गच्छस्व कामम् ।'

* बालविबोधिनी *

कृतान्तदूती–यमदूतिका । आह्वयन्ती–आकारयन्ती । यमदूती यथा आसन्नमृत्युं मानवं यमालयं नेतुमाह्वयति तद्वदित्यर्थः । प्रावर्त्तिपि-प्रवृत्तोऽभवम् । होतुं-अग्नौ प्रक्षेप्तुम् अयासीदगच्छत् । राजा विकटवर्मा । यथोक्त-पूर्वकथितम् । शङ्कापन्न सशङ्कितम् । येयं जुहोति सा कल्पसुन्दरी अन्या वा काचिदिति सन्दिहानमिति भावः । सविस्मयं–मन्त्रप्रभावादशक्यमपि सम्भवतीति साश्चर्यम् । विचार्य–स्थिरीकृत्य । तिष्ठन्तमुपविष्टम्–विकटवर्माणमिति शेषः । भूयोऽपि–पुनरपि । चित्रभानुं वह्निम् । अनेन–भाविना । ततः–तर्हि । संक्रामयेय योजयेयम् ।

(३२) स विकटवर्मा । तदैव-श्रवणसमये एव । देवी महिषी कल्पसुन्दरीति यावत् । इयं–या एवं कथयति सा । उपधिः–कपटम् । स्फुटेति–स्फुटं व्य-

* बालक्रीडा *

घण्टीको बजा दिया । वह घण्टी ऐसी, बजी मानो वह यमराजकी दूती हो और राजा विकटवर्माको बुला रही हो । मैं अगुरु चन्दन आदि प्रमुख होमकी सामग्रियोंको ले करके होम करनेमें प्रवृत्त हो गया । राजा विकटवर्मा भी वहांपर आ गया । सशङ्कित तथा कुछ विस्मित हो करके खड़े होनेवाले उस राजा विकटवर्मासे मैंने कहा-'सत्य कहिये । फिरसे भगवान् अग्निको साक्षी करके सत्य कहिये !! कि, यह अनुपम सौन्दर्य पा करके आप मेरी सौतों (सपत्नीजनों) के साथ रमण न करेंगे, तो, मैं आपमें इस रूपको संक्रमित करूं ।'

(३२) यह बात श्रवण करके उस राजाको विश्वास हो गया कि, बोलनेवाली मूर्त्ति रानी कल्पसुन्दरी ही है । इसमें जरा भी कपटजाल नहीं है । ऐसा प्रत्यक्ष

कथय कानि ते रहस्यानि । तत्कथनान्ते हि त्वत्स्वरूपभ्रंशः' इति । सोऽब्रवीत्—'अस्ति बद्धो मत्पितुः कनीयान्भ्राता प्रहारवर्मा । तं विषान्नेन व्यापाद्याजीर्णदोषं ख्यापयेयमिति मन्त्रिभिः सहाध्यवसितम् । अनुजाय विशालवर्मणे दण्डचक्रं पुण्ड्रदेशाभिक्रमणाय दित्सितम् । पौरवृद्धश्च

* बालविबोधिनी *

कमुपजात उत्पन्नः सम्प्रत्ययो विश्वासो यस्य सः । प्रावर्त्तत-प्रवृत्तोऽभवत् । शपथाय-शपथं कर्त्तुम् । मया-कलसुन्दरीरूपधारिणा उपहारवर्मणेत्यर्थः । किं-किं कार्यमित्यर्थः । कैव हीति-मानुषीषु कापि तादृशी नास्ति या मां परिभवितुमर्हतीति भावः । सङ्गच्छसे सङ्गतो भवसि । कामं-यथेष्टम् । रहस्यानि-गोपनीयविषयाः । तत्कथनान्ते-रहस्यप्रकाशानन्तरम् । त्वत्स्वरूपभ्रंशः-तव पूर्वाकारध्वंसः । भविष्यतीति शेषः । स विकटवर्मा । बद्धः कारागारे संयतः । कनीयान्-कनिष्ठः । तं प्रहारवर्माणम् । विषान्नेन -विषमिश्रितभोज्यद्रव्येण । व्यापाद्य-विनाश्य । अजीर्णदोषं प्रख्यापयेयम-विसूचिकारोगेणायं मृत इति प्रकाशयिष्यामीत्यर्थः । अध्यवसितं-निर्णीतम् । इत्येकं रहस्यम् । अनुजाय-स्वकनिष्ठभ्रात्रे । दण्डचक्रं-सैनापत्यम् । पुण्ड्रेति-पुण्ड्रनामकदेशजयाय । दित्सितं दातुमभिलषितम् । इति द्वितीयं रहस्यम् । पौरवृद्धः-पौरेषु नागरिकेषु वृद्धो वर्षीयान् । पाञ्चालिक इति वृद्धस्य नाम । परित्रातः-संकटाद् रक्षितः । सार्थवाहः कश्चिद्

* बालक्रीडा *

विश्वास हो जानेपर वह शपथादि करनेके लिए प्रवृत्त हो गया । मैंने हंस करके कहा—"शपथसे क्या लाभ । कौनसी ऐसी नारी होगी जो मुझे पराजित कर सकेगी । यदि अप्सराओंसे रमण करना चाहें, तो, खूब करें । अब बताइये कि, आपके कौन-कौन रहस्य भेद हैं (गुप्त बातें हैं) । इनको बतानेके बाद आपके स्वरूपका परिवर्त्तन होगा । उस नृपतिने कहा-"मेरे पिताके छोटे भाई प्रहारवर्मा कारागारमें बन्द हैं । उन्हें जहर मिला हुआ अन्न खिला करके मरवा डालूंगा और अजीर्ण दोषसे मर गये ऐसी प्रसिद्धि कर दूंगा । यह बात मन्त्रियोंके साथ निश्चित हो गयी है । यह प्रथम रहस्य है । अपने छोटे भाई विशालवर्माको पुण्ड्रदेशके आक्रमण करनेके हेतु दण्डचक्र (सेनापति)

पाञ्चालिकः परित्रातश्च सार्थवाहः खनतिनाम्नो यवनाद्वज्रमेकं वसुंधरामूल्यं लघीयसार्घेण लभ्यमिति ममैकान्तेऽमन्त्रयेताम् । गृहपतिश्च ममान्तरङ्गभूतो जनपदमहत्तरः शतहलिरलीकवादशीलमवलेपवन्तं दुष्टग्रामण्यमनन्तसीरं जनपदकोपेन घातयेयमिति दण्डधरानुद्धारकर्मणि मत्प्रयोगान्नियोक्तुमभ्युपागमत् । इत्थमिदमचिरप्रस्तुतं रहस्यम् ।'

* बालविबोधिनी *

वणिक्-तन्नामधेयः कश्चिद् वा । एतौ अनन्तरोक्तक्रियापदस्य अमन्त्रयेतामित्यस्य कर्तृकारकौ । खनतिनाम्नः खनतिरिति नाम यस्य तस्मात् । वज्रं-हीरकम् । वसुन्धरामूल्यं-वसुन्धरा पृथ्वी मूल्यं यस्य तत् । वसुन्धराविनिमयेन लभ्यमित्यर्थः । लघीयसा-अत्यल्पेन । अर्घेण-मूल्येन । एकान्ते-रहसि । अमन्त्रयेतां उक्तवन्तौ । इति तृतीयं रहस्यम् । गृहपतिर्ग्रामाध्यक्षः । अन्तरङ्गभूतः-आत्मीयः । जनपदमहत्तरः-प्रधाननागरिकः । शतहलिरिति ग्रामाध्यक्षस्य नाम । अलीकवादशीलं-मिथ्याभाषणरतम् । अवलेपवन्तं-गर्वितम् । दुष्टग्रामण्यं-दुष्टग्रामाध्यक्षम् । अनन्तसीरं-तन्नामकम् । जनपदकोपेन-तस्मिन् जनपदकोपमारोप्येत्यर्थः । घातयेयं विनाशयिष्यामि । दण्डधरान्-सेनानायकान् । उद्धारकर्मणि-अनन्तसीरस्य निर्यातनकार्ये । मत्प्रयोगात्-मन्नियोगात् । अभ्युपागमत्-अहमेव दण्डधरान्नियोक्ष्यामीति स्वीचकार । इति चतुर्थं रहस्यम् । इत्थं-अनेन प्रकारेण । अचिरप्रस्तुतं-साम्प्रतमेव प्रक्रान्तम् । रहस्य गोप्यम् । एतावदेवेति शेषः ।

* बालक्रीडा *

बनानेके लिए सोचा है । यह दूसरा रहस्य है । पुरवासियोंमें वृद्धि पाञ्चालिक और सार्थवाह नामक बनियेको रक्षक बना करके खनति नामके यवनसे एक बहुमूल्य हीरेको जिसका दाम सारी पृथ्वी हो सकता है । अति स्वल्प मूल्यसे खरीदनेका विचार किया है । यह तीसरा रहस्य है । गृहपति (ग्रामाध्यक्ष) मेरा आत्मीय जन है । सर्व देशोंमें श्रेष्ठ शतहली प्रधान नागरिक है । पर यह मिथ्यावादी तथा गर्विष्ठ है । और अनन्तसीर नामक व्यक्ति भी दुष्ट ग्रामाध्यक्ष है । इन लोगोंपर जनपदकोप कराऊंगा और इनका विनाश कर दूंगा । सेनापतियोंको इस निर्याणकर्ममें मैं ही नियुक्त करूंगा यह तय हुआ है । यह चतुर्थ रहस्य है । यही मेरे वर्त्तमान रहस्य भेद हैं ।"

(३३) इत्याकर्ण्य–तम् 'इयत्तवायुः । उपपद्यस्व स्वकर्मोचितां गतिम्' इति च्छुरिकया द्विधाकृत्य कृत्तमात्रं तस्मिन्नेव प्रवृत्तस्फीतसर्पिषि हिरण्यरेतस्यजूहवम् । अभूच्चासौ भस्मसात् । अथ स्त्रीस्वभावादीषद्विह्वलां हृदयवल्लभां समाश्वास्य हस्तकिसलयेऽवलम्ब्य गत्वा तद्‌गृहमनुज्ञयास्याः सर्वाण्यन्तःपुराण्याहूय सद्य एव सेवां दत्तवान् । सविस्मितविलासिनी-

* बालविबोधिनी *

(३३) तं विकटवर्माणम् । इयत्-एतावत् । आयुः जीवनम् । उपपद्यस्व–प्राप्नुहि । स्वकर्मोचितां कर्मफलानुसारिणीम् । गतिं-परिणतिम् । द्विधाकृत्य-खण्डयित्वा तमिति शेषः । कृत्तमात्रं छेदनसमकालम् । प्रवृत्तेति-प्रवृत्तं प्रदत्तं स्फीतं प्रचुरं सर्पिर्हविर्यस्मिन् तस्मिन् । हिरण्यरेतसि अग्नौ । अजूहवम्-प्रक्षिप्तवान् । असौ-विकटवर्मा । भस्मसात्-भस्मावशेषः । स्त्रीस्वभावात्-स्त्रीणां स्वभावः स्वत एवातिकोमलो भवतीति हेतोरित्यर्थः । ईषद्विह्वलां स्वल्पव्याकुलाम् । हृदयवल्लभां प्राणप्रियाम् । समाश्वास्य-सान्त्वयित्वा । करकिसलये-पाणिपल्लवे । अवलम्ब्य-गृहीत्वा तद्‌गृहं कल्पसुन्दरीमन्दिरम् । अनुज्ञया-अनुमत्या । अस्याः कल्पसुन्दर्याः । अन्तः पुराणि-अन्तः पुरिकावर्गान् सेवां भोज्यादिदानेन तासां सन्तोषम् । सविस्मितेति-सविस्मितः साश्चर्यो यो विलासिनीसार्थः स्त्रीसमूहस्तस्य मध्ये । कञ्चित्कालं-कियन्तं समयं यावत् । विहृत्य-विहारं कृत्वा । विसृज्येति–

* बालक्रीडा *

(३३) इतना श्रवण करके मैंने उस नृपतिसे कहा कि, इतने ही दिनोंका तुम्हारा जीवन है । अब अपने कर्मफलानुसारिणी गतिको प्राप्त करो । और छूरीसे उस विकटवर्माको दो टुकड़ोंमें काट करके प्रचुरमात्रामें घीके साथ अग्निमें हवन कर दिया, वह भस्मसात् हो गया । तत्पश्चात् स्त्री स्वभावके कारण स्वल्प व्याकुलीभूता प्राणप्रियाको समाश्वासन दिया । पाणिपल्लव ग्रहण करके उस रानी कल्पसुन्दरीकी अनुमतिसे उसके मन्दिरमें प्रविष्ट हुआ एवं सभी अन्तःपुरचरोंको बुला करके उसी कालमें उचित पुरस्कार प्रदान किया । आश्चर्यमें अभिभूत अन्तःपुरकी रमणियोंके मध्यमें कुछ समयतक रमण करनेके पश्चात् उन अन्तःपुरकी रमणियोंको दूर करके उसी रानी

सार्थमध्ये कंचिद्विहृत्य कालं विसृष्टावरोधमण्डलस्तामेव संहतोरुमूरूप-पीडं भुजोपपीडं चोपगुह्य तल्पेऽभिरमयन्नल्पामिव तां निशामत्यनैषम्। अलभे च तन्मुखात्तद्राजकुलस्य शीलम्।

(३४) उपसि स्नात्वा कृतमङ्गलो मन्त्रिभिः सह समगच्छे। तांश्चा-ब्रवम्—'आर्याः, रूपेणैव सह परिवृत्तो मम स्वभावः। य एष विपान्नेन हन्तुं चिन्तितः पिता मे स मुक्त्वा स्वमेतद्राज्यं भूय एव ग्राहयितव्यः।

* बालविबोधिनी *

विसृष्टं त्यक्तं अवरोधमण्डलमन्तः पुरिकाचक्रं येन सः। ता-कल्पसुन्दरीम्। संह-तोरुं-विशालोरुदेशाम्। ऊरूपपीडम्-ऊरुभ्यामुपपीड्य। भुजोपपीडं भुजाभ्यामु-पपीड्य। उपगुह्य-आलिंग्य। तल्पे शय्यायाम्। अभिरमयन्-विहरन्। अल्पामिव-दीर्घामपि शीघ्रम्। अत्यनैषम्-अत्यवाहयम्। अलभे-ज्ञातवान्। तन्मुखात्-कल्प-सुन्दरीमुखात्। राजकुलस्य राजकीयपुरुषवर्गस्य। शीलं-चरित्रादिकम्।

(३४) उषसि-प्रभाते। कृतमङ्गलः-अनुष्ठितमङ्गलाचारः। समगच्छे-मि-लितोऽभवम्। तान्-मन्त्रिणः। आर्याः माननीयाः-सम्बोधनमेतत्। रूपेणाका-रेण। परिवृत्तः-अन्यथाभूतः यो मम स्वभावः पूर्वमतिनिर्दय आसीत् सोऽद्य तद्विपरीतो जातः। रूपपरिवर्तनेन सह स्वभावस्यापि परिवर्तनं जातमिति भावः। चिन्तितः निश्चितः। पिता पितृव्यस्तस्य पितृतुल्यत्वात्। मुक्त्वा-बन्धनादपनीय। स्वं-तदीयम्। भूयः पुनरपि। ग्राहयितव्यः यथा स राज्यं स्वीकरोति तथा विधे-

* बालक्रीडा *

कल्पसुन्दरीके साथ शय्याके ऊपर आनन्दोपभोग करने लगा-उस रानीको अपने ऊरुओंसे और भुजाओंसे चिपटाते हुए एवं आलिङ्गन करते हुए वह बड़ी रात भी छोटी प्रतीत हुई। अर्थात्-रातका बीतना ज्ञात न हुआ। उसी रानी कल्पसु-न्दरीसे मैंने राजकीयपुरुषवर्गोंका स्वभाव चरित्र आदि भी ज्ञात कर लिया।

(३४) प्रभात कालमें स्नान करके तथा मङ्गलाचार, पाठ-पूजन आदि करके मन्त्रियोंसे दरबारमें जा करके मिला। उन मन्त्रियोंसे मैंने कहा-"हे माननीयो! मेरे रूपके परिवर्तन होनेके साथ ही मेरे स्वभावमें भी परिवर्त्तन हो गया है। जहरके अन्नसे जिन पितृव्य (चाचा) को मैंने मारनेके लिए सोचा था उनको कारागारसे निकाल करके फिरसे उन्हें उन्हींका राज्य सौंपा जाय।

पितृवदमुष्मिन्वयं शुश्रूषयैव वर्तामहे। न ह्यस्ति पितृवधात्परं पातकम्' इति। भ्रातरं च विशालवर्माणमाहूयोक्तवान्—'वत्स, न सुभिक्षाः सांप्रतं पुण्ड्राः। ते दुःखमोहोपहतास्त्यक्तात्मानो राष्ट्रं नो न समृद्धमभिद्रवेयुः। अतो मुष्टिवधः शस्यवधो वा यदोत्पद्यते तदाभियास्यसि, नाद्य यात्रा युक्ता' इति।

* बालविबोधिनी *

यमित्यर्थः। पितृवत्-पितृतुल्यम्। अमुष्मिन्-प्रहारवर्मणि। शुश्रूषया-सेवया। वर्त्तामहे-व्यवहरामः। पितृवधात् पितृहत्यायाः। परम् अधिकम्। भ्रातरं-स्वकनीयांसम्। सुभिक्षाः-सम्पन्नशस्याः। पुण्ड्राः तदाख्यदेशाः। ते-पुण्ड्राः। दुःखमोहोपहताः-भोजनाद्यभावाद्दुःखं क्लेशः मोहः अज्ञानं ताभ्यामुपहता आक्रान्ताः। त्यक्तात्मानः परित्यक्तजीवनाशाः। नः-अस्माकम्। राष्ट्रं-राज्यम्। समृद्धं-सम्पन्नशस्यम्। न अभिद्रवेयुर्न पीडयेयुरिति काकुः। अपि तु पीडयेयुः। तेन हानिरेवास्माकमिति भावः। अतः-अस्मात्कारणात्। मुष्टिवधः-मुष्टिपरिमितस्यान्नस्योपघातः। शस्यवधः शस्यमात्रस्योपघातः। उत्पद्यते भविष्यतीत्यर्थः। यदा पुण्ड्रदेशे सुभिक्षं भविष्यति त्वदभियानेन च तेषां शस्यान्नहानिर्भविष्यति तदैव ते आक्रमणीया इत्याशयः। यात्रा-युद्धयात्रा युक्ता-उचिता।

* बालक्रीडा *

और मैं उनकी सेवा-शुश्रूषा अपने पिताके सदृश करूंगा। बापके मारनेसे अधिक पाप संसारमें कोई नहीं है। अपने छोटे भाई विशालवर्माको बुला करके कहा—"हे वत्स! वर्त्तमान समयमें पुण्ड्रदेश सम्पन्न एवं धान्यादिसे परिपूर्ण नहीं है। अतः आप उक्त देशमें अभी चढ़ाई न करें। क्योंकि वे सब पुण्ड्रदेशके निवासी दुःख और मोहसे परिव्याप्त हो करके अपने प्राणोंको त्यागनेमें समुद्यत हो रहे हैं। ऐसी अवस्थामें वे मेरे समृद्धिशाली राज्यपर आक्रमण कर बैठेंगे। अत एव जब पुण्ड्रदेशमें मुष्टि परिमाणमें, शस्यप्रचुरतासे अन्न पैदा होने लगेगा अर्थात् पुण्ड्र जब सम्पत्तिशाली हो जाय। तब आक्रमण करना ठीक होगा। अभी आक्रमण करना अयुक्त है।

(३५) नगरवृद्धावप्यलापिपम्—'अल्पीयसा मूल्येन महार्हं वस्तु मास्तु मे लभ्यं धर्मरक्षायै, तदनुगुणेनैव मूल्येनादः क्रीयताम्' इति। शतहलिं च राष्ट्रमुख्यमाहूयाख्यातवान्-'योऽसावनन्तसीरः प्रहारवर्मण. पक्ष इति निनाशयिषितः, सोऽपि पितरि मे प्रकृतिस्थे किमिति नाश्येत, तत्त्वयापि तस्मिन्संरम्भो न कार्यः' इति। त इमे सर्वमाभिज्ञानिकमुपलभ्य 'स एवायम्' इति निश्चिन्वाना विस्मयमानाश्च मां महादेवीं च प्रश-

* बालविबोधिनी *

(३५)'नगरवृद्धौ-पाञ्चालिकसार्थवाहौ। अलापिपम् अवोचम्। महार्हं-महामूल्यम्। धर्मरक्षायै-धर्मरक्षार्थम्। महार्हस्य वस्तुनोऽत्यल्पमूल्येन क्रयणे प्रतारणा भवतीत्यतो धर्मनाश इत्यर्थः। अनुगुणेन-समुचितेन। अदः एतम्। राष्ट्रमुख्यं जनपदप्रधानम्। पक्षः सहायभूतः। निनाशयिषितः-विनाशयितुमिष्टः आसीदिति शेषः। पितरि-पितृतुल्ये प्रहारवर्मणि। प्रकृतिस्थे-पूर्वभावमापन्ने। किमिति-कथम्। नाश्येत-हन्येत। नैव हन्येतेत्यर्थः। त्वया-शतहलिना। तस्मिन्-अनन्तसीरे। संरम्भः-कोपः। ते इमे-नगरवृद्धादय। आभिज्ञानिकमभिज्ञानमिति स्वार्थे ठक् परिचयोत्पादक चिह्नम्। उपलभ्य-ज्ञात्वा। अयं पुरोदृश्यमानः सः विकटवर्मैव। निश्चिन्वानाः निर्णय कुर्वन्तः। विस्मयमानाः साश्चर्याः। महादेवी-

* बालक्रीडा *

(३५) नगर वृद्ध पाञ्चालिक और सार्थवाहको बुला करके कहा—"अल्प मूल्य दे करके महामणि लेनेका विचार छोड़ दिया गया। क्योंकि इसमें धर्मकी हानि हो सकती है। अत धर्मरक्षाके विचारसे उस महामणिके अनुरूप मूल्य दे करके वह मणि खरीदी जाय।" श्रेष्ठ नागरिक शतहलीको जो अनन्तसीर और प्रहारवर्माका सहायक भी था, बुला करके आज्ञा दी कि, इनका भी विनाश न किया जाय।क्योंकि जब मेरे चाचाजी पूर्ववत् हो गये तो उनके सहायकगणोंका क्यों विनाश किया जाय। और कहा कि, शतहलीको भी भविष्यमें अनन्तसीरके साथ विद्वेष न करना चाहिये। इन अभिज्ञानोंसे वे नगर-निवासी मन्त्रिगण समझ गये कि, "यह वही राजा है।" ऐसा निश्चय होनेपर वे सब आश्चर्यान्वित हो करके मेरी और रानी कल्पसुन्दरीकी प्रशंसा करने लगे। मन्त्रके

सन्तो मन्त्रबलानि चोद्घोषयन्तो बन्धनात्पितरौ निष्क्रामय्य स्वं राज्यं प्रत्यपादयन् अहं च तया मे धात्र्या सर्वमिदं ममाचेष्टितं रहसि पित्रोरवगमय्य प्रहर्षकाष्ठाधिरूढयोस्तयोः पादमूलमभजे ।

(३६) अभज्ये च यौवराज्यलक्ष्म्या तदनुज्ञातया । प्रसाधितात्मा देवपादविरहदुःखदुर्भगान्भोगान्निर्विशन्भूयोऽस्य पितृसखस्य सिंहवर्मणो

* बालविबोधिनी *

कल्पसुन्दरीम् । मन्त्रबलानि–मन्त्रप्रभावान् । उद्घोषयन्तः–प्रचारयन्तः । बन्धनात्कारागृहात् । पितरौ–मातरं पितरञ्च । निष्क्रामय्य मोचयित्वा । प्रत्यपादयन्–प्रायच्छन् । तया–पूर्ववर्णितया । धात्र्या–वृद्धतापस्या । तद्द्वारेणेत्यर्थः । ममाचेष्टितं–मत्कृतं कार्यम् । पित्रोः मातापित्रोः अवगमय्य–ज्ञापयित्वा । प्रहर्षेति–प्रहर्षस्य आनन्दस्य काष्ठामवधिमधिरूढयोः प्राप्तवतोः । तयोः पित्रोः । पादमूलं–चरणतलम् । अभजे आश्रितवान् ।

(३६) अभज्ये–असेव्ये–आश्रितोऽभवमित्यर्थः तदनुज्ञातया–ताभ्यां मातापितृभ्यामनुमतया । प्रसाधितात्मा सफलप्रयत्नः कृतकृत्य इति यावत् । आत्मा यत्नो धृतिर्बुद्धिरित्यमरः देवपादेति–देवपादस्य भवच्चरणयुगस्य विरहदुःखेन विच्छेदक्लेशेन दुर्भगान् अप्रियान् । भोगान् उपभोग्यविषयान् । निर्विशन्–उपभुञ्जानः । पितृसखस्य तातमित्रस्य । लेख्यात्—पत्रात् । चम्पाभियोगं–चम्पा-

* बालक्रीडा *

प्रभावका प्रचार करने लगे । मेरे माता–पिताको उन लोगोंने कारागारसे निकाल करके अपने प्राचीन राज्यपर अधिरूढ़ करा दिया । मैंने भी यह सब वृत्तान्त अपनी उस वृद्ध तापसी (धात्री) से एकान्तमें कह दिया । माता–पिताको भी यह समाचार जता दिया । जब माता–पिता आनन्दकी परमसीमामें (अपना राज्य करने लगे) तब मैं उनके चरणोंकी सेवामें लगा ।

(३६) उन पूज्य माता–पिताकी आज्ञासे, मैंने युवराज–पदरूपी लक्ष्मीको प्राप्त किया । कृतकृत्य हो करके भी मैंने आपके विरहसे उत्पन्न क्लेशसे उन सब सुखोंको अप्रिय जाना । पुनः पिताजीके मित्र सिंहवर्माके लेखसे चण्डवर्माका

लेख्याच्चण्डवर्मणश्चम्पाभियोगमवगम्य 'शत्रुवधो मित्ररक्षा चोभयमपि करणीयमेव' इत्यलघुना लघुसमुत्थानेन सैन्यचक्रेणाभ्यसरम्। अभवं च भूमिस्त्वत्पादलक्ष्मीसाक्षात्क्रियामहोत्सवानन्दराशेः।' इति।

(३७) श्रुत्वैतद्देवो राजवाहनः सस्मितमवादीत्—'पश्यत पारतल्पिकमुपधियुक्तमपि गुरुजनबन्धव्यसनमुक्तिहेतुतया दुष्टामित्रप्रमापणाभ्युपायतया राज्योपलब्धिमूलतया च पुष्कलावर्थधर्मावप्यरीरधत्।

* बालविबोधिनी *

क्रमणम्। शत्रुवधः—चण्डवर्मनिधनम्। मित्ररक्षा—सिंहवर्मणो रक्षणं करणीयमवश्यकर्त्तव्यम्। अलघुना—महता। लघुसमुत्थानेन—क्षिप्रगामिना। सैन्यचक्रेण—सेनासमूहेन। अभ्यसरम्—अभ्यगच्छम्। अभवं—जातः भूमिः पात्रं भाजनमिति यावत्। त्वत्पादेति—तव भवतो राजवाहनस्येत्यर्थः पादलक्ष्म्याश्चरणशोभायाः साक्षात्क्रिया प्रत्यक्षीकरणमेव महोत्सवस्तेन आनन्दराशिः प्रहर्षातिशयस्तस्य।

(३७) एतत्—इमं वृत्तान्तम्। पारतल्पिकं—पारदारिकं—परदारापहरणमिति यावत्। अरीरधदित्यस्याः क्रियायाः कर्त्तृपदमेतत्। उपधियुक्तं छलपूर्णम्। गुरुजनेति—गुरुजनस्य पित्रादेर्बन्धः बन्धनमेव व्यसनं विपत् तस्माद् या मुक्तिर्मोक्षस्तस्य हेतुतया कारणत्वेन। दुष्टस्यामित्रस्य शत्रोः प्रमापणस्य वधस्य अभ्युपायतया साधनतया। राज्येति—राज्यस्योपलब्धिः प्राप्तिस्तस्या मूलतया

* बालक्रीडा *

चम्पापुरीपर आक्रमण ज्ञात किया। शत्रुका वध और मित्रका रक्षण ये दोनों अवश्य करना चाहिये। इसी विचारसे मैं विपुल सैन्य बलके साथ अति शीघ्रतापूर्वक आपके पास आया हूं। आपकी (राजहवानकी) चरण शोभाके प्रत्यक्षीकरण (दर्शन) से महोत्सवरूप आनन्दराशिका मैं पात्र बन गया हूं।

(३७) देव राजवाहन यह वृत्तान्त सुन करके बोले—"देखिये, परस्त्रीका अपहरण करना छलपूर्ण है। अर्थात्—छलियोंका कार्य है। परन्तु, माता-पिता आदि गुरुजनोंको कारागार आदिके क्लेशसे छुड़ाना और दुष्ट शत्रुको योग्य उपायसे मारना तथा राज्य प्राप्त करना आदि बातोंके साधनमें धर्म और अर्थकी

किं हि बुद्धिमत्प्रयुक्तं नाभ्युपैति शोभाम्' इति । अर्थपालमुखे निधाय स्निग्धदीर्घां दृष्टिम् 'आचष्टां भवानात्मीयचरितम्' इत्यादिदेश । सोऽपि बद्धाञ्जलिरभिदधे—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते उपहारवर्मचरितं नाम तृतीय उच्छ्वासः ।

* बालविबोधिनी *

निदानतया । पुष्कलौ-प्रचुरौ । अर्थधर्मौ-अर्थश्च धर्मश्च तौ धर्मार्थौ । अरोरधत्-साधयामास । राध्संसिद्धावित्यस्य लुङिरूपम् । भावार्थस्तु यदनेनोपहारवर्मणा विकटवर्माणं कपटेन निहत्य तत्पत्नी गृहीता तत्तु पातकमेवाचरितं तेनेति सत्यम् किन्तु पितृबन्धनमोचनशत्रुनाश स्वराज्यप्राप्त्यादिबहुसत्कर्मसाधकतया दोषोऽपि गुणायैव संवृत्त इति । किं-किं वस्तु । बुद्धिमत्प्रयुक्तं बुद्धिमता कृतम् । अभ्युपैति-प्राप्नोति । अर्थपालमुखे-अर्थपालस्य कुमारेष्वन्यतमस्य मुखे आनने । निधाय-संस्थाप्य । स्निग्धदीर्घां-स्निग्धां स्नेहपूर्णामाग्रहातिशयेन दीर्घां च । आचष्टां-कथयतु । आङ्पूर्वाच्चक्ष् धातोर्लोटि रूपम् । आत्मीयचरितं स्ववृत्तान्तम् । सोऽपि-अर्थपालोऽपि । अभिदधे-उवाच ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनी समाख्यायां श्रीदशकुमारचरित व्याख्यायामुपहारवर्म चरितं नाम तृतीयोच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

आराधना हुई है । (इससे-परस्त्री अपहरण पाप नहीं है ।) ठीक ही है, ऐसी कौनसी कृति है जो बुद्धिमान पुरुषोंके द्वारा की जानेपर शोभाको न प्राप्त करे । (-बुद्धिमानोंके द्वारा बुरा कार्य भी भले प्रकारसे होता है ।) इसके पश्चात् राजवाहनने आग्रहपूर्वक स्नेहपपूर्ण नेत्रोंसे अर्थपालकी ओर देखा और कहा— "आप भी अपनी चरितावली सुनायें ।"

इस प्रकारसे दशकुकारचरितके उपहारवर्मनामक तृतीयोच्छ्वासकी बालक्रीड़ा नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई ।

चतुर्थोच्छ्वासः ।

(१) देव, सोऽहमप्येभिरेव सुहृद्भिरेककर्मोर्मिमालिनेमि भूमिवलयं परिभ्रमन्नुपासरं कदाचित्काशीपुरीं वाराणसीम् । उपस्पृश्य मणिभङ्गनिर्मलाम्भसि मणिकर्णिकायामविमुक्तेश्वरं भगवन्तमन्धकमथनमभिप्रणम्य प्रदक्षिणं परिभ्रमन्पुरुषमेकमायामवन्तमायसपरिघपीवराभ्यां भुजाभ्यामाबध्यमानपरिकरमविरतरुदितोच्छूनताम्रदृष्टिमद्राक्षम् । अतर्कयं

---

* बालविबोधिनी *

(१) साम्प्रतमर्थपालनामा कुमारः स्वभ्रमणवृत्तान्तं वर्णयितुमारेभे देवेत्यादिना । देव—राजन् । सोऽहमर्थपाल इत्यर्थः । एभिः—अनन्तरोक्तैः । एककर्मा—एक समानं कर्म भवदन्वेषणरूपं यस्यासौ । ऊर्मिमालीति—ऊर्मीणां तरङ्गाणां माला पंक्तिरस्यास्तीति ऊर्मिमाली समुद्रः नेमिः सीमा यस्य तत्—समुद्रवेष्टितमित्यर्थः । भूमिवलयं—भूमण्डलम् । उपासरमगच्छम् । काशीपुरीं—काशीप्रदेशस्य प्रधाननगरीम् । वाराणसीं तन्नामिकाम् । उपस्पृश्य—स्नात्वा । मणिभङ्गेति—मणीनां रत्नानां भङ्गः शकलस्तद्वन् निर्मलं स्वच्छमम्भस्तोयं यस्यास्तस्याम् । मणिकर्णिकाया—तन्नामकतीर्थे । अविमुक्तेति—अविमुक्तेति काशीक्षेत्रस्य नामान्तरं तस्येश्वरं प्रभुम् । अन्धकमथनमन्धकासुरसंहारकम्—महेशम् । प्रदक्षिणं परिभ्रमन्—परिक्रमं कुर्वन् । आयामवन्तं—दीर्घाकारम् । आयसेति—अयसा लोहेन निर्मितः आयसस्तादृशो यः परिघोऽर्गलस्तद्वत् पीवराभ्यां स्थूलाभ्याम् । भुजाभ्यां

* बालक्रीडा *

अथ अर्थपाल नामक कुमारने अपने पर्यटन वृत्तको सुनाना प्रारम्भ किया

(१) हे देव ! आपके अन्वेषणार्थं समानकर्ममें सुदृढ़ मित्रोंके साथ समुद्रान्त पृथिवीमण्डलपर पर्यटन करता हुआ मैं एकदा काशीप्रदेशकी वाराणसी नगरीमें पहुंचा । मणिकी कणिके सदृश निर्मलजल—(गङ्गाजल) वाले मणिकर्णिका तीर्थमें स्नान किया तथा काशीनाथ, अन्धकासुरसंहारक—(भगवान् विश्वनाथ—) को प्रणाम किया और प्रदक्षिणा (परिक्रमा) करने लगा । उसी समय मैंने लोहेके परिघ तुल्य (बेवड़ेके समान) स्थूल तथा अपने दोनों बाहुओंमें कच्छ कसे हुए एवं सदा रोदन करनेके कारण जिसके नेत्र लाल—लाल

च-'कर्कशोऽयं पुरुषः, कार्पण्यमिव वर्षति क्षीणतारं चक्षुः, आरम्भश्च साहसानुवादी, नूनमसौ प्राणनिःस्पृहः किमपि कृच्छ्रं प्रियजनव्यसनमूलं प्रतिपत्स्यते । तत्पृच्छेयमेनम् । अस्ति चेन्ममापि कोऽपि साहाय्यदानावकाशस्तमेनमभ्युपेत्येत्यपृच्छम्—'भद्र, संनाहोऽयं साहसमवगमयति । न चेद्गोप्यमिच्छामि श्रोतुं शोकहेतुम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

बाहुभ्याम । आबध्येति-आबध्यमानो विरच्यमानः क्रियमाण इति यावत् परिकरः कक्षाबन्धो येन तम् । अविरतेति-अविरतं सन्ततं यद् रुदितं रोदनं तेनोच्छूने स्फीते ताम्रेऽरुणे दृष्टी नेत्रे यस्य तम् । एवं भूतं पुरुषमद्राक्षम् दृष्टवान् । अतर्कयं व्यचारयम् । कर्कशः कठोरः परुष इति यावत् । कार्पण्यं-दैन्यम् । वर्षति प्रकटयतीत्यर्थः । क्षीणतारं-दुर्बलकनीनिकम् । चक्षुरिति वर्षतीति क्रियायाः कर्तृ । आरम्भोऽध्यवसायः । साहसानुवादी-साहसानुकारी तत्सूचक इत्यर्थः । नूनं निश्चितम् । असौ पुरुषः । प्राणनिस्पृहः जीवनस्पृहाशून्यः । किमपि-अनिर्वचनीयम् । कृच्छ्रं कष्टम् । प्रियजनेति-प्रियजनस्य व्यसनं विपदेव मूलं निदानं यस्य तत् । प्रियजनविपन्निमित्तकमित्यर्थः प्रतिपत्स्यते-प्राप्स्यति । साहाय्यदानावकाशः साहाय्यकरणावसरः, यदि मत्तः किमपि साहाय्यमिच्छति तदहं कर्त्तुमुद्यतोऽस्मीति भावः । एनं पुरुषम् । अभ्युपेत्य-सम्मुखमागत्य । इति-वक्ष्यमाणम् । भद्र सौम्येति सम्बोधनम् । संनाहः समुद्योगः । अयं-दृश्यमानः । अवगमयति सूचयति । गोप्यमप्रकाश्यम् । शोकहेतुं शोककारणम् ।

* बालक्रीडा *

हो गये हैं, ऐसे लक्षणयुक्त एक पुरुषको देखा । मैंने विचार किया कि, यह पुरुष कठोर है । इसकी धंसी हुई आँखें दैन्यको बताती हुई आंसू बहा रही हैं । अध्यवसायसे यह साहसी ज्ञात होता है । अवश्य ही यह मनुष्य अपने जीवनसे निस्पृह हो करके किसी स्वात्मीय प्रियजनके कष्टदायक क्लेशको भोग रहा है । अतः इससे यह बात पूछनी चाहिये । यदि इसे मेरी किसी प्रकारकी सहायता चाहती हो सो भी पूछना चाहिये । 'हे भद्र ! यह आपका समुद्योग साहसको बतला रहा है । यदि कोई गुप्त रखने योग्य बात न हो तो, मुझसे आप शोकका कारण बतावें" ।

(२) स मां सबहुमानं निर्वर्ण्य 'को दोषः, श्रूयताम्' इति कचित्करवीरतले मया सह निषण्णः कथामकार्षीत्—'महाभाग, सोऽहमस्मि पूर्वेषु कामचरः पूर्वभद्रो नाम गृहपतिपुत्रः। प्रयत्नसंवर्धितोऽपि पित्रा दैवच्छन्दानुवर्ती चौर्यवृत्तिरासम्। अथास्यां काशीपुर्यामर्यवर्यस्य कस्य चिद्गृहे चोरयित्वा रूपाभिग्राहितो बद्धः। वध्ये च मयि मत्तहस्ती मृत्युविजयो नाम हिंसाविहारी राजगोपुरोपरितलाधिरूढस्य पश्यतः काम-

* बालविबोधिनी *

(२) स पुरुषः। मामर्थपालम्। सबहुमानं साग्रहम्। निर्वर्ण्य दृष्ट्वा। करवीरतले-करवीरवृक्षस्याधस्तात्। निषण्णः समुपविष्टः। कथां वक्ष्यमाणाम्। पूर्वेषु पूर्वदेशेषु। कामचरो यथेच्छाचारी। गृहपतिपुत्रः ग्रामाध्यक्षतनयो गृहस्थ पुत्रो वा। प्रयत्नसंवर्धितोऽपि-महता यत्नेन परिपालितोऽपि। दैवच्छन्दानुवर्ती-अदृष्टवशमानसः। चौर्यवृत्तिः-चौर्यं स्तेयमेव वृत्तिर्जीविका यस्य सः। आसम् अभवम्। अर्यवर्यस्य-वैश्यश्रेष्ठस्य। रूपाभिग्राहितः-रूपेण चौर्यलब्धवस्तुना अभिग्राहितो नागरिकैर्धृतः। वध्ये-वधार्हे। हिंसाविहारी-हिंसायामन्यप्राणनाशे विहरतीत्येवं शीलः। राजगोपुरेति-राजतद्देशाधिपतेर्गोपुरस्य पुरद्वारस्योपरितलमूर्ध्वदेशमधिरूढस्याधिष्ठितस्य। उत्तमामात्यस्य-प्रधानमन्त्रिणः। शासना दादेशात्। जनकण्ठेति-जनानां तत्रस्थमनुष्याणां कण्ठरवेण कण्ठध्वनिना द्विगु-

* बालक्रीडा *

(२) उस पुरुषने मुझे सम्मानयुक्त दृष्टिसे देख करके कहा कोई दोष नहीं है, सुनिये ! और एक कनेलके पेड़के नीचे मेरे साथ बैठ करके उसने कथा कहनी प्रारम्भ की। "हे महाभाग ! मैं पूर्व देशके एक स्वेच्छाचारी पूर्णभद्र ग्रामाध्यक्षका पुत्र हूं। पिताद्वारा लालन-पालन और महाप्रयत्नके साथ पोषण होनेपर भी अदृष्टवश चौर्यवृत्ति करने लगा। किसी समय इसी काशीपुरीमें एक धनिक वैश्यके घरमें मैंने चोरी की और चोरी की हुई वस्तुओंके साथ नागरिकोंद्वारा मैं पकड़ लिया गया। मेरे अपराधपर मुझे वधदण्ड योग्य आज्ञा दी गयी। मेरे ऊपर मृत्युविजय नामका हिंसा करनेवाला मत्त हाथी छोड़ा गया। नागरिक समूहोंकी कलध्वनिसे द्विगुणित घण्टारवको करता हुआ वह मृत्युविजय हाथी

पालनाम्न उत्तमामात्यस्य शासनाज्जनकण्ठरवद्विगुणितघण्टारवो मण्डलित-हस्तकाण्डं समभ्यधावत् । अभिपत्य च मया निर्भयेन निर्भर्त्सितः परिणमन्दारुखण्डसुषिरानुप्रविष्टोभयभुजदण्डघटितप्रतिमानो भीतवन्न्यवर्तिष्ट ।

(३) भूयश्च नेत्रा जातसंरम्भेण निकामदारुणैर्वागङ्कुशपादपातैरभि-मुखीकृतः । मयापि द्विगुणाबद्धमन्युना निर्भर्त्स्याभिहतो निवृत्यापाद्रवत् ।

* बालविबोधिनी *

णितो वर्द्धितो घण्टारवो यस्य स इति मत्तहस्तिविशेषणम् । मण्डलितेति-मण्डलितो मण्डलाकारः कृतः हस्तकाण्डः शुण्डादण्डो यत्र तद् यथा तथेति क्रियाविशेषणम् । अभिपत्य-समीपमागत्य । निर्भर्त्सितः तर्जितः । परिणमन्-तिर्यग्दन्तप्रहारं कुर्वन् । तिर्यग्दन्तप्रहारस्तु गजः परिणतो मत इति कोषः । दारुखण्डेति-दारुखण्डस्य काष्ठशकलस्य सुषिरे छिद्रे अनुप्रविष्टाभ्यामन्तर्निहिताभ्यामुभयभुजदण्डाभ्यां घटितस्ताडितः प्रतिमानो दन्तयोरन्तरालभागो यस्यासौ । भीतवत्-भीत इव । न्यवर्तिष्ट-परावृत्तोऽभवत् स हस्तीति शेषः ।

(३) नेत्रा-हस्तिपकेन । जातसंरम्भेण-सञ्जातक्रोधेन । निकामदारुणैः-अतिकठोरैः । वागङ्कुशेति-वाग्वचनं संकेत इत्यर्थः अङ्कुशः सृणिः हस्तिनियन्त्रणार्थमस्त्रविशेषः, पादश्चरण स्तेषां पातैः पातनैराघातैरित्यर्थः । अभिमुखीकृतः मत्सम्मुखमानीतः । द्विगुणेति-द्विगुणं यथास्यात्तथा आबद्धः कृतो मन्यु-

* बालक्रीडा *

मेरी ओर झपटा । उस समय कामपाल नामक राज्यके प्रधान मन्त्री इस नगरके मुख्यद्वारके ऊपर बैठ करके उस दण्डका अनुशासन कर रहे थे । जब वह हाथी मेरी ओर लपका तो, मैंने निडर हो करके उस हाथीकी खूब तर्जना की और अपने दोनों भुजदण्डोंद्वारा काष्ठके टुकड़ेको उठा करके उस हाथीके दोनों दांतोंके अन्तरालमें ऐसा मारा कि, वह भयभीत हो करके पीछेको भागा ।

(३) पुनः महावत अति रोषयुक्त हो करके अत्यन्त कठिन तेज अङ्कुशके प्रहारोंसे तथा परुष वचनोंसे एवं अपने पैरोंके दबावसे उस हाथीको मेरे अभिमुख ले आया । मैंने भी पहिलेसे द्विगुणित क्रोधकेद्वारा उस हाथीको कठोर वचनोंसे भर्त्सित किया । ललकारके डरसे तथा मेरे द्वारा उसी काष्ठसे प्रहारित

अथ मयोपेत्य सरभसमाक्रुष्टो रुष्टश्च यन्ता 'हन्त, मृतोऽसि कुञ्जरापसद' इति निशितेन वारणेन वारणं मुहुर्मुहुरभिघ्नन्निर्याणभागे कथमपि मदभिमुखमकरोत् । अथावोचम्—'अपसरतु द्विपकीट एषः । अन्यः कश्चिन्मातङ्गपतिरानीयताम् येनाहं मुहूर्तं विहृत्य गच्छामि गन्तव्यां गतिम्' इति । दृष्ट्वैव स मां रुष्टमुद्गर्जन्तमुत्क्रान्तयन्तृनिष्ठुराङ्कुशः पलायिष्ट । मन्त्रिणा पुनरहमाहूयाभ्यधायिषि—'भद्र, मृत्युरे-

*** बालविबोधिनी ***

येन तेन-द्विगुणीकृतक्रोधेन । निर्भर्त्स्य सन्तर्ज्य । अभिहतस्ताड़ितः स गज इति शेष । निवृत्य-विमुखीभूय । अप्राद्रवत्-पलायिष्ट । अथ-गजपलायनान्तरम् । उपेत्य समीप गत्वा । सरभस-सवेगम् । आक्रुष्टस्तर्जितो निन्दित इति यावत् । अत एव मयि रुष्टः कुपितः । हन्तेति क्रोधसूचकमव्ययम् कुञ्जरापसद गजाधम । सम्बोधनम् । निशितेन तीक्ष्णेन । वारणेन-अङ्कुशेन । वारण हस्तिनम् । अभिघ्नन्-ताड़यन् । निर्याणभागे-अपाङ्गदेशे अभिघ्नन्नित्यनेनास्य सम्बन्धः कथमपि-अतिकष्टेन । मदभिमुखं मत्सम्मुखीनम् । अवोचमकथयमहं पूर्णभद्र इति शेषः । अपसरतु-दूरं गच्छतु । द्विपकीटः कीटकल्पो गजः । अन्यः अपरः । येन मातङ्गपतिना । विहृत्य-क्रीड़ित्वा । गन्तव्या प्राप्तव्या गति मरणमित्यर्थः । स हस्ती । उद्गर्जन्तमुच्चैराक्रोशन्तम् । उत्क्रान्तेति-उत्क्रान्ता लङ्घिता यन्तुराधोरणस्य निष्ठुरा कठोराशा येन तथा भूत. । अभ्यधायिषि-अभिहितः । मृत्युरेव-साक्षात्कृतान्त

*** बालक्रीडा ***

हो करके वह हाथी फिर भागा । इसके बाद मैंने महावतके समीप जा करके उसे खूब फटकारा । मेरे फटकारनेपर महावतने क्रोधकर अपने हाथीको ललकारते हुए कहा-"अरे ! गजाधम !! मरनेवाले !!! कहां भागते हो !" इत्यादि और उस हाथीको बार-बार तीक्ष्ण अङ्कुशोंसे ताड़ना दे करके किसी प्रकार मेरे-सम्मुख फिर ले आया । मैंने कहा-इस कीड़ेके सदृश हाथीको यहांसे दूर करो और कोई दूसरा हाथी मेरे सामने लाओ । जिसके साथ मैं क्रीडा करके अपनी मरणगतिको प्राप्त करूं । क्रोधयुक्त उच्च स्वरसे मुझे गरजते हुए देख करके वह हाथी अपने महावतके,अङ्कुशके प्रहारोंको न मान करके पीछेको ही भागने लगा । यह बात देख करके प्रधान मन्त्रीने मुझसे बुला करके कहा—'हे सौम्य ! यह

वैष मृत्युविजयो नाम हिंसाविहारी । सोऽयमपि तावत्त्वयैवंभूतः कृतः । तद्विरम्य कर्मणोऽस्मान्मलीमसात्किमलमसि प्रतिपद्यास्मानार्यवृत्त्या वर्तितुम्' इति ।

(४) 'यथाज्ञापितोऽस्मि' इति विज्ञापितोऽयं मया मित्रवन्मय्यवर्तिष्ट । पृष्टश्च मयैकदा रहसि जातविश्रम्भेणाभाषत स्वचरितम्—'आसीत्कुसुमपुरे राज्ञो रिपुंजयस्य मन्त्री धर्मपालो नाम विश्रुतधीः श्रुतऋषिः । अमुष्य पुत्रः सुमित्रो नाम पित्रैव समः प्रज्ञागुणेषु । तस्यास्मि द्वैमातुरः

* बालविबोधिनी *

एव । एवं भूतः-पलायनपरः । तत्तस्मात् । विरम्य-विरतो भूत्वा । अस्मात्कर्मण-श्चौर्यात् । मलीमसात्-मलिनाद् गर्हितादिति यावत् । अलं समर्थः । प्रतिपद्य प्राप्य । अस्मान्-मादृशान् । आर्यवृत्त्या-सदाचारेण । वर्तितुं स्थातुम् ।

(४) यथाज्ञापितोऽस्मि-यथा भवता आदिष्टं तथैव करिष्यामीत्यर्थः । विज्ञापित उक्तः । अयं मन्त्री । मित्रवत्-सुहृदिव । अवर्त्तिष्ट-व्यवाहरत् । जातविश्रम्भेण-समुत्पन्नविश्वासेन-मयेत्यस्य विशेषणम् । स्वचरितं निजचरित्रम् । अमात्यस्येति शेषः । कुसुमपुरे-पाटलिपुत्रे । रिपुञ्जयस्य शत्रुदमनस्य राजहंसस्य विश्रुतधीः प्रख्यातमतिः श्रुतऋषिः-अधीतवेदः । अमुष्य-धर्मपालस्य । समस्तुल्यः । प्रज्ञागुणेषु-बुद्धिगुणेषु । तस्य सुमित्रस्य । द्वैमातुरः वैमात्रेयः । वेशेषु-वे-

* बालक्रीडा *

हिंसाविहारी हाथी साक्षात् यमराज ही है । इस मृत्युविजय नामक हाथीकी भी आपने ऐसी दशा कर दी । अतः यदि आप इस गर्हित चौर्यवृत्तिको त्याग करके सदाचारयुक्त उत्तम कर्म करें और हम लोगोंसे व्यवहार करें तो, उचित हो ।

(४) मैंने उत्तर दिया-"जैसी आपकी आज्ञा हो वह मैं कर सकता हूं ।" मेरे इस प्रकारके कथनपर प्रधान मन्त्रीने मेरे साथ मित्रतुल्य व्यवहार करना आरम्भ किया । विश्वसित हो जानेपर मैंने उन प्रधान मन्त्रीसे एक बार एकान्तमें उनके जीवन चरितवृत्तान्तको पूछा । तब उन्होंने कहा-"पाटलिपुत्रके शत्रुदमनकारी राजा राजाहंसके विख्यात् बुद्धिवाले वेदवेत्ता धर्मपाल नामक एक मन्त्री था । उन मन्त्री धर्मपालके एक पुत्र सुमित्र नामक था जो पिताके सदृश ही बुद्धिमान् एवं गुणवान् था । उसी सुमित्रका मैं छोटा सौतेला भाई हूं । उस

कनीयान्भ्राताहम्। वेशेषु विलसन्तं मामसौ विनयरुचिरवारयत्। अवार्यदुर्नयश्चाहमपसृत्य दिङ्मुखेषु भ्रमन्यदृच्छयास्यां वाराणस्यां प्रमदवने मदनदमनाराधनाय निर्गत्य सह सखीभिः कन्दुकेनानुक्रीडमानां काशीभर्तुश्चण्डसिंहस्य कन्यां कान्तिमतीं नाम चकमे। कथमपि समगच्छे च।

(५) अथ छन्नं च विहरता कुमारीपुरे सा मयासीदापन्नसत्त्वा। कचित्सुतं च प्रसूतवती। मृतजात इति सोऽपविद्धो रहस्यनिर्भेदभयात्परिजनेन

* बालविबोधिनी *

श्यागृहेषु। विलसन्त विहरन्तम्। असौ सुमित्रः। विनयरुचिः विनीतस्वभावः। अवारयत्-तत्कर्मकर्त्तुं निषिद्धवान्। अवार्यदुर्नयः-अप्रतिविधेय-दुश्चेष्टः। अपसृत्य-पलाय्य। दिङ्मुखेषु दिगन्तरेषु। यदृच्छया दैववशात्। प्रमदवने-क्रीड़ोद्याने। मदनदमनाराधनाय-शिवपूजार्थम्। कन्दुकेन-गेन्दुकेन। अनुक्रीडमाना-अनुखेलन्तीम्। काशीभर्त्तुः काशीपतेः। चकमे-अभिलषितवान्। कथमपि-केनापि प्रकारेण। समगच्छे-सम्मिलितोऽभवम्।

(५) छन्नं गुप्तम्। कुमारीपुरे-कन्यान्तःपुरे। सा कान्तिमती नाम्नी राजकन्या। आपन्नसत्त्वा-सञ्जातगर्भा। प्रसूतवती-जनयामास। मृतजातः गर्भे एव मृतः। इति-इत्युक्त्वा। स बालकः। अपविद्धः परित्यक्तः। रहस्येति-रहस्यस्य

* बालक्रीडा *

विनीतरुचिवाले सुमित्रने वेश्याओंके घरोंमें विहार करनेवाले मुझको रोका। जब मैंने सोचा कि, यह दुश्चरित्र मेरे बिना परदेश गये न छूटेगा। तब, मैं वहांसे हटा और दिशा विदिशाओंमें भ्रमण करते हुए भाग्यवश इस काशी नगरीमें आया। अपने प्रासादसे बाहर निकल करके भगवत्विश्वनाथ पूजनके निमित्त क्रीडोद्यानमें सखियोंके साथ गेंद खेलती हुई काशिराज चण्डसिंहकी राजकुमारी कान्तिमतीको मैंने देखा और रमणकी अभिलाषा उत्पन्न हो गयी। किसी रीतिसे उस कुमारीके साथ समागम हो गया और मैं कन्यान्तःपुरमें गुप्त रीतिसे जा करके रमण करने लगा।

(५) कुछ दिनोंमें वह मेरे साथ रमण करनेसे गर्भवती होगयी। और एक पुत्रको उत्पन्न किया। रहस्यका भेद प्रकाशित न हो जाय इस भयसे सखीवर्गने

क्रीडाशैले शबर्या च श्मशानाभ्याशं नीतः । तयैव निवर्तमानया निशीथे राजवीथ्यामारक्षिकपुरुषैरभिगृह्य तर्जितया दण्डपारुष्यभीतया निभिन्नप्रायं रहस्यम् । राजाज्ञया निशीथेऽहमाक्रीडनगिरिदरीगृहे विश्रब्धप्रसुप्तस्तयोपदर्शितो यथोपपन्नरज्जुबद्धः श्मशानमुपनीय मातङ्गोद्यतेन कृपाणेन

* बालविबोधिनी *

गोप्यस्य निर्भेदः प्रकाशस्तस्य भयाद् भीतेः । परिजनेन–सखीवर्गेण । क्रीडाशैले–क्रीड़ापर्वते । शबरी भिल्ली तया । श्मशानाभ्याशं–श्मशानसमीपम् । तया–शबर्या । निवर्त्तमानया–श्मशानात्परावर्त्तमानया । निशीथेऽर्धरात्रे । राजवीथ्यां राजमार्गे । अभिगृह्य–धृत्वा । तर्जितया–भीषितया । दण्डपारुष्यभीतया–दण्डस्य पारुष्यं कठोरता तेन भीतया त्रस्तया । निर्भिन्नप्रायं–बाहुल्येन प्रकाशितम् । आक्रीडनेति–क्रीड़ापर्वतगुहायाम् । विश्रब्धप्रसुप्तः-विश्वासपूर्वकं निद्रितः । अहमिति शेषः । तया शबर्या । उपदर्शितः प्रदर्शितः । यथोपपन्नेति–यथोपपन्नया तत्काललब्धया रज्ज्वा श्रृंखलेन बद्धः संयतः । मातङ्गोद्यतेन–चण्डालोत्थापितेन । कृपाणेन–खड्गेन प्राजिहीर्ष्ये–प्रहर्त्तुमिष्टः । प्रपूर्वकहृधातोः सन्नन्तात्कर्मणिलङ् । नियतिबलात्–भाग्यप्रभावात् । लूनबन्धः–छिन्नबन्धनः । तमसिं खड्गं मयि प्रहृतमित्यर्थः । आच्छिद्य–मातङ्गहस्तादाकृष्य । अन्त्यजं–चण्डालम् अन्यान्–तत्साहा-

* बालक्रीडा *

उस बालकको 'मरा हुआ' उत्पन्न हुआ है ऐसा प्रख्यात् करके क्रीड़ापर्वतपर विसर्जित कर दिया । एक भीलनीद्वारा बालक श्मशानके समीप लाया गया । वह भीलनी जब आधी रातमें उस बालकको श्मशानमें धर करके लौट रही थी । तब राजमार्गमें रक्षापुरुषोंद्वारा पकड़ ली गयी तथा डांटी–फटकारी गयी । भीषण दण्डके भयसे उस भीलनीने सब रहस्यकी बातें प्रकाशित कर दीं । राजाज्ञासे मैं क्रीड़ापर्वतकी गुफामें निश्शंक हो करके सो रहा था । उसी समय भीलनी द्वारा पथके प्रदर्शनसे आये हुए रक्षापुरुषोंने मुझे तत्काल प्राप्तकी हुई रस्सीसे बाधा और श्मशान ले आये । वहां मेरे ऊपर चाण्डालकेद्वारा खड्गसे प्रहार कराया गया । दैववशात् उस चाण्डालके खड्गसे मेरे ऊपरकी बंधी रस्सी कट गयी और स्वच्छन्द होकर मैंने उस चाण्डालसे खड्ग छीन लिया ।

प्राजिहीर्ष्ये । नियतिबललालूनबन्धस्तमसिमाच्छिद्यान्त्यजं तदन्यांश्च कांश्चित्प्रहृत्यापासरम् । अशरणश्च भ्रमन्नटव्यामेकदाश्रुमुख्या कयापि दिव्याकारया सपरिचारया कन्ययोपास्थायिषि ।

(६) सा मामञ्जलिकिसलयोत्तंसितेन मुखविलोलकुन्तलेन मूर्ध्ना प्रणम्य मया सह वनवटद्रुमस्य कस्यापि महतः प्रच्छायशीतले तले निषण्णा, 'कासि वासु, कुतोऽस्यागता, कस्य हेतोरस्य मे प्रसीदसी' ति साभि-

* बालविबोधिनी *

व्यकारिणः । अशरणो निराश्रयः । अटव्यामरण्ये । अश्रुमुख्या-साश्रुवदनया । कयापि-अनिर्दिष्टनामिकया । दिव्याकारया—दिव्यः स्वर्गीय आकार आकृतिर्यस्यास्तया । सपरिचारया-परिचरणं परिचारः शुश्रूषा, अत्र तु शुश्रूषोपकरणं तेन सह वर्तमानया । उपास्थायिषि-सङ्गतोऽभवम् ।

(६) सा कन्या । अञ्जलिकिसलयेति-अञ्जलिरेव किसलयः पल्लवस्तेनोत्तंसितो भूषितस्तेन । शिरस्यञ्जलिं बद्ध्वेत्यर्थः । मुखेति-मुखे वदने विलोलाश्चञ्चलाः कुन्तलाः केशा यस्य तादृशेन । विशेषणद्वयमिदं मूर्ध्नेत्यस्य । वनवटद्रुमस्यारण्यकवटवृक्षस्य । प्रच्छायशीतले-प्रच्छायेन विस्तृतच्छायया शीतले शिशिरे । तले अधःप्रदेशे निषण्णा समुपविष्टा । का-किं-नामधेया कस्य वा कन्या । वासु-बाले । कुतः कस्मात्स्थानात् । कस्य हेतोः-केन प्रयोजनेन । अस्य मे-एतावदवस्थस्य मम । प्रसीदसि-प्रसन्ना भवसि । साभिलाषं-सानुरागम् । आभाषिता उक्ता

* बालक्रीडा *

उस चाण्डालको तथा उसके अन्य सहायकोंको मार करके भाग निकला । मैं निराश्रय हो करके अरण्योंमें घूमने लगा । एक समय अरण्यमें दिव्यरूपवाली अश्रुमुखी कोई एक कन्या मेरे समीप आयी जिसके साथ एक परिचारिका भी थी

(६) उस कन्याने अपने दोनों करपल्लवोंकी अञ्जलिको शिरोभूषण बना करके अपने बिखरे बालोंवाले शिरसे मुझे प्रणाम किया । अरण्यके एक बड़े वट वृक्षके नीचे उसकी शीतल छायामें मेरे साथ बैठी । मैंने पूछा—हे बाले ! आप कौन हैं ! कहांसे आगमन हुआ है ! किस कारणसे आप मेरे ऊपर इतनी प्रसन्न हो रही हैं । इस प्रकार सानुराग पूछनेवालेपर अर्थात् मुझपर उस कन्याने अपने

लापमाभाषिता मया वाङ्मयं मधुवर्षमवर्षत्—'आर्ये' नाथस्य यक्षाणां मणिभद्रस्यास्मि दुहिता तारावली नाम । साहं कदाचिदगस्त्यपत्नीं लोपामुद्रां नमस्कृत्यापावर्तमाना मलयगिरेः परेतावासे वाराणस्याः कमपि दारकं रुदन्तमद्राक्षम् । आदाय चैनं तीव्रस्नेहान्मम पित्रोः संनिधिमनैषम् । अनैपीच्च मे पिता देवस्यालकेश्वरस्यास्थानीम् ।

(७) अथाहमाहूयाज्ञप्ता हरसखेन, 'वाले वालेऽस्मिन्कीदृशस्ते भावः'

* बालविबोधिनी *

सतीत्यर्थः । वाङ्मयं–वचनरूपम् । मधुवर्षं–मधुवृष्टिम् । यक्षाणां नाथस्य–यक्षाणां प्रधानस्य मणिभद्रस्य । साहं–मणिभद्रकन्या तारावली । अपावर्त्तमाना–प्रत्यागच्छन्ती । मलयगिरेः मलयपर्वतात् । दाक्षिणात्येषु श्रीशैलेऽगस्त्यस्य निवास इति पुराणप्रसिद्धम् । परेतावासे–श्मशाने । कमपि–एकम् । दारकं–शिशुम् । रुदन्तं क्रन्दन्तम् । आदाय गृहीत्वा । एनं-दारकम् । तीव्रस्नेहात्-अत्यधिकवात्सल्यात् । पित्रोः–मातापित्रोः । अनैपं नीतवती । अलकेश्वरस्य–कुवेरस्य । आस्थानीं–सभाम् ।

(७) अहं–तारावली । हरसखेन कुवेरेण । कुवेरस्त्र्यम्बकसख इत्यमरः वाले–वत्से, सम्बोधनमेतत् । द्वितीयस्य 'वाले' इत्यस्य वालके इत्यर्थः । भावः–स्नेहः । औरसे–औरसपुत्रे इव । वत्से–वाले । वत्सलता-वात्सल्यं स्नेह इति

* वालक्रीडा *

वचनरूपी मधुको वरसाया । 'हे आर्य ! मैं यक्षराज मणिभद्रकी तारावली नामकी पुत्री हूं। एक समय मैं, अगस्त्य ऋषिकी भार्या लोपामुद्राको प्रणाम करके मलयागिरिसे लौट रही थी कि, काशीकी श्मशान-भूमिमें किसी एक शिशुको रोते हुए, देखा । अत्यन्त वात्सल्य प्रेमके कारण मैं उस शिशुको उठा करके अपने माता-पिताके समीप ले आयी । मेरे पिताजी उस शिशुको राजराज (कुवेर) के दरवारमें ले गये ।

(७) महादेवके सखा कुवेरने मुझे वुला करके पूछा–"हे वाले ! हे वाले !! इस शिशुपर तेरा क्या भाव है ?" मैंने उन्हें सूचित किया कि, मुझे इस शिशुपर अपने औरस पुत्रके समान वात्सल्यप्रेम है । "हे कृपापात्रि ! तुमने सत्य

इति। 'औरस इवाभिन्यत्से वत्सलता' इति मया विज्ञापितः "सत्यमाह वराकी' इति तन्मूलामतिमहतीं कथामकरोत्। तत्रैतावन्मयावगतम् 'त्वं किल शौनकः शूद्रकः कामपालश्चाभिन्नः। बन्धुमती विनयवती कान्तिमती चाभिन्ना। वेदिमत्यार्यदासी सोमदेवी चैकैव। हंसावली शूरसेना सुलोचना चानन्या। नन्दिनी रङ्गपताकेन्द्रसेना चापृथग्भूता। या किल शौनकावस्थायामग्निसाक्षिकमात्मसात्कृता गोपकन्या सैव किलार्यदासी पुनश्चाद्य तारावलीत्यभूवम्।

*** बालविबोधिनी ***

यावत्। विज्ञापितः कथितः-कुबेरः इति शेषः। वराकी-अनुकम्पार्हा। तन्मूला दारकसम्बन्धिनीम्। तत्र तस्यां कथायाम्। एतावत्-एतदेव। त्वं किलेत्यादित्वमेव शौनकः शूद्रकः कामपालश्चैक एव। अस्मिन् जन्मनि यस्त्वं कामपालनामासि स एव पूर्वजन्मनि शूद्रकनामाऽभवस्तत्पूर्वजन्मनि च शौनकनामासीरतोऽभिन्न एवेत्यर्थः। बन्धुमत्यादयो द्वादश क्रमेण तवैव भार्या अभवन्। शौनकस्य बन्धुमती वेदिमती हंसावलीनन्दिन्याख्याश्चतस्रः, शूद्रकस्य विनयवत्यार्यदासीशूरसेना रङ्गपताकाख्याश्चतस्रः कामपालस्य च कान्तिमती सोमदेवी सुलोचनेन्द्रसेनाख्याश्चतस्रो भार्या अभवन्। या खलु बन्धुमती जन्मान्तरे सैव जन्मान्तरे वेदिमती सैव पुनर्हंसावली सैव नन्दिनी। एवमेव विनयवत्यादयोऽपि अतस्ता अपि अभिन्ना एवेति तात्पर्यम्। शौनकावस्थायां शौनकजन्मनि। अग्निसाक्षिकम्-अग्निं साक्षीकृत्य। आत्मसात्कृता विवाहिता त्वयेतिशेषः। गोपकन्या

*** बालक्रीडा ***

कहा। ऐसा कह करके उन कुबेर भगवान्ने उस शिशुसम्बन्धिनी एक बड़ी कथा कही। उस कथासे मुझे ये बातें विदित हुईं। आप ही शौनक, शूद्रक और कामपाल हैं-अर्थात् इस जन्ममें आप अर्थपाल हैं ~~इसके पूर्वमें कामपाल थे~~ उसके पूर्वमें शौनक थे और उसके पूर्वमें शूद्रकरूपमें थे। इसी तरह बन्धुमती, विनयवती, और कान्तिमती भी यथाक्रमसे वेदिमती, आर्यदासी और सोमदेवी थीं और इसके पूर्व हंसावली, शूरसेना और सुलोचना थीं एवं उसके पूर्व नन्दिनी, रङ्गपताका और इन्द्रसेना थीं। शौनकावस्थामें जिस गोपकन्यासे

(८) बालश्च किल शूद्रकावस्थे त्वय्यार्यदास्यवस्थायां मय्युदभूत् । अवर्ध्यत च विनयवत्या स्नेहवासनया । स तु तस्यां कान्तिमत्यवस्थाया-मद्योदभूत् । एवमनेकमृत्युमुखपरिभ्रष्टं दैवान्मयोपलब्धं तमेकपिङ्गादेशाद्वने तपस्यतो राजहंसस्य देव्यै वसुमत्यै तत्सुतस्य भाविचक्रवर्तिनो राज-

* बालविबोधिनी *

आभीरदुहिता । सैव गोपकन्यैव । आर्यदासी-तव शूद्रकावस्थायामार्यदासीनाम्नी समभवदित्यर्थः । अद्य पुन-रिदानीन्तु तारावलीनाम्नाहमभूवम् । आर्यदास्येव जन्मान्तरे तारावल्यभवदिति भावः ।

(८) बालः—पूर्ववर्णितः शिशुः । शूद्रकावस्थे-शूद्रकरूपधारिणि । त्वयि-कामपाले इत्यर्थः । आर्यदास्येति-आर्यदासीरूपायाम् । मयि-तारावल्यामित्यर्थः । उदभूत्-उत्पन्नः । अवर्ध्य तपोषितोऽभवत् । विनयवत्या-शूद्रकस्य प्रथमपत्न्या । स्नेहवासनया-वात्सल्यभावेन । स तु-स एव बालकः । तस्यां विनयवत्याम् । कान्तिमत्यवस्थायां-या खलु शूद्रकावस्थायां विनयवती सैवास्मिञ्जन्मनि कामपालावस्थायां कान्तिमती जातेत्यर्थः । एवम्-अनेन प्रकारेण । अनेकेति अनेकाद् बहोर्मृत्युमुखात्कृतान्तवदनात्परिभ्रष्टं च्युतम् । तमित्यस्य विशेषणम् । दैवात् दैवसंयोगात् । मया-तारावल्या । उपलब्धं प्राप्तम् । तं बालम् । एकपिङ्गादेशात्-कुवेराज्ञया । तपस्यतः तपस्यां कुर्वतः । देव्यै-महिष्यै । गुरुभिः पित्रादिभिः । अभ्यनुज्ञाता-आदिष्टा । कृतान्तयोगाद् दैववशात् । कृतान्तमुखभ्रष्टस्य-यममुखान्निर्ग-

* बालक्रीडा *

अग्निकी साक्षी दे करके आपने विवाह किया था वही आर्यदासी हुई और वही इस समय तारावली नामक मैं हूं ।

(८) जब मैं आर्यदासी थी और आप शूद्रक थे उस अवस्थामें यह पुत्र मुझसे उत्पन्न हुआ था । विनयवतीद्वारा यह बालक स्नेहसे पालन-पोषण किया गया । वही पुत्र इस समय कान्तिमती अवस्थामें उत्पन्न हुआ है । इसी रीतिसे अनेकों बार मृत्युके मुखसे बच करके यह बालक भाग्यवश मुझे प्राप्त हुआ है । उस बालकको राजराज कुवेरके आदेशसे राजहंसके भावी पुत्र चक्रवर्ती राजवाहनकी परिचर्याके लिए राजहंसकी देवीको समर्पण कर दिया है जो राज-

वाहनस्य परिचर्यार्थं समर्प्य गुरुभिरभ्यनुज्ञाता कृतान्तयोगात्कृतान्तमुख-भ्रष्टस्य ते पादपद्मशुश्रूषार्थमागतास्मि' इति।

(९) श्रुत्वा तामनेकजन्मरमणीमसकृदाश्लिष्य हर्षाश्रुमुखो मुहुर्मुहुः सान्त्वयित्वा तत्प्रभावदर्शिते महति मन्दिरेऽहर्निशं भूमिदुर्लभान्भोगानन्वभूवम्। द्वित्राणि दिनान्यतिक्रम्य मत्तकाशिनीं तामवादिषम्—'प्रिये, प्रत्यपकृत्य मत्प्राणद्रोहिणश्चण्डसिंहस्य वैरनिर्यातनसुखमनुबुभूषामि' इति। तया सस्मितमभिहितम्—'एहि कान्त, कान्तिमतीदर्शनाय नयामि

* बालविबोधिनी *

तस्य कृतान्तो यमसिद्धान्तयोरिति कोषः। ते-तव कामपालस्येति यावत्। इत्यन्त तारावली वचनम्।

(९) तां तारावलीम्। अनेकेति-अनेकेषु जन्मसु पत्नीभूताम्। असकृद् वार वारम्। हर्षाश्रुमुखः-प्रमोदवाष्पपूर्णाननः। सान्त्वयित्वा-आश्वास्य। तत्प्र भावेति—तस्यास्तारावल्याः प्रभावेण यक्षकन्यात्वात् तदुचितसामर्थ्येन दर्शिते प्रकटीकृते। भूमिदुर्लभान्-पृथिव्यामलभ्यान्-स्वर्गीयानित्यर्थः। द्वित्राणि कतिपयानि। अतिक्रम्य व्यतीत्य। तां तारावलीम्। प्रत्यपकृत्य-प्रत्यपकारं विधाय। मत्प्राणद्रोहिणः-मज्जीवितजिघांसोः। वैरनिर्यातनसुखं-वैरशुद्धिजनितमानन्दम्।

* बालक्रीडा *

वाहन इस समय वनमें तपस्या कर रहे हैं। गुरुवर्ग की आज्ञानुसार दैववश मैं यमराजके मुखसे बच करके आपके चरण-कमलोंकी सेवाके हेतु यहां-पर आयी हूं।

(९) तारावलीको अपनी अनेक जन्मोंकी रमणी श्रवण करके उसका बेर-बेर आलिंगन किया तथा आनन्दाश्रुओंको बहाते हुए उसे सान्त्वना दी एवं उसी यक्ष कन्या तारावली द्वारा प्रदर्शित एक विशाल सदनमें रात-दिन स्वर्गीय सुख भोगने लगा। कुछ दिनोंको बिता करके मैंने उस उत्तम वनिता से कहा---'हे प्रिये! मेरे प्राणोंके साथ द्रोह करनेवाला जो चण्डवर्मा है उसके साथ अपकार करके वैरशुद्धिजनित आनन्दको प्राप्त करना चाहता हूं।' उसने हंस करके उत्तर दिया 'हे कान्त! यहां आओ! कान्तिमतीको दिखानेके

त्वाम्' इति । स्थितेऽर्धरात्रे राज्ञो वासगृहमनीये । ततस्तच्छिरोभागवर्तिनीमादायासियष्टिं प्रबोध्यैनं प्रस्फुरन्तमब्रवम्—'अहमस्मि भवज्जामाता । भवदनुमत्या विना तव कन्याभिमर्शी । तमपराधमनुवृत्त्या प्रमार्ष्टुमागतः' इति ।

(१०) सोऽतिभीतो मामभिप्रणम्याह—'अहमेव मूढोऽपराद्धः यत्तव दुहितृसंसर्गानुग्राहिणो ग्रहग्रस्त इवोत्क्रान्तसीमा समादिष्टवान्व-

* बालविबोधिनी *

अनुबुभूषामि–अनुभवितुमिच्छामि । तया–तारावल्या । कान्त–नाथेति सम्बोधनम् । स्थिते–अवशिष्टे । राज्ञः चण्डसिंहस्य । अनीये–नीतः अहमिति शेषः । तच्छिरोभागवर्तिनीं–राजशिरोदेशावस्थिताम् । प्रबोध्य–जागरयित्वा । एनं राजानं चण्डसिंहम् । प्रस्फुरन्तम्=कम्पमानम् । अनुमत्या–सम्मत्या– । कन्याभिमर्शी–बलात्कारेण तवकन्यां परामृष्टवानहमिति शेषः । अनुवृत्त्या–परिचर्यया । प्रमार्ष्टुं–क्षालयितुम् ।

(१०) स चण्डसिंहः । मां कामपालम् । यः अहम् । दुहितृसंसर्गेति—दुहितुः कन्यायाः संसर्गेण संपर्केणागृह्णातीत्येवं शीलस्य कन्यासम्बन्धेन कृपापरस्येत्यर्थः । ग्रहग्रस्तः–ग्रहाविष्टः । उत्क्रान्तसीमा अतिक्रान्तमर्यादः । आस्तां

* बालक्रीडा *

लिये मैं तुम्हें ले चलती हूं ।' आधी रातके समय वह मुझे राज प्रासादमें ले गयी । तदनन्तर सोये हुये राजा चण्डसिंहके सिरहानेकी ओर रखी हुई तलवारको मैंने अपने हाथमें उठा लिया और राजाको जगा दिया । जगनेपर मुझे देख करके कांपनेवाले उस राजासे मैंने कहा—'मैं आपका दामाद (जामाता) हूं । मैंने आपकी विना अनुमतिके आपकी पुत्रीसे सम्बन्ध कर लिया है । उसी अपराधको आपकी परिचर्याद्वारा प्रक्षालित करनेके लिये मैं यहां आया हूं ।

(१०) राजाने अत्यन्त भयभीत हो करके मुझे प्रणाम किया और कहा–'मैं स्वयं ही मूर्ख हूं । मैंने ही आपका अपराध किया है । क्योंकि कन्याके साथ सम्पर्क करनेवाले आपपर मैंने पागल की तरह क्रोधाभिभूत हो करके अतिक्रान्त मर्यादावालेके सदृश व्यवहार किया—वधकी आज्ञा सुनायी । अब उस

धम् । तदास्तां कान्तिमती राज्यमिदं मम च जीवितमध्यप्रभृति भवदधीनम्' इत्यवादीत् । अथापरेद्युः प्रकृतिमण्डलं संनिपात्य विधिवदात्मजाया पाणिमग्राहयत् । अश्रावयच्च तनयवार्तां तारावली कान्तिमत्यै, सोमदेवीसुलोचनेन्द्रसेनाभ्यश्च पूर्वजातिवृत्तान्तम् । इत्थमहं मन्त्रिपदापदेशं यौवराज्यमनुभवन्विहरामि विलासिनीभिः' इति ।

(११) स एव मादृशेऽपि जन्तौ परिचर्यानुबन्धी बन्धुरेकः, सर्वभूतानामलसकेन स्वर्गते श्वशुरे, ज्यायसि च श्याले चण्डघोषनाम्नि

* बालविबोधिनी *

तिष्ठतु । प्रकृतिमण्डलं प्रजावर्गम् । संनिपात्य-एकत्रीकृत्य प्रजाना समक्षमित्यर्थः । विधिवद् विध्युक्तमार्गेण । आत्मजायाः कन्यायाः कान्तिमत्याः । पाणिमग्राहयत् । विवाहमकारयत् मयेति शेषः । तनयवार्तां पुत्रवृत्तान्तम् । पूर्वजातिवृत्तान्तं पूर्वजन्मपरिचयादिकम् । इत्थमनेन प्रकारेण । मन्त्रिपदापदेशं मन्त्रिपदस्यापदेशश्छलं यत्र तदिति यौवराज्यविशेषणम् । मन्त्रिव्याजेन यौवराज्यमेव अनुभवामीत्यर्थः । विलासिनीभिः कामिनीभिरित्यन्तं कामपालवाक्यम् ।

(११) स एवमित्यादि पुनः कथयति पूर्णभद्रः । स कामपालः । एवम् अनेन प्रकारेण । जन्तौ—जन्तुसदृशे निकृष्टे मयि । परिचर्यानुबन्धी—सेवापरायणः ।

* बालक्रीडा *

चर्चाको त्याग दीजिये । और आजसे यह कान्तिमती कन्या, मेरा सम्पूर्ण राज्य तथा जीवन आपके ही आधीन समझिये । एव ऐसा कहनेके पश्चात् उस राजा ने दूसरे दिन अपने प्रजावर्गको एकत्र करके अपनी कन्या कान्तिमती का विवाह मेरे साथ शास्त्रानुसार सम्पन्न कर दिया । तारावलीने उस शिशु-वृत्तको कान्तिमती देवीसे कह सुनाया । सोमदेवी सुलोचना और इन्द्रसेना प्रभृतिसे भी पूर्वजन्मका परिचय वृत्त सुना दिया । इस रीतिसे मैं सचिवपदके व्याज (छल) से यौवराज्यसुखोंको भोगता हुआ विलासिनियोंके साथ नित्य रमण किया करता हूं ।

(११) पुनः पूर्णभद्रने कहना प्रारम्भ किया । मेरे ससुर राजा चण्डसिंहके स्वर्गगामी हो जानेपर, मेरे सदृश पुरुषके वर्तमान होनेपर भी, अपने स्वामी-

स्त्रीष्वतिप्रसङ्गात्प्रागेव क्षयक्षीणायुषि, पञ्चवर्षदेशीयं सिंहघोषनामानं कुमारमभ्यषेचयत्। अवर्धयच्च विधिनैनं स साधुः। तस्याद्य यौवनोन्मादिनः पैशुन्यवादिनो दुर्मन्त्रिणः कतिचिदासन्नन्तरङ्गभूताः । तैः किलासावित्थमग्राह्यत—'प्रसह्यैव स्वसा तवामुना भुजङ्गेन संगृहीता पुनः प्रसुप्ते राजनि प्रहर्तुमुद्यतासिरासीत् । तेनास्मै तत्क्षणप्रबुद्धेन भीत्यानु-

* बालविबोधिनी *

बन्धुः मित्रभूतः। सर्वभूतानां सर्वप्राणिनाम् बन्धुरित्यनेनान्वयः। अलसकेन क्षयरोगेण। क्षयस्त्वलसको मत इति कोपः। स्वर्गते मृते। श्वशुरे चण्डसिंहे। ज्यायसि ज्येष्ठे। श्याले श्यालके पत्नीसहोदरे इति यावत्। अतिप्रसङ्गाद् अत्यासक्तेः प्रागेव पितृमरणात्पूर्वमेव। क्षयक्षीणायुषि—क्षयेण क्षयरोगेण क्षीणमल्पमायुर्जीवितकालो यस्य तस्मिन्। सतीति शेषः। अभ्यषेचयद् राज्येऽभिषेकमकारयत्। एनं सिंहघोषनामानं कुमारम्। स साधु महात्मा कामपालः। तस्य सिंहघोषस्य। अद्य साम्प्रतम्। यौवनोन्मादिनः—तारुण्यमदगर्वितस्य। पैशुन्यवादिनः—पैशुन्यं खलत्वं वदन्ति प्रकटयन्ति ये तथाभुताः दुर्जना इत्यर्थः। दुर्मन्त्रिणो दुष्टामात्याः। कतिचित् कतिपये जनाः। आसन् अभवन्। अन्तरङ्गभूताः आप्ततराः। तै दुर्मन्त्रिभिः। असौ सिंहघोषः। इत्थं वक्ष्यमाणप्रकारेण। अग्राह्यत—अबोध्यत। प्रसह्य—बलात्। स्वसा भगिनी—कान्तिमतीत्यर्थः। अमुना—कामपालेन। भुजङ्गेन विटेन धूर्त्तेनेति यावत्। प्रसुप्ते—निद्रिते। राजनि चण्डसिंहे तव पितरीत्यर्थः। प्रहर्त्तुं हन्तुम्। उद्यतासिः—उत्थापितखड्गः। तेन तव पित्रा। अस्मै कामपालाय। तत्क्षणप्रबुद्धेन—तत्कालजागरितेन। देव-

* बालक्रीडा *

की सेवामें परायण तथा सभी प्राणियोंका मित्रभूत सुयोग्य कामपालने पांच बरससे भी छोटी अवस्थावाले सिंहघोष नामक राजकुमारको गद्दीपर बैठा दिया—राज्याभिषेक कर दिया। क्योंकि मेरा बड़ा साला चण्डघोष अति स्त्रीप्रसंग करनेके कारण क्षयरोगी हो गया था और उसीसे वह पिताके सामने ही अल्पायु हो करके मर गया था। उस विवेकी महात्मा कामपालने सिंहघोषका यथाविधि

नीय दत्ता कन्या। स च देवज्येष्ठं चण्डघोषं विषेण हत्वा बालोऽयमसमर्थ इति त्वमद्यापि प्रकृतिविश्रम्भणायोपेक्षितः। क्षिणोति च पुरा स कृतघ्नो भवन्तम्। तमेवान्तकपुरमभिगमयितुं यतस्व' इति।

(१२) स तथा दूषितोऽपि यक्षिणीभयान्नामुष्मिन्पापमाचरितुमशकत्। एषु किल दिवसेष्वयथापूर्वमाकृतौ कान्तिमत्याः समुपलक्ष्य राज-

* बालविबोधिनी *

ज्येष्ठं भवदग्रजम्। बाल' शिशुरयं सिंहघोषः अतोऽसमर्थोऽयमिति कृत्वा। प्रकृतिविश्रम्भणाय-प्रजानां विश्वासोत्पादनार्थम्। उपेक्षितः त्यक्तः। क्षिणोति च पुरा-त्वयं नेष्यति। यावत्पुरा निपातयोरिति भविष्यत्सामीप्ये लट्। कृतघ्न' अकृतज्ञः। तं कामपालम्। अन्तकपुरं यमालयम्। अभिगमयितुं प्रापयितुम्।

(१२) स सिंहघोषः। दूषितः भेदं गमितः। यक्षिणीभयात्-तारावलीभयेन। अमुष्मिन् कामपाले। पापमाचरितुं अनिष्टं विधातुम्। एषु वर्तमानेषु। अयथापूर्वं प्रागलक्षितं विकारभावम्। आकृतौ-आकारे। राजमहिषी-सिंहघोष

* बालक्रीडा *

पालन-पोषण करके उसे बड़ा किया। उक्त कुमार सिंहघोषके इस समय कई अन्तरंगभूत दुष्ट मन्त्री हैं जो उसे तारुण्यमें मदोन्मत्त कर रहे हैं तथा खराब सिखा रहे हैं। उन मन्त्रियोंके द्वारा उसने निम्नांकित बातें ज्ञात की हैं—इस विट कामपालने आपकी बहिनको जबर्दस्ती ग्रहण किया है। पुनः सुप्तावस्थामें आपके पिता राजा चण्डसिंहको मारनेके लिये तैयार हुआ।

तब उन्होंने उस समय जाग करके मारे भयके अपनी पुत्रीका इसके साथ विवाह कर दिया। आपके बड़े भाई चण्डघोषको जहर दे करके मरवा डाला। आपको बालक जान करके तथा प्रजाकी प्रतीति प्राप्त्यर्थ छोड़ दिया। यह कृतघ्न आपका भी नाश करेगा—मार डालेगा। अतः इसीको यमपुरी पहुँचानेका प्रयत्न करना आपका कार्य है।

(१२) वह राजकुमार सिंहघोष गुप्त रहस्यको ज्ञात करके भी यक्षिणी तारावलीके भयसे कन्यादूषक उस कामपालको मारनेमें असमर्थ रहा। इन दिवसोंमें कान्तिमतीकी आकृतिमें विचित्र परिवर्त्तन देख करके राजा सिंहघोषकी रानी

महिषी सुलक्षणा नाम सप्रणयमपृच्छत्—'देवि, नाहमायथातथ्येन विप्रलम्भनीया। कथय तथ्यं केनेदमयथापूर्वमाननारविन्दं तवैषु वासरेषु' इति। सा त्ववादीत्—'भद्रे, स्मरसि किमद्याप्यायथातथ्येन किंचिन्मयोक्तपूर्वम्। सखी मे तारावली सपत्नी च किमपि कलुषिताशया मद्गोत्रापदिष्टा प्रणयमप्युपेक्ष्य रहसि भर्त्रा प्रणम्यमानाप्यस्माभिरुपोढमत्सरा प्रावसत्। अवसीदति च नः पतिः। अतो मे दौर्मनस्यम्' इति।

(१३) तत्प्रायेणैकान्ते सुलक्षणया कान्तया कथितम्। 'अथासौ

* बालविबोधिनी *

पत्नी। आयथातथ्येन-अवास्तवकथनेन। विप्रलम्भनीया-प्रतारणीया। तथ्यं-सत्यम्। केन-केन हेतुना। सा कान्तिमती। स्मरसि किमित्यादि-तव समीपे मया कदापि असत्यं नैवोक्तमिति भावः। उक्तपूर्वं-पूर्वमुक्तम्। किमपि-किञ्चित्। कलुषिताशया मलिनाभिप्राया-विरक्तभावेति यावत्। मद्गोत्रापदिष्टा—मदीयनाम्ना समाहूता। गोत्रस्खलनेन तु सपत्नीनामीर्ष्या संजायतइति प्रसिद्धम्। प्रणयम्-अस्मासु प्रीतिम्। उपेक्ष्य-अगणयित्वा। प्रणम्यमाना-सप्रणाममावेद्यमाना। उपोढमत्सरा-सञ्जातद्वेषा। प्रावसत्-देशान्तरं गतवती। अवसीदति-अवसादं गच्छति-क्लिश्यतीति यावत्। दौर्मनस्यं-दुःखितचित्तत्वम्।

(१३) तत् कान्तिमत्या दौर्मनस्य कारणम्। प्रायेण-बाहुल्येन। कथितं

* बालक्रीडा *

सुलक्षणाने विनम्र भावसे पूछा—'हे देवि! मुझे झूठ कह करके मत ठगो अपितु सत्य बताओ। किस कारणसे इन दिनों तुम्हारा मुख कमल मुरझा गया है?' वह कान्तिमती बोली-'हे साध्वि! क्या आपको स्मरण आता है कि, मैं आपसे कभी भी झूठ बोली हूं। मेरी सखी तारावली यक्षिणी जो मेरी सपत्नी भी है। वह बड़ी मलिनाभिप्रायवाली है। कदाचित्, एकान्तमें पतिद्वारा मेरे नामसे उसे सम्बोधित किया गया। बस, इसी बातपर वह रुष्ट हो गयी। इसपर पतिदेवने प्रणाम भी किया। किन्तु, उसका क्रोध शान्त न हुआ और मारे ईर्ष्याके वह कहीं दूर देश चली गयी। इस हेतुसे मेरे पति उदास रहते हैं और पतिकी उदासीसे मैं भी उदास रहती हूं।

(१३) इन बातोंको सुलक्षणाने अपने पतिसे बहुलतासे एकान्तमें कह

निर्भयोऽद्य प्रियतमाविरहपाण्डुभिरवयवैर्धैर्यस्तम्भिताश्रुपर्याकुलेन चक्षुषोष्मश्वासशोषिताभिरिवानतिपेशलाभिर्वाग्भिर्वियोगं दर्शयन्तम्, कथमपि राजकुले कार्याणि कारयन्तम्, पूर्वसङ्केतितैः पुरुषैरभिग्राह्यान्वयत्। तस्य किल स्थाने स्थाने दोषानुद्घोष्य तथोद्धरणीये चक्षुषी यथा तन्मूलमेवास्य मरणं भवेत्' इति। अतोऽत्रैकान्ते यथेष्टमश्रु मुक्त्वा तस्य

* बालविबोधिनी *

सिंहघोषायेति शेषः असौ सिंहघोषः। निर्भयः-तारावलीप्रवासाद् भीतिरहितः। प्रियतमेति-प्रियतमायास्तारावल्याविरहेण विच्छेदेन पाण्डुभिर्विवर्णैः। अवयवै रङ्गैः। धैर्येति-धैर्येण धीरतया स्तम्भितमवरुद्ध अश्रु नेत्रजलं तेनाकुल व्याप्त तेन। उष्मश्वासेति-उष्मश्वासेन दीर्घनिःश्वासवायुना शोषिताभिः क्षीणाभिः। अनतिपेशलाभिः—अनतिकोमलाभिः। वियोगं विरहम्। दर्शयन्तं प्रकटयन्तम्। कथमपि अतिकष्टेन। कारयन्तं साधयन्तं कामपालमिति शेषः। पूर्वसङ्केतितैः प्राक्सूचितैः। अभिग्राह्य ग्राहयित्वा। अयन्धयत् बन्धनमनयत्। तस्य कामपालस्य। उद्घोष्य-प्रकटीकृत्य। तथा तेन प्रकारेण। उद्धरणीये-उत्पाटनीये। यथा येन प्रकारेण। तन्मूलं-नेत्रोत्पाटनहेतुकम्। अस्य कामपालस्य। अतः अस्मात्कारणात्। एकान्ते निर्जने। यथेष्टं यथेच्छम्। तस्य साधो -कामपालस्य। पुरोऽग्रे। परिकरं बध्नामि-उद्योग करोमि। इत्यन्त

* बालक्रीडा *

दिया। तत्पश्चात् निर्भय हो करके राजा सिंहघोषने उस कामपालको प्राक्सूचित (पूर्वसङ्केतित) राजपुरुषोंकेद्वारा पकड़वा करके कारागारमें डाल दिया जो कामपाल अपनी प्रियतमा तारावलीके वियोगसे पाण्डुवर्ण शरीरवाला हो रहा था, धीरतासे रोके हुए आंसुओंसे व्याकुल नेत्रवाला तथा उष्ण श्वासोंसे सूखी काठीवाला एवं कठोरवाणीके बोलनेसे अपने हृदयकी पीड़ाको दर्शानेवाला और येनकेनप्रकारेण राजकुलके राजकार्योंको करनेवाला दिखाई दे रहा था। उसके दोषोंको स्थान-स्थानपर उद्घोषित कराया गया। इन अपराधोंके बदले यह आज्ञा सुनायी गयी। "उसकी आंखें इस तरीकेसे निकाली जाय जिससे

साधोः पुरःप्राणान्मोक्तुकामो बध्नामि परिकरम्' इति ।

(१४) मयापि तत्पितृव्यसनमाकर्ण्य पर्यश्रुणा सोऽभिहितः— 'सौम्य, किं तव गोपायित्वा । यस्तस्य सुतो यक्षकन्यया देवस्य राजवाहनस्य पादशुश्रूषार्थं देव्या वसुमत्या हस्तन्यासः कृतः सोऽहमस्मि । शक्ष्यामि सहस्रमपि सुभटानामुदायुधानां हत्वा पितरं मोचयितुम् । अपि तु संकुले यदि कश्चित्पातयेत्तदङ्गे शस्त्रिकां सर्व एव मे यत्नो भस्मनि हुतमिव भवेत्' इति ।

*** बालविबोधिनी ***

पूर्णभद्रवचनम् । इतः परमर्थपालवचनं बोद्धव्यम् ।

(१४) मया–अर्थपालेन । पितृव्यसनं पितुर्विपदम् । पर्यश्रुणा–रुदता । सः पूर्णभद्रः । गोपायित्वा अपह्नुत्य । तव पुरो गोपनेनालमिति भावः । तस्य कामपालस्य । यक्षकन्यया–तारावल्या । हस्तन्यासः हस्ते निःक्षेपः । सः–सुतः । सुभटानां सुयोद्धॄणाम् । उदायुधानां गृहीतशस्त्राणाम् । अपि तु किन्तु । संकुले–जनसंकटे । पातयेत्–निःक्षिपेत् । तदंगे–मत्पितुः शरीरे । भस्मनि हुतमिव–निरर्थकमित्यर्थः ।

*** बालक्रीडा ***

उसकी मृत्यु हो जाय यह भी प्रयत्न किया गया ।"

उस पूर्णभद्रने इस प्रकारसे वृत्तको सुना करने कहा—"इसी क्लेशके कारण यहां निर्जनमें खूब आंसुओंको बहा करके उस विवेकी कामपालके आगे अपने प्राणोंको त्यागनेका उद्योग कर रहा हूं ।

(१४) मैंने (अर्थपालने) अपने पिताजीके इन दुःखोंको श्रवण करके रोते हुए उस पूर्णभद्रसे कहा--'हे भद्र ! अब आपसे गुप्त रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है । जिस बालकको यक्षकन्या तारावली देव राजवाहनकी पाद शुश्रूषा करनेके लिये रानी वसुमतीके हाथमें धर आयी थी । वह कामपालका पुत्र मैं ही हूँ । मुझमें इतनी शक्ति है कि, सहस्रों शस्त्रसज्जित योधाओंको मार करके पिताको बचा सकता हूं । किन्तु, जनसमूहमें यदि कोई मेरे पिताके शरीरपर प्रहार कर देगा तो, मेरा यह प्रयास भस्ममें होमके सदृश विफल हो जायगा ।

(१५) अनवसितवचन एव मयि महानाशीविषः प्राकाररन्ध्रेणोदैरयच्छिरः। तमहं मन्त्रौषधबलेनाभिगृह्य पूर्णभद्रमब्रवम्—'भद्र, सिद्धं नः समीहितम्। अनेन तातमलक्ष्यमाणः संकुले यदृच्छया पातितेन नाम दशयित्वा तथा विषं स्तम्भयेयं यथा मृत इत्युदास्येत। त्वया तु मुक्तसाध्वसेन माता मे बोधयितव्या—'यो यद्या वने देव्या वसुमत्या हस्तार्पितो युष्मत्सूनुः सोऽनुप्राप्तः पितुरवस्थां मदुपलभ्य बुद्धिबलादित्थमा-

* बालविबोधिनी *

(१५) अनवसितवचने—असमाप्तवाक्ये। आशीविषः सर्पः। प्राकाररन्ध्रेण—भित्तिच्छिद्रेण। उदैरयत्—ऊर्ध्वीचकार। तं सर्पम्। मन्त्रौषधिबलेन—मन्त्रौषधिप्रभावेण। अभिगृह्य—धृत्वा। समीहितम्—अभिलषितम्। अनेनेति—संकुले जनसबाधे अलक्ष्यमाणोऽन्यैरदृश्योऽहं यदृच्छया स्वेच्छया पातितेन निःक्षिप्तेनानेन सर्पेण तातं पितरं कामपालमित्यर्थः. दशयित्वा दष्टं कारयित्वा विषं तथा तेन प्रकारेण स्तम्भयेयं निश्चलं कुर्यां यथा येन प्रकारेण मृतो विनष्ट इति जनैरुदास्येतोपेक्ष्येत। त्वया पूर्णभद्रेण। मुक्तसाध्वसेन—त्यक्तभयेन। माता—कान्तिमती। यो युष्मत्सूनुः भवत्याः पुत्रः। यद्या तारावल्या। वसुमत्या—राजहंसमहिष्या। अनुप्राप्तः समागतः। मत्—मम सकाशात्। बुद्धि बलाद् बुद्धिप्रभावात्। इत्थ-

* बालक्रीडा *

(१५) मेरा वाक्य पूरा भी न हो पाया था कि, प्राकार (चहार दीवारी) की दीवालके छेदमेंसे एक बडे भारी सापकी मूड़ी दिखाई दी। उस सापको मैंने अपने मन्त्र और औषध बलसे पकड़ लिया और पूर्णभद्रसे कहा—'हे सौम्य! अब मेरा अभिलषित मनोरथ सिद्ध हो गया। जिस समय जन समूह एकत्र हो जायगा। उसी समय मैं अदृश्य हो करके स्वेच्छासे इस सापको अपने पिता कामपालके ऊपर छोड़ करके उनको दंशित करा दूंगा। फिर उसके विषको स्तम्भित करा करके पिताको मृततुल्य प्रदर्शित करूंगा और इस कारणसे सभी उदास हो जायगे। आप निर्भय हो करके मेरी माता कान्तिमतीसे कह दीजियेगा कि, आपका वह पुत्र जिसे राजवाहनकी परिचर्याके लिये रानी वसुमतीकी हाथमें यक्षिणी सौंप आयी थी, इस जगहपर आ गया है तथा अपने

चरिष्यति । त्वया तु मुक्तत्रासया राज्ञे प्रेषणीयम्—'एष खलु क्षात्रधर्मो यद्बन्धुरबन्धुर्वा दुष्टः स निरपेक्षं निग्राह्य इति । स्त्रीधर्मश्चैष यद्दुष्टस्य दुष्टस्य वा भर्तुर्गतिर्गन्तव्येति । तदहममुनैव सह चिताग्निमारोक्ष्यामि । युवतिजनानुकूलः पश्चिमो विधिरनुज्ञातव्यः' इति ।

(१६) स एवं निवेदितो नियतमनुज्ञास्यति । ततः स्वमेवागारमानीय काण्डपटीपरिक्षिप्ते विविक्तोद्देशे दर्भसंस्तरणमधिशाय्य स्वयं कृतानुमर-

* बालविबोधिनी *

वक्ष्यमाणप्रकारम् । त्वया कान्तिमत्या । मुक्तत्रासया—त्यक्तशंकया । राज्ञे सिंहघोषाय । प्रेषणीयं—वाचिकं सन्देष्टव्यम् । क्षात्रधर्मः क्षत्रियाणां नियमः । निरपेक्षं निर्विचारम् । निग्राह्यः निग्रहीतव्यः दण्डनीय इति यावत् । गतिः पदवी । गन्तव्या—अनुसर्त्तव्या । अमुना—मद्भर्त्रा कामपालेन । युवतिजनानुकूलः स्त्रीजनोचितः । पश्चिमः अन्त्यश्चरम इति यावत् । । विधिः दाहादिः । अनुज्ञातव्यः—आदेष्टव्यः ।

(१६) सः सिंहघोषः निवेदितः ज्ञापितः । नियतमवश्यम् । अनुज्ञास्यति—अनुमोदिष्यते । काण्डपटीति—जवनिकापरिवृते । विविक्तोद्देशे—-निर्जनप्रदेशे । दर्भसंस्तरणं—कुशरचितशय्याम् । अधिशाय्य-शाययित्वा । स्वयंकृतेति-

* बालक्रीडा *

पिताकी दशा, मेरे द्वारा, ज्ञात करके अपनी बुद्धिकी शक्तिसे उक्त रीतिसे व्यवहार करेगा । आप (माताजी) राजाके समीप निर्भय हो करके यह कहला दीजिये कि, "यह क्षत्रियोंका धर्म है कि, बन्धु हो अथवा अबन्धु हो जो भी दुष्ट कार्य करे उसे दण्ड देना चाहिये । महिलाओंका भी यह धर्म है कि, उनका पति योग्य हो अथवा अयोग्य हो उसकी मृत्युके पश्चात् उसीकी गतिका अनुगमन करें । अत एव मैं अपने पतिके साथ चिताग्निमें प्रवेश करूंगी । युवतियोंके लिये श्रेयस्कर इस पिछली विधि को करनेकी आप मुझे आज्ञा दें ।"

(१६) वह राजा ऐसे निवेदनपर अवश्य आज्ञा दे देगा । इसके अनन्तर सर्पसे दंशित पिताजीको अपने गृहमें ला करके परदेके अन्दर एकान्त स्थलमें कुशोंके आसनोंपर सुला दूंगा । आप भी (मातजी) उस समय सती होनेवाले

णमण्डनया त्वया च तत्र सन्निधेयम्। अहं च वाह्यकक्षागतस्त्वया प्रवेशयिष्ये । ततः पितरमुज्जीव्य तदभिरुचितेनाभ्युपायेन चेष्टिष्यामहे' इति । स 'तथा' इति हृष्टतरस्तूर्णमगमत् । अहं तु घोषणस्थाने चिञ्चावृक्षं घनतरविपुलशाखमारुह्य गूढतनुरतिष्ठम् । आरूढश्च लोको यथायथमुच्चैः स्थानानि । उच्चावचप्रलापाः प्रस्तुताः ।

(१७) तावन्मे पितरं तस्करमिव पश्चाद्बद्धभुजमुद्धुरध्वनिमहाजना-

* बालविबोधिनी *

स्वयमेव नलन्येन कृतं रचितमनुमरणस्य सहमरणस्य मण्डनं भूषणं यथा तथाभूतया । त्वया—कान्तिमत्या । सन्निधेयं—संनिधौ स्थातव्यम् । अहं अर्थपालः । बाह्यकक्षागतः—बहिः प्रकोष्ठस्थितः । प्रवेशयिष्ये—प्रविष्टो भविष्यामि । प्रपूर्वकविशधातोर्णिजन्तात्कर्मणि लृट् । पितरं—कामपालम् । उज्जीव्य—जीवयित्वा । तदभिरुचितेन—पितुरभिमतेन । इत्यन्तं मातरमुद्दिश्य पूर्णभद्रंप्रति अर्थपालवचनम् । स पूर्णभद्रः । अहं—अर्थपालः । घोषणस्थाने-यत्र डिण्डिमेन घोषणा क्रियते तत्र । चिञ्चावृक्षं—तिन्तिडीवृक्षम् । घनतरविपुलशाखम्—सान्द्रतरविशालविटपम् । चिञ्चावृक्षविशेषणमेतत् । गूढतनुः—गुप्तशरीरः । लोकः—दर्शकजनः । उच्चावचप्रलापाः—नानाविधालापाः । प्रस्तुता आरब्धाः ।

(१७) तावत्—एतदभ्यन्तरे । उद्धुरेति—उद्धुरः संकुलो ध्वनिः शब्दो यस्य

* बालक्रीडा *

योग्य वेशको सजा करके उसी स्थलके समीपमें उपस्थित रहें । मैं भी उसी स्थलके बाहरी दरवाजेपर बैठा रहूंगा, आप मुझे भीतर करा लीजियेगा । तत्पश्चात् मैं पिताजीको जिला करके उनकी इच्छाके अनुसार जो उचित यत्न होगा सो करूंगा । वह पूर्णभद्र "तथा" स्वीकार है ऐसा कह करके तत्क्षण ही प्रसन्न वदन होकर उस जगह से चला गया । मैं गुप्त रीतिसे सांपको ले करके एक विशाल तथा घनी शाखावाले तिन्तिड़ीवृक्षके ऊपर जा बैठा । इसी स्थान पर मेरे पिताके नेत्र निकालनेकी घोषणा की गयी थी । अनेकों स्त्री पुरुष यथा योग्य ऊँचे-ऊँचे स्थानोंपर बैठ करके तमाशा देखनेके लिये एकत्र हो गये थे। नाना रूपोंमें नाना वार्त्ताएं सुनायी देती थीं ।

(१७) इतनेमें ही भीड़के साथ आगे-आगे मेरे पिता कामपालको चोरके

नुयातमानीय मदभ्याश एव स्थापयित्वा मातङ्गस्त्रिरघोषयत्—'एष मन्त्री कामपालो राज्यलोभाद्भर्तारं चण्डसिंहम्, युवराजं चण्डघोषं च विषान्नेनोपांशु हत्वा पुनर्देवोऽपि सिंहघोषः पूर्णयौवन इत्यमुष्मिन्पापमाचरिष्यन्विश्वासाद्रहस्यभूमौ पुनरमात्यं शिवनागमाहूय स्थूणमङ्गारवर्षं च राजवधायोपजप्य तैः *स्वामिभक्त्या विवृतगुह्यो "राज्यकामुकस्यास्य ब्राह्मणस्यान्धतमसप्रवेशो न्याय्य"* इति प्राड्विवाकवाक्यादक्ष्युद्धरणाय

* बालविबोधिनी *

तादृशो यो महाजनो जनसमूहस्तेनानुयातमनुसृतम् । मदभ्याशे-मत्समीपे । मातङ्गः-चण्डालः । त्रिः-त्रिवारम् । उपांशु-निर्जने । अमुष्मिन्-सिंहघोषे । विश्वासात्-विश्वासमास्थायेति ल्यब् लोपे पंचमी । रहस्यभूमौ-निर्जनप्रदेशे । स्थूणोऽङ्गारवर्षश्चेति द्वौ राजानुचरौ उपजप्य-भेदयित्वा । तैः शिवनागादिभिः । विवृतगुह्यः-प्रकाशितगुप्तरहस्यः । कामपालविशेषणमेतत् । राज्यकामुकस्य राज्याभिलाषिणः । अन्धतमसप्रवेशः-अन्धतमसे घोरान्धकारे प्रवेशो मृत्युरित्यर्थः । न्याय्यः उचितः । प्राड्विवाकवाक्यात् । व्यवहारद्रष्टुरादेशात् । अक्ष्युद्धारणाय

* बालक्रीडा *

समान पीछे हाथ करके बांधे हुए बड़े कोलाहलके साथ (चाण्डाल) वहांपर मेरे समीपमें ही ले आये और वहांपर पिताको खड़ा करके चाण्डालोंने तीन बार जोरसे चिल्लाकरके कहा—"इस सचिव कामपालने राज्यके लोभसे राजा चण्डसिंह और उनके बड़े लड़के चण्डघोषको विषसे मिश्रित अन्न खिला करके मार डाला । अब इसने पूर्ण तरुणावस्थासे परिव्यास महाराज सिंहघोषको मारनेका पापाचरण किया और विश्वास दिला करके महाराजके मन्त्री शिवनाग तथा अनुचर स्थूण अंगारवर्षका राजासे भेदभाव करा दिया और उन लोगोंसे एकान्तमें राजाके वध रूप गुप्त रहस्यको प्रकट कर दिया । परन्तु, उन दोनों स्वामि-भक्तोंने इस बातको अस्वीकार कर दिया और इस रहस्यका भण्डाफोड़ भी कर दिया । राज्याभिलाषी इस ब्राह्मणको घोरान्धकारमें प्रवेश करा करके मार डाला जाय । यही-उचित है । अतः न्यायाधीशके आदेशानुसार इसकी

नीयते। पुनरन्योऽपि यदि स्यादन्यायवृत्तिस्तमप्येवमेव यथार्हेण दण्डेन योजयिष्यति देवः' इति।

(१८) श्रुत्वैतद्बद्धकलकले महाजने पितुरङ्के प्रदीप्तशिरसमाशीविषं व्यक्षिपम्। अहं च भीतो नामावप्लुत्य तत्रैव जनादनुलीनः क्रुद्धव्यालदष्टस्य तातस्य विहितजीवरक्षां विषं क्षणादस्तम्भयम्। अपतच्चैष भूमौ मृतकल्पः। प्रालपं च 'सत्यमिदं राजावमानिनं दैवो दण्ड एव स्पृशतीति। यदयमक्षिभ्यां विनावनिपेन चिकीर्षितः, प्राणैरेव वियोजितो विधिना'

* बालविबोधिनी *

नयनोत्पाटनाय। नीयते वध्यभूमिमिति शेषः। अन्योऽपि-अपरोऽपि। अन्यायवृत्तिः-दुष्टाचारः। यथार्हेण-यथायोग्येन।

(१८) बद्धकलकले-आरब्धकोलाहले। प्रदीप्तशिरसं-उदीर्णफणम्। व्यक्षिपं विक्षिप्तवान्। भीतो नाम भीत इव। नामेत्यलीकसम्भावनायाम्। अवप्लुत्य-विटपवृक्षादवरुह्य। जनादनु-जनस्य पश्चात् लीनः गुप्तः। क्रुद्धव्यालदष्टस्य-कुपितसर्पभक्षितस्य। विहितेति-विहिता कृता जीवस्य प्राणस्य रक्षा येन सः। एषः मत्पिता। मृतकल्पः-मृततुल्यः। प्रालपं-अकथयम्। सत्यमिदमित्यादि-, इदं वक्ष्यमाणं वाक्यं सत्यं यथार्थं यत्-दैवो देवपातितो दण्ड एव राजावमानिनं राजापथ्यकारिणं जनं स्पृशतीति। अयं मन्त्री कामपालः अवनिपेन राज्ञा अक्षि-

* बालक्रीडा *

आँखें निकालनेके लिये हम लोग ले आये हैं। यदि भविष्यमें कोई भी ऐसा अपराध करेगा तो, वह भी इसी प्रकार राजदण्ड पावेगा।

(१८) इस वृत्तको श्रवण करनेके पश्चात् ज्यों ही कोलाहल शुरू हुआ त्यों ही मैंने अपने पिता कामपालके शरीरपर विशाल फनवाले नागको गिरा दिया। उतर करके मैंने उन्हीं दर्शकोंकी भीड़में क्रुद्ध नागके द्वारा दंशित पिताको अपने मन्त्रौषधिके प्रभावसे उसी-क्षण स्तम्भित कर दिया—जिससे नागका विष चढ़ने न पावे। वे मेरे पिता पृथिवीपर मृतकके तुल्य गिर पड़े वहां यह चर्चा (प्रलाप) भी मैंने प्रारम्भ कर दी कि, अवश्य इस कामपालने अपराध किया है और उसका प्रतिफल भी इसे ईश्वरने दे दिया। राजाने तो, इसे नेत्रहीन बनानेकी

इति । मदुक्तं च केचिदन्वमन्यन्त, अपरे पुनर्निनिन्दुः । दर्वीकरस्तु तमपि चण्डालं दष्ट्वा रूढत्रासद्रुतलोकदत्तमार्गः प्राद्रवत् ।

(१९) अथ मदम्बा पूर्णभद्रबोधितार्था तादृशेऽपि व्यसने नातिविह्वला कुलपरिजनानुयाता पद्भ्यामेव धीरमागत्य मत्पितुरुत्तमाङ्गमुत्सङ्गेन धारयन्त्यासित्वा राज्ञे समादिशत्—'एष मे पतिस्तवापकर्ता न वेति दैवमेव जानाति । न मेऽनयास्ति चिन्तया फलम् । अस्य तु पाणिग्राहकस्य

* बालविबोधिनी *

भ्या विना नेत्ररहितश्चिकीर्षितः कर्त्तुमिष्टः । विधिना दैवेन पुनः प्राणैरेव वियोजितः पृथक् कृतः । मदुक्तं एतन्ममवचनम् केचित्–कतिपये अन्वमन्यन्त–अनुमोदितवन्तः । अपरे–केचन । दर्वीकरः सर्पः । दष्ट्वा दंशनं कृत्वा । रूढ़त्रासेति–रूढ़ उत्पन्नो यस्त्रासो भयं तेन द्रुतः पलायितो यो लोकस्तेन दत्तो मार्गो निर्गमनाय पन्था यस्य सः । प्राद्रवत् पलायिष्ट ।

(१९) पूर्णभद्रेति–पूर्णभद्रेण बोधितो ज्ञापितोऽर्थो विषयो यस्याः सा । तादृशे–तथाविधे दारुणे । व्यसने–विपदि । नातिविह्वला–नातिव्याकुला । कुलपरिजनानुयाता–स्ववंशीयसखीजनपरिवृता । धीरं-मन्दम् । उत्तमाङ्गं मस्तकम् । उत्संगेन–क्रोड़देशेन । आसित्वा–उपविश्य । अपकर्ता–अपकारी । फलं–प्रयोजनम् ।

* बालक्रीडा *

आज्ञा दी थी, किन्तु, दैवने इसके प्राणोंको ही हर लिया ।" उपर्युक्त मेरे कथनका कोई अनुमोदन करते थे और कोई-कोई इस कथनकी निन्दा करते थे । उस भयंकर नागने चाण्डालको भी डस लिया और जब नागके डरसे भीड़ भागी तो, रास्ता पा करके वह नाग भी भाग गया ।

(१९) तदनन्तर मेरी माता कान्तिमती जिन्हें पूर्णभद्रद्वारा सारा वृत्त ज्ञात हो चुका था, ऐसे कष्टके समयमें भी नहीं घवड़ायीं (व्याकुल न हुईं) तथा अपने वंशके परिजनोंके साथ मन्द-मन्द पावोंसे मेरे पिताके शिरको अपनी गोदमें घर करके बैठ गयीं । और राजाके समीप प्रार्थना भेजी कि, "ये मेरे पति आपके अपकारी हैं अथवा नहीं, यह तो केवल परमेश्वर ही जानते हैं । इस बातकी चिन्ता करनेसे मुझे कोई फल नहीं । यदि मैं अपने इस पाणिग्रहण

गतिमननुप्रपद्यमाना भवत्कुलं कलङ्कयेयम्'। अतोऽनुमन्तुमर्हसि भर्त्रा सह चिताधिरोहणाय माम्' इति। श्रुत्वा चैतत्प्रीतियुक्तः समादिशत्क्षितीश्वरः—'क्रियतां कुलोचितः संस्कारः। उत्सवोत्तरं च पश्चिमं विधिसंस्कारमनुभवतु मे भगिनीपतिः' इति।

(२०) चण्डाले तु मत्प्रतिषिद्धसकलमन्त्रवादिप्रयासे संस्थिते 'कामपालोऽपि कालदष्ट एव' इति स्वभवनोपनयनममुष्य स्वमाहात्म्यप्रकाशनाय महीपतिरन्वमंस्त। आनीतश्च पिता मे विविक्तायां भूमौ दर्भशय्यामधिशाय्य स्थितोऽभूत्।

* बालविबोधिनी *

पाणिग्राहकस्य–पत्युः। अननुप्रपद्यमाना–अनभिसरन्ती। भवत्कुलं–भवद्गोत्रम्। कलङ्कयेयं–मालिन्याङ्कितं कुर्याम्। एतत्कुलोत्पन्ना सती यदि मृतस्य पत्युरनुगमनं न करिष्यामि तर्हि ऐहिकसुखासक्ता पातिव्रत्योचितं नानुष्ठितवतीति जना मां निन्दिष्यन्तीति भावः। अनुमन्तुं अनुज्ञातुम्। उत्सवोत्तरं–उत्सवप्रधानम्। पश्चिमम्–अन्त्यम्। विधिसंस्कारम्–अन्त्येष्टिपद्धत्युक्तदाहक्रियाम्।

(२०) चण्डाले–पूर्वमेव सर्पदष्टे घोषणाकारिणि। मत्प्रतिषिद्धेति–मयाऽर्थपालेन प्रतिषिद्धो रुद्धः सकलानां मन्त्रवादिनां गारुडिकानां प्रयासो विषापहरणप्रयत्नो यस्मिन्–तथा भूते। संस्थिते–मृते सति। अमुष्य–कामपालस्य। स्वमाहात्म्य प्रकाशनाय–स्वकीयोदारताप्रकटनार्थम्। अन्वमंस्त–अनुमोदितवान्।

* भावबोधिनी *

करनेवाले पतिकी गतिका अनुसरण न करूंगी तो, मैं आपके कुलको कलङ्कित करनेवाली कहलाऊँगी। अत एव आप पतिके साथ चितामें अधिरोहण करनेकी मुझे अनुमति देने योग्य हैं। इन बातोंको सुन करके राजाने प्रेमपूर्वक आदेश दिया कि, "वंशके अनुकूल संस्कार करिये और उत्सव मनानेके अनन्तर कहा कि, मेरी बहिनके पतिका अन्तिम संस्कार विधिसे हो।

(२०) मुझे छोड़ करके औरसभी मन्त्रशास्त्रियोंने उस दंशित चाण्डालकी झाड़-फूंक की, किन्तु, वह सब व्यर्थ सिद्ध हुई। 'कामपालको भी कालने ही डस लिया है' ऐसा ज्ञातकरके राजाने अपनी उदारता दिखानेके लिए कामपालको घर ले जानेकी अनुमति दे दी। लोगोंने मेरे पिताको ला करके एकान्त

(२१) अथ मदम्बा मरणमण्डनमनुष्ठाय सकरुणं सखीरामन्त्र्य, मुहुरभिप्रणम्य भवनदेवता यत्ननिवारितपरिजनाक्रन्दिता पितुर्मे शयनस्थानमेकाकिनी प्राविक्षत् । तत्र च पूर्वमेव पूर्णभद्रोपस्थापितेन च मया वैनतेयतां गतेन निर्विषीकृतं भर्तारमैक्षत । हृष्टतमा पत्युः पादयोः पर्यश्रुमुखी प्रणिपत्य मां च मुहुर्मुहुः प्रस्नुतस्तनी परिष्वज्य सहर्षबाष्पगद्गदमगदत्—'पुत्र, योऽसि जातमात्रः पापया मया परित्यक्तः, स किमर्थमेवं मामतिनिर्घृणामनुगृह्णासि । अथवैष निरपराध एव ते जन-

* बालविबोधिनी *

(२१) मरणमण्डनं-मृत्युकालोचितभूषणम् । सखीः-सहचरीः । भवनदेवताः-गृहदेवताः । अभिप्रणम्येत्यस्य कर्म । यत्ननिवारितेति-यत्नेन निवारितं परिजनस्य स्वजनवर्गस्याक्रन्दितं विलापो यया सा । वैनतेयतां गरुड़ताम् । गतेन-प्राप्तेन । गारुड़विद्यायां कुशलेनेत्यर्थः । निर्विषीकृतं-विषशून्यम् । पर्यश्रुमुखी-परिगतमश्रु नयनजलं यत्र तादृशं मुखं यस्याः सा । प्रणिपत्येत्यस्य पत्युः पादयोरित्यनेन सम्बन्धः । प्रस्नुतस्तनी-स्रवत्पयोधरा । सहर्षेति-हर्षेणानन्देन सह यद्बाष्पमश्रु तेन गद्गदम् । जातमात्रः उत्पन्न एव । किमर्थं-कथम् । एवं एतेन प्रकारेण-पत्युः प्राणदानेनेति भावः । अतिनिर्घृणाम्-अतिनिष्करुणाम् । जनयिता-पिता कामपालः । युक्तमुचितम् । अस्य पितुः । अन्तकाननात्-मृत्यु-

* बालक्रीडा *

पृथिवीतलपर कुशाकी शय्यापर लिटा दिया ।

(२१) तदन्तर मेरी माता कान्तिमतीने मृत्युकालका वेष रच करके करुणायुक्त होकर सहचरीवर्गोंको बुलाया । वनदेवताको बार-बार प्रणाम किया । यत्नके साथ अपनी सहचरियोंके विलापको रोका । मेरे पिताके शयनगृहमें प्रवेश किया । वहांपर मैंने पहलेसे ही पूर्णभद्रके प्रबन्धसे गारुड़विद्याद्वारा पिताको विषरहित बना दिया । उन पिताजीके उन्होंने दर्शन किये। हर्षित हो करके उन्होंने आंखोंमें आंसू भरकर अपने पतिके पैर पड़े । स्तनोंसे दूध टपकाती हुई (मेरी माता) मेरा बार-बार आलिंगन करके तथा हर्षाश्रुओंसे गदगद होकर बोलीं—"हे पुत्र ! तुम क्यों अति निष्करुणा करनेवाली मुझपर दया करते हो ? क्यों

यिता। युक्तमस्य प्रत्यानयनमन्तकाननात्। क्रूरा खलु तारावली या त्वामुपलभ्यापि तत्त्वतः कुबेरादसमर्प्य मह्यमर्पितवती देव्यै वसुमत्यै सैव वा सदृशकारिणी। नहि तादृशाद्भाग्यराशेर्विना मादृशो जनोऽल्पपुण्यस्तत्राऽर्हति कलप्रलापामृतानि कर्णाभ्यां पातुम्। एहि, परिष्वजस्व' इति भूयोभूयः शिरसि जिघ्रन्त्यङ्कमारोपयन्ती, तारावलीं गर्हयन्त्यालिङ्गयन्त्य-श्रुभिरभिषिञ्चती चोत्कम्पिताङ्गयष्टिरन्यादृशीव क्षणमजनिष्ट।

*** बालविबोधिनी ***

मुखात्। क्रूरा-निर्दया। उपलभ्य-ज्ञात्वा। तत्त्वतः-याथार्थ्येन। कुबेरादिति-कुबेरेणैवार्थपालस्य जन्मवृत्तान्तः प्रकाशित आसीदिति भावः। असमर्प्य-अदत्त्वा। सैव-तारावल्येव। सदृशकारिणी-उचितविधात्री। तादृशात्-वसुमतीरूपात्। भाग्यराशेः-प्रचुरसौभाग्यशालिजनात्। विना योगे पञ्चमी। अल्पपुण्यः-अल्पं पुण्यं यस्यासौ। कलप्रलापेति-कलोऽव्यक्तमधुरो यः प्रलापो भाषणं तदेवामृतं सुधा तानि। पातुं-श्रोतुमित्यर्थः। जिघ्रन्ती-घ्राणं कुर्वती। अङ्कमारोपयन्ती-अर्थपालं उत्सङ्गे समुपवेशयन्ती। गर्हयन्ती-निन्दन्ती। अभिषिञ्चती-आर्द्रीकुर्वती मामिति-शेषः। उत्कम्पितेति-उत्कम्पिता जातोत्कम्पा अङ्गयष्टिः शरीरलता यस्याः सा। अन्यादृशी-अन्याकारा। क्षणं-मुहूर्त्तं व्याप्य। अजनिष्ट-जाता।

*** बालक्रीडा ***

कि मुझ पापिनीने तो, तुम्हें उत्पन्न होते ही परित्याग दिया था। अथवा तुम्हारा पिता कामपाल निरपराधी है। इनको कालके मुखसे बचा लेना योग्य ही है। तारावली यक्षिणी भी बड़ी निठुर है। जिसने भगवान् कुबेरकेद्वारा तुम्हारा पूर्ण परिचय पा करके भी मुझे समर्पित न किया। अपितु, देवी वसुमतीको समर्पण किया जो उसीके समान योग्य धात्री हैं। बिना ऐसी भाग्यशालिनीके मेरे समान अल्प पुण्यवाले व्यक्ति तुम्हारे अव्यक्त मधुर भाषणरूपी सुधाको कर्णोंद्वारा पान नहीं कर सकते हैं। यहा आओ आलिंगन दो। इस प्रकारसे उन्होंने पुनः पुनः मेरे शिरको सूंघते हुए मुझे गोदमें बिठाया। तारावलीकी निन्दा करते हुए मेरा आलिंगन किया। आसुओंसे मुझे भिगाया। शरीर को कंपाते हुए क्षणभर अपूर्व आकृति दर्शायी।

(२२) जनयितापि मे नरकादिव स्वर्गम्, तादृशाद्व्यसनात्तथाभूतमभ्युदयमारूढः पूर्णभद्रेण विस्तरेण यथावृत्तान्तमावेदितो भगवतो मघवतोऽपि भाग्यवन्तमात्मानमजीगणत् । मनागिव च मत्संबन्धमाख्याय हर्षविस्मितात्मनोः पित्रोरकथयम्—'आज्ञापयतं कात्र नः प्रतिपत्तिः' इति । पिता मे प्राब्रवीत्—'वत्स, गृहमेवेदमस्मदीयमतिविशालप्राकारवलयमक्षय्यायुधस्थानम् । अलङ्घ्यतमा च गुप्तिः । उपकृताश्च मयाति-

* बालविबोधिनी *

(२२) नरकादिव स्वर्गमिति–यथा कश्चिन्नरकात्स्वर्गमारोहति तथा मे पिता कामपालोऽपि । तादृशात्–नरकसदृशात् । व्यसनात्–नेत्रोत्पाटनरूपाद् दुःखात् । तथाभूतं–तादृशं पुनर्जीवनपुत्रप्राप्तिरूपम् । अभ्युदयमभ्युन्नतिम् । आरूढः–प्राप्तः सन् । यथावृत्तान्तं–वृत्तान्तमनतिक्रम्य–यथायथरूपेणेत्यर्थः । आवेदितः–कथितः । मघवतः–इन्द्रात् । मनाक्–स्वल्पम् । मत्संबन्धं–स्वविषयम् । हर्षेति–हर्षेणानन्देन विस्मित आश्चर्यान्वित आत्मा ययोस्तादृशयोः । पित्रोः–मातापित्रोः समीपे इति शेषः । आज्ञापयतं युवामिति योज्यम् । का–कीदृशी । नोऽस्माकम् । प्रतिपत्तिः–इतिकर्त्तव्यता । अतिविशालेति–अतिविशालोऽतिविस्तीर्णः प्राकारवलयः प्राचीरमण्डलं यस्य तत् । अक्षय्येति–अक्षय्याणामपरिमितानामायुधानामस्त्राणां स्थानं पात्रम् । विशेषणद्वयं गृहस्य । अलंघ्यतमा–अतिशयेनानतिक्रमणीया परैरिति शेषः । गुप्तिः रक्षा भूगृहं वा । उपकृताः कृतोपकाराः ।

* बालक्रीडा *

(२२) पूर्णभद्रकेद्वारा मेरे पिताने सम्पूर्ण विस्तृत वृत्तको ज्ञात करके अपनेको उस कष्टसे रहित पाकर अपूर्व अभ्युदयकी प्राप्तिका अनुभव किया । जैसे नरकसे छूट करके उन्होंने स्वर्गका आनन्द प्राप्त किया हो । वे अपनेको भगवान् इन्द्रसे अधिक भाग्यशाली मानने लगे । थोड़ासा अपना समाचार सुना करके मैंने हर्ष और आश्चर्यके साथ अपने जननी जनकसे कहा—"आज्ञा दीजिये कि, अब मेरा क्या कर्त्तव्य है ।" मेरे पिताने कहा—हे वत्स ! यहाँपर मेरा अत्यन्त विशाल भित्तिवलयवाला (चहारदीवालीसे घिरा) गृह है और नाश न होनेवाले शस्त्रोंके रखनेका भी स्थान है । अलंघनीय रक्षागृह (तहखानें) हैं मेरे-

बहवः सन्ति सामन्ताः । प्रकृतयश्च भूयस्यो न मे व्यसनमनुरुध्यन्ते सुभटानां चानेकसहस्रमस्त्येव ससुहृत्पुत्रदारम् । अतोऽत्रैव कतिपयान्यहानि स्थित्वा बाह्याभ्यन्तरङ्गान्कोपानुत्पादयिष्यामः । कुपितांश्च संगृह्य प्रोत्साह्यास्य प्रकृत्यमित्रानुत्थाप्य सहजांश्च द्विषः, दुर्दान्तमेनमुच्छेत्स्यामः इति । 'को दोषः, तथास्तु' इति तातस्य मतमन्वमंसि ।

(२३) तथास्मासु प्रतिविधाय तिष्ठत्सु राजापि विज्ञापितोदन्तो

* बालविबोधिनी *

सामन्ताः अधीननृपतयः । प्रकृतयः–प्रजाः । भूयस्योऽसंख्याः । व्यसनमनिष्टम् । अनुरुध्यन्ते–अनुमन्यन्ते । ममानिष्टं नेच्छन्तीत्यर्थः । सुभटानां सुयोद्धृणाम् । ससुहृत्पुत्रदारं स्वस्वमित्रपुत्रकुटुम्बादिसहितम् । अत्रैव–अस्मद्गृह एव । बाह्याभ्यन्तेति–बाह्यान् बहिरङ्गान् प्रकृतिसम्बन्धिनः तथा अभ्यन्तरङ्गान् अमात्यादिसम्बन्धिनः कोपान् क्रोधान् । संगृह्य–वशमानीय । प्रोत्साह्य धनमानादिना प्रोत्साहितान् कृत्वा । अस्य सिंहघोषस्य । प्रकृत्यमित्रान्–प्राकृतशत्रून् । सहजान् द्विषः–सहजशत्रून् । उत्थाप्य–उद्विरोधाय प्रोत्साह्य । दुर्दान्त–दुर्दमं दुर्विनीतं वा । एनं सिंहघोषम् । उच्छेत्स्यामः–समूलमुन्मूलयिष्यामः । मतमभिप्रायम् । अन्वमंसि–अनुमोदितवान् ।

(२३) तथा तेन पूर्वोक्तेन प्रकारेण । प्रतिविधाय–प्रतिविधानं कृत्वा । राजा–सिंहघोषः । विज्ञापितोदन्तः–विदितवार्तः । जातानुतापः–कृतानुशोचनः ।

* बालक्रीडा *

द्वारा उपकृत अनेकों सामन्तगण हैं । असंख्य प्रजावर्ग हैं जो मेरे दुःखको नहीं सहन कर सकते हैं । कई हजार योद्धा हैं जो अपने मित्र स्त्री पुत्रादिकों सहित (मेरी ओर) हैं । अतः इसी जगह कुछ दिनों रह करके बहिरंग तथा अन्तरंग व्यक्तियोंमें वैर कराऊंगा । और वैरियोंको (क्रोधी व्यक्तियोंको) एकत्र करके उन सबको प्रोत्साहन दूंगा । फिर इस राजा सिंहघोषके प्रकृत शत्रु तथा सहज शत्रुओंको उभाड़ करके इस दुर्विनीत राजाको नष्ट करा दूंगा, क्या दोष है ।" स्वीकार है ऐसा कह करके मैंने पिताकी बातोंका अनुमोदन किया ।

(२३) जब हम लोगोंने ऐसा प्रतिविधान रचा और स्थिर हुए । तब राजा

जातानुतापः पारग्रामिकान्प्रयोगान्प्रायः प्रायुङ्क्त । ते चास्माभिः प्रत्यहमहन्यन्त । अस्मिन्नेवावकाशे पूर्णभद्रमुखाच्च राज्ञः शय्यास्थानमवगम्य तदैव स्वोदवसितभित्तिकोणादारभ्योरगास्येन सुरङ्गामकार्षम् । गता च सा भूमिस्वर्गकल्पमनल्पकन्यकाजनं कमप्युद्देशम् । अव्यथिष्ट च दृष्ट्वैव स मां नारीजनः ।

(२४) तत्र काचिदिन्दुकलेव स्वलावण्येन रसातलान्धकारं निह्नु-

* बालविबोधिनी *

पारग्रामिकान्-प्रयोगान्-परग्रामे परराष्ट्रे भवान् सैन्यादिप्रेषणेन नानाविधविनाशोपायान् । प्रायः-बाहुल्येन । प्रायुंक्त-प्रयुक्तवान् । ते-प्रयोगाः-सैन्यादय इत्यर्थः । अहन्यन्त-हताः । अवकाशे-अवसरे । राज्ञः-सिंहघोषस्य । स्वोदवसितेस्वस्य उदवसितं वासगृहं तस्य भित्तिकोणात् कुड्यैति कदेशात् । उरगास्येन-सर्पमुखाकारास्त्रविशेषेण सुरङ्गां विलम् । सा सुरङ्गा । भूमिस्वर्गकल्पं भूस्वर्गतुल्यम् । अनल्पकन्यकाजनं-बहुकन्याजनाश्रयम् । अनल्पः कन्यकाजनो यत्रेति विग्रहः । उद्देशमित्यस्य विशेषणद्वयम् । उद्देशं प्रदेशम् । अव्यथिष्ट भयादिना पीड़ितोऽभवत् ।

(२४) तत्र नारीजनमध्ये । इन्दुकला-चन्द्रलेखा । रसातलान्धकारं-

* बालक्रीडा *

सिंहघोषने इन सब वृत्तान्तोंको ज्ञात करके अत्यन्त शोच प्रकट किया । और उसने पारिग्रामिक प्रयोग—शत्रु नगरोंमें सेना आदि भेज करके शत्रुनाश कराना-बहुलतासे आरम्भ किया । वे पारिग्रामिक प्रयोग हम लोगोंकेद्वारा नित्य नष्ट कर दिये जाते थे । इसी बीचमें हम लोगोंने पूर्णभद्रके मुखसे राजा सिंहघोषके शयन स्थानका पता पा लिया । और उसी कालमें अपने घरकी दीवालके कोनेसे एक उरगाख्य (कुदालीकी तरह) अस्त्रसे सुरंग खोदना प्रारम्भ कर दिया । सुरंग खोदते हुए हम उस स्थानपर प्रविष्ट हुए जहांपर अनेकों कन्याओंसे परिपूर्ण पृथिवीका स्वर्गके तुल्य प्रदेश था । वे सब रमणियां हमें देखते ही-भयसे पीड़ित हो गयीं ।

(२४) उस प्रदेशमें कोई एक रमणी थी जो अपने लावण्यसे पातालके

वाना, विग्रहिणीव देवी विश्वंभरा, हरगृहिणीवासुरविजयायावतीर्णा, पातालमागता गृहिणीव भगवतः कुसुमधन्वनः, राजलक्ष्मीरिवानेकदुर्नृपदर्शनपरिहाराय महीविवरं प्रविष्टा, निष्टप्तकनकपुत्रिकेवावदातकान्तिः कन्यका, चन्दनलतेव मलयमारुतेन, मद्दर्शनेनोदकम्पत। तथाभूते च तस्मिन्नङ्गनासमाजे, कुसुमितेव काशयष्टिः, पाण्डुशिरसिजा स्थविरा काचिच्चरणयोर्मे निपत्य त्रासदीनमब्रूत—'दीयतामभयदानमस्मा अनन्यशरणाय

* बालविबोधिनी *

पातालस्थध्वान्तम्। निह्नुवाना-अपसारयन्ती। विग्रहिणी-मूर्तिमती। विश्वम्भरा-पृथ्वी। हरगृहिणी-पार्वती। कुसुमधन्वनः-गृहिणी-कामस्य पत्नी रतिरित्यर्थः। राजलक्ष्मीः-राज्यश्रीः। अनेकेति-अनेकेषां दुर्नृपाणां दुष्टराज्ञां दर्शनमवलोकनं परिहर्तुम्। महीविवरं-पातालम्। निष्टप्तेति-निष्टप्तं गलितं यत्कनकं सुवर्णं तेन निर्मिता पुत्तलिका। अवदातकान्तिः-गौरद्युतिः। चन्दनलतेव मलयमारुतेन-मलयवायुना यथा चन्दनलतिका कम्पिता भवति तद्वदित्यर्थः। तथाभूते-त्रासादिना कम्पमाने। अङ्गनासमाजे-नारीसमुदाये कुसुमिता-सञ्जातपुष्पोद्गमा। काशयष्टिः-शरलतिका। पाण्डुशिरसिजा-शुभ्रकेशी। स्थविरा वृद्धा। त्रासदीनं-सभयकरुणं यथा तथा। अस्मै अनन्यशरणाय-नास्ति अन्यः शरणं

* बालक्रीडा *

अन्धकारको चन्द्रलेखाके समान अपसरण करनेवाली थी। साक्षात् मूर्तिमती पृथिवीके समान थी। दैत्योंके जीतनेके लिए उत्पन्न साक्षात् पार्वतीके तुल्य थी। पातालमें आई हुई भगवान् कामदेवकी पत्नीके समान थी। अनेकों दुश्चरित्र राजोंके दर्शनको न प्राप्त करूं इसीसे मानों, पृथिवीके विवर (सुराख) में प्रविष्ट राजलक्ष्मीकी मूर्तिके तुल्य थी। अग्निमें तपायी हुई सुवर्णकी पुतलीके समान उज्ज्वलकान्तिवाली थी। उपर्युक्त वेषधारिणी रमणी हमें देख करके ऐसी कंपने लगी जैसी चन्दनकी लता मलयाचलके पवनके झकोरोंसे कँपने लगती है। वह नारीमण्डल भी हमें देख करके उसीके समान भयान्वित हो गया। ऐसी स्थिति होनेपर एक वृद्धाने, जिसके बाल सफेद हो गये थे और जिसकी आकृति पुष्पित काशयष्टिके समान थी, मेरे चरणोंमें पड़ करके भययुक्त

स्त्रीजनाय। किमसि देवकुमारो दनुजयुद्धतृष्णया रसातलं विविक्षुः। आज्ञापय कोऽसि। कस्य हेतोरागतोऽसि' इति।

(२५) सा तु मया प्रत्यवादि—'सुदत्यः, मास्म भवत्यो भैषुः। अहमस्मि द्विजातिवृषात्कामपालाद्देव्यां कान्तिमत्यामुत्पन्नोऽर्थपालो नाम। सत्यर्थे निजगृहान्नृपगृहं सुरङ्गयोपसरन्निहान्तरे वो दृष्टवान्। कथयत काः स्थ यूयम्। कथमिह निवसथ' इति प्रान्नवम्। सोदञ्जलिरुदीरितवती—'भर्तृदारक, भाग्यवत्यो वयम्, यास्त्वामेभिरेव चक्षुर्भिरनवम-

* बालविबोधिनी *

यस्य तस्मै-त्वदेकशरणायेत्यर्थः। देवकुमारः-देवपुत्रः कार्त्तिकेयो वा। दनुजयुद्धतृष्णया-असुरैः सह युद्धाभिलाषेण। आज्ञापय-कथय। कस्य हेतोः-किमर्थम्।

(२५) सा वृद्धा। मया-अर्थपालेन। प्रत्यवादि-प्रत्युक्ता। सुदत्यः शोभनदन्ताः सम्बोधनमेतत्। मास्मभैषुः भयं माकार्षुः। भवत्यः यूयम्। द्विजातिवृषात्-ब्राह्मणश्रेष्ठात्। सत्यर्थे-अर्थे प्रयोजने सति=उपस्थिते। सुरङ्गया-बिलमार्गेण। उपसरन्-गच्छन्। अन्तरे मध्ये। वो युष्मान्। स्थ-भवथ। सा वृद्धा। भर्तृदारक-स्वामिकुमार। याः वयम्। अनघं निष्पापम्। अद्राक्ष्म-

* बालक्रीडा *

होकर कहा—"हे देव ! इन स्त्रीजनोंके केवल आप ही आश्रयदाता हैं (अनन्यशरण वाली—हम सब हैं) अतः आप हमें अभयदान दें। क्या आप देवपुत्र कार्त्तिकेय हैं और असुरोंको जीतनेकी अभिलाषासे पातालमें प्रविष्ट होना चाहते हैं। आज्ञा दें, कौन हैं ? किस निमित्त यहां आगमन हुआ !

(२५) मैंने (अर्थपालने) उत्तरमें उससे कहा—"हे सुदति ! (सुन्दर दांतोंवाली) वृद्धे ! आप भय न करें। मैं ब्राह्मणोंमें उत्तम कामपालके योग द्वारा कान्तिमती देवीके गर्भसे उद्भूत अर्थपाल नामक कुमार हूं। किसी प्रयोजनके हेतु सुरंगके द्वारा अपने घरसे राजमन्दिरमें जा रहा हूं रास्तेमें आपको देखा है। आप लोग बतायें कि, आप सब कौन हैं और क्यों यहां रहती हैं ? इस बातपर वृद्धाने अञ्जलि बांध करके हमसे निवेदन किया—

त्रादम । श्रूयताम् । यस्तव मातामहश्चण्डसिंहः, तेनास्यां देव्यां लीलावत्यां चण्डघोरः कान्तिमतीत्यपत्यद्वयमुदपादि । चण्डघोषस्तु युवराजोऽत्यासङ्गादङ्गनासु राजयक्ष्मणा सुरक्षयमगादन्तर्वल्न्यां देव्यामाचारवत्याम् । अमुया चेयं मणिकर्णिका नाम कन्या प्रसूता । अथ प्रसववेदनया मुक्तजीविताचारवती पत्युरन्तिकमगमत् ।

(२६) अथ देवश्चण्डसिंहो मामाहूयोपह्वरे समाज्ञापयत्—'ऋद्धिमति, कन्यकेयं कल्याणलक्षणा । तामिमां मालवेन्द्रनन्दनाय दर्पसाराय

* बालविबोधिनी *

दृष्टवत्यः । देव्या महिष्याम् । अपत्यद्वय–सन्ततियुगलम् । उदपादि–जनितम् । अङ्गनासु कामिनीषु अत्यासङ्गात् अत्यासक्तेः कारणात् । राजयक्ष्मणा–रोगविशेषेण । सुरक्षयं–देवपुरं स्वर्गमितियावत् । अन्तर्वल्न्या–गर्भवत्याम् । देव्यामाचारवत्या–आचारवत्याख्याया देव्याम् । अमुया–आचारवत्या । इयं–पुरो दृश्यमाना । मुक्तजीविता–त्यक्तप्राणा । पत्युरन्तिक पतिसमीपं स्वर्गमिति भावः ।

(२६) अथ–आचारवतीमरणानन्तरम् । मा वृद्धामित्यर्थः । उपह्वरे–रहसि । ऋद्धिमतीति वृद्धाया नाम । कल्याणलक्षणा–शोभनावयवा । इमां कन्याम् । विधिवत्–यथाविधि । वर्धयित्वा–परिपाल्य । दित्सामि–दातुमिच्छामि ।

* बालक्रीडा *

"हे स्वामिपुत्र ! हम सब भाग्यशालिनी हैं जो इन्हीं आखोंकेद्वारा आप ऐसे निष्कलंकित कुमारका दर्शन कर रही हैं । सुनिये ! जो आपके नाना चण्डसिंह नामवाले हैं । उन्होंने इस लीलावती देवीकेद्वारा दो सन्तानें उत्पन्न कीं—एक पुत्र चण्डघोष तथा दूसरी कन्या कान्तिमती । चण्डघोषने युवराजपद प्राप्त किया और अनेकों नारियोंके साथ रमण करके राजयक्ष्मा रोगसे पीड़ित हो गया । तथा इसी कारणसे वह अपनी पत्नी आचारवतीको गर्भवती छोड़ करके स्वर्गवासी हो गया । उसी आचारवती देवीने इस मणिकर्णिका कन्याको उत्पन्न किया है । और प्रसववेदनाके न सह सकनेके कारण वह आचारवती भी मुक्तजीवित हो करके अपने पतिके समीप स्वर्गको चली गयी ।

(२६) तत्पश्चात् (आचारवतीके स्वर्गागमनके अनन्तर) राजा चण्डसिंहने मुझ वृद्धाको एकान्तमें बुला करके कहा—"हे वृद्धे ! (ऋद्धिमति !)

विधिवद्वर्धयित्वा दित्सामि । बिभेमि च कान्तिमतीवृत्तान्तादारभ्य कन्यकानां प्रकाशावस्थापनात् । अत इयमरातिव्यसनाय कारिते महति भूमिगृहे कृत्रिमशैलगर्भोत्कीर्णनानामण्डपप्रेक्षागृहे प्रचुरपरिवर्हया भवत्या संवर्ध्यताम् । अस्त्यत्र भोग्यवस्तु वर्षशतेनाप्यक्षय्यम्' इति । स तथोक्त्वा निजवासगृहस्य ब्यङ्गुलभित्तावर्धपादं किष्कुविष्कम्भमुद्धृत्य तेनैव

* बालविबोधिनी *

बिभेमि–शङ्के । कान्तिमती वृत्तान्तादारभ्य–यदैव कान्तिमत्याः गुप्तरूपेण कामपालसंसर्गात्पुत्रोत्पत्तिर्जाता तस्मादेव दिनादित्यर्थः । प्रकाशावस्थापनात्–प्रकाशं सर्वजनसमक्षं य दवस्थापनं संस्थापनं संरक्षणमिति यावत् तस्मात्–बिभेमीति भीत्यर्थानां भयहेतुरितिपञ्चमी । इयं–कन्या । अरातिव्यसनाय–अरातिभ्यः शत्रुभ्यो यद् व्यसनं विपत् तदर्थे–तन्निवारयितुमित्यर्थः । कारिते–निर्मापिते । महति–विशाले भूमिगृहे–भूतलान्तर्गेहे । कृत्रिमेति–कृत्रिमो रचितो यः शैलः पर्वतस्तस्य गर्भे मध्ये उत्कीर्णानि विन्यस्तानि नानाविधानि मण्डपानि प्रेक्षागृहाणि नर्त्तनशाला यत्र तस्मिन् । प्रचुरपरिवर्हया–प्रभूतपरिच्छदया । भवत्या–वृद्धयेत्यर्थः । संवर्ध्यताम् पाल्यताम् इयं कन्यकेति शेषः । अत्र–भूमिगृहे । भोग्यवस्तु–खाद्यपरिधेयादिकम् । अक्षय्यं–क्षयानर्हम् । स चण्डघोषः ब्यङ्गुलभित्तौ–

* बालक्रीडा *

इस पुत्रीमें सभी लक्षण अच्छे पड़े हुए हैं । अत एव इसका यथाविधि पालन–पोषण करके मालवाधिपतिके राजकुमार दर्पसारको इसे समर्पण करनेकी इच्छा करता हूँ । कान्तिमतीके दुर्वृत्तान्तको ज्ञात करके (उसी कालसे) बालिकाओंको प्रकाशरूपेण बाहर रखनेमें मुझे डर लगता है । इस हेतुसे शत्रुगणोंके भयसे मेरेद्वारा बनवाया हुआ अत्यन्त विशाल भूमिगृह (भूतलान्तर्गृह) है । उस भूमिगृहके ऊपर एक बनावटी पर्वत है उस पर्वतको खोद करके उस गृहमें जाना होता है वहांपर नाना प्रकारके मण्डपगृह और नाचघर देखने योग्य बने हुए हैं । वहींपर सपरिवार रह करके इस कुमारीका पालन आप उचित रीतिसे करें । वहांपर भोग्य वस्तुएँ इतनी प्रचुरमात्रामें रखी हैं । कि वे सौ वर्षोंतक भी प्रयोगमें लानेसे समाप्त नहीं हो सकती हैं । ऐसा कह करके उस राजाने अपने

द्वारेण स्थानमिदमस्मानवीविशत्। इह च नो वसन्तीनां द्वादशसमाः समत्ययुः। इयं च वत्सा तरुणीभूता। न चाद्यापि स्मरति राजा। काममियं पितामहेन दर्पसाराय सकल्पिता। त्वदम्बया कान्तिमत्या चेयं गर्भस्थैव द्यूतजिता स्वमात्रा तवैव जायात्वेन समकल्प्यत। 'तदत्र प्राप्तरूपं चिन्त्यतां कुमारेणैव' इति।

(२७) तां पुनरवोचम्—'अद्यैव राजगृहे किमपि कार्यं साधयित्वा

* बालविबोधिनी *

अङ्गुलिद्वयपरिमितकुड्ये। अर्धपादं–पाषाणनिर्मितपिधानम्। किष्कुविष्कम्भ–वितस्तिमात्रपरिणाहम्। उद्धृत्य–उत्पाद्य। अवीविशत्–प्रवेशयामास। इह–भूमिगृहे। नः–अस्माकम्। वसन्तीनां–वास कुर्वतीनाम्। द्वादशसमाः द्वादशवर्षाणि। समत्ययुः–समतीताः। सम् अति पूर्वक याधातोर्लङि रूपम्। इयं च वत्सा–मणिकर्णिका तरुणीभूता-यौवनमधिगता। राजा-सिंहघोषः। काम यथेच्छम्। इयं–मणिकर्णिका। पितामहेन–वरदसिंहेन। संकल्पिता–दातुमिष्टा। इयं कन्या। गर्भस्था–गर्भवर्तमाना। द्यूतजिता द्यूतलब्धा। स्वमात्रा–निजजनन्या–आचारवत्येति यावत्। तवैव–अर्थपालस्यैव। जायात्वेन पत्नीत्वेन। समकल्प्यत–संकल्पिता। तत्–तस्मात्कारणात्। अत्रास्मिन् विषये। प्राप्तरूपं–युक्तियुक्तम्। कुमारेण–भवता।

(२७) तां–वृद्धाम्। साधयित्वा–सम्पाद्य। यथार्हं–यथायोग्यम्। प्रतिप-

* बालक्रीडा *

वासगृहसे दो अङ्गुलकी दूरीपर बनी एक दीवालपरसे एक बीता मोटा पत्थर हटा दिया और उसी मार्गसे हमें यहांपर प्रवेशित करा दिया। यहां हम लोगोंको रहते बारह बरस बीत गये। यह कुमारी भी युवती हो गयी। परन्तु, वह अभीतक याद नहीं करता अर्थात् हमलोगोंकी खोज खबरतक नहीं लेता है। इस मणिकर्णिकाके पितामहने तो इसे दर्पसारको देनेका सकल्प किया था। लेकिन जब यह कुमारी माताके गर्भमें ही थी उसी समयमें आपकी माता कान्तिमतीने आपके साथ विवाह करनेके लिए इसे जुएमें जीत लिया था। अब इस विषयमें जो भी विचार आपके हो वैसा करें।

(२७) मैंने उस बुढ़ियासे फिर कहा—'आज ही राजभवनमें जा करके

प्रतिनिवृत्तो युष्मासु यथार्हं प्रतिपत्स्ये' इति । तेनैव दीपदर्शितबिलपथेन गत्वा स्थितेऽर्धरात्रे तदर्धपादं प्रत्युद्धृत्य वासगृहं प्रविष्टो विश्रब्धसुप्तं सिंहघोषं जीवग्राहमग्रहीषम् । आकृष्य च तमहिमिवाहिशत्रुः स्फुरन्तममुनैव भित्तिरन्ध्रपथेन स्त्रैणसंनिधिमनैषम् । आनीय च स्वभवनमायसनिगडसंदितचरणयुगलमवनमितमलिनवदनमश्रुबहलरक्तचक्षुषमेकान्ते जनयित्रोरदर्शयम् । अकथयं च बिलकथाम् ।

* बालविबोधिनी *

त्स्ये–विधास्यामि । दीपप्रदर्शितबिलपथेन–दीपालोकप्रदर्शितसुरङ्गामार्गेण । अर्धपादं–पाषाणरचितपिधानम् । प्रत्युद्धृत्य उद्घाट्य । वासगृहं–राजभवनम् । विश्रब्धसुप्तं–विश्वासपूर्वकं निद्रितम् । जीवग्राहं–जीवं गृहीत्वा इति जीवग्राहम्–णमुल् । अग्रहीषम्–आक्रान्तवान् । तं सिंहघोषम् । अहिं सर्पम् । अहिशत्रुर्गरुडः । स्फुरन्तं–जीवन्तम् । स्त्रैणसन्निधिं–स्त्रीणां समूहः स्त्रैणं तस्य समीपम् । स्वभवनमस्मद् गृहम् । आयसेति–आयसनिगडेन–लौहश्रृंखलेन सन्दितं बद्धं चरणयुगलं यस्य तम् । अवनमितमलिनवदनं–नम्रीकृतविवर्णमुखम् अश्रुबहलेति–अश्रुणा नयनजलेन बहलरक्तं अतिलोहितं चक्षुर्यस्य।तम् । जनयित्रोः–मातापित्रोः ।

* बालक्रीडा *

कुछ काम करके जो भी यथायोग्य व्यवहार होगा वह आप लोगोंके साथ बरतूंगा । उसी दीप-दर्शित सुरंगके मार्गसे जा करके मैंने आधी रातमें उस पत्थरके ढक्कनको खोल लिया और राजाके वासगृहमें घुस गया । वहांपर निश्शङ्क रीतिसे सोते हुए राजा सिंहघोषको जीते जी पकड़ लिया । वहांसे फिर राजाको मैं ऐसें जकड़ करके उसी सुरंग मार्गसे उन स्त्रियोंके समूहतक ले आया जैसे सांपको उसका शत्रु गरुड़ ले आता है । तदनन्तर उस राजाको मैं अपने भवनमें ले आया और वहां ला करके उसे लोहेकी शृंखलासे उसके दोनों पांव बांध दिये । (मारे लज्जाके) उसका मुख मलिन और नीचा हो गया एवं अत्यन्त आंसू गिरनेसे उसकी आंखे लाल-लाल हो गयीं । तब मैंने अपने जननी–जनकको उसे दिखाया और सुरङ्गकी सारी कथा कह सुनायी ।

(२८) अथ पितरौ प्रहृष्टतरौ तं निकृष्टाशय निशाम्य बन्धने नियम्य तस्या दारिकाया यथार्हेण कर्मणा मां पाणिमग्राहयेताम्। अनाथकं च तद्राज्यमस्मदायत्तमेव जातम्। प्रकृतिकोपभयात्तु मन्मात्रा मुमुक्षितोऽपि न मुक्त एव सिंहघोषः। तथास्थिताश्च वयमङ्गराजः सिंहवर्मा देवपादानां भक्तिमान्कृतकर्मा चेत्यमित्राभियुक्तमेनमभ्यसराम। अभूवं च भवत्पादपङ्कजरजोनुग्राह्यः। स चेदानीं भवच्चरणप्रणामप्रायश्चित्तमनुतिष्ठतु सर्वदुश्चरितक्षालनमनार्यः सिंहघोषः' इत्यर्थपाल' प्राञ्जलि प्रणनाम। देवोऽपि

* बालविबोधिनी *

(२८) तं सिंहघोषम्। निकृष्टाशय–नीचचित्तम्। निशाम्य दृष्ट्वा–बन्धने–कारागृहे। दारिकाया' कन्यायाः मणिकर्णिकायाः। यथार्हेण कर्मणा–यथाविधि। अग्राहयेतां ग्राहितवन्तौ। अनाथक–रक्षितृशून्यम्। अस्मदायत्त–अस्मदधीनम्। प्रकृतिकोपभयात्–प्रजाविद्वेषशङ्कया। मन्मात्रा–कान्तिमत्या। मुमुक्षितः मोक्तुमिष्ट.। तथास्थिता,–तदवस्थाः। कृतकर्मा–कृतकार्यः। इति–इति हेतोः। अमित्राभियुक्त शत्रुणा–आक्रान्तम्। एनं सिंहवर्माणम्। अभ्यसराम–अभिमुखमागतवन्तः। भवत्पादेति–भवतस्तव पादपङ्कजस्य चरणकमलस्य रजसा परागाणामनुग्राह्यो दयनीयः। अभूवं मित्यनेनान्वयः। सचेदानीमित्यादि–स चानार्यः दुष्टः सिंहघोषः इदानीं सर्वदुश्चरितानामखिलपापानां क्षालनं शोधकं भवच्चरणयोः प्रणाम एव प्रायश्चित्त अनुतिष्ठतु–करोतु। अधुना भवच्चरणयोः

* बालक्रीडा *

(२८) तत्पश्चात् प्रसन्नमनसे मेरे जननी जनकने उस राजा सिंहघोषको देखा और बन्दी बना करके उसकी कन्या मणिकर्णिकाके साथ मेरा विवाह यथाशास्त्र कर दिया। वह राज्य भी नेतृहीन होनेसे मेरे ही हाथोंमें आ गया। प्रजावर्गके कोपके भयके कारण मेरी माता कान्तिमतीने उस राजाको छोड़ देना चाहा किन्तु, उस राजा सिंहघोषने मुक्त होना पसन्द न किया। जब हम लोग इस प्रकारसे रह रहे थे। तब अंगराज सिंहवर्मा, आपका भक्त कृतकार्य यहा आया। और शत्रुओंसे आक्रान्त हो करके निज साहाय्यके लिये हमें यहा ले आया। यहापर आपके चरणकमलोंके परागोंकी दया हुई। वह दुष्ट सिंहघोष इस समय

राजवाहनः 'बहु पराक्रान्तम्, बहूपयुक्ता च बुद्धिः, मुक्तबन्धस्ते श्वशुरः पश्यतु माम्' इत्यभिधाय भूयः प्रमतिमेव पश्यन्प्रीतिस्मेरः 'प्रस्तूयतां तावदात्मीयं चरितम्' इत्याज्ञापयत् ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरितेऽर्थपालचरितं नाम चतुर्थ उच्छ्वासः ।

* बालविबोधिनी *

शरणग्रहणमन्तरेण तस्य निष्कृतिर्नास्तीति भावः । बहुपराक्रान्तं-त्वया महान् पराक्रमः कृतः । बहूपयुक्ता बुद्धिः-बुद्धे र्बहूपयोगः कृतः, मुक्तबन्धः-बन्धनान्मुक्तस्ते श्वशुरः सिंहघोषः मां पश्यतु मम समीपमागच्छत्वित्यर्थः । भूयः पुनरपि । प्रमतिं-तदाख्यकुमारम् । प्रीतिस्मेरः-प्रीत्यास्नेहेन स्मेर ईषद्धसिताननः । प्रस्तूयतामारभ्यताम् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्य कृतायां बालविबोधिनी समाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायाम्-अर्थपालचरितं नाम चतुर्थ उच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

आपके चरणोंका प्रणामरूप प्रायश्चित्त विधानके अनुष्ठानसे अपने सभी दुराचरणोंको प्रक्षालित करना चाहता है । ऐसा कह करके अर्थपालने बद्धाञ्जलि होकर प्रणाम किया । देव राजवाहनने भी कहा-"आपने बड़ा पराक्रम दर्शाया । बुद्धिका बहुत उपयोग किया । आपका श्वसुर बन्धन रहित हो करके मुझसे मिले । इतना कह करके पुनः प्रमति नामक कुमारकी ओर स्नेहसे स्मित हो करके देखते हुए आज्ञा दी कि आप भी अपने चरितको प्रारम्भ करें ।

इस प्रकारसे बालक्रीडा नामक हिन्दी टीका दशकुमारचरितके चतुर्थ उच्छ्वासकी समाप्त हुई ।

पञ्चमोच्छ्वासः ।

(१) सोऽपि प्रणम्य विज्ञापयामास—'देव देवस्यान्वेषणाय दिक्षु भ्रमन्नभ्रंकषस्यापि विन्ध्यपार्श्वरूढस्य वनस्पतेरधः, परिणतपतङ्गबालपल्लवावतंसिते पश्चिमदिगङ्गनामुखे पल्वलाम्भस्युपस्पृश्योपास्य संध्याम्, तमः समीकृतेषु निम्नोन्नतेषु, गन्तुमक्षमः क्षमातले किसलयैरुपरच्य्य शय्यां शिशयिषमाणः, शिरसि कुर्वन्नञ्जलिम्, 'यस्मिन्वनस्पतौ वसति देवता

* बालविबोधिनी *

(१) सम्प्रति प्रमतिनामा कुमारः स्वचरित वर्णयति । सोऽपि प्रमतिरपि । अभ्रकषस्य-गगनस्पर्शिनः ? अत्युन्नतस्येति भाव । वनस्पते वृक्षस्य । विन्ध्येति-विन्ध्यस्य तदाख्य पर्वतस्य पार्श्वे पार्श्वभागे रूढस्य उत्पन्नस्य । परिणतेति-परिणतोऽस्तोन्मुखः पतङ्गः सूर्य एव बालपल्लवो नवकिसलयस्तेन अवतंसिते भूषिते । पश्चिमदिगेवाङ्गना कामिनी तस्या मुखे साय समये इत्यर्थः । पल्वलाम्भसि-क्षुद्रसरोजले । उपस्पृश्य-आचम्य । निम्नोन्नतेषु-उच्चावचस्थानेषु तम.समीकृतेषु तमसान्धकारेण समीकृतेषु पूर्णीकृतेषु सत्सु । क्षमातले-भूतले । किसलयै. पल्लवैः । उपरच्य्य-निर्माय । शिशयिषमाणः-शयितुमिच्छन् । अञ्जलिं कुर्वन्-प्रणमन्नित्यर्थः । शरण-रक्षित्री । शरारुचक्रेति-शरारुचक्रस्य हिंस्रपशु-

* बालक्रीडा *

(१) प्रमतिने प्रणाम करके विज्ञापित किया—"हे देव ! मैं आपको अन्वेषण करता हुआ बादलोंको छूनेवाले विन्ध्यपर्वतके समीप एक अपुर-वृक्षके नीचे जा पहुचा । उस समय अस्तोन्मुख सूर्य भगवान् नवीन किसलयके समान आकृतिसे पश्चिम दिशारूपी कामिनीको भूषित कर रहे थे । (अर्थात् सायंकाल हो गया था ।) वहा पहुंच करके मैंने एक अल्प जलाशयमें आचमन आदि किया और सायं सन्ध्या भी की । इतनेमें अन्धकारसे सभी ऊंचे और नीचे स्थान समान मालूम होने लगे । तब उस स्थानसे पृथ्वीतलपर अन्यत्र जाना असम्भव हो गया और मैंने वहींपर पल्लवोंको एकत्र करके एक शय्या रची तथा सोनेकी इच्छा करने लगा । सोनेके पूर्वमें अपने दोनों हाथोंको शिर-पर अञ्जलिरूपमें धरकर प्रार्थना की कि, "जिस देवताका आवास इस वृक्षके

सैव मे शरणमस्तु शरारुचक्रचारभीषणायां शर्वगलश्यामशार्वरान्धकारपूराध्मातगभीरगह्वरायामस्यां महाटव्यामेककस्य मे प्रसुप्तस्य' इत्युपधाय वामभुजमशयिषि।

(२) ततः क्षणादेवावनिदुर्लभेन स्पर्शेनासुखायिषत किमपि गात्राणि, आह्लादयिषतेन्द्रियाणि, अभ्यमनायिष्ट चान्तरात्मा, विशेषतश्च हृषितास्तनूरुहाः, पर्यस्फुरन्मे दक्षिणभुजः। 'कथं न्विदम्' इति मन्दमन्दमु-

* बालविबोधिनी *

मण्डलस्य चारेण सञ्चरणेन भीषणा भयङ्करी तस्याम्। महाटवीविशेषणम्। पुनश्च शर्वगलेति-शर्वस्य शिवस्य गलः कण्ठस्तद्वत् श्यामो नीलः शर्वर्या अयमिति शार्वरो रात्रिजानितः अन्धकारपूरस्तमः प्रवाहस्तेनाध्मातानि पूर्णानि गभीरगह्वराणि मध्यप्रदेशा यस्यास्तथाभूतायाम्। एककस्यैकाकिनः। इति-एवं ब्रुवन्। वामभुजं सव्यबाहुम् उपधाय-उपधानीकृत्य वामहस्तोपरि मस्तकं न्यस्येत्यर्थः। अशयिषि-शयितोऽभवम् अहमिति शेषः।

(२) क्षणात्-तस्मिन्नेव मुहूर्ते। असुखायिषत-सुखितानि जातानि। किमपि-अनिर्वचनीयम् आह्लादयिषत-आह्लादितानि जातानि। इन्द्रियाणि-चक्षुरादीनि। अभ्यमनायिष्ट-अतिशयेन मुमुदे। विशेषतः-आधिक्येन। हृषिताः उद्भिताः। तनूरुहाः-लोमानि। पर्यस्फुरत् स्पन्दितोऽभवत्। इदं-भुजकम्पनम्। कथं-केन प्रकारेण सम्भाव्यते। वामेतरभुजस्पन्दो वरस्त्रीलाभसूचक इत्युक्तः।

* बालक्रीडा *

ऊपर होवे वही मेरी रक्षयित्री (रक्षिका) होवे। इस समय मैं यहां अकेला हूँ और यह महावन शिवजीके नीले कण्ठके सदृश रात्रिसे परिव्याप्त घोर अन्धकारमय विशाल गुफाओंवाला है तथा घातुक जन्तुओंके गमनागमनसे यह अति भयावना भी है।" उपर्युक्त प्रार्थनाके पश्चात् मैं बायें हाथको तकियाके स्थानपर बनाकरके उसीपर अपना शिर धरकर सो गया।

(२) शिरके रखनेके पश्चात् ही उसी क्षणमें पृथिवीपर सोनेके अपूर्व आनन्दको प्राप्त करके मेरे सभी अङ्ग सुखी हो गये, सभी इन्द्रियां आह्लादित हो गयी, अन्तरात्मा पुलकित हो गयी, रोम प्रतिलोम विशेषरूपेण हर्षान्वित हो

न्मिषन्नुपर्यच्छचन्द्रातपच्छेदकल्पं शुक्लांशुकवितानमैक्षिषि ।

(३) वामतश्चलितदृष्टिः समया सौधभित्तिं चित्रास्तरणशायिनमतिविश्रब्धप्रसुप्तमङ्गनाजनमलक्षयम् । दक्षिणतो दत्तचक्षुरागलितस्तनांशुकाम्, अमृतफेनपटलपाण्डुरशयनशायिनीम्, आदिवराहदंष्ट्रांशुजाललग्नाम् अंसस्रस्तदुग्धसागरदुकूलोत्तरीयाम् भयसाध्वसमूर्च्छितामिव धरणिम्,

* बालविबोधिनी *

मन्दमन्दं-स्वल्पम् । उन्मिषन्-चक्षुषी उन्मीलयन् । उपरि मदूर्ध्वप्रदेशे । अच्छेति-अच्छो-निर्मलश्चन्द्रस्यातप आलोकस्तस्य खण्डस्तत्सदृशम् । शुक्लांशुकवितानं-शुभ्रवस्त्रनिर्मितोल्लोचम् ऐक्षिषि-ईक्षितवान् ।

(३) वामतो वामभागे । चलितदृष्टिः दत्तचक्षुः । समया-समीपे । सौधभित्तिमित्यत्र समया योगे षष्ठ्यर्थे द्वितीया । चित्रास्तरणशायिनं-विचित्रशय्याविन्यस्तदेहम् । अतिविश्रब्धप्रसुप्तं-अतिविश्वासेन निद्रितम् । अलक्षयम्-अपश्यम् । दक्षिणतः-दक्षिणभागे । दत्तचक्षुः-प्रहितनयनः । आगलितेति-आगलितम् ईषद्भ्रष्टं स्तनांशुकं स्तनावरणं यस्या स्ताम् । अमृतेति-अमृतस्य सुधायाः फेनपटलं डिण्डिरसमूह स्तद्वत् पाण्डुरे शुभ्रे शयने शय्यायां शायिनीं शयिताम् । अतएव-आदिवराहस्य वराहरूपेणावतीर्णस्य विष्णोर्दंष्ट्राया दशनस्यांशुजाले मयूखमण्डले लग्ना सम्बद्धाम्-अंसात् स्कन्धदेशात् स्रस्तं गलितं दुग्धसागरः क्षीर-

* बालक्रीडा *

गये उसी समय मेरी दाहिनी भुजा फड़कने लगी । यह भुजाकी फड़कन क्यों हुई ! ऐसा सोचते हुए मैंने धीरे-धीरे आँखोंको खोलकर ऊपरकी ओर दृष्टि फेंकी तो, चन्द्रमाके समान स्वच्छ वस्त्रवाला वितान दिखलायी पड़ा ।

(३) तदनन्तर बाँयीं ओर दृष्टि डाली तो, अङ्गनाजनको देखा, जो चूनेसे पुती हुई दीवालके समीप विचित्र एवं उज्ज्वल बिछौनेके ऊपर अत्यन्त विश्वासपूर्वक सोयी हुई थी । दक्षिणकी ओर दृष्टि डाली तो देखा कि उस अङ्गनाके स्तनों (कुचों) परसे वस्त्र खिसके हुए हैं । और वह अमृतके फेनके टुकड़ों के समान अत्यन्त विमल (सफेद) पलङ्गपर सोयी हुई है । वह अंगना आदिवराह भगवान् (विष्णु) के दाँतोंकी 'किरण-प्रभासे परिव्याप्त अपने स्कन्धसे

अरुणाधरकिरणबालकिसलयलास्यहेतुभिराननारविन्दपरिमलोद्वाहिभिर्निः श्वासमातरिश्वभिरीश्वरेक्षणदहनदग्धं स्फुलिङ्गशेषमनङ्गमिव संधुक्षयन्तीम्, अन्तः सुप्तषट्पदमम्बुजमिव जातनिद्रमामीलितलोचनेन्दीवरमाननं दधानाम्, ऐरावतमदावलेपलूनापविद्धामिव नन्दनवनकल्पवृक्षरत्नवल्लरीं कामपि तरुणीमालोकयम् ।

* बालविबोधिनी *

समुद्र एव दुकूलं पट्टवस्त्रं तस्योत्तरीयं यस्यास्ताम्–भयेन यत् साध्वसं सम्भ्रमस्तेन मूर्छितां सञ्जातमूर्च्छांवरणीं पृथिवी मिवेत्युत्प्रेक्षा ! अरुणेति–अरुणस्य ताम्रवर्णस्याधरस्य किरणा मयूखा एव किसलयानि पल्लवानि तेषां लास्यस्य नृत्यस्य हेतुभिः कारणभूतैः-अधरकम्पनकारणैरित्यर्थः । आननेति–आननमेवारविन्दं कमलं तस्य यः परिमलः सौगन्ध्यं तस्य वाहिभिर्वहनशीलैर्निःश्वासमातरिश्वभिर्निःश्वासवायुभिः करणभूतैरित्यर्थः । ईश्वरेक्षणदहनदग्धं धूर्जटिनयनानलभस्मीकृतम् । स्फुलिङ्गशेषं–अग्निकणमात्रावशेषम् । अनङ्गं कामम् । सन्धुक्षयन्तीम्–प्रज्वालयन्तीं वर्धयन्ती मिव । अन्तः सुप्ता अभ्यन्तरलीनाः षट्पदाः भ्रमरा यस्मिंस्तत् । अम्बुजं कमलमिव–जातनिद्रं निद्रितमतएवामीलिते ईषत्सङ्कुचिते लोचने नयने इन्दीवरे नीलोत्पले इव यत्र तथाभूत माननं दधानां धारयन्तीम् । ऐरावतस्येन्द्रवाहनस्य मदेन योऽवलेपो गर्वस्तेनादौ लूना छिन्ना पश्चात् अपविद्धा निःक्षिप्ता त्यक्तेतियावत्–तथाभूताम् । नन्दनवने देवराजोद्याने यः कल्पवृक्षः पारिजाततरुस्तस्य रत्नमयी या वल्लरी मञ्जरी तामिव । कामपि–अनिर्वचनीयां तरुणीं–युवतीम् ।

* बालक्रीडा *

खिसकी हुई साड़ी (वस्त्र) को ऐसे धारण किये हुए हैं मानो, क्षीर-सागर शुभ्ररूपमें उसके स्कन्धप्रदेशमेंसे खिसक रहा हो । अर्थात् उसकी साड़ी दुग्ध समुद्रके सदृश स्वच्छ थी । भयके सम्भ्रमसे मूर्छित पृथिवीके समान तथा लाल अधरकिरणोंरूप रक्त किसलयोंको कंपानेवाली, अपने मुखकमलकी सुगन्धको लेकर उड़नेवाली निःश्वासोंकी पवनसे परिव्यात भगवान् शङ्करके तृतीय नयनकी ज्वालासे जले हुए कामदेवके कणमात्र अवशिष्ट भागको वर्द्धन करनेवाली अंगनाको देखा। जिस कमलकोशके भीतर भौंरा सोता हो ऐसे कमलके समान और

(४) अतर्कयं च—'क्व गता सा महाटवी, कुत इदमूर्ध्वाण्डसम्पुटोल्लेखि शक्तिध्वजशिखरशूलोत्सेधं सौधमागतम्, क्व च तदरण्यस्थलीसमास्तीर्णं पल्लवशयनम्, कुतस्त्यं चेदमिन्दुगभस्तिसम्भारभासुरं हंसतूलदु-

* बालविबोधिनी *

(४) अतर्कयं–मनस्यचिन्तयम् । महाटवी–महारण्यम् । कुतः–कस्मात् स्थानात् । इदं–पुरोदृश्यमानम् । ऊर्ध्वाण्डेति–नखैर्हिरण्यगर्भः स तदण्डं विभिदे समम् । ताभ्यां च सकलाभ्यां स दिवं भूमिञ्चनिर्ममे इति मनूक्तेः ऊर्ध्वाण्ड मूर्ध्वकपालं ब्रह्माण्डस्योर्ध्वदेश इति यावत्–तस्य यः सम्पुट आवरणं तदुल्लिखति स्पृशतीत्येवं शीलम् । गगनस्पर्शि इत्यर्थः । शक्तिध्वजेति–शक्तिध्वजः कार्तिकेयः। सेनानीःक्रौञ्चशत्रुश्च कुमारः शक्तिकेतन इति कोशात् । तस्य यच्छूलमस्त्र विशेषस्तस्य शिखरमग्रभागस्तद्वत् उत्सेध औन्नत्यं यस्य तत् अत्युन्नतमित्यर्थः । सौधस्य विशेषणद्वयम् । शिखरशूलमित्यत्र शूलस्य शिखरं मित्यर्थे राजदन्तादिवत्पूर्वनिपातः । सौधं–राजसदनम् । आगतं मुपस्थितम् । क्व गतमिति शेषः । तदरण्येति–तस्यां पूर्वोक्तायां मरण्यस्थल्यां काननभूमौ समास्तीर्णं रचितम् । पल्लवशयनं किसलयतल्पम् । कुतस्त्यं–कुत आगतम् । इन्दुगभस्तीति–इन्दोश्चन्द्रस्य गभस्तीनां किरणानां सम्भारः समूहस्तद्वद्भासुरं देदीप्यमानम् । हंसतूलदुकूलशयनं–हंसतूलवच्छुभ्रं यद्दुकूलं वस्त्रं तेन रचितं शयनं शय्या । एष इति सुन्दरी

* बालक्रीडा *

निद्रासे परिव्याप्त होनेसे सम्पुटित नयनरूप नीले कमलवाले मुखको धारण करनेवाली तथा इन्द्रके ऐरावत हाथीकेद्वारा मदान्धमें तोड़कर त्यागी हुई नन्दनवनके कल्पवृक्षकी रत्नमञ्जरीके समान आभावाली उस युवती (अंगना) को मैंने देखा।

(४) मनमें चिन्तन करने लगा यह गहन वन कहां चला गया ? कहांसे यह अत्यन्त विशाल राजप्रासाद आ गया जो ब्रह्माण्डके ऊपरवाले भागको स्पर्शित करनेवाला है तथा कुमार कार्तिकेयके पर्वतकी चोटियोंके तुल्य अति उन्नत भागवाला है। अर्थात् गगनस्पर्शी है वह वनस्थली कहां गयी ? जहांपर मैंने पल्लवोंकी शय्या रची थी ? कहांसे यह, चन्द्रमाकी किरणसमूहके सदृश उज्ज्वल तथा हंसतूलके समान शुभ्र वस्त्रवाली, शय्या आ गयी ? चन्द्रमाकी

कूलशयनम् , एष च को नु शीतरश्मिकिरणरज्जुदोलापरिभ्रष्टमूर्छित इवाप्सरोगणः स्वैरसुप्तः सुन्दरीजनः, का चेयं देवीवारविन्दहस्ता शारदशशाङ्कमण्डलामलदुकूलोत्तरच्छदमधिशेते शयनतलम् ।

(५) न तावदेषा देवयोषा, यतो मन्दमन्दमिन्दुकिरणैः संवाह्यमाना कमलिनीव सङ्कुचति । भग्नवृन्तच्युतरसबिन्दुशबलितं पाकपाण्डु चूतफल-

* बालविबोधिनी *

जन इत्यनेन सम्बध्यते । शीतरश्मीति–शीतरश्मेः चन्द्रस्य किरणा एव रज्जवस्तासां या दोला हिन्दोलिका तस्याः परिभ्रष्टः पतितः अतएव मूर्च्छितः सञ्जातमोहस्तादृशः अप्सरोगणो दिव्यवाराङ्गणासमूह इव । स्वैरसुप्तः–स्वच्छन्दनिद्रितः । सुन्दरीजनः स्त्रीसमुदायः । अरविन्दहस्ता देवी–लक्ष्मीः सेव । शारदेति–शारदं शरदि भवं यत् शशाङ्कमण्डलं चन्द्रबिम्बं तद्वदमलं स्वच्छं दुकूलं वस्त्रं तदेवोत्तरच्छदः आस्तरणं यस्य तत् । शयनतलस्य विशेषणम् ।

(५) एषा–शयाना स्त्री । देवयोषा–देवाङ्गना । न तावत्–नैव । यतो यस्मात् । संवाह्यमाना–मर्द्यमाना सेव्यमानेति यावत् । सङ्कुचति–यथा इन्दुकिरणैः स्पृश्यमाना कमलिनी सङ्कोचं प्राप्नोति तथा इयमपि निद्रया नेत्रसङ्कोचमधिगच्छतीति निद्रातीति भावः । अतो न देवी देवीनां स्वप्नाभावात् । भग्नवृन्तेति–भग्नवृन्तात् त्रुटितप्रसवबन्धनात् च्युतः क्षरितो यो रसस्तस्य बिन्दुभिः कणैः शबलितं कर्बुरितम् । तथा पाकपाण्डु–पाकेन परिणामेन पाण्डुवर्णं तादृशं चूत-

* बालक्रीडा *

किरणरूपी रस्सियोंद्वारा निर्मित हिंडोले (पालने) के ऊपरसे गिरकर अचेतनावस्थाको प्राप्त (मूर्छित) अप्सराओंके समान सुखपूर्वक शयन करनेवाली ये सुन्दरियां कौन हैं ? क्या यह कमलको हाथमें रखनेवाली लक्ष्मीके समान लक्ष्मी है ? अथवा कौन इस रीतिसे शरद् कालिक चन्द्रमण्डलके समानसफेद वस्त्रकी ओढ़नी (चादर) ओढ़े हुए इस पलङ्गपर सोया है ?

(५) यह सोयी हुई अंगना देवस्त्री नहीं है क्योंकि शनैः शनैः चन्द्रकिरणोंसे संसेव्यमान कमलिनीके सदृश संकुचित होकर सोती हुई दीख रही है, परन्तु देवगण सोते नही है । इसके कपोलोंपर पसीनेकी बूँदे इस तरह मालूम

मिथोद्भिन्नस्वेदरेखं गण्डस्थलमालक्ष्यते, अभिनवयौवनविदाहनिर्भरोष्मणि कुचतटे वैवर्ण्यमुपैति वर्णकम्। वाससी च परिभोगानुरूपं धूसरिमाण-मादर्शयतः, तदेषा मानुष्येव।

(६) दिष्ट्या चानुच्छिष्टयौवना, यतः सौकुमार्यमागताः सन्तोऽपि संहता इवावयवाः, प्रस्निग्धतमापि पाण्डुतानुविद्धेव देहच्छविः, स्मरपी-

* बालविबोधिनी *

फलमाम्रमिव। उद्भिन्नेति-उद्भिन्ना निर्गता स्वेदरेखा धर्मधारा यत्र तादृशं गण्ड-स्थलं कपोलदेशः। आलक्ष्यते-दृश्यते मयेति शेषः। अभिनवेति-अभिनवस्य प्रत्यग्रस्य यौवनस्य तारुण्यस्य विदाहेन विशिष्टतापेन निर्भरः प्रगाढ ऊष्मा सन्तापो यत्र तादृशे। वैवर्ण्यं मालिन्यम्। उपैति प्राप्नोति। वर्णकमङ्गरागोऽनु-लेपनमिति यावत्। वाससी-परिधेयवस्त्रद्वयम्। परिभोगानुरूप-व्यवहारोचितम्। धूसरिमाण मालिन्यम्। आ सम्यक् दर्शयतः प्रकाशयतः। तत्तस्मात्। एषा शयाना सुन्दरी। मानुषी मानवी।

(६) दिष्ट्या भाग्येन। अनुच्छिष्टेति-अनुच्छिष्टं अन्यैरनुपभुक्तं यौवनं यस्याः सा। यतः यस्मात् कारणात्। सौकुमार्यं कोमलत्वमागताः प्राप्ताः। संहताः सुश्लिष्टाः। अश्लथा इत्यर्थः। देहच्छविः शरीरकान्तिः प्रस्निग्धतमा-अतिशयेन स्निग्धा-मनोरमेति यावत् तादृश्यपि पाण्डुतया वैवर्ण्येनानुविद्धा युक्तेव प्रतिभाति। स्मरपीडानभिज्ञतया-कामस्यपीडा कीदृशीभवतीति न शायने

* बालक्रीडा *

होती हैं जिस तरह पेड़परसे गिरा हुआ सरस और परिपक्व तथा पीला आम का फल दिखलायी पड़ता है। अभिनव तारुण्यकी प्राप्तिसे उद्भूत शरीरका दाह जनित उष्णता-(गरमी-) से स्तनतट मलिन प्रतीत हो रहे हैं। इस स्त्रीके परिधान वस्त्र (पहिरनेके कपड़े) उपयोगमें होनेके कारण मैले दीख रहे हैं। अतः इन उपर्युक्त विचारोंके हेतु यह रमणी मानवी ही है-अन्या नहीं।

(६) भाग्यवशात् यह अमोलक किसीके द्वारा उपभोगित नहीं हुई है। क्योंकि इस रमणीके सब अवयव यद्यपि कोमल हैं तथापि सभी अवयव सुश्लिष्ट (मिले हुए) हैं। इसकी शरीर कान्ति मनोरम होनेपर भी पाण्डुवर्णा है-अतः

ज्ञानभिज्ञतया नातिविशदरागो मुखे, विद्रुमद्युतिरधरमणिः अनत्यापूर्णमारक्तमूलं चम्पककुड्मलदलमिव कठोरं कपोलतलम्, अनङ्गबाणपातमुक्ताशङ्कं च विश्रब्धमधुरं सुप्यते, न चैतद्वक्षःस्थलं निर्दयविमर्दविस्तारितमुखस्तनयुगलम्, अस्ति चानतिक्रान्तशिष्टमर्यादचेतसो ममास्यामा-

* बालविबोधिनी *

हेतोः मुखे वदने अतिविशदराग अत्यौज्ज्वल्यं न वर्त्तत इति शेषः। अधरमणि रधरबिम्बम्। विद्रुमद्युतिः प्रवालकान्तिः। अतिशयेनापूर्णमत्यापूर्णं तन्न भवतीति तथा। यौवनस्य पूर्णतायामेव सर्वेऽवयवाः पूर्णतां यान्ति। अतो यौवनप्रारम्भे वर्त्तमानाया अस्याः कपोलतल न तथातिपूर्णतां गतमित्याशयः। आरक्तं ईषद्रक्तं मूलं यस्य तत्। चम्पककुड्मलस्य चम्पककलिकायाः दलं पत्रमिव कठोरं कठिनं पूर्णमिति यावत्। कपोलतलं—गण्डस्थलम्। अनङ्गेति—क्रियाविशेषणम्। अनङ्गस्य कामस्य बाणपातात् शरपतनात् मुक्ता अपगता आशङ्का यस्मिंस्तद्यथा तथा अनूढाया स्तस्याः कामशराद्भीतिरपि नास्तीति भावः। विश्रब्धं विश्वस्तमतएव मधुरं मनोरमं यथा तथा सुप्यते निद्रीयतेऽनयेति शेषः। न चेति—एतस्या वक्षःस्थलमुरोदेशः, निर्दयविमर्देन गाढालिङ्गनादिना विस्तारितं प्रकटितं मुखमग्रभागो यस्य तादृशं स्तनयुगलं यत्र तथाभूतं न भवति। अनतिक्रान्तेति—अनतिक्रान्ता अनुल्लङ्घिता शिष्टानां प्रामाणिकानां मर्यादा सीमा येन तादृशं चेतो हृदयं यस्य तथाभूतस्य ममास्या कन्यायामासक्तिरभिलाषोऽस्तीति

* बालक्रीडा *

अति सुन्दर है। कामदेवकी व्यथासे अनभिज्ञ होनेके कारण इसके मुखपर उज्ज्वलराग नहीं दिखाई पड़ता है। मूंगेकी लालिमाके तुल्य इसकी अधरमणि मनोरम है। अपूर्ण और कुछ कुछ लाल इसके कपोलतल चम्पाके कलीके समान कठोर हैं। कामशरोंके प्रहारकी भीतिसे रहित होकर यह विश्वासपूर्वक सुन्दर रीतिसे शयन करती है। (अनूढ़ा है) इसके वक्षःस्थलको निर्दय तथा गाढ आलिंगनका स्पर्श भी नहीं हुआ है—क्योंकि इसके स्तनतटका अग्रभाग प्रसरित नहीं है। शिष्टोंकी मर्यादाको अनुसरण करनेवाली मेरे मनकी

सक्ति। आसक्त्यनुरूपं पुनराश्लिष्टा यदि, स्पष्टमार्तरवेणैव सह निद्रां मोक्ष्यति।

(७) अथाहं न शक्ष्यामि चानुपश्लिष्य शयितुम्। अतो यद्भावि तद्भवतु। 'भाग्यमत्र परीक्षिष्ये' इति स्पृष्टास्पृष्टमेव किमप्याविद्ध-रागसाध्वसं लक्षसुप्तः स्थितोऽस्मि। सापि किमप्युत्कम्पिना रोमोद्भेद-वता वामपार्श्वेन सुखायमानेन मन्दमन्दजृम्भिकारम्भमन्थराङ्गी, त्वङ्ग-

* बालविबोधिनी *

पूर्वेणान्वयः। आत्मतुष्टिप्रमाणेनास्या मे ऽनुरागो न दोषावह इति भाव। आ-सक्त्यनुरूप आसक्ते रनुरागस्य सदृशम्। यदि पुनराश्लिष्टा आलिङ्गिता स्पष्टं निश्चितम्। आर्त रवेण-कातरस्वरेण सहैव सहितमेव निद्रां मोक्ष्यति त्यक्ष्यति।

(७) अथ पक्षान्तरे। न शक्ष्यामि-न समर्थो भविष्यामि। अनुपश्लिष्य-अनालिङ्ग्य। अत.-गत्यन्तराभावात्। भावि-भविष्यति। भाग्यमदृष्टम्। अत्र अस्मिन् विषये। परीक्षिष्ये भाग्यपरीक्षां करिष्यामीत्यर्थः। इति-एवं विचार्य। स्पृष्टास्पृष्टं-कियत् स्पृष्टं कियच्चास्पृष्टं यस्मिंस्तद्यथा तथा। आविद्धरागसाध्वस-आविद्धोऽनुस्यूतो रागआसक्ति. साध्वसं भयं च यस्मिंस्तद्यथा तथा। अपूर्वकन्या-लाभाद्रागः-स्पृष्टाचेदार्तस्वरं कुर्यादिति साध्वसम्। लक्षसुप्तः-कपटनिद्रितः। कि-मियं करोतीति द्रष्टुं कपटनिद्रामधिगत इत्यर्थः। सा-कन्या। किमपि-किञ्चित्। उत्कम्पिना कम्पनशीलेन। रोमोद्भेदवता-रोमाञ्चयुक्तेन। सुखायमानेन-सुखमनु-भवता। वामपार्श्वेनेत्यस्य विशेषणम्। वामपार्श्वेनेत्यत्रोपलक्षणे तृतीया। मन्द-मन्देति-मन्दमन्द स्वल्पं यथा तथा जृम्भिकाया गात्रमोटनस्य आरम्भेण मन्थर-

* बालक्रीडा *

आसक्ति इस बालाके ऊपर हुई है। यदि मैं अपनी आसक्तिके (अपने अनु-रागके) अनुरूप इसका आलिङ्गन करू तो, यह अवश्य कातरस्वरके साथ निद्राको त्यागेगी।

(७) अस्तु, अब मैं इसका आलिंगन किये बिना सोनेमें भी असमर्थ हूँ। अतः जो भी होना होवे सो होवे। मैं अपने भाग्यकी यहा परीक्षा करूगा। और मैंने उस कन्याको अनुरागसे जरा स्पर्श किया पुनः इस शङ्कासे कि, यह चिल्ला-

दग्रपक्ष्मणोश्चक्षुषोरलसतान्ततारकेणानतिपक्वनिद्राकषायितापाङ्गपरभागेन युगलेनेषदुन्मिषन्ती, त्रासविस्मयहर्षरागशङ्काविलासविभ्रमव्यवहितानि व्रीडान्तराणि कानि कान्यपि कामेनाद्भुतानुभावेनावस्थान्तराणि कार्यमाणा, परिजनप्रबोधनोद्यतां गिरं कामावेगपरवशं हृदयमङ्गानि च साध्व-

* बालविबोधिनी *

मलसमङ्गं यस्याः सा । त्वङ्गदिति–त्वङ्गत् चलदग्रपक्ष्म पक्ष्माग्रं ययोस्तयोः । चक्षुषोरित्यस्याग्रिमेण युगलेनेत्यनेन सम्बन्धः । अलसेति–अलसे–मन्थरे मद्दर्शनार्थमिति भावः । तथा तान्ते क्लान्ते निद्राया अपरिपक्वतयेति भावः, तारके कनीनिके यत्र तेन । अनतिपक्वेति–अनतिपक्वया असम्पूर्णया निद्रया कषायितो मलिनीकृतः अपाङ्गयोर्नेत्रप्रान्तयोः परभागो गुणोत्कर्षो यस्य तेन तादृशेन चक्षुषोर्युगलेन । ईषत्–मन्दं मन्दम् उन्मिषन्ती–नेत्रोन्मीलनं कुर्वाणा । त्रासेति–त्रासः अपरिचितोऽयं कथमागत इति भीतिः–विस्मयः–कथं सुरक्षितेऽपि गृहेऽस्यागम इति आश्चर्यम् , हर्षः तथाविधमनोहरवपुर्दर्शनादानन्दम्-रागः हर्षजनितोऽनुरागः, शङ्का–एवं विधा मा विलोक्य किं कथयिष्यन्ति जना इत्याशङ्का विलासः स्त्रीणां सात्त्विको भावविशेषः । विभ्रमोऽपि तथा–अस्थानेवसनभूषणादीनां न्यासरूपः एतव्यंवहितान्यनुविद्धानि, व्रीडान्तराणि–व्रीड़ा लज्जा अन्तरामध्ये येषां तानि । कानि कानि–अनिर्वचनीयानि, अवस्थान्तराणीत्यस्य विशेषणानि । अद्भुतानुभावेन–विस्मयकरप्रभावेण । अवस्थान्तराणि–दशाविशेषान् । कार्यमा-

* बालक्रीडा *

योगी अतः कपट निद्रासे सो गया, पुनः उसका स्पर्श किया आदि । वह रमणी भी स्वोत्पन्न कुछ रोमांचोसे अपने वायें पार्श्वसे सुखका अनुभव करती हुई, धीरे-धीरे आलस करती हुई अपने शरीरकी प्रक्रिया प्रारम्भ करने लगी । कांपते हुए पक्ष्मोंसे, आलस्यपूर्ण नयनोंको खोलनेसे तथा उनमें पर्याप्त मात्रामें निद्रा न होनेके कारण व्यथित तथा अर्ध विकासित नेत्रोंसे देखती हुई मालूम पड़ी । अपरिचित पुरुषको देखनेसे उसे भय उत्पन्न हुआ । यह पुरुष यहां किस तरहसे आया इसका ठीक ज्ञान न होनेसे उसे आश्चर्य हुआ । मेरे समान युवकके दर्शनलाभसे उसे हर्ष हुआ उसी हर्षके कारण उसे प्रेम भी उत्पन्न हुआ । इस

सायाससम्भव्यमानस्वेदपुलकानि कथकथमपि निगृह्य, सस्पृहेण मधुरकूणितत्रिभागेन मन्दमन्दप्रचारितेन चक्षुषा मदङ्गानि निर्वर्ण्य, दूरोत्सर्पितपूर्वकायापि तस्मिन्नेव शयने सचकितमशयिष्ट ।

(८) अजनिष्ट मे रागाविष्टचेतसोऽपि किमपि निद्रा । पुनरननुकू-

* बालविबोधिनी *

णा=अनुभाव्यमाना । णिजन्तात् कृधातोः कर्मणि शानच् । परिजनेति-परिजनाना सुमसहचरीणां प्रबोधनाय जागरणाय उद्यता प्रवृत्ता गिर वाचम् । निगृह्येति वक्ष्यमाणया क्रियया सम्बन्धः । तथा श्रमेऽपि । कामस्यावेग आवेशस्तस्य परवशमधीनम् तादृशं हृदय चित्तं निगृह्येतिशेष । साध्वसेति साध्वसेन भयेन य आयासः खेदस्तेन सवध्यमानानि जायमानानि स्वेदपुलकानि सघर्मरोमाञ्चानि येषु तानि । अङ्गानीत्यस्य विशेषणम् । निगृह्य निरुध्य सस्पृहेण-सतृष्णेन । मधुरेति-मधुरयथा तथा कूणितः सङ्कुचित. त्रिभाग प्रान्तभागो यस्य तेन । मन्दमन्दप्रचारितेन-ईषदीषत् सञ्चारितेन । चक्षुर्विशेषणान्येतानि । निर्वर्ण्य-दृष्ट्वा । दूरोत्सर्पितेतिदूरमत्यन्तं उत्सर्पितं ऊर्ध्वीकृत पूर्वकायं देहपूर्वभागो यया सा । सचकितं-सभयम् ।

(८) अजनिष्ट-जाता । मे मम प्रमतेरित्यर्थः । रागाविष्टचेतसः-प्रेमपूर्ण-

* बालक्रीडा *

प्रकारसे मुझे देखकर लोग क्या कहेंगे इसपर शङ्का हुई । मुझे देखनेसे उसे जो सात्त्विकभाव उत्पन्न हुआ उस कारण वह अपने अलङ्कार आदिको यथास्थान स्थित होनेपर भी बीच-बीचमें उन्हें बजाकर सवारती हुई तथा लज्जा दिखाती हुई और कामके वाणसे पराधीन होकर अनेको रीतिसे अपने विचित्र अनुभावोंको करने लगी । अपनी सखीजनोंको जगानेवाली उद्यत वाणीको, कामवेगमें परवश चित्तको, भयसे उत्पन्न जो खेद उससे उद्भूत जो पसीनेकी बूदें उनको और अपने रोमाञ्चोंको दबाती हुई वह बाला दिखाई पड़ी । तृष्णाके साथ अपने नयनोंके तीन भागोंको बन्द करके चौथे भागसे धीरे-धीरे मेरे शरीरको देखकर वह बाला अपने देहके ऊपरी भागको अत्यन्त दूर करके उसी पलङ्गपर भययुक्त हो सो गयी ।

(८) मेरे (प्रमतिके) अन्तःकरणमें उसका अनुराग प्रविष्ट हो गया ।

लस्पर्शदुःखायत्तगात्रः प्राबुध्ये । प्रबुद्धस्य च सैव मे महाटवी, तदेव तरुतलम्, स एव पत्रास्तरो ममाभूत् । विभावरी च व्यभासीत् । अभूच्च मे मनसि किमयं स्वप्नः, किं विप्रलम्भो वा, किमियमासुरी दैवी वा कापि माया । यद्भावि तद्भवतु । नाहमिदं तत्त्वतो नावबुध्य मोक्ष्यामि भूमिशय्याम् । यावदायुरत्रत्यायै देवतायै प्रतिशयितो भवामि' इति निश्चितमतिरतिष्ठम् ।

(९) अथाविर्भूय कापि रविकराभितप्तकुवलयदामताम्ताङ्गयष्टिः,

* बालविबोधिनी *

मानसस्य । किमपि अनिर्वाच्यहेतुका । पुनरिति पुनः पुनरपि अननुकूलः अप्रियो यः स्पर्शस्तेन यद्दुःखं खेदस्तेनायत्तमधीनं गात्रं शरीरं यस्य तादृशः । प्राबुध्ये–जागरितः । सैव पूर्ववदेव । पत्रास्तरः–पर्णशयनम् । निद्रापगमे पूर्ववदेव दशा सञ्जातेति भावः । व्यभासीत्–प्रभाता । अयं–यन्मे महति प्रासादे तादृश्यास्तरुण्या दर्शनं तत् । विप्रलम्भः प्रतारणम् । केनापि वञ्चितोऽहमस्मि किमित्यर्थः । माया–छलना । तत्त्वतो–याथार्थ्येन । न अवबुध्य–अज्ञात्वा । मोक्ष्यामि–त्यक्ष्यामि । यावदायुः–यावज्जीवनम् । अत्रत्यायै अरण्यस्थितायै । देवतां द्रष्टुमित्यर्थः । प्रतिशयितः–यावद्देवतागत्य वृत्तान्तमिमं न प्रकाशयेत्तावदशनादिकं परित्यज्यात्रैव शयिष्ये इति प्रतिज्ञां कृत्वा शयितः । निश्चितमतिः–स्थिरबुद्धिः ।

(६) आविर्भूय-सम्मुखमागत्य । कापीत्यादि विशेषणानि सीमन्तिन्याः ।

* बालक्रीडा *

परन्तु मैं कुछ निद्रित हो गया । फिर वही शरीरको कष्टप्रद शयन प्रतीत होने लगी । जब मैं जगा तो अपनेको पुनः उसी अरण्यमें । उसी पेड़के नीचे, उस पत्र-शय्यापर सोया हुआ पाया । रात्रि बीत गयी । मेरे अन्तःकरणमें चिन्ता व्याप्त हुई कि, क्या यह स्वप्न था, अथवा मैं प्रतारित किया गया, अथवा दैवी या आसुरी (राक्षसी) माया थी ? जो भी हो, सो हो । जबतक मैं इस रहस्यको न ज्ञात कर लूंगा तबतक इस भूमिपर सोना न छोड़ूगा । अपने जीवनभर यहीं रहूंगा—अर्थात जबतक यहाकी देवी मुझे आकर यह रहस्य न बता देंगी तबतक यह स्थान न छोड़ूगा । ऐसी दृढ़मति करके मैं वहीं अवस्थित रहा ।

(६) इतनेमें ही, भगवान् सूर्यकी किरणोंद्वारा परितप्त कमलोंकी मालाके

क्लिष्टनिवसनोत्तरीया, निरलक्तरूक्षपाटलेन निःश्वासोष्मजर्जरितत्विषा दन्तच्छदेन वमन्तीव कपिलधूमधूम्रं विरहानलम्, अनवरतसलिलधारा-विसर्जनाद्रुधिरावशेषमिव लोहिततरं द्वितयमक्ष्णोरुद्वहन्ती, कुलचारित्र-बन्धनपाशविभ्रमेणैकवेणीभूतेन केशपाशेन नीलांशुकचीरचूलिकापरिवृता

* बालविबोधिनी *

रविकरेति-रवेः सूर्यस्य करैः किरणैरभितप्तं सन्तप्तं यत्कुवलयदाम नीलोत्पलमाला तद्वत् तान्ता क्लान्ता अङ्गयष्टिः देहलता यस्याः सा। क्लिष्टे जीर्णे निवसनोत्तरीये परिधेयाच्छादने यस्याः सा। निरलक्तः अलक्तकरागशून्यः अतएव रूक्षः कर्कशः, पाटलः स्वभावरक्तश्च तेन। दन्तच्छदेनेत्यस्य विशेषणम्। निःश्वासोष्मणा तप्तनिःश्वासेन जर्जरिता म्लाना त्विट् कान्तिर्यस्य तेन। दन्तच्छदेन ओष्ठेन। वमन्तीव-उद्गिरन्तीव-प्रकटयन्तीवेतियावत्। कपिलः पिङ्गलः यो धूमस्तेन धूम्रमारक्तश्यामं तादृशं विरहानलं विच्छेदाग्निम्। अनवरतं निरन्तरं सलिलधाराया अश्रुधाराया विसर्जनात् त्यागात् निरन्तराश्रुवर्षणेनेत्यर्थः। रुधिरावशेषं शोणितमात्रमिव लोहिततरमतिरक्तं मक्ष्णोश्चक्षुषोर्द्वितयं युगलमुद्वहन्ती धारयन्ती, कुलं वंशः चारित्रं पातिव्रत्यं तयोर्बन्धनाय पाशस्य रज्वा इव विभ्रमो विलासो यस्य तेन, एकवेणीभूतेन एकवेण्याकारेण केशपाशेन चिकुरकलापेनोपलक्षिता। नीलं श्यामवर्णं यदंशुकचीरं वस्त्रखण्डं तन्निर्मिता या चूलिका कञ्चुलिका तया परिवृता व्याप्ता। अतएव सञ्चरन्ती भ्रमन्ती पतिव्रतायाः पताका

* बालक्रीडा *

समान क्लान्त और क्षीण देहवाली, एक अंगना दिखायी पड़ी। जिसके उत्तरीय वस्त्र जीर्ण (पुराने) थे। जिसके अधर अलक्त रागसे शून्य होनेसे किंचित लाल दीख रहे थे। गरम निःश्वासोंकी पवनसे पीड़ित ओष्ठ कुछ लाल तथा धूमरङ्गके हो करके विच्छेदाग्निको मानो वमन कर रहे थे। जिसके दोनों नेत्र निरन्तर अश्रुधारा बहानेके कारण लाल-लाल वर्णवाले दिखायी पड़ते थे। जो अपने वंशानुरूप चरित्रके सेवनके कारण बन्धन विभ्रमके एक वेणी व्रतको पालन करती हुई नीले वस्त्र और नीले वस्त्रकी बनी हुई चोलीको धारण किये हुए पतिव्रताकी ध्वजाके सदृश दीख रही थी। जो शरीरसे अत्यन्त दुर्बला होनेपर भी देवताओंके प्रभावसे उज्ज्वल कान्तिवाली महिला दिखायी पड़ती थी।

पतिव्रतापताकेव सञ्चरन्ती, क्षामक्षामापि देवतानुभावादनतिक्षीणवर्णावकाशा सीमन्तिनी, प्रणिपतन्तं मां प्रहर्षोत्कम्पितेन भुजलताद्वयेनोत्थाप्य पुत्रवत्परिष्वज्य शिरस्युपाघ्राय वात्सल्यमिव स्तनयुगलेन स्तन्यच्छलात्प्रक्षरन्ती, शिशिरेणाश्रुणा निरुद्धकण्ठी स्नेहगद्गदं व्याहार्षीत्—

(१०) 'वत्स, यदि वः कथितवती मगधराजमहिषी वसुमती मम हस्ते बालमर्थपालं निधाय कथां च काञ्चिदात्मभर्तृपुत्रसखीजनानुबद्धां राजराजप्रवर्तितां कृत्वान्तर्धानमगादात्मजा मणिभद्रस्येति', साहमस्मि वो

* बालविबोधिनी *

वैजयन्तीव । पातिव्रत्यसूचिकेत्यर्थः । क्षामक्षामा—अतिकृशा । देवतानुभावात्—देवत्वप्रभावात् । अनतिक्षीणः—नातिमलिनो वर्णावकाशो वर्णोज्वल्यं यस्याः सा प्रणिपतन्तं—नमस्कुर्वन्तम् । मां—प्रमतिमित्यर्थः । प्रहर्षोत्कम्पितेन आनन्दातिशयवशाद्वेपथुमता । उपाघ्राय आलिङ्ग्य । वात्सल्यं स्नेहरसम् । स्तन्यच्छलात्—स्तनदुग्धव्याजेन । शिशिरेण—शीतलेन । निरुद्ध-कण्ठी—स्तब्धकण्ठस्वरा । व्याहार्षीत् अवोचत् ।

(१०) वः—युष्मभ्यं युष्माकं सकाशे इत्यर्थः । मम—वसुमत्याः । बालं शिशुम् । विधाय—समर्प्य । कथां—वृत्तान्तम् । आत्मनः स्वस्य तारावल्या इत्यर्थः, भर्तुः स्वामिनः, पुत्रस्य तनयस्य, सखीजनस्य सुहृद्वर्गस्यानुबद्धां सम्बन्धिनीम् । राजराजप्रवर्त्तितां—कुबेरप्रोक्ताम् । कृत्वा कथयित्वा । अन्तर्धानं—तिरोधानम्, अगात्—

* बालक्रीडा *

जब उपर्युक्त लक्षणोंवाली महिला दिखायी पड़ी तो, मैंने उसको प्रणाम करना चाहा । मुझे नतमस्तक होते अवलोकन करके उस मान्य महिलाने अत्यन्त हर्षान्वित होकर अपनी कांपती हुई भुजारूपी लताओंसे उठा लिया । और पुत्रके तुल्य मेरे शिरको सूंघ करके आलिङ्गनादि किया । वात्सल्य-प्रीतिके कारण अपने स्तनोंसे दूधको टपकाती हुई तथा आंखोंसे आंसू बहाती हुई निरुद्ध कण्ठवाली वह महिला मुझसे कहने लगी ।

(१०) "हे वत्स ! जो वार्ता आप लोगोंसे मगधराज राजहंसकी देवी वसुमतीने कही थीं कि, एक अंगना इस शिशुको निद्रावस्थामें मेरी गोदमें धर

जननी। पितुर्वो धर्मपालसूनोः सुमन्त्रानुजस्य कामपालस्य पादमूलान्निष्कारणकोपकलुषिताशया प्रोष्यानुशयविधुरा स्वप्ने केनापि रक्षोरूपेणोपेत्य शप्तास्मि—'चण्डिकायां त्वयि वर्षमात्रं वसामि प्रवासदुःखाय' इति ब्रुवतैवाहमाविष्टा प्राबुध्ये। गतं च तद्वर्षं वर्षसहस्रदीर्घम्।

(११) अतीतायां तु यामिन्यां देवदेवस्य त्र्यम्बकस्य श्रावस्त्यामु-

*** बालविबोधिनी ***

जगाम। आत्मजा कन्या तारावलीति यावत्। सा वसुमतीकथिता तारावली। वो युष्माकम्। जननी—मातृस्थानीया—पितृव्यपत्नीत्वात्। पादमूलात्—चरणाश्रयात्। निष्कारणेति—निष्कारणेन सपत्नीर्ष्यावशादनर्थकेन कोपेन कलुषितः मलिन आशयश्चित्ताभिप्रायो यस्याः सा। प्रोष्य प्रवासं गत्वा। अनुशयविधुरा—पश्चात्तापक्लिष्टा। रक्षोरूपेण—राक्षसमूर्त्या। चण्डिकायां—अतिकोपनायाम्। वर्षमात्रं—संवत्सरमेकम्। वसामि—अधितिष्ठामि। प्रवासदुःखोत्पादनार्थम्। ब्रुवता—कथयता। आविष्टा तेन कृतावेशा। प्राबुध्ये—जागरिताऽभवम्। गतं व्यतीतम्। वर्षसहस्रदीर्घं—अतिमहत्।

(११) अतीतायां यामिन्यां—पूर्वदिवसीयरात्रौ। श्रावस्त्यां तदाख्यनगर्याम्।

*** बालक्रीडा ***

करके बोली" राजराज कुबेरकी आज्ञासे राजवाहनकी सेवाके लिये मैं इस शिशुको आपको दे रही हूं तथा अपनी सखी आदि परिजनोंकी कथा आदि कह करके जो तिरोहित हो गयी थी। वही मणिभद्र नामक यक्षकी कन्या तारावली मैं आपकी मा हूं। धर्मपालके लड़के और सुमन्त्रके छोटे भाई कामपाल जो आपके जनक (पिता) हैं उनपर मैंने अकारण ही क्रोध किया था। और क्रोधके कारण मैं मलिन हृदय हो करके उन्हें छोडकर प्रवासमें चली गयी थी। तदनन्तर पश्चात्ताप करती हुई वियोगिनीकी दशामें मैं एक रात्रिमें स्वप्नगता थी कि, किसी राक्षसरूपकी एक प्रतिकृतिने मुझे शाप दे दी। "प्रवासमें (परदेशमें) दुःख देनेके लिये मैं तेरे शरीरमें एक वरसतक निवास करूंगी।" ऐसा कहकर उस प्रतिकृतिने मेरे शरीरमें प्रवेश कर लिया। और उससे आविष्ट एक वर्षको मैंने एक हजार बरसोंके समान व्यतीत किया।

(११) गत रात्रिमें श्रावस्ती नामक नगरीमें देवदेव त्र्यम्बक महादेवजीके

त्सवसमाजमनुभूय बन्धुजनं च स्थानस्थानेभ्यः संनिपातितमभिसमीक्ष्य मुक्तशापा पत्युः पार्श्वमभिसरामीति प्रस्थितायामेव मयि, त्वमत्राभ्युपेत्य 'प्रतिपन्नोऽस्मि शरणमिहत्यां देवताम्' इति प्रसुप्तोऽसि। एवं शापदुःखाविष्टया तु मया तदा न तत्त्वतः परिच्छिन्नो भवान् अपि तु शरणागतमविरलप्रमादायामस्यां महाटव्यामयुक्तं परित्यज्य गन्तुमिति मया त्वमपि स्वपन्नेवासि नीतः। प्रत्यासन्ने च तस्मिन्देवगृहे पुनरचिन्तयम्—'कथमिह तरुणेनानेन सह समाजं गमिष्यामि' इति।

* बालविबोधिनी *

उत्सवसमाजं-उत्सवगोष्ठीम्। अनुभूय-उपभुज्य। बन्धुजनं-मदीयसुहृद्वर्गम्। स्थानस्थानेभ्यः-विभिन्नप्रदेशेभ्यः। संनिपातितं समागतम्। अभिसमीक्ष्य दृष्ट्वा। मुक्तशापा-विगतशापा। पत्युः-कामपालस्य। अभिसरामि गच्छामि। प्रस्थितायां चलितायाम्। त्वं-प्रमतिः। अत्राटव्याम्। शापदुःखेन-आविष्टया विह्वलया। तदा तस्मिन् काले तत्त्वतो याथार्थ्येन भवांस्त्वं न परिच्छिन्नः ज्ञातः। अपितु-किन्तु। शरणागतं शरणापन्नं त्वामिति शेषः अविरलप्रमादायां-निरन्तरविपत्सङ्कुलायाम्। अयुक्तमनुचितम्। स्वपन् निद्राण एव मयानीतोऽसीत्यन्वयः। प्रत्यासन्ने-समीपवर्त्तिनि। तस्मिन् पूर्वोक्ते। देवगृहे देवमन्दिरे। तरुणेन युवकेन। समाजमुत्सवसभाम्।

* बालक्रीडा *

मन्दिरमें महोत्सव हो रहा था। वहांपर उत्सवको देखने विभिन्न प्रदेशोंसे आये हुए बन्धुवर्गोंके समुदायको ज्ञात करके मैं भी शाप रहित होकर पतिदेव कामपालके समीप जानेकी इच्छा कर रही थी। इतनेमें ही आपने (प्रमतिने) इस वनमें आकरके यहांकी निवासिनी देवीके प्रति शरणार्थी होनेकी प्रार्थना की और प्रार्थनानन्तर आप सो भी गये। यद्यपि शापके दुःखोंसे विह्वला मैं आपको ठीक-ठीक पहिचान तो न सकी किन्तु, शरणार्थीजनको भयावने जङ्गलमें अकेले छोड़ करके जाना अयुक्त समझा। अतः मैं आपको निद्रावस्थामें ही उठा करके यहांसे ले गयी। उन त्र्यम्बक भगवान्के मन्दिरके पास जाकर सोचने लगी। मैं इस युवकके साथ इस उत्सवगोष्ठीमें कैसे जाऊंगी।"

(१२) अथ राज्ञ' श्रावस्तीश्वरस्य यथार्थनाम्नो धर्मवर्धनस्य कन्यां नवमालिका घर्मकालसुभगे कन्यापुरविमानहर्म्यतले विशालकोमलतलं शय्यातलमधिशयाना यदृच्छयोपलभ्य 'दिष्ट्येयं सुप्ता, परिजनश्च गाढ-निद्रः । शेतामयमत्र मुहूर्तमात्रं ब्राह्मणकुमारो यावत्कृतकृत्या निवर्तेय' इति त्वां तत्र शाययित्वा तमुद्देशमगमम् । दृष्ट्वा चोत्सवश्रियम्, निर्विश्य च स्वजनदर्शनसुखमभिवाद्य च त्रिभुवनेश्वरमात्मालीकप्रत्याकलनोपारू-ढसाध्वसं च नमस्कृत्य भक्तिप्रणतहृदया भगवतीमम्बिकाम्, तया गिरि-दुहित्रा देव्या सस्मितम् 'अयि भद्रे, मा भैषी । भवेदानीं भर्तृपार्श्वगा-

* बालविबोधिनी *

(१२) यथार्थनाम्न –सार्थकनामवत । घर्मकालसुभगे–ग्रीष्मसमयमनोरमे । कन्यापुरे यद् विमान सप्ततलगृह तस्य हर्म्यतले कुट्टिमे । यदृच्छया–दैवयोगेन । उपलभ्य प्राप्य । दिष्ट्या भाग्येन । इय नवमालिका । परिजनः सहचरीवर्गः । गाढा सान्द्रा निद्रा यस्य सः ।शेता शयन करोतु । शयनार्थकशीधातोर्लोटि रूपम् । अय तरुणः प्रमतिरिति यावत् । कृतकृत्या–सम्पादितस्वकार्या अहमिति शेषः । तत्र कन्यान्तःपुरे । तमुद्देश उत्सवसमाजम् । निर्विश्य–उपभुज्य । अभिवाद्य प्रणम्य । आत्मेति-आत्मनः स्वस्यालीकमपराधः तस्य प्रत्याकलनेन ज्ञानेनोपारूढं सञ्जात साध्वसं लज्जा यस्मिंस्तद्यथा तथा । भक्त्या प्रणतं नम्रं हृदयं यस्याः सा

* बालक्रीडा *

(१२) तदनन्तर दैवयोगसे मैंने श्रावस्ती नगरीके राजा यथार्थनामा महाराज धर्मवर्धनकी पुत्री नवमालिकाको देखा । जो नवमालिका ग्रीष्मकालके लिये सुखदायी राजभवनमें बड़ी भारी चारपाईपर प्रगाढ़ निद्रामें सो रही थी । भाग्यवशात् यह भी सोयी हुई है और यह परिजन भी गाढ़ी नींदमें सोये हुए हैं । ऐसा विचार करके मैंने आपको तबतकके लिये वहीं सुला दिया । जब-तक मैं लौट न आऊ । अर्थात्—मैंने सोचा–यह ब्राह्मणका बालक मुहूर्तमात्र यहापर सोवे और तबतक मैं दर्शनादिसे कृतकृत्य होकर लौटती हूं ।' ऐसी व्यवस्था करके-आपको सुलाकर –मैं उस मन्दिरमें गयी । वहा महोत्सवकी शोभा देखी और अपने परिजनोंके दर्शन सुखका अनुभव प्राप्त किया । प्रका-

मिनी । गतस्ते शापः' इत्यनुगृहीता सद्य एव प्रत्यापन्नमहिमा प्रतिनिवृत्त्य दृष्ट्वैव त्वां यथावदभ्यजानाम्—'कथं मत्सुत एवायं वत्सस्यार्थपालस्य प्राणभूतः सखा प्रमतिरिति पापया मयास्मिन्नज्ञानादौदासीन्यमाचरितम् । अपि चायमस्यामासक्तभावः । कन्या चैनं कामयते युवानम् । उभौ चेमौ लक्षसुप्तौ त्रपया साध्वसेन वान्योन्यमात्मानं न विवृण्वाते । गन्तव्यं च मया । कामाघ्रातयाप्यनया कन्यया रहस्यरक्षणाय न समाभाषितः सखी-

* बालविबोधिनी *

अहमितिशेषः । गिरिदुहित्रा-हिमालयकन्यया । अनुगृहीतेतिक्रियायाः कर्तृपद-मेतत् । सद्यस्तत्क्षणम् । प्रत्यापन्नमहिमा-पुनः प्राप्तदैवप्रभावा । यथावत्-तत्त्वतः। अभ्यजानाम्-ज्ञातवती । औदासीन्यं-उचितयत्नाभावः । अयं प्रमतिः । अस्यां नवमालिकायाम् । आसक्तभावः-अनुरक्तचित्तः । लक्षसुप्तौ-कपटनिद्रितौ । त्र-पया-लज्जया साध्वसेन भयेन । विवृण्वाते प्रकाशयतः । कामाघ्रातया-मदनस्पृ-ष्टया । रहस्य-रक्षणाय-गोप्यसंवरणार्थम् । समाभाषितः कथितः । नयामि-इतो-

* बालक्रीडा *

रण ही आत्मकृत अपराधके स्मरण होनेसे उत्पन्न लज्जाके वश होकर मैंने तीनों लोकोंके स्वामी शिवको प्रणाम किया । फिर भक्तिसे प्रणत हृदय होकर मैंने भगवती अम्बिकाको प्रणाम किया । ततः वे गिरिनन्दिनी देवी हंस करके बोली—"हे सौम्ये ! मत डरो, अब अपने पतिके समीप जाओ । तुम्हारा शाप नष्ट हो गया ।" अम्बिकाके इस प्रसादसे तत्क्षणमें ही मुझे सभी बातोंका ज्ञान ठीक-ठीक होने लगा । "अरे ! पापात्मा होनेके कारण पूर्वमें मैंने अपनी अज्ञतावश इसे नहीं पहिचाना और उदासीनता दिखायी । यह तो मेरे लड़के अर्थपालका प्राणके समान सखा प्रमति है । तथा यह प्रमति इस कन्यापर आसक्त है और यह कन्या नवमालिका भी इसे चाहती है। ये दोनों कपट निद्रामें सो रहे हैं । लज्जा और भयसे अपने-अपने अभिप्रायोंको प्रकाशित नहीं कर रहे हैं । मुझे जाना भी है । यद्यपि यह राजकन्या नवमालिका भी कामपीडिता हो गयी है, परन्तु, रहस्य प्रकट न हो जाय । इसी कारण सखी आदि परिजनोंसे प्रकाशित नहीं कर रही है । अब मैं राजकुमार प्रमतिको ले जाती हूं । फिरसे

जनः परिजनो वा। नयामि तावत्कुमारम्। पुनरपीममर्थं लब्धलक्षो यथोपपन्नैरुपायैः साधयिष्यति' इति मत्प्रभावप्रस्वापितं भवन्तमेतदेव पत्रशयनं प्रत्यनैषम्।

(१३) एवमिदं वृत्तम्। 'एषा चाहं पितुस्ते पादमूलं प्रत्युपसर्पेयम्' इति प्राञ्जलिं मां भूयोभूयः परिष्वज्य शिरस्युपाघ्राय कपोलयोश्चुम्बित्वा स्नेहविह्वला गतासीत्। अहं च पञ्चबाणवश्यः श्रावस्तीमभ्यवर्तिषि।

अन्यत्र प्रापयामि। कुमारं–प्रमतिम्। इममर्थं–नवमालिकाप्राप्तिरूपम्। लब्धलक्ष:–प्राप्तावसरः। यथोपपन्नैः–युक्तियुक्तैः। मत्प्रभावप्रस्वापितं–मन्मायया निद्रापितम्। भवन्तं त्वाम्। अनैषम्–नीतवती।

(१३) एवम्– एतावत्। पितुः–पितृव्यस्य पित्रा तुल्यत्वात्कामपालस्येत्यर्थः। उपसर्पेयं गच्छेयम्। प्राञ्जलिं–प्रणतम्। कपोलयोर्गण्डयोः। स्नेहविह्वला–वात्सल्यरसाविष्टा। पञ्चबाणवश्यः कामपरतन्त्रः अभ्यवर्तिषि–तदभिमुखमगच्छम्।

(१४) मार्गे–श्रावस्त्याः पथि। निगमे वणिजां ग्रामे। निगमो विषये वेदे

* बालक्रीडा *

इस अर्थकी सिद्धिके लिये अर्थात् नवमालिकाको प्राप्त करनेके लिये यह राजकुमार उचित उपायोंकी युक्तियोंसे इस कुमारीको प्राप्त कर लेगा। बस, इस रीतिसे मैंने अपने प्रभावसे आपको सुला करके (निद्रित करके) पुनः इस अरण्यकी पत्र–शय्यापर ला दिया।

(१३) इसी प्रकारसे यह वृत्त जानिये। अब मैं आपके पिता कामपालके चरणोंके समीप जा रही हूं। ऐसा कह करके उस महिलाने मुझे बेर–बेर आलिङ्गित किया। फिर मेरे शिरको सूंघकर तथा गालोंको भी चूमा एवं स्नेहसे विह्वल होकर मुझसे विदा ले ली। मैं भी कामपीड़ित हो गया था। अतः उस कुमारी नवमालिकाकी प्राप्तिके लिये श्रावस्तीकी ओर चल पड़ा।

(१४) श्रावस्ती नगरीके मार्गमें एक जगह वणिकोंकी एक विशाल बस्ती थी

नासीत् । अहं च तत्र सन्निहितः किञ्चिदस्मेषि । सन्निधिनिषण्णस्तु मे वृद्धविटः कोऽपि ब्राह्मणः शनकैः स्मितहेतुमपृच्छत् । अब्रवं च—'कथमिव नारिकेलजातेः प्राच्यवाटकुक्कुटस्य प्रतीच्यवाटः पुरुषैरसमीक्ष्य बलाकाजातिस्ताम्रचूडो बलप्रमाणाधिकस्यैवं प्रतिविसृष्टः' इति । सोऽपि तज्ज्ञः 'किमज्ञैरेभिर्व्युत्पादितैः । तूष्णीमास्स्व' इत्युपहस्तिकायास्ताम्बूलं कर्पूरस-

* बालविबोधिनी *

पुरे पथि वणिक्पथे इति कोशः । नैगमानां वणिजाम् । नैगमो वणिजो वणिक् । इत्यमरः । ताम्रेति–ताम्रचूडानां कुक्कुटानां युद्धेन कोलाहलः कलरवः । सन्निहितः-समीपवर्त्तीसन् । किञ्चिदीषत् अस्मेषि स्मितमकरवम् । सन्निधिनिषण्णः समीपोपविष्टः । वृद्धविटः–स्थविरधूर्त्तः । शनकैः मन्दं मन्दम् । स्मितहेतुं हासकारणम् । अब्रवमहमिति शेषः । नारिकेलजातेः–नारिकेलजातीयस्य । प्राच्यवाटकुक्कुटस्य पूर्वदेशीयकुक्कुटस्य । प्रतीच्यवाटः–पश्चिमदेशीयः । असमीक्ष्य–अविचार्य । बलाकाजातिः–बलाकाजातीयः । बलप्रमाणाधिकस्य बलेन शक्त्या प्रमाणेनाकारेण चाधिकस्य महतः । एव मनेन प्रकारेण । प्रतिविसृष्टः–युद्धार्थं प्रहितः । सोऽपि–वृद्धविटोऽपि । तज्ज्ञः–कुक्कुटविशेषज्ञः । किम्–किम्प्रयोजनम् । अज्ञैर्मूर्खैः । एभिः–पुरुषैः । व्युत्पादितैर्विज्ञापितैः । तूष्णीम् आस्स्व–मौनमवलम्ब्य तिष्ठ । एते खलुपुरुषाः कुक्कुटानां जातिविभागं न जानन्ति–अतएतेषु तज्ज्ञापनेन किमपि

* बालक्रीडा *

वहांपर वे सब एकत्र होकर कुक्कुटोंका (मुर्गोंका) युद्ध करा रहे थे । जिस कारण अत्यन्त कलरव मचा हुआ था । मैं भी वहांपर गया और उस युद्धको देखकर कुछ मुसकुराने लगा । मेरे समीपमें बैठे हुए एक वृद्ध धूर्त्तने हंसनेका कारण धीरेसे पूछा । मैंने उत्तर दिया कि, पूर्वदेशीय नारिकेल जातिके कुक्कुटके साथ पश्चिमदेशीय बलाका जातिके कुक्कुटका युद्ध कराना पुरुषोंकी अज्ञतामात्र है । क्योंकि इस पश्चिमदेशीय कुक्कुटको पूर्वोकी अपेक्षा बल अधिक होता है और आकार भी इसका बड़ा होता है तथा इसकी शिखा लाल होती है । वह वृद्ध भी उस कुक्कुट युद्धक्रियाको जानता था । अतः उसने कहा–मौन रहिये । क्योंकि इन मूर्खोंसे विवाद करना व्यर्थ होगा । ततः उसने अपने पानके

हितमुद्धृत्य मह्यं दत्त्वा चित्राः कथाः कथयन्क्षणमतिष्ठत्। प्रायुध्यत च्चातिसंरब्धमनुप्रहारप्रवृत्तस्वपक्षमुक्तकण्ठीरवरवं विहङ्गमद्वयम्। जितश्चासौ प्रतीच्यवाटकुक्कुटः।

(१५) सोऽपि विटः स्ववाटकुक्कुटविजयहृष्टः, मयि वयोविरुद्धं सख्यमुपेत्य तदहरेव स्वगृहे स्नानभोजनादि कारयित्वोत्तरेद्युः श्रावस्तीं प्रति यान्तं मामनुगम्य 'स्मर्तव्योऽस्मि सत्यर्थे' इति मित्रवद्विसृज्य

* बालविबोधिनी *

फलं न भविष्यतीति भावः। उपहस्तिकायाः ताम्बूलाधारचर्मपेटिकायाः अत्र पञ्चमी विभक्तिः। उद्धृत्य निष्कास्य। चित्राः नानाविधाः। प्रायुध्यत योद्धुमारभत। अतिसंरब्धं अतिक्रुद्धम्। अनुप्रहारेति–अनुप्रहारे प्रतिप्रहारे प्रवृत्ताभ्यामुद्यताभ्यां स्वपक्षाभ्यां निजपतत्राभ्यां मुक्तो विसृष्टः कृत इति शेषः कण्ठीरवस्य सिंहस्येव रवो नादो येन तदिदं विशेषणद्वयं विहङ्गम द्वयमित्यस्य जितः पराजितः।

(१५) स्ववाटकुक्कुटस्य स्वदेशीयकुक्कुटस्य प्राच्यवाटस्येत्यर्थः विजयेन हृष्टः सन्तुष्टः। मयि–अमतौ। वयोविरुद्धं–वयसोऽननुरूपम्। अवस्थाविसदृशमिति यावत्। तुल्यबलविद्ययोर्मैत्री प्रसिद्धा। सख्यं मैत्रीम्। उपेत्य–प्राप्य। तदहः–तस्मिन्नेवदिने। स्वगृहे–वृद्धस्य गृहे। उत्तरेद्युः परदिने। यान्तं गच्छन्तम्।

* बालक्रीडा *

डब्बेसे कर्पूर वासनायुक्त पान निकालकर दिये और अनेकों विचित्र वार्ताएं करता हुआ वह समय व्यतीत किया। परस्पर युद्ध करते हुए वे दोनों मुर्गे भी क्रोधमें आकर अपनी चोंचोंसे तीक्ष्ण–तीक्ष्ण पङ्खोंसे लड़े। शेरकी ध्वनिको मानो, अपनी ध्वनिसे मात कर देंगे। इस तरहसे पंखे फैलाकर वे लड़े। अन्ततोगत्वा पश्चिमदेशीय मुर्गेने हार खायी।

(१५) वह वृद्ध धूर्त भी अपने पक्षवाले मुर्गेकी विजय होनेपर आनन्दित हुआ। फिर उस वृद्धने मेरे साथ अवस्था अनुकूल न होनेपर भी मित्रता कर ली। [मित्रता बराबरीवाले की ही हुआ करती है] और उसने उसी दिन अपने गृहपर ले जाकर मेरा सत्कार किया तथा मुझे भोजन कराया। दूसरे दिन जब मैं श्रावस्तीपुरी जाने लगा तो वह मुझे कुछ दूरतक मित्रके समान पहुंचाने

प्रत्ययासीत् । अहं च गत्वा श्रावस्तीमध्वश्रान्तो बाह्योद्याने लतामण्डले शयितोऽस्मि । हंसरवप्रबोधितश्चोत्थाय कामपि क्वणितनूपुरमुखराभ्यां चरणाभ्यां मदन्तिकमुपसरन्तीं युवतीमद्राक्षम् ।

(१६) सा त्वागत्य स्वहस्तवर्तिनि चित्रपटे लिखितं मत्सदृशं कमपि पुंरूपं मां च पर्यायेण निर्वर्णयन्ती सविस्मयं सवितर्कं सहर्षं च क्षणम-

* बालविबोधिनी *

अर्थे प्रयोजने सति । मित्रवत्-सुहृदमिव । विसृज्य-मां परित्यज्य । प्रत्ययासीत् प्रतिगतवान् । अहं प्रमतिः । हंसरवप्रबोधितः हंसध्वनिजागरितः । नूपुरध्वनेर्हंसरवतुल्यत्वादित्यर्थः । क्वणितेति-शब्दायमानमञ्जीरवाचालाभ्याम् । मदन्तिकं ममसमीपम् । उपसरन्तीमागच्छन्तीम् ।

(१६) सा युवती । स्वहस्तवर्त्तिनि-निजकरस्थिते । लिखितं चित्रितम् । मत्सदृशं मदाकारम् । पुंरूपं पुरुषस्वरूपम् । पर्यायेण क्रमेण-प्राक् चित्रस्थं पुरुषं दृष्ट्वा परतश्च मां पश्यतीत्यर्थः । निर्वर्णयन्ती साभिनिवेशं पश्यन्ती । सविस्मयं-कथमस्य चित्रस्थस्य च तुल्येवाकृतिरिति साश्चर्यम् । सवितर्क-कथमेतादृशस्य तरुणस्य कन्यान्तःपुरे प्रवेश इति तर्कसहितम् । सहर्षं सख्या मनोरथप्राप्तिरचिराद्भविष्यतीति सानन्दम् । तद्दृष्टि चेष्टितं-तस्याः समागताया युवत्याः दृष्टि-

* बालक्रीडा *

आया और कहा कि, जब कार्य पड़े तब मुझे स्मरण कीजियेगा । इस तरीकेसे भले मित्रके समान मेरे साथ व्यवहार करके वह लौट गया । मैं श्रावस्ती नगरीमें पहुंचा और पहुंचनेके पश्चात् मार्गके परिश्रमसे थककर बाहर ही एक बगीचेमें लतामण्डपके नीचे सो गया । हंस की ध्वनिके समान ध्वनि सुनकर मैं कुछ देरमें उठ बैठा । उठकर देखा कि, एक युवती अपने चरणोंके भूषित नूपुरको बजाती हुई मेरे समीप आ रही है ।

(१६) वह तरुणी अपने हाथमें लिये हुए एक चित्रपटसे मेरी आकृतिको मिलाती हुई और मुझे अपने समीप पा करके मेरे समीप आकर विस्मययुक्त विचार करती हुई कुछ क्षणके लिए हर्षान्वित होकर बैठ गयी । मैंने भी उस चित्रपटमें अपने सादृश्य चित्र (फोटो) को देखा । और उस तरुणीकी तत्काल

यातिष्ठत। मयापि तत्र चित्रपटे मत्सादृश्य पश्यता तद्दृष्टिचेष्टितमनाकस्मिकं मन्यमानेन 'ननु सर्वसाधारणोऽयं रमणीयः पुण्यारामभूमिभागः। किमिति चिरस्थितिक्लेशोऽनुभूयते। ननूपवेष्टव्यम्' इत्यभिहिता सा सस्मितम् 'अनुगृहीतास्मि' इति न्यषीदत्। संकथा च देशवार्तानुविद्धा काचनावयोरभूत्। कथासंश्रिता च सा 'देशातिथिरसि। दृश्यन्ते च तेऽध्वश्रान्तानीव गात्राणि। यदि न दोषो मद्गृहेऽद्य विश्रमितुमनुग्रहः क्रियताम्' इत्यशंसत्।

* बालविबोधिनी *

चेष्टितं मम चित्रपटस्य च दर्शनरूपमवलोकन व्यापारम्। अनाकस्मिकं-न निष्कारणम्। सर्वसाधारणः सर्वेषां समानोपभोग्य। पुण्यारामभूमिभागः पवित्रोद्यानप्रदेशः। किमिति-किमर्थं चिरस्थिति क्लेशः-दीर्घकालावस्थानायासः। अनुभूयते त्वयेति शेषः। सा युवती। न्यषीदत्-उपाविशत्। संकथा-आलापः। देशवार्त्तानुविद्धा-देशवृत्तान्तसम्बन्धिनी। आवयोः तस्या मम च। कथासंश्रिता-आलापनिविष्टा। सा युवती अशंसदित्यनेनान्वयः। देशातिथिः-अस्मद्देशे आगतोऽसि त्वमतोऽस्माकमतिथिरसि। अध्वश्रान्तानि-मार्गलङ्घनक्लान्तानि। विश्रमितु मवस्थातुम्।

* बालक्रीडा *

चेष्टनक्रिया भी देखना आवश्यक समझा। तत्पश्चात् मैंने उस बालासे कहा-"हे बाले! यह पवित्र भूमिभाग अति नयनाभिराम तथा रमणीय है और सभीके विश्रान्ति योग्य है अतः आप खड़े होनेके कष्टको क्यों सहती हैं—यहा बैठ जाइये।" मेरे ऐसे कथनपर उसने हंसीके साथ उत्तर दिया—"मैं आपकी अनुगृहीत हूं" और वह बैठ गयी। हम दोनोंमें देश-देशान्तरोंकी तथा देवताओंकी कथा वार्ताएं होने लगीं। फिर उस तरुणीने मुझसे कहा—"इस देशके अतिथिरूपमें हैं। अतः यदि आपको कोई आपत्ति न होवे तो, आप, मेरे गृहपर चलकर विश्राम करनेकी कृपा करें। क्योंकि आपका शरीर मार्गश्रमसे परिक्लान्त दीख रहा है।

(१७) अहं च 'अयि मुग्धे, नैष दोषः, गुण एव' इति तदनुमार्गगामी तद्गृहगतो राजार्हेण स्नानभोजनादिनोपचरितः, सुखं निषण्णो रहसि पर्यपृच्छ्यो—'महाभाग, दिगन्तराणि भ्रमता कच्चिदस्ति किञ्चिदद्भुतं भवतोपलब्धम्' इति । ममाभवन्मनसि 'महदिदमाशास्पदम् । एषा खलु निखिलपरिजनसम्बाधसंलक्षितायाः सखी राजदारिकायाः । चित्रपटे चास्मिन्नपि तदुपरि विरचितसितवितानं हर्म्यतलम्, तद्गतं च प्रकामविस्तीर्णं शरद-

* बालविबोधिनी *

(१७) अहं प्रमतिरित्यर्थः । एषः–त्वद्गृहे ममावस्थानम् । गुणः अनुकूलः तदनुमार्गेति–तस्या युवत्याः पश्चाद् गच्छन् । राजार्हेण–राजोचितेन । उपचरितः–सम्यक् सत्कृतः । पर्यपृच्छ्ये–परिपृष्टोऽहं तयेति शेषः । दिगन्तराणि–नाना देशान् । कच्चिदिति प्रश्नार्थकमव्ययम् । उपलब्धं–दृष्टं ज्ञातं वा । मम मनसि अभवत्–, अहमित्थमचिन्तयम् । आशास्पदं–आशाजनकम् । एषा युवती । निखिलेति–निखिलपरिजनानां सुप्तानां सम्बाधे सङ्घमध्ये संलक्षिताया मया दृष्टायाः । राजदारिकायाः राजकन्यायाः । तत् पूर्वदृष्टम् । उपरीति–उपरि उद्र्ध्वदेशे विरचितं निर्मितं सितवितानं शुभ्रोल्लोचो यस्मिन् तादृशं हर्म्यतलम् । तद्गतं हर्म्यतलस्थितम् । प्रकामविस्तीर्णं–दीर्घविस्तारम् । शरदिति शारदमेघधवलम् । तस्मिन्

* बालक्रीडा *

(१७) मैंने उत्तर दिया–"अयि मुग्धे ! आपके यहां चलनेमें मुझे कोई आपत्ति नहीं दीखती । अपितु, सुख ही मालूम होता है । पश्चात् मैं उसके मार्गका अनुसरण करता हुआ उस बालाके गृहपर आ पहुंचा । उस बालाने अपने घरपर मेरा राज्योचित स्वागत किया और स्नान भोजन आदिका सुन्दरतासे प्रबन्ध कराया । फिर आनन्दमें उसने मुझसे एकान्तमें पूछा—"हे महाभाग ! देश देशान्तरोंमें पर्यटन करते हुए आपने कौन सी आश्चर्यकारिणी वस्तु देखी ?" यह श्रवण करके मेरे मनमें अति विस्तीर्ण आशा बंधी कि, यह बाला उन्हीं महिलाओंमेंसे एक है । जिन्हें मैंने उस राजकुमारीके राजप्रासादमें (स्वप्नमें) देखा था । इस चित्रपटमें भी उसी राजकुमारीकी प्रतिकृति मेरे साथ स्वच्छ बिछौनेके ऊपर पड़ी हुई उस विस्तीर्ण पलंगपर दिखायी गयी है । जो शरत् कालिक स्वच्छ-

भ्रपटलपाण्डुर शयनम्, तदधिशायिनी च निद्रालीढलोचना ममैवेयं प्रतिकृतिः ।

(१८) अतो नूनमनङ्गेन सापि राजकन्या तावतीं भूमिमारोपिता । यस्यामसह्यमदनज्वरव्यथितोन्मादिता सती सखीनिर्बन्धपृष्टविक्रियानिमित्तचातुर्येणैतद्रूपनिर्माणेनैव समर्थमुत्तर दत्तवती । रूपसंवादाच्च सशयादनया पृष्टो भिन्द्यामस्याः संशय यथानुभवकथनेन' इति जातनिश्चयोऽ-

* बालविबोधिनी *

शयने अधिशेते इति तदधिशायिनी । निद्रालीढलोचना-निद्रामुद्रितनयना । प्रतिकृतिः प्रतिमूर्तिः ।

(१८) नून निश्चितम् । तावतीं-तथाविधमदनपारवश्य रूपाम् । भूमिं अवस्थाम् । आरोपिता-नीता । यस्या भूमौ-अवस्थायामिति यावत् । असह्येति-असह्येन सोढुमशक्येन मदनज्वरेण कामजनितसन्तापेन व्यथिता पीड़िता तथा उन्मादिता उन्मत्तीकृता सती । सखीभिः सहचरीभिः निर्बन्धेनाग्रहातिशय्येन पृष्ट मनुयुक्तं विक्रियानिमित्तं विकारकारणं यस्याः सा । चातुर्येण कौशलेन । एतस्य रूपस्य मत्प्रतिकृतेर्निर्माणेन रचनेन । समर्थं योग्यम् । मद्दर्शनमेव तस्या विकारकारणमासीदिति भावः । रूपसंवादात्-आकारसादृश्यात् । संशयात् सन्दे-

* बालक्रीडा *

मेघके समान सफेद और कोमल पलंग उस विशाल राजभवनके विस्तीर्ण छतपर पड़ा हुआ दिख रहा है । जिसपर प्रगाढ़ निद्रामें राजकुमारी सोयी हुई है ।

(१८) अत एव यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि वह राजकुमारी भी कामदेवके द्वारा कामपीडित अवस्थाको प्राप्त हो गयी है । उसकी असह्य कामपीडाको जानकर सहचरियोंने अतिशय आग्रह पूर्वक चतुरतासे उस राजकुमारीसे सब वृत्तान्त ज्ञात किया है । और उसी कुमारीके कथनानुसार उसकी सखियोंने अपने कौशलसे यह चित्रपट तैयार किया है । जिसमे उसका मन बहले । इसी हेतुसे वे सखिया उस आदमीके भी अन्वेषणमे व्यग्र पड़ी हुई है और यह चित्रपट वही है । मेरी आकृति मिलाकर अपने सन्देहको दूर करना चाहती है। अतः इसकी भ्रान्ति हटा देनी चाहिए । ऐसा निश्चय करके मैंने कहा—"हे सौम्ये !

ब्रवम्—'भद्रे, देहि चित्रपटम्' इति । सा त्वर्पितवती मद्धस्ते । पुनस्तमादाय तामपि व्याजसुप्तामुल्लसन्मदनरागविह्वलां वल्लभामेकत्रैवाभिलिख्य 'काचिदेवम्भूता युवतिरीदृशस्य पुंसः पार्श्वशायिन्यरण्यानीप्रसुप्तेन मयोपलब्धा । किलैष स्वप्नः' इत्यालपं च ।

(१९) हृष्टया तु तया विस्तरतः पृष्टः सर्वमेव वृत्तान्तमकथयम् । असौ च सख्या मन्निमित्तान्यवस्थान्तराण्यवर्णयत् । तदाकर्ण्य च यदि तत्र सख्या मदनुग्रहोन्मुखं मानसम् । गमय कानिचिदहानि । कमपि

* बालविबोधिनी *

हमाश्रित्य । अनया युवत्या । भिन्द्यां निरस्येयम् । यथानुभवकथनेन—यथा-दृष्टस्य प्रकाशनेन । तं चित्रपटम् आदाय गृहीत्वाऽहमिति शेषः । तां राजकन्याम् । व्याजसुप्तां कपटनिद्रिताम् । उल्लसदिति—उल्लसता वृद्धिगच्छता मदनरागेण विह्वलां व्याकुलाम् । वल्लभां प्रियाम् । एकत्र चित्रपटस्यैकस्मिन् स्थाने । अभिलिख्य चित्रयित्वा । एवं भूता एतादृशी । ईदृशस्य चित्रितानुरूपस्य । अरण्यानी प्रसुप्तेन महाटव्यां निद्रितेन । उपलब्धा दृष्टा ज्ञाता वा । किलैष स्वप्नः-परं तु एष स्वप्न एव भवितु मर्हतीत्यर्थः ।

(१९) तया युवत्या । विस्तरतः विस्तारेण कथयितुम् । असौ युवतिः । सख्याः राजकन्यायाः । मन्निमित्तानि—मद्दर्शनजनितानि । अवर्णयत् अकथयत् । मदनुग्रहोन्मुखं मयि अनुग्रहं कर्त्तुमुत्कण्ठितम् । गमय यापय । कानिचित् ।

* बालक्रीडा *

मुझे यह चित्रपट दीजिये, तो ।" उसने मेरे हाथमें वह चित्रपट दे दिया। मैंने उस चित्रपटको लेकर उसके एकदेशमें, कपटनिद्रित और कामवालासे वृद्धत्वको प्राप्त, राजकुमारीकी ठीक-ठीक प्रतिकृति लिख दी और कहा "ऐसी आकृतिवाली महिलाको ऐसे आकृतिवाले पुरुषके साथ सोते हुए अरण्यमें स्वप्नावस्थामें मैंने देखा था ।

(१९) मेरे इस कथन पर उस चित्रपट धारिणी वालाने हर्षसे मुझसे सपूर्ण वृत्त पूछा तो, मैंने उससे सार हाल कह सुनाया । उसने भी मेरे कारण राजकुमारीको कामकी पीड़ाक्लेश हो रहा था, उसका वर्णन कर दिया । उसकी

कन्यापुरे निराशङ्कनिवासकरणमुपायमारचय्यागमिष्यामि' इति कथञ्चिदेनामभ्युपगमय्य,गत्वा तदेव खर्वटं वृद्धविटेन समगंसि। ससम्भ्रमं सोऽपि विश्रमय्य तथैव स्नानभोजनादि कारयित्वा रहस्यपृच्छत्—'आर्य, कस्य हेतोरचिरेणैव प्रत्यागतोऽसि'।

(२०) प्रत्यवादिषमेनम्—'स्थान एवाहमार्येणास्मि पृष्टः। श्रूयताम्। अस्ति हि श्रावस्तीनाम नगरी। तस्याः पतिरपर इव धर्मपुत्रो धर्मवर्धनो नाम राजा। तस्य दुहिता, प्रत्यादेश इव श्रियः, प्राणा इव कुसुमधन्वनः,

* बालविबोधिनी *

कियन्ति। अहानि दिनानि। निराशङ्केति—निराशङ्कं निर्भयं निवासस्यावस्थानस्य करणं कारकम्। आरचय्य-कृत्वा। एना युवतिम्। अभ्युपगमय्य-सम्यग् बोधयित्वा-प्रतिज्ञाप्येति यावत्। तदेव पूर्वोक्तम्। खर्वटं ग्रामम्। समगंसि सङ्गतोऽभवम्। ससम्भ्रमं-सचकितम्। सः वृद्धविटः। विश्रमय्य विश्रामं कारयित्वा-मा मिति शेषः। रहसि-एकान्ते। कस्य हेतोः-किमर्थम्। अचिरेण-अतिसत्वरम्।

(२०) प्रत्यवादिषं प्रत्युत्तरमदाम्। एनं वृद्धविटम्। स्थाने-युक्तम्। आर्येण-भवता। तस्याः श्रावस्त्याः। धर्मपुत्रः युधिष्ठिरः। प्रत्यादेशः, निराकृतिः प्रत्याख्यानमिति यावत्। लक्ष्म्या अपि निजेत्रीत्यर्थः। प्राणाः-जीवनम्। सौकु-

* बालक्रीडा *

कामव्यथाको सुनकर मैंने कहा-"यदि आपकी सखीका प्रेम मनसे मेरे ऊपर है तो वे कुछ दिन और इसी तरह बितावें। फिर मैं कन्यापुरमें निवास करनेका कोई निश्शङ्क उपाय रच करके वहाँपर आऊँगा। इस प्रकारसे उस बालाको समझाकर मैं पुनः उसी वृद्धके पास लौट आया। आश्चर्यके साथ उस वृद्धने मेरा पूर्वकी तरह स्नान भोजनादि द्वारा स्वागत सत्कार करके एकान्तमें पूछा-"हे आर्य! किस कारणसे इतनी जल्दी ही लौट आये?"

(२०) मैंने उस वृद्धसे उत्तर दिया—"आपने मुझसे उचित रीति और योग्य अवसरपर यह प्रश्न किया-सुनिये, श्रावस्ती नामकी नगरी है। उसका स्वामी, दूसरे धर्मपुत्रके समान, धर्मवर्धन नामक राजा है। उसकी पुत्री लक्ष्मीके समान है जो कामदेवके प्राणोंके समान प्रिया है। जिसका नाम नवमालिका

सौकुमार्यविडम्बितनवमालिका, नवमालिका नाम कन्यका। सा मया समापत्तिदृष्टा कामनाराचपङ्क्तिमिव कटाक्षमालां मम मर्मणि व्यकिरत्। तच्छल्योद्धरणाक्षमश्च धन्वन्तरिसदृशस्त्वदृते नेतरोऽस्ति वैद्य इति प्रत्यागतोऽस्मि। तत्प्रसीद किञ्चिदुपायमाचरितुम्।

(२१) अयमहं परिवर्तितस्त्रीवेषस्ते कन्या नाम भवेयम्। अनुगतश्च मया त्वमुपगम्य धर्मासनगतं धर्मवर्धनं वक्ष्यसि—'ममेयमेकैव दुहिता। जातमात्रायां त्वस्यां जनन्यस्याः संस्थिता। माता च पिता च भूत्वाहमेव

* बालविबोधिनी *

मार्येति–सौकुमार्येण कोमलतया विडम्बिता कदर्थिता नवमालिका यया सा। समापत्तिदृष्टा–यदृच्छावलोकिता। कामनाराचपङ्क्तिं मदनबाणपरम्पराम्। मर्मणि–हृदयादिमर्मस्थले। व्यकिरत्–विक्षिप्तवती। तच्छल्येति–तस्य शल्यस्य कीलस्योद्धरणे निष्कासनेऽक्षमोऽसमर्थः। धन्वन्तरिसदृशः–धन्वन्तरितुल्यात्। त्वद् भवतः। ऋते विना। इतरः अन्यः कोऽपि। वैद्यः-चिकित्सकः। प्रसीद–प्रसन्नो भव। आचरितुं कर्तुम्।

(२१) अयमहं–अहमेव। परीति–परिवर्त्तितो धृतः स्त्रियाः कामिन्या वेषः स्वरूपं येन सः' नामेत्यलीके। अनुगतः अनुसृतः। त्वं वृद्धविट इत्यर्थः। धर्मासनगतं विचारासनोपविष्टम्। जातमात्रायां त्वस्यां–जन्मसमये एव। संस्थिता–मृता। व्यवर्धयमपालय मेनामिति शेषः। एतदर्थं–इमां कन्यां परिणेतुम्। विद्या·

* बालक्रीडा *

है। जो अपनी सुकुमारतासे नवीन लताओंको भी तिरस्कृत करनेवाली है। वह मुझे अकस्मात् दिखलायी पड़ी। उसने मुझे देखकर अपने कामबाणोंके समान कटाक्षोंसे-मेरे क्षवस्थलको वेध डाला है। उन बाणोंको निकालनेमें केवल आप ही एक धन्वन्तरिके तुल्य वैद्य हैं—अन्य कोई है ही नहीं। इसी हेतुसे मैं आपके पास आया हूं। अतः प्रसन्न होकर कोई उपाय कीजिये।

(२१) और मैंने कहा–मैं अपने रूपको बदलकर आपकी पुत्रीरूपमें हो जाता हूं। जब राजा धर्मासनपर आरूढ़ रहे। तब आप मुझे लेकर उसके सम्मुख उपस्थित होइये और कहिये कि, मेरी केवल यही एक पुत्री है और इसके जन्म-

व्यवर्धयम् । एतदर्थमेव विद्यामयं शुल्कमर्जितु गतोऽभूदवन्तिनगरीमुज्ज-यिनीमस्मद्वैवाह्यकुलजः कोऽपि विप्रदारकः । तस्मै चेयमनुमता दातुमित-रस्मै न योग्या । तरुणीभूता चेयम् । स च विलम्बितः । तेन तमानीय पाणिमस्या ग्राहयित्वा तस्मिन्न्यस्तभारः संन्यसिष्ये । दुरभिरक्षतया तु दुहितॄणां मुक्तशैशवानाम्, विशेषतश्चामातृकाणाम्, इह देव मातृपितृस्था-

* बालविबोधिनी *

मय-विद्यारूपम् । शुल्कं पणम् । विदुषे एव कन्या समर्पणीया भवतीति हेतोः ता विद्या मर्जितुं अर्ज्यतुम् । गतोऽभूत् गतवान् । अस्मदिति-अस्माकं वैवाह्ये विवाहयोग्ये कुले वंशे जातः । कोऽपि-अनिर्दिष्ट नामा । विप्रदारकः ब्राह्मण-कुमारः । तस्मै विप्रदारकाय । दातुं-सम्प्रदानार्थम् । इयं-कन्या । अनुमता-अभिलषिता । इतरस्मै-अन्यजामात्रे नयोग्या दातुमिति शेषः । तरुणीभूता-यौवनमधिगता । स जामाता । विलम्बितः-विद्याध्ययनार्थं विलम्बं करोतीत्यर्थः । तेन-तेन हेतुना । त जामातरम् । अस्याः कन्यायाः पाणिं ग्राहयित्वा विवाहं कारयित्वा । तस्मिन् जामातरि । न्यस्तभारः-दत्तरक्षणभारः । संन्यसिष्ये संन्यासाश्रममाश्रयिष्ये अहमिति शेषः । मुक्तशैशवानां प्राप्तयौवनानां दुहितॄणां कन्यानां दुरभिरक्षतया-अतिकष्टेन रक्षणीयतया । अमातृकाणां-जननी रहितानाम् । इह भवतः समीपे । देवं भवन्तम् । किम्भूतं ? प्रजानां मातृपितृ-

* भावप्रबोधिनी *

कालमें ही इसकी जननी परलोक सिधार गयी । मैंने माता-पिता दोनों बनकर इसे पाला है । मैंने अवन्तिका (उज्जयिनी) नगरीमें जाकर अपनी जाति और कुलके अनुरूप एक विद्वान् ब्राह्मण कुमारको इसके विवाहके लिये राजी किया है, परन्तु, वह कुमार नियतकाल हो जानेपर भी यहां नहीं आया है अतः मैं चिन्तित हो रहा हूं । मैं चाहता हूं कि, उस ब्राह्मणकुमारको जाकर बुला लाऊं और इस कन्याको जो युवती हो गयी है उससे विवाह दूं । और तत्पश्चात् उसे यह कन्या सौंपकर मैं संन्यास ग्रहण करूं । मातृहीना युवती पुत्री की रक्षा ऐसे समयमें असाध्य है । अतः एव हे देव ! आप हीके समीप इस समय इसकी रक्षा हो सकती है । क्योंकि जिसके माता-पिता नहीं होते तथा जो

नीयं प्रजानामापन्नशरणमागतोऽस्मि ।

(२२) यदि वृद्धं ब्राह्मणमधीतिनमगतिमतिथिं च मामनुग्राह्यपक्षे गणयत्यादिराजचरितधुर्यो देवः, सैषा भवद्भुजतरुच्छायामखण्डितचारित्रा तावदध्यास्तां यावदस्याः पाणिग्राहकमानयेयम्' इति । स एवमुक्तो नियतमभिमनायमानः स्वदुहितृसन्निधौ मां वासयिष्यति । गतस्तु भवानागामिनि मासि फाल्गुने फल्गुनीपूत्तरासु राजान्तःपुरजनस्य तीर्थयात्रोत्सवो

* बालविबोधिनी *

स्थानीयं-येषां माता पिता च नास्ति तेषां भवानेव माता पिता चेति भावः । पुनः किम्भूतम् ? आपन्नशरणं विपन्नानां त्राता ।

(२२) अधीतिनं-कृतशास्त्राध्ययनम् । अगतिं निरुपायम् । अतिथिं गृहागतम् । अनुग्राह्यपक्षे-अनुग्रहणीयकोटौ कृपास्थानीये इति यावत् । गणयति-मन्यते । आदिराजानां मनुमान्धातृप्रभृतीनां यच्चरितं चरित्रं तस्य धुर्यो वाहकः । देवभवान् । सा पूर्वोक्ता एषा मम कन्या । अखण्डितचारित्रा अभ्रष्टचरित्रा । भवदिति-भवतस्तव भुजएव तरुस्तस्य च्छायामश्रयम् । तावत्-तावत्कालपयन्तं अध्यास्तां मधि तिष्ठतु । यावत्-यावताकालेन । अस्याः कन्यायाः । पाणिग्राहकं परिणेतारम् । आनमेयमानेष्यामीत्यर्थः । स राजा धर्मवर्धनः । उक्तो निवेदितो भवतेति शेषः । नियतमवश्यम् । अभिमनायमानः अनुमोदमानः । स्वदुहितृ-सन्निधौ-राजकन्या समीपे । मां कन्यावेषधारिणं प्रमति मित्यर्थः । वासयिष्यति-

* बालक्रीडा *

दुःखी होता उसके राजा ही माता-पिता एवं त्राता स्वरूप हैं । इसीसे आपके समीप आया हूं ।

(२२) "हे देव ! मनु मान्धातादि राजोंके चरित्रानुसारियोंमें अग्रणी ! यदि आप मुझ पठित विप्रके प्रति कृपाकटाक्ष करें तो, इस कन्याको अपनी भुजारूपी वृक्षके नीचे आश्रय दें । ताकि इस कन्याका चरित्र अखण्डित रहे । तबतक मैं इसके परिणेताको यहांपर बुला लाऊं । ऐसी प्रार्थनापर वह राजा अवश्य मुझे अपनी राजकुमारीके साथ रहनेकी आज्ञा देगा । फिर आप मुझे वहां छोड़कर लौट आइयेगा । ततः फाल्गुन महीनेके उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्रको राजाके

भविष्यति । तीर्थस्थानात्प्राच्यां दिशि गोरुतान्तरमतिक्रम्य, वानीरवलयमध्यवर्तिनि कार्तिकेयगृहे करतलगतेन शुक्लाम्बरयुगलेन स्थास्यसि ।

(२३) स खल्वहमनभिशङ्क एवैतावन्तं कालं सहाभिविहृत्य राजकन्यया भूयस्तस्मिन्नुत्सवे गङ्गाम्भसि विहरन्विहारव्याकुले कन्यकासमाजे मग्नोपसृतस्त्वदभ्याश एवोन्मङ्क्ष्यामि । पुनस्त्वदुपहृते वाससी परिधायापनीतदारिकावेषो जामाता नाम भूत्वा त्वामेवानुगच्छेयम् । नृपात्मजा

* बालविबोधिनी *

स्थापयिष्यति । फल्गुनीषु उत्तरासु–उत्तरफल्गुनीनक्षत्रे । तीर्थस्थानात्–तीर्थक्षेत्रात् । प्राच्यां पूर्वस्यां दिशि । गोरुतान्तर–गवां शब्दो यावत्पर्यन्तं गच्छति तावत्परिमितं स्थानं गोरुतान्तरं कथ्यते–तावत्परिमितं स्थानमतिक्रम्य अतीत्य । किञ्चिद्दूरे इत्यर्थः । वानीरवलयमध्यवर्त्तिनि–वेतसलतामण्डपमध्यस्थिते करतलगतेन–हस्तस्थितेन ।

(२३) स खलु अहं–कन्यावेषधारीप्रमतिरित्यर्थः । अनभिशङ्कः–निर्भयः । एतावन्तं कालं–उत्सवसमयं यावत् । अभिविहृत्य–समन्ततः क्रीडित्वा । तस्मिन्–पूर्वकथिते । विहारव्याकुले क्रीडानिरते । कन्यकासमाजे–कन्यावर्गे । मग्नोपसृतः–जलमग्नः सन् उपसृतश्चलितः । त्वदभ्याशे–तव समीपे । उन्मङ्क्ष्यामि–जलादुत्थितो भविष्यामि । त्वदुपहृते त्वया दत्ते । वाससी वस्त्रे । अपनीतदारिकावेषः–परित्यक्तकन्यकावेषः । जामाता नाम–जामातेव । नृपात्मजा–राजकन्या । अ-

* बालक्रीडा *

अन्तःपुरके सभी व्यक्ति तीर्थयात्राको जायंगे । उस तीर्थस्थानसे पूर्वकी ओर इतनी दूरपर जहांतक गौका शब्द सुनायी पड़े । बेतके लतामण्डपके मध्यमें कार्त्तिकेय मन्दिरमें दो सफेद वस्त्रोंके साथ ठहरे रहियेगा ।

(२३) मैं निश्शंक होकर राजकुमारीके साथ जलक्रीड़ा करता हुआ उस उत्सवमें गङ्गामें पुनः डुबकी लगाऊंगा । और जब कन्यकाजन जल विहार करती हुई डुबकियां लेती रहेंगी तब मैं डुबकी मारकर आपके समीप निकल आऊंगा । वहांपर आपके दिये हुए कपड़े पहनकर कन्यावेषको छोड़ दूंगा । मुझे जलमें डूबा हुआ जानकर सभी सखियां और राजकुमारी दुःखी हो जायगी ।

तु मामितस्ततोऽन्विष्यानासादयन्ती 'तया विना न भोक्ष्ये' इति रुदन्त्येवावरोधने स्थास्यति ।

(२४) तन्मूले च महति कोलाहले, क्रन्दत्सु परिजनेषु, रुदत्सु सखीजनेषु, शोचत्सु पौरजनेषु, किंकर्तव्यतामूढे सामात्ये पार्थिवे, त्वमास्थानीमेत्य मां स्थापयित्वा वक्ष्यसि—'देव स एष मे जामाता तवार्हति श्रीभुजाराधनम् । अधीती चतुर्ष्वाम्नायेषु, गृहीती षट्स्वङ्गेषु, आन्वीक्षिकी-

* बालविबोधिनी *

न्विष्य–अनुसन्धाय । अनासादयन्ती–अप्राप्नुवती । तया कन्यकया । भोक्ष्ये–भक्षयिष्यामि । अवरोधने–अन्तःपुरे ।

(२४) तन्मूले–तदेव कन्यान्तर्धानमेव मूलं निदानं यस्य तस्मिन् । कोलाहले–कलरवे । क्रन्दत्सु–विलपत्सु । परिजनेषु–सेवकवर्गेषु । सखीजनेषु–सहचरीषु । शोचत्सु–शोकं कुर्वत्सु । पौरजनेषु–नागरिकेषु । किंकर्तव्यतामूढे–अप्रतिपत्तिमुग्धे । सामात्ये–मन्त्रिसहिते । पार्थिवे–नृपे । त्वं–वृद्धविट इत्यर्थः । आस्थानीं राजसभाम् । मां–जामातृवेषधारिणं प्रमतिम् । स्थापयित्वा–राज्ञः पुरतः संस्थाप्य । स एषः–यो विद्या मध्ये तु मुज्जयिन्यां गत आसीत् । श्रीभुजाराधनम्–श्रीमद्भ्यां भुजाभ्या माराधनं सत्कारम् । यतोऽयं सर्वशास्त्र निष्णातो मे जामाताऽतो भवत्सकाशात्पूजा मर्हतीति भावः । अधीती–अधीतवान्–कृतश्रम इत्यर्थः । आम्नायेषु–वेदेषु । गृहीती–कृतश्रमः । अङ्गेषु–शिक्षाकल्पादिषु । उभयत्र क्तस्येन्विष-

* बालक्रीडा *

राजपुत्री मुझे इधर–उधर खोजेगी और मेरा पता न पाकर खूब रोदन करेगी–तथा कहेगी कि, "मैं ब्राह्मणीकी पुत्रीके विना भोजन नहीं करूंगी एवं रोती हुई अन्तःपुरमें पड़ी रहेगी ।

(२४) "ब्राह्मणपुत्री डूब गयी" ऐसे शोरगुल के मचनेपर उस राजपुत्रीके परिजन और सखियां सब रोती हुई क्रन्दन करेंगी । राजसचिवगण किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जायगे, पुरवासी शोक करने लगेंगे । उसी समय आप मुझे राज सभामें उपस्थित करके कहियेगा–"हे देव ! यह मेरा जामाता (दामाद) है । आपकी भुजाओंद्वारा इसका स्वागत सत्कार होना उचित है । क्योंकि इसने चारों वेदोंका अध्ययन किया है । वेदके छः ओं अङ्गोको शिक्षा कल्पादि यथा-

विचक्षणः, चतुःषष्टिकलागमप्रयोगचतुरः, विशेषेण गजरथतुरङ्गतन्त्रवित्, इष्वसनास्त्रकर्मणि गदायुद्धे च निरुपमः, पुराणेतिहासकुशलः, कर्ता काव्यनाटकाख्यायिकानाम्, वेत्ता सोपनिषदोऽर्थशास्त्रस्य, निर्मत्सरो गुणेषु, विश्रम्भी सुहृत्सु, शक्तः, संविभागशीलः, श्रुतधरः, गतस्मयश्च । नास्य दोषमणीयांसमप्युपलभे । न च गुणेष्वविद्यमानम् । तन्मादृशस्य ब्राह्मणमा-

* बालविबोधिनी *

यस्य कर्मस्वनुसन्धानमिति सप्तमी । आन्वीक्षिकीविचक्षणः-तर्कविद्या निष्णातः । चतुःषष्टीति-चतुष्षष्टिकलाः नृत्यादयस्तद्रूप आगमः । शास्त्रं तस्य प्रयोगेऽनुष्ठाने चतुरो दक्षः । गजरथेति-गजरथतुरङ्गशास्त्रज्ञः । इष्वसनास्त्र कर्मणि-इष्वसनं धनुस्तस्य तथा अस्त्राणां बाणादीनां कर्मणि प्रयोगे । निरुपमः अद्वितीयः । कर्ता-रचयिता । वेत्ता-ज्ञाता । सोपनिषदः-सरहस्यस्य । अर्थशास्त्रस्य कामन्दकीयादिनीतिशास्त्रस्य । निर्मत्सरः-द्वेषरहितः । विश्रम्भी-विश्वासवान् । शक्तः-प्रियंवदः । शक्तः प्रियंवदः प्रोक्त इति हलायुधः । संविभागशीलः-धनानां यथोचित विनियोगपटुः-सुविवेचको वा । श्रुतधरः-श्रवणमात्रेण शास्त्रार्थधारणसमर्थः । गतस्मयो निरहङ्कारः । अस्य जामातुः । अणीयांसं-लेशमात्रम् । उपलभे-पश्यामि । गुणेषु अविद्यमानं-गुणानां मध्ये अवर्तमानं कमपि गुणं नोपलभे इति योजना । तत्-तस्मात् । ब्राह्मणमात्रस्य-धनादिरहितस्य अविशिष्टब्राह्मणस्य ।

* बालक्रीडा *

विधि पढ़ा है । तर्कविद्यामें निष्णात है । नृत्यादि चौसठ कलाओंमें दक्ष है । गजरथ अश्वशास्त्रज्ञ हैं । धनुर्बाणविद्या तथा गदायुद्धमें प्रवीण है । पुराण और इतिहासमें विचक्षण हैं । काव्य, नाटक और आख्यायिकाओंके रचयिता हैं । उपनिषदसहित अर्थशास्त्रके ज्ञाता है । द्वेषरहित गुणज्ञ हैं । मित्रोंमें विश्वास रखनेवाले हैं । प्रियभाषी है । धनके व्ययमें यथोचित स्वभाववाले हैं । श्रवणमात्रसे शास्त्रोंके अर्थको धारणकरनेवाले है । निरहंकारी हैं । इस जामातामें लेशमात्रभी दुर्गुण नहीं है । ऐसा कोई भी गुण नहीं है जो इनमें वर्त्तमान न हो । सर्वगुण-सम्पन्न हैं । मेरे ऐसे ब्राह्मणमात्रके लिये ऐसा योग्य जामाता मिलना कठिन है । अतः ऐसे योग्य वरको मैं अपनी कन्या समर्पण करके अपने

त्रस्य न लभ्य एष सम्बन्धो । दुहितरमस्मै समर्प्य वार्धकोचितमन्त्यमाश्रमं सङ्क्रमेयम्, यदि देवः साधु मन्यते' इति ।

(२५) स इदमाकर्ण्य वैवर्ण्याक्रान्तवक्त्रः परमुपेतो वैलक्ष्यमारप्स्यतेऽनुनेतुमनित्यतादिसङ्कीर्तनेनात्रभवन्तं मन्त्रिभिः सह । त्वं तु तेषामदत्तश्रोत्रो मुक्तकण्ठं रुदित्वा चिरस्य बाष्पाकुण्ठकण्ठः काष्ठान्याहृत्याग्निं सन्धुक्ष्य राजमन्दिरद्वारे चिताधिरोहणायोपक्रमिष्यसे । स तावदेव त्वत्पादयोर्निपत्य सामात्यो नरपतिरनूनैरर्थैस्त्वामुपच्छन्द्य दुहितरं मह्यं दत्त्वा

* बालविबोधिनी *

एष–एतादृशः । सम्बन्धी–जामाता । वार्धकोचितं–वृद्धकालोचितम् । अन्त्यम्–आश्रमम्–संन्यासम् संक्रमेयम्–आश्रयेयम् । देवः भवान् । साधु–समीचीनम् ।

(२५) स राजा । इदं–वृद्धोक्तं वचनम् । वैवर्ण्येति-तस्याः कन्याया अदर्शननिमित्तकेनानुतापेन यद्वैवर्ण्यं मालिन्यं तेनाक्रान्तं वक्त्रं मुखं यस्यासौ । परमत्यन्तं वैलक्ष्यं सलज्जत्वमुपेतः प्राप्तः । अनुनेतुं खेदमपनेतुम् । अनित्यतेति–शरीरस्य क्षणभङ्गुरत्वादिवर्णनेन । अत्र भवन्तं त्वां वृद्धविटमित्यर्थः । अदत्तश्रोत्रः–कर्णपातमकृत्वा अश्रुत्वेत्यर्थः । बाष्पेति–रोदनजनितबाष्पेण आ समन्तात् कुण्ठो रुद्धः कण्ठो यस्यासौ । आहृत्य–सञ्चित्य । संधुक्ष्य–प्रज्वाल्य । चिताधिरोहणाय–चितामधिरोढुम् । उपक्रमिष्यसे आरप्स्यसे । स नरपतिरित्यनेन योज्यः । सामात्यः समन्त्रिकः । अनूनैरधिकैः । उपच्छन्द्य सन्तोष्य । दुहितरं स्वकन्याम् । मद्योग्यतेति–मम योग्यतया पटुतया समाराधितो वशीभूतः । अनुष्ठेयो विधेयः ।

* बालक्रीडा *

वृद्धत्वकालमें संन्यस्त ग्रहण करना चाहता हूं । हे देव । यदि आपकी अनुमति हो, तो—,

(२५) वह राजा ऐसा सुन करके मलिन मुख होकर विलक्षणता प्रकट करेगा । फिर मन्त्रियोंके साथ आपके प्रति बहुत विनय करते हुए संसारकी नश्वरता दिखाते हुए बड़ी प्रार्थना पूर्वक स्तुति करेगा । किन्तु, आप उन सब स्तुतियोंको अनसुनी करके मुक्त कंठसे आंसुओंसे रुद्ध गलेके साथ रोना प्रारम्भ कर देना । रोते हुए राजाके दरवाजेपर ही काष्ठ (लकड़ी) एकत्र करके एक चिता बनाना एवं उसमें अग्नि जलाकर आप प्राण विसर्जन करनेको अधिरूढ़ होनेको

मद्योग्यतासमाराधितं समस्तमेव राज्यभारं मयि समर्पयिष्यति । सोऽय-मभ्युपायोऽनुष्ठेयो यदि तुभ्यं रोचते' इति । सोऽपि पटुर्विटानामग्रणीरस-कृदभ्यस्तकपटप्रपञ्चः पाञ्चालशर्मा यथोक्तमभ्यधिकं च निपुणमुपक्रान्तवान् ।

(२६) आसीच्च मम समीहितानामहीनकालसिद्धिः । अन्वभवं च मधुकर इव नवमालिकामार्द्रसुमनसम् । अस्य राज्ञः सिंहवर्मणः साहाय्य-

* बालविबोधिनी *

यदि तुभ्यं रोचते—यदि तवाभिमतं स्यादित्यर्थः । पटुश्चतुरः । विटानां धूर्ता-नाम् । अग्रणीः श्रेष्ठः । असकृदिति—असकृदनेकवारं अभ्यस्तः परिचितः कप-टप्रपञ्चश्छलरचना यस्य सः । यथोक्त- मया यावत्कथितं, ततोऽपि अभ्यधिकं यन्मया नोक्तं तदपीत्यर्थः । निपुणमति कौशलेन उपक्रान्तवान्–सम्पादितवान् ।

(२६) समीहितानां–मदभीप्सितानाम् । अहीनकालसिद्धिः–अचिरकालेन लाभः । मधुकरो भ्रमरः नवमालिका नवमालिका मालतीव नवमालिका तां राज्ञो धर्मवर्धनस्यात्मजाम् । आर्द्रसुमनस एकत्र आर्द्राः सरसाः सुमनसः पुष्पाणि यस्या-स्तामपरत्र आर्द्रं कोमलं सुष्ठु मनो यस्यास्तामित्युभयविशेषणम् । मधुकरो यथा सरसकुसुमां मालतीमनुभवति तथाहमपि तां नवमालिकामन्वभवमिति भावः ।

* बालक्रीडा *

उद्यत होना । तब वह राजा अवश्य अपने सचिवोंके साथ आकर आपके पैरोंपर गिरेगा एवं मेरी योग्यता पर मुग्ध होकर अपनी राजकुमारीकी शादी मेरे साथ कर देगा । सभी राज्यका भार भी मुझे ही समर्पित कर देगा । यही सुन्दर उपाय मैंने सोचा है । यदि आपको रुचे तो, आप इसे कार्यान्वित करें । उपर्युक्त वार्ता श्रवण करके उस धूर्त्त विटोंके अग्रणीने जो अनेकों बार ऐसे प्रपंचयुक्त छल कपट कर चुका था । जिसे ऐसे जाल करने का अभ्यास था । उस पाञ्चाल-शर्मा नामक विटने मेरे कहे हुए छलोंसे भी अधिक छल करके मेरा वह कार्य निपुणतासे सम्पादित किया ।

(२६) इन जालोंके द्वारा मेरा अभीष्ट कार्य शीघ्र ही सम्पन्न हो गया । जैसे भौंरा नवमालिका फूलकी कलियोंमें आर्द्ररसोंको चूसता है । तद्वत् मैं भी कोमल मनवाली नवमालिका कुमारीके तारुण्यरसका आस्वादन करने लगा तत्पश्चात् इस राजा सिंहवर्माकी सहायताके लिये मित्रोंद्वारा प्रेरित मैं (प्रमति

दानं सुहृत्सङ्केतभूमिगमनमित्युभयमपेद्य सर्वबलसन्दोहेन चम्पामिमामुपगतो दैवाद्देवदर्शनसुखमनुभवामि' इति ।

(२७) श्रुत्वैतत्प्रमतिचरितं स्मितमुकुलितमुखनलिनो 'विलासप्रायमूर्जितम्, मृदुप्रायं चेष्टितम्, इष्ट एष मार्गः प्रज्ञावताम्, 'अथेदानीमत्र भवान्प्रविशतु' इति मित्रगुप्तमैक्षत क्षितीशपुत्रः ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते प्रमतिचरितं नाम पञ्चम उच्छ्वासः ।

* बालविबोधिनी *

सुहृदिति–सुहृदामस्मन्मित्राणां संकेतभूमौ मिलनस्थाने गमनम् । सर्वबलसन्दोहेन–सर्वेषां बलानां हस्त्यश्वादीनां सन्दोहः समूहस्तेन सहेति शेषः, युक्तो वा । देवदर्शनसुखं भवदवलोकनानन्दम् ।

(२७) स्मितेति–स्मितेन हास्येन मुकुलितं संकुचितं मुखनलिनं वदनकमलं यस्य सः । विलासप्रायं विलासबहुलम् । ऊर्जितं पराक्रमः । मृदुप्रायं–प्रायेण कोमलम् । इष्टोऽभिमतः । एष मार्गः–प्रमतिनाऽऽचरितः पन्थाः । प्रज्ञावतां–बुद्धिमताम् । इत्यन्तमुक्त्वा इति । अथ-प्रमति-चरित-श्रवणानन्तरम् । अत्र भवान्-मित्रगुप्तइत्यर्थः । प्रविशतु-स्वचरितं वर्णयितुमिति शेषः । क्षितीशपुत्रः–राजपुत्रो राजवाहनः ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायां प्रमतिचरित नाम पञ्चमोच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

अपने दल बलके साथ इस चम्पापुरीमें आ पहुंचा हूँ । दैववश यहांपर आपका भी दर्शन प्राप्त हो गया ।

(२७) इस प्रमति कुमारके चरितको श्रवण करके हाससे जिनका मुख कमल विकसित हो गया ऐसे राजवाहनने कहा—प्रमति ! यह आपका परिश्रम विलास युक्त है । बड़ी कोमलतासे चेष्टाएं की गयी हैं। आपका यह आदर्शमार्ग बुद्धिमानोंद्वारा अनुकरणीय है । राजपुत्र राजवाहनने कहा—अब हे मित्रगुप्त ! आप अपना चरित कहना आरम्भ करें ।

इस प्रकारसे दशकुमारचरितके प्रमतिचरितकी पञ्चमोच्छ्वासकी हिन्दी टीका बालक्रीडा समाप्त हुई ।

षष्ठोच्छ्वासः ।

(१) सोऽप्याचचक्षे—देव, सोऽहमपि सुहृत्साधारणभ्रमणकारणः सुह्मेषु दामलिप्ताह्वयस्य नगरस्य बाह्योद्याने महान्तमुत्सवसमाजमालोकयम् । तत्र कचिदतिमुक्तकलतामण्डपे कमपि वीणावादेनात्मानं विनोदयन्तमुत्कण्ठितं युवानमद्राक्षम् । अप्राक्ष च—'भद्र, को नामायमुत्सवः, किमर्थं वा समारब्धः, केन वा निमित्तेनोत्सवमनादृत्यैकान्ते भवानुत्कण्ठित

* बालविबोधिनी *

(१) साम्प्रतं मित्रगुप्तः स्ववृत्तान्तं वर्णयति । सः मित्रगुप्तः । यथाऽन्ये कुमाराः स्वस्वचरितान्यभाषयस्तथेति अपिशब्दार्थः । आचचक्षे आख्यातवान् । चक्षिङ्कथने इत्यस्य धातोर्लिटि रूपम् । सुहृदिति—सुहृदां मित्राणां कुमारान्तराणामिति यावत् साधारणं समानं भ्रमणस्य भूपर्यटनस्य कारणं निदानं यस्यासौ । सुह्मेषु देशविशेषेषु । दामलिप्ताह्वयस्य दामलिप्तनामकस्य । उत्सवसमाजं उत्सवगोष्ठीम् । तत्रोत्सवसमाजे । क्वचिद् एकदेशे । अतिमुक्तेति-माधवीलतामण्डपे । वीणावादेन विपञ्चीवादनेन । विनोदयन्तमानन्दयन्तम् । उत्कण्ठितं उत्कण्ठायुक्तं व्याकुलितमिति यावत् । अप्राक्ष पृष्टवान् । प्रच्छधातोर्लुङि रूपम् । किमर्थं—कस्मै प्रयोजनाय । निमित्तेन—कारणेन । अनादृत्य उपेक्ष्य विहायेति यावत् । परि-

* बालक्रीडा *

[अब मित्रगुप्त अपना वृत्तान्त सुनाना आरम्भ कर रहे हैं ।]

(१) उन मित्रगुप्तने कहा—"हे देव ! सभी सुहृदोंके समान मैं भी पृथिवीकी परिक्रमा करता हुआ सुह्मप्रान्तके अन्तर्गत दामलिप्त नामक नगरके बाहरी बगीचेमें जा पहुँचा । उस समय वहाँपर, एक बृहत् उत्सवके निमित्त, बहुतसे लोग एकत्र हुए थे । उस उत्सवगोष्ठीको मैंने देखा । उस उत्सवगोष्ठीसे विरक्त एकान्त स्थलमें माधवीलताके मण्डपके नीचे बैठे हुए एक उत्कण्ठित युवकको मैंने देखा जो युवक अपने आत्मविनोदार्थ वीणाको बजा रहा था । मैंने उससे पूछा—"हे सौम्य ! इस उत्सवका क्या नाम है, किस प्रयोजनके हेतु यह प्रारम्भ हुआ है, और किस कारणसे आप, उत्सवगोष्ठी त्याग करके यहाँ (एकान्तमें)

इव परिवादिनीद्वितीयस्तिष्ठति' इति ।

(२) सोऽभ्यधत्त—सौम्य, सुह्मपतिस्तुङ्गधन्वनामानपत्यः प्रार्थितवानमुष्मिन्नायतने विस्मृतविन्ध्यवासरागं वसन्त्या विन्ध्यवासिन्याः पादमूलादपत्यद्वयम् । अनया च किलास्मै प्रतिशयिताय स्वप्ने समादिष्टम्—समुत्पत्स्यते तवैकः पुत्रः, जनिष्यते चैका दुहिता । स तु तस्याः

* बालविबोधिनी *

वादिनीद्वितीयः-वीणासहायः ।

(२) स युवा । अभ्यधत्त अकथयत् । सुह्मपतिः सुह्मदेशस्य राजा । तुङ्गेति-तुङ्गधन्वेति नाम यस्यासौ । अनपत्यः निःसन्तानकः । अमुष्मिन् पुरो दृश्यमाने । आयतने-मन्दिरे । विस्मृतेति-विस्मृतो विन्ध्ये विन्ध्यपर्वते वासस्य वसतेः रागोऽनुरागो यत्र तद्यथा तथेति क्रियाविशेषणम् । विन्ध्यवासिन्या भगवत्या दुर्गायाः । पादमूलात्-चरणप्रान्तात् । अपत्यद्वयं सन्ततियुगलम् । प्रार्थितवानित्यनेन सम्बन्धः । अनया भगवत्या । अस्मै-तुङ्गधन्वने । प्रतिशयिताय-यावद्भगवती न प्रत्यादेक्ष्यति तावन्नाहमुत्थास्यामीति प्रतिज्ञापूर्वकं निद्रिताय । समुत्पत्स्यते-जनिष्यते । स पुत्रः । तु किन्तु । तस्या दुहितुः । पाणिग्राहकं-भर्त्तारम् भगिनीपतिमित्यर्थः । अनुजीविष्यति-तदधीनो भूत्वा स्थास्यति । सा कन्या । आपरिणय-

* बालक्रीडा *

वीणाद्वारा अपने चित्तको अतिरञ्जित करते हुए, बैठे हुए हैं ।"

(२) उस वीणाधारी युवकने उत्तर दिया—"हे भद्र ! सुह्मप्रान्तके अधिपति सन्तानहीन थे । अतः उन्होंने इस मन्दिरमें निवास करनेवाली देवीसे सन्तानकेलिये प्रार्थना की थी । जो भगवती इस मन्दिरमें बसनेके कारण अपने विन्ध्यपर्वतके वासको भूलसी गयी हैं । उन्हीं देवी विन्ध्यवासिनीके चरणोंमें राजा तुङ्गधन्वाने प्रार्थना की थी । जिस प्रार्थनाके फलस्वरूप भगवती विन्ध्यवासिनीने, राजाको उस रात्रिके स्वप्नमें, (जिसमें राजाने प्रतिज्ञा कर ली थी कि, आज रातको यदि देवीके दर्शन न कर लूंगा तो कल उठूँगा भी नहीं ।) दर्शन देकर आदेश दिया—"हे तुङ्गधन्वा ! तुम्हें एक पुत्र होगा और एक पुत्री होगी । वह पुत्र तुम्हारी उस पुत्रीके पतिका अनुजीवक होगा-अर्थात् उसके अधीन होकर रहेगा ।

पाणिग्राहकमनुजीविष्यति। सा तु सप्तमाद्वर्षादारभ्याऽपरिणयनात्प्रतिमासं कृत्तिकासु कन्दुकनृत्येन गुणवद्भर्तृलाभाय मां समाराधयतु। यं चाभिलषेत्सामुष्मै देया। स चोत्सवः कन्दुकोत्सवनामास्तु इति।

(२) ततोऽल्पीयसा कालेन राज्ञः प्रियमहिषी मेदिनी नामैकं पुत्रमसूत। समुत्पन्ना चैका दुहिता। साद्य नाम कन्या कन्दुकावती सोमापीडां देवीं कन्दुकविहारेणाराधयिष्यति। तस्यास्तु सखी चन्द्रसेना नाम धात्रेयिका मम प्रियासीत्। सा चैषु दिवसेषु राजपुत्रेण भीमधन्वना बलव-

* बालविबोधिनी *

नात्—आविवाहात् विवाहपर्यन्तमित्यर्थः। कृत्तिकासु कृत्तिकानक्षत्रयुक्तदिने। कन्दुकनृत्येन—कन्दुकक्रीडासहितनृत्येन। गुणवदिति—गुणवतः प्रशस्यगुणयुक्तस्य भर्तुः पत्युर्लाभाय प्राप्तये। मां विन्ध्यवासिनीमित्यर्थः। समाराधयतु—मदाराधनं करोतु। यं युवानम्। अभिलषेदिच्छेत् पतिरूपेण प्राप्तुमिति शेषः। सा कन्या। अमुष्मै—अभिलषिताय युवकाय। देया दातव्या तेन विवाह्येत्यर्थः।

(२) अल्पीयसा—अचिरेण। कन्दुकावतीति कन्यायाः नाम। सोमापीडां सोमश्चन्द्र आपीडः शेखरो यस्यास्ताम्। चन्द्रशेखरां देवीं भगवतीम्। कन्दुकविहारेण—कन्दुकनृत्येन। तस्याः कन्दुकावत्याः। धात्रेयिका—धात्रीकन्या। प्रिया वल्लभा। सा चन्द्रसेना। एषु दिवसेषु—साम्प्रतम्। भीमधन्वेति राजपुत्रस्य नाम बलवत्—दृढम्। अनुरुद्धा—अनुरुध्य वशनीता। तत्—तस्मात्कारणात्। मन्मथेति—

* बालक्रीडा *

वह आपकी पुत्री अपने जीवनके सातवें वरससे विवाह हो जानेके समयतक प्रत्येक कृत्तिका नक्षत्रमें कन्दुकनृत्यसे (गेंदके खेलसे) सुयोग्य गुणवान् पतिकी प्राप्तिके निमित्त मेरी आराधना किया करेगी। वह पुत्री जिस युवकको चाहे उसीसे आप उसका परिणय कर देना। उस उत्सवका नाम 'कन्दुकोत्सव' होगा।

(२) इसके कुछ ही दिनोंके पश्चात् राजा तुङ्गधन्वाकी प्यारी पटरानी मेदिनीको एक पुत्र उत्पन्न हुआ और एक पुत्री उत्पन्न हुई। वही राजकुमारी कन्दुकावती आज चन्द्रशेखरा (सोमपीडा) देवीकी अर्चना करने आवेगी।

दनुरुद्धा। तदहमुत्कण्ठितो मन्मथशरशल्यदुःखोद्विग्नचेताः कलेन वीणारवेणात्मानं किञ्चिदाश्वासयन्विविक्तमध्यासे इति।

(४) अस्मिन्नेव च क्षणे किमपि नूपुरक्वणितमुपातिष्ठत्। आगता च काचिदङ्गना। दृष्ट्वैव स एनामुत्फुल्लदृष्टिरुत्थायोपगूढकण्ठश्च तया तत्रैवोपाविशत्। अशंसच्च—सैषा मे प्राणसमा, यद्विरहो दहन इव दहति माम्। इदं च मे जीवितमपहरता राजपुत्रेण मृत्युनेव निरुष्मतां

* बालविबोधिनी *

मन्मथस्य कामस्य शरो बाणः शल्यमिव तेन यद्दुःखं तेनोद्विग्नं व्याकुलं चेतो हृदयं यस्यासौ। कलेन–मधुरेण। आश्वासयन्–सान्त्वयन्। विविक्तं निर्जनदेशम्। अध्यासे अधितिष्ठामि।

(४) किमपि–अनिर्वचनीयम्। नूपुरक्वणितं–मञ्जीरध्वनिः। उपातिष्ठत्–अश्रूयत। दृष्ट्वा विलोक्य तामङ्गनाम्। स–पूर्वोक्तयुवा। एनामङ्गनाम्। उत्फुल्लदृष्टिः उल्लसितलोचनः। तया अङ्गनया। उपगूढकण्ठः–कृतकण्ठग्रहः। अशंसत्–अकथयत् मामिति शेषः। सा मया पूर्वमुक्ता। यद्विरहः–यस्याः प्राणसमाया विरहो विच्छेदः। दहनः अनलः। जीवितं प्राणान्। अपहरता–विनाशयता। राजपुत्रेण–भीमधन्वना। निरुष्मतां–निष्प्राणताम्। नीतः प्रापितः अहमिति

* बालक्रीडा *

उसी राजकुमारी कन्दुकावतीकी सखी चन्द्रसेना जो उसकी धात्रीकी पुत्री है। मेरी वल्लभा हो गयी है। उस चन्द्रसेनाको राजकुमार भीमधन्वाने आजकल जबर्दस्तीसे रोक रखा है। इसी उपर्युक्त प्रेमके बन्धनसे तथा कामदेवके बाणोंसे पीड़ित होकर मैं उद्विग्न चित्त हो गया हूं, और इस वीणाकी ध्वनिसे एकान्तमें उसका ध्यान करके चित्त बहला रहा हूं।

(४) उसी क्षणमें अनिर्वचनीय मञ्जीरोंकी ध्वनि सुनायी पड़ी। कोई अंगना वहांपर आयी। वह युवक उस अङ्गनाको देखते ही उल्लसित नेत्रोंसे उसके लिये खड़ा हो गया। उस अङ्गनाने उस युवकको गले लगा लिया और वहीं बैठ गयी। उस युवकने मुझसे कहा—"यही मेरी प्राणप्यारी है। जिसका वियोग मुझे अग्निके सदृश जलाता था। मेरे इस जीवनके अपहरणद्वारा राज-

नीतः । न च शक्ष्यामि राजसूनुरित्यमुष्मिन्पापमाचरितुम् । अतोऽनया-स्मानं सुदृष्टं कारयित्वा त्यक्ष्यामि निष्प्रतिक्रियान्प्राणान् इति । सा तु पर्यश्रुमुखी समभ्यधात्— 'मा स्म नाथ, मत्कृतेऽध्यवस्य' साहसम् । यस्त्वमुत्तमात्सार्थवाहादर्थदासादुत्पद्य कोशदास इति गुरुभिरभिहितना-मधेयः पुनर्मदत्यासङ्गाद्वेशदास इति द्विषद्भिः प्रख्यापितोऽसि, तस्मिंस्त्व-

* बालविबोधिनी *

शेषः । राजसूनुः राजपुत्र इति हेतोः । अमुष्मिन्–राजपुत्रे । पापमनिष्टम् । आच-रितुं विधातुम् । अतः–प्रतीकारासमर्थत्वात् । अनया मत्प्राणसमया आत्मानं सुदृष्टं कारयित्वा–एतस्या मेऽनन्यसाधारणोऽनुरागो वर्त्तत इति विश्वासमुत्पाद्येति भावः । निष्प्रतीति–निर्गता प्रतिक्रिया प्रतीकारो येषां तान् । इत्यन्तं युवकवच-नम् । सा त्वित्यादि पुनर्मित्रगुप्तस्योक्तिः । सा चन्द्रसेनानाम्नी अङ्गना । पर्यश्रुमु-खी–बाष्पपूर्णवदना रुदतीति यावत् । समभ्यधादकथयत् । मास्मेत्यस्य अध्यवस्य इति क्रियया सम्बन्धः । नाथेति सम्बोधनम् । मत्कृते मदर्थम् । अध्यवस्यः साहस मा कार्षीः । मदर्थे त्वया प्राणा नत्यक्तव्या इति भावः । अध्यवस्य इति अधि–अव पूर्वक सो धातोर्लङि रूपम् । उत्तमात्–श्रेष्ठात् । सार्थवाहात्–वणिजः । अर्थदास इति युवकस्य पितुर्नाम । उत्पद्य–जन्मलब्ध्वा । कोशदास इतियु वकस्य नाम । गुरुभिः–पित्रादिभिः । अभिहितनामधेयः कृतनामकरणः । मदत्यासङ्गात्–मयि अत्यासक्तेः कारणात् । वेशदासः–वेश्यादासः । द्विषद्भिः–तव शत्रुभिः ।

* बालक्रीडा *

कुमारने मुझे निष्प्राण बना दिया था । राजकुमार होनेके कारण मैं उसका कुछ भी अनिष्ट नहीं कर सकता हूं । अत एव मैं अपना दर्शन इस अङ्गनाको, कराकर अब अपने प्राणोंको त्याग दूंगा । क्योंकि इसके अतिरिक्त मेरे पास कोई प्रतिक्रिया नहीं है । उपर्युक्त बातें श्रवणकर रोती हुई चन्द्रसेना बोली—"हे नाथ ! मेरे लिये आप ऐसा साहसका काम न करें । क्योंकि श्रेष्ठ सार्थवाहने आप उत्पन्न हुए हैं और आपके बडे लोगोंने आपका नाम कोशदास रखा है । फिर मेरेपर आपकी आसक्ति होनेके हेतु आपका नाम 'वेशदास' प्रख्यात किया है । ऐसे, मेरेपर अनुरक्त आपकी मृत्युपर यदि मैं जीवित रहूं तो

व्युपरते यद्यहं जीवेयं नृशंसो वेश इति समर्थयेयं लोकवादम् । अतोऽद्यैव नय मामीप्सितं देशम् इति ।

(५) स तु मामभ्यधत्त—'भद्र, भवद्दृष्टेषु कतमत्समृद्धं संपन्नसस्यं सत्पुरुषभूयिष्ठं च' इति । तमहमीषद्विहस्याब्रवम्—'भद्र, विस्तीर्णेयमर्णवाम्बरा । न पर्यन्तोऽस्ति स्थानस्थानेषु रम्याणां जनपदानाम् । अपितु न चेदिह युवयोः सुखनिवासकारणं कमप्युपायमुत्पादयितुं शक्नुयाम् ततोऽहमेव भवेयमध्वदर्शी' । तावत्तोदैरत रणितानि मणिनूपुराणाम् ।

* बालविबोधिनी *

प्रख्यापितः–प्रसिद्धीकृतः । तस्मिन्–तादृशे । उपरते–मृते । जीवेयं–प्राणिस्यामि । नृशंसः–क्रूरः । वेशः–वेश्याजनः । समर्थयेयं–दृष्टान्तेन दृढीकरिष्यामि । लोकवादं जनोक्तिम् । नय–प्रापय । अभीप्सितं–स्वन्मनोगतम् ।

(५) स कोशदासः । मां मित्रगुप्तमित्यर्थः । राष्ट्रेषु–जनपदेषु । समृद्धं–प्रचुरधनम् । सम्पन्नशस्यं–पर्याप्तधान्यम् । सत्पुरुषभूयिष्ठं–सज्जनबहुलम् । तं–कोशदासम् । अहं–मित्रगुप्तः । विस्तीर्णा–विशाला । अर्णवाम्बरा–पृथ्वी । पर्यन्तः शेषः । अपितु–किन्तु । इह–दामलिप्तनगरे । सुखेति–सुखेन निवासो वसति स्तस्य-कारणं जनकम् । उत्पादयितुं कर्त्तुम् । ततस्तर्हि । अध्वदर्शी–मार्गदर्शकः । अहमेव युवामन्यत्र नेष्यामीति भावः । तावता–तस्मिन् काले । उदैरत–उत्पन्नानि-

* बालक्रीडा *

सब लोग मुझे क्रूर वेश्या कहेंगे । और मैं इस लोकापवादको दृढ़ करनेवाली हो जाऊँगी कि "वेश्याएं क्रूर होती हैं।" अत एव आज ही आप मुझे चाहें जिस देशमें ले चलिये।"

(५) उसने उस चन्द्रसेनाकी बातें श्रवणकर मुझसे कहा—"हे सौम्य ! आपने अनेकों देशोंको पर्यटनकर देखा है, कृपया, बताइये कि, कौनसा देश धनसे तथा धानसे परिपूर्ण एवं भले मानुषोंसे विभूषित है।" उस कोशदासने मैंने (मित्रगुप्तने) हंस करके कहा—"हे सौम्य ! यह समुद्रपरिधाना पृथिवी अति विशाल है । इसमें स्थान-स्थानपर रमणीय नगर बसे हैं जिनका परिगणन नहीं हो सकता है । यदि आप लोग इस दामलिप्त नगरमें सुखसे रहनेमें अस-

अथासौ जातसम्भ्रमा 'प्राप्तैवेयं भर्तृदारिका कन्दुकावती कन्दुकक्रीडितेन देवीं विन्ध्यवासिनीमाराधयितुम्। अनिषिद्धदर्शना चेयमस्मिन्कन्दुकोत्सवे। सफलमस्तु युष्मच्चक्षुः। आगच्छत द्रष्टुम्। अहमस्याः सकाशवर्तिनी भवेयम्' इत्ययासीत्।

(६) तामन्वयाव चावाम्। महति रत्नरङ्गपीठे स्थितां प्रथमं ताम्रोष्ठीमपश्यम्। अतिष्ठच्च सा सद्य एव मम हृदये। न मयान्येन वान्तराले

* बालविबोधिनी *

बभूवुः। ईङ् गतौ कम्पने चेत्यस्य धातोर्लङि आत्मने पदस्य बहुवचने रूपम्। रणितानि-शब्दाः। असौ-चन्द्रसेना। जातसम्भ्रमा-उत्पन्नसंवेगा। प्राप्ता-आगता। भर्तृदारिका-राजपुत्री। अनिषिद्धदर्शना-अनिवारितदर्शना। सर्व एवैनां द्रष्टुमर्हन्तीत्यर्थः। सफलं-कृतार्थम्। आगच्छतं युवामिति शेषः। अस्याः कन्दुकावत्याः। सकाशवर्तिनी समीपस्था। इति-एवमुक्त्वा। अयासीत्-अचलत्।

(६) तां चन्द्रसेनाम्। अन्वयाव-अनुगतवन्तौ। आवाम्-मित्रगुप्तकोशदासौ। रत्नरङ्गपीठे रत्ननिर्मितासने। प्रथम अग्रेऽ। ताम्रोष्ठी-रक्ताधरबिम्बाम्।

* बालक्रीडा *

मर्थ हैं तो, मैं कोई उपाय रचूं और आप लोगोंका मार्गदर्शक होकर कहीं दूसरे स्थलमें ले चलूं।" इसी क्षणमें मणि नूपुरोंकी बजती हुई ध्वनि मालूम पड़ी। तत्क्षण ही वह चन्द्रसेना सम्भ्रमित हो करके बोली "ये राजकुमारी कन्दुकावती कन्दुक नृत्यसे भगवती विन्ध्यवासिनी अष्टभुजादेवीकी आराधना करनेके लिये आ गयीं। इस समय (कन्दुकोत्सवकालमें) सब लोग इनका दर्शन कर सकते हैं (क्योंकि बिना देखे हुए वे अभिलषित पतिका कैसे वरण करेंगी यद्यपि "असूर्यम्पश्या राजदाराः" होती हैं पर इनके लिये देवीका वर अपवादरूपमें है) अपनी दृष्टियोंको कृतार्थ कीजिये। आप लोग आइये और इनका दर्शन कीजिये। मैं उनकी पार्श्वभूता (सहचरी) रहूंगी। ऐसे वाक्य कहकर वह चन्द्रसेना वहांसे राजकुमारीके समीप चली गयी।

(६) हम दोनोंने (कोशदास और मित्रगुप्तने) उस चन्द्रसेनाकी गतिका अनुसरण किया। मैंने विशाल रत्नासनपर बैठी हुई, रक्ताधर बिम्बोष्ठी,

दृष्टा । चित्रीयाविष्टचित्तश्चाचिन्तयम्—'किमियं लक्ष्मीः । नहि नहि । तस्याः किल हस्ते विन्यस्तं कमलम्, अस्यास्तु हस्त एव कमलम् ।अभुक्तपूर्वा चासौ पुरातनेन पुंसा पूर्वराजैश्च, अस्याः पुनरनवद्यमयातयामं च यौवनम्' इति चिन्तयत्येव मयि, सानघसर्वगात्री व्यत्यस्तहस्तपल्लवाग्रस्पृष्टभूमिरालोलनीलकुटिलालका सविभ्रमं भगवतीमभिवन्द्य कन्दुक-

* बालविबोधिनी *

कन्दुकावतीमिति शेषः । अतिष्ठत्-अधिष्ठिताऽभवत् । सद्यस्तत्क्षणम् । अन्तराले-मध्ये-पूर्वमिति भावः । चित्रीयेति-चित्रीया विस्मयस्तया आविष्टमाक्रान्तं चित्तं यस्यासौ । तस्याः लक्ष्म्याः । विन्यस्तं-स्थितम् । अस्याः कन्दुकावत्याः । हस्ते कमलमित्यनेन हस्तकमलयो र्भेदः । हस्त एव कमलमित्यनेन च तयोरभेदः सूचितः । अभुक्तपूर्वा-पूर्वमभुक्ता । असौ-राज-पुत्री । पुरातनेन पुंसा-नारायणेन । पूर्वराजैः पूर्ववर्त्तिभिर्नृपैः । लक्ष्मी नारायणेनोपभुक्ता-राजलक्ष्मीरपि पूर्वनृपैरुपभुक्ता इयन्तु केनापि नोपभुक्ता अतो नेयं प्रसिद्धा लक्ष्मीरिति तात्पर्यम् । अनवद्यमनिन्द्यम् । अयातयामं-प्रत्यग्रं अनुपभुक्तमिति यावत् । अनघसर्वगात्री-अनघं निर्दोषं सर्वं निखिलं गात्रं शरीरं यस्याः सा । व्यत्यस्तेति-व्यत्यस्तेन परावर्त्तितेन हस्तपल्लवाग्रेण करकिसलयाग्रेण स्पृष्टा चुम्बिता भूमिः पृथ्वी यया सा । आलोलेति-आलोला ईषच्चञ्चलाः नीलाः कृष्णवर्णाः कुटिला वक्रा अलकाश्चूर्णकु-

* बालक्रीडा *

राजकुमारी कन्दुकावतीको प्रथम ही देखा । वह उसी समय मेरे मनमें बस गयी । मेरे और राजकुमारीके बीचमें कोई व्यवधान नहीं दिखाई देता था । मैं आश्चर्यान्वित हृदयसे सोचने लगा—"क्या यह लक्ष्मी है । नहीं, नहीं, उन लक्ष्मीजीके हाथोंमें तो कमल होते हैं । इस राजकुमारीके तो हाथ ही कमल हैं । वे पूजनीय लक्ष्मीजी तथा मान्या राज्यलक्ष्मी यथाक्रम भगवान् विष्णु और पूर्ववर्त्ती राजाओंसे उपभुक्त हैं । किन्तु, यह राजकुमारी तो किसीसे भी उपभुक्त नहीं है । इसके अनिन्द्य अवयव हैं और नूतन अनुपभुक्त तारुण्यशालिनी है । मैं ऐसे तर्क-वितर्क कर ही रहा था कि, उस निर्दोष अङ्गवाली (सर्वाङ्गसुन्दरी) ने अपने परिवर्त्तित हस्तरूपी किसलयोंके अग्रभागसे पृथिवीको स्पर्शित किया ।

ममन्दरागरूषिताक्षमनङ्गमिवालम्बत। लीलाशिथिलं च भूमौ मुक्तवती। मन्दोत्थितं च किंचित्कुञ्चिताङ्गुष्ठेन प्रसृतकोमलाङ्गुलिना पाणिपल्लवेन समाहत्य हस्तपृष्ठेन चोन्नीय, चटुलदृष्टिलाञ्छितं स्तबकमिव भ्रमरमालानुविद्धमवपतन्तमाकाश एवाग्रहीत्। अमुञ्चच्च।

(७) मध्यविलम्बितलये द्रुतलये च मृदुमृदु प्रहरन्ती तत्क्षणं चूर्णपदमदर्शयत्। प्रशान्तं च तं निर्दयप्रहारैरुदपातयत्। विपर्ययेण च

* बालविबोधिनी *

न्तला' यस्याः सा। सविभ्रमं सविलासम्। अमन्देति-अमन्देनातिशयितेन रागेण रक्तिम्ना-रूषिते भूषिते अक्षिणी नयने यस्य तथाविधं मनङ्गं काममिव। आलम्बत गृहीतवती। लीलेति-लीलया विलासेन शिथिलं श्लथम्। क्रियाविशेषणम्। मुक्तवती क्षिप्तवती। मन्दोत्थितमीषदुन्नतम् कन्दुकमिति शेषः। किंचिदिति-किंचिदीषत् कुञ्चितो वक्रीकृतोऽङ्गुष्ठोऽङ्गुलिविशेषो यत्र तेन। प्रसृतेति-प्रसृता विस्तारिताः कोमला अङ्गुलयो यत्र तेन। विशेषणद्वयं पाणिपल्लवेनेत्यस्य। समाहत्य ताडयित्वा। उन्नीय-ऊर्ध्वीकृत्य। चटुलेति-चटुलया चञ्चलया दृष्ट्या दृष्टिपातेन लाञ्छितं शोभितम्। अतएव भ्रमरमालया मधुकरपंक्त्या अनुविद्धमनुसृतं स्तबकं पुष्पगुच्छमिवावपतन्तं अधो गच्छन्तम्। आकाशे मध्ये। अग्रहीत् कन्दुकमिति शेषः।

(७) मध्येति-मध्यःसाधारणो विलम्बितः अतिशिथिलो लयः पतनं यस्य

* बालक्रीडा *

कुछ चचल तथा काले टेढे बालोंकी चोटीसे विलासपूर्वक अष्टभुजादेवीको प्रणाम किया। फिर अतिशय रागसे विभूषित नेत्रवाली उसने कामदेवके समान कन्दुकको उठा लिया। पुनः विलाससे श्लथ गेंदको पृथिवीपर फेंक दिया। तन' ऊपर की ओर उछलते हुए कन्दुकको कुछ सकुचित अगूठे तथा फैली हुई अङ्गुलियोंवाले करकिसलयसे ताडित करके हाथके पिछले भागसे ऊपरकी ओर उछाल दिया। फिर चपल दृष्टियोंसे चिह्नित उस कन्दुकको भौरोंकी श्रेणियोंसे परिपूर्ण फलोंके गुच्छेके सदृश बीचमें ही पकड़ लिया—जमीनपर न गिरने दिया

(७) वह राजकुमारी कन्दुकावती उस समय गेंदसे खूब खेल रही थी।

प्राशमयत् । पक्षमृज्वागतं च वामदक्षिणाभ्यां कराभ्यां पर्यायेणाभिघ्नती शकुन्तमिवोदस्थापयत् । दूरोत्थित-तं च प्रपतन्तमाहृत्य गीतमार्गमारचयत् । प्रतिदिशं च गमयित्वा प्रत्यागमयत् ।

(८) एवमनेककरणमधुरं विहरन्ती रङ्गगतस्य रक्तचेतसो जनस्य

* बालविबोधिनी *

तस्मिन्-द्रुतं शीघ्रं लयः पतनं यस्य तस्मिन् तथाभूते कन्दुके । मृदु मृदु-मन्दं मन्दम् । प्रहरन्ती-ताडयन्ती । चूर्णपदं-कन्दुकतन्त्रोक्तः क्रिया विशेषः, उक्तं च—गत्यागत्योरानुलोम्यं न्यूनाधिक्यक्षेपणं तच्चूर्णपद मिति । प्रशान्तं निश्चलं स्थिरं कन्दुकम् । निर्दयप्रहारैः कठोरताड़नैः । उदपातयत् उदक्षिपत् । विपर्ययेण-वैपरीत्येन । प्राशमयत् निश्चलमकरोत् । कन्दुकावतीति सर्वत्र कर्तृपदम् । पक्षं वशमागतम् । ऋज्वागतं-सारल्येनोपगतं कन्दुकमिति शेषः । पर्यायेण क्रमेण । अभिघ्नती-प्रहरन्ती । शकुन्तं-पक्षिणम् उदस्थापयत्-उदपातयत् । आहृत्य-मध्ये आकृष्य । गीतमार्गं-दशपद चंक्रमणरूपं गति विशेषम् । आरचयत् कृतवती । गमयित्वा भ्रामयित्वा । प्रत्यागमयत्-पुनस्तत्रैवानयत् ।

(८) एवमनेन प्रकारेण । अनेकेति-अनेककरणेन नानाविधव्यापारेण

* बालक्रीडा *

कभी गेंदको उपर फेंकती थी । कभी उसकी गति बीचमें कम कर देती थी कभी उसे नीचे पटकती थी कभी उसपर धीरे-धीरे कराघात करती हुई कन्दुकतन्त्रानुसार कन्दुकक्रीड़ा करती थी । उपर्युक्त कन्दुककी गतिका नाम चूर्णपद है । अतः वह चूर्णपद क्रीड़ा सभीको दिखा रही थी । जब गेंद निश्चल हो जाती थी तब कन्दुकावती उसे कठोर प्रहारोंसे ऊपरको उछाल देती थी । फिर वैपरीत्य गतिसे उस गेंदको निश्चल कर देती थी जब गेंद निश्चल होकर वशमें हो जाता था तब उसे सरलतासे बायें और दाहिने हाथोंसे ताड़न करके पक्षीकी तरह ऊपरकी ओर उछाल दिया करती थी । बहुत ऊपरकी ओर उछले हुए कन्दुकको, वह कुमारी बीचमें ही पकड़कर, दशपदचक्रमणरूप' गतिसे क्रीड़ा करती थी । प्रत्येक दिशामें कन्दुकको उछालकर वह अपनी ओर खींच लेती थी ।

(८) इस प्रकारसे नाना विधियोंसे रमणीय कंदुकक्रीड़ा करती हुई उस

प्रतिक्षणमुच्चावचाः प्रशंसावाचः प्रतिगृह्णती, प्रतिक्षणारूढविभ्रमं कोशदासमंसेऽवलम्ब्य कण्टकितगण्डमुत्फुल्लेक्षणं च मय्यभिमुखीभूय तिष्ठति तत्प्रथमावतीर्णकंदर्पकारितकटाक्षदृष्टिस्तदनुमार्गविलसितलीलाञ्चितभ्रूलता, श्वासानिलवेगान्दोलितैर्दन्तच्छदरश्मिजालैर्लीलापल्लवैरिव मुखकमलपरि-

* बालविबोधिनी *

मधुरं रमणीयम् यथा तथा । रङ्गगतस्य-क्रीडास्थानस्थितस्य । रक्तचेतसः सानुरागहृदयस्य । जनस्य-द्रष्टृवर्गस्य । उच्चावचाः स्थूलसूक्ष्माः । प्रशंसावाचः स्तुतिभाषणानि । प्रतिगृह्णती-स्वीकुर्वती । प्रतिक्षणेति-प्रतिक्षणं प्रतिमुहूर्तं आरूढ उत्पन्नो विभ्रमो विलासो यस्मिंस्तद् यथा तथा । अंसे स्कन्धदेशे । अवलम्ब्य गृहीत्वा । कण्टकितगण्डं-रोमाञ्चितकपोलं यथा तथा । उत्फुल्लेक्षणं विकसितनयनं यथा तथा । मयि-मित्रगुप्ते । अभिमुखीभूय-कन्दुकावत्याः सम्मुखीनो भूत्वा । तिष्ठति-वर्तमाने सति । तत्प्रथमेति-तदेव प्रथमं नूतनं अवतीर्णः समुपागतो यः कन्दर्पस्तेन कारिता कटाक्षदृष्टिर्यस्याः सा । कन्दुकावत्या या कटाक्षदृष्टिः सा कामेनैव कारितेत्यर्थः । तदनुमार्गेति-तदनु तदनन्तरं कटाक्षपातनानन्तरमित्यर्थः मार्गे पथि विलसितया स्फुरन्त्या लीलया विलासेन अञ्चिते वक्रीकृते भ्रुवौ लते इव यया सा । श्वासानिलेति-श्वासानिलस्य निःश्वासमारुतस्य वेगेन जवेनान्दोलितैः कम्पितैः दन्तच्छदस्याधरस्य रश्मिजालैः प्रभापुञ्जैः, किम्भूतैः लीलार्थं क्रीडार्थं नवपल्लवैरिव । मुखकमलेति-मुखकमलस्यान-

* बालक्रीडा *

राजकुमारीने, क्रीडास्थलमें आये हुए अनुरागवान दर्शकोंद्वारा स्थूल और सूक्ष्मरूपेण वर्णित अपनी स्तुति, प्रतिश्रवण की । मैं कोशदासके कंधेके सहारे खड़ा था, मुझे प्रतिक्षण विलास उत्पन्न हो रहा था । मेरे कपोल रोमाञ्चित हो रहे थे, मेरे नेत्र प्रफुल्लित हो रहे थे । उपर्युक्त लक्षणोंसे लक्षित मेरे ऊपर कटाक्ष कर रही थी । अतः मैं जहांपर खड़ा हुआ था वहींपर आकर उस राजकुमारीने प्रथमोत्पन्न कामदेवप्रेरित कटाक्ष दृष्टि फेंकी । तत्पश्चात्—कटाक्षोंके विक्षेपके पश्चात्—टेढी—मेढी लतारूपी भ्रुकुटियोंद्वारा श्वासोंश्वासके वेगसे कम्पित और लीलापल्लवके समान धीरे धीरे कपाती हुई अधर प्रभापुंजोंसे मुखकमलकी

मलग्रहणलोलानलिनस्ताडयन्ती,

(९) मण्डलभ्रमणेषु कन्दुकस्यातिशीघ्रप्रचारतयाविशन्तीव मद्दर्शनलज्जया पुष्पमयं पञ्जरम् , पञ्चबिन्दुप्रसृतेषु पञ्चापि पञ्चबाणबाणान्युग-

* बालविबोधिनी *

नारविन्दस्य यः परिमलो गन्धस्तस्य ग्रहणाय ग्रहणार्थं लोलांश्चञ्चलान् । अलिनो भ्रमरान् । ताड़यन्ती निवारयन्ती ।

(९) मण्डलभ्रमणेषु—चक्राकारगतिविशेषेषु । कन्दुकस्यातिशीघ्रप्रचारतया अतिवेगभ्रमणेन मद्दर्शनलज्जया मदवलोकनह्रिया पुष्पमयं कुसुमनिर्मितं पञ्जरं सुरक्षितस्थान माविशन्ती निलीयमानेवेत्युत्प्रेक्षा । पञ्चबिन्दुप्रसृतेषु कन्दुकक्रीडायां तदाख्यगतिविशेषेषु । तदुक्तं पञ्चावर्त्तप्रहारस्तु पञ्चबिन्दुरुदाहृत इति । पञ्च पञ्चसंख्याकान् । 'अरविन्दमशोकञ्च चूतञ्च नवमल्लिका । नीलोत्पलञ्च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायका' इत्युक्तेः । पञ्चबाण बाणान्—कामशरान् । युगपदिव—मन्ये समकालमेव । अभिपततः—कन्दुकावस्थाः सम्मुखमागच्छतः । पञ्चबाण बाणानित्यस्य विशेषणम् । त्रासेन भयेन । अवघट्टयन्ती सन्ताड्य निरस्यन्ती । गोमूत्रिकप्रचारेषु—गोमूत्रिकावत् सरलवक्रगतिविशेषास्तेषु । घनदर्शितेति—घनं सान्द्रं यथा तथा दर्शितः प्रकटितो रागस्यानुरागस्य विभ्रमो विलासो यया सा । अत एव विद्युल्लतां सौदामिनीं विड़म्बयन्ती अनुकुर्वतीव । विद्युल्लतां

* बालक्रीडा *

सुगन्धको ग्रहण करनेमें अति चंचल भौंरोंको ताड़ित कर रही थी ।

(६) चक्राकार गतिसे उछलनेवाले कन्दुकको अत्यन्त शीघ्रतासे प्रक्षेपित करती हुई और उसी क्षणमें मेरे दर्शनकी कारणीभूता उत्पन्न लज्जासे विलज्जित होकर वह राजकुमारी मानो, कुसुमनिर्मित सुरक्षित स्थानमें प्रवेश करती हुई दिखा रही थी । पञ्चबिन्दु (पंचावर्त्तप्रहार) गतिसे कन्दुकक्रीड़ा करती हुई वह राजकुमारी एक ही समयमें कामदेवके पांचों कुसुमनिर्मित बाणोंका, भयद्वारा, प्रतीकार करती हुई मालूम हो रही थी । गोमूत्रिका नामक गतिसे कन्दुकक्रीड़ा (सरल और वक्र गतिसे) करती हुई वह राजपुत्री प्रगाढ़ प्रीतिको झलकाती हुई बिजलीको भी तिरस्कृत कर रही थी । अथवा,

पदिवाभिपतत्त्रासेनावघट्टयन्ती, गोमूत्रिकाप्रचारेषु घनदर्शितरागविभ्रमा विद्युल्लतामिव विडम्बयन्ती,

(१०) भूषणमणिरणितदत्तलयसंवादिपादचारम्, अपदेशस्मितप्रभानिषिक्तबिम्बाधरम्, असस्रंसितप्रतिसमाहितशिखण्डभारम्, समाघट्टितक्वणितरत्नमेखलागुणम्, अञ्चितोत्थितपृथुनितम्बविलम्बितविचलदंशु-

* बालविबोधिनी *

कीदृशीम् इति पक्षान्तरे विभक्ति विपरिणामेण—घने मेघे दर्शितो रागस्य रक्तिम्नो विभ्रमो यया तामिति ।

(१०) भूषणेति—भूषणमणीनामलङ्काररत्नानां रणितेन शब्दितेन दत्तस्य लयस्य साम्यस्य संवादी अनुकारी पादचारः पादन्यासो यत्र तद्यथा तथा । इत आरभ्य सर्वाण्येव पर्यक्रीडतेति क्रियाविशेषणानि । अपदेशेति—अपदेशेन छलेन यत् स्मितमीषद्धसितं तस्य प्रभया कान्त्या निषिक्तो व्याप्तो बिम्बाधरो यत्र तत् । ·संसेति—असे स्कन्धदेशे स्रंसित आदौ पतितः पश्चात् प्रतिसमाहितः स्वस्थानं प्रापितः शिखण्डभारः केशकलापो यत्र तद्यथा । समाघट्टितेति—समाघट्टितः सञ्चालितोऽतएव क्वणितः शब्दायमानो रत्नमेखलागुणः काञ्चीदाम यत्र तद्यथा । अञ्चितेति—अञ्चितं शोभनं यथा तथा उत्थितः पृथुर्विशालो यो नितम्बस्तत्र विलम्बितं लग्नं विचलच्चञ्चलं यदंशुकं वसनं तेन उज्ज्वलं मनोज्ञं यथा तथा । अकु-

* बालक्रीडा *

बादलोंके प्रति जिसने रागके विलासको प्रकट किया है ऐसी बिजलीको भी तिरस्कृत करती हुई वह दिखाई दी ।

(१०) वह राजकुमारी अपने अलङ्कारोंके रत्नोंकी ध्वनियोंसे जो उसके पैरमें भूषित थे ताल (लय) को सम्पादित कर रही थी । उसके रक्त अधर कपटकी हंसीसे परिपूर्ण थे । वह राजकुमारी अपने कन्धेपर गिरे हुए केश कलापोंको यथास्थान धर रही थी । उस राजकुमारीके रत्नजटित करधनीके दाने सञ्चालन करनेसे बज रहे थे । उस राजकुमारीके सुशोभित तथा उन्नत एवं विशाल नितम्बप्रदेशमें जो चञ्चल वस्त्र लटक रहा था उससे वह मनोज्ञ दीख रही थी । वह राजकुमारी अपनी भुजलताद्वारा जो कभी फैलती थी,, कभी

कोज्ज्वलम्, आकुञ्चितप्रसृतवेल्लितभुजलताभिहतललितकन्दुकम्, आवर्जितबाहुपाशम्, उपरिपरिवर्तितत्रिकविलग्नलोलकुन्तलम्,

(११) अवगलितकर्णपूरकनकपत्रप्रतिसमाधानशीघ्रतानतिक्रमितप्रकृतक्रीडनम्, असकृदुत्क्षिप्यमाणहस्तपादबाह्याभ्यन्तरभ्रान्तकन्दुकम्, अवनमनोन्नमननैरन्तर्यनष्टदृष्टमध्ययष्टिकम्, अवपतनोत्पतननिर्व्यवस्थ-

* बालविबोधिनी *

ञ्चितेति–आकुञ्चितया कदाचित् संक्षिप्यमाणया–प्रसृतया कदाचित् प्रसार्यमाणया, वेल्लितया कदाचिच्च वक्रीकृतया भुजलतया बाहुयष्ट्या अभिहतस्ताडितो ललितः सुन्दरः कन्दुको यत्र तद्यथा। आवर्जितेति–आवर्जितौ आनमितौ बाहू भुजौ पाशाविव यस्मिंस्तद्यथा तथा। उपरीति–उपरि ऊर्द्धदेशे परिवर्त्तिते स्थिते त्रिके पृष्ठवंशाधोभागे विलग्नाः संबद्धा लोलाश्चञ्चलाः कुन्तलाः केशा यस्मिंस्तद्यथा तथा।

(११) अवगलितेति–अवगलितस्य स्वस्थानात् भ्रष्टस्य कर्णपूरस्यावतंसभूतस्य कनकपत्रस्य तदाख्याभरणस्य प्रतिसमाधाने स्वस्थाननयने या शीघ्रता क्षिप्रहस्तता तया अनतिक्रमितमनुल्लङ्घितं प्रकृतं प्रारब्धं क्रीडनं यत्र तद्यथा तथा। असकृदिति—असकृद् वारंवारमुत्क्षिप्यमाणयोर्हस्तपादयोर्बाह्याभ्यन्तरयोर्भ्रान्तः कन्दुको यत्र तद्यथा। अवनमनेति–अवनमनमवनतीकरणमुन्नमनमूर्ध्वीकरणं तयो-

* बालक्रीडा *

सिमटती थी, कभी तिरछी होती थी। उसके द्वारा वह सुन्दर गेंदको ताडित करती थी। वह राजकुमारी कभी कभी अपने भुजपाशोंको आनमित करती थी। वह राजकुमारी अपने हाथोंको ऊपर परिवर्त्तित करती थी, जिसके कारण उसकी चञ्चलबालोंकी चोटियां जो उसके नितम्बभागतक लटक रही थीं चञ्चलायमान दीख रही थीं।

(११) वह राजपुत्री अपने कानके अलङ्कारको जिसमें सुवर्ण पत्र लगे थे। उन्हें अपने स्थानसे गिरनेपर फिर यथा स्थान सजा लेती थी तथा उसे ऐसा करते हुए अपने कन्दुकके खेलमें जरा भी देर नहीं होती थी। वेर-वेर उस कन्दुकको हाथ पैरोंसे उछालती हुई बाहर-भीतर घूमनेवाला कन्दुक बना रही थी। उस राजपुत्रीकी देहका मध्यभाग, कभी दिखा जाता था, किसी भी समय नहीं

मुक्ताहारम्, अङ्कुरितघर्मसलिलदूषितकपोलपत्रभङ्गशोषणाधिकृतश्रवणपल्लवानिलम्, आगलितस्तनतटांशुकनियमनव्यापृतैकपाणिपल्लवं च निषद्योत्थाय निमील्योन्मील्य स्थित्वा गत्वा चैवातिचित्रं पर्यक्रीडत राजकन्या। अभिहत्य भूतलाकाशयोरपि क्रीडान्तराणि दर्शनीयान्येकेनैव वानेकेनैव

* बालविबोधिनी *

नैरन्तर्येण सातत्येन नष्टदृशा अवनमनेन नष्टाऽदर्शनं गता-उन्नमनेन च दृष्टा मध्ययष्टिः शरीरमध्यभागो यस्मिंस्तथया । अवपतनेति—अवपतनोत्पतनाभ्यां निर्व्यवस्थश्चञ्चलो मुक्ताहारो यस्मिंस्तथया । अङ्कुरितेति—अङ्कुरितेन ईषत् सञ्जातेन घर्मसलिलेन स्वेदवारिणा दूषितयोर्म्लानयोः कपोलयोर्गण्डयोः पत्रभङ्गानां पत्ररचनानां स्वेदबिन्दुसिक्तानामित्यर्थः शोषणे शुष्ककरणे अधिकृतो नियुक्तः श्रवणपल्लवानिलः कर्णकिसलयवायुर्यत्र तद्यथा तथा । आगलितेति—आगलितस्य स्रस्तस्य स्तनतटांशुकस्य कुचतटावरणस्य नियमने बन्धने व्यापृतो नियुक्त एकः पाणिपल्लवः करकिसलयो यस्मिंस्तद्यथा तथा । निषद्य-उपविश्य । निमील्य चक्षुरितिशेषः । अतिचित्र-नानाविधम् । अभिहत्य ताडयित्वा ।

* बालक्रीडा *

दिखाता था । ऊपर और नीचे नमित और अनमित होनेसे उस राजकन्याकी मोतीकी माला चञ्चलायमान हो रही थी । उस राजकुमारीके कपोलोंपर जो पत्र रचनाएं (चन्दनादिकी) की थीं । वे गेंद खेलनेके कारण उत्पन्न हुए पसीनेकी बूंदोसे भींगती थी, परन्तु, तुरन्त ही उस राजपुत्रीके कानोंपर सजे हुए नूतन किसलय अपनी हवासे उन्हें सुखा भी देते थे । उस राजपुत्रीका एक हाथ (कर किसलय) उसके कुचोंपरसे खिसकते हुए वस्त्रको (अञ्चलको) सम्भालनेमें व्यस्त दीख रहा था । वह राजकन्या उठकर, खड़े होकर, आखें बन्द करके तथा आखे खोल करके, कभी ठहरकर कभी जाकर अति विचित्र प्रकारकी कन्दुक क्रीड़ा कर रही थी । वह राजकुमारी कभी पृथिवीपर कभी आकाशकी ओर कभी एक प्रकारसे और कभी-कभी अनेकों प्रकारसे एक ही गेंदसे क्रीड़ा कर रही थी । अर्थात् कभी वह एक गेंदको अनेकों गेंदके समान लोगोंको प्रतीति कराती थी कभी एक ही गेंदकी प्रतीति करा रही थी । अपनी प्रिय सखी चन्द्र-

कन्दुकेनादर्शयत्। चन्द्रसेनादिभिश्च प्रियसखीभिः सह विहृत्य विहृतान्ते चाभिवन्द्य देवीं मनसा मे सानुरागेणेव परिजनेनानुगम्यमाना, कुवलयशरमिव कुसुमशरस्य मय्यपाङ्गं समर्पयन्ती, सापदेशमसकृदावर्त्यमानवदनचन्द्रमण्डलतया स्वहृदयमिव मत्समीपे प्रेरितं प्रतिनिवृत्तं न वेत्यालोकयन्ती, सह सखीभिः कुमारीपुरमगमत्।

* बालविबोधिनी *

भूतलाकाशयोः-भूतले दर्शनीयानि आकाशे च दर्शनीयानि। क्रीडान्तराणि-नाना क्रीडाः। दर्शनीयानि-द्रष्टुं योग्यानि-मनोहराणीत्यर्थः। विहृत्य-क्रीडित्वा। विहृतान्ते-क्रीडासमाप्तौ। देवीं-भगवतीम्। मनसेत्यादि-मे मम सानुरागेणानुरक्तेन मनसा हृदयेनेव परिजनेन तत्सखीवर्गेण अनुगम्यमाना; यथा तस्याः परिजनोऽनुगच्छतिस्म तथा मे हृदयमपि तामन्वगच्छदिति भावः। कुसुमशरस्य कामस्य कुवलयशरं कुवलयाख्यं बाणमिव अपाङ्गं कटाक्षमित्यर्थः मयि समर्पयन्ती प्रेरयन्ती। सापदेशं सव्याजम्। असकृद् वारंवारम्। आवर्त्येति-आवर्त्यमानं पुनःपुनः प्रतिनिवर्त्यमानं वदनमेव चन्द्रमण्डलं यस्यास्तस्या भावस्तया। स्वहृदयेत्यादि-मत्समीपे प्रेरितं स्वहृदयं प्रतिनिवृत्तं न वेति पश्यन्तीवेत्युत्प्रेक्षा।

* बालक्रीडा *

सेना तथा अन्योंके साथ इस तरीकेसे अनेकों रीतिसे उस राजकुमारीने कन्दुक क्रीड़ाएं कीं और तदनन्तर देवीजीका स्तवन करके मेरे अनुराग युक्त अन्तःकरणके साथ एवं अपने परिजन वर्गके सहित वहांसे रवाना हुई। जाते हुए उस राजकुमारीने कामदेवके कमलवाणके समान अपने कटाक्षोंका विक्षेप मेरे ऊपर किया। किसी-किसी बहानेसे वह अपने मुख चन्द्रमण्डलको बार-बार पीछे फेरती थी अर्थात् पीछे मुख करके वह देखती जाती थी। उसका देखना मालूम पड़ता था कि उसने (कुमारीने) अपना हृदय मेरे समीप भेज दिया हो। और इसी लिए वह बार-बार मुझे देख भी लेती थी कि, वह (मित्रगुप्त) मुझे देख रहा है या चला गया। ऐसी चेष्टाएं करती हुई वह राजपुत्री सखियोंके साथ अन्तःपुरमें चली गयी।

(१२) अहं चानङ्गविह्वलः स्ववेश्म गत्वा कोशदासेन यत्नवदत्युदारं स्नानभोजनादिकमनुभावितोऽस्मि । सायं चोपसृत्य चन्द्रसेना रहसि मां प्रणिपत्य पत्यु रसमंसेन प्रणयपेशलमाघट्टयन्त्युपाविशत् । आचष्ट च हृष्टः कोशदासः—'भूयासमेव यावदायुरायताक्षि, त्वत्प्रसादस्य पात्रम्' इति । मया तु सस्मितमभिहितम्—'सखे, किमेतदाशास्यम् । अस्ति किंचिदञ्जनम् । अनया तदक्तनेत्रया राजसूनुरुपस्थितो वानरीमिवैनां द्रक्ष्यति, विरक्तश्चैनां पुनस्त्यक्ष्यति' इति । तया तु स्मेरयास्मि कथितः—'सोऽयमार्य-

* बालविबोधिनी *

(१२) अहं मित्रगुप्तः । अनङ्गविह्वलः–मदनाविष्टः । स्ववेश्म–निजगृहम् । यत्नवत् सयत्नम् अत्युदारम्–अत्युत्कृष्टम् । अनुभावितः–अनुभवविषयीकृतः । उपसृत्य–आगत्य । पत्युः कोशदासस्य । अंसं–स्कन्धदेशम् । अंसेन स्वस्कन्धेन । प्रणयपेशलं–प्रेममधुरं यथा तथा । आघट्टयन्ती स्पृशन्ती । भूयासं भविष्यामि । एव–एवं रूपेण । यावदायुः–यावत्कालं जीविष्यामीत्यर्थः । आयते दीर्घे अक्षिणी नेत्रे यस्याः तत्सम्बुद्धौ । त्वत्प्रसादस्य तवानुग्रहस्य । पात्रं–भाजनम् । मया–मित्रगुप्तेन । आशास्यम्–आशंकनीयम् । अत्राशंकायाः सम्भव एव नास्तीत्यर्थः । अञ्जनं कज्जलम् । तदक्तनेत्रया–तेनाञ्जनेन अक्ते रञ्जिते नेत्रे यस्याः तया । अनया चन्द्रसेनया हेतुभूतयेत्यर्थः । वानरीमिव–वानराकृतिम् । एनां चन्द्रसेनाम् । तया चन्द्रसेनया । स्मेरया–स्मितं कुर्वत्या । आर्येण पूज्येन भवता ।

* बालक्रीडा *

(१२) कामदेव पीड़ित मैं भी अपने स्थानपर जाकर उदार चित्तवाले कोशदासद्वारा यत्नपूर्वक स्नान, भोजन आदि प्राप्त करके आराम करने लगा। सायंकालमें चन्द्रसेना आयी और मुझे प्रणाम करके एकान्तमें अपने पतिके कंधेसे कंधा मिलाकर प्रेमपूर्वक बैठ गयी। प्रसन्नतासे कोशदासने कहा—"हे विशालाक्षि ! यावज्जीवन पर्यन्त मुझे आप इसी तरह प्रेमपात्र बनाये रखियेगा। मैंने हंसकर कहा—"हे मित्र ! ऐसी आशंका ही क्यों करनी चाहिये। एक तरहका अंजन (मेरे पास) है। उस अंजनसे परि रंजित होनेपर यह चन्द्रसेना राजपुत्रको बन्दरियाकी तरह दिखायी पड़ेगी। और उस कारणसे राजकुमार

णाज्ञाकरो जनोऽत्यर्थमनुगृहीतः, यदस्मिन्नेव जन्मनि मानुषं वपुरपनीय वानरीकरिष्यते । तदास्तामिदम् । अन्यथापि सिद्धं नः समीहितम् ।

(१३) अद्य खलु कन्दुकोत्सवे भवन्तमपहसितमनोभवाकारमभिलषन्ती रोषादिव शम्बरद्विषातिमात्रमायास्यते राजपुत्री । सोऽयमर्थो विदितभावया मया स्वमात्रे तया च तन्मात्रे, महिष्या च मनुजेन्द्राय, निवेदयिष्यते । विदितार्थस्तु पार्थिवस्त्वया दुहितुः पाणिं ग्राहयिष्यति ।

* बालविबोधिनी *

आज्ञाकरः सेवकः । सोऽयं जनः-अहमित्यर्थः । अत्यर्थमत्यन्तम् । मनुष्यस्येदमिति मानुषम् । वपुः शरीरम् । अपनीय-दूरीकृत्य । आस्तां तिष्ठतु अलमनेनेत्यर्थः । अन्यथा मनुष्यस्य वानरीकरणं विनाऽन्येनाप्युपायेन । सिद्धं सम्पन्नम् । नोऽस्माकम् । समीहितमभीष्टम् ।

(१३) भवन्तमित्यादि-अपहसितस्तिरस्कृतो मनोभवस्य कन्दर्पस्याकारोयेन तादृशं भवन्तं मित्रगुप्तमित्यर्थः अभिलषन्ती आकांक्षन्ती राजपुत्री रोषात्क्रोधादिव शम्बरद्विषा कामेनातिमात्रमत्यर्थम् आयास्यते पीड्यते । अयमर्थः विषयः । विदितभावया-ज्ञाताशयया । स्वमात्रे-निजजनन्यै-चन्द्रसेनाया मात्रे इत्यर्थः । तया चन्द्रसेनाजनन्या । तन्मात्रे तस्याः कन्दुकावत्या जनन्यै । महिष्या-राज्ञ्या । मनुजेन्द्राय राज्ञे । निवेदयिष्यते-कथयिष्यते । विदितार्थः-ज्ञातवृत्तान्तः । त्वया मित्रगुप्तेन । दुहितुः स्वकन्यायाः कन्दुकावत्याः । पाणिं ग्राहयिष्यति-विवाहं

* वाक्क्रीडा *

विरक्त होकर इसे नहीं देखेगा । उसने हंसकर मुझसे कहा—"हे आर्य ! यह जन (चन्द्रसेना) आपकी आज्ञाकारिणी आपसे अत्यन्त अनुग्रहीत है । क्योंकि आप इसी जन्ममें इसे मानुषी देहसे वन्दरियाके रूपमें परिणत करने वाले हैं अस्तु, यह कृपा रहने दीजिये । अन्य उपायोंद्वारा भी यह कार्य सम्पन्न हो जायगा ।

(१३) आज कन्दुकक्रीडामें कामदेवको तिरस्कृत करनेवाले आपको राजकुमारी अभिलाष कर रही थी, इसी कारण कामदेव क्रोधसे राजकन्याको पीड़ित कर रहा है । राजकुमारी के आरामको जाननेवाली मैं इन बातोंको अपनी मातासे कहूंगी, मेरी माता राजकुमारीकी मातासे कहेंगी और वे राजमाता अपने पतिसे निवेदित करेंगी । इन बातोंको ज्ञात करके राजा अपनी पुत्रीका

ततश्च त्वदनुजीविना राजपुत्रेण भवितव्यम् । एष हि देवतासमादिष्टो विधिः । त्वदायत्ते च राज्ये नालमेव त्वामतिक्रम्य मामवरोद्धुं भीमधन्वा । तत्सह्यतामयं त्रिचतुराणि दिनानि' इति मामामन्त्र्य प्रियं चोपगूह्य प्रत्ययासीत् ।

(१४) मम च कोशदासस्य च तदुक्तानुसारेण बहुविकल्पयतोः कथंचिदक्षीयत क्षपा । क्षपान्ते च कृतयथोचितनियमस्तमेव प्रिया-

* बालविबोधिनी *

कारयिष्यतीत्यर्थः । ततः विवाहानन्तरम् । त्वदनुजीविना त्वदायत्तेन । देवतासमादिष्टः-दैवनिदिष्टः । विधिर्विधानम् त्वदायत्ते-भवदधीनीकृते । अलं समर्थः । त्वा भवन्त मित्रगुममित्यर्थः । अतिक्रम्योल्लंघ्य । मा चन्द्रसेनामित्यर्थः । अवरोद्धुं बलान्निरोद्धुम् । तत् तस्मात् । सह्यता अपेक्षताम् । अयं-कोशदासः । मा मित्रगुमम् । आमन्त्र्य आभाष्य । प्रियं-दयितं कोशदासमिति यावत् । उपगूह्य आलिंग्य । प्रत्ययासीत् प्रतिगता ।

(१४) तदुक्तानुसारेण-चन्द्रसेनावचनानुसारेण । बहु अनेकप्रकारम् । विकल्पयतोः-जल्पतोः । विशेषणमिदं मम च कोशदासस्य चेत्यनेन चकाराक्षिप्तस्य द्विवचनस्य । कथंचित्केनापि प्रकारेण-अतिकष्टेनेति भावः । अक्षीयत-प्रभाताऽभवत् । क्षपा रात्रिः । क्षपान्ते निशावसाने । कृतेति-कृताः सम्पादिता

* बालक्रीडा *

विवाहसे आपसे कर देंगे । तत्पश्चात् वह राजपुत्र आपके ही अधीन हो जायगा । क्योंकि देवताने यही विधानकी आज्ञा दी है । जब यह राज्य आपके अधिकारमें हो जायगा, तब यह राजपुत्र भीमधन्वा आपकी आज्ञाका उल्लंघन करके मुझे रोक नहीं सकता—विवाह करनेसे । अत एव तीन-चार दिनोंके कष्टोंको और झेलना चाहिये । ऐसे वाक्य मुझसे कहकर तथा अपने प्रियका आलिंगन करके वह चन्द्रसेना चली गयी ।

(१४) हम लोगोंने, उसी चन्द्रसेनाके कथनानुसार वाक्योंपर विचार विनिमय करते हुए, रात व्यतीत की । प्रभात होनेपर मैं यथाविधि नित्यकृत्य करके उसी बगीचेमें जा पहुंचा जहांपर राजपुत्रीके दर्शन हुए थे । उसी बगीचे-

दर्शनसुभगमुद्यानोद्देशमुपागतोऽस्मि । तत्रैव चोपसृत्य राजपुत्रो निरभिमानमनुकूलाभिः कथाभिर्मामनुवर्तमानोमुहूर्तमास्त । नीत्वा चोपकार्यामात्मसमेन स्नानभोजनशयनादिव्यतिकरेणोपाचरत् । तल्पगतं च स्वप्नेनानुभूयमानप्रियादर्शनालिङ्गनसुखमायसेन निगडेनातिबलवद्बहुपुरुषैः पीवरभुजदण्डोपरुद्धमबन्धयन्माम् ।

* बालविबोधिनी *

यथोचिता विहिता नियमाः प्रातःकृत्यादि क्रिया येन सः । तं पूर्वदृष्टम् । प्रियेति–प्रियायाः कन्दुकावत्या दर्शनेनावलोकनेन सुभगं मनोरमम् । उद्यानोद्देशं उपवनप्रदेशम् । उपागतः प्राप्तः । तत्रैव उपवने । राजपुत्रः भीमधन्वा । निरभिमानमहङ्कारशून्यं यथा तथा । अनुकूलाभिः मदभिलषिताभिः । कथाभिर्वार्तालापैः । अनुवर्तमानः–मामुपचरन् । आस्त अतिष्ठत् । नीत्वा प्रापय्य मामिति शेषः । उपकार्यां राजसदनम् । आत्मसमेन स्वानुरूपेण । स्नानेति–स्नानभोजनशयनादीनां व्यतिकरः प्रबन्धस्तेन । उपाचरत्–मामसेवत । तल्पगतं शय्यास्थं शयितमिति यावत् । स्वप्नेन स्वप्नावस्थया । अनुभूयमानमनुभवविषयीकृतं प्रियायाः कन्दुकावत्या दर्शनालिङ्गनयोः सुखं येन तथाभूतम् । मामित्यस्य विशेषणद्वयम् । आयसेन लोहमयेन । निगडेन शृङ्खलेन । अतिबलवद्भिर्महाशक्तिशालिभिर्बहुभिरनेकैः पुरुषैः करणभूतैः । पीवरेति–पीवराभ्यां मांसलाभ्यां भुजदण्डाभ्यामुपरुद्धं निरुद्धं यथा तथा । अबन्धयत् बन्धनं प्रापितवान् ।

* बालक्रीडा *

में राजपुत्र भीमधन्वा भी आ गया और मेरे अनुकूल कथाएं सुनाता हुआ मेरे पास निरभिमान होकर कुछ समयतक बैठा रहा । फिर मुझे राजसदनमें ले जाकर अपने सदृश स्नान, भोजन और शयन आदिसे मेरा राजकुमारोचित स्वागत किया । शय्यापर सो जानेपर मैंने स्वप्नमें देखा कि, मैंने राजकन्याके साथ रमणकर उसके आलिंगन सुखको प्राप्त किया । तथा लोहेकी हथकड़ियोंमें मैं बहुत बलवान् राजपुरुषों द्वारा, जिनकी भुजाएं बड़ी मोटी हैं, बन्दी बना दिया गया हूं ।

(१५) प्रतिबुद्धं च सहसा मामभ्यधात्—'अयि दुर्मते, श्रुतमालपितं हतायाश्चन्द्रसेनाया जालरन्ध्रनि सृतं तच्चेष्टावबोधप्रयुक्तयानया कुब्जया, त्वं किलाभिलषितो वराक्या कन्दुकावत्या तव किलानुजीविना मया स्थेयम्, त्वद्वचः किलानतिक्रमता मया चन्द्रसेना कोशदासाय दास्यते' इत्युक्त्वा पार्श्वचरं पुरुषमेकमालोक्याकथयत्—,प्रक्षिपैनं सागरे' इति । स तु लब्धराज्य इवातिहृष्टः 'देव, यदाज्ञापयसि' इति यथादिष्टमकरोत् ।

(१६) अहं तु निरालम्बनो भुजाभ्यामितस्ततः स्पन्दमानः किमपि

* बालविबोधिनी *

(१५) प्रतिबुद्ध जागरित मामिति शेषः । दुर्मते दुष्टबुद्धे । सम्बोधनपदमेतत् । आलपित भाषितम् । हताया मन्दभागिन्याः । जालरन्ध्रनि सृतं गवाक्षच्छिद्रनिर्गतम् आलपितमित्यस्य विशेषणम् । कथमिति ? तच्चेष्टेति । तस्याश्चन्द्रसेनायाश्चेष्टावबोधाय ईङ्गितज्ञानाय प्रयुक्तया नियुक्तया । कुब्जया–हीनाङ्गया कयाचित् स्त्रिया । किं श्रुतमिति चेत्–त्वं किलेत्यादि । वराक्या हतभाग्यया । अनुजीविना–त्वदायत्तजीवितेन । मया भीमधन्वना । स्थेयं स्थातव्यम् । त्वद्वचः तव मित्रगुप्तस्य वाक्यम् । अनतिक्रमता–अलङ्घयता । मया भीमधन्वनेत्यर्थः । अत्र किल शब्दा असम्भाव्यार्थबोधकाः । पार्श्वचरं–समीपवर्त्तिनम् । एनं मित्रगुप्तम् । सः पुरुषः । यथादिष्टमादेशानुरूपं सागरप्रक्षेपम् ।

(१६) अहं मित्रगुप्तः । निरालम्बनः निराश्रयः । स्पन्दमानः-सञ्चलन् ।

* बालक्रीडा *

(१५) जागनेपर मैं सम्बोधित किया गया । "हे दुर्बुद्धे ! मन्दभाग्या चन्द्रसेनाकी बातोंको मैंने एक कुब्जाद्वारा सुना, जिसने खिड़कीके छेदोंसे चन्द्रसेनाकी बातें श्रवण की थीं कि, हतभागिनी कन्दुकावती मेरी भगिनी तुम्हें चाहती है । अतः मैं तेरे अधीन होकर रहूंगा । और तेरे कथनानुसार मैं चन्द्रसेनाको कोशदाससे उद्वाहित कर दूंगा ।" ऐसा कह करके उसने अपने समीपके एक नौकरको देखकर कहा—"इस मित्रगुप्तको समुद्रमें फेंक दो ।" उस राजभक्त नौकरने (सेवकने) राज्यप्राप्तिके सदृश प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा–"जैसी प्रभुकी (आपकी) आज्ञा ।" और मुझे यथादेश समुद्रमें फेंक दिया ।

(१६) निराश्रित होकर मैं बंधी हुई भुजाओंको सञ्चालित करता हुआ

काष्ठं दैवदत्तमुरसोपश्लिष्य तावदप्लोषि, यावदपासरद्वासरः शर्वरी च सर्वा । प्रत्युषस्यदृश्यत किमपि वहित्रम् । अमुत्रासन्यवनाः ते मामुद्धृत्य रामेषु नाम्ने नाविकनायकाय कथितवन्तः—'कोऽप्ययमायसनिगडबद्ध एव जले लब्धः पुरुषः । सोऽयमपि सिञ्चेत्सहस्रं द्राक्षाणां क्षणेनैकेन' इति । अस्मिन्नेव क्षणे नैकनौकापरिवृतः कोऽपि मद्गुरभ्यधावत् । अबिभयुर्य-

* बालविबोधिनी *

उरसा वक्षसा । उपश्लिष्य आलिङ्ग्य । तावत्–तावत्कालपर्यन्तम् । अप्लोषि–प्लवमानोऽभवम् । 'प्लुङ्' प्लवने इत्यस्य धातोर्लुङि उत्तमपुरुषैकवचने रूपम् । यावत्–यावताकालेन । अपासरत्–अत्यक्रामत् । सर्वा शर्वरी निखिला रात्रिश्चापासरदिति शेषः । प्रत्युषसि प्रभाते । अदृश्यत–दृष्टमभवत् । वहित्रं जलयानम् । अमुत्र–अस्मिन् वहित्रे । आसन्–अतिष्ठन् । यवना म्लेच्छाः । ते यवनाः । उद्धृत्य जलादुत्थाप्य । नाविकनायकाय–नाविकाधिपतये । आयसनिगडबद्धः लौहश्रृङ्खलनियमितः । सोऽयं–पुरुषः । द्राक्षाणां मृद्वीकालतानां सहस्रं एकेन क्षणेन सिञ्चेत् आर्द्रीकुर्यात् । अयं यावान् बलिष्ठो दृश्यते तथा तर्कयामः क्षणमात्रेणायं द्राक्षाणां सहस्रं सेक्तुं समर्थ इति भावः । अथवा–अस्य विनिमयेनास्माभिर्द्राक्षाणां सहस्रं लप्स्येतेति भावः । नैकनौकापरिवृत्तः–अनेकक्षुद्रतरणीवेष्टितः । मद्गुः युद्धपोतः । अबिभयुः भयं प्रापुः । जिभीभयेइत्यस्य भीधातोर्लङि

* बालक्रीडा *

समुद्रमें इधर-उधर डूबता हुआ वह रहा था कि, दैववशात् मुझे एक काठ मिल गया । उस काठको वक्षःस्थलसे लगाकर मैं एक दिन और एक रात तैरता ही रह गया । दूसरे दिन उषाकालमें मुझे एक नाव (नौका) दिखायी दी । उस नावके ऊपर यवन लोग बैठे हुए थे । उन यवनोंने मुझे जलसे बाहर निकालकर राम नामके नाविकोंके अधिपतिसे कहा—"लोहेकी सिकड़ियोंसे परिबद्ध यह मनुष्य जलमें वह रहा था, इसको हम लोगोंने निकाला है । इसे इतनी शक्ति है कि यह एक ही क्षणमें हजार द्राक्षाके वृक्षोंको सींच सकता है । उसी समय अनेकों नावोंके साथ एक युद्धक नौका, जिसका नाम "मद्गु" था, अनेकों योधाओंके सहित वहांपर आ गयी । उन योधाओंको देखकर वे सब यवन भयान्वित हो गये । और उन वीर पुरुषोंसे युक्त नावोंने मेरी नावको

वनाः। तावदतिजवा नौकाः श्वान इव वराहमस्मत्पोतं पर्यरुत्सत । प्रावर्तत सम्प्रहारः। पराजयिषत यवनाः। तानहमगतीनवसीदतः समाश्वास्यालपिषम्—'अपनयत मे निगडबन्धनम् । अयमहमवसादयामि वः सपत्नान्' इति ।

(१७) अमी तथाकुर्वन् सर्वांश्च तान्प्रतिभटान्भल्लवर्षिणा भीमटङ्कृ-

* बालविबोधिनी *

रूपम् । अतिजवाः वेगवत्यः । श्वानः कुक्कुराः । वराह शूकरम् । कुक्कुरा यथा वराहं रुन्धन्ति तद्वदित्यर्थः । अस्माकं पोतं वहित्रम् । पर्यरुत्सत समन्तात् रुरुधुः । परिपूर्वकाद् रुध्धातोर्लुङ् प्रावर्तत प्रारभत । सम्प्रहारो युद्धम् । पराजयिषत—पराजिता अभूवन् । तान् यवनान् पराजीयमानानिति शेषः । अहं मित्रगुप्त इत्यर्थः । अगतीन् अशरणान् । अत एव अवसीदतः—नैराश्यं गतान् । आलपिषम् अवोचम् । अपनयत-अपसारयत दूरीकुरुतेति यावत् । अवसादयामि—नाशयामि । सपत्नान् शत्रून् ।

(१७) अमी यवनाः । तथा अकुर्वन्—मदुक्तमाचरितवन्तः मम बन्धनमपानयन्नित्यर्थः । तान् पूर्वोक्तान् । प्रतिभटान् प्रतियोद्धॄन् शत्रूनिति यावत् । भल्लवर्षिणा—बाणवृष्टिं कुर्वता । भीमटङ्कृतेन—भीमं भयङ्करं टङ्कृतं टङ्कारध्वनिर्यस्य तेन । विशेषणद्वयं शार्ङ्गेणेत्यस्य । शार्ङ्गेण धनुषा । लवलवीकृताङ्गान्—खण्डखण्डीकृतदेहान् । अकार्षं कृतवानहमिति शेषः । अवप्लुत्य निपत्य । हते-

* बालक्रीडा *

ऐसे चारों ओरसे घेर लिया जैसे शिकारी कुत्ते सूअरको घेर लिया करते हैं। संग्राम भी होने लगा। यवन लोग पराजित हो गये। नैराश्यको प्राप्त होनेवाले तथा शरणहीन उन यवनोंको मैंने आश्वासन देकर कहा—"मेरी लोहेकी सिकड़ी काट दो। मैं आपके शत्रुओंका विनाश कर दूंगा।"

(१७) उन यवनोंने मुझे बन्धन रहित कर दिया। बन्धनहीन होकर मैंने उन शत्रुओंके योधाओंपर घोर एवं भयंकर धनुष टंकारोंसे बाण वर्षा की और बाणोंद्वारा उनकी देह खण्ड-खण्ड कर डाली। जब शत्रुपक्षी योधागण आहत हो गये और उनकी नाव मेरी नावके (पास आकर युद्ध करने लगी) समीप

तेन शार्ङ्गेण लवलवीकृताङ्गानकार्षम् । अवप्लुत्य हतविध्वस्तयोधमस्म-त्पोतसंसक्तपोतममुत्र नाविकनायकमनभिसरमभिपत्य जीवग्राहमग्रहीष-म् । असौ चासीत्स एव भीमधन्वा । तं चाहमवबुध्य जातव्रीडमब्रवम्-'तात, किं दृष्टानि कृतान्तविलसितानि' इति ।

(१८) ते तु सांयात्रिका मदीयेनैव शृङ्खलेन तमतिगाढं बद्ध्वा हर्षकिलकिलारवमकुर्वन्मां चापूजयन् । दुर्वारा तु सा नौरननुकूलवात-

* बालविबोधिनी *

ति-हता मारिता विध्वस्ताः पातिता योधा भटा यस्मिंस्तत् । अस्मदिति-अस्माकं पोते वहित्रे संसक्तं लग्नं पोतं शत्रुपक्षीयं वहित्रम् । अवप्लुत्येत्यस्य कर्म । अमुत्र पोते । अनभिसर मसहायम् । अभिपत्य आक्रम्य । जीवग्राहं जीवन्तमेव गृहीत्वे-ति णमुल् । असौ नाविकनायकः । स एव पूर्वोक्त एव । अवबुध्य ज्ञात्वा । जात-व्रीडं लज्जितम् । तातेति सोपहाससम्बोधनम् । कृतान्तविलसितानि-दैवचेष्टि-तानि । कृतान्तो यमसिद्धान्त दैवाकुशलकर्मस्वित्यमरोक्तेः ।

(१८) सांयात्रिकाः पोतवणिजो यवनाः मदीयेनैव-येन शृङ्खलेन मामबध्नं-स्तेनैवेत्यर्थः । तं भीमधन्वानम् । हर्षकिलकिलारवं-हर्षजनिताव्यक्तध्वनिम् । दुर्वारा-अप्रतिरोध्या । नौः तरिः । अननुकूलेति-अननुकूलेन प्रतिकूलेन वातेन वायुना नुन्ना प्रेरिता । अभिपत्य उपेत्य । द्वीपं समन्ततो जलवेष्टितं भूमिभागम् । आश्लिष्टवती प्राप्तवती । तत्र द्वीपे । स्वादु मधुरम् । पानीयं जलम् । एधांसि काष्ठानि । सञ्जि-

* बालक्रीडा *

आ गयी । तब मैं अपनी नावसे उनकी नावपर कूद पड़ा तथा उनकी नावपर से नाविकोंके अधिपतिको असहाय करके जीवित पकड़कर ले आया । यह पकड़ा हुआ शत्रुनायक वही भीमधन्वा था । जिसने मुझे देखकर लज्जितान्वित होकर कहा—"हे तात ! आपने दैवी विचित्रा गतिको देखा ।"

(१८) नावपरके यवन व्यापारियोंने, मेरे ही बन्धनसे मुक्त लौह शृंखलासे उस भीमधन्वाको बन्दी बना लिया और हर्षसे उल्लास ध्वनि करते हुए, मेरी पूजा की । प्रतिकूल वायु चलनेसे वह मेरी नाव अप्रतिरोधित होकर बहती हुई एक द्वीपके किनारेपर लगी । उस द्वीपसे स्वादिष्ट जल और काठ तथा कन्दमूल

नुन्ना दूरमभिपत्य कमपि द्वीपं निबिडमाश्लिष्टवती। तत्र च स्वादु पानीयमेधांसि कन्दमूलफलानि सजिघृक्षवो गाढपातितशिलावलयमवातराम। तत्र चासीन्महाशैलः। सोऽहम् 'अहो रमणीयोऽयं पर्वतनितम्बभागः, कान्ततरेयं गन्धपाषाणवत्युपत्यका, शिशिरमिदमिन्दीवरारविन्दमकरन्दबिन्दुचन्द्रकोत्तरं गोत्रवारि, रम्योऽयमनेकवर्णकुसुममञ्जरीभरस्तरुवनाभोगः' इत्यतृप्ततरया दृशा बहुबहु पश्यन्नलक्षिताध्यारूढक्षोणीधरशि-

* बालविबोधिनी *

घृक्षवः संग्रहीतुकामाः'। गाढेति-गाढमतिदृढं पातितानि जले निःक्षिप्तानि शिलावलयानि वलयाकारपाषाणानि 'लङ्गर' इति भाषा प्रसिद्धानि यस्मिंस्तद् यथा तथेति क्रियाविशेषणम्। अवातराम-अवतीर्णाः द्वीपे इति शेषः। तत्र द्वीपे। महाशैलः विशालः पर्वतः। पर्वतनितम्बभागः शैलमध्यप्रदेशः कटक इति यावत्। कान्ततरा अतिमनोरमा। गन्धपाषाणवती मनःशिलादिधातुमयी। उपत्यका पर्वतासन्नभूमिः। उपत्यकाद्रेरासन्नाभूमिरूर्ध्वमधित्यकेति कोषः। शिशिरं शीतलम्। इन्दीवरेति-इन्दीवराणां नीलकमलानामरविन्दानां कमलानाञ्च मकरन्दबिन्दुभिर्मधुकणैश्चन्द्रकोत्तरं मेचकप्रचुरम्। जले तैलादिस्तनेन मयूरबर्हवन्नानावर्णं तज्जलं भवतीति प्रसिद्धम्। गोत्रवारि पर्वतनिर्झरसलिलम्। अनेकवर्णेति-अनेकवर्णानां नानाविधानां कुसुममञ्जरीणां पुष्पवल्लरीणां भरोऽतिशयो यत्र सः। तरुवनाभोगः वृक्षप्रधानारण्यविस्तारः। अतृप्ततरया सतृष्णया। दृशा चक्षुषा। बहुबहु असकृत्-

* बालक्रीडा *

फलोंको एकत्रकर नावपर धरनेकी इच्छासे नाविकों (मल्लाहोंने) एक बड़ा भारी लंगर डालकर नाव रोक दी। और उस द्वीपमें उतर पड़े। उस द्वीपमें एक विशाल पर्वत था। मैंने कहा—"इस पर्वतका मध्य प्रदेश अति रमणीय है। इस पर्वतकी उपत्यका गन्ध पाषाणवती है तथा अति मनोरम है। इस पर्वतका जल शीतल है तथा कमलों एवं नीलकमलोंसे परिपूर्ण होते हुए नानावर्णवाला स्वच्छ है। अर्थात्-इसके झरनोंका जल अत्यन्त विशद है। इस शैलमें, अनेकों वर्णोंके पुष्पोंकी मञ्जरियोंसे परिपूर्ण तथा मनोहर वृक्षावलीसे युक्त, वनस्थल है। ऐसी पर्वतीय शोभाको देखती हुई मेरी आँखें तृप्ति नहीं पा रही थीं। अतः मैं पुनः-पुनः उसी शोभाको देखता हुआ अज्ञात पर्वतके

खर: शोणीभूतमुत्प्रभाभिः पद्मरागसोपानशिलाभिः किमपि नालीकपराग-धूसरं सरः समभ्यगाम् ।

(१९) स्नातश्च कांश्चिदमृतस्वादून्बिसभङ्गानास्वाद्य, अंसलग्नकह्लारस्तीरवर्तिना केनापि भीमरूपेण ब्रह्मराक्षसेनाभिपत्य 'कोऽसि, कुतस्त्योऽसि' इति निर्भर्त्सयताभ्यधीये। निर्भयेन च मया सोऽभ्यधीयत–'सौम्य, सोऽहमस्मि द्विजन्मा। शत्रुहस्तादर्णवम्, अर्णवाद्यवननावम्, यवनना-

* बालविबोधिनी *

वारंवारमितियावत् । अलक्षितेति–अलक्षितमविदितं यथा तथा अध्यारूढं क्षोणीधरस्य पर्वतस्य शिखरं येन सः । शोणीभूतं रक्तीकृतम् । उत्प्रभाभिः उद्गतकान्तिभिः । पद्मरागसोपानशिलाभिः मरकतमयसोपानपंक्तिभिः । शोणीभूतमित्यनेनान्वयः । किमपि–अनिर्वाच्यम् । नालीकेति–नालीकानां पद्मानां परागैः किञ्जल्कैर्धूसरं धूम्रवर्णं सरः सरोवरम् । समभ्यगाम् प्राप्तवान् ।

(१९) स्नातः तत्र कृतस्नानः । अहमिति शेषः । अमृतस्वादून् सुधामधुरान् । बिसभङ्गान्–मृणालखण्डान् । आस्वाद्य उपभुज्य । अंसेति–अंसयोः स्कन्धयोर्लग्नं सक्तं कह्लारं जलजविशेषो यस्य सः । तादृशोऽहं तीरवर्त्तिना सरस्तीरस्थितेन । भीमरूपेण–भीषणमूर्त्तिना ब्रह्मराक्षसेन देवयोनिविशेषेण । अभिपत्य आगत्य । कुतस्त्यः कुत आगतः । निर्भर्त्सयता–तर्जयता । अभ्यधीये उक्तोऽस्मि । स ब्रह्मराक्षसः । अभ्यधीयत उक्तः । द्विजन्मा–ब्राह्मणः । शत्रुहस्तात् वैरिकरात् । अर्णवं समुद्रं गत इति प्रत्येकं सम्बध्यते । यवननावं यवनपोतम् । यवननावः

* बालक्रीडा *

शिखर भागपर चढ़ गया । वहांपर, पद्मरागमणिकी शिलाओंकी उत्कृष्ट प्रभासे रक्तीभूत तथा कमलोंके किञ्जल्कोंसे धूसरीभूत एक तालाबपर मैं पहुंचा ।

(१९) उस तालाबमें स्नान करके मैंने सुधाके समान मधुर मृणालखण्डोंका आस्वादन किया । कन्धेपर जलजविशेषको धारनेवाले, मुझसे उस तालाबके तीरवर्त्ती किसी भयंकररूपधारी ब्रह्मराक्षसने आकर कहा—"तुम कौन हो, कहांसे आये हो ? इस प्रकारसे उसने मुझे भयान्वित करते हुए पूछा—"मैंने निःशंक होकर उत्तर दिया—"हे भद्र ! मैं ब्राह्मण हूं। वैरीके हाथसे समुद्रमें फेंका गया। समुद्रसे यवनोंकी नावमें लाया गया । यवन नावसे इस श्रेष्ठ पर्वतपर आया हूं ।

यश्चित्रग्रावाणमेनं पर्वतप्रवरं गतः, यदृच्छयास्मिन्सरसि विश्रान्तः, भद्रं तव' इति। सोऽब्रूत—'न चेद्ब्रवीषि प्रश्नान्, अश्नामि त्वाम्' इति। मयोक्तम्—'पृच्छ तावत्। भवतु' इति।

(२०) अथावयोरेकयार्ययासीत्संलापः—

'किं क्रूरं स्त्रीहृदयं किं गृहिणः प्रियहिताय दारगुणाः।
कः कामः संकल्पः किं दुष्करसाधनं प्रज्ञा॥

* बालविबोधिनी *

यवनपोतात्। चित्रग्रावाणं-चित्रा मनोहरा ग्रावाणः प्रस्तरा यत्र तादृशम्। पर्वतप्रवरं शैलश्रेष्ठम्। यदृच्छया स्वेच्छया। भद्रं कुशलमस्तु इति शेषः। ब्रवीषि उत्तरयसि। अश्नामि भक्षयामि।

(२०) अथ तदनन्तरम्। आवयोः ब्रह्मराक्षसस्य मम च। आर्यया आर्यानामकच्छन्दसा। संलापः परस्परमाभाषणम्। किं क्रूरमित्यादि-संसारे क्रूरं निष्ठुरं किमिति प्रश्नः। स्त्रीहृदयं कामिनीनां चित्तमेव निष्ठुरमित्युत्तरम्। गृहिणो गृहस्थस्य प्रियं च हितञ्च तस्मै प्रियहिताय गृहस्थानां प्रीतिकरं हितकरञ्च किमिति प्रश्नः। दारगुणाः भार्यागुणाः—गुणवद्भार्यालाभेन गृहस्थानां प्रीतिर्हितञ्च भवतीत्यर्थं इत्युत्तरम्। कामः इष्टसाधनं क इति प्रश्नः। संकल्पो निश्चय इत्युत्तरम्। दुष्करसाधनं दुष्करस्य दुःसाध्यस्य विषयस्य साधनं साधकं किमिति पुनः प्रश्नः।

* बालक्रीडा *

जिसके पत्थर बड़े मनोहर हैं। स्वेच्छासे मैंने इस तालाबपर विश्रान्ति ली। कहिये, आप तो कुशलसे हैं ?" उस राक्षसने कहा—"यदि इन प्रश्नोंके उत्तर न दोगे तो, मैं तुम्हें खा जाऊँगा।" मैंने कहा—"कृपया, पूछिये, जो होगा देखा जायगा।"

(२०) तदनन्तर हम दोनोंका सम्भाषण एक आर्यावृत्तमें प्रारम्भ हुआ। उस राक्षसने पूछा—"संसारमें निष्ठुर कौन है ? मैंने उत्तरमें कहा—"स्त्रीका हृदय।" "गृहस्थोंको हितकर क्या है ?" "गुणवती स्त्री।" "इष्टसाधन क्या है ?" "सकल्प।" "दुःसाध्यसाधनको कौन करता है ?" "बुद्धि।" इन उपर्युक्त

तत्र धूमिनीगोमिनीनिम्बवतीनितम्बवत्यः प्रमाणम्' इत्युपदिष्टो मया सोऽब्रूत—'कथय, कीदृश्यस्ताः' इति ।

(२१) अत्रोदाहरणम्—'अस्ति त्रिगर्तो नाम जनपदः । तत्रासन्गृहिणस्त्रयः स्फीतसारधनाः सोदर्या धनकधान्यकधन्यकाख्याः । तेषु जीवत्सु न ववर्ष वर्षाणि द्वादश दशशताक्षः, क्षीणसारं शस्यम्, ओषध्यो वन्ध्याः,

* बालविबोधिनी *

प्रज्ञा बुद्धिरित्युत्तरम् । तत्र तस्मिन् विषये । धूमिनीति–तदाख्याः स्त्रियः । प्रमाणं प्रमाणभूताः । चतुर्णां प्रश्नानां यानि उत्तराणि मया दत्तानि तत्रैता धूमिनी प्रभृतयः प्रमाणमिति भावः । उपदिष्टः कथितः । स ब्रह्मराक्षसः । कीदृश्यः किम्भूताः । ताः धूमिन्यादयः ।

(२१) अत्र विषये । तत्र त्रिगर्त्ते । गृहिणो गृहस्थाः । आसन्–वसन्ति स्म । स्फीतसारधनाः–स्फीतं प्रचुरं सारं उत्कृष्टं काञ्चन रत्नादि धनं येषां ते । सोदर्याः सहोदराः । धनकेति–धनकः धान्यकः धन्यकश्चेति तेषां नामानि । तेषु धनकादिषु । जीवत्सु तेषां जीवनकाल इत्यर्थः । द्वादशवर्षाणि द्वादशवर्षाणि यावत् । अत्यन्तसंयोगे द्वितीया । दशशताक्षः सहस्रनेत्र इन्द्र इति यावत् । न ववर्ष–अनावृष्टिरासीत् । क्षीणसारं–क्षीणो नष्टः सारः स्थिरांशो यस्य तत् । ओषध्यो व्रीह्यादयः । वन्ध्याः निष्फलाः । न फलवन्तः फलरहिताः । वनस्पतयो वृक्षाः ।

* बालक्रीडा *

उदाहरणोंके प्रमाण 'धूमिनी' गोमिनी, निम्बवती नितम्बवती नामक स्त्रियां हैं ।" मेरे ऐसे उत्तरपर वह राक्षस फिर बोला—"कहो वे सब कैसे हुई ?"

(२१) मैंने कहा—"इनके उदाहरण सुनाता हूं ।"—"एक त्रिगर्त नामका नगर है । उस नगरमें प्रचुर धनशाली तीन सगे भाई रहते थे । जिनके नाम धनक, धान्यक और धन्यक थे । उनके जीवनकालमें ही इन्द्रने बारह वर्षोंतक निरन्तर (लगातार) वृष्टि न की । धानकी खेती क्षीण (नष्ट) हो गयी । व्रीह्यादि ओषधियां निष्फल (वन्ध्या) हो गयीं । वृक्षोंमें फल–फूल न रह गये । मेघ जलहीन हो गये । नदियोंका प्रवाह अत्यन्त अल्प हो गया । तालाब आदिमें केवल पंकमात्र (कीचड़) अवशिष्ट रह गया । झरनोंका बहना बन्द

न फलवन्तो वनस्पतयः, क्लीबा मेघाः, क्षीणस्रोतसः स्रवन्त्यः, पङ्कशेषाणि पल्वलानि, निर्निस्यन्दान्युत्समण्डलानि, विरलीभूतं कन्दमूलफलम्, अवहीना कथाः, गलिता कल्याणोत्सवक्रियाः, बहुलीभूतानि तस्करकुलानि, अन्योन्यमभक्षयन्प्रजाः, पर्यलुठन्निवस्ततो बलाकापाण्डुराणि नरशिरःकपालानि, पर्यहिण्डन्त शुष्का काकमण्डल्यः, शून्यीभूतानि नगरग्रामखर्वटपुटभेदनादीनि।

(२२) त एते गृहपतयः सर्वधान्यनिचयमुपयुज्याजाविकं गवलगणं

* बालविबोधिनी *

क्लीबाः निर्जलाः। क्षीणस्रोतसः–अत्यल्पप्रवाहाः। स्रवन्त्यो नद्यः। पङ्कशेषाणि पङ्कमात्रावशिष्टानि। पल्वलानि तडागानि। निर्निस्यन्दानि–क्षरणरहितानि। उत्समण्डलानि निर्झरसमूहाः। विरलीभूतं स्वल्पीभूतम्। अवहीनाः क्षीणाः। कथाः भाषितानि जनानामिति शेषः। गलिताः नष्टाः। कल्याणोत्सवक्रियाः मङ्गलजनकानि उत्सवानुष्ठानानि। बहुलीभूतानि–वृद्धिंगतानि। अन्योन्यं परस्परमभक्षयन् प्रजाः–प्रजास्वेकोऽन्यस्य मांसमत्तिस्मेत्यर्थः। पर्यलुठन् लुठन्तिस्म। बलाकापाण्डुराणि–बलाकावद् बकपंक्तिवत्पाण्डुराणि–शुभ्राणि। नरशिरःकपालानि–मृतमनुष्यमस्तकास्थीनि। पर्यहिण्डन्त–इतस्ततो धावन्तिस्म। शुष्काः निराहारत्वात् क्षीणाः। काकमण्डल्यः वायससमूहाः। नगरं बहुजनावासः, ग्रामः स्वल्पजनस्थानम्, खर्वटं क्षुद्रग्रामः, पुटभेदनं पल्ली।

(२२) ते एते पूर्ववर्णिताः। गृहपतयः गृहिणो धनकादयः। सर्वधान्यनिचयं

* बालक्रीडा *

हो गया। कन्दमूल फल आदि की उत्पत्तिमें कमी हो गयी। कथा पुराण कम पढ़े जाने लगे। मंगलाचारयुक्त श्रेयस्कर अनुष्ठान आदि बन्द हो गये। चोरोंकी वृद्धि हो गयी। प्रजा प्रजाहीका मांस खाने लगी। मनुष्योंके मुण्ड बलाका पंक्तिके तुल्य इधर–उधर पड़े हुए दिखायी देने लगे। बुभुक्षित कौओंका समूह इधर–उधर घूमने लगा। नगर, ग्राम, छोटे ग्राम और कसबे सभी वीरान (शून्य) दीखने लगे।

(२२) उन तीनों गृहपतियोंने (धनक आदिने) अपने घरोंमें धरी हुई

गवां यूथं दासीदासजनमपत्यानि ज्येष्ठमध्यमभार्ये च क्रमेण भक्षयित्वा 'कनिष्ठभार्या धूमिनी श्वो भक्षणीया' इति समकल्पयन् । अथ कनिष्ठो धन्यकः प्रियां स्वामत्तुमक्षमस्तया सह तस्यामेव निश्यपासरत् । मार्गक्लान्तां चोद्वहन् वनं जगाहे । स्वमांसासृगपनीतक्षुत्पिपासां तां नयन्नन्तरे कमपि निकृत्तपाणिपादकर्णनासिकमवनिपृष्ठे विचेष्टमानं पुरुषमद्राक्षीत् ।

* बालविबोधिनी *

निखिलधान्यराशिम् । उपयुज्य भक्षयित्वा । अजाविकम्–अजाश्च अवयश्च तेषां समूहोऽजाविकम् । गृहपालितानजान् छागान् अवीन् मेषांश्चेत्यर्थः गवलगणं महिषान् । गवां धेनूनां यूथं समूहम् । अपत्यानि पुत्रकन्यादीन् । ज्येष्ठेति–ज्येष्ठस्य धनकस्य मध्यमस्य च धान्यकस्य भार्ये पत्नीद्वयम् । कनिष्ठभार्या कनिष्ठस्य धन्यकस्य पत्नी । श्वः आगामिदिने । समकल्पयन् निर्द्धारितवन्तः । अथ तच्छ्रवणानन्तरम् । प्रियां पत्नीं स्वां स्वकीयाम् अत्तुं भक्षयितुम् । अक्षमः अनुरागादसमर्थः । [त]या स्वपत्न्या धूमिन्या । निशि रात्रौ । अपासरत् पलायिष्ट । मार्गक्लान्ताम् अध्वश्रान्ताम् । पत्नीमिति शेषः । उद्वहन् स्कन्धे कृत्वा । जगाहे प्रविवेश । स्वमांसेति–स्वस्य निजस्य मांसासृग्भ्यां मांसरुधिराभ्यामपनीते दूरीकृते क्षुत्पिपासे क्षुधातृष्णे यस्यास्ताम् । तां धूमिनीम् । नयन् वहन् । अन्तरे मार्गमध्ये । कमपि–अपरिचितम् । निकृत्तेति–निकृत्तं छिन्नं पाणिपादकर्णनासिकं यस्य तम् । प्राण्यङ्गत्वात् समाहारः । अवनिपृष्ठे भूतले । विचेष्टमानं लुठन्तम् ।

* बालक्रीडा *

अन्न राशिको खा डाला । तदनन्तर भेड़, बकरी, बकरोंको खा डाला । पुनः भैंस, भैंसोंको फिर गौ, बच्छोंको पश्चात् दास, दासियोंको, उसके बाद बच्चे-बच्चियोंको और आखिरीमें बड़े भाईकी स्त्री तथा मझले भाईकी स्त्रीको खा डाला । "अब छोटे भाईकी औरतको कल खायेंगे" ऐसा निर्धारण किया । परन्तु, छोटे भाई धन्यकने अपनी स्त्रीका भक्षण करना ना पसन्द किया और वह धन्यक उसी रातमें स्त्रीके साथ वहांसे भाग निकला । मार्गमें चलनेके परिश्रमसे थकी हुई अपनी प्रियाको वह यदा–कदा कंधे आदिपर ढोकर किसी तरह एक गहन वनमें प्रविष्ट हुआ । रास्तेमें जब उसकी प्रियाको भूख–प्यास लगती थी, तो, वह धन्यक उसे अपने मांस–रक्तद्वारा यथाक्रम उसकी क्षुधा–तृषाकी

(२३) तमप्यार्द्राशयः स्कन्धेनोद्वहन्कन्दमूलमृगबहुले गहनोद्देशे यत्नरचितपर्णशालश्चिरमवसत्। अमुं च रोपितव्रणमिङ्गुदीतैलादिभिरामिषेण शाकेनात्मनिर्विशेषं पुपोष। पुष्टं च समुद्रिक्तधातुमेकदा मृगान्वेषणाय च प्रयाते धन्यके सा धूमिनी रिरंसयोपातिष्ठत। भर्त्सितापि तेन

• बालविबोधिनी •

(२३) तं पुरुषम् आर्द्राशयः दयायत्तचित्तः। कन्देति-कन्दानि मूलानि मृगाश्च तैर्बहुले प्रचुरे पूर्णे इत्यर्थः। गहनोद्देशे काननप्रदेशे। यत्नेति यत्नेन प्रयासेन रचिता निर्मिता पर्णशाला पर्णकुटी येन सः। चिरं दीर्घकालम्। अवसत् धन्यक इति शेषः। अमुं पुरुषम्। इङ्गुदीति-इङ्गुदी फलविशेषस्तस्य तैलं तदादि द्रव्येण रोपितव्रणं शुष्कक्षतम्। आमिषेण मांसेन। आत्मनिर्विशेषम् आत्मतुल्यम्। पुपोष वर्धयामास। उद्रिक्तधातुं पुष्टशरीरम्। रिरंसया रन्तुमिच्छया। उपातिष्ठत-तस्य पुरुषस्य समीपं गतवती। भर्त्सिता-सक्रोधं निवारिता। तेन पुरुषेण। बलात्कारं-बलपूर्वकम्। अरीरमत्-सुरत-क्रीडामकरोत्। निवृत्तं वनात्प्रत्यागतम्।

• बालक्रीडा •

शान्ति करता था। इसी प्रकारसे जब वह अपनी स्त्रीको लादे हुए चलाजाता था, तब मार्गमें उसे एक अपरिचित लूला आदमी (पंगु) दिखायी दिया जो भूमिपर इधर-उधर लुढ़क रहा था।

(२३) उस दयालु धन्यकने उस पंगुको भी कंधेपर लाद लिया और यत्नसे निर्मित फल-फूल और प्रचुर कन्दमूलवाले अरण्यकी कुटियामें उसे ले आया। वहांपर उसको, इंगुदीके तैल आदि लगाकर, उसने पूरी तरहसे, सेवा-शुश्रूषा की जिससे उसके शरीरपरके सभी घाव (व्रण) सूख गये। साथ ही मांस और शाकादि वन्य खाद्य पदार्थों द्वारा उसका पालन-पोषण भी किया। एक दिन जब उस धूमिनीका पति हिरणोंकी गवेषणामें वनमें गया हुआ था, तब वह धूमिनी उस पुष्ट शरीर तथा स्तम्भित वीर्यवाले पंगुके समीप आयी और मैथुन (रति) करनेके लिये उससे कहने लगी। उस पंगुद्वारा तिरस्कृता होनेपर भी उस धूमिनीने उससे जबर्दस्ती रति क्रीड़ा की। जब उसका पति

बलात्कारमरीरमत् । निवृत्तं च पतिमुदकाभ्यर्थिनम् 'उद्धृत्य कूपात्पिब, रुजति मे शिरः शिरोरोगः' इत्युदञ्चनं सरज्जुं पुरश्चिक्षेप ।

(२४) उदञ्चयन्तं च तं कूपादपः, क्षणात्पृष्ठतो गत्वा प्रणुनोद । तं च विकलं स्कन्धेनोदुह्य देशाद्देशान्तरं परिभ्रमन्ती पतिव्रताप्रतीति लेभे, बहुविधाश्च पूजाः । पुनरवन्तिराजानुग्रहादतिमहत्या भूत्या न्यवसत् । अथ पानीयार्थिसार्थजनसमापत्तिदृष्टोद्धृतमवन्तिपु भ्रमन्तमाहारार्थिनं भ-

*** बालविबोधिनी ***

उदकाभ्यर्थिनं जलं याचमानं पातुमिति शेषः । उद्धृत्य निष्कास्य पिब जलमिति शेषः । रुजति पीडयति । इति एवं कथयित्वा । उदञ्चनं जलनिष्कासनपात्रम् । सरज्जुं रज्जुसहितम् । पुरः पत्युरग्रतः । चिक्षेप–प्रक्षिप्तवती ।

(२४) उदञ्चयन्तं निष्कासयन्तम् । तं धन्यकम् । अपः जलानि । क्षणात्–अतित्वरम् । पृष्ठतः–धन्यकस्य पश्चात् । प्रणुनोद प्रेरितवती । कूपे पातयामासेत्यर्थः । तं पुरुषम् । विकलं हीनाङ्गम् । उदुह्य–गृहीत्वा । पतिव्रता प्रतीतिं–सतीत्वख्यातिम् । पूजाः सम्मानम् । अवन्तिराजानुग्रहात् उज्जयिन्यधिपति प्रसादात् । भूत्या समृद्धया । पानीयेति–पानीयार्थिनो जलप्रार्थिनो ये सार्थजना वणिजस्तेषां

*** बालक्रीडा ***

धन्यक वनसे लौटकर आया तब उसने (धन्यकने) उससे पीनेके लिये जल मांगा । इसपर उस कुलटाने (धूमिनीने) पतिसे कहा—"कुएंसे निकालकर पियो, मेरे शिरमें दर्द है ।" और ऐसा कहकर उस धूमिनीने रस्सीके सहित जलपात्रको धन्यकके सम्मुख फेंक दिया ।

(२४) जब धन्यक कुंएसे जलपात्रद्वारा जल खींच रहा था । तब उस दुष्टा धूमिनीने उसी समय धीरेसे जाकर अपने पतिकी पीठमें धक्का देकर कुंएमें ढकेल दिया । तदन्तर उस हीनांग (पंगु) को लादे हुए देश–देशान्तर पर्यटन करती हुई उस कुलटाने पतिसेवापरायणाकी ख्याति प्राप्त की । तथा अनेकों विधिसे (अनेकों व्यक्तियोंद्वारा) धनादिकी सेवाएं भी प्राप्त कीं—प्रचुर धन भी प्राप्त किया । इसके बाद उज्जयिनीके राजाकी कृपासे प्रभूत ऐश्वर्यवती होकर वहीं रहने लगी । वह कुंएमें गिरा हुआ धन्यक, जलाभिलाषी वणिकोंके द्वारा, उस कुएंसे निकाला गया । कुंएसे निकाले जानेके बाद वह बेचारा भीख

र्तांरमुपलभ्य सा धूमिनी 'येन मे पतिर्विकलीकृतः स दुरात्मायम्' इति तस्य साधोश्चित्रवधमज्ञेन राज्ञा समादेशयांचकार।

(२५) धन्यकस्तु दत्तपश्चाद्बन्धो वध्यभूमिं नीयमानः सशेषत्वादायुषः 'यो मया विकलीकृतोऽभिमतो भिक्षुः, स चेन्मे पापमाचक्षीत, युक्तो मे दण्डः' इत्यदीनमधिकृतं जगाद। 'को दोषः' इत्युपनीय दर्शितेऽमुष्मि-

* बालविबोधिनी *

समासत्त्या समागमेन आदौ दृष्टः पश्चादुद्धृत उत्थापितश्च तम्। धन्यकमिति शेषः। अवन्तिषु तदाख्यनगरे। भर्तारं पतिं धन्यकमिति यावत्। उपलभ्य दृष्ट्वा। येन खनेनेत्यर्थः। विकलीकृतः हीनाङ्गः कृतः। साधोर्निरपराधस्य। चित्रवधं विचित्रप्रकारेण मरणम्। अज्ञेन तद् वृत्तान्तमजानता। समादेशयाञ्चकार आज्ञापितवती।

(२५) दत्तेति-दत्तोऽर्पितः पश्चात् पृष्ठे बन्धो बन्धनं यस्य सः। वध्यभूमिं श्मशानम्। सशेषत्वात्-अवशिष्टत्वात्। मया धन्यकेनेत्यर्थः। अभिमतः निर्णीतः। पापमपराधम्। आचक्षीत-कथयेत्। युक्तः उचितः। अदीनं निर्भयं यथा तथा। अधिकृतं-दण्डाधिकारिणम्। जगाद-यो मयेत्यादि दण्ड इत्यन्तं वचनमकथयत्।

* बालक्रीडा *

भागता हुआ उज्जयिनीमें पहुंचा। वहांपर आये हुए अपने पति धन्यकको देखकर उस दुष्टाने राजासे प्रार्थना की कि, हे राजन्! मेरे पतिको जिस व्यक्तिने लूला-लंगड़ा बनाया है। वह दुष्ट व्यक्ति आपके नगरमें आजकल आया हुआ है। और उस साधुचरित्रवाले धन्यककी चित्र-वधकी दण्डाज्ञा अवन्तीश्वरने करवा दी, (किन्तु वे राजा उसके पूर्ववृत्तसे अविदित थे)।

(२५) जब धन्यकके हाथोंको पीछेकी ओर बांधकर राजपुरुषगण श्मशान भूमिपर ले आये, तब आयुके कुछ अवशिष्टताके कारण धन्यकने दण्डाधिकारियोंसे निःशंक होकर कहा—"हे आर्यगण! जिस भिक्षुको मैंने हीनांग (पंगु) बनाया है वह भिक्षु, यदि, आकर कह दे कि, "मैंने (धन्यकने) उसे पंगु बनानेका पाप किया है तो, मैं दण्ड पानेके योग्य हूं।" उन दण्डाधिकारियोंने कहा—"इसमें क्या हानि है।" और वे लोग उस पंगुको वहांपर ले आये।

न्स विकलः पर्यश्रुः पादपतितस्तस्य साधोस्तत्सुकृतमसत्याश्च तस्यास्तथाभूतं दुश्चरितमार्यबुद्धिराचचक्षे । कुपितेन राज्ञा विरूपितमुखी सा दुष्कृतकारिणी कृता श्वभ्यः पाचिका । कृतश्च धन्यकः प्रसादभूमिः । तद्ब्रवीमि–'स्त्रीहृदयं क्रूरम्' इति ।

(२६) पुनरनुयुक्तो गोमिनीवृत्तान्तमाख्यातवान्–'अस्ति द्रविडेषु काञ्ची नाम नगरी । तस्यामनेककोटिसारः श्रेष्ठिपुत्रः शक्तिकुमारो नामा-

* बालविबोधिनी *

को दोषः–एवं करणे दोषो नास्तीति उपनीय–तं विकलाङ्गमानीय । अमुष्मिन् धन्यके । पर्यश्रुः–परिगतं व्याप्तमश्रुनयनजलं यस्य सः रुदन् इत्यर्थः । सुकृतं उपकारम् । असत्याः पुंश्चल्याः । दुश्चरितं असदाचरणम् । आर्यबुद्धिः निष्पापमतिः । कुपितेन रुष्टेन । विरूपितमुखी–विरूपितं नासाच्छेदनादिना कुत्सितीकृतं मुखं यस्याः सा । सा धूमिनी । दुष्कृतकारिणी–असदाचारा । श्वभ्यः कुक्कुरेभ्यः । पाचिका पाककर्त्री । हीनकर्मणि नियुक्तेत्यर्थः । प्रसादभूमिः–अनुग्रहपात्रम् ।

(२६) अनुयुक्तः पृष्टः । आख्यातवान् वर्णितवान् मित्रगुप्त इति शेषः । द्रविड़ेषु मद्रमण्डलान्तर्गतदेशविशेषेषु । तस्यां–काञ्चीनगर्याम् । अनेककोटिसारो

* बालक्रीडा *

उस पंगुने उस साधुचरितवान धन्यकको देखते ही आंखोंमें आंसू भरकर एवं व्याकुल होकरके उसके (धन्यकके) चरणोंको पकड़ लिया–पैरोंमें पड़ गया । और धन्यकके उपकारोंको, उस श्रेष्ठ बुद्धिवाले भिक्षुकने, ज्योंके त्यों उन दण्डाधिकारियोंके सम्मुख कह सुनाया तथा उस पुंश्चली धूमिनीके सम्पूर्ण दुराचरणोंको भी कह सुनाया । भिक्षुके कथनके पश्चात्—राजाने क्रोध करके उस दुष्टा धूमिनीको कुत्सितांगी करके कुत्तोंकी पाचिका (भोजन बनानेवाली) नियुक्त किया । धन्यकको अपना कृपापात्र बनाया । अत एव कहता हूं कि, "स्त्रीका चित्त निष्ठुर होता है" ।

(२६) तत्पश्चात् उस ब्रह्मराक्षसद्वारा पूछे जानेपर मैंने (मित्रगुप्तने) गोमिनीवृत्त वर्णनकरना आरम्भ किया । "द्रविड प्रदेशमें एक कांची नामकी नगरी है । उस कांची नगरीमें कई करोड़ोंकी संपत्तिवाला शक्तिकुमार नामक

सीत्। सोऽष्टादशवर्षदेशीयश्चिन्तामापेदे—'नास्त्यदाराणामननुगुणदाराणां वा सुखं नाम। तत्कथं नु गुणवद्विन्देयं कलत्रम्' इति। अथ परप्रत्ययाहृतेषु दारेषु यादृच्छिकीं संपत्तिमनभिसमीक्ष्य कार्तान्तिको नाम भूत्वा वस्त्रान्तर्पिनद्धशालिप्रस्थो भुवं बभ्राम। 'लक्षणज्ञोऽयम्' इत्यमुष्मै कन्याः कन्यावन्तः प्रदर्शयाबभूवुः। यां कांचिल्लक्षणवतीं सवर्णां कन्यां दृष्ट्वा स किल स्म ब्रवीति—'भद्रे, शक्नोषि किमनेन शालिप्रस्थेन गुणवद-

* बालविबोधिनी *

बहुकोटिसंख्यकं मूलधनवान्। श्रेष्ठिपुत्रः वणिक् तनयः। अष्टादशवर्षदेशीयः अष्टादशवर्षवयस्कः। आपेदे-प्राप्तवान्। अदाराणामपत्नीकानाम्। अननुगुणेति—अननुगुणाः प्रतिकूला दारा येषां तथाभूतानाम्। सुखं नाम नास्ति—"न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते" "भार्या चाप्रियवादिनी" इत्याद्युक्तेः-गृहस्थानां भार्याभावे तत्सत्त्वेऽपि तस्याः प्रतिकूलत्वे च गृहसौख्यस्यासम्भव इति प्रसिद्धमिति भावः। तत्तस्मात्। कथं केन प्रकारेण। गुणवत्-गुणवतीम्। विन्देयं लभेय। कलत्रं भार्याम्। परेति-परस्यान्यस्य प्रत्ययेन विश्वासेन आहृतेषु संगृहीतेषु परिणीतेषु इति यावत्। दारशब्दस्य पुलिङ्गत्वात् बहुवचनान्तत्वाच्चात्र पुलिङ्गत्वं बहुवचनञ्च। यादृच्छिकीं स्वेच्छानुरूपाम् सम्पत्तिं प्रीतिम्। अनभिसमीक्ष्य-अदृष्ट्वा। कार्तान्तिकः-कृतान्तं दैवं जानातीति तथा सामुद्रिकः। कार्तान्तिको गणकश्च इति कोषः। नाम भूत्वा-तद्व्याजेन। वस्त्रान्तेति-वस्त्रान्तेन

* बालक्रीडा *

एक वैश्यपुत्र रहता था। वह जब अठारह वर्षका हुआ तब विचारने लगा कि, विना स्त्रीके भी सुख नहीं होता तथा विना गुणवती स्त्रीके भी सुख नहीं होता है। इसलिये कैसे गुणवती स्त्री प्राप्त की जाय? दूसरेपर विश्वास करूं तो, उसके द्वारा गुणवती आत्मानुकूल मिले या न मिले—विवाहके पश्चात् कुछ नहीं कर सकता। अतः हस्तरेखाविद् (लक्षणज्ञ) का वेष बनाकर वह शक्तिकुमार अपने वस्त्रमें प्रस्थपरिमाण धान बांधकर पृथिवीपर घूमने लगा। "यह हस्तरेखाविशारद है" ऐसा ज्ञात करके कन्याके अभिभावकगण अपनी-अपनी कन्याओंकी हस्तरेखा आदि उसे दिखाने लगे। किसी एक अपने जातिकी (वर्णकी)

अस्मानभ्यवहारयितुम्' इति । स हसितावधूतो गृहाद्गृहं प्रविश्याभ्रमत् ।

(२७) एकदा तु शिबिपु पट्टने सह पितृभ्यामवसितमहर्धिमवशीर्ण-भवनसारां धात्र्या प्रदर्श्यमानां कांचन विरलभूषणां कुमारीं ददर्श । अस्यां संसक्तचक्षुश्चातर्कयत्—'अस्याः खलु कन्यकायाः सर्व एवावयवा

* बालविबोधिनी *

वसनप्रान्तभागेन पिनद्धो बद्धः शालिप्रस्थो धान्यसमुदायो येन सः । भुवं देशान्तरम् । अमुष्मै शक्तिकुमाराय । कन्यावन्तः कन्यापितरः । लक्षणवतीं सुलक्षणाम् । सवर्णां समानजातीयाम् । स शक्तिकुमारः । गुणवत् सुस्वादु । अभ्यवहारयितुं खादयितुम् । हसितावधूतः-कृतोपहासस्तिरस्कृतश्च । अभ्रमत् भ्रमितुमारेभे ।

(२७) शिबिषु-कावेरी-दक्षिणतीरस्थ-देशविशेषेषु । पट्टने नगरे । पितृभ्यां जननीजनकाभ्याम् सह सार्कं अवसिता निःशेषिता महती ऋद्धिः सम्पद् यस्या स्ताम् । मातापितृहीनां नष्टसम्पदश्चेत्यर्थः । अवशीर्णभवनसारां-जीर्ण-माात्रावशेषां विनष्टगृहसारधनां वा । धात्र्या उपमात्रा । विरलभूषणां स्वल्पाल ंकाराम् । अस्यां कुमार्याम् । संसक्तचक्षुः आबद्धदृष्टिः । मनसि विचारयामास ।

* बालक्रीडा *

लक्षणवती कन्याकी हस्तरेखा देखकर उसने कहा—"हे सौम्ये ! क्या इस प्रस्थ परिमाण धानद्वारा आप स्वाद युक्त भोजन बनाकर मुझे खिला सकती हैं ।" उस कन्याने उपपर हंस दिया तथा तिरस्कृत (उपहासित) होकर वह शक्तिकुमार, इस घरसे उस घरमें प्रवेश करते हुए, भ्रमण करने लगा ।

(२७) भ्रमण करते हुए एक दिन उस शक्तिकुमारने कावेरी नदीके दक्षिण भागके एक नगरमें उपमाता द्वारा प्रदर्शित एक कन्या देखी । जिस कन्याके माता-पिता मर चुके थे और उसके गृहकी सम्पत्ति भी विनष्ट हो चुकी थी केवल एक टूटा-फूटा घर बचा था और एक-दो आभूषण उसके शरीरपर अलंकृत थे । उस कन्याके ऊपर आबद्धदृष्टि देखकर मैंने विचार किया-"निश्चय है कि, इस कन्याके शरीरके अङ्ग न तो मोटे हैं न दुर्बल हैं । यह न नाटी है न

नातिस्थूला नातिकृशा नातिह्रस्वा नातिदीर्घा न विकटा मृजावन्तश्च रक्ततलाङ्गुली यवमत्स्यकमलकलशाद्यनेकपुण्यलेखालाञ्छितौ करौ, समगुल्फसंधी मांसलावशिरालौ चाङ्घ्री, जङ्घे चानुपूर्ववृत्ते पीवरोरुग्रस्ते इव दुरुपलक्ष्ये जानुनी, सकृद्विभक्तश्चतुरस्रः ककुन्दरविभागशोभी रथाङ्गाकारसंस्थितश्च नितम्बभागः, तनुतरमीषन्निम्नं गम्भीरं नाभिमण्डलम्,

(२८) वलित्रयेण चालंकृतमुदरम्, उरोभागव्यापिनावुन्मग्नचूचु-

* बालविबोधिनी *

अवयवा अङ्गानि । विकटाः कर्कशाः । मृजावन्तः–स्वच्छाः । रक्ततलेति—रक्तमरुणं तलं यासां तादृश्योऽङ्गुलयो ययो स्तादृशौ । यवमत्स्येति–यवः शस्यविशेषः मत्स्यो मीनः कमलमब्जं कलशो घटस्तदाद्यनेक पुण्यलेखाभिः शुभसूचकरेखाभिर्लाञ्छितौ चिह्नितौ । समेति–समौ समानौ गुल्फयोः संधी ययोस्तौ । मांसलौ पुष्टौ । अशिरालौ शिरारहितौ । अंघ्री चरणौ जङ्घे जंघाद्वयम् । आनुपूर्ववृत्ते क्रमशः स्थूले गोपुच्छाकारे । पीवरेति-पीवराभ्यामूरुभ्यां ग्रस्ते आक्रान्ते इव दुरुपलक्ष्ये दुर्दर्शे । तादृशं जानुद्वयमिति शेषः । नितम्बभागः कटिपश्चाद्भागः सकृद्विभक्तः समविभागेन निर्मितः चतुरस्रः सर्वतः शोभमानः । तथा ककुन्दरयोः नितम्बस्थावर्ताकारगर्तयोर्विभागेन शोभते एवं शीलः । रथाङ्गस्य चक्रस्या कारेण संस्थितः सन्निवेशितः । तनुतरं सूक्ष्मतरम् । ईषन्निम्नं किञ्चिदवनतम् ।

(२८) वलित्रयेण–त्रिवल्या । अलंकृतं शोभितम् । उरोभागव्यापिनौ–सम-

* बालक्रीडा *

लम्बी है। न कठिन स्वभाववाली ही है। और शरीरका रंग भी स्वच्छ है। इसके हाथकी अङ्गुलियोंका तलप्रदेश लाल है। इसके हाथमें यव, मछली, कमल और कलश आदि पुण्य रेखाएं पड़ी हैं। इसके चरण शिरा रहित हैं तथा मांसल (पुष्ट) हैं और इसके गुल्फ भाग सन्धिहीन एवं समान हैं। इसकी दोनों जांघें गोपुच्छाकार हैं। सुश्लिष्ट, मोटे-मोटे इसके ऊरु हैं। इसके दोनों घुटने दुर्लक्ष्य हैं। इसका कटिपश्चाद्भाग (नितम्ब भाग) समान भागोंमें विभक्त सब ओर शोभायमान नितम्बस्थित कूपोंसे सुशोभित और चक्राकार रूपमें है। कुछ गम्भीर तथा सूक्ष्मतर इसका नाभिमण्डल है।

(२८) इसका उदरदेश त्रिवलियोंसे मनोहर है। समस्त वक्षःस्थलको

कौ विशालारम्भशोभिनौ पयोधरौ, धनधान्यपुत्रभूयस्त्वचिह्नलेखालाञ्छितले स्निग्धोदरकोमलनखमणी ऋज्वनुपूर्ववृत्तताम्राङ्गुली संनतांसदेशे सौकुमार्यवत्यौ निमग्नपर्वसंधी च बाहुलते, तन्वी कम्बुवृत्तबन्धुरा च कंधरा, वृत्तमध्यविभक्तरागाधरम् असंक्षिप्तचारुचिबुकम् आपूर्णकठिनगण्डमण्ड-

* बालविबोधिनी *

स्तं वक्षोदेशं व्याप्य वर्त्तमानौ । उन्मग्नचूचुकौ–उद्गतकुचाग्रौ । विशालारम्भशोभिनौ–विशालारम्भेणातिविस्तारेण शोभमानौ । पयोधरौ कुचौ । धनधान्येति–धनं वसु च धान्यं शस्यं च पुत्राः सन्ततयश्च तेषां यद्भूयस्त्वं बाहुल्यं तस्य सूचिका याः चिह्नलेखाः रेखाकाराणि चिह्नानि ताभिर्लाञ्छितं शोभितं तलं तलप्रदेशो ययोस्तादृशौ, तथा स्निग्धं मसृणमुदरं मध्यभागो येषां तादृशाः कोमला मृदुला नखा मणय इव ययोस्ते, तथा ऋजवः सरलाः अनुपूर्ववृत्ताः क्रमवर्त्तुलाः ताम्रा रक्तवर्णा अङ्गुलयो ययोस्ते, तथा सन्नतौ नम्रौ अंसदेशौ स्कन्धौ ययोस्तादृशौ, सौकुमार्यवत्यौ मनोहरे तथा निमग्ना ईषदवनताः पर्वणां सन्धयो ययोस्ते । एतानि बाहुलते इत्यस्य विशेषणानि । तन्वी क्षीणा तथा कम्बुवत् शङ्खवत् वृत्ता वर्त्तुला बन्धुरा नतोन्नता कन्धरा ग्रीवा । वृत्तमध्येत्यादि–वृत्तं वर्त्तुलं यन्मध्यं मध्यदेशस्तत्र विभक्तः पृथक्-कृतो रागो रक्तिमा यस्मिंस्तादृशोऽधरो यस्मिन् तादृशम् । एतदारभ्य सर्वमाननकमलविशेषणम् । असंक्षिप्त मनल्पं चारुसुन्दरं चिबुकं हनुदेशो यत्र तादृशं तथा आपूर्णं सम्यक् पुष्टं कठिनमशिथिलं गण्डमण्डलं

* बालक्रीडा *

परिव्याप्त करनेवाले और विस्तीर्णतासे शोभावाले इसके दोनों स्तन हैं । इस कन्याकी लतारूपी भुजाएँ अवनत कंधेके समीपकी मनोहर सन्धि (जोड़) से निमग्न है । जिन भुजाओंमें सीधी, गोल और लाल रंगकी अङ्गुलियां हैं । जिन अङ्गुलियोंमें चिकने कोमल नख मणिके समान मालूम पड़ते हैं । धन धान्य, सन्तानको प्रचुरमात्रामें सूचित करनेवाली रेखाएं इसके तलप्रदेश (हस्ततल) में विराजमान हैं । इसकी ग्रीवा क्षीण तथा शंखके समान आकारवाली है । गोल मध्यदेशमें विभक्त लाल इसके अधर हैं । बहुत सुन्दर इसकी हनु (चिबुक) है । इसका कपोल प्रदेश अशिथिल (कठिन) है । परस्पर

लं संगतानुवक्रनीलस्निग्धभ्रूलतम् अनतिप्रौढतिलकुसुमसदृशनासिकम्

(२९) अत्यसितधवलरक्तत्रिभागभासुरमधुरधीरसंचारमन्थरायतेक्षणम इन्दुशकलसुन्दरललाटम् इन्द्रनीलशिलाकाररम्यालकपङ्क्ति द्विगुणकुण्डलितम्लाननालीकनाललुलितलम्बश्रवणपाशयुगलमाननकमलम् , अनतिभङ्गुरो बहुलः पर्यन्तेऽप्यकपिलरुचिरायामवानेकैकनिसर्गसमः स्नि-

* बालविबोधिनी *

कपोलदेशो यत्र तादृशं तथा संगते परस्परमिलिते अनुवक्रे वक्राकारे नीले कृष्णवर्णे स्निग्धे मसृणे भ्रूलते यत्र तादृशं तथा अनतिप्रौढं नातिविकसितं यत्तिलकुसुमं तत्सदृशी नासिका यत्र तथाविधं तथा

(२९) अत्यसितो गाढकृष्णः धवलः शुभ्रः, रक्तोऽरुणश्चैवंभूता ये त्रयो भागास्तैर्भासुरे उज्ज्वले मधुरे मनोहरे धीरसञ्चारे अचञ्चलव्यापारे अतएव मन्थरे मन्दे आयते दीर्घे ईक्षणे नेत्रे यत्र तथाभूतं तथा इन्दुशकलमर्धचन्द्रस्तद्वत् सुन्दरं ललाटमलिकं यत्र तादृशं तथा इन्द्रनीलशिला नीलकान्तमणिस्तदाकारा तत्सदृशी रम्या रमणीया अलकपंक्तिः चूर्णकुन्तलश्रेणिर्यत्र तथाभूतं तथा द्विगुणं द्विरावृत्तं यथा तथा कुण्डलितेन कुण्डलीकृतेन म्लानेन ईषन्मलिनेन नालीकनालेन पद्मवृन्तेन ललितं सुन्दरं लम्बं लम्बमानं श्रवणपाशयोः कर्णपाशयोः युगलं द्वयं यत्र तादृशमस्या आननकमलम् । अनतिभङ्गुरः नाति कुटिलः ।

* बालक्रीडा *

मिली हुई वक्राकार तथा नीली चिकनी इसकी भ्रूलताएं है । अविकसित तिलके फूलके समान इसकी नासिका है ।

(२९) अत्यन्त कृष्ण, सफेद और लाल तीन भागोंसे देदीप्यमान मधुर, गम्भीर और मन्द गतिसे सुशोभित इसके विशाल नेत्र हैं । अर्द्ध चन्द्रके तुल्य इसका ललाट है । नीलकान्त मणिसे मनोहर इसकी केश श्रेणी है । द्विगुणित कुण्डलीकृत, ईषन्मलिन कमलोंसे सुशोभित एवं लम्बमान दोनों कानोंसे परिपूर्ण इसका मुखपद्म है । कुछ टेढा तथा सान्द्र अपिंगल कान्तिवान एवं दीर्घ और स्वभावसे ही प्रत्येक स्निग्ध तथा नील द्युतिवाले और सुगन्धिशाली इसके

ग्धनीलो गन्धग्राही च मूर्धजकलापः । सेयमाकृतिर्न व्यभिचरति शीलम् । आसज्जति च मे हृदयमस्यामेव । तत्परीक्ष्यैनामुद्वहेयम् । अविमृश्यकारिणां हि नियतमनेकाः पतन्त्यनुशयपरम्पराः' इति ।

(३०) स्निग्धदृष्टिराचष्ट—'भद्रे, कच्चिदस्ति कौशलं शालिप्रस्थेनानेन संपन्नमाहारमस्मानभ्यवहारयितुम्' इति । ततस्तया वृद्धदासी साकू-

* बालविबोधिनी *

बहुलः सान्द्रः । पर्यन्ते प्रान्तभागेऽपि । अकपिलरुचिः अपिङ्गलकान्तिः । आयामवान् दैर्घ्ययुक्तः । एकैकेति–एकैकं प्रत्येकं निसर्गेण स्वभावेन समस्तुल्यः तथा स्निग्धो मसृणो नीलः कृष्णश्च । गन्धग्राही सौगन्ध्ययुक्तः । मूर्धजकलापः केशपाशः । सा तादृशी । इयं दृश्यमाना । आकृतिः स्वरूपम् । व्यभिचरति विसंवदति विपर्यासयतीत्यर्थः । शीलं स्वभावम् । आकृतेरनुरूपः स्वभावो भविष्यतीति भावः । आसज्जति–लगति । अस्यां कन्यायाम् । तत्–तस्मात् । परीक्ष्य अशेषतो विमृश्य । एनां कन्याम् । उद्वहेयम् परिणेष्यामीत्यर्थः । यतः अविमृश्यकारिणां हठकारिणाम् । नियतमवश्यम् अनुशयपरम्पराः पश्चात्तापाः । पतन्ति भवन्तीत्यर्थः ।

(३०) स्निग्धदृष्टिः स्नेहपूर्णनयनः । आचष्ट आख्यातवान् शक्तिकुमार इति शेषः । भद्रे कल्याणि । कच्चिदिति प्रश्ने । अनेन मत्करस्थेन शालिप्रस्थेन धान्यराशिना सम्पन्नं सम्पादितमाहारं भोज्यम् अभ्यवहारयितुं भोजयितुं मामिति शेषः कौशलं नैपुण्यमस्ति किमिति प्रश्नः । ततः प्रश्नानन्तरम् । तया कन्यया ।

* बालक्रीडा *

केशकलाप हैं । ऐसी आकृतवाली स्वभावसे भी बुरी नहीं होती हैं–भली होती हैं । मेरा हृदय इस कन्यापर आसक्त हो रहा है । अतः इसकी परीक्षा करके इससे परिणय करना चाहिये । अविचारियोंको पीछे अनेकों तरहके पश्चात्ताप करने पड़ते हैं ।

(३०) ऐसा सोचकर उस शक्तिकुमारने प्रेमपूर्ण दृष्टिसे उस कन्यासे कहा—"हे कल्याणि ! मेरे समीप एक प्रस्थ परिमाण धान्यराशि है, क्या, आपमें इन धान्योंको पकाकर मुझे खिला देनेका नैपुण्य है ? इस प्रश्नपर उस

तमालोकिता। तस्य हस्तात्प्रस्थमात्रं धान्यमादाय कचिदलिन्दोद्देशे सुसिक्तसंमृष्टे दत्तपादशौचमुपावेशयत्। सा कन्या तान्गन्धशालीन्संक्षुद्य मात्रया विशोष्यातपे मुहुर्मुहुः परिवर्त्य स्थिरसमायां भूमौ नालीपृष्ठेन मृदुमृदु घट्टयन्ती तुषैरखण्डैस्तण्डुलान्पृथक्चकार। जगाद च धात्रीम्-'मातः एभिस्तुषैरर्थिनो भूषणमृजाक्रियाक्षमैः स्वर्णकाराः। तेभ्य इमान्दत्त्वा ल-

* बालविबोधिनी *

साकूतं साभिप्रायम्। आलोकिता दृष्टा। तस्य शक्तिकुमारस्य। आदाय गृहीत्वा। अलिन्दोद्देशे-द्वारोपान्तप्रदेशे। सुसिक्त संमृष्टे-सुसिक्तो जलेनार्द्रीकृतः संमृष्टः शुद्धीकृतस्तादृशे। दत्तेति-दत्तमर्पितं पादशौचं पादप्रक्षालनार्थंजलं यस्मै तम्। तादृशं शक्तिकुमारमुपावेशयत् उपवेशितवती वृद्धदासीति शेषः। गन्धशालीन्-गन्धयुक्तान् व्रीहीन्। संक्षुद्य कुट्टयित्वा। मात्रया अंशेन-कियत्परिमाणेनेत्यर्थः। विशोष्य नीरसीकृत्य। आतपे सूर्यकिरणे। परिवर्त्य इतस्ततः सञ्चाल्य। स्थिरसमाया स्थिरायां कठिनायां समायामबन्धुरायाञ्च। नालीपृष्ठेन मुसलविशेषेण। मृदुमृदु मन्दंमन्दम्। घट्टयन्ती मर्दयन्ती। अखण्डैः अभग्नैस्तुषैः धान्यत्वग्भिः। पृथक् चकार तण्डुलान् सम्पादयामास। धात्रीं तां वृद्धदासीम्। एभिरित्यादि-भूषणानामलंकाराणां मृजाक्रियायां परिष्करणे क्षमैः समर्थैरेभिस्तुषैः स्वर्णकाराः भूषणनिर्मातारः अर्थिनः प्रार्थिनः। अलङ्कारशोधनार्थं स्वर्णकारास्तुषान् गृह्णन्तीति प्रसिद्धिः। तेभ्यः स्वर्णकारेभ्यः। इमान्-तुषान्। लब्धामि' तन्मूल्य-

* बालक्रीडा *

कन्याने अपनी वृद्धा उपमाताको साभिप्राय देखा। तब धात्रीने उस शक्तिकुमार से प्रस्थ परिमाण धान्य ले लिये तथा अपने द्वारके समीप (दहलीजमें) में एक जगह जल छिड़ककर, एवं उस जगहको पवित्र बना करके उसे अतिथिको हाथ-पाव धोनेके जलको देकर वहीं बैठा दिया। फिर उस कन्याने उन सुगन्धित धानोंको लेकर कूट डाला और थोड़ी देरतक उन्हें धूपमें फैलाकर इधर-उधर चलाकर सुखा डाला। पुनः ओखलीमें धरकर हलके हाथोंद्वारा मूसलसे कूट दिया। खड़े-खड़े (साबित) चावलके दाने अलग कर डाले और टूटे हुए अलग कर डाले तथा भूसी अलग कर दी। ततः अपनी धात्रीसे बोली—

ध्धाभिः काकिणीभिः स्थिरतराण्यनत्याद्रांणि नातिशुष्काणि काष्ठानि मि-तंपचां स्थालीमुभे शरावे चाहर' इति।

(३१) तथाकृते तया तांस्तण्डुलाननतिनिम्नोत्तानविस्तीर्णकुक्षौ क-कुभोलूखले लोहपत्रवेष्टितमुखेन समशरीरेण विभाव्यमानमध्यतानवेन

* बालविबोधिनी *

त्वेन प्राप्ताभिः। काकिणीभिः कपर्दिकाभिः। स्थिरतराणि—सारवन्ति। अनत्या-र्द्राणि अनतिसरसानि। किञ्चिदार्द्राणि काष्ठानि मन्दं मन्दं ज्वलन्तीति भावः। नातिशुष्काणि—अतिशुष्ककाष्ठानां शीघ्रदाहभया दनतिनीरसानि। काष्ठानि इन्धनानि। मितम्पचां मितं स्वल्पं पचतीति मितनखेचेति खश्। स्वल्पपाचिनी-मित्यर्थः। स्थालीं पाकपात्रम्। उभे शरावे—वर्धमानक-द्वयम्। मृत्पात्रयुग्ममि-ति शेषः। आहर आनय।

(३१) तथा कृते कथनानुसारेण अनुष्ठिते, तत्तद्द्रव्ये आनीते सतीत्यर्थः। तया धात्र्या। अनतीति—अनतिनिम्नो नातिनम्रः उत्तानःऊर्ध्वमुखो विस्तीर्णश्च कुक्षिरभ्यन्तरभागो यस्य तादृशे। ककुभोलूखले—ककुभेन अर्जुनवृक्षेण निर्मिते उलूखले तण्डुलोत्पादकयन्त्रविशेषे लोहपत्रेति—लोहपत्रेण पत्राकारलोहेन वेष्टितं मुखमग्रभागो यस्य तेन। समशरीरेण तुल्यावयवेन। विभाव्येति—विभाव्यमानं अनुभूयमानं मध्ये मध्यभागे तानवं तनुत्वं कृशत्वमिति यावत्, यस्य तेन। व्यायतेन दीर्घेण। गुरुणा स्थूलेन। खादिरेण खदिरकाष्ठनिर्मितेन। एतत्सर्वं

* बालक्रीडा *

"हे अम्ब ! यह भूसी सुनारोंको बेंच दीजिये। क्योंकि वे लोग इससे अपने गहने साफ करते हैं, अतः खरीद लेंगे। इस भूसीके बदलेमें उनसे जो कौड़ी (द्रव्य) प्राप्त होवे उससे न बहुत गीली तथा न बहुत सूखी लकड़ी (ईंधनके लिये) और स्वल्पपाचिनी हड़िया एवं दो मिट्टीके ढक्कन ले आइये।"

(३१) वृद्धा उपधात्रीद्वारा उपर्युक्त व्यापार सम्पादित होनेपर उस कन्याने उन चावलोंको कुछ गहिरी और ऊर्ध्वमुखवाली ककुभकी (अर्जुन वृक्षकी) बड़ी ओखलीमें रख दिया। फिर जिस मूसलमें मुखके ऊपर लोहेकी सामी लगी

व्यायतेन गुरुणा खादिरेण मुसलेन चतुरललितक्षेपणोत्क्षेपणायासितभुजमसकृदङ्गुलीभिरुद्धृत्योद्धृत्यावहत्य शूर्पशोधितकणकिंशारुकांस्तण्डुलानसकृदद्भिः प्रक्षाल्य क्वथितपञ्चगुणे जले दत्तचुल्लीपूजा प्राक्षिपत्। प्रश्लथावयवेषु प्रस्फुरत्सु तण्डुलेषु मुकुलावस्थामतिवर्तमानेषु संक्षिप्यानलमुपहितमुखपिधानया स्थाल्यान्नमण्डमगालयत्। दर्व्या चावघट्य मात्रया परिवर्त्य समपक्वेषु सिक्थेषु तां स्थालीमधोमुखीमवातिष्ठिपत्। इन्ध-

* बालविबोधिनी *

मुसलेनेत्यस्य विशेषणम्। मुसलेन दण्डविशेषेण। चतुरेति-चतुरं चपलं ललितं सुन्दरं च यत् क्षेपणं अधःपातनमुत्क्षेपणं मूर्ध्वोत्तोलनं ताभ्यामायासितौ क्लेशितौ भुजौ यत्र तद् यथा तथा। असकृद् वारं वारम्। उद्धृत्योद्धृत्य-संचाल्य। अवहत्य संपिष्य। शूर्पेति-शूर्पेण शोधिता दूरीकृताः कणाः क्षुद्रावयवाः किंशारुकाः शस्यशूकानि च येषां तान्-तथाभूतान् तण्डुलान्। असकृत्पुनः पुनः। अद्भिर्जलैः। क्वथितेति-क्वथिते उष्णीकृते पञ्चगुणे तण्डुलापेक्षया पञ्चगुणाधिके। दत्तचुल्लीपूजा-दत्ता अर्पिता चुल्लीपूजा महानसपूजा यया सा। प्राक्षिपत् निक्षिप्तवती। प्रश्लथेति-प्रश्लथाः शिथिलाः क्लिन्ना इति यावत् अवयवा येषां तेषु। प्रस्फुरत्सु-स्पन्दमानेषु। मुकुलावस्था कठिनभावमतिवर्तमानेषु अतिक्रामत्सु। संक्षिप्य-मन्दीकृत्य। उपहितेति—उपहितं स्थापितं मुखे पिधानमाच्छादनं यस्यास्तया तादृश्या स्थाल्या अन्नमण्डमन्नरसम् अगालयत् निरकासयत्। दर्व्या खजाकया हस्ताकृतिलोहादिदण्डेनेत्यर्थः। अवघट्य आलोड्य। मात्रया अंशेन। परिवर्त्य ऊर्ध्वाधोभावेन संचाल्य। समपक्वेषु समानक्लिन्नेषु। सिक्थेषु भक्तेषु

* बालक्रीडा *

थी तथा जो बीचमें सीधा था और ऊपर नीचे सम अवयवी था। जो खदिरकी लकड़ीका बना था। जो लम्बा और भारी भी था। उस मूसलसे उन चावलोंको चपल और ललित कुटान (अधः पतन, ऊर्ध्वतोलन) से बार-बार क्लेशित हाथोंसे-चलाते हुए उन्हें विदारित किया। तत्पश्चात् सूपसे उन्हें पछोरकर कणा खुदोंको (कण, शस्यशूकोंको) अलग करके चावलोंको खूब धोया। और चावलसे पचगुने तप्त जलमें चूल्हेकी पूजा करके चावल छोड़ दिया। अर्थात् गरम

नान्यन्तःसाराण्यम्भसा समभ्युक्ष्य प्रशमिताग्नीनि कृष्णाङ्गारीकृत्य तदर्थिभ्यः प्राहिणोत् । 'एभिर्लब्धाः काकिणीर्दत्त्वा शाकं घृतं दधि तैलमामलकं चिञ्चाफलं च यथालाभमानय' इति ।

(३२) तथानुष्ठिते च तया द्वित्रानुपदंशानुपपाद्य तदन्नमण्डमार्द्रवालुकोपहितनवशरावगतमति मृदुना तालवृन्तानिलेन शीतलीकृत्य सलव-

* बालविबोधिनी *

अवातिष्ठिपत्—अवस्थापयामास । इन्धनानि काष्ठानि । अन्तःसाराणि अदग्धान्तराणि । समभ्युदय आर्द्रीकृत्य । प्रशमिताग्नीनि—निर्वापितानलानि । एतादृशानि काष्ठानि कृष्णाङ्गारीकृत्य अङ्गारान् सम्पाद्य । तदर्थिभ्यः अङ्गारक्रेतृभ्यः । प्राहिणोत्—अङ्गारार्थिसकाशे विक्रयार्थमङ्गारान् प्रेरितवतीत्यर्थः । एभिरङ्गारैः । लब्धाः विक्रयलब्धाः । काकिणीः कपर्दिकाः । दत्त्वा समर्प्य—तद्विनिमयेन । चिंचाफलं तिन्तिड़ीफलम् । यथालाभं ताभिः काकिणीभिर्यावल्लभ्यं तावदित्यर्थः ।

(३२) तया धात्र्या । द्वित्रान् द्वित्रिप्रकारान् । उपदंशान्—व्यञ्जनानि । उपपाद्य सम्पाद्य पक्त्वेति यावत् । आर्द्रेति—आर्द्रवालुकाभिः सरससिकताभिः उपहितं युक्तं यन्नवशरावं तत्र गतं स्थितमिति तदन्नमण्डमित्यस्य विशेषणम् ।

* बालक्रीडा *

पचगुने जलमें चावलको डाल दिया ताकि पक जाय । जब चावल पकते हुए ऊपरको उठे और मुकुलावस्था (कोमलावस्था) चुर जानेकी दशाको प्राप्त हुए' तब उसने अग्निको मन्द करके चावलकी हड़ियापर ढक्कन ढाक करके चावलके माड़को हडियासे पसाकर निकाल दिया । करछुली द्वारा उन चावलोंको नीचे ऊपर चलाकर उस हडियाको अधोमुखी करके रख दिया । और आगको पानीसे शान्त करके (बुझा करके) कोयलेको उनके ग्राहकोंको बेंचवा दिया । "उन कोयलोंके बदले प्राप्त कौड़ियोंको (धात्रीको) देकर उस कन्याने शाक, घृत, दही, तेल, आंवला, इमली आदि चीजें जो द्रव्यसे मिल सकीं उतनी मंगा लीं' ।

(३२) उस वृद्धा द्वारा उपर्युक्त चीजें लायी जानेपर कई तरहके शाक बना दिये । उस रखे हुए अन्नके माड़को जो सरस वालूके नवीन पात्रमें धरा हुआ था, पंखेकी धीमी हवासे ठण्डा कर दिया । उसमें फिर नमक आदि मिलाकर

णसंभारं दत्ताङ्गारधूपवासं च संपाद्य, तदप्यामलकं श्लक्ष्णपिष्टमुत्पलगन्धि कृत्वा धात्रीमुखेन स्नानाय तमचोदयत्। तया च स्नानशुद्धया दत्ततैलामलकः क्रमेण सस्नौ। स्नातः सिक्तमृष्टे कुट्टिमे फलकमारुह्य पाण्डुहरितस्य त्रिभागशेषलूनस्याङ्गणकदलीपलाशस्योपरि दत्तशरावद्वयमार्द्रमभिमृशन्नतिष्ठत्। सा तु तां पेयामेवाग्रे समुपाहरत्। पीत्वा चापनीताध्व-

* बालविबोधिनी *

अग्निमृदुना मन्दसञ्चारितेन। शीतलीकृत्य-अनुष्णीकृत्य तदन्नमण्डमिति शेषः। तथा सलवणसंभार-लवणाद्युपकरणद्रव्यसहितं तथा दत्तः अङ्गारधूपस्य हिङ्ग्वादिधूमस्य वासः सौगन्ध्यं यत्र तत्। तथा सम्पाद्य कृत्वा। तदपि आमलकं यद् द्रव्यविनिमयेनानीतमित्यर्थः। श्लक्ष्णपिष्टं सम्यक्तया पिष्टम्। तथा उत्पलगन्धि पद्मगन्धयुक्तम्। धात्रीमुखेन धात्रीं संप्रेष्य। स्नानाय-स्नानं कर्तुम्। तं शक्तिकुमारम्। अचोदयत् प्रेषितवती। स्नानशुद्धया स्वयं स्नानं कृत्वा तया कन्यया। दत्तेति-दत्तमर्पितं तैलमामलकं च यस्मै तादृशः स शक्तिकुमार इति शेषः। सस्नौ स्नातवान्। सिक्तमृष्टे आदौ सिक्तं जलेनार्द्रीकृतं पश्चात् मृष्टं शोधितं तस्मिन्। कुट्टिमे बद्धभूमौ गृहाभ्यन्तरे इत्यर्थः। फलकं पीठम्। आरुह्य तत्रोपविश्य। पाण्डुहरितस्य-ईषत्पक्वस्य। त्रिभागेति-त्रयो भागा अंशाः शेषा अवशिष्टा यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा लूनस्य च्छिन्नस्य। अङ्गणेति-अंगणे गृहचत्वरे या कदली रम्भावृक्षः तस्याः पलाशस्य पत्रस्य। आर्द्रं जलक्षालितम्। दत्ते

* बालक्रीडा *

हींग जीरे आदिसे बघार दिया। उस आवले आदिको भी पीसकर कमल की सुगन्धिसे परिपूर्ण कर दिया। और इन चीजोंके तैयार हो जानेपर उस कन्याने अपनी धात्रीके मुखसे उस अतिथिको स्नान करनेके लिये कहला दिया। उस कन्याने स्वयं भी स्नान करके उस अतिथिको तेल, आवला आदि अर्पित किया जिन्हें उसनें देहमें मर्दन करके स्नान किया। स्नान करके उसने अपनी देह पोंछकर घरके भीतर प्रवेश किया। वहांपर उसे उसने काष्ठासन (पीढ़ा) पर बैठाया। फिर आगनमें उत्पन्न हुए पके केले पत्तोंके तीन भागोंको तोड़ लायी अर्थात् पत्तेका एक चौथाई भाग छोड़ दिया। उन पत्तोंके ऊपर जल छिड़क उसने उन

क्रमः प्रहृष्टः प्रक्लिन्नसकलगात्रः स्थितोऽभूत् । ततस्तस्य शाल्योदनस्य द-र्वीद्वयं दत्त्वा सर्पिर्मात्रां सूपमुपदंशं चोपजहार ।

(३३) इमं च दध्ना च त्रिजातकावचूर्णितेन सुरभिशीतलाभ्यां च कालशेयकाञ्जिकाभ्यां शेषमन्नमभोजयत् । सशेष एवान्धस्यसावतृप्यत् ।

* बालविबोधिनी *

भोजनार्थमर्पितं यत् शरावद्वयं तदभिमृशन् हस्तेन स्पृशन् । सा कन्या । पेयां ससिक्थां मण्डमित्यर्थः । पेया सिक्थसमन्वितेति वैद्यकशास्त्रम् । अग्रे आदौ । समुपाहरत् परिवेशितवती । अपनीताध्वक्लमः–दूरीकृतमार्गश्रमः । प्रहृष्टः पानेन तुष्टः । प्रक्लिन्नसकलगात्रः–उष्णमण्डपानात् स्वेदव्याप्तनिखिलावयवः । तस्य पूर्वयाचितस्य । शाल्योदनस्य तण्डुलभक्तस्य । दर्वीद्वयं दर्वीद्वयपरिमाणम् । सर्पिर्मात्रां स्वल्पं घृतम् । सूपं पक्वद्विदलम् । उपदंशं व्यञ्जनम् शाकादीति यावत् । उपजहार–अर्पितवती ।

(३३) इमं शक्तिकुमारम् । त्रिजातकेति–त्रिजातकं सुगन्धिद्रव्यविशेषः– त्रिकटु वा तेनावचूर्णितमालोडितं तेन तादृशेन दध्ना । सुरभिशीतलाभ्यां सुग-न्धिभ्यां मनुष्णाभ्यां च । कालशेयं तक्रं काञ्जिकाम्लद्रव्यविशेषः–ताभ्याम् । शेषमवशिष्टम् । सशेषे किञ्चिदवशिष्टे । अन्धसि अन्ने । असौ शक्तिकुमारः ।

* बालक्रीडा *

मिट्टीके पात्रोंमें रखे हुए माड़को हाथसे स्पर्शित करते हुए परोसना आरम्भ किया और परोसकर उस पेय पदार्थ (माड़) को अतिथिके आगे धर दिया [वैद्यकके अनुसार पेय पदार्थ कुछ उष्ण होना चाहिये ।] उस माड़को पीनेसे अतिथिका सारा मार्ग श्रम दूर हो गया और उसके शरीरके सारे अवयव रोमांचित हो गये चित्त प्रफुल्लित हो गया । तदनन्तर उसने उस अतिथिको पके चावलोंको दो कलछुल पत्तेपर परोस दिया । एवं थोड़ा घी, दाल, शाकादि भी उसे परोस दिया ।

(३३) इस रीतिसे उस कन्याने उस अतिथिको, त्रिकटु अथवा त्रिजात-की सुगन्धियुक्त पदार्थ, दही, सुगन्धित और शीतल काञ्जी (एक पीनेवाली वस्तु) तथा मट्ठा, परोसा जिससे उस अतिथिने खूब भोजन किया । वह अतिथि इन उपकरणोंसे–पदार्थोंसे–इतना प्रसन्न हुआ कि, उसने पेटभर खाकर भी कुछ

अयाचत च पानीयम्। अथ नवभृङ्गारसंभृतागुरुधूपधूपितमभिनवपाटला-कुसुमवासितमुत्फुल्लोत्पलग्रथितसौरभं वारि नालीधारात्मना पातयांबभूव सोऽपि मुखोपहितशरावेण हिमशिशिरकणकरालितारुणायमानाक्षिपक्ष्मा धारारवाभिनन्दितश्रवणः स्पर्शसुखोद्भिन्नरोमाञ्चकर्कशकपोलः परिमलप्रवालोत्पीडफुल्लघ्राणरन्ध्रो माधुर्यप्रकर्षावर्जितरसनेन्द्रियस्तदच्छं पानीयमाकण्ठं पपौ।

* बालविबोधिनी *

अतृप्यत् तृप्तोऽभवत्। नवभृङ्गारेति–नवे नूतने भृङ्गारे जलपात्रविशेषे सम्भृतं पूरितं तथा अगुरुधूपेन गन्धद्रव्यविशेषेण धूपितं सुगन्धीकृतं अभिनवैः प्रत्यग्रविकसितैः पाटलाकुसुमैर्वासितं सुरभीकृतं तथा उत्फुल्लैर्विकसितैरुत्पलैः ग्रथितं सम्पादितं सौरभं सौगन्ध्यं यस्य तत्। वारि विशेषणमेतत्। भृङ्गारस्य जलनिर्गमनमार्गो नाली तस्या धारात्मना धारारूपेण। पातयाम्बभूव निःक्षिप्तवती। सोऽपि शक्तिकुमारोऽपि। मुखेति–मुखे स्ववदने उपहितो लग्नो यः शरावस्तेन। मुखलग्नशरावे जलं पातितवतीत्यर्थः। हिमशिशिरेत्यादि–हिमवत् तुषारवत् शिशिरैः शीतलैः कणैर्जलबिन्दुभिः करालितानि व्याप्तानि अरुणायमानानि रक्तीभूतानि अक्षिपक्ष्माणि नेत्ररोमाणि यस्य तादृशस्तथा धारारवेण जलपतनशब्देन अभिनन्दिते मुदिते श्रवणे कर्णौ यस्य तादृशस्तथा जलस्पर्शसुखेन उद्भिन्नैः प्रादुर्भूतैः रोमाञ्चैः रोमविकारैः कर्कशौ अमसृणौ कपोलौ गण्डौ यस्य तथाभूतस्तथा परिमलस्य सौरभस्य यः प्रवालोत्पीडः लक्षणया विस्तारस्तेन फुल्ले विकसिते आमोदिते इत्यर्थः घ्राणरन्ध्रे नासाविवरे यस्य तादृशस्तथा माधुर्यस्य भोग्यस्वादस्य प्रकर्षेणाधिक्येन आवर्जितं वशीभूतं रसनेन्द्रियं जिह्वा यस्य तादृशः शक्तिकुमारः। अच्छं निर्मलम्। आकण्ठं कण्ठं यावत्।

* बालक्रीडा *

थोड़ा अन्न छोड़ दिया—अर्थात् उसको उतने प्रस्थ परिमाण चावलोंसे खूब तृप्ति हो गयी। तदः उस अतिथिने पानी मांगा। तब उसने अगुरु और पाटल कुसुमों से सुवासित शीतल जल नये घड़ेसे निकालकर करोआकी टोंटीसे देना शुरू किया। वह अतिथि अपने मुंहमें मिट्टीके वर्तनको लगाकर पानी पीने लगा और वह कन्या उस पात्रमें करोआसे पानी ढालने लगी। तदनन्तर जलके शीतल स्पर्श सुखके अनुभवसे रोमाञ्चित होकर उसके कपोल प्रदेश कर्कश हो गये। नासिकाके

(३४) शिरःकम्पसंज्ञावारिता च पुनरपरकरकेणाचमनमदत्त कन्या। वृद्धया तु तदुच्छिष्टमपोह्य हरितगोमयोपलिप्ते कुट्टिमे स्वमेवोत्तरीयकर्पटं व्यवधाय क्षणमशेत । परितुष्टश्च विधिवदुपयम्य कन्यां निन्ये । नीत्वैतदनपेक्षः कामपि गणिकामवरोधमकरोत् । तामप्यसौ प्रियसखीमिवोपाचरत् । पतिं च दैवतमिव मुक्ततन्द्रा पर्यचरत् । गृहकार्याणि चाहीनमन्व-

* बालविबोधिनी *

(३४) शिरः कम्पेति- शिरसः कम्पेन धूननेन या संज्ञा सङ्केतस्तया वारिता निषिद्धा कन्या अपरकरकेण अन्यभृङ्गारेण आचमनं मुखप्रक्षालनार्थं जलम् । वृद्धया धात्र्या । अपोह्य दूरीकृत्य । हरितगोमयोपलिप्ते प्रत्यग्रगोमयसंमृष्टे । स्वमेव- स्वकीयमेव । उत्तरीयकर्पटं उत्तरीयवस्त्रम् । व्यवधाय आस्तीर्य । अशेत निद्रां कृतवान् । विधिवत्-स्वजात्युक्तविधिना । उपयम्य परिणीय । निन्ये स्वगृहं नीतवान् । एतदनपेक्षः एतस्यां कन्यायामनपेक्षः अपेक्षारहित-एतामनादृत्येत्यर्थः । गणिकां वेश्याम् । अवरोधं पत्नीम् । तां गणिकाम् । असौ कन्या । प्रियसखीमिव-स्वसहचर्या तुल्यम् । उपाचरत्-व्यवहृतवती । दैवतमिव देवतावत् । मुक्ततन्द्रा-आलस्यरहिता । पर्यचरत् असेवत । अहीनं सुचारु सम्यगिति यावत् । अन्वतिष्ठत् सम्पादयामास । दाक्षिण्यं परच्छन्दानुवर्तनं तस्यनिधिराधारः-दाक्षिण्य

* बालक्रीडा *

छेद भी सुवासित पदार्थके संसर्गसे प्रमुदित हो उठे । शीतल जलके माधुर्याधिक्यसे जिह्वा तृप्त हो गयी । इस प्रकारके सुवासित स्वच्छ और शीतल जलको उस अतिथिने कण्ठतक पी लिया ।

(३४) जब उस अतिथिने, जो अपने मुखमें मिट्टीके पात्रको लगाकर जल पी रहा था और कन्या उस पात्रमें जल गिरा रही थी, अपने शिरको हिलाकर उसे रोका, तब उस कन्याने दूसरे हाथसे दूसरे बरतनसे उसे हाथ धोनेको जल दिया । उसकी धात्रीने उसकी जूठनको हटाकर वहांपरकी पृथिवीको हरे गोबरसे लीप दिया । फिर उस अतिथिने अपने उत्तरीय (दुपट्टे) को बिछा दिया और कुछ देरतक सो गया । इस रीतिकी अतिथि-सेवापर मुग्ध होकर मैंने उस कन्याके साथ यथाशास्त्र विवाह किया और उसको अपने साथ ले आया । ले आनेके पश्चात उस कन्याकी उपेक्षा करके उस शक्तिकुमारने एक वेश्याको पत्नीरूपमें लाकर

विष्टन् । परिजन दाक्षिण्यनिधिरात्माधीनमकरोत् । तद्गुणवशीकृतश्च भर्ता सर्वमेव कुटुम्बं तदायत्तमेव कृत्वा तदेकाधीनजीवितशरीरस्त्रिवर्गं निर्विवेश । तद्ब्रवीमि—'गृहिणः प्रियहिताय दारगुणाः' इति ।

(३५) ततस्तेनानुयुक्तो निम्बवतीवृत्तमाख्यातवान्—'अस्ति सौराष्ट्रेषु वलभी नाम नगरी । तस्यां गृहगुप्तनाम्नो गुह्यकेन्द्रतुल्यविभवस्य ना-

* बालविबोधिनी *

परायणयोरयर्थः । आत्माधीन स्ववशीभूतम् । तद्गुणेति-तस्या गुणेन वशीकृत आयत्तीकृत । कुटुम्ब परिवारम् । तदायत्तं तस्या अधीनम् । तदेकेति-तस्या एकस्या अधीनमायत्तं जीवितं प्राणा शरीरञ्च यस्य तादृशः । त्रिवर्गं धर्मार्थकामान् । निर्विवेश बुभुजे । तद् तस्मात् । ब्रवीमि कथयामि । गृहिणो गृहस्थस्य । प्रियहिताय प्रियं हितञ्च कर्तुम् । दारगुणाः पत्नीगुणा इति ।

(३५) ततः गोमिनी वृत्तान्तश्रवणानन्तरम् । तेन ब्रह्मराक्षसेन । अनुयुक्तः पृष्टः । आख्यातवान् अहमिति शेषः । तस्यां वलभ्याम् । गुह्यकेति-गुह्यकानां यक्षाणामिन्द्रो राजा कुबेर स्तेन तुल्यो विभवो धनं यस्य तादृशस्य । नाविकपतेः

* बालक्रीडा *

अपने घरमें बैठा दिया । उस वेश्याके साथ भी उस कन्याने अपनी प्रिय सखीके समान सद्व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया । पतिको (इतने अपराधपर भी) अपने देवताके तुल्य आलस्यहीना होकर सेवा करती थी । घरेलू धन्धोंको सुचारुरूपेण किया करती थी । दाक्षिण्यपरायणा होकर सभी परिजनोंको वशमें कर लिया । उस पतिपरायणाके गुणोंपर मुग्ध होकर उसके पतिने सम्पूर्ण कुटुम्बका भार उसे सौंप दिया और उसीके अधीन स्वयं भी होकर धर्म, अर्थ, काम सुखों को भोगने लगा । अतः कहता हूं कि, "गृहस्थोंके प्रियको गुणवती स्त्री कर सकती है ।"

(३५) इसके पश्चात् उस ब्रह्मराक्षस द्वारा पूछे जानेपर मैंने निम्बवतीके चरितको सुनाना प्रारम्भ किया—"सौराष्ट्र प्रदेशमें वलभी नामकी एक पुरी है । इस पुरीमें राजराज कुबेरके समान धनवान जहाजके व्यापारियोंका एक मुखिया रहता था । जिसकी एक रत्नवती नामकी पुत्री थी । उस कन्याके साथ, मधुमती

विक्रपतेर्दुहिता रत्नवती नाम। तां किल मधुमत्याः समुपागम्य बलभद्रो नाम सार्थवाहपुत्रः पर्यणैषीत्। तयापि नववध्वा रहसि रभसविघ्नितसुरतसुखो झटिति द्वेषमल्पेतरं बबन्ध। न तां पुनर्द्रष्टुमिष्टवान्। तद्गृहागमनमपि सुहृद्वाक्यशतातिवर्ती लज्जया परिजहार। तां च दुर्भगां तदाप्रभृत्येव 'नेयं रत्नवती, निम्बवती चेयम्' इति स्वजनः परजनश्च परिबभूव।

(३६) गते च कस्मिंश्चित्कालान्तरे सा त्वनुतप्यमाना 'का मे गतिः'

* बालविबोधिनी *

पोतवणिजामधिपतेः। तां रत्नवतीम्। मधुमत्याः तदाख्यनगरात्। सार्थवाह पुत्रः वणिक् तनयः। पर्यणैषीत् ऊढवान्। तया पूर्वोक्तया। नववध्वा नवोढया। रभसेति–रभसेन वेगेन बलात्कारेणेति यावत् विघ्नितं व्याहतं सुरतसुखं यस्य सः। मुग्धा सा बलात्कारेण रन्तुं नानुमोदितवतीति भावः। अल्पेतरं अत्यधिकम्। बबन्ध दधार। तद्गृहागमनं रत्नवतीगेहगमनम्। सुहृद्वाक्येति–सुहृदां मित्राणां वाक्यशतमतिवर्त्तते अतिक्रामतीति तथा। सुहृद्वाक्यमशृण्वन्नित्यर्थः। परिजहार तत्याज। दुर्भगां दौर्भाग्यवतीं भर्त्तुरप्रियामित्यर्थः। तदा प्रभृति–तद्दिनादारभ्य। स्वजनः आत्मीयवर्गः परिबभूव तिरश्चकार।

(३६) सा निम्बवती। अनुतप्यमाना अनुतापं भजन्ती। विमृशन्ती विचा-

* बालक्रीडा *

नामकी नगरीसे आये हुए एक बलभद्र नामक वैश्यपुत्रने विवाह कर लिया उस नव विवाहिता स्त्रीके साथ एकान्तमें जब वह बलभद्र रतिक्रीड़ा करने चला, तो, नवीना होनेसे उसने रतिक्रीडामें कुछ विघ्न किया। उस अल्प अपराधने बृहद् रूप धारण कर लिया। यहांतक कि, वह वैश्यपुत्र बलभद्र उस रत्नवतीको देखना भी नहीं पसन्द करता था। उस वैश्यपुत्रने उस रत्नवती के घरपर आना जाना भी छोड़ दिया और मित्रोंके सैकड़ो बार समझानेपर भी धृष्टतासे उनकी बातें भी न सुनता था। फिर उस मन्दभाग्या रत्नवतीको परिजन और स्वजन सभी घृणाकी दृष्टिसे देखने लगे और कहते थे कि, "यह रत्नवती नहीं अपितु, निम्बवती है।"

(३६) कुछ समय बीतनेके पश्चात् वह रत्नवती अफसोच करती हुई कि

इति विमृशन्ती कामपि वृद्धप्रव्राजिकां मातृस्थानीयां देवशेषकुसुमैरुपस्थितामपश्यत्। तस्याः पुरो रहसि सकरुणं रुरोद। तयाप्यश्रुमुख्या बहुप्रकारमनुनीय रुदितकारणं पृष्टा त्रपमाणापि कार्यगौरवात्कथंचिदब्रवीत्- 'अम्ब, किं ब्रवीमि, दौर्भाग्यं नाम जीवन्मरणमेवाङ्गनानाम्, विशेषतश्च कुलवधूनाम्। तस्याहमस्म्युदाहरणभूता। मातृप्रमुखोऽपि ज्ञातिवर्गो माम

* बालविबोधिनी *

रयन्ती। मातृस्थानीयां मातृतुल्याम्। वृद्धप्रव्राजिकां स्थविरसन्यासिनीम्। देवशेषकुसुमैः निर्माल्यपुष्पैरुपलक्षिताम्। उपस्थितां तत्रागताम्। तस्याः वृद्धप्रव्राजिकायाः। पुरः अग्रे। रुरोद विललाप। तया प्रव्राजिकया। अश्रुमुख्या बाष्पपूर्णवदनया। अनुनीय सान्त्वयित्वा। रुदितकारणं रोदनहेतुम्। पृष्टा सा निम्बवती। त्रपमाणा लज्जावती। कार्यगौरवात् स्वप्रयोजनस्यावश्यवक्तव्यत्वात्। कथञ्चित् केनापि प्रकारेण। जीवन्मरणं मृत्युतुल्यम्। तस्य दौर्भाग्यस्य। उदाहरणभूता दृष्टान्तस्वरूपा। मातृप्रमुखः जनन्यादिः। अवज्ञयैव अनादरेणैव। यदा जनन्यपि मामुपेक्षते तदा का कथाऽन्येषामिति भावः। तेन ज्ञातृवर्गेण स्वभर्त्रा वा। सुदृष्टा सौमनस्येनावलोकिताम्। यथाहं पत्युर्ज्ञातृवर्गस्य च वल्लभा भवेयं तथा विधेहीति भावः न चेत् -अन्यथा। यदि तथा न करिष्यसीत्यर्थः। त्यजेयं त्यक्ष्यामि। निष्प्रयोजनान् अकिञ्चित्करान्। आविरामात्—यावत्कालपर्यन्तं मे विरामः प्राण-

* बालक्रीडा *

"अब मेरी क्या दशा होगी" ऐसा विचार करती हुई एक वृद्धा संन्यासिनीसे मिली जो देवताओंके चढे फूलोंको लिये हुए वहांपर आयी थी। उस संन्यासिनीके आगे यह रत्नवती करुणस्वरसे विलाप करने लगी उस रोती हुई संन्यासिनीने उसे बहुत तरहसे समझाकर रोनेका कारण पूछा। लज्जान्वित होकर उस रत्नवतीने आवश्यक बात समझकर उस संन्यासिनीसे कहा—"हे मातः! क्या कहूं, महिलाओंको दुर्भाग्यसे रहना जीतेजी मरनेके तुल्य है। प्रधानतः कुलवतियोंके लिये तो और ज्यादा। उन्हीं कुलवतियोंके उदाहरणमें मैं एक हूं। माता आदि प्रमुख जन तथा जातिके लोग मेरा तिरस्कार करते हैं। अतः अपनी कृपादृष्टि मुझपर डालें, अन्यथा, मैं इन निष्फल प्राणोंको त्याग

वञ्चयैव पश्यति । तेन सुहृष्टां मां कुरु । न चेत्त्यजेयमद्यैव निष्प्रयोजनान्प्राणान् । आविरामाच्च मे रहस्यं न श्राव्यम्' इति पादयोः पपात ।

(३७) सैनामुत्थाप्योद्बाष्पोवाच—'वत्से मा ध्यवस्यः साहसम् । इयमस्मि त्वन्निदेशवर्तिनी । यावति मयोपयोगस्तावति भवाम्यनन्याधीना । यद्येवासि निर्विण्णा तपश्चर त्वं मदधिष्ठिता पारलौकिकाय कल्याणाय । नन्वयमुदर्कः प्राक्तनस्य दुष्कृतस्य, यदनेनाकारेणेदृशेन शीलेन

* बालविबोधिनी *

त्यागो न भवेत्तावत् । रहस्यं गोप्यम् । न श्राव्यं न कस्यापि पुरतः श्रावणीयं न कथनीयमिति यावत् । पादयोः प्रव्राजिकायाश्चरणयोः ।

(३७) सा प्रव्राजिका । एनां निम्नवतीम् । उद्बाष्पा उद्गताश्रुः । मा अध्यवस्यः मा कार्षीः । अधि-अव पूर्वक सो धातोर्लङ्रूपमड़ागमाभावश्च मा योगात् । साहसं प्राणत्यागरूपं साहसकर्म । इयम्—अहम् । त्वन्निदेशवर्त्तिनी—तवाज्ञाकारिणी । यत्त्वं वदिष्यसि तदेव करिष्यामीत्यर्थः । यावति यत्पर्यन्ते प्रयोजने इति शेषः । मयोपयोगः—मदुपयोगित्वम् । तावति-तत्पर्यन्ते । अनन्याधीना—अन्यस्याधीना न भवतीति तथा । त्वन्मात्राधीनेति भावः । निर्विण्णा-विरागवती । तप श्चर तपस्यां कुरु । मदधिष्ठिता—मयोपदिष्टा । पारलौकिकाय—परलोके भवं पारलौकिकं तस्मै । कल्याणाय मङ्गलार्थम् । अयं एतादृशः । उदर्कः परिणामः । प्राक्तनस्य—पूर्वजन्मकृतस्य । दुष्कृतस्य पापस्य । अनेन—एतादृशेन । आकारेण

* बालक्रीडा *

दूंगी । मैं मरनेतक अपने और रहस्य (गुप्त) बातोंको न सुनाऊंगी ।" ऐसा वह संन्यासिनीके पैरों पड़ गयी ।

(३७) उस संन्यासिनीने उसे उठाकर अपनी आखोंमें आंसू भरकर कहा—हे पुत्रि ! ऐसा आत्महत्यारूपी साहसका कार्य मत करो । यह मैं तुम्हारी आज्ञाकारिणी हूँ । जबतक तुम्हारा कार्य मेरे द्वारा हो सकेगा तबतक मैं तुम्हारे अधीन ही हूं । यदि तुम्हें विराग ही उत्पन्न हो गया है, तो तुम परलोकके कल्याणप्राप्त्यर्थ मेरे साथ मेरे कथनानुसार तप करो । निश्चय ही यह तुम्हारे प्राचीन पापोंके फल हैं कि, इतनी सुन्दर आकृति, अच्छा स्वभाव-

जात्या चैवंभूतया समनुगता सती अकस्मादेव भर्तुर्द्वेष्यतां गतासि। यदि कश्चिदस्त्युपायः पतिद्रोहप्रतिक्रियायै दर्शयामुम्, मतिर्हि ते पटीयसी' इति

(३८) अथासौ कथंचित्क्षणमधोमुखी ध्यात्वा दीर्घोष्णश्वासपूर्वमवोचत्—'भगवति, पतिरेकदैवतं वनितानाम्, विशेषतः कुलजानाम्। अतस्तच्छुश्रूषणाभ्युपायहेतुभूतं किंचिदाचरणीयम्। अस्त्यस्मत्प्रातिवेश्यो वणिगभिजनेन विभवेन राजान्तरङ्गभावेन च सर्वपौरानतीत्य वर्तते।

* बालविबोधिनी *

स्वरूपेण। शीलेन स्वभावेन। जात्या वंशेन। समनुगता युक्ता। भर्तुर्द्वेष्यता पत्युरप्रियताम्। पतिद्रोहप्रतिक्रियायै भर्तृद्वेष्यता दूरीकरणाय। अमुम् उपायम्। मतिर्बुद्धिः। पटीयसी-अतिनिपुणा।

(३८) असौ रत्नवती। दीर्घोष्णश्वासपूर्वं-दीर्घमुष्णञ्च निःश्वस्य। एकदैवतं एकमात्रदेवता। वनितानां स्त्रीणाम्। कुलजाना सत्कुलोत्पन्नानाम्। तच्छुश्रूषणेति-तस्य पत्युः शुश्रूषणस्य सेवनस्य यः अभ्युपायस्तस्य हेतुभूतं कारणभूतम् येन मे पतिशुश्रूषा भवेदिति भावः। आचरणीयं विधातव्यम् त्वयेति शेषः। अस्मत्प्रातिवेश्यः अस्माकं प्रतिवेशी। अभिजनेन वंशेन। विभवेन धनेन। राजान्तरङ्गभावेन-राजवल्लभतया अतीत्य-अतिक्रम्य तस्य प्रतिवेशिनः। मत्समानेति-मया समानं तुल्यं रूपं सौन्दर्यमवयवमङ्गञ्च यस्याः सा। अतिस्निग्धा अति-

* बालक्रीडा *

अच्छी जाति प्राप्त करके भी पतिकी सहसा अप्रिया हो गयी हो। यदि पतिके द्रोहको दूर करनेका कोई यत्न होवे तो, मुझसे कहो, क्योंकि तुम्हारी बुद्धि प्रखर है।

(३८) तत्पश्चात् रत्नवती कुछ देरतक नीचे मुंह करके विचार करने लगी और फिर लम्बी और गरम सांस खींचकर बोली—'हे भगवति ! स्त्रियोंको केवल एक पतिही परमेश्वर है। प्रधानतः कुलवतियोंके अधिकरूपेण। अतः ऐसा कोई उपाय करना चाहिये जिससे मेरे पतिकी मुझसे सेवा हो सके। एक वैश्य मेरा पड़ोसी है जो वंशसे धनसे और राजाके पार्श्ववर्ती होनेसे सभी नगर वासियोंसे बढ़ चढ़कर है। उस वैश्यकी एक पुत्री कनकवती नामकी है जो मेरे

तस्य कन्या कनकवती नाम मत्समानरूपावयवा ममातिस्निग्धा सखी । तया सह तद्विमानहर्म्यतले ततोऽपि द्विगुणमण्डिता विहरिष्यामि । त्वया तु तन्मातृप्रार्थनं सकरुणमभिधाय मत्पतिरेतद्गृहं कथंचनानेयः । समीपगते च युष्मासु क्रीडामत्ता नाम कन्दुकं भ्रंशयेयम् । अथ तमादाय तस्य हस्ते दत्त्वा वक्ष्यसि—'पुत्र, तवेयं भार्यासखी निधिपतिदत्तस्य सर्वश्रेष्ठिमुख्यस्य कन्या कनकवती नाम । त्वामियमनवस्थो निष्करुणश्चेति रत्नवतीनिमित्तमत्यर्थं निन्दति । तदेष कन्दुको विपक्षधनं प्रत्यर्पणीयम्' इति

* बालविबोधिनी *

श्रयस्नेहशालिनी । तया कनकवत्या । तद्विमानहर्म्यतले तस्याः सौधकुट्टिमे । ततोऽपि कनकवत्यपेक्षयापि । द्विगुणमण्डिता-समधिकविभूषिता । त्वया-परिव्राजिकया । तन्मातृप्रार्थनं तस्याः कनकवत्या मातुर्जनन्याः प्रार्थनं याचनम् । कनकवत्या जननी त्वां द्रष्टुमिच्छतीति सकरुणमभिधाय तमुक्त्वा । एतद्गृहं कनकवतीगेहम् । कथंचन-येन केनापि प्रकारेण । आनेयः आनेतव्यः । समीपगते निकटवर्तिनि मत्पत्याविति शेषः । युष्मासु युष्माकमुपरि । क्रीडामत्तानाम-क्रीडोन्मादिनीवं भूत्वा । भ्रंशयेयं पातयिष्यामि । तं कन्दुकम् । तस्य मत्पत्युर्बलभद्रस्य । इयं कनकवती । अनवस्थः अव्यवस्थः चंचलमतिरित्यर्थः । तत्तस्मात् । विपक्षधनं विरोधिजनद्रव्यम् । स बलभद्रः । तथा तेन प्रकारेण कथितः । नियत-

* बालक्रीडा *

अनुरूप अंगवाली है तथा मेरी घनिष्ठ सहचरी भी है । उसके साथ गगनचुम्बी गृहकी छतपर उससे द्विगुणित सजकर विहार करूंगी । आप उसकी (कनकवती की) मातासे करुणापूर्वक प्रार्थना करके मेरे पतिको (कनकवतीकी माता तुम्हें देखना चाहती हैं) किसी प्रकार उस मेरी सखीके घरपर ले आना । जब आप लोग कनकवतीके गृहके समीप आ जायंगी तब मैं आप लोगोंके ऊपर क्रीडोन्मत्ताके समान गेंद फेंक दूंगी (गिरा दूंगी)। आप उस गेंदको लेकर मेरे पतिके हाथमें देकर कहियेगा—"हे पुत्र ! सब वणिकोंमें श्रेष्ठ निधिपति नामक सेठकी पुत्री यह कनकवती तुम्हारी पत्नीकी सखी है । यह कनकवती, निष्करुण, चंचल स्वभाववाले होनेके कारण तुम्हारी रत्नवतीके प्रेमके बहाने बड़ी निन्दा करती है । अतः इस विपक्षीधनको (गेंदको)

स तथोक्तो नियतमुन्मुखीभूय तामेव प्रियसखीं मन्यमानो मां बद्धाञ्जलि याचमानायै मह्य भूयस्त्वत्प्रार्थितः साभिलाषमर्पयिष्यति। 'तेन रन्ध्रेणोपश्लिष्य रागमुज्ज्वलीकृत्य यथासौ कृतसंकेतो देशान्तरमादाय मा गमिष्यति तथोपपादनीयम्' इति।

(३९) हर्षाभ्युपेतया चानया तथैव संपादितम्। अथैतां कनकवतीति वृद्धतापसीविप्रलब्धो बलभद्रः सरत्नसाराभरणामादाय निशि नीर

* बालविबोधिनी *

मवश्यम्। उन्मुखीभूय ऊर्ध्वंमुखो भूत्वा। मा तामेव प्रियसखीं कनकवतीं मन्यमानः जानन्। याचमानायै कन्दुकं प्रार्थयमानायै। भूयः पुनरपि। त्वत्प्रार्थितः त्वया याचितः। साभिलाषं सस्पृहम्। रन्ध्रेण व्याजेन। उपश्लिष्य आलिङ्ग्य। रागमनुरागम्। उज्ज्वलीकृत्य-वर्धयित्वा। असौ बलभद्रः। कृतसङ्केतः-दत्तेङ्गितः। उपपादनीयं विधेयम्।

(३९) हर्षेति-हर्षेणानन्देन अभ्युपेतया तथाकर्त्तुं स्वीकृतया। अनया प्रभाजिकया। एतां रत्नवतीं कनकवतीति कृत्वा वृद्धतापसीविप्रलब्धः वृद्धप्रव्राजिकाप्रतारितः। सरत्नसाराभरणाम्-रत्नालङ्काराद्युत्कृष्टधनसहिताम्। नीरन्ध्रे तमसि-गाढान्धकारे। प्रावसत्-देशान्तरमगच्छत्। वार्तामापादयत्-वक्ष्यमाणरूपां

* बालक्रीडा *

उसे वापस कर दीजिये।" इस प्रकारसे कथन करनेपर वह अवश्य ऊपरकी ओर मुख करके मुझे कनकवती समझकर देखेगा। तब मैं बद्धाञ्जलि होकर उससे गेंद फेरनेकी प्रार्थना करूंगी और आप भी उससे गेंद फेरनेको कहेंगी ही तो वह सस्पृह होकर मुझे गेंद दे देगा। फिर मैं उसका व्याज (कपट) के साथ आलिंगन करूंगी एवं प्रेमको बढ़ाकर उसे देशान्तर चलनेके लिए संकेत करूंगी तथा जिस रीतिसे वह मुझे लेकर अन्य देशमें भाग चले ऐसे प्रयत्नोंको करूंगी।

(३९) आनन्दके साथ उस सन्यासिनी द्वारा वह कार्य मेरे कथनानुसार सम्पादित कर दिया गया। तदनन्तर सन्यासिनी द्वारा वञ्चित होकर वह बलभद्र रत्नवतीको ही कनकवती समझकर मणि, सुवर्ण आदिसे युक्त होकर गाढ़ान्धकारवाली आधी रातमें वहासे अन्य देशको चला गया। उस संन्यासिनी द्वारा

न्धे तमसि प्रावसत् । सा तु तापसी वार्तामापादयत्—'मन्देन मया नि-र्निमित्तमुपेक्षिता रत्नवती, श्वशुरौ च परिभूतौ, सुहृदश्चातिवर्तिताः । तद-त्रैव संसृष्टो जीवितुं जिह्रेमीति बलभद्रः पूर्वेद्युर्मामकथयत् । नूनमसौ तेन नीता व्यक्तिश्चाचिराद्भविष्यति' इति । तच्छ्रुत्वा तद्बान्धवास्तदन्वेषणं प्रति शिथिलयत्नास्तस्थुः । रत्नवती तु मार्गे कांचित्पण्यदासीं संगृह्य तयोह्य-मानपाथेयाद्युपस्करा खेटकपुरमगमत् ॥

* बालविबोधिनी *

कथां प्राचारयत् । कीदृशी मित्याह-इत्यन्तेन । मन्देन मूढेन । मया-बलभद्रेण । निर्निमित्तं निष्कारणम् । उपेक्षिता त्यक्ता । श्वशुरौ-श्वश्रूश्च श्वशुरश्चेत्येकशेषः । परिभूतौ तिरस्कृतौ । अवमानिताविति यावत् । अतिवर्त्तिताः अतिक्रान्ताः तेषां वचनमपि मयोपेक्षितमिति भावः । अत्रैव अस्मिन्नेव नगरे । संसृष्टः श्वशुरा-दिभिः सङ्गतः । जिह्रेमि लज्जे । पूर्वेद्युः गतदिवसे । मां वृद्धतापसीमित्यर्थः । नूनं निश्चितम् । असौ रत्नवती । तेन बलभद्रेण । नीता देशान्तरमिति शेषः । व्यक्तिः प्रकाशः एतद्वृत्तान्त प्रकटनमिति यावत् । अचिरात् शीघ्रम् । इत्यन्ता वार्त्ता तापस्या प्रचारिता । तद्बान्धवाः रत्नवत्याः पित्रादयः । तदन्वेषणं प्रति-रत्नवत्याः अनुसन्धानविषये । शिथिलयत्नाः मन्दचेष्टाः । पण्यदासीं पण्यंगृहीत्व या दासी भवति सा ताम् । तया दास्या । उह्यमानेति-उह्यमानः नीयमानः पाथे-याद्युपस्करो भोजनादिसामग्री यस्याः सा । खेटकपुरं तन्नामकनगरम् ।

* बालक्रीडा *

लोगोंमें बात प्रचारित हुई कि "उस बलभद्रने कल मुझसे कहा—'हे अम्ब ! निष्कारणही मुझ मूर्खजनके द्वारा रत्नवती उपेक्षिता हुई । श्वशुर सास आदि भी तिरस्कृत हुए मित्रोंकी भी सम्मतियां न मानीं । अतः अब यहां इन लोगोंके संग मुझे रहनेमें लज्जा आती है ।" इस कारणसे वही बलभद्र अपनी स्त्री रत्नवतीके साथ लेकर परदेश चला गया है । यह बात शीघ्र ही प्रकाशित भी हो जायगी । इसमें सन्देह नहीं है । ऐसी बातें सुनकर रत्नवतीके पिता आदि उसके अन्वेषण करनेमें ढिलाई करने लगे । रत्नवतीने मार्गमें एक नौकरानीको द्रव्यसे खरीद लिया और उसीसे अपने भोजन आदिकी वस्तुको ढुलवाती हुई खेटकपुर में पहुंची ।

(४०) अमुत्र च व्यवहारकुशलो बलभद्रः स्वल्पेनैव मूलेन महद्धनमुपार्जयत् । पौराग्रगण्यश्चासीत् । परिजनश्च भूयानर्थवशात्समाजगाम । ततस्तां प्रथमदासीम् 'न कर्म करोषि, दृष्टं मुष्णासि, अप्रियं ब्रवीषि' इति परुषमुक्त्वा बह्वताडयत् । चेटी तु प्रसादकालोपाख्यातरहस्यस्य वृत्तान्तैकदेशमात्तरोषा निर्बिभेद । तच्छ्रुत्वा लुब्धेन तु दण्डवाहिना पौरवृद्धसंनिधौ निधिपतिदत्तस्य कन्या कनकवती मोषेणापहृत्यास्मत्पुरे निवसत्येष

*** बालविबोधिनी ***

(४०) अमुत्र खेटकनगरे । व्यवहारकुशलः वाणिज्यनिपुणः । मूलेन मूलधनेन । पौराग्रगण्यः—पौराणां नागरिकाणामग्रगण्यः श्रेष्ठः । परिजनः सेवकादिः । भूयान् बहुसंख्यकः । अर्थवशात् धनप्रभावात् । प्रथमदासीं पण्यक्रीताम् । दृष्टं प्रत्यक्षीभूतं वस्तु । मुष्णासि चोरयसि । परुषं कर्कशवचनम् । अताडयत्—अतर्जयत् । प्रसादेति—प्रसादकाले रत्नवत्याः प्रसन्नता समये आख्यातं कथितं यद्रहस्यं गोप्यं वस्तु तस्य । वृत्तान्तस्य रत्नवती कथितस्य चरितस्यैकदेशं नतु समग्रम् । आत्तरोषा सकोपा । निर्बिभेद प्रकाशितवती । दण्डवाहिना दण्डाधिकारिणा । पौरेति—पौरेषु नागरिकेषु ये वृद्धास्तेषां समीपे । मोषेण चौर्येण ।

*** बालक्रीडा ***

(४०) उस खेटकपुरमें व्यापार कुशल बलभद्रने थोड़े मूलधनसे विशाल सम्पत्ति अर्जित की । उस नगरका प्रधान नागरिक बन गया । धनके कारण उसके बहुतसे नौकर चाकर हो गये । इसके बाद रत्नवतीने खरीदी हुई प्रथम नौकरानीको कठोर कठोर शब्द सुनाने प्रारम्भ किये—"तुम काम नहीं करती हो, प्रत्यक्ष वस्तुको चुरा लेती हो, कटु भाषण करती हो इत्यादि" और ऐसी झिड़कियां देकर उसे कठोर ताड़ना देने लगी । उस नौकरानीने क्रोधके कारण उन सभी गुप्त रहस्योंको प्रकाशित कर दिया जो गुप्त रहस्य अंश मात्रमें रत्नवती द्वारा प्रसन्नताके समय सुनाये गये थे । नौकरानी द्वारा प्रसिद्ध की हुई इन बातोंको जानकर लोभी दण्डविधायकोंने नगरमें बसनेवाले बूढ़ोंसे पूछा कि, "यह बलभद्र दुर्बुद्धिवाला है । निधिपतिकी पुत्री कनकवतीको चुराकर

दुर्मतिर्बलभद्रः । तस्य सर्वस्वहरणं न भवद्भिः प्रतिबन्धनीयम्' इति नितरामभर्त्स्यत ।

(४१) भीतं च बलभद्रमभिजगाद रत्नवती—'न भेतव्यम् । ब्रूहि, नेयं निधिपतिदत्तकन्या कनकवती । वलभ्यामेव गृहगुप्तदुहिता रत्नवती नामेयं दत्ता पितृभ्यां मया च न्यायोढा । न चेत्प्रतीथ प्रणिधिं प्रहिणुतास्या बन्धुपार्श्वम्' इति । बलभद्रस्तु तथोक्त्वा श्रेणीप्रातिभाव्येन तावदवातिष्ठत यावत्तत्पुरलेख्यलब्धवृत्तान्तो गृहगुप्तः खेटकपुरमागत्य सह जामात्रा दुहि

* बालविबोधिनी *

प्रतिबन्धनीयं व्याहन्तव्यम्-मया तस्य सर्वस्वहरणरूपो दण्डो विधास्यते तत्र भवद्भिर्विरुद्धैर्न भवितव्यमित्याशयः । अभर्त्स्यत-अतर्ज्यत बलभद्र इति शेषः ।

(४१) मया बलभद्रेण । न्यायोढा न्यायेन विधिना ऊढा विवाहिता । प्रतीथ-विश्वसिथ यूयमिति शेषः । प्रणिधिं गूढचरम् । प्रहिणुत-प्रेषयत । अस्या रत्नवत्याः । बन्धुपार्श्वं पित्रादेः सकाशम् । तथा-रत्नवत्या यथोक्तं तेन प्रकारेण । श्रेणीप्रातिभाव्येन-श्रेण्याः स्वजातीयवणिग् वर्गस्य प्रतिभूत्वेन प्रतिनिधित्वेनेति यावत् । तत्पुरेति-तत्पुरस्य वलभीनगरस्य लेख्येन पत्रेण लब्धो वृत्तान्तो येन

* बालक्रीडा *

लाया है और इसी खेटकपुरमें रहता है । अतः उसकी सब सम्पत्ति नष्ट होनेमें आप लोग जरा भी प्रतिबन्ध न करें । और ऐसा कहकर उन लोगोंने उसे खूब डरवाया ।

(४१) भयान्वित बलभद्रको देखकर रत्नवतीने कहा—"भय मत करिये, उन दंडविधायकोंके प्रति जाकर कहिये कि, यह निधिपतिदत्तकी पुत्री कनकवती नहीं है । वलभी नगरके गृहगुप्तकी पुत्री रत्नवती नामकी यह महिला है और इसका विवाह इसके माता-पिता आदिने मेरे साथ किया है । यदि आप लोगों को विश्वास नहीं है तो, आप अपने गुप्तचरोंको इसके माता-पिता आदिके समीप भेजकर पूछ तांछ करा लें । इन बातोंपर सहमत होकर दंडाधिकारियोंने उसे अन्य वणिकोंकी जमानतपर उसी नगरमें रहने दिया तथा वलभी नगरसे लिखित वृत्तान्त भी इस विषयमें मंगवाया । सूचना पाकर गृहगुप्त भी खेटकपुरमें

तरमतिप्रीतः प्रत्यनैषीत्। तथा दृष्ट्वा रत्नवतीं कनकवतीति भावयतस्तस्यैव बलभद्रस्यातिवल्लभा जाता। तद्ब्रवीमि-'कामो नाम सङ्कल्पः' इति।

(४२) तदनन्तरमसौ नितम्बवतीवृत्तान्तमप्राक्षीत्। सोऽहमब्रवम्-'अस्ति शूरसेनेषु मथुरा नाम नगरी। तत्र कश्चित्कुलपुत्रः कलासु गणिकासु चातिरक्तः मित्रार्थं स्वभुजमात्रनिर्व्यूढानेककलहः, कलहकण्टक इति कर्कशैरभिख्यापिताख्यः प्रत्यवात्सीत्। स चैकदा कस्यचिदागन्तोश्चित्रक-

* बालविबोधिनी *

सः। प्रत्यनैषीत् स्वगृहं नीतवान्। भावयतः मन्यमानस्य। अतिवल्लभा अतिप्रिया।

(४२) असौ ब्रह्मराक्षसः। सोऽहं-मित्रगुप्तः। शूरसेनेषु तदाख्यदेशेषु। तत्र मथुरायाम्। कुलपुत्रः-सत्कुलोत्पन्नः। कलासु-नृत्यगीतादिषु। गणिकासु वेश्यासु। अतिरक्तः-अतिशयासक्तः। मित्रार्थं सुहृन्निमित्तम्। स्वभुजेति-स्वभुजमात्रेण बाहुबलेनैव निर्व्यूढः कृतः अनेकैः बहुभिर्जनैः सह कलहो विवादो येनासौ। कलहकण्टक इति नाम्ना ख्यात इत्यर्थः। कर्कशैः-कठिनहृदयैः। अभिख्यापिताख्यः-कृतनामधेयः। प्रत्यवात्सीत्-प्रतिवसतिस्म। सः कुलपुत्रः। आगन्तोः देशान्तरादागतस्य। तत्र चित्रपटे। आलेख्यगतां चित्रस्थिताम्।

* बालक्रीडा *

आया और जामाताके साथ अपनी पुत्रीको अति स्नेहके सहित लिवा ले गया। इस रीतिसे कनकवतीको रत्नवती माननेवाले उस बलभद्रके द्वारा वह रत्नवती अति प्रेमपूर्वक चाही जाने लगी। इसी कारणसे कहता हूं कि "काम क्या है संकल्प है"।

(४२) तदनन्तर उस ब्रह्मराक्षस द्वारा नितम्बवतीका वृत्तान्त पूछा गया। जिसके उत्तरमें मैंने कहा—"शूरसेन प्रदेशमें एक मथुरा नामकी नगरी है। उस नगरीमें रहनेवाला कोई एक उत्तम कुलोत्पन्न युवक नृत्यगीत आदि कलाओंमें तथा वेश्याओंमें बहुत आसक्त था। वह अपने मित्रोंके लिए अपनी भुजाओंके द्वारा अनेकों प्रकारके उपद्रव-विवाद आदि अनेक जनोंके साथ करता था। जिस कारण उस नगरके कर्कशोंने (कठिन पुरुषोंने) उसका नाम

रस्य हस्ते चित्रपटं ददर्श। तत्र काचिदालेख्यगता युवतिरालोकमात्रेणैव कलहकण्टकस्य कामातुरं चेतश्चकार। स च तमब्रवीत्—'भद्र, विरुद्धमिवैतत्प्रतिभाति यतः कुलजादुर्लभं वपुः, आभिजात्यशंसिनी च नम्रता, पाण्डुरा च मुखच्छविः, अनतिपरिभुक्तसुभगा च तनुः, प्रौढतानुविद्धा च दृष्टिः। न चैषा प्रोषितभर्तृका, प्रवासचिह्नस्य वेण्यादेरदर्शनात्। लक्ष्म

* बालविबोधिनी *

आलोकमात्रेण-दर्शनमात्रेण। चेतः चित्तम्। सः कुलपुत्रः। तं चित्रकरम्। विरुद्धं असदृशम्। प्रतिभाति दृश्यते। कुलजादुर्लभं गणिकासुलभमित्यर्थः। आभिजात्यशंसिनी-कौलीन्यसूचिका। नम्रता विनीतता। पाण्डुरा शुभ्रा। मुखच्छविः मुखकान्तिः। अनतीति-नाति परिभुक्ता स्वल्पपरिभुक्ता अतएव सुभगा मनोहारिणी। प्रौढतेति-प्रौढ़तया प्रागल्भ्येन अनुविद्धा युक्ता-उत्तीर्णबालभावतया अचञ्चला। प्रोषितभर्तृका-प्रोषितः प्रवासंगतः भर्ता यस्याः सा। कार्यान्तरवशाद् यस्या दूरदेशं गतः पतिः। तदनागमदुःखार्ता सा स्यात्प्रोषितभर्तृकेति तल्लक्षणम्। अदर्शनादभावात्। यथा-लक्ष्म चिह्नं नखक्षतरूपम्। तत्-तस्मा-

* बालक्रीडा *

ही "कलहकण्टक" रख दिया था। उसने एक दिन किसी दूसरे देशसे आये हुए रंगाजीव (चित्रकार) के हाथमें ऐक चित्रपट देखा। उस चित्रमें चित्रित युवतीको देखते ही कलहकण्टकके मनमें कामदेवने आघात कर दिया। उसने उस चित्रकारसे कहा—"हे सौम्य! यह बात प्रतिकूल मालूम होती है कि, इस चित्रगता युवतीका शरीर कुलांगनाओंसे प्रतिकूल है। अर्थात् वेश्याओंके समान है। कुलीनता सूचित करनेवाली इसमें नम्रता है। इसके मुखकी कान्ति शुभ्र है। इसकी मनोहारिणी देह स्वल्प भोगित है। इसकी दृष्टि प्रौढत्वको वेध चुकी है अर्थात् अचञ्चल है। यह प्रोषितभर्तृका भी (परदेश गये हुए पतिकी पत्नी) नहीं है क्योंकि प्रवासमें गये हुए पतिकी स्त्रीके चिह्न, एक वेणी आदि, उसमें नहीं दिखायी देते हैं। इसके दाहिने हाथमें नखक्षत दिखाता है जिससे ज्ञात होता है कि यह किसी वृद्ध वैश्यकी वनिता है। जो वृद्ध वैश्यके द्वारा कामेच्छा पूर्ण नहीं प्राप्त कर सकती है अर्थात् पौरुषहीन होनेसे वह ठीक-ठीक सम्भोग

चैतद्दक्षिणपार्श्ववर्ति । तदियं वृद्धस्य कस्यचिद्वणिजो नातिपुंस्त्वस्य यथार्हसंभोगालाभपीडिता गृहिणी त्वयातिकौशलाद्यथादृष्टमालिखिता भवितुमर्हति' इति ।

(४३) स तमभिप्रशस्याशंसत्—'सत्यमिदम । अवन्तिपुर्यामुज्जयिन्यामनन्तकीर्तिनाम्नः सार्थवाहस्य भार्या यथार्थनामा नितम्बवती नामैषा सौन्दर्यविस्मितेन मयैवमालिखिता' इति । स तदैवोन्मनायमानस्तद्दर्शनाय परिवव्राजोज्जयिनीम् । भार्गवो नाम भूत्वा भिक्षानिभेन तद्गृहं

* बालविबोधिनी *

दनुमीयते । नातिपुंस्त्वस्य शिथिलपुरुषत्वस्य । यथार्हेति-यथार्हस्य तदुचितस्य सम्भोगस्यालाभेन अप्राप्त्या पीडिता दुःखिता । गृहिणी भार्या । त्वया चित्रकरेण । अतिकौशलात्-नैपुण्यातिशयात् । यथादृष्ट-यथा दृष्टा तथैव ।

(४३) सः चित्रकारः । तं कुलपुत्रम् । अभिप्रशस्य प्रशंसां कृत्वा । अशंसत् अकथयत् । इदं त्वया यद्यत् कथितम् । यथार्थनामा-नितम्बस्य पृथुत्वान्नितम्बवतीति तन्नाम यथार्थमिति भावः । सौन्दर्यविस्मितेन-तत्सौन्दर्यमवलोक्याश्चर्यान्वितेन । सः कुलपुत्रः । उन्मनायमानः उत्कण्ठितः । तद्दर्शनाय तस्या नितम्बवत्या दर्शनार्थम् । परिवव्राज जगाम । भार्गवः दैवज्ञः भार्गवो शुक्रदैवज्ञाविति वैजयन्ती । नामेत्यलीके । भिक्षानिभेन-भिक्षाच्छलेन । तद्गृहं नितम्बव

* बालक्रीडा *

नहीं कर सकता, अत एव यह रमणी, सम्भोग क्रीडाकी यथोचित प्राप्तिसे, वंचित दीखती है । मुझे तो ऐसा ज्ञात होता है कि तुमने (चित्रकारने) जैसी इसकी आकृति देखी है ठीक वैसी ही फोटो अपने नैपुण्यसे खींच ली है—चित्रमें चित्रित कर दी है ।"

(४३) उस चित्रकारने, उस कलहकंटककी प्रशंसा करके, कहा—"यह बात सत्य है अवन्तिका नगरी (उज्जयिनी) में बसनेवाले सार्थवाह-अनन्त कीर्ति नामक व्यक्तिकी पत्नी यह नितम्बवती अनुरूप नामको धारण करनेवाली है । इसके सौन्दर्यगुणको देखकर मैं आश्चर्यान्वित हो गया और यह चित्र मैंने चित्रित किया ।" वह कलहकण्टक उसी समय उत्कण्ठित चित्तसे उस नितम्बवती

प्रविश्य तां ददर्श । दृष्ट्वा चात्यारूढमन्मथो निर्गत्य पौरमुख्येभ्यः श्मशानरक्षामयाचत । अलभत च । तत्र लब्धैश्च शवावगुण्ठनपटादिभिः कामप्यर्हन्तिकां नाम श्रमणिकामुपासाञ्चक्रे । तन्मुखेन च नितम्बवतीमुपांशु मन्त्रयामास । सा चैनां निर्भर्त्सयन्ती प्रत्याचचक्षे ।

(४४) श्रमणिकामुखाच्च दुष्करशीलभ्रंशां कुलस्त्रियमुपलभ्य रहसि दूतिकामशिक्षयत्—'भूयोऽप्युपतिष्ठ सार्थवाहभार्याम् । ब्रूहि चोपह्वरे

* बालविबोधिनी *

तीमन्दिरम् । अत्यारूढमन्मथः-प्रवृद्धमदनः । श्मशानरक्षां श्मशानरक्षकताम् । तत्र-श्मशाने । शवेति-शवानां मृतानां यानि अवगुण्ठनपटादीनि शववेष्टनवस्त्रादीनि तैः । श्रमणिकां बौद्धप्रव्राजिकाम् । उपासांचक्रे सिषेवे । तन्मुखेन-श्रमणिका मुखेन । उपांशु निर्जने । मन्त्रयामास-प्रलोभयामास । सा नितम्बवती । एनां श्रमणिकाम् । प्रत्याचचक्षे-प्रत्याख्यातवती ।

(४४) दुष्करेति-दुष्करोऽशक्यः शीलस्य चारित्रस्य भ्रंशो नाशो यस्या स्तादृशीम् । कुलस्त्रियं-कुलवधूम् । उपलभ्य ज्ञात्वा । भूयोऽपि पुनरपि । उपतिष्ठ

* बालक्रीडा *

दर्शनार्थ उज्जैन चला गया । भार्गव नामक दैवज्ञ बनकर भिक्षाके बहाने वह नितम्बवतीके घरमें गया और उसको देखा । उसे देखकर अति कामातुर होकर वह कलहकंटक वहांसे निकल आया और नगरीके मुख्य-मुख्य लोगोंसे श्मशानरक्षककी नौकरी मांगी । नौकरी प्राप्त भी कर ली । वहां श्मशानपर मिलनेवाले मृतकोंके कफन आदिसे उसने एक बौद्ध संन्यासिनीको अपने अनुकूल कर लिया । उसी संन्यासिनीके द्वारा उसने एकान्तमें नितम्बवतीके प्रति सन्देश कहलाया । परन्तु उस नितम्बवतीने उस संन्यासिनीको फटकार दिया ।

(४४) उस संन्यासिनीके मुखसे यह जानकर (कि यह नितम्बवती कुलांगना है और) कुलांगनाओं द्वारा सुचरित्रका नाश होना कठिन है । फिरसे एकान्तमें मैंने उस संन्यासिनीसे कहा—'हे संन्यासिनि ! तुम फिर एक बार

संसारदोषदर्शनात्समाधिमास्थाय मुमुक्षमाणो मादृशो जनः कुलवधूनां शीलपातने घटत इति क्व घटते। एतदपि त्वामप्युदारया समृद्धया रूपेणातिमानुषेण प्रथमेन वयसोपपन्ना किमितरनारीसुलभं चापलं स्पृष्टं न वेति परीक्षा कृता। तुष्टास्मि तथैवमदुष्टभावतया। त्वामिदानीमुत्पन्नापत्यां द्रष्टुमिच्छामि। भर्ता तु भवत्या केनचिद्ग्रहेणाधिष्ठितः पाण्डुरोगदुर्बलो भोगे चासमर्थः स्थितोऽभूत्। न च शक्यं तस्य विघ्नमप्रतिकृत्यापत्यमस्मा-

* बालविबोधिनी *

गच्छ। सार्थवाहभार्यां नितम्बवतीम्। उपह्वरे-निर्जने। संसारदोषदर्शनात्-संसारासारतावलोकनात्। समाधिं योगम्। आस्थाय-आश्रित्य। मुमुक्षमाणः-मुक्तिमिच्छन्। मादृशः-मत्सदृशो मुमुक्षुः। शीलपातने चरित्रभ्रंशने। घटते यतते। क्व घटते-कथं सम्भवति। एतदपि-यत्तन्मुखेन त्वामकथयत् तदपि। उदारया अधिकया समृद्धया सम्पदा। अतिमानुषेण अलौकिकेन रूपेण सौन्दर्येण। प्रथमेन वयसा यौवनेन। उपपन्ना युक्ताम्। त्वामित्यस्य विशेषणम्। इतरनारीसुलभम्-अन्यस्त्रीसदृशम्। चापलं चञ्चलता। अदुष्टभावतया-शोभनस्वभावतया तवेति शेषः। उत्पन्नापत्या जातसन्तानाम्। ग्रहेणाधिष्ठितः-दुष्टग्रहेणाक्रान्तः। पाण्डुरोगेण रोगविशेषेण दुर्बलः शक्तिहीनः। भोगे विषयोपभोगे। तस्य भर्तुः। विघ्नं ग्रहजनितं दोषम्। अप्रतिकृत्य-प्रतीकारमकृत्वा। अपत्यं सन्ता-

* बालक्रीडा *

सार्थवाहकी भार्या नितम्बवतीके समीप जाओ। तथा एकान्तमें उससे कहो कि, सांसारिक असारताके कारणको जानकर मैं समाधि लगाकर मुक्तिकी इच्छा कर रही हूं। क्या मेरी जैसी मुक्तिकी इच्छुकाएं सन्यासिनियां कुलांगनाओंके सुचरित्रको नष्ट करनेका उपाय कर सकती हैं। यह सम्भव कैसे हो सकता है? मैंने यह जाननेकी चेष्टारूपमें तुम्हारी परीक्षा की थी कि, तुम्हारी नयी जवानीकी अवस्था है और तुम अलौकिक सुन्दर हो खूब पैसेवाली हो, अतः तुममें अन्य अंगनाओंकी तरह चञ्चलता भी है कि, नहीं। परन्तु, यह जानकर परम प्रसन्न हूं कि तुममें असतीत्वके दुर्गुण नहीं हैं। अब मैं तुम्हें सन्तानवती देखना चाहती हूं। आपके पति किसी दुष्टग्रहसे आक्रान्त हैं पाण्डुरोगसे शक्तिहीन होकर विषय करनेमें असमर्थ हैं। अतः अपने पतिके रोगको दूर किये बिना या ग्रह दोषके

लब्धुम् । अतः प्रसीद । वृक्षवाटिकामेकाकिनी प्रविश्य मदुपनीतस्य कस्यचिन्मन्त्रवादिनश्छन्नमेव हस्ते चरणमर्पयित्वा तदभिमन्त्रितेन प्रणयकुपिता नाम भूत्वा भर्तारमुरसि प्रहर्तुमर्हसि उपर्यसावुत्तमधातुपुष्टिमूर्जितापत्योत्पादनक्षमामासादयिष्यति । अनुवर्तिष्यते देवीमिवात्रभवतीम् । नात्र शङ्का कार्या' इति ।

(४५) सा तथोक्ता व्यक्तमभ्युपेष्यति नक्तं मां वृक्षवाटिकां प्रवेश्य तामपि प्रवेशयिष्यसि तत्रैव त्वयाहमनुगृहीतो भवेयम्' इति । सा

* बालविबोधिनी *

नम् । अस्मात् भर्तृसकाशात् । मदुपनीतस्य मया आनीतस्य । मन्त्रवादिनः मन्त्रज्ञस्य । छन्नं गुप्तम् । चरणं स्वकीयं पदम् । तदभिमन्त्रितेन–तन्मन्त्रपूतेन चरणेन । प्रणयकुपिता–मानिनीव । नामेत्यलीकसम्भावनायाम् । उपरि–तदनन्तरम् । असौ तव पतिः । उत्तमधातुपुष्टि–उत्तमस्योत्कृष्टस्य धातोः शुक्रस्य पुष्टिं वृद्धिम् । ऊर्जितेति–ऊर्जितस्य बलवतः अपत्यस्य सन्ततेरुत्पादने जनने क्षमां समर्थाम् । धातुपुष्टिमित्यस्य विशेषणम् । आसादयिष्यति प्राप्स्यति । अनुवर्त्तिष्यते अनुसरिष्यति त्वदासक्तो भविष्यति तव पतिरिति शेषः । अत्र भवतीं त्वामित्यर्थः । शंका संशयः ।

(४५) सा नितम्बवती । तथोक्ता श्रमणिकया तथा कथिता । व्यक्तं

* बालक्रीडा *

निवारण किये विना आपके पतिसे आपको सन्तान नहीं हो सकती है । अतः प्रसन्न हो । वृक्षवाटिकामें अकेली चलो और मेरेद्वारा बुलाये हुए एक मन्त्रशास्त्रीके हाथमें गुप्तरूपसे अपने चरणको अर्पित कर देना, । उसके द्वारा अभिमन्त्रित होकर तुम अपने पतिके ऊपर मान करके बैठ जानना । और पतिकेद्वारा मान निवारणपर उसके वक्षःस्थलमें एक लात मारना तदनन्तर तुम्हारा पति उत्तम धातुपुष्टिको प्राप्त कर लेगा और बलवती सन्तान उत्पन्न करनेकी शक्तिवाला हो जायगा । तुम्हारा पति तुम्हें देवीकी तरह मानेगा । इसमें शंका मत करो ।''

(४५) ऐसा कहनेपर वह नितम्बवती निःसन्देह इस प्रक्रियाको स्वीकार

तथैवोपग्राहितघता। सोऽतिप्रीतस्तस्यामेव क्षपायां वृक्षवाटिकायां गतो नितम्बवतीं निर्ग्रन्थिकाप्रयत्नेनोपनीतां पादे परामृशन्निव हेमनूपुरमेकमाक्षिप्य छुरिकयोरुमूले किञ्चिदालिख्य द्रुततरमपासरत्। सा तु सान्द्रत्रासा स्वमेव दुर्णय गर्हमाणा जिघासन्तीव श्रमणिकां तद्रूण भवनदीर्घिकायां प्रक्षाल्य दत्त्वा पटबन्धनं सामयापदेशापर चापनीय नूपुरं शयनपरा

* बालविबोधिनी *

असन्दिग्धम्। अभ्युपेष्यति-स्वीकरिष्यति-तथा कर्तुमिति शेषः। वृक्षवाटिका गृहोद्यानम्। प्रवेश्य प्रवेशं कारयित्वा। ताम् नितम्बवतीम् तावता एतावता कर्मणा। सा श्रमणिका। उपग्राहितवती-नितम्बवतीं स्वीकारयामास। स कलहकण्टकः। निर्ग्रन्थिकाप्रयत्नेन-श्रमणिकाचेष्टया। निर्ग्रन्थिका बौद्धभिक्षुकी। उपनीताम् उपस्थापिताम्। पादे नितम्बवत्याश्चरणे। परामृशन् हस्तं चालयन्। आक्षिप्य अवनार्य। छुरिकया शस्त्रिकया। आलिख्य क्षत कृत्वा। अपासरत् पलायिष्ट। सा नितम्बवती। सान्द्रत्रासा अतिभीता। स्वं निजम्। दुर्णय अनुचिताचारम्। गर्हमाणा निन्दन्ती-कथं मया श्रमणिकाविश्वासेन एव कृतमिति भावः। जिघासन्तीव हन्तुमिच्छन्तीव। तद्रूण तत्क्षतम्। भवनदीर्घिकाया गृहान्तर्गतजलाशये। पटबन्धनं-पट्टिकाम्। सामयापदेशा-सामया सरोगा इति

* बालक्रीडा *

कर लेगी। तब आप (संन्यासिनी) रातमें मुझे उस वृक्ष वाटिकामें प्रवेशित कराकर फिर उसे भी प्रवेशित करा देना। आपके द्वारा यह कार्य होनेसे मैं आपका अति आभारी रहूंगा। उस संन्यासिनीने उसी तरहसे उस नितम्बवतीको राजी कर लिया। वह उसी रातमें प्रमुदित होकर वृक्षवाटिकामें गया। संन्यासिनीके प्रयत्नसे आयी हुई नितम्बवतीके चरणपर हाथ लगाते हुए उसने एक सुवर्णका नूपुर (पैरका भूषण) खींच लिया और छूरीसे उसकी जांघमें हलका प्रहार करके भाग गया। जांघमें प्रहारके पश्चात् वह नितम्बवती अति भयान्वित हुई और वह अपने अनुचित आचारकी निन्दा करती हुई तथा उस संन्यासिनीको मारने की इच्छा करती हुई (घर) लौटी। (घर आकर) उसने अपने घावको बावलीमें धोया तथा पट्टी बांधी। बीमारीका बहाना करके दूसरे

त्रिचतुराणि दिनान्येकान्ते निन्ये । स धूर्तः 'विक्रेष्ये' इति तेन नूपरेण तमनन्तकीर्तिमुपाससाद । स दृष्ट्वा 'मम गृहिण्या एवैष नूपुरः, कथमयमुपलब्धस्त्वया' इति तमब्रुवाणं निर्बन्धेन पप्रच्छ ।

(४६) स तु 'वणिग्ग्रामस्याग्रे वक्ष्यामि' इति स्थितोऽभूत् । पुनरसौ गृहिण्यै 'स्वनूपुरयुगलं प्रेषय' इति संदिदेश । सा च सलज्जंससाध्वसं चाद्य रात्रौ विश्रामप्रविष्टायां वृक्षवाटिकायां प्रभ्रष्टो ममैकः प्रशिथिलबन्धो नूपुरः । सोऽद्याप्यन्विष्टो न दृष्टः । स पुनरयं द्वितीय इत्यपरं प्राहिणोत् ।

* बालविबोधिनी *

अपदेशःछलं यस्याः सा । पादे कश्चन रोगः सञ्जात इति कपटमाश्रित्येति भावः । अपरं अन्यचरणस्थितं नूपुरमपि । अपनीय-अपसार्य । शयनपरा-शयित्वैव । निन्ये यापयामास । स धूर्तः कलहकण्टकः । विक्रेष्ये-नूपुरविक्रयं करिष्यामीति कथयन्नित्यर्थः । अनन्तकीर्ति नितम्बवतीभर्त्तारम् । उपाससाद-तत्समीपं जगाम । सः अनन्तकीर्त्तिः । उपलब्धः प्राप्तः । तं कलहकण्टकम् । अब्रुवाणं नूपुरप्राप्तिवृत्तान्तमकथयन्तम् । निर्बन्धेन-आग्रहातिशयेन ।

(४६) स कलहकण्टकः । वणिग्ग्रामस्य-वणिक्समुदायस्य । अग्रे पुरतः । असौ अनन्तकीर्त्तिः । गृहिण्यै-भार्यासकाशे । सन्दिदेश-वार्त्तां प्रेषितवान् । सा नितम्बवती । ससाध्वसं सभयम् । विश्रामेति-विश्रमार्थं प्रविष्टायाम् । प्रभ्रष्टः चरणान्निपतितः । प्रशिथिलबन्धः शरीरकार्श्यात् श्लथबन्धनः । स नूपुरः ।

* बालक्रीडा *

नूपुरको दूर करके तीन-चार दिन एकान्तमें पड़ी रही । वह धूर्त्त कलहकंटक "मैं नूपुरको बेंचता हूं" ऐसा कहते हुए उस अनन्तकीर्तिके समीप उपस्थित हुआ । उसने देखकर कि, "यह नूपुर तो मेरी पत्नीका ही है" इसे इसने कैसे प्राप्त किया । ऐसा सोचकर उस कलहकंटकको बुलाकर आग्रहसे उससे नूपुरप्राप्तिका वृत्तान्त पूछा ।

(४६) उसने उत्तर दिया कि, "मैं वणिक्समूहके समक्ष इस वृत्तान्तको कहूंगा ।" फिर उस अनन्तकीर्तिने अपनी पत्नीसे दोनों नूपुरोंको भेजनेके लिये सन्देश भेजा । उसने लज्जा और भयके साथ कहा कि, आज रातको मैं विश्रान्तिके लिये वृक्ष वाटिकामें गयी थी वहांपर एक नूपुर, शरीरके कृश होनेके

अनया च वार्तयामुं पुरस्कृत्य स वणिक् वणिग्जनसमाजमाजगाम । स चानुयुक्तो धूर्तः सविनयमावेदयत्—'विदितमेव खलु वः, यथाहं युष्मदाज्ञया पितृवनमभिरक्ष्य तदुपजीवी प्रतिवसामि । लुब्धाश्च कदाचिन्मद्दर्शनभीरवो निशि दहेयुरपि शवानीति निशास्वपि श्मशानमधिशये । अपरेद्युर्दग्धादग्धं मृतकं चितायाः प्रसभमाकर्षन्तीं श्यामाकारां नारीमपश्यम् । अर्थलोभात्तु निगृह्य साध्वसं मा गृहीता शस्त्रिकयोरुमूले यदृच्छया

* बालविबोधिनी *

अपरं अन्यं नूपुरम् । अनया वार्तया—अनेन वृत्तान्तेन । अमुं नूपुरम् । पुरस्कृत्य गृहीत्वा । अनुयुक्तः पृष्टः । स धूर्तः कलहकण्टकः । आवेदयत् अकथयत् । विदितं ज्ञातम् । वः युष्माकम् वणिजामिति शेषः । युष्मदाज्ञया भवतामादेशेन । पितृवनं श्मशानम् । तदुपजीवी—तेन श्मशानरक्षणेन उपजीवति जीविकां करोतीत्येवं शीलः । लुब्धाः धूर्ताः । मद्दर्शनभीरवः मदवलोकनभयशीलाः । निशि रात्रौ । अधिशये तिष्ठामि । अपरेद्युः अन्यस्मिन् दिने । दग्धादग्धं—किंचिद्दग्धं किंचच्चादग्धमेवंविधं मृतकं शवम् । चितायाः चितामध्यात् । प्रसभं बलात् । श्यामाकारां कृष्णवर्णाकृतिम् । साध्वसं भयं निगृह्य परित्यज्य सा नारी । मया गृहीता धृता । शस्त्रिकया छुरिकया । ऊरुमूले तस्या इति शेषः । यदृच्छया

* बालक्रीडा *

कारण ढीला पड़ गया था, गिर गया । उसे आज भी मैंने खोजा, किन्तु, नहीं मिला । अस्तु, यह दूसरा नूपुर मेरे पास है इसे ले जाओ । इस उपर्युक्त कथनके साथ उस अनन्तकीर्तिने उस धूर्तको वणिक समुदायके समीप उपस्थित किया । वणिकोंद्वारा पूछे जानेपर उस धूर्तने विनयसे कहा—"आप लोगोंको ज्ञात ही है कि, मैं आप लोगोंकी आज्ञासे श्मशानमें रक्षक बनकर उसीसे प्राप्त द्रव्यद्वारा अपना जीवन निर्वाह करता हूँ । धूर्त लोग मेरी उपस्थितिमें डरनेवाले कदाचित रातमें शव न जला डालें इसी कारण मैं रातमें भी श्मशान हीमें सोता हूँ । गत दिनकी रातमें मैंने चितापर जलनेवाले एक अर्धदग्ध शवको जबर्दस्तीसे खींचती हुई कृष्णवर्णवाली स्त्री देखी । धनके लोभसे भयको त्यागकर मैंने उसे पकड़ा और मेरे हाथमेंकी छुरीसे उसके जांघमें कुछ चोट भी आ गयी । (मैंने

किञ्चिदुल्लिखितम् । एष च नूपुरश्चरणादाक्षिप्तः । तावत्येव द्रुतगतिः सा पलायिष्ट । सोऽयमस्यागमः । परं भवन्तः प्रमाणम्' इति ।

(४७) विमर्शेन च तस्याः शाकिनीत्वमैकमत्येन पौराणामभिमतमासीत् । भर्त्रा च परित्यक्ता तस्मिन्नेव श्मशाने बहु विलप्य पाशेनोद्बध्य मर्तुकामा तेन धूर्तेन नक्तमगृह्यत । अनुनीता च 'सुन्दरि, त्वदाकारोन्मादितेन मया त्वदावर्जने बहूनुपायान्भिक्षुकीमुखेनोपन्यस्य तेष्वसिद्धेषु

* बालविबोधिनी *

स्वेच्छया । तावति तस्मिन्नेव समये अस्य नूपुरस्य । आगमः प्राप्तिः । परं अतः परम् ।

(४७) विमर्शेन-विचारेण । तस्या नितम्बवत्याः । शाकिनीत्वं पिशाचत्वम् । ऐकमत्येन अविसंवादितत्वेन । पाशेन रज्वा । उद्बध्य आत्मानं बद्ध्वा । तेन-कलहकण्टकेन । अगृह्यत गृहीता नितम्बवतीति शेषः । त्वदाकारेति-तव आकारेण आकृत्या उन्मादितेन उन्मादग्रस्तेन । त्वदावर्जने तवायत्तीकरणे भिक्षुकीमुखेन श्रमणिकाद्वारेण । उपन्यस्य कृत्वा । तेषु उपायेषु । असिद्धेषु

* बालक्रीडा *

जांघमें जानकर छूरी नहीं मारी थी अपितु सहज हीमें लग गयी थी) यह नूपुर मैंने उसके चरणमेंसे खींच लिया । तब वह तेज चालसे भाग गयी । यही इस नूपुर प्राप्तिका वृत्त है । इसके अतिरिक्त मैं कुछ नहीं जानता, आप लोग ही जानें ।

(४७) सब पुरवासियोंने इस वृत्तसे ऐक्यमत्त होकर यही निश्चय किया कि, यह नितम्बवती पिशाच योनिकी है उसके पतिने भी उसे त्याग दिया उसी श्मशानपर जाकर वह बहुत विलाप करके अपनेको रस्सीसे बांधकर मरनेकी इच्छा करने लगी-फांसी लगाकर मरना चाहती थी कि, उसी धूर्त्तने उसे आकर पकड़ लिया । और अनुनय करके कहने लगा-"हे सुन्दरी ! आपकी आकृति और सुन्दरतासे मैं उन्मत्त हो गया था । और आपकी प्राप्तिके लिये भिक्षुकी आदिके मुखद्वारा सन्देश कहलाया अनेकों यत्न किये, परन्तु, वे सभी निष्फल हो गये । तब मैंने यह उपाय सोचा कि, "जबतक मैं जीता रहूंगा तबतक तुम्हें ही

पुनरयमुपायो यावज्जीवमसाधारणीकृत्य रन्तुमाचरितः। तत्प्रसीदानन्यशरणायास्मै दासजनाय' इति मुहुर्मुहुश्चरणयोर्निपत्य, प्रयुज्य सान्त्वशतानि, तामगत्यन्तरामात्मवश्यामकरोत्। तदिदमुक्तम्—'दुष्करसाधनं प्रज्ञा' इति।

(४८) इदमाकर्ण्य ब्रह्मराक्षसो मामपूपुजत। अस्मिन्नेव क्षणे नातिप्रौढपुंनागमुकुलस्थूलानि मुक्ताफलानि सह सलिलबिन्दुभिरम्बरतलात्पतन्। अहं तु 'किन्विदम्' इत्युच्चक्षुरालोकयन्कमपि राक्षसं काञ्चिदङ्गनां विचेष्टमानगात्रीमाकर्षन्तमपश्यम्। कथमपहरत्यकामामपि स्त्रियमनाचारो

* बालविबोधिनी *

निष्फलेषु सत्सु। असाधारणीकृत्य—अन्यवैलक्षण्येनेत्यर्थः। रन्तुं विहर्तुम्। अनन्यशरणाय अनन्यगतिकाय। अस्मै मह्यमित्यर्थः। प्रयुज्य उक्त्वा। अगत्यन्तरां न विद्यते गत्यन्तरमन्या गतिर्यस्यास्ताम्। दुष्करसाधनं प्रज्ञा बुद्धिबलेन दुष्करमपि साधयितुं शक्यते इति भावः।

(४८) नातिप्रौढेति—नातिप्रौढानि अनतिपुष्टानि यानि पुंनागमुकुलानि बकुलकलिकाः तद्वत् स्थूलानि। मुक्ताफलानि मौक्तिकानि। अहं मित्रगुप्तः। उच्चक्षुः—ऊर्ध्वीकृतनेत्रः। विचेष्टमानगात्रीं वेपमानावयवाम्। अकामां अनिच्छ-

* बालक्रीडा *

रमणी बनाये रहूंगा" ऐसा विचारकर उक्त उपायको रचा। अतः हे प्रिये! इस सेवकपर अनन्यगति होकर प्रसन्न हो। ऐसा कहकर वह कलहकंटक उस नितम्बवतीके चरणोंपर बार-बार शीश धरने लगा। बहु प्रकारसे सान्त्वना देकर उस रमणीको जिसकी दूसरी गति नहीं थी अपने वशमें कर लिया। इसीसे कहा है—"दुष्कर साधन भी बुद्धिसे साधे जा सकते हैं।"

(४८) इन बातोंको श्रवण करके उस ब्रह्मराक्षसने मेरी पूजा की। उसी समय आकाशसे, अनतिप्रौढ़ बकुलकी कलीके सदृश मोतीके दाने, जलबिन्दुओंके सहित, गिरे। मैंने (मित्रगुप्तने) "यह क्या है" ज्ञात करनेके लिये ऊपर नेत्रोंको किया, तो, देखा कि, कोई एक राक्षस किसी कम्पित अङ्गवाली अङ्गनाको

नैर्ऋतः' इति गगनगमनमन्दशक्तिरशस्त्रश्चातप्ये । स तु मत्संबन्धी ब्रह्मराक्षसः 'तिष्ठ तिष्ठ पाप, क्वापहरसि' इति भर्त्सयन्नुत्थाय राक्षसेन समसृज्यत ।

(४९) तां तु रोषादनपेक्षापविद्धाममरवृक्षमञ्जरीमिवान्तरिक्षादापतन्तीमुन्मुखप्रसारितोभयकरः कराभ्यामग्रहीषम् । उपगृह्य च वेपमानां सम्मीलिताक्षीं मदङ्गस्पर्शसुखेनोद्भिन्नरोमाञ्चां तादृशीमेव तामनवतारयन्न-

* बालविबोधिनी *

न्तीम् । अनाचारः दुराचारः नैर्ऋतः राक्षसः । गगनेति—गगनगमने आकाशतलारोहणे मन्दा हीना शक्तिः सामर्थ्यं यस्य सः । अतप्ये तापमभजम् । मत्सम्बन्धी—मत्—सम्पर्कितः सुहृद्भूत इति यावत् । उत्थाय गगनतले इति शेषः । समसृज्यत—संसृष्टोऽभवत् अयुध्यतेति शेषः ।

(४९) तां अपह्रियमाणां स्त्रियम् । रोषात् क्रोधात् अनपेक्षयेति—अनपेक्षया निरपेक्षतया अपविद्धां त्यक्ताम् । अमरवृक्षमञ्जरीं कल्पतरुमञ्जरीम् । उन्मुखेति—उन्मुखौ प्रसारितौ आततीकृतौ उभयकरौ येन सः । उपगृह्य गृहीत्वा । वेपमानां कम्पमानाम् । संमीलिताक्षीम्—निमीलितनयनाम् । मदंगेति—मदङ्गस्य मद्देहस्य स्पर्शेन यत् सुखं तेन । उद्भिन्नरोमाञ्चां उद्गतपुलकाम् । तादृशीं तदवस्थाम् । अनवतारयन्—भूमावस्थापयन् । उभौ—राक्षसब्रह्मराक्षसौ । शैलशृंगभंगैः

* बालक्रीडा *

पकड़े लिये जा रहा है । यह राक्षस इस अनिच्छुत महिलाको क्योंकर जबर्दस्ती पकड़े लिये जा रहा है ?" ऐसा सोचते हुए, तथा आकाशमें जानेकी शक्तिसे हीन एवं शस्त्र रहित मैं सन्ताप करने लगा । मेरे सुहृद् उस ब्रह्मराक्षसने कहा—"ठहरो, ठहरो, पापी ! कहां लिये जाते हो ?" इस प्रकारसे डराते हुए वह आकाशकी ओर उड़ा । और वहां उसके साथ संश्लिष्ट हो युद्ध करने लगा ।

(४९) युद्धके समय रोषके साथ उपेक्षित भावसे परित्यक्त आकाशसे गिरती हुई उस महिलाको कल्पवृक्षकीमञ्जरीके समान ऊपरकी ओर मुख करके तथा दोनों हाथोंको फैलाकर मैंने लोक लिया । लोकनेके पश्चात् निमीलित नयनवाली एवं कांपती हुई तथा मेरे शरीरके स्पर्शसुखसे रोमांचित होनेवाली उस महिलाको मैं उसी दशामे अपने हाथोंपर लिये हुए खड़ा रहा । वे दोनों (राक्षस–ब्रह्मराक्षस)

तिष्ठम्। तावत्तावुभावपि शैलशृङ्गभङ्गैः पादपैश्च रभसोन्मूलितैर्मुष्टिपादप्रहारैश्च परस्परमक्षपयेताम्। पुनरहमतिमृदुनि पुलिनवति कुसुमलवलाञ्छिते सरस्तीरेऽवरोप्य सस्पृहं निर्वर्णयंस्तां मत्प्राणैकवल्लभां राजकन्यां कन्दुकावतीमलक्षयम्।

(५०) सा हि मया समाश्वास्यमाना तिर्यङ्मामभिनिरूप्य जातप्रत्यभिज्ञा सकरुणमरोदीत्। अवादीच्च—'नाथ, त्वद्दर्शनादुपोढरागा तस्मिन्कन्दुकोत्सवे पुनः सख्या चन्द्रसेनया त्वत्कथाभिरेव समाश्वासितास्मि। त्वं किल समुद्रमध्ये मज्जितः पापेन मद्भ्रात्रा भीमधन्वना' इति श्रुत्वा सखीजनं परिजनं च वञ्चयित्वा जीवितं जिहासुरेकाकिनी क्रीडावनमुपा-

* बालविबोधिनी *

पर्वत शिखरशकलैः। पादपैः वृक्षैः। रभसोन्मूलितैः—वेगादुत्पाटितैः। मुष्टिपादप्रहारैः मुष्टिप्रहारैः पादप्रहारैश्च। परस्परमन्योन्यम्। अक्षपयेतां नाशितवन्तौ। अतिमृदुनि—अतिकोमले। पुलिनवति—सिकतामये। कुसुमलवलाञ्छिते—पुष्पशकलशोभिते। अवरोप्य स्वभुजादवतार्य तामिति शेषः। सस्पृहं सानुरागम्। निर्वर्णयन् निरूपयन्। मत्प्राणैकवल्लभां ममहृदयैकदयिताम्। अलक्षयम्—अपश्यम्।

(५०) सा कन्दुकावती। समाश्वास्यमाना सान्त्व्यमाना। तिर्यक् वक्रीकृतग्रीवा। अभिनिरूप्य समन्ततो दृष्ट्वा। जातेति—जाता उत्पन्ना प्रत्यभिज्ञा स एवायमिति ज्ञानं यस्याः सा। उपोढरागा—सञ्जातानुरागा। परिजनं दासीव-

* भावबोधिनी *

परस्पर वेगसे उखाड़े हुए पहाड़ोंके शिखरोंके टुकड़ोंसे, पेड़ोंसे, मुष्टियोंसे, लातोंसे लड़ते हुए विनष्ट हो गये। फिर मैंने अत्यन्त कोमल बालुकापर जहाँपर पुष्पांश पड़े हुए थे, तालाबके किनारे उस रमणीको सानुराग देखा तो, प्रतीति हुई कि, वह रमणी, मेरी हृदय वल्लभा राजपुत्री, कन्दुकावती है।

(५०) मेरेद्वारा समाश्वासित होनेपर उस रमणीने तिरछी दृष्टिसे जरा मुझे देखा तो पूर्वपरिचितकी स्मृति आ गयी। तब वह करुणस्वरसे रोकर कहने लगी "हे स्वामिन्! उस कन्दुकक्रीडामें आपके दर्शनसे उद्भूत रागवती

गमम् । तत्र च मामचकमत कामरूप एष राक्षसाधमः । सोऽयं मया भीतयावधूतप्रार्थनः स्फुरन्तीं मां निगृह्याभ्यधावत् । अत्रैवमवसितोऽभूत् । 'अहं च दैवात्तवैव जीवितेशस्य हस्ते पतिता । भद्रं तव' इति ।

(५१) श्रुत्वा च तया सहावरुह्य, नावमध्यारोहम् । मुक्ता च नौः प्रतिवातप्रेरिता तामेव दामलिप्तां प्रत्युपातिष्ठत् । अवरूढाश्च वयमश्रमेण 'तनयस्य च तनयायाश्च नाशादनन्यापत्यस्तुङ्गधन्वा सुह्मपतिर्निष्कलः

* बालविबोधिनी *

गम् । जिहासुः त्यक्तुमिच्छुः । अचकमत-कामयामास । कामरूपः मायावी । अवधूतप्रार्थनः-अवधूता तिरस्कृता प्रार्थना यस्य सः । स्फुरन्तीं वेपमानाम् । निगृह्य बलादाकृष्य । अत्र अस्मिन् पर्वते एवं-ब्रह्मराक्षसेन सह युद्धं कृत्वा । अवसितः समाप्तिंगतः निहत इति यावत् । दैवात् अदृष्टवशात् । जीवितेशस्य पत्युः । भद्रं मङ्गलम् ।

(५१) तया कन्दुकावत्या । अवरुह्य पर्वतशिखरादवतीर्य । मुक्ता परिचलिता प्रतिवातप्रेरिता अनुकूलवायुचालिता । उपातिष्ठत्-उपाजगाम । अवरूढा तीरमागताः । तनयस्य पुत्रस्य भीमधन्वनः । तनयायाः कन्दुकावत्याः ।

* बालक्रीडा *

होकर मैं अपनी प्रिय सखी चन्द्रसेनाद्वारा आपकी कथा वार्ताओंसे समाश्वासित की गयी । मेरे पापी भाई भीमधन्वाद्वारा आप समुद्रमें डुबवाये गये यह वृत्त सुनकर मैं अपने परिजन और सहचरियोंको छलकर अपनी आत्महत्याके लिये अकेली क्रीड़ावनमें भाग आयी । उस क्रीडावनमें इस मायावी राक्षसाधमने मेरे साथ कामेच्छा प्रकट की भयान्वित मेरेद्वारा उसकी प्रार्थना तिरस्कृता होनेपर यह राक्षस मुझ कांपती हुई गात्रवालीको जबर्दस्ती पकड़कर ले भागा । वह इस पहाड़पर इस तरह लड़कर मर भी गया । " सौभाग्यसे मैं अपने पतिके (आपके) हाथोंमें ही आ पड़ी । आप तो कुशलतासे हैं ?"

(५१) इन बातोंको श्रवणकर मैं उस कन्दुकावतीकेसाथ पहाड़परसे नीचे उतर आया तथा नावपर सवार हो गया । चलायी हुई नाव अनुकूल पवनके कारण सीधी उसी दामलिप्ता नगरीमें पहुंची । हम लोग बिना परिश्रमके किनारे पर उतर गये। नावसे उतरकर हम लोगोने आंखोमें आंसू भरे हुए प्रजाजनोंको–

स्वयं सकलत्र एव निष्कलङ्कगङ्गारोधस्यनशनेनोपरन्तुं प्रतिष्ठते। सह तेन मर्तुमिच्छत्यनन्यनाथोऽनुरक्तः पौरवृद्धलोकः' इत्यश्रुमुखीनां प्रजानामाक्रन्दमशृणुम ।

(५२) अथाहमस्मै राज्ञे यथावृत्तमाख्याय तदपत्यद्वयं प्रत्यर्पितवान् । प्रीतेन तेन जामाता कृतोऽस्मि दामलिप्तेश्वरेण । तत्पुत्रो मदनुजीवी जात । मदाज्ञप्तेन चामुना प्राणवदुज्झिता चन्द्रसेना कोशदासमभजत् । ततश्च सिंहवर्मसाहाय्यार्थमत्रागत्य भर्तुस्तव दर्शनोत्सवसुखमनुभवामि' इति ।

* बालविबोधिनी *

अनन्यापत्यः अनपत्य. । निष्कलो वृद्धः । सकलत्रः सदारः । निष्कलङ्केति निष्कलङ्के निष्पापे गङ्गारोधसि गङ्गा तटे । अनशनेन उपवासेन । उपरन्तुं मर्तुम् । प्रतिष्ठते यात्रां करोति । तेन राज्ञा तुङ्गधन्वना । अनन्यनाथः अशरणः । अश्रुमुखीनां सवाष्पवदनानाम् । आक्रन्दं विलापम् ।

(५२) अहं मित्रगुप्तः । यथावृत्तं यावत्संघटितम् । तदपत्यद्वय—भीमधन्वानं कन्दुकावतीञ्च । तेन तुङ्गधन्वना । तत्पुत्रः राजपुत्रो भीमधन्वा । मदाज्ञप्तेन—मदादिष्टेन । अमुना भीमधन्वना । उज्झिता—त्यक्ता ।

* बालक्रीडा *

विलाप करते हुए देखा बात यह थी कि वृद्ध सुह्मपति महाराज तुंगधन्वा अपने पुत्र भीमधन्वा और पुत्री कन्दुकावतीकी मृत्युसे बड़े दुःखी हुए। साथ ही अन्य सन्तान न होने से उन्होंने निष्कलंकिनी गंगाके किनारे जाकर अपनी रानीके सहित अनशन (उपवास) करके प्राणोंको त्यागनेकी ठानी थी। उनके साथ नगरके वृद्ध लोगोंने भी अपने प्राणोंको, अनाथ होनेके कारण तथा राजभक्तिके कारण, त्यागना ठाना था।"

(५२) विलाप सुननेके पश्चात् मैंने महाराज तुंगधन्वाको उनकी दोनों सन्तानें अर्पण कर दीं और सभी घटनाएं भी बतला दीं। उन महाराज दामलिप्तेश्वरने प्रीतिसे मुझे जामाता बनाया। उनका पुत्र भीमधन्वा मेरा अनुजीवी हुआ। मेरी आज्ञासे उसने प्राणके समान चन्द्रसेनाको त्याग दिया जो कोशदासकी सेविका हो गयी। इसके बाद राजा सिंहवर्माकी सहायताके लिये मैं (मित्रगुप्त) यहांपर आया और हे स्वामिन्! आपके दर्शनसुखके

(५३) श्रुत्वा 'चित्रेयं दैवगतिः' अवसरेषु पुष्कलः पुरुषकारः' इत्यभिधाय भूयःस्मितासिक्तदन्तच्छदो मन्त्रगुप्ते हर्षोत्फुल्लं चक्षुः पातयामास देवो राजवाहनः। स किल करकमलेन किञ्चित्संवृताननो ललितवल्लभारभसदत्तदन्तक्षतव्यसनविह्वलाधरमणिर्निरोष्ठ्यवर्णमात्मचरितमाचचक्षे—

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते मित्रगुप्तचरितं नाम षष्ठ उच्छ्वासः ।

* बालविबोधिनी *

(५३) चित्रा विस्मयोत्पादिका । अवसरेषु–योग्यसमयेषु । पुष्कलः प्रचुरः महान् इति यावत् । स्मितेति–स्मितेन मन्दहास्येन अभिषिक्तौ लिप्तौ दन्तच्छदौ ओष्ठाधरौ यस्य सः । मन्त्रगुप्ते तन्नामककुमारे । पातयामास अर्पयामास । स मन्त्रगुप्तः । किञ्चित्संवृताननः–ईषदावृतमुखः । ललितेति–ललितवल्लभया प्रियदयितया रभसेनौत्सुक्येन पौर्वापर्यमविचार्यैव वा दत्तं यद्दन्तक्षतं तेन यद् व्यसनं पीड़ा तेन विह्वलश्चञ्चलोऽधरमणिरधरबिम्बं यस्य सः । निरोष्ठ्यवर्णं तदोष्ठे क्षतसत्त्वात् ओष्ठ्यवर्णरहितम् ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायां मित्रगुप्तचरितं नाम षष्ठ उच्छ्वासः ।

* बालक्रीडा *

उत्सवका अनुभव कर रहा हूं ।"

(५३) राजवाहनने इन बातोंको सुनकर कहा—"दैवगति बड़ी विस्मयकारिणी होती है तथा समयपर पुरुषार्थ भी अति उपकारी होता है ।" तत्पश्चात् मन्द मुसकानद्वारा दोनो अधरोंको अनुलिप्त करके देव राजवाहनने हर्षयुक्त विस्फारित नयनोंसे मन्त्रगुप्तकुमारको देखा । तब उस मन्त्रगुप्तने भी अपने कमलरूपी हाथोंसे ओठको थोड़ा आच्छादित करते हुए अपना वृत्तान्त कहना आरम्भ किया । उसके ओंठपर उसकी सुन्दरी कामिनीद्वारा, दन्तक्षत कर दिया गया था । जिस दन्तक्षतकी व्यथासे उसके अधरबिम्ब व्याकुल थे । अतः उक्त मन्त्रगुप्तने ओष्ठ्यवर्ण रहित वर्णोंमें अपना वर्णन आरम्भ किया ।

इस प्रकारसे दशकुमार चरितके मित्रगुप्तचरितके षष्ठ उच्छ्वासकी हिन्दी टीका बालक्रीड़ा समाप्त हुई ।

सप्तमोच्छ्वासः।

(१) राजाधिराजनन्दन, नगरन्ध्रगतस्य ते गतिं ज्ञास्यन्नहं च गतः कदाचित्कलिङ्गान्। कालिङ्गनगरस्य नात्यासन्नसंस्थितजनदाहस्थान-संसक्तस्य कस्यचित्कान्तारधरणिजस्यास्तीर्णसरसकिसलयसंस्तरे तले निपद्य निद्रालीढदृष्टिरशयिषि। गलति च कालरात्रिशिखण्डजालकान्ध-

* बालविबोधिनी *

(१) अस्मिन् मन्त्रगुप्तचरिते ओष्ठ्यवर्णान् विहायैव पदानि निबद्धानि कविनेति द्रष्टव्यम्। नगरन्ध्रगतस्य पर्वतगुहाप्रविष्टस्य। ते राजवाहनस्य। अहं मन्त्रगुप्तः। कलिङ्गान् तदाख्यप्रदेशान्। नात्यासन्नेति-नात्यासन्ने किञ्चिद्दूरे संस्थितमवस्थितं यत् जनदाहस्थानं श्मशानं तत्संसक्तस्य लग्नस्य। कान्ता-रधरणिजस्य आरण्यकभूरुहस्य। आस्तीर्णेति-आस्तीर्णः विस्तारितः सरस-किसलयानां नवीनपल्लवानां संस्तरः शयनीयं यत्र तस्मिन्। तले इत्यस्य विशेषणमेतत्। निपद्य उपविश्य। निद्रालीढदृष्टिः निद्राक्रान्तनयनः। अश-यिषि निद्रितोऽभवम्। गलति-भ्रश्यति-अतिक्रामति सतीति यावत्। कालरा-त्रीति-कालरात्र्याः संहाररजनीरूपाया भगवत्याः कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च-दारुणेति सप्तशत्युक्तेः। शिखण्डजालकं केशसमूहस्तद्वत् अन्धकारं यस्मिन् तत्र।

* बालक्रीडा *

इस मन्त्रगुप्तके चरित वर्णनमें दण्डिकविने ओष्ठ्यवर्ण रहित वर्णोंमें वर्णन किया है।

ऐसा सुन्दर प्रयास शायद ही किसी अन्य उन्नत भाषामें दृष्टिगत हो, आश्चर्य तो, यह है कि, ओष्ठ्य वर्ण रहित होनेपर भी कथापाठमें कुछ भी अरोचकता वा कठिनताकी प्रतीति भी नहीं होती है।

मन्त्रगुप्तका चरित

(१) राजाधिराजनन्दन! जब आप पर्वतगुहामें प्रविष्ट हो गये तब आप-की गतिके जाननेके हेतु मैं (मन्त्रगुप्त) कलिंगदेशमें पर्यटन करते हुए पहुंचा। उस कलिगदेशके समीपमें ही श्मशानकी भूमिसे सटे हुए एक वृक्षके नीचे नूतन पल्लवोंको एकत्र करके उनका बिछौना बनाकर मैं बैठ गया। और निद्रासे भरी आंखोंसे वहीं सो गया। कालरात्रिके केशसमूहके सदृश अन्धेरा होनेपर,

कारे, चलितरक्षसि क्षरितनीहारे निजनिलयनिलीननिःशेषजने नितान्त-शीते निशीथे घनतरसालशाखान्तरालनिर्ह्रादिनि नेत्रनिंसिनीं निद्रां निगृह्णन्, कर्णदेशं गतं 'कथं खलेनानेन दग्धसिद्धेन रिरंसाकाले निदेशं दिशता जन एष रागेणानर्गलेनार्दित इत्थं खलीकृतः । क्रियेतास्याणकनरेन्द्रस्य केनचिदनन्तशक्तिना सिद्धयन्तरायः' इति किंकरस्य किंकर्याश्चा-

* बालविबोधिनी *

चलितानि इतस्ततः सञ्चरणशीलानि रक्षांसि राक्षसा यस्मिन् तत्र । क्षरितो गलितः नीहारो हिमं यस्मिन् तत्र । निजनिलये स्वस्वगृहे निलीनाः स्थिता निःशेषा अखिला जना यस्मिन् तत्र । नितान्तं समधिकं शीतं यत्र तादृशे निशीथेऽर्धरात्रे । घनतरेति घनतराणां सान्द्रतराणां सालानां वृक्षाणां शाखान्तरालानि निर्ह्रादयति अव्यक्तशब्दं कारयतीत्येवं शीले, एतदपि निशीथे इत्यस्य विशेषणम् । नेत्रनिंसिनीं नयनचुम्बिनीम् । आगतप्रायामिति भावः । णिसि चुम्बने इत्यस्य धातो रूपमेतत् । निगृह्णन् निवारयन् । कर्णदेशं गतं श्रवणे प्रविष्टम् । खलेन दुष्टेन दग्धसिद्धेन हततापसेन । रिरंसाकाले रमणसमये । निदेशमाज्ञां दिशता कुर्वता । एष जनः-अहमिति कश्चित् कथयति । रागेण प्रेम्णा । अनर्गलेन अप्रतिबन्धेन । अर्दितः पीडितः वशीकृत इति यावत् । इत्थमनेन प्रकारेण, असमये निदेशदानेनेति भावः । खलीकृतः उपद्रुतः । क्रियेत कर्तुं शक्येत सम्भावनायां विधिलिङ् । आणकनरेन्द्रस्य-आणकानां कुत्सितानां नरेन्द्रस्य श्रेष्ठस्य-पापस्य विषवैद्यस्य वा । अनन्तशक्तिना-समधिकशक्तिशालिना । सिद्धयन्तरायः कार्यसिद्धे-

* बालक्रीडा *

राक्षसोंके इधर-उधर गमन करनेसे बरफके गिरनेपर अपने-अपने गृहोंमें सभी जनोंके सो जानेपर, खूब ठण्ड पड़नेपर आधी रातमें, अत्यन्त सान्द्र तरुओंकी डालियोंके अन्तरालोंसे अस्पष्ट ध्वनि निकलनेपर, नयन-चुम्बिनी निद्राको रोकनेपर, मेरे कानोंमें सुनायी दिया कि,—"कौन ऐसा दुष्ट तपस्वी (हततापस) है जो हम लोगोंके रमणके समय भी ऐसी-ऐसी आज्ञाएं दिया करता है कि, 'इस जनको अप्रतिबद्धप्रेमसे वशीभूत करो' ऐसी बुरी आज्ञाद्वारा वह हमें रमणकालमें तंग करता है । हाय ! ऐसा कोई नहीं जो, इस कुत्सित पापी विषवैद्यको, अपनी अधिक शक्तिसे इसकी कार्यसिद्धिमें विघ्न करता !" उपर्युक्त

तिकातर रुदितम्।

(२) तदाकर्ण्य 'क एष सिद्धः, का च सिद्धिः, किं चानेन किङ्करेण करिष्यते' इति दिदृक्षाक्रान्तहृदयः किंकरगतया दिशा किंचिदन्तरं गतस्तरलतरनरास्थिशकलरचितालंकाराक्रान्तकायम्, दहनदग्धकाष्ठनिष्ठाङ्गाररजः कृताङ्गरागम्, तडिल्लताकारजटाधरम्, हिरण्यरेतस्यरण्यचक्रान्ध·

* बालविबोधिनी *

विघ्नः। क्रियेतेत्यस्य कर्मपदमेतम्। किङ्करस्य दासस्य किङ्कर्याः दास्याः। अतिकातरं अतिदीनम्। रुदितं विलपितम्।

(२) *तदाकर्ण्य अहं मन्त्रगुप्त इति शेषः।* दिदृक्षेति–दिदृक्षया दर्शनेच्छया आक्रान्तं व्याप्तं हृदयं यस्य सः। किङ्करगतया शब्दानुमितया किंकराध्यासितया। किञ्चिदन्तरं कियद्दूरम्। तरलेति–तरलतरैरतिचञ्चलैः नरास्थिशकलैर्मनुष्यास्थिखण्डैः रचितेन निर्मितेन अलंकारेण भूषणेन आक्रान्तः व्याप्तः कायः शरीरं यस्य तादृशम्। दहनेति–दहनेन अग्निना दग्धं यत्काष्ठमिन्धनं तन्निष्ठं तत्र स्थितं यदङ्गाररजः भस्म तेन कृतः अङ्गरागः अङ्गलेपनं येन तादृशम्। तडिदिति–तडिल्लताकारां विद्युल्लतासदृशीं जटां धरतीति तादृशम्। हिरण्यरेतसि अग्नौ। अरण्येत्यादि विशेषणद्वय हिरण्यरेतसीत्यस्य। अरण्येति–अरण्यचक्रे काननम·

* बालक्रीडा *

वाली दास-दासीमें अति दीनतासे रो रही थी।

(२) इन कथनोंको सुनकर मैं (मन्त्रगुप्त) यह देखनेकी अभिलाषासे कि, यह सिद्ध कौन है, इसकी सिद्धि क्या है, इस किंकरद्वारा क्या किया जाता है ? आदि" । इस कौतूहलको देखनेके लिये आक्रान्त हृदयसे मैं किंकरकी ध्वनिवाली दिशामें चला। कुछ दूर गया था कि, मैंने देखा—"एक आदमी, मनुष्योंकी हड्डियोंके टुकड़ोंसे बने हुए अति चंचल अलंकारोंको अपनी देह भरमें पहने हुए हैं। आगमें जले हुए काष्ठ आदिकी अंगार भस्मको अपने शरीर भरमें पोते हुए है। जिसकी जटा बिजलीकी लताके समान (चमकदार) है अर्थात् विद्युल्लताके समान जटाओंको धारण किये हुए है। जो काननमण्डल

काररात्तसे क्षणगृहीतनानेन्धनग्रासचञ्चदर्चिषि दक्षिणेतरेण करेण तिल-सिद्धार्थकादीन्निरन्तरचटचटायितानाकिरन्तं, कंचिदद्राक्षम्। तस्याग्रे स कृताञ्जलिः किंकरः 'किं करणीयम्, दीयतां निदेशः' इत्यतिष्ठत्। आदिष्टश्चायं तेनातिनिकृष्टाशयेन—'गच्छ, कलिङ्गराजस्य कर्दनस्य कन्यां कनकलेखां कन्यागृहादिहानय' इति।

(३) स च तथाकार्षीत्। ततश्चैनां त्रासेनालघीयसास्रजर्जरेण च

* बालविबोधिनी *

एडले ये अन्धकारास्तेषां राक्षसे भक्षके नाशके इति यावत्। तथा क्षणेन स्वल्पसमयेन गृहीतानां धृतानां नानेन्धनानां विविधकाष्ठानां ग्रासेन भक्षणेन दहनेनेति यावत् चञ्चन्ती स्फुरन्ती अर्चिः शिखा यस्य तादृशे। दक्षिणेतरेण वामेन। सिद्धार्थाः श्वेतसर्षपाः। तदादीन् तण्डुलयवांश्चेत्यर्थः। निरन्तरचटचटायितान्—अजस्रं चटचटेति अव्यक्तशब्दं कुर्वतः। आकिरन्तं क्षिपन्तम्। कञ्चित्पुरुषमिति शेषः। तस्य होमं कुर्वतः पुरुषस्य। स पूर्वोक्तः। अयं किंकरः। तेन पुरुषेण। अतिनिकृष्टाशयेन—अत्यन्तनीचप्रकृतिना। कर्दन इति कलिङ्गराजस्य नाम।

(३) स किंकरः। तथा तत्कथनानुरूपम्। एनां कनकलेखाम्। अलघीयसा

* बालक्रीडा *

(वनसमूह) के अन्धकारको नाश करनेमें अग्निके समान है। क्षण-क्षणमें काष्ठ, ईंधन आदिसे अग्नि प्रज्वलित हो रही थी जो अपने बायें हाथसे तिल, सफेद सरसों, यव, चांवल आदिसे लगातार हवन कर रहा है। जिससे अग्निमें लगातार चट-चट शब्द हो रहा है ऐसे, हवन करनेवाले, एक आदमीको मैंने देखा। उस हवनकर्त्ताके सम्मुख वह किंकर बद्धाञ्जलि होकर पूछ रहा था—"क्या करना है, आज्ञा दें।" इस प्रकारसे हाथ जोड़े खड़े हुए उस किंकरसे उस नीच बुद्धिवाले हवन कर्त्ताने आदेश दिया—"जाओ, राजा कलिंग जिनका नाम कर्दनक है। उनकी पुत्री कनकलेखाको कन्यागृहसे यहांपर ले आओ।"

(३) उस किंकरद्वारा वह कार्य यथाज्ञा सम्पादित कर दिया गया। जब

कण्ठेन रणरणिकागृहीतेन च हृदयेन हा तात 'हा जननि' इति क्रन्दन्तीं कीर्णम्लानशेखरस्रजि शीर्णनह्ने शिरसिजानां संचये निगृह्यासिना शिलाशितेन शिरश्छिकतिपयाचेष्टत। झटिति चाच्छिद्य तस्य हस्तात्तां शस्त्रिकां तया निकृत्य तस्य तच्छिर: सजटाजालम्, निकटस्थस्य कस्यचिज्जीर्णसालस्य स्कन्धरन्ध्रे न्यदधाम्। तन्निध्याय हृष्टतरः स राक्षसः क्षीणाधिरकथयत्—'आर्य, कदर्यस्यास्य कदर्थनाद्य कदाचिन्निद्रायाति नेत्रे। वर्ज-

* बालविबोधिनी *

महता। अस्रजर्जरेण—बाष्पगद्गदेन। रणरणिकेति—रणरणिकया उद्वेगातिशयेन गृहीतम्—आक्रान्तं तेन। कीर्णेति—कीर्णा विक्षिप्ता अतश्च म्लाना शेखरस्रक् शिरोभूषणभूतमाल्यं यस्य तथाविधे, शीर्णनह्ने शिथिलबन्धने शिरसिजानां केशानां सञ्चये कलापे निगृह्य सुदृढमाकृष्य असिना खड्गेन शिलया पाषाणेन शित स्तीक्ष्णीकृतस्तेन शिरश्छिकर्त्तिषया मस्तकच्छेदनेच्छया अचेष्टत उद्यतोऽभवत्। आच्छिद्य आकृष्य। तस्य पुरुषस्य। तया शस्त्रिकया निकृत्य छित्वा। तस्य पुरुषस्य। सजटाजालं जटामण्डलमण्डितम्। जीर्णसालस्य पुरातनवृक्षस्य। स्कन्धरन्ध्रे कोटरे। न्यदधाम् न्यक्षिपम् अहं मंत्रगुप्त इति शेषः। निध्याय विलोक्य। सः पूर्वोक्तः किंकर एव राक्षसः। क्षीणाधिः अपगतमनोव्यथः। कदर्यस्य पापस्य।

* बालक्रीडा *

कन्या वहां आ गयी, तो, वह बड़े भयसे आसुओंको गिराती हुई रुधे गलेसे तथा अत्यन्त उद्वेगसे आक्रान्त हृदय होकर हा! तात, हा! जननि!! चिल्लाती हुई रोने लगी। रोनेके कारण इधर-उधर होकर उस कन्याके शिरपर अलंकारके समान धारण की हुई माला भी म्लान हो गयी बन्धन शिथिल हो गये। तब उस हवनकर्त्ताने, उसके केशकलापोंको पकड़कर, पत्थरके ऊपर तेज की हुई तलवारसे, उस कन्याके शिरको काटनेकी चेष्टा की। त्यों ही उसके हाथसे मैंने उस तलवारको छीनकर उसी हवनकर्त्ताके जटामण्डल मण्डित शिरको काट डाला। वहींपरके एक पुराने वृक्षके कोटर-(खोखला—)-में उसके शिरको फेंक दिया। उसकी मृत्युसे प्रसन्न चित्त तथा मानसी पीड़ा रहित होकर वह किंकर कहने लगा "हे आर्य! इस पापी हवनकर्त्ताकी पीडासे मेरे नेत्रोंमें

जति त्रासयति च, अकृत्ये चाज्ञां ददाति। तदत्र कल्याणराशिना साधीयः कृतम् । यदेष नरकाकः कारणानां नारकिणां रसज्ञानाय नीतः शीतेतरदीधितिदेहजस्य नगरम् , तदत्र दयानिधेरनन्ततेजसस्तेऽयं जनः कांचिदाज्ञां चिकीर्षति । आदिश, अलं कालहरणेन' इत्यनंसीत् ।

(४) आदिशं च तम्—सखे, सैषा सज्जनाचरिता सरणिः, यद-

* बालविबोधिनी *

अस्य तापसवेषधारिणः कदर्थनात् पीडनात् । निद्रा नेत्रे न आयाति, अस्य पीडनभयेन निद्रातुमपि न शक्यत इति भावः । अकृत्ये कर्त्तुमनुचिते विषये । अत्र अस्य विषये । कल्याणराशिना-मङ्गलालयेन त्वया साधीयः यथोचितम्, अति साधु वा । नरकाकः नरेषु काक इव-नराधम इत्यर्थः । कारणानां यातनानाम् । कारणा तु यातना तीव्रवेदनेत्यमरः । नारकिणां नरकपतितानाम् । नरकवासिनां याः यातना भवन्ति तासां रसज्ञानाय आस्वादग्रहणाय नीतः प्रापितः त्वयेति शेषः । शीतेतरा उष्णा दीधितिर्मरीचिर्यस्य स शीतेतरदीधितिः सूर्यस्तस्य देहज आत्मजो यमस्तस्य-नगरं यमालयमित्यर्थः । अनन्ततेजसः-अमितशक्तेः । अयं जनः-अहम् इत्यर्थः । चिकीर्षति-आज्ञामनुष्ठातुमिच्छति । कालहरणेन-कालविलम्बेन । अनंसीत् प्रणनाम ।

(४) आदिशम् आज्ञातवानहमिति शेषः । तं राक्षसम् । सैषा प्रसिद्धा । सरणिः पद्धतिः मार्ग इति यावत् । अणीयसि अणुतरे अत्यल्पे इति यावत् । कारणे आदरहेतौ । अनणीयान्-महान् । सज्जना यत्र कुत्रापि जने स्वल्पेनापि

* बालक्रीडा *

कभी भी निद्रा नहीं आती थी । मुझे डराया और धमकाया करता था । अतः आप ऐसे मांगलिक पुरुषद्वारा यह कार्य अतीव सुन्दर हुआ । आपद्वारा यह नराधम नरककी यातना भोगनेके लिये सूर्यपुत्र (यम)की नगरीमें भेज दिया गया । हे दयानिधे । आप ऐसे अमित शक्तिवाले पुरुषको आज्ञा पालनेके लिये यह जन (किंकर) इच्छा करता है । आज्ञा दें कालक्षेपसे क्या लाभ ।" उपर्युक्त वार्त्ता विज्ञापितकर उसने मुझे प्रणाम किया ।

(४) मैंने उससे कहा—"हे सखे ! यही सज्जनों द्वारा आचरित मार्ग

णीयसि कारणेऽनणीयानादरः सदृश्यते। न चेदिद नेच्छसि सेय संनताङ्गयष्टिरक्लेशार्हा सत्यनेनाकृत्यकारिणाऽत्यर्थक्लेशिता, तन्नयैनां निजनिलयम्। नान्यदित किंचिदस्ति चित्ताराधन नः' इति।

(५) अथ तदाकर्ण्य वर्णशेखरनिलीननीलनीरजायितां धीरतरलतारका दृशं तिर्यक्किंचिदञ्चितां सचारयन्ती, सलिलचरकेतनशरासनानतां

* बालविबोधिनी *

कारणेन समधिकमादरं प्रदर्शयन्तीति तेषां पद्धतिः। ततश्च मयाद्य यत्कृतं तत्तुच्छमेव तदर्थं त्वया नाहमुच्चैः प्रशंसनीय इति भावः। न चेदिदमिति-यदि इदं मदुपकारकरणं न नेच्छसि अपि तु अवश्यमिच्छसि तदा सेयं राजकन्या सन्नताङ्गयष्टिः यौवनभरेण नम्रदेहलतिका अक्लेशार्हा क्लेशसहनायोग्या अनेन तापसवेशधारिणा दुष्टेन अकृत्यकारिणा दुष्टकर्मणा क्लेशिता आयासिता तत्तस्मात् नय प्रापय एनां राजकन्यां निजनिलयं स्वगृहम्। अन्यदपरम्। इतः अस्मात् राजकन्यायाः स्वगृहप्रेषणात्। चित्ताराधनं मनः सन्तोषकरम्। नः अस्माकम्।

(५) कर्णशेखरेति—कर्णशेखरे कर्णाग्रभागे निलीनं निविष्टं यत् नीलनीरजं नीलकमलं तद्वदाचरति या ताम् तथा धीरतरला ईषच्चञ्चला तारका कनीनिका यस्या ताम् एवम्भूतां दृशं नयनम् पुनः कथम्भूतां तिर्यक् किञ्चिदञ्चितां-तिर्यक् वक्र यथा तथा किञ्चिदीषत् अञ्चितां चलिताम्। सञ्चारयन्ती इतस्ततो भ्रमयन्ती। सलिलेति सलिलचरो मीनः केतनं ध्वजो यस्य तस्य मदनस्य शरासन धनु

* बालक्रीडा *

है। कि, अणुमात्र उपकारको भी सज्जनवृन्द महान् उपकार मानते हैं। तुम भी क्या ऐसा नहीं चाहते, नहीं अवश्य चाहते हो। अस्तु, इस राजपुत्रीको, जो यौवनभारसे नम्र देहलतावाली है, जो दु खोंको सहन करनेमें असमर्था है, जो दुष्ट कर्मी हवनकर्त्ताद्वारा बहुत क्लेशित की गयी है, अपने (राजकन्याके) घर पर पहुँचा दो इससे बढ़कर मेरे मनको सन्तोष देनेवाला कोई कार्य नहीं है।"

(५) ऐसी वाक्यावली सुननेके पश्चात्—कानोंके अग्रभागमें सन्निविष्ट नीलकमलके सदृश बड़ी तथा ईषत् चंचल तारकावाली आंखोंको कुछ टेढ़ी-

चिल्लिकालतां ललाटरङ्गस्थलीनर्तकीं लीलालसं लालयन्ती, कण्टकितरक्त-गण्डलेखा, रागलज्जान्तरालचारिणी, चरणाग्रेण तिरश्चीननखार्चिश्चन्द्रिकेण धरणितलं साचीकृताननसरसिजं लिखन्ती,

(६) दन्तच्छदकिसलयलङ्घिना हर्षास्रसलिलधाराशीकरकणजालक्लेदितस्य स्तनतटचन्दनस्यार्द्रतां निरस्यताध्यान्तरालनिःसृतेन तनीय-

* बालविबोधिनी *

स्तदिव आनतां कुटिलाम् चिल्लिकालतां भ्रूवल्लीं ललाटमेवरङ्गस्थलं नृत्यशाला तस्य नर्त्तकीमित्यपि चिल्लिकालताविशेषणम् । लीलालसं विलासमन्दं यथा तथा । लालयन्ती चालयन्ती । कण्टकितेति–कण्टकिता सञ्जातरोमाञ्चा रक्ता च गण्डलेखा कपोलपाली यस्याः सा । रागेति–रागोऽनुरागः लज्जा त्रपा च तयोरन्तरालचारिणी मध्यवर्त्तिनी; इच्छा वर्त्तते किन्तु लज्जा तां प्रतिबध्नातीति भावः । तिरश्चीनेति–तिरश्चीनाः वक्राकारा नखानामर्चिषः किरणा एव चन्द्रिका यत्र तेन चरणाग्रेणेत्यस्य विशेषणं साचीति–साचीकृतं वक्रीकृतं आननसरसिजं मुखकमलं यत्रैतादृशं धरणितलं लिखन्ती कुट्टयन्ती ।

(६) दन्तच्छदेति–दन्तच्छदः अधरः स एव किशलयस्तं लंघयति कम्पयत्येवं शीलेन ओष्ठाधरकम्पिनेति यावत् । एतत्तु अनिलेनेत्यस्य विशेषणमेवमग्रेऽपि । हर्षास्रेति–हर्षेण निर्गता या अस्रसलिलधारा अश्रुजलपरम्परा तस्याः शीकरकणजालेन बिन्दुलवनिवहेन क्लेदितस्यार्द्रीकृतस्य–एतादृशस्य स्तनतटचन्दनस्य वक्षःस्थितचन्दनलेपस्य आर्द्रतां सरसतां निरस्यता अपनयता तथा आस्या-

* बालक्रीडा *

मेढ़ी इधर–उधर घुमाती हुई, मकरध्वजके धनुषके तुल्य कुछ कुटिल भ्रूलताओं को ललाटरूपी नृत्यशालाकी नर्त्तकी बनाती हुई, उस नर्त्तकी द्वारा मन्द विलास करवाती हुई, रोमाञ्चित रक्त कपोलरेखा बनाती हुई, अनुराग और लज्जायुक्त दोनोंमें रहती हुई, वक्राकार नाखूनकी ज्योतिकी चन्द्रिकावाले चरणकी अङ्गुलि से तथा अपने मुखकमलको नम्र करके भूमिपर लिखती हुई,

(६) हर्षके आंसुओंकी जलधाराके लव समुदायसे अभिषिक्त अधररूपी किसलयको कंपाती हुई, अपने मुखविवरसे निकली हुई उष्ण मन्द पवनसे

सानिलेन हृदयलक्ष्यदलनदक्षिणरतिसहचरशरस्यदायितेन तरङ्गितदशनचन्द्रिकाणि कानिचिदेतान्यक्षराणि कलकण्ठीकलान्यसृजत्—'आर्य, केन कारणेन दासजनं कालहस्तादाच्छिद्यानन्तरं रागानिलचालितरणरणिकातरङ्गिण्यनङ्गसागरे किरसि । यथा ते चरणसरसिजरजःकणिका तथाहं चिन्तनीया । यद्यस्ति दया तेऽत्रजने, अनन्यसाधारणः करणीयः स एव

* बालविबोधिनी *

न्तरालनिःसृतेन मुखविवरनिर्गतेन तथा तनीयसा मृदुना । मुखनिःसृतेन अत एवोष्णेन मन्दसमीरेण हृदयचन्दनलेपः शुष्कतां गत इति भावः । पुन. कीदृशेन? हृदयेति–हृदयं कामिजनचित्तमेव लक्ष्यं वेध्यं तस्य दलने भेदने दक्षिणो दक्षः पटुर्वा यो रतिसहचरः कामस्तस्य शरस्यदो बाणवेगस्तद्वदाचरितेन–एतदपि अनिलविशेषणम् । तरङ्गितेति–तरङ्गिता स्फुरिता दशनानां दन्तानां चन्द्रिका ज्योत्स्ना यैस्तादृशानि । एतानि वक्ष्यमाणानि । कलकण्ठीति–कलकण्ठी कोकिला तस्या इव कलानि मधुराणि अक्षराणीत्यस्य विशेषणम् । असृजत् उच्चारितवती । आर्य पूज्य । एनं दासजनं मामित्यर्थः । कालहस्तात् मृत्युकरात् । आच्छिद्य अपकृष्य । रागेति रागोऽनुरागः स एवानिलो वायुस्तेन चालिताश्चञ्चलीकृताः रणरणिका उत्कण्ठा एव तरङ्गा विद्यन्ते यस्मिंस्तादृशि अनङ्गः काम एव सागरः समुद्रस्तस्मिन् । किरसि क्षिपसि । यथा यादृशी । ते तव । चरणसरसिजरजःकणिका पादपद्मधूलिकणाः । तथा तादृशी । अत्र जने मयि । अन-

* बालक्रीडा *

कुचों परके चन्दनके लेपको सुखाती हुई, कामीजनोंके चित्तोंको लक्ष्य मानकर भेदन करनेमें प्रवीण कामदेवके बाणके वेगके समान आचरण करती हुई, 'दाँतोंकी ज्योत्स्नाको स्फुरित करती हुई निम्नांकित कुछ अक्षरोंको कोयलकी वाणीके समान मधुर कंठसे बोली—"हे आर्य! आप किस हेतु इस दासीको कालके गालसे (हाथ से) बचाकर, फिर अनुरागरूपी पवनसे चञ्चल तथा उत्कंठारूपी तरंग (लहर) वाले कामदेवरूपी समुद्रमें ढकेल रहे हैं! आप मुझे अपने कमलकी रजके तुल्य ही जानें । यदि आपकी इस तुच्छ जनपर दया है, तो आप मुझे अपने पाद सेवा कार्यमें नियुक्त करें और अपनी अनन्य

चरणाराधनक्रियायाम् । यदि च कन्यागाराध्यासने रहस्यक्षरणादनर्थ आशङ्कयेत, नैतदस्ति । रक्ततरा हि नस्तत्र सख्यश्चेटयश्च । यथा न कश्चिदेतज्ज्ञास्यति तथा यतिष्यन्ते' इति ।

(७) स चाहं देहजेनाकर्णाकृष्टसायकासनेन चेतस्यतिनिर्दयं ताडितस्तत्कटाक्षकालायसनिगडगाढसंयतः किंकराननिहितदृष्टिरगादिषम्—

* बालविबोधिनी *

न्यसाधारणः अनन्यसदृशः । स एव-अहमेव । चरणाराधनक्रियायां-पदसेवाकार्ये । कन्यागाराध्यासने-कन्यान्तःपुरवासे । रहस्यक्षरणात्-गुह्यप्रकटनात् । अनर्थो विपत्तिः । आशंकयेत भवतेति शेषः । नैतदस्ति-शंका नास्तीत्यर्थः । रक्ततराः अतिशयेन अनुरक्ताः । नः अस्माकम् । सख्यः सहचर्यः । चेटयः । दास्यः । न कश्चित्-नान्यः कोऽपि । एतत्-भवदवस्थानम् । यतिष्यन्ते चेष्टिष्यन्ते ता इति शेषः ।

(७) स चाहं-मन्त्रगुप्त इत्यर्थः । देहजेन मदनेन । आकर्णेति-आकर्णं श्रवणपर्यन्तं आकृष्टं आयतीकृतं सायकासनं कार्मुकं येन तेन । देहजेनेत्यस्य विशेषणमिदम् । अथवा आकर्णाकृष्टं यत् सायकासनं धनुस्तेनेति करणे तृतीया । अतिनिर्दयमतिकठोरम् । तत्कटाक्षेति-तस्याः राजकन्यायाः कटाक्ष एव कालायसनिगड़ः लोहशृङ्खलं तेन गाढ़ं दृढ़ं संयतो बद्धः । किंकरेति किंकरस्य राक्षसस्यानने मुखे निहिता अर्पिता दृष्टिर्येन तादृशोऽहम् । अगादिषं-कथितवान् ।

* बालक्रीडा *

सेविका बनावें । यदि आप यह सोचें कि, कन्यान्तःपुरमें जानेसे गुप्त बातें प्रकट हो जांयगी तो, इसकी आप जरा भी शंका न करें—अर्थात् निःशंक होकर मेरे साथ वहां चलकर रहें । क्योंकि वहांपर सब सहचरी और दासियां मेरी प्रगाढ स्नेहवती हैं और वे भी मुझपर अति अनुराग करती हैं आपका अन्तःपुरमें निवास कोई भी न जानें ऐसा ही उद्योग वे सब करेंगी ।"

(७) वही मैं (मन्त्रगुप्त) कामदेवद्वारा कानतक खींचकर धनुषसे वेधित हृदयवाला, उस राजपुत्रीके कटाक्षरूपी लोहेकी जंजीरोंसे परिबद्ध होकर, उस किंकरके मुखपर दृष्टि डालकर बोला—"हे किंकर ! जैसा यह प्रशस्त जघना

'यथेयं रथचरणजघना कथयति तथा चेन्नाचरेयम् , नयेत नक्रकेतनः क्षणेनैकेनाकीर्तनीयां दशाम्। जनं चैनं सह नयानया कन्यया कन्यागृहं हरिणनयनया' इति। नीतश्चाहं निशाचरेण शारदजलधरजालकान्ति कन्यकानिकेतनम्। तत्र च काचित्कालकलां चन्द्राननानिदेशाच्चन्द्रशालैकदेशे तद्दर्शनचलितधृतिरतिष्ठम्।

(८) सा च स्वच्छन्दं शयाना करतलालससंघट्टनापनीतनिद्राः

* बालविबोधिनी *

यथा यादृक्। रथचरणजघना रथचरणः चक्रं तदाकारे जघने यस्याः सा। प्रशस्तजघनेति यावत्। तथा तादृक्। आचरेय अनुतिष्ठेयम्। नयेत प्रापयेत् नक्रकेतनः मकरध्वज। क्षणेन एकेन मुहूर्तेन। अकीर्तनीयां अकथनीयाम्। दशां मरणदशामिति भावः। एनं जनं मामित्यर्थः। नय प्रापय। नीतः प्रापितः। शारदेति-शरदि भवः शारदस्तादृशो यो जलधरो मेघस्तस्य जालं मण्डलं तस्येव कान्तिर्यस्य तादृशम् सुधासितमित्यर्थः। कन्यकानिकेतनं कन्यागृहम्। तत्र कन्यागृहे। काञ्चित्-कियत्परिमिताम्। कालकलां कालस्य समयस्य कलामंशम्। चन्द्राननानिदेशात्-राजकन्यादेशात्। चन्द्रशालैकदेशे चन्द्रशाला शिरोगृहं तस्या एकदेशे एकस्मिन् विभागे। तद्दर्शनेति-तस्या राजकन्याया दर्शनेन चलिता च्युता धृतिर्धैर्यं यस्य सः।

(८) सा राजकन्या। स्वच्छन्दं प्रकामम्। शयानाः निद्रामधिगताः।

* बालक्रीडा *

राजपुत्री कहती है वैसा यदि आचरण न करूंगा तो, कामदेव एक ही क्षणमें अवर्णनीय परिस्थिति ला देगा। अर्थात् मरणावस्था प्राप्त करा देगा। अत एव इस जन (मुझ) को इसी मृगनयनी राजपुत्रीके साथ अन्तःपुरमें ले चलो।" मैं (तथा वह राजपुत्री) उस निशाचर (किंकर) द्वारा शरद् कालिक मेघोंके समान सुन्दर छविवाले (सफेद) कन्यान्तःपुरमें पहुंचा दिया गया। उस कन्यान्तःपुरमें कुछ कालतक उस चन्द्रमुखी राजकन्याके आदेशसे अट्टालिका (शिरोगृह) के एक स्थलमें फिर उस चन्द्रमुखीका दर्शन होगा, इस आशासे अधीर बुद्धि होकर बैठ गया।

(८) वह चन्द्रमुखी, घोर निद्रामें सोती हुई कई सखियोंको, हाथकी

काश्चिदधिगतार्थाः सखीरकार्षीत् । अथागत्य ताश्चरणनिहितशिरसः क्षरदस्रकरालितेक्षणा निजशेखरकेसराग्रसंलग्नषट्चरणगणरणितसंशयितकलगिरः शनैरकथयन्-'आर्य, यदत्यादित्यतेजसस्त एषा नयनलक्ष्यतां गता, ततः कृतान्तेन न गृहीता । दत्ता चेयं चित्तजेन गरीयसा साक्षीकृत्य

* बालविबोधिनी *

करतलेति-करतलेन अलसं मन्दं यत् संघट्टनं प्रेरणं तेन अपनीता दूरीभूता निद्रा यासां ताः एवम्भूताः काश्चित् सखीः सहचरीः अधिगतार्थाः अधिगतः सम्यक् ज्ञातः अर्थः मदागमनरूपो विषयो याभिस्ताः । अथ निद्रापगमनान्तरं ताः सख्यः । किम्भूताः, चरणनिहितशिरसः—मत्पादसंस्थापितमस्तकाः प्रणता इति यावत् । तथा क्षरदस्रेति-क्षरता निःसरता अस्रेण अश्रुणा करालिते व्याप्ते ईक्षणे नेत्रे यासां ताः । तथा निजशेखरेति-निजशेखरे स्वशिरोभूषणे यानि केसराणि वकुलपुष्पाणि तेषामग्रे पुरोभागे संलग्नानां स्थितानां षट्चरणानां भ्रमराणां गणस्य यद् रणितं गुञ्जितं तेन संशयिता भ्रमरगुञ्जितं वा कण्ठस्वरो वेति सञ्जातसन्देहा कला मधुरा गीर्वाग् यासां ताः । शनैर्मन्दं मन्दम् । यद् यतः । अत्यादित्यतेजसः—आदित्यमतिक्रान्तमत्यादित्यं तादृशं तेजो यस्य तस्य विजितसौरप्रतापस्येत्यर्थः। ते तव एषा अस्मत्सखी नयनलक्ष्यतां दृष्टिगोचरताम् । ततः तस्मादेव कारणात् कृतान्तेन मृत्युना न गृहीता त्वद्दर्शनादेव कृतान्तेन त्यक्तेति भावः । दत्ता तुभ्यमिति शेषः । गरीयसा अतिगुरुणा चित्तजेन कामेन रागानलं

* बालक्रीडा *

धीमी थपकियोंसे जगाकर, तथा मेरे आगमन रूपी समाचारको ज्ञात कराकर वहां बुलाकर ले आयी । आनेके अनन्तर उन सखियोंने अपने शिरोंको मेरे चरणोंपर धर दिया प्रणाम करने लगीं । आंखोंसे अश्रुपात करने लगीं । अपने शिरोभूषणोंके ऊपर लगे हुए पुष्पोंके परागोंपर गुंजायमान भ्रमरोंकी अस्पष्ट मधुर ध्वनिसे सन्देहमयी मधुर वाणी धीरे-धीरे बोलीं—"हे आर्य ! यह मेरी सखी, भगवान् सूर्यके तेजको भी जीतनेवालेसे, आपके नेत्रोंकी लक्ष्यभूता हुई है—आपद्वारा देखी गयी है । इसी हेतुसे यमराजने भी इसे नहीं ग्रहण किया-क्योंकि वह सूर्य पुत्र है और आप सूर्यको जीतनेवाले तेजको धारण किये हुए हैं ।

रागानलम् । तदनेनाश्चर्यरत्नेन नलिनाक्षस्य ते रत्नशैलशिलातलस्थिर रागतरलेनालंक्रियतां हृदयम् । अस्याश्चरितार्थं स्तनतटं गाढालिङ्गनैः सदृशतरस्य सहचरस्य च' इति । ततः सखीजनेनातिदक्षिणेन दृढतरी-कृतस्नेहनिगलस्तया संनताङ्ग्या संगत्यारंसि ।

(९) अथ कदाचिदायासितजायारहितचेतसि, लालसालिलङ्घ

* बालविबोधिनी *

प्रेमाग्नि साक्षीकृत्य दत्तेति सम्बध्यते । तदनेनेति—तत्तस्मात् अनेन रागतरलेन प्रेमविह्वलेन कनकलेखारूपेण आश्चर्यरत्नेन श्रेष्ठमणिना नलिनाक्षस्य कमलनयनस्य ते रत्नशैलस्य सुमेरोः शिलातलवत् पाषाणपट्टवत् स्थिरं सुदृढं हृदयं वक्षःस्थलं अलंक्रियतां भूष्यताम् । यथा कौस्तुभमणिर्विष्णोर्वक्षोऽलंकरोति तथेयमपि तव हृदयमलंकरोतु इति भावः । अस्या इति—सदृशतरस्य योग्यतरस्य सहचरस्य दयि-तस्य तव गाढालिङ्गनैर्निर्दयाश्लेषैः अस्याः कनकलेखायाः स्तनतटं वक्षःस्थलं च-रितार्थं कृतार्थं जायतामिति शेषः । तत इति—अतिदक्षिणेन अतिनिपुणेन अति सरलेन वा सखीजनेन सहचरीवृन्देन दृढतरीकृतः सुश्लिष्टीकृतः स्नेहनिगलः प्रेम-पाशो यस्यैवं भूतोऽहं संनताङ्ग्या कोमलशरीरया तया कनकलेखया सह संगत्य मिलित्वा अरंसि क्रीडितवान् ।

(९) अथेति—अथ तया सह संगत्यनन्तरम् कदाचित् कस्मिन्नपि काले । तमेव कालं विशिनष्टि—आयासितेति—आयासितानि खेदितानि जायारहितानां भार्या-

* बालक्रीडा *

अति बलशाली कामदेवने इस राजपुत्रीको, रागरूपी अग्निको साक्षी बनाकर, आपके हाथोंमें समर्पित कर दिया है । अतः प्रेमसे विह्वल इस कनकलेखारूपी श्रेष्ठमणिद्वारा आप ऐसे कमलनेत्रका सुमेरु पर्वतके प्रस्तरके समान सुदृढ़ हृदय अलङ्कृत किया जाय । आप ऐसे योग्यतर प्रीतमकेद्वारा इस कनकलेखाका कुच-प्रान्त प्रगाढतासे आलिंगित किया जाय ।" तत्पश्चात् अति निपुण अथवा अति सरला सहचरियोंकेद्वारा मैं प्रेमपरिबद्ध किया गया । एवं प्रेमपाशमें सम्बद्ध होकर मैंने उस कृशांगीसे लिपटकर खूब रमण किया ।

(९) रमण करते हुए कुछ समय बीतनेके पश्चात्—रमणीहीन पुरुषोंके

नखलानघनकेसरे, राजदरण्यस्थलीललाटलीलायिततिलके, ललितानङ्ग-राजाङ्गीकृतनिनिद्रकर्णिकारकाञ्चनच्छत्रे, दक्षिणदहनसारथिरयाहृतसह-कारचञ्चरीककलिके, कालाण्डजकण्ठरागरक्तरक्ताधराघरातिरणाग्रसंनाहशा-लिनि, शालीनकन्यकान्तःकरणसंक्रान्तरागलङ्घितलज्जे, दर्दुरगिरितटच-

* बालविबोधिनी *

वियुक्तानां चेतांसि हृदयानि यत्र तादृशे तथा लालसाः मधुलोलुपा ये अलयो भ्रमरास्तेषां लंघनेन विदलनेन ग्लानाः क्लान्ताः घनाः निविडाः केसराः पुंनागवृक्षा यत्र तादृशि तथा राजत् शोभमानं अरण्यस्थल्या वनभूमिरूपाया नायिकायाः ललाटे भाले लीलायितं विलासवदाचरितं तिलकं तिलकुसुमं यत्र तादृशे तथा ललितेन सुन्दरेण अनङ्ग एव राजा अनङ्गराजस्तेन अङ्गीकृतं स्वीकृतं घृतमिति यावत् निर्निद्रो विकसितः कर्णिकारो वृक्षविशेष एव काञ्चनच्छत्रं हेमातपत्रं यत्र तादृशे तथा दक्षिणो मलयपर्वतादागतो यो दहनसारथिरग्निसहायः अनिल इत्यर्थस्तस्य रयेण वेगेन आहृता आनीता उत्पादिताश्च सहकारेषु आम्रतरुषु चञ्चरीका भ्रमराः कलिकाः कोरकाश्च यत्र तादृशि तथा कालाण्डजाः कोकिलास्तेषां कण्ठरागेण मधुरस्वरेण रक्तानां कान्तं प्रति अनुरागवतीनां रक्ताधराणां शोणदशनच्छदानां कामिनीनां रतिरेव रणः सुरतयुद्धं तस्य अग्रसंनाहेन प्रथमोद्यमेन शालते शोभते तस्मिन् । तथा शालीनानामप्रगल्भानां कन्यकानां अन्तःकरणेषु हृदयेषु संक्रान्तेन समुदितेन रागेण प्रेम्णा लंघिता अतिक्रान्ता लज्जा यत्र तादृशे तथा दर्दुरगिरेः तदाख्यपर्वतस्य तटे ये चन्दनाश्चन्दनवृक्षास्तेषामाश्ले-

* बालक्रीडा *

चित्तोंको क्लेशित करनेवाला, मधुलोलुपभ्रमरों द्वारा निविड पुंनाग वृक्षोंको क्लान्त करानेवाला, शोभायमान वनभूमिरूपा नायिकाके भालमें विलाससे तिल कुसुम धारण करानेवाला, सुन्दर कामदेव रूपी राजाद्वारा स्वीकृत विकसित कर्णिकारवृक्षरूपी स्वर्णछत्रवाला, मलयपर्वतसे आनेवाले अग्निके सहायक पवनवेग द्वारा उत्पादित आमकी कलियोंपर विराजमान भ्रमरोंवाला, कोयलोंकी मधुर कूक (वाणी) से अनुरागवाली रक्ताधरोष्ठियोंके रतिसंग्रामके प्रथम प्रयास में अग्रसर स्वभाववाला, अप्रगल्भ कन्याओंके हृदयोंमें प्रेम उत्पन्न करके उन्हें लज्जा रहित बनानेवाला, दुर्दर नामक पर्वतके तटमें (पासमें) लगे हुए चन्दनके

न्दनाश्लेषशीतलानिलाचार्यदत्तनानालतानृत्यलीले काले, कलिङ्गराजः सहाङ्गनाजनेन सह च तनयया सकलेन च नगरजनेन दश त्रीणि च दिनानि दिनकरकिरणजालालङ्घनीये, रणदलिसङ्घलङ्घितनतलताग्रकिसलयलीढसैकततटे, तरलतरङ्गशीकरासारसङ्गशीतले सागरतीरकानने क्रीडारसजातासक्तिरासीत् ।

* बालविबोधिनी *

पेषु सम्पर्केण शीतलो योऽनिलः स एवाचार्यः शिक्षागुरुस्तेन दत्ता अर्पिता नानालताभ्यो नृत्यलीला यत्र तादृशे काले समये वसन्ते इति शेषः । कलिङ्गराज कर्दनभूपतिः । तनयया दुहित्रा कनकलेखयेति यावत् । दश त्रीणि च दिनानि-त्रयोदशदिनानि । दिनकरेति-दिनकरस्य सूर्यस्य किरणजालेन मयूखमण्डलेन अलंघनीये अनतिक्रमणीये—सागरतीरकानने इत्यस्य विशेषणम् । काननं घनसन्निविष्टैः पादपैस्तथा आवृतं यथा सूर्यकिरणानामपि तत्र प्रवेशो न भवतीत्यर्थः । तथा रणदलीति-रणन्तो गुञ्जन्तो ये अलयो भ्रमरास्तेषां सङ्घेन समूहेन लङ्घिता-आक्रान्ता अतएव नता नम्रीभूता या लताः व्रतत्यस्तासां अग्रकिसलयैः पल्लवाग्रैः आलीढं व्याप्तं सैकततटं सिकतामयस्थानं यत्र तथाभूते । तथैव तरलेति—तरलतरङ्गाणां वायुवशाच्चञ्चललहरीणां शीकरासारस्य जलकणवर्षणस्य सङ्गेन सम्पर्केण शीतले एवं भूते सागरतीरकानने समुद्रतटस्थवने । क्रीडेति—स राजा कर्दनः क्रीडायां विहारे यो रसोऽनुरागस्तत्र जाता समुत्पन्ना आसक्तिरावेशो यस्य तादृश आसीत् ।

* बालक्रीडा *

पेड़ों से आश्लिष्ट होकर शीतल पवनरूपी आचार्य (शिक्षक) द्वारा नाना लताओंको नृत्यलीला दिलानेवाला वसन्तका समय आ गया । तब कलिंगराज अपनी अंगनाओं, पुत्री, नगरनिवासियोंके साथ समुद्रके तीरवाले आराम बागमें विहारकी इच्छामें वशीभूत होकर गये—वह आरामबाग वहांकी बालुकामयी भूमिपर लताओंके पल्लवोंसे आच्छादित कर लिया गया था और वे लताएं भी गुंजायमान भ्रमरोंके समूहोंके आरोहणसे झुकी हुई थीं । उस भूमिपर चञ्चलायमान लहरों (तरंगों) के छोटे छोटे विन्दु पवनके झोंकोंसे आ रहे थे जिससे वह भूमि अति शीतल थी ।

(१०) अथ संततगीतसंगीतसंगताङ्गनासहस्रशृङ्गारहेलानिरर्गलानङ्गसंघर्षहर्षितश्च ।रागतृष्णैकतन्त्रस्तत्र रन्ध्र आन्ध्रनाथेन जयसिंहेन सलिलतरणसाधनानीतेनानेकसंख्येनानीकेन द्रागागत्यागृह्यत सकलत्रः। सा चानीयत त्रासतरलाक्षी दयिता नः सह सखीजनेन कनकलेखा। तदाहं दाहेनानङ्गदहनजनितेनान्तरिताहारश्चिन्ताश्चिन्तयन्दयितां गलितगात्रकान्तिरित्यतर्कयम्—'गता सा कलिङ्गराजतनया जनित्रा जनयित्र्या

* बालविबोधिनी *

(१०) सन्ततेति—सन्ततगीतेषु निरन्तरप्रवृत्तेषु सङ्गीतेषु गानेषु संगतानां मिलितानामङ्गनानां कामिनीनां सहस्रस्य शृङ्गारहेलया निधुवनलीलया निरर्गलः अप्रतिहतो यः अनङ्गसङ्घर्षः कामोद्रेकस्तेन हर्षितः तथा रागतृष्णयोः अनुरागभोगेच्छयोः एकतन्त्रः पराधीनः स राजा कर्दन इति शेषः। तत्र तस्मिन् रन्ध्रे अवकाशे। आन्ध्रनाथेन आन्ध्रदेशाधिपेन। सलिलतरेति—सलिलतरणसाधनं नौकारूपं तेन आनीतेन तद्देशं प्रापितेन अनेकसंख्येन बहुना अनीकेन सैन्येन द्राग् झटिति आगत्य तत्रैव सागरतीरवने इति शेषः अगृह्यत गृहीतोऽभवत् सकलत्रः सपरिवारः। सा च कनकलेखाऽपि। अनीयत जयसिंहेन स्वनगरं नीता। त्रासतरलाक्षी भयचञ्चलनयना। दयिता-वल्लभा नः अस्माकम्। तदाहमित्यादि—तदा अहं मन्त्रगुप्त इत्यर्थः अनङ्गदहनजनितेन—मदनानलोत्पादितेन दाहेन तापेन अन्तरिता अपगता आहारचिन्ता यस्य सः गलित गात्रकान्तिः भ्रष्टदेहशोभः। इति-वक्ष्यमाणप्रकारम्। अतर्कयम् व्यचारयम्। सा कनकलेखा। जनित्रा पित्रा। जनयित्र्या जनन्या। अरिहस्तं शत्रुवशम्।

* बालक्रीडा *

(१०) आरामबागमें पहुंचनेपर-निरन्तर संगीत और गानमें प्रवृत्त सहस्रों रमणियोंकी निधुवनलीलासे अप्रतिहत कामोद्रेकसे हर्षित होकर तथा अनुराग और भोगेच्छायुक्त होकर पराधीन (विलासोंसे पराधीन) हो रहा था उसी कालमें आंध्रदेशाधिपति जयसिंह, नावोंद्वारा अनेक सैन्यदलके साथ वहां आया और उसने शीघ्रतासे सागर तीरवाले बागमें विहार करनेवाले उस राजाको स्त्रियोंके सहित पकड़ लिया। वह भयसे चञ्चलनयनी मेरी प्राणप्रिया कनकलेखा भी

च सहालिहस्तम् । निरस्तधैर्यस्तां स राजा नियतं संजिघृक्षेत् । तदसहा च सा सती गररसादिना सद्यः संतिष्ठेत । तस्यां च तादृशीं दशां गतायां जनस्यास्यानन्यजेन हन्येत शरीरधारणा । सा का स्याद्गतिः' इति ।

(११) अत्रान्तर आध्रनगरादागच्छन्नग्रजः कश्चिदैक्ष्यत । तेन चेयं कथा कथिता—'यथा किल जयसिंहेनानेकनिकारदत्तसंघर्षणजिघांसितः

* बालविबोधिनी *

निरस्तधैर्यः—अधीरः । स राजा—आन्ध्रराजः । नियतमवश्यम् । संजिघृक्षेत् संग्रहीतुमिच्छेत् स्ववशीकर्तुमिच्छेदिति यावत् । सम्पूर्वक ग्रहधातोः सन्नन्ताद् विधिलिङ् । तदसहा—तस्य वशीभावं सोढुमसमर्था । सा कनकलेखा । गररसादिना विषादिभक्षणेन । सद्यस्तत्क्षणात् । संतिष्ठेत म्रियेत । तस्यां कनकलेखायाम् । तादृशीं दशां-मृत्युम् । जनस्य अस्य-ममेत्यर्थः । अनन्यजेन कामेन । कुसुमेषुरनन्यज इत्यमरः । हन्येत नाश्येत । शरीरधारणा देहस्थितिः जीवनमित्यर्थः । गतिरभ्युपायः ।

(११) अत्रान्तरे एतस्मिन् समये । अग्रजो ब्राह्मणः । ऐक्ष्यत—दृष्टोऽभवत् । तेन अग्रजेन । कथा वार्ता । अनेकेति—अनेकैर्नानाविधैर्निकारैर्यात·

* बालक्रीडा *

सखियोंके सहित उस राजा जयसिंह द्वारा उसके यहां ले जायी गयी । तब मैं (मन्त्रगुप्त) भी कामदेवरूपी आगसे उत्पन्न दाहसे दग्ध होकर भूख-प्यासकी चिन्ता त्यागकर उसी प्यारीकी चिन्तामें लीन हो गया । चिन्ताग्रस्त होनेसे क्षीणकान्तिवाला होकर मैंने विचार किया—"वह मेरी प्यारी कनकलेखा अपने माता-पिताके साथ शत्रुके हाथमें चली गयी । वह आन्ध्रराज (आन्ध्रेश) अवश्य उसे अपने वशमें लानेकी कोशिश करेगा । वह कन्या इस बातको पसन्द न करके तुरत ही अपने प्राणोंको, विषरस पान करके, त्याग देगी । उसकी ऐसी दुर्दशा होनेपर इस जनकी (मेरी) क्या दशा होगी—कामदेवसे मेरी देह नष्ट कर दी जायगी—कामदेव मुझे मार डालेगा । हा ! यह कैसी भयप्रद दशा होगी !

(११) इसी विचारके समय आंध्र नगरसे आता हुआ एक ब्राह्मण दिख·

स कर्दनः कनकलेखादर्शनैधितेन रागेणारक्ष्यत । सा च दारिका यक्षेण केनचिदधिष्ठिता न तिष्ठत्यग्रे नरान्तरस्य । आयस्यति च नरेन्द्रसार्थसंग्रहणेन तन्निराकरिष्यन्नरेन्द्रो न चास्ति सिद्धिः' इति । तेन चाहं दर्शिताशः शंकरनृत्यरङ्गदेशजातस्य जरत्सालस्य स्कन्धरन्ध्रान्तर्जटाजालं

* बालविबोधिनी *

नाभिर्दत्तेन संवर्षणेन पराभवेण जिघांसितो हन्तुमिष्टः । कनकलेखाया दर्शनेन अवलोकनेन एधितो वर्धितस्तेन । रागेण प्रेम्णा । अरक्ष्यत रक्षितोऽभवत् । कनकलेखायां जनितानुरागत्वादेव तत्पितरं कर्दनं न हतवानिति भावः । दारिका कन्या । यक्षेण गुह्यकेन । अधिष्ठिता आक्रान्ता । अग्रे सम्मुखे । नरान्तरस्य अन्यपुरुषस्य । आयस्यति-सम्यक् चेष्टते । यसु प्रयत्ने इत्यस्य रूपम् । नरेन्द्रेति-नरेन्द्रसार्थस्य तन्त्रमन्त्रविरसमाजस्य संग्रहणेन समाहरणेन । तत्—यक्षाधिष्ठानम् । निराकरिष्यन् दूरीकरिष्यन् । नरेन्द्रो जयसिंहः । नचास्ति सिद्धिः—महता प्रयत्नेनापि तत्कार्यं न सिद्धमित्यर्थः । तेन अग्रजेन । दर्शिताशः प्रदर्शितमार्गः । दर्शिता आशा दिक् यस्मै स इति समासः । शंकरेति—शंकरस्य शिवस्य नृत्यं ताण्डवं तस्य रङ्गदेशः रङ्गभूमिः श्मशानं तत्र जातस्योत्पन्नस्य । जरत्सालस्य जीर्णवृक्षस्य । स्कन्धेति-स्कन्धानां रन्ध्रस्य कोटरस्य अन्तर्मध्ये स्थितं यज्जटाजालं शिफासमूहस्तत् निकृष्य आकृष्य तेन जटाजालेन जटिलतां जटा-

* बालक्रीडा *

लायी दिया । उसकेद्वारा यह कथा कही गयी—"यद्यपि राजा जयसिंह अनेकों यातनाओं तथा अपमानोंसे कलिंगाधिपतिको मारना चाहता था, परन्तु, उसने उसकी पुत्री कनकलेखाका अवलोकन किया और उसपर (कनकलेखापर) आसक्त हो गया (उत्पन्नहुए विपुलानुरागसे) अभीतक उसे मारा नहीं । किन्तु, उस कन्यापर कोई यक्ष सवार है । जिससे वह कन्या अन्य किसी पुरुषके सम्मुख नहीं आती है । राजा (आग्रेश) उस कन्या पर यक्ष दूर करानेके अनेकों उपाय मान्त्रिकों-तान्त्रिकोंसे करा रहा है, परन्तु, अभीतक कोई सिद्धि नहीं प्राप्त हुई है ।" उस विप्रकेद्वारा प्रदर्शित मार्ग पाकर (आशान्वित होकर) मैंने भगवान् शङ्करके तांडवके रंगस्थलमें (श्मशानमें) उत्पन्न एक जीर्ण वृक्षके तने (स्क-

निष्कृष्य तेन जटिलतां गतः कन्थाचीरसंचयान्तरितसकलगात्रः काश्चिच्छिष्यानग्रहीषम् । तांश्च नानाश्चर्यक्रियातिसंहिताज्जनादाकृष्टान्नचेलादित्यागान्नित्यहृष्टानकार्षम् । अयासिषं च दिनैः कैश्चिदान्ध्रनगरम् ।

(१२) तस्य नात्यासन्ने सलिलराशिसदृशस्य कलहंसगणदलितनलिनदलसंहतिगलितकिञ्जल्कशकलशारस्य सारसश्रेणिशेखरस्य सरस्ती॰

*** बालविबोधिनी ***

गतः प्राप्तः । कन्थेति—कन्थाचीरस्य जीर्णवस्त्रखण्डस्य सञ्चयेन संग्रहेण अन्तरितं आच्छादितं सकलं गात्रं शरीरं येन तादृशोऽहम् । शिष्यान् भक्तानित्यर्थः अग्रहीष-संगृहीतवान् । तान्—शिष्यान् । नानेति नानाभिर्बहुविधाभिः अद्भुतकर्मभिः अतिसंहितात् प्रतारितात् जनात् लोकात् आकृष्टानि संगृहीतानि लब्धानीति यावत् यानि अन्नचेलादीनि भोज्यवस्त्रादीनि तेषां त्यागात् तेभ्यो दानात् नित्यहृष्टान् सर्वदासन्तुष्टान् अकार्षं कृतवान् । अयासिषं-गतवान् । कैश्चित् कतिपयैः ।

(१२) तस्य आन्ध्रनगरस्य । नात्यासन्ने किञ्चिद्दूरे । सलिलराशिसदृशस्य समुद्रोपमस्य तथा कलहंसानां राजहंसानां गणैः समूहैर्दलितानां खण्डितानां नलिनदलानां कमलपत्राणां संहतिभ्यः संघेभ्यो गलितानां निःसृतानां किञ्जल्कानां केसराणां शकलैः खण्डैः शारस्य कर्बुरस्य तथा सारसानां पक्षिविशेषाणां श्रेणिः पंक्तिरेव शेखरः शिरोभूषणं यस्य तस्यैवंभूतस्य सरसः सरोवरस्य तीरकानने

*** बालक्रीडा ***

न्यदेश) के कोटर (खोखला) से जटा समूहको निकाल लिया और अपने शिरपर धारणकर, जटाधारी रूपको बना लिया । अपने शरीरको फटे-पुराने वस्त्रोंसे आच्छादित कर लिया । कुछ भक्तोंको भी एकत्र कर लिया । अनेकों प्रकारके अद्भुतकर्म दिखाकर दर्शकोंको मुग्धकर जो अन्न-वस्त्र उनसे प्राप्त करता वह सब भक्तोंमें वितरित कर देता, जिससे मेरे सभी भक्तगण सन्तुष्ट थे । मैं कुछ भक्तोंके साथ कुछ दिनोंमें आन्ध्र देशमें गया ।

(१२) आन्ध्र देशके समीपमें ही (थोड़ी दूरीपर), समुद्रके तुल्य, और कलहंसोंके द्वारा विदलित कमलपत्रोंके समुदायोंसे निःसृत (गिरे हुए) किञ्जल्कोंके

रकानने कृतनिकेतनः स्थितः शिष्यजनकथितचित्रचेष्टाकृष्टसकलनागरजनाभिसंधानदक्षः सन्दिशि दिशीत्यकीर्त्ये जनेन-'य एष जरदरण्यस्थलीसरस्तीरे स्थण्डिलशायी यतिस्तस्य किल सकलानि सरहस्यानि सषड्ङ्गानि च छन्दांसि रसनाग्रे संनिहितानि, अन्यानि च शास्त्राणि येन यानि न ज्ञायन्ते स तेषां तत्सकाशादर्थनिर्णयं करिष्यति। असत्येन नास्यास्यं संसृज्यते। सशरीरश्चैष दयाराशिः। एतत्संग्रहेणाद्य चिरं चरितार्था दीक्षा। तच्च-

* बालविबोधिनी *

तटोद्याने कृतनिकेतनः रचितगृहः। शिष्येति-शिष्यजनेन भक्तवृन्देन कथिताभिः प्रकाशिताभिः चित्रचेष्टाभिः आश्चर्यजनकक्रियाभिः आकृष्टानां मुग्धानां सकलनागरजनानां निखिलपौरवृन्दानां अभिसन्धाने प्रतारणे दक्षः पटुः। दिशि दिशि-सर्वत्र। इति—वक्ष्यमाणप्रकारं जनेन लोकेन अकीर्त्ये कीर्त्तितोऽभवम्। किमिति तदाह य एष इत्यादि। य एष इत्यस्य यतिरित्यनेन सम्बन्धः। जरदिति-जरदरण्यस्थल्यां जीर्णवनभूमौ स्थितस्य सरसस्तडागस्य तीरे। स्थण्डिलशायी—दर्भशयनः। यतिः सन्यासी। वर्त्तते इति शेषः। तस्य यतेः। सरहस्यानि उपनिषत्सहितानि। स षड्ङ्गानि-शिक्षाकल्पादीन्यङ्गानि तैः सहितानि। छन्दांसि वेदाः। रसनाग्रे जिह्वाग्रे। सन्निहितानि निविष्टानि। येन जनेन। यानि शास्त्राणि। स जनः। तेषां शास्त्राणाम्। तत्सकाशात् तस्य यतेः सकाशात्समीपात्। अर्थनिर्णयं अर्थज्ञानम्। असत्येन अनृतेन। अस्य यतेः। आस्यं मुखम्। न संसृज्यते कदापि मिथ्या न वदतीति भावः। सशरीरः मूर्तिमान्। एष यतिः। दयाराशिः—करुणाखनिः। एतत्सङ्ग्रहेण एतस्य यतेः सङ्ग्रहेण प्राप्त्या। एतत्स-

* बालक्रीडा *

टुकड़ोंसे चित्रित, (अनेक रंगवाला), सारस पक्षियोंकी पंक्तियोंको शिरोभूषण बनाये हुए, एक तालाबपर मैं गया और उसी तालाबके किनारे एक बागमें एक कुटी बनायी तथा उसी कुटीमें निवास करने लगा। भक्तोंद्वारा प्रचारित तथा अनेकों प्रकारकी अद्भुत लीलाओंकेद्वारा आकर्षित सभी पुरवासियोंके प्रतारण (ठगनेमें) निपुण (जो मैं) मेरी कीर्ति जनोंके द्वारा प्रत्येक दिशामें फैल गयी—"यह यति जो जीर्ण वनभूमिमें तालाबके किनारे कुशासनपर बैठा रहता है।

चरणरजःकणैः कैश्चन शिरसि कीर्णैरनेकस्यानेक आतङ्कश्चिरं चिकित्सकैर-संहार्यः संहृतः। तदङ्घ्रिक्षालनसलिलसेकैर्निष्कलङ्कशिरसां नश्यन्ति क्षणेनैकेनाखिलनरेन्द्रयन्त्रलङ्घिनश्चण्डतारामहाः। न तस्य शक्यं शक्ते-रियत्ताज्ञानम्। न चास्याहंकारकणिका' इति।

* बालविबोधिनी *

[काशादर्थग्रहेणेत्यपि पाठान्तरं तत्र एतस्य सकाशादर्थग्रहेण मन्त्रार्थज्ञानेनेत्यर्थः। चरितार्था-सफला। दीक्षा-शिक्षाग्रहणम्। तच्चरणजःकणैः तस्य पदधूलिले-शैः। कैश्चन अनिर्वाच्यैरित्यर्थः। शिरसि मस्तके कीर्णैः निःक्षिप्तैः। अनेकस्य असंख्यस्य लोकस्य। आतङ्कः भयम्। यस्तु चिरं दीर्घकालं चिकित्सित्वापि चिकित्सकैर्भिषग्भिः असंहार्यः अपनेतुमशक्यः सोऽप्यातङ्कः संहृतः अपनीतः। तदंघ्रीति-तस्य यतेः अंघ्रिक्षालनस्य चरणधावनस्य यत् सलिलं पादप्रक्षालनजलं तस्य सेकैरभिषेचनैः निष्कलङ्कं निष्पापं शिरो येषां तेषां जनानाम्, अखिलनरे-न्द्रान् सकलमन्त्रवादिनश्चिकित्सकान् यन्त्राणि च लङ्घयन्ति अतिक्रामन्ति ये तादृशाः चण्डतारामहाः कुपितनक्षत्रग्रहगणाः एकेन क्षणेन मुहूर्त्तमात्रेण नश्य-न्ति शाम्यन्ति। तस्य यतेः। शक्तेः सामर्थ्यस्य इयत्ताज्ञानं परिमाणबोधः न शक्यं कर्तुमशक्यम्। अहङ्कारकणिका अहमेतावान् शक्तिमानस्मि इत्याकारकाः-भिमानलेशः।

* बालक्रीडा *

उसके जिह्वापर, उपनिषद् सहित वेद तथा शिक्षा, कल्प आदि, नाचा करते हैं। जिस भी व्यक्तिको जो शास्त्र नहीं आता हो उसे चाहिये कि, वह उस यतिसे अर्थज्ञान सहित प्राप्त कर ले। इस यतिका मुख, असत्यसे तो, स्पर्शतक, नहीं किये हुए है—कभी झूठ नहीं बोलता है। यह यति साक्षात् करुणाका कोष है। इस यतिके द्वारा प्राप्त की हुई दीक्षा सफल होगी। इस यतिके चरणकी रजके-कणोंको शिरपर धारण करनेसे कई एक व्यक्तियोंके भय-व्याधि, पागलपन दूर हो गये। जिनकी चिकित्सा चिरकालतक करके बड़े-बड़े वैद्यराट थक गये थे। जो व्याधियां, दुष्ट ग्रह, भूत-प्रेत चक्र, ब्रह्मराक्षस आदि बड़े-बड़े मान्त्रिकों-तान्त्रिकों, वैद्यों-हकीमों, डाक्टरों और ओझाओंके द्वारा नष्ट नहीं होते हैं उन

(१३) सा चेयं कथानेकजनास्यसंचारिणी तस्य कनकलेखाधिष्ठानधनदाशाकरनिराक्रियातिसक्तचेतसः क्षत्रियस्याकर्षणायाशकत् । स चाहरहरागत्यादरेणातिगरीयसार्चयन्नर्थैश्च शिष्यान्संगृह्णन्नधिगतक्षणः कदाचित्काङ्क्षितार्थसाधनाय शनैरयाचिष्ट । ध्यानधीरः स्थानदर्शितज्ञान·

* बालविबोधिनी *

(१३) सा पूर्ववर्णिता । कथा वार्ता । अनेकजनास्यसंचारिणी-निखिललोक मुखनिर्गता तस्य क्षत्रियस्य जयसिंहस्य । कथम्भूतस्येत्याह-कनकेति--कनकलेखा अधिष्ठानमाश्रयो यस्य तादृशस्य धनदाशाकरस्य कुबेरकिङ्करस्य यक्षस्य निराक्रियायां निराकरणे अतिसक्तं लग्नं चेतो यस्य तस्य । आकर्षणाय वशीकरणाय । अशकत् समर्थोऽभवत् । स जयसिंहः । अहरहः प्रतिदिनम् । अतिगरीयसा-अत्यधिकेन । अर्थैः धनैः । संगृह्णन् आयत्तीकुर्वन् । अधिगतक्षणः प्राप्तावसरः । काङ्क्षितार्थसाधनाय-अभीष्टसिध्यर्थम् । शनैः मन्दं मन्दम् । अयाचिष्ट-प्रार्थयामास । ध्यानधीरः समाधिस्थिरः । स्थानेति-स्थाने योग्यपात्रे दर्शितः प्रकटितः ज्ञानस्य प्रज्ञायाः सन्निधिः सान्निध्यं येन सः । एनं जयसिंहम् । निवार्य

* बालक्रीडा *

उपर्युक्तरोग-आदिको इस यतिके चरणके प्रक्षालित जलसे एक क्षणमें लाभ होता है । अर्थात् इस यतिके चरणके अंगुष्ठका प्रक्षालित जल माथेपर लगानेसे सब व्याधियोंको नष्ट कर देनेवाला है । इस यतिकी कितनी शक्ति है इसका ज्ञान किसीको नहीं है इसमें अभिमानका लेश भी नहीं है ।”

(१३) इस प्रकारसे मेरी कीर्ति-कथाको सभी लोगोंके मुखसे निकलनेपर वह क्षत्रिय राजा जयसिंह भी मेरी कथाके वशीभूत हुआ । जिसका चित्त, कनकलेखाके ऊपर रहनेवाले कुबेरके सेवक उस यक्षको दूर भगानेमें, आसक्त हो रहा था । उस राजा जयसिंहने नित्य आकर अति आदरसे प्रचुर द्रव्यसे मेरी पूजा करके तथा मेरे भक्तोंको द्रव्यादिसे अपने अनुरूप कर लिया । एक दिन अवसर पाकर उस राजाने अपनी अभीष्ट साधनाके हेतु मुझसे धीरेसे निवेदन किया समाधिस्थिर होकर मैंने, योग्यपात्रमें प्रज्ञाके सान्निध्यको लगाते हुए, उस

संनिधिश्चैनं निरीक्ष्य निचाप्याकथयम्—'तात, स्थान एष हि यत्नः । तस्य हि कन्यारत्नस्य सकलकल्याणलक्षणैकराशेरधिगतिः क्षीरसागररशनालङ्कृताया गङ्गादिनदीसहस्रहारयष्टिराजिताया धराङ्गनाया एवासादनाय साधनम् । न च स यक्षस्तदधिष्ठायी केनचिन्नरेन्द्रेण तस्या लीलाञ्चितनीलनीरजदर्शनाया दर्शनं सहते, तदत्र सह्यतां त्रीण्यहानि, यैरहं यतिष्येऽर्थस्यास्य साधनाय' इति ।

* बालविबोधिनी *

विचार्य । तात वत्स । स्थाने युक्तः । यत्नः उद्यमः त्वया क्रियमाण इति शेषः । कन्यारत्नस्य कन्यासु रत्नं श्रेष्ठं तस्य । सकलेति—सकलानां सर्वेषां कल्याणलक्षणानां शुभचिह्नानां एकराशेः एकाश्रयस्य सर्वप्रकारमङ्गललक्षणाधारस्येत्यर्थः । कन्यारत्नस्य विशेषणमेतत् । अधिगतिः प्राप्तिर्लाभ इति यावत् । क्षीरेति क्षीरसागरो दुग्धाब्धिरेव रशना मेखला तया अलङ्कृतायाः भूषितायाः । तथा गङ्गादीनां नदीनां सहस्रमेव हारयष्टिः हारलता तया राजितायाः शोभितायाः धरा वसुमत्येवाङ्गना कामिनी तस्याः । आसादनाय प्राप्तये । साधनमुपायः । येनैतादृशं कन्यारत्नं लप्स्यते तेन ससागरा धरापि प्राप्स्यत इति भावः । न चेति—तदधिष्ठायी तां कन्यामधितिष्ठतीति तथा । तत्राविष्ट इत्यर्थः स यक्षः नरेन्द्रेण मन्त्रतन्त्रज्ञेन लीलया विलासेन कटाक्षादिना अञ्चितं शोभितं नीलनीरजवत् नीलकमलवत् दर्शनं नयनं यस्याः स्तादृश्याः स्तस्याः कन्यायाः दर्शनमवलोकनं न सहते नाभिलषति । तत्तस्मात् । अत्र विषये । सह्यतां अपेक्ष्यताम् । अहानि दिनानि । यैर्दिनैः । यतिष्ये चेष्टिष्ये । अर्थस्य प्रयोजनस्य । साधनाय सम्पादनाय ।

* बालक्रीडा *

राजा को देखकर कहा—"हे तात ! आपकेद्वारा किया हुआ यह उद्योग युक्त ही है । उस कन्यारत्नकी प्राप्ति करना जो सम्पूर्ण मांगलिक चिह्नोंकी निधिके समान है, तो वैसा ही शुभप्रद है जैसे दुग्धसमुद्ररूपी करधनीको पहनेहुए तथा गङ्गा आदि सहस्रों नदियोंकी माला धारण किये हुए पृथिवीको प्राप्ति करना है । [जो यह कन्या प्राप्त करेगा वह आसमुद्रान्त राज्य करेगा] परन्तु, उस कन्यापर अधिष्ठानकर्ता वह यक्ष उस कन्याके विलाससे शोभित नीलकमलके समान

(१४) तथादिष्टे च हृष्टे क्षितीशे गते निशि निशि निर्निशाकरार्चिषि नीरन्ध्रान्धकारकणनिकरनिगीर्णदशदिशि निद्रानिगडितनिखिलजनदृशि निर्गत्य जलतलनिलीनगाहनीयं नीरन्ध्रं कृच्छ्राच्छिद्रीकृतान्तरालं तदेकतः सरस्तटं तीर्थासन्निकृष्टं केनचित्खननसाधनेनाकार्षम् । घनशिलेष्टिकाच्छन्नच्छिद्राननं तत्तीरदेशं जनैरशङ्कनीयं निश्चित्य, दिनादिस्नाननि-

* बालविबोधिनी *

(१४) तथा तेन रूपेण । आदिष्टे उपदिष्टे । हृष्टे सन्तुष्टे । निशि निशि प्रतिरात्रम् । किम्भूतायां निशीत्याह निर्निशाकरार्चिषि-निर्नास्ति निशाकरस्य चन्द्रस्य अर्चिः तेजो यस्यां तथाभूतायां तथा नीरन्ध्राणां सान्द्राणां अन्धकाराणां तमसां कणनिकरैः कणसमूहैर्निगीर्णाः अवच्छादिता दश दिशो यस्यां तादृश्यां पुनश्च निद्रया निगडिताः बद्धाः निखिलजनानां दृशो नयनानि यस्यां तथाभूतायाम् । निर्गत्य स्वस्थानाद्बहिर्भूय । जलतलेत्यादि-तस्य सरसः एकतः एकस्यां दिशि जलतले सलिलाधःप्रदेशे निलीनेन निविष्टेन जनेन गाहनीयं प्रवेश्यम् तथा नीरन्ध्रं निश्छिद्रं तथा कृच्छ्रात् अतिकष्टेन छिद्रीकृतं शून्यीकृतमन्तरालं मध्यभागो यस्य तादृशम् तथा तीर्थानां जलावतरणसोपानानां असन्निकृष्टं दूरवर्त्ति एवम्भूतं सरस्तटं केनचित् खननसाधनेन खनित्रेणाकार्षं कृतवानहम् । घनेति-घनाभिर्निबिडाभिः शिलाभिः पाषाणैः इष्टिकाभिश्च छन्नमाच्छादितं छिद्रस्य सुरङ्गाया आननं मुखं यस्य तादृशं तत्तीरदेशं जनैर्लोकैः अशङ्कनीयं जनानां शंका

* बालक्रीडा *

मेत्रोंको किसी मन्त्रज्ञको दर्शित कराना सहन नहीं करता है । अतः आप तीन दिनकी और इसके लिये प्रतीक्षा करें । इन दिनोंमें मैं आपके अर्थसाधनके लिये प्रयत्न करूंगा ।

(१४) ऐसी राय देनेपर जब राजा जयसिंह प्रसन्न होकर चला गया, तब मैंने चन्द्रकी प्रभाहीन रात्रियोंमें, जब गहन अन्धकारके कणोंसे दशों दिशाएं व्याप्त हो जाती थीं, निद्रासे सभी जनोंकी आंखे मुंद जाती थीं, कुटीसे निकलकर उस तालावके एक ओर जलके अधः प्रदेशमें जनके निलीन योग्य, प्रवेश योग्य छेद रहित बड़े कष्टसे एक छेदको कुदारसे खोदकर सुरंग नामा तैयार किया । जिसके मध्यभागमें एक सुराख था जो सीढ़ियोंसे दूर था । उस सुरङ्गके प्रवेशद्वा-

षिक्तगात्रश्च नक्षत्रसन्तानहारयष्टिमध्यग्रथितरत्नम्, क्षणदान्धकारगन्धहस्तिदारणैककेसरिणम्, कनकशैलश्रृङ्गरङ्गलास्यलीलानटम्, गगनसागरघनतरङ्गराजिलङ्घनैकनक्रम्, कार्याकार्यसाक्षिणम्, सहस्रार्चिषं सहस्राक्षदिगङ्गनाङ्गरागरागायितकिरणजालम्,, रक्तनीरजाञ्जलिनाराध्य निजनिकेतनं न्यशिश्रियम् ।

* बालविबोधिनी *

न भविष्यतीत्येवं निश्चित्य अवधार्य दिनादौ प्रभाते निर्षिक्त स्नानेन शुद्धीकृतं गात्रं शरीरं येन तादृशोऽहं सहस्रार्चिषं दिवाकरं किम्भूतं तमित्याह नक्षत्रेत्यादि· नक्षत्राणां सन्तानः समूह एव हारयष्टिर्मौक्तिकलता तस्या मध्यग्रथितं सम्मुखं ग्रथितं यद् रत्नं तत्स्वरूपं, तथा क्षणदाया रजन्याः अन्धकार एव गन्धहस्ती मत्तगजस्तस्य दारणे भेदने एककेसरिणं अद्वितीयसिंहस्वरूपम्, तथा कनकशैलस्य सुमेरुपर्वतस्य श्रृङ्गं शिखरमेव रङ्गः नृत्यशाला तत्र या लास्यलीला नृत्यादिक्रिया तस्या नटं नर्त्तकस्वरूपं, तथा गगनमेव सागरस्तस्य घना मेघा एव तरङ्गाणामूर्मीणां राजिः तस्य लङ्घने अतिक्रमणे एकनक्रं अद्वितीयग्राहस्वरूपं, कार्याणां कृत्यानामकार्याणामकृत्यानाञ्च साक्षिणं सर्वद्रष्टारम् । तथा सहस्राक्षस्य इन्द्रस्य दिक् पूर्वा सैवाङ्गना कामिनी तस्या अङ्गरागेण अङ्गविलेपनेन रागायितं रक्तवदाचरितं किरणजालं रश्मयूखसमूहो येन तादृशं रक्तनीरजानां कोकनदानां अञ्जलिना अर्घ्यदानेनेत्यर्थः—आराध्य सम्पूज्य निजनिकेतनं स्वगृहं न्यशिश्रियं गतवानहमिति शेषः ।

* बालक्रीडा *

रवाले छेदको बड़ी-बड़ी शिलाओं और ईंटोंसे ऐसा बन्द कर दिया जिसमें लोगोंको शङ्का भी न होवे । इस तरीकेकी यह सुरङ्ग लोगोंसे न जानी जायगी ऐसा निश्चय हो जाता अर्थात्—जब सुरङ्गका छिद्र खूब ढक जाता । तब प्रभात कालमें ही स्नान करके देह धोकर मैं, नक्षत्र समूहरूपी मौक्तिकलताके मुख्य मणि, रात्रिके अन्धकाररूपी मत्तगजके विदारणमें अद्वितीय सिंह, सुमेरु पर्वतके शिखररूपी नृत्यलीलाके नर्त्तकरूप, आकाशरूपी सागरकी मेघरूपी तरङ्गोंको लांघनेमें मकर (ग्राह) कार्य और अकार्यके द्रष्टा, सहस्रदीधिति, इन्द्रकी प्राचीदिशारूपी अंगनाके अङ्गरागसे लाल किरणोंवाले, सूर्यको लाल कमलोंद्वारा पूजकर अपनी कुटीमें चला जाता था ।

(१५) याते च दिनत्रये, अस्तगिरिशिखरगैरिकतटसाधारणच्छायतेजसि, अचलराजकन्यकाकदर्थनयान्तरिक्षाख्येन शंकरशरीरेण संसृष्टायाः संध्याङ्गनायाः रक्तचन्दनचर्चितैकस्तनकलशदर्शनीये दिनाधिनाथे, जनाधिनाथः स आगत्य जनस्यास्य धरणिन्यस्तचरणनखकिरणच्छादितकिरीटः कृताञ्जलिरतिष्ठत् । आदिष्टश्च—'दिष्ट्या दृष्टेष्टसिद्धिः । इह जगति हि न निरीहं देहिनं श्रियः संश्रयन्ते । श्रेयांसि च सकलान्यन-

* बालविबोधिनी *

(१५) याते व्यतीते । अस्तगिरीति—अस्तगिरेरस्ताचलस्य शिखरे शृङ्गे यत् गैरिकतटं गैरिकमयप्रदेशः तत्साधारणी तत्तुल्या छाया कान्तिर्यस्य तथाभूतं तेजो यस्य तादृशे आरक्तमयूखे इत्यर्थः । अचलेति—अचलराजो हिमालयस्तस्य कन्यका पार्वती तस्याः कदर्थनया पीडनेन सपत्नीबुद्ध्येति भावः अन्तरिक्षाख्येन शङ्करशरीरेण शिवस्याकाशमूर्त्या संसृष्टायाः सङ्गतायाः सन्ध्यैवाङ्गना कामिनी तस्याः रक्तचन्दनेन रक्तानुलेपनेन चर्चितः रञ्जितो य एकः स्तनकलशः कुचकुम्भस्तद्वत् दर्शनीये विलोकनीये । अस्तमनसमये सूर्यस्य तादृशरूपवत्त्वात् । दिनाधिनाथे सूर्ये । जनाधिनाथः राजा । सः जयसिंहः । जनस्य अस्य—ममेत्यर्थः । धरणिन्यस्तेति-धरण्यां भूमौ न्यस्तयोः स्थापितयोः चरणयोः पादयोः नखानां किरणैर्मयूखैः छादितं व्याप्तं किरीटं मुकुटं यस्यासौ । मच्चरणनिपतित इत्यर्थः । आदिष्ट उक्तो मयेति शेषः । दिष्ट्या भाग्येन । दृष्टा मयावलोकिता । इष्टसिद्धिः—अभीष्टलाभः । जगति संसारे निरीहं निस्पृहं देहिनं नरं श्रियः सम्पदः न संश्रयन्ते नाश्रयन्ति निःस्पृहाणां सम्पल्लाभो न भवतीत्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

(१५) तीन दिन बीत जानेपर, अस्ताचलके शिखरपर जो गेरू आदि धातु हैं उनकी प्रभाके समान तेजवाले, भवानीकी कदर्थनासे अन्तरिक्ष (व्योम), रूप शिवकी देहमें संश्लिष्ट सन्ध्यारूपी महिलाके लाल चन्दनसे व्याप्त एक स्तन कलशके सदृश दर्शनीय, अस्त होनेवाले सूर्यके समय (सायंकालमें) वह राजा (आंध्रेश) आया और इस जनके (मेरे) भूमिपर धरे हुए चरणके नाखूनकी प्रभासे अपने मुकुटको आच्छादित करता हुआ बद्धाञ्जलि होकर बैठा । मैंने आदेश दिया—"भाग्यवशात् आपकी इष्ट सिद्धि मालूम हो गयी । इस संसारमें

लसानां हस्ते नित्यसांनिध्यानि। यतस्ते साधीयसा सच्चरितेनानाकलितक-लङ्केनार्चितेनात्यादररचितेनाकृष्टचेतसा जनेनानेन सरस्तथा संस्कृतम्, यथेह तेऽद्य सिद्धिः स्यात्।

(१६) तदेतस्यां निशि गलदर्धायां गाहनीयम्। गाहनानन्तरं च सलिलतले सततगतीनन्तःसंचारिणः संनिगृह्य यथाशक्ति शय्या कार्या।

* बालविबोधिनी *

श्रेयांसि शुभानि। अनलसाना उद्यमवतां हस्ते पाणौ नित्यसांनिध्यानि नित्यं सांनिध्यं येषां तानीति विग्रहः। सदा संनिहितानि भवन्तीति शेषः। ते तव। साधीयसा साधुतरेण सच्चरितेन सदाचरणेन। अनाकलितकलङ्केन पापसंपर्क-रहितेन—सच्चरितेनेत्यस्य विशेषणमेतत्। अत्यादररचितेन श्रद्धातिशयकृतेन। अर्चितेन-मम सत्कारेण। आकृष्टमावर्जितं चेतो यस्य तादृशेन अनेन जनेन-मया। सरः सरोवरम्। तथा तेन रूपेण। संस्कृतं-मन्त्रादिना शुद्धीकृतम्। यथा येन रूपेण। सिद्धिः अभीष्टलाभः।

(१६) तत् तस्मात्। एतस्यां अद्यतन्याम्। निशि-रजन्याम्। गलदर्धायां गलदर्धं यस्यास्तस्यां-निशीथावसानायाम्। गाहनीयं प्रवेष्टव्यम्। सलिलतले जलमध्ये अन्तःसञ्चारिणः शरीरान्तःस्थितान् सततगतीन् वायून् प्राणानिति यावत्। संनिगृह्य कुम्भकेन संनिरोध्य। यथाशक्ति-शक्त्यनुसारेण तदा यावती शक्तिस्तिष्ठेत्तदनुसारेणेति भावः। शय्या कार्या-शयनं करणीयं त्वयेति। शेषः।

* बालक्रीडा *

अनुद्योगीके समीप लक्ष्मी नहीं आती। उद्योगियोंके समीप कल्याणकारी कार्य आते रहते हैं—उद्योगी लक्ष्मीवान् होता है। अस्तु, मैंने तुम्हारे सदाचारसे, साधुके आचरणवाले, अपने निष्पाप भावसे जो मेरी अति आदरके साथ पूजाकी है उसीसे आसक्त होकर मैंने इस तालाबको ऐसा सुसंस्कृत कर दिया है कि, जिस कारण आज ही आपकी सिद्धि हो जायगी।

(१६) अतः आज ही आधी रातमें इस तालाबमें प्रवेश करना चाहिये (आपको)। फिर उस तालाबमें प्राणादि वायुका निरोध करके पानीके नीचे भागवाली भूमिपर यथाशक्ति शयन कीजिये। तब तीरदेशके सलग्न जलसे

ततश्च तटस्खलितजलस्थगितजलजषण्डचलितदण्डकण्टकाग्रदलितदेहराजहंसत्रासजर्जररसितसंदत्तकर्णस्य जनस्य क्षणादाकर्णनीयं जनिष्यते जलसंघातस्य किंचिदारटितम् । शान्ते च तत्र सलिलरटिते क्लिन्नगात्रः किञ्चिदारक्तदृष्टिर्येनाकारेण निर्यास्यति निचाय्य तं निखिलजननेत्रानन्दकारिणं न यक्षः शक्ष्यत्यग्रतः स्थितये । स्थिरतरनिहितस्नेहशृङ्खलानिगडितं

* बालविबोधिनी *

तटेति तटात्तीरदेशात् स्खलितं पतितं यज्जलं तेन स्थगितमाच्छादितं यज्जलजषण्डं पद्मसमूहस्तस्य चलितं कम्पितं यद्दण्डं नालं तस्य कण्टकाग्रेण कण्टकाशिखया दलितं विद्धं देहं शरीरं यस्य तथाभूतस्य राजहंसस्य त्रासजर्जरे भयमन्दे रसिते रटिते दत्तौ अर्पितौ कर्णौ येन तादृशस्य जनस्य पुरुषस्य । कर्णनीयं श्रवणीयं आरटितमित्यस्य विशेषणम् । जनिष्यते उत्पत्स्यते । जलसङ्घातस्य जलसमूहस्य किञ्चित् स्वल्पम् । आरटितं ध्वनिः । येन जनेन प्राक् त्रासमन्दरसितराजहंसध्वनिः आकर्णितः स एवानायासेन जलसंघातस्यारटितमपि श्रोतुमर्हति नान्यः द्वयोः सादृश्यात् । जलसंघातध्वनिः त्रासजर्जरहंसध्वनितुल्य इति फलितमिति भावः । शान्ते निवृत्ते । तत्र तस्मिन् पूर्वोक्ते जलशब्दे । क्लिन्नगात्रः जलार्द्रशरीरः । किञ्चिदारक्तेति—किञ्चित्स्वल्पं आरक्ता ईषल्लोहितवर्णा दृष्टिर्नयनं यस्य सः । येन आकारेण-यत् स्वरूपमादायेत्यर्थः । निर्यास्यति—जलादुत्थास्यति । निचाय्येत्यादि—निखिलजनानां नेत्रयोरानन्दकारिणं आनन्दजनकं तं आकारं निचाय्य दृष्ट्वा यक्षः कन्याधिष्ठितः अग्रतः स्थितये सम्मुखे स्थातुं न शक्ष्यति । स्थिरतरेति-स्थिरतरमचञ्चलं यथा तथा निहितः अर्पितो यः स्नेहः स एव शृङ्खला

* बालक्रीडा *

आच्छादित होनेपर क्लान्त कमलसमुदायोंके चपल नालके (कमलनाल) कण्टकाग्रभागोंसे विदलित शरीरवाले राजहंसोंके, भयसे अत्यन्त मन्दध्वनिमें कानोंको लगानेवाले किसी व्यक्तिकी, एक क्षणमें, श्रवणीय जलसमूहकी ईषत् ध्वनि सुनायी पड़ेगी । ततः उस ध्वनिके निवृत्त हो जानेपर उस जलमेंसे एक भींगा शरीरवाला तथा कुछ लाल आंखोंवाला व्यक्ति जलसे बाहर निकलेगा सम्पूर्ण मनुष्योंके नेत्रोंको आनन्ददायक उस व्यक्तिको साक्षात् देखकर कन्याके ऊपर जो यक्ष है वह

च कन्यकाहृदय क्षणेनैकेनासहनीयदर्शनान्तरायं स्यात्। अस्याश्च धराङ्गनाया नात्यादृतनिराकृतारिचक्रं चक्रं करतलगतं चिन्तनीयं न तत्र संशयः। तच्चेदिच्छस्यनेकशास्त्रज्ञानधीरधिषणैरधिकृतैरितरैश्च हितैषिगणैराकलय्य जालिकशतं चानाय्य, अन्तरङ्गनरशतैर्यथेष्टदृष्टान्तरालं सरः

* बालविबोधिनी *

तया निगडितं बद्धम्। कन्यकाहृदय कनकलेखाया मनः। असहनीयेति—असहनीयः सोढुमशक्यः दर्शनस्य तव विलोकनस्य अन्तरायो विघ्नो यस्य येन वेति तदिति हृदयविशेषणम्। सा खलु कन्या क्षणमपि तव विरहं सोढुमसमर्था भविष्यतीति भावः। धराङ्गनायाः पृथ्वीरूपकामिन्याः। चक्रं मण्डलं किम्भूतमित्याह नात्यादृतेति-नात्यादृतं नातिप्रयासं यथा तथा निराकृतं पराजितं अरिचक्रं शत्रुमण्डलं यस्य तत्। करतलगतं तव हस्तस्थितं चिन्तनीयं मन्तव्यं त्वयेति शेषः। तत्–यन्मया कथितम्। इच्छसि चेत्-कर्तुं अभिलषसि यदि। अनेकेति अनेकशास्त्राणां ज्ञानेनाभ्यासेन धीरा अविचलिता धिषणा बुद्धिर्येषां ते स्तादृशैः अधिकृतैः तव सचिवादिकार्याधिकारिभिः। इतरैरन्यैश्च हितैषिगणैः तव हिताकाङ्क्षिभिः। आकलय्य–तैः सह विचार्य। जालिकशतं-जालोपजीविधीवरवर्गम्। आनाय्य आकार्य सगृह्येति यावत्। अन्तरङ्गेति-अन्तरङ्गाणामात्मीयानां नराणां शतैः। यथेष्टेति—यथेष्टं यथाकाम दृष्टं परीक्षितमन्तरालं मध्यभागो यस्य

* बालक्रीडा *

ठहर नहीं सकता है—भाग जायगा। गम्भीर भावसे प्रेमरूपी जञ्जीरोंद्वारा आबद्ध उस राजपुत्रीका चित्त आपको एक क्षण भी न देखनेसे दुःखी होगा। इस भूमिरूपी अगनाकी उपलब्धि भी आपको बिना परिश्रमके हो जायगी। सभी शत्रुमण्डलसे रहित इस पृथ्वीचक्रका राज्य आपके हस्तगत हो जायगा। अगर आपको उपर्युक्त लाभकी अभिलाषा हो, तो, अनेक शास्त्रवेत्ताओंसे, जिनकी बुद्धि शास्त्रज्ञानसे गम्भीर हो गयी हो, मन्त्रिगणोंसे, हितूजनोंसे, अन्य पौरवृद्धों आदिसे विचार कर लीजिये। फिर जालोपजीवी (धीवरों) वर्गोंको एकत्र करके तथा अपने आत्मीय जनोंसे तालाबसे अन्तरालको यथारुचि परीक्षित कराकर,

क्रियते, रक्षा च तीरात्त्रिंशद्दण्डान्तराले सैनिकजनेन सादरं रचनीया। कस्तत्र तज्जानाति यच्छिद्रेणारयश्चिकीर्षन्ति' इति ।

(१७) तत्त्वस्य हृदयहारि जातम्, तदधिकृतैश्च तत्र कृत्ये रन्ध्रदर्शनासहैरिच्छां च राज्ञः कन्यकातिरागजनितां नितान्तनिश्चलां निश्चित्यार्थः एष न निषिद्धः। तथास्थितश्च तदासादनदृढतराशयश्च स आख्यायत—

* बालविबोधिनी *

तथाभूतम् । सरः जलाशयः । रक्षा चेति तीरात् तटप्रदेशात् त्रिंशद्दण्डान्तराले—दण्डश्चतुर्हस्तप्रमाणो लगुड़विशेषः त्रिंशत्परिमितानां दण्डानामन्तराले व्यवधाने तीरात् विंशत्यधिकशतहस्तपरिमितदूरवर्त्तिनि स्थाने इत्यर्थः सादरं सावधानं सैनिकजनेन रक्षा रक्षास्थानं रचनीया करणीया । कथमिति चेत्—तदाह यत् छिद्रेण रन्ध्रेणारयः शत्रवः चिकीर्षन्ति कर्त्तुमिच्छन्ति तत् को ज्ञातुं प्रभवेत् अतः सर्वतो रक्षा विधातव्येति ।

(१७) तत् मद्वचनम् । तु–किन्तु । अस्य जयसिंहस्य । हृदयहारि मनोमतम् । तदधिकृतैः राज्याधिकारिवर्गैः । तत्र कृत्ये तस्मिन् जलप्रवेशेन रूपान्तरप्राप्तिरूपकर्मणि । रन्ध्रदर्शनासहैः दोषावलोकनाक्षमैः । इच्छां कन्याप्राप्त्यभिलाषम् । कन्यकायामतिरागेण अत्यन्तप्रेम्णा जनितामुत्पादिताम् तथा नितान्तनिश्चलाम् अतिदृढाम् । विशेषणद्वयं इच्छायाः । निश्चित्य–अवधार्य । अर्थः विषयः । न निषिद्धः न निवारितः । तथास्थितः तथा कर्त्तुं प्रतिज्ञातः । तदासादनेति-तस्याः कन्याया आसादने प्राप्तौ दृढतरः द्रढीयान् आशयोऽभिप्रायो यस्यासौ।

* बालक्रीडा *

तालावके तीरसे १२० हाथकी दूरीपर सावधानीपूर्वक अपने सैनिकोंसे रक्षा कराकर तालावमें प्रवेश करियेगा। क्योंकि—यह कौन जान सकता है कि, शत्रु कहां पर है। वे शत्रुगण सुराखमेंसे प्रवेश कर लेते हैं।

(१७) यह राय उस राजाके मनको हरणकर्त्री हुई। उस राजाके अधीनस्थ सेवकगणोंद्वारा उस जलप्रवेशका निषेध नहीं किया गया। क्योंकि वे लोग जान गये थे कि राजाका उस राजपुत्रीपर उत्पन्न प्रेम अति दृढ़ है। ऐसा निश्चय करके उन लोगोंने उस कार्यका निषेध न किया और वे राजसेवक उस तालावके

'राजन्, अत्र ते जनान्ते चिरं स्थितम्, न चैकत्र चिरस्थानं नः शस्तम्। कृतकृत्यश्चेह न द्रष्टासि। यस्य ते राष्ट्रे ग्रासाद्यासादितं तस्य ते किंचिदनाचर्य कार्यं गतिरार्यगर्ह्या' इति। तत्रैतच्चिरस्थानस्य कारणम्। तच्चाद्य सिद्धम्। गच्छ गृहान्। यथार्हजलेन हृद्यगन्धेन स्नातः सितस्रगङ्गरागः शक्तिसदृशेन दानेनाराधितधरणितलदैवतलगणस्तिलस्नेहसिक्तयष्टयग्रप्रथि-

* बालविबोधिनी *

सः जयसिंहः। आख्यायत कथितोऽभवत् मयेति शेषः। ते तव। जनान्ते जनपदे। चिरं दीर्घकालं यावत्। स्थितम्-वासः कृतो मयेति शेषः। एकत्र एकस्मिन् स्थाने। चिरस्थानं दीर्घकालमवस्थानम्। नः अस्माकं संन्यासिनामित्यर्थः। शस्तं प्रशस्तं नेति सम्बध्यते। कृतकृत्यः सफलप्रयोजनस्त्वं इहास्मिन् स्थाने न द्रष्टासि नावलोकयिष्यसि मामिति शेषः। नाहमत्र स्थास्यामीति भावः। राष्ट्रे राज्ये। ग्रासादि भोजनादि। आसादितं-मया लब्धं तस्य तादृशस्य तव कार्यं प्रयोजनं अनाचर्य असम्पाद्य गतिरन्यत्रगमनम् आर्यगर्ह्या सज्जननिन्दनीया अनुचितेत्यर्थः। तत्र स्थाने चिरस्थानस्य एतदेव कारणं नान्यदित्यर्थः। तच्च कार्यम्। सिद्धं सम्पन्नम्। यथार्हजलेन राजस्नानोचितसलिलेन हृद्यगन्धेन मनोहरगन्धशालिना इदं जलेनेत्यस्य विशेषणम्। सितेति-सितौ शुभ्रौ स्रक् माल्यं अङ्गरागश्च यस्य सः। शुभ्रमाल्यधरः शुभ्रानुलेपनश्चेत्यर्थः। शक्तिसदृशेन साम-

* बालक्रीडा *

दोष देखनेमें, असमर्थ थे। जब मैंने देखा कि वह राजा तालाबमें प्रवेश करनेमें कटिबद्ध है और उस राजपुत्रीकी प्राप्तिके लिये सन्नद्ध है तब मैंने कहा—"हे राजन्! आपके इस नगरमें मैं बहुत समयतक बसा। हम सन्यासियोंका एक ही स्थानमें दीर्घकालतक वास करना अनुचित है कृतकृत्य होनेपर आप मुझे यहां नहीं देखेंगे। आपके इस राष्ट्रमें मैंने भोजन आदि प्राप्त किया था, यदि आपके कार्यको असम्पादित किये बिना मैं, यहांसे, चला जाता, तो, अनुचित कार्यका कर्ता होता। अतः आपके कार्यके सम्पादनार्थ मैं इस राष्ट्रमें दीर्घकालतक रहा। आपका वह कार्य आज सम्पादित हो गया। अब आप घर जायं। और राजोचित सुगन्धित जलसे स्नान करें। सफेद माला तथा चन्दन आदि

तवर्तिकाग्निशिखासहस्रग्रस्तनैशान्धकारराशिरागत्यार्थसिद्धये यतेथाः' इति।

(१८) स किल कृतज्ञतां दर्शयन्—'असिद्धिरेषा सिद्धिः, यदसन्निधिरिहार्याणाम् । कष्टा चेयं निःसङ्गता, या निरागसं दासजनं त्याजयति ।

* बालविबोधिनी *

ध्यानुसारेण । दानेन दानं कृत्वा । आराधितेति–आराधिताः सेविताः धरणितलस्य भूतलस्य तैतिलगणाः देवाः ब्राह्मणा इत्यर्थः येनासौ । कृतब्राह्मणपूजः इत्यर्थः । तिलस्नेहेति—तिलस्नेहेन तिलतैलेन सिक्तानां आर्द्रीकृतानां यष्ट्यग्रेषु दण्डाग्रेषु ग्रथितानां प्रोतानां वर्तिकानां दीपदशानां अग्निशिखासहस्रेण अग्निज्वालासमूहेन ग्रस्तो ध्वस्तः नैशान्धकारराशिः रजनीतिमिरसङ्घो येनासौ । आगत्य—सरस्तटमिति शेषः । अर्थसिद्धये स्वप्रयोजनसम्पादनाय । यतेथाः प्रयत्नं कुर्याः ।

(१८) स जयसिंहः । कृतज्ञतां स्वकृतज्ञभावं दर्शयन् प्रकाशयन् गृहानयासीदित्यग्रिमेणान्वयः असिद्धिरित्यादि—एषा सिद्धिः मदभीष्टलाभः असिद्धिरलाभ एव, यत्-यतः आर्याणां भवादृशां महापुरुषाणामिह अस्मिन् स्थाने असन्निधिरसन्निधानम् अनवस्थानमिति यावत् । मत्प्रयोजनसिद्धौ सत्यामपि भवतोऽन्यत्रगमनान्न सा सिद्धिर्मे रोचते इति भावः । इयमीदृशी निःसङ्गता–भवत्सङ्गराहित्यम् । कष्टा—दुःखदायिनी । या निःसङ्गता । निरागसं निरपराधं दासजनं सेवकं

* बालक्रीडा *

यथाक्रम धारण करें । अपने सामर्थ्यके अनुसार दान करें । ब्राह्मणोंकी पूजा करें । पुनः तिलके तेलसे भीगे हुए कपड़ोंकी बत्तियोंको बांसोंके दण्डोंके अग्रभागमें लपेटकर हजारों अग्निशिखासे रातका अन्धकार दूर करें । (मसाल जलाकर अन्धेरा दूर करें) और अपने अर्थकी सिद्धिका प्रयत्न करें ।

(१८) उस राजाने कृतज्ञता प्रकाशित करके कहा—"यह लाभ मुझे इस समय अलाभके समान प्रतीत होता है, क्योंकि, इस स्थानमें आपका निवास न होगा । आपके संगसे रहित होना कष्टप्रद है । हाय ! निःसंगताके कारण निरपराधी सेवक–(मेरा) का आपसे वियोग हो जायगा । गुरुजनोंकी वाणीका लङ्घन नहीं करना चाहिये ।" ततः स्नानके लिये घर चला गया । मैं (मन्त्रगुप्त) भी सूनी आधी रातमें उस कुटीसे निकलकर तालाबके तीरवाले बिल

न च निषेधनीया गरीयसां गिरः' इति स्नानाय गृहानयासीत् । अहं च निर्गत्य निर्जने निशीथे सरस्तीररन्ध्रनिलीनः सङ्क्षोभच्छिद्रदत्तकर्णः स्थितः । स्थिते चार्धरात्रे कृतयथादिष्टक्रियः स्थानस्थानरचितरक्षः स राजा जालिकजनानानीय निराकृतान्तःशल्य शङ्काहीनः सरः सलिलं सलीलगतिरगाहत। गतं च कीर्णकेशं संहृतकर्णनासं सरसस्तलं हास्तिनं नक्रलीलया नीरान्ति-

* बालविबोधिनी *

मामिति शेषः त्याजयति दूरीकरोति । गरीयसां गुरूणां गिरः वचनानि । गुरूणां वाक्यानि न लङ्घनीयानि अतो नाहं भवन्तं प्रतिरुणध्मि इति भावः । इति-एवमुक्त्वा । स्नानाय-स्नातुम् । अहं-मन्त्रगुप्तः । निशीथे अर्धरात्रे । सरस्तीरेति-सरसस्तीरे यद् रन्ध्र बिलं तत्र निलीनो गुप्तः । इषदिति ईषच्छिद्रे स्वल्परन्ध्रे दत्तौ कर्णौ येन तादृशः । स्थिते अवशिष्टे । कृतेति—कृता अनुष्ठिता यथादिष्टा मत्कथनानुरूपा क्रिया येनासौ । स्थानेति-स्थाने अनेकेषु स्थानेषु रचिता कृता रक्षा रक्षिपुरुषसंस्थापनं येनासौ । राजा जयसिंहः । निराकृतेति—निराकृतं दूरीकृतं परीक्ष्य शोधितमिति यावत् अन्तःशल्यं जलमध्यस्थविघ्नो यस्य तादृशं सरः सलिलम् । सलीलगतिः सविलासगमनः । अगाहत प्राविशत् । गतमित्यादि—कीर्णकेशं कीर्णा विक्षिप्ताः केशा मूर्द्धजा यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा, संहृतकर्णनासं—कर्णौ च नासे चेति कर्णनासं प्राण्यङ्गत्वादेकवद्भावः संहृतं निहितं कर्णनासं यस्मिन् कर्मणि तद् यथा तथा । एतत्पदद्वयं गतमिति क्रियाया विशेषणम् । हास्तिनं-हास्तिप्रमाणकं—हस्ती प्रमाणमस्येति अण् प्रत्ययः । सरस्तलं

* बालक्रीडा *

(छेद) में प्रविष्ट होकर छोटे छेदमें कान लगाकर बैठ गया । आधी रातके समय वह राजा, मेरी उपदेशित क्रियाओंको करके स्थान—स्थान पर रक्षक पुरुषोंको नियुक्त करके, अनेकों धीवरोंको लाकर, उस तालावके अन्तःप्रदेशके शल्यों (काटों) को निकलवाकर उस तालावके जलमें विलासयुक्त प्रविष्ट हुआ । राजा अपने बालोंको खोलकर, कान—नाक बन्दकर हस्तिप्रमाण जलमें सो गया । तब मैंने उस सोनेवाले राजाके गलेको पानीमें अत्यन्त गुप्त मगरकी लीलासे कन्याद्वारा पकड़ लिया । तदनन्तर अत्यन्त तीक्ष्ण कालदण्ड

निलीनया तं तथा शयानं कंधरायां कन्थया न्यग्रहीषम् । खरतरकालद-ण्डघट्टनातिचण्डैश्च करचरणघातैर्निर्दयदत्तनिग्रहः क्षणेनैकेनाजहात्स चेष्टाम् । ततश्चाकृष्य तच्छरीरं छिद्रे निधाय नीरान्निरयासिषम् ।

(१९) संगतानां च सैनिकानां तदत्यचित्रीयताकारान्तरग्रहणम् । गजस्कन्धगतः सितच्छत्रादिसकलराजचिह्नराजितश्चण्डतरदण्डिदण्डताड-

* बालविबोधिनी *

गतं प्रविष्टं, तथा पूर्वोद्दिष्टानुसारेण शयानं सुप्तम् तं जयसिंहं ग्रीवायां कन्धरायां नक्रलीलया नक्रस्य मकरस्येव लीला तया—नक्रवदित्यर्थः नीरातिनिलीनया नीरे सलिले अतिनिलीनया अत्यन्तनिमग्नया कन्थया प्रावरणविशेषेण न्यग्रहीषं निगृहीतवानहमिति शेषः । खरतरेति—खरतरोऽति तीक्ष्णः यः कालदण्डो यम-दण्डस्तस्य यत्सङ्घट्टनं सङ्घर्षस्तद्वत् अतिचण्डैः अतिभीषणैः । करचरणघातैः हस्तपादप्रहारैः । निर्दयेति—निर्दयं यथा तथा दत्तो निग्रहो निकारो यस्यासौ । क्षणेनैकेन—मुहूर्तमात्रेण । स जयसिंहः चेष्टां अजहात् अम्रियत । ततः—सर-स्वलात् । आकृष्य बहिष्कृत्य । छिद्रे पूर्वकृतरन्ध्रे । निधाय संस्थाप्य । निरयासि-षम्—निर्गतोऽभवम् ।

(१९) सङ्गतानां तत्रोपस्थितानाम् । तदाकारान्तरग्रहणं अन्याकारप्राप्तिः । अत्यचित्रीयत—अत्याश्चर्यजनकमभवत् । गजस्कन्धगतः हस्तिशिरस्थितः । सितेति सितच्छत्रमादि येषां तानि सितच्छत्रादीनि श्वेतातपत्रप्रभृतीनि यानि सकलानि निखिलानि राजचिह्नानि नृपलक्ष्माणि तैः राजितः शोभितः । विशेषणद्वयं अह-मित्यस्य मन्त्रगुप्तवाचकस्य । चण्डतरेति—चण्डतराणामतिप्रचण्डानां दण्डिनां

* बालक्रीडा *

(यमदण्ड) के संघट्टनके समान अति भीषण अपने हाथ-पैरोंके आघातसे उस राजाको खूब मारा जिससे उस जयसिंहने एक क्षणमें ही अपनी लीला समाप्त कर दी (मर गया)। फिर उसके शरीरको ले जाकर उसी छेदमें रख दिया और मैं जलसे बाहर आ गया ।

(१९) वहांपर उपस्थित सैनिकोंने रूप परिवर्तन देखकर अत्यन्त आश्चर्य प्रकट किया । हाथीके ऊपर चढ़कर सफेद छत्र आदि सभी राज चिन्होंसे

नत्रस्तजनदत्तान्तरालया राजवीथ्या यातस्ता निशां रसनयननिरस्तनिद्रारतिरनैषम्। नीते च जनाक्षिलक्ष्यतां लाक्षारसदिग्धदिग्गजशिरःसदृक्षे शक्रदिगङ्गनारत्नादर्शेऽर्कचक्रे कृतकरणीयः किरणजालकरालरत्नराजिराजितराजार्हासनाध्यासी यथासदृशाचारदर्शिनः शङ्कायन्त्रिताङ्गान्सन्नि-

* बालविबोधिनी *

दण्डधारिदौवारिकाणां दण्डैर्लगुडैस्ताडनेन प्रहारेण त्रस्ता भीता ये जनास्तैर्दत्तमन्तरालमवकाशो यस्या तया। राजवीथ्या राजमार्गेण। यातश्चलितः। अहमिति शेषः। रसेति—रसेन अत्यधिकानन्देन कनकलेखानुरागेण वा नयनाभ्यां-पञ्चमी द्विवचनमेतत्—निरस्ता अपगता निद्रारतिः शयनप्रीतिः यस्य तादृशोऽहम् अनैषम्। अत्यवाहयम् निशामिति पूर्वोक्तेनान्वयः। नीते चेत्यादि—लाक्षारसेन यावकेन दिग्धमनुलिप्तं यद् दिग्गजस्य दिङ्मातङ्गस्य शिरो मस्तकं तत्सदृक्षे तत्तुल्ये रक्तवर्णे इति भावः, शक्रस्य दिक् पूर्वाशा—सैवाङ्गना कामिनी तस्या रत्नादर्शे मणिदर्पणस्वरूपे अर्कचक्रे सूर्यमण्डले जनाक्षिलक्ष्यतां नरनयनगोचरतां नीते प्रापिते सति—सूर्ये उदिते सतीत्यर्थः। कृतकरणीयः विहितनित्यक्रियः। किरणजालेति—किरणजालेन मयूखमण्डलेन कराला व्याप्ता या रत्नराजिः रत्नसमूहस्तया राजितं शोभितं यद् राजार्हं राजयोग्यमासनं तदध्यास्ते इति तच्छीलः। अहमिति शेषः। यथेति—यथासदृशं स्वस्वाधिकारोचितं आचारं राजमर्यादादिकं दर्शयन्ति ये तान्। शङ्केति—शङ्कया-यथा राज्ञः आकृतिपरिवर्त्तनं जातं तथैव प्रकृतेरपि परिवर्त्तनं जातं स्यादिति भयेन यन्त्रितानि सङ्कुचितानि अङ्गानि गात्राणि येषां

* भावप्रकाशिका *

सुशोभित मैं राजमार्गसे चला। उस राजमार्गको अत्यन्त प्रबल दण्डधारी सेवकगण आगे—आगे दण्डोंके प्रहार द्वारा जनोंको भय दिखाकर खाली करा देते थे। उस रात कनकवतीके प्रबलानुरागसे मुझे आँखोंमें निद्रा न आयी—वह रात मैंने जाकर बिता दी। प्रभातमें जब लाक्षारससे परिव्याप्त हुए दिग्गजोंके मस्तकोंके तुल्य, इन्द्रकी दिशा-(पूर्वदिशा-) रूपी अङ्गनाके मणिदर्पणके सदृश, सूर्यमण्डल, लोगोंकी आँखोंके सामने लक्षित हुआ। उस समय मैं नित्यक्रियासे निवृत्त होकर, किरणजालसे परिपूर्ण एवं रत्न राशिसे देदीप्यमान,

धिनिषादिनः सहायानगादिषम्—'दृश्यतां शक्तिरार्षी, यत्तस्य यतेरजेयस्येन्द्रियाणां संस्कारेण नीरजसा नीरजसांनिध्यशालिनि सहर्षालिनि सरसि सरसिजदलसन्निकाशच्छायस्याधिकतरदर्शनीयस्याकारान्तरस्य सिद्धिरासीत् । अद्य सकलनास्तिकानां जायेत लज्जानतं शिरः । तदिदानीं चन्द्रशेखरनरकशासनसरसिजासनादीनां त्रिदशेशानां स्थानान्यादरर-

* बालविबोधिनी *

तान् । सन्निधिनिषादिनः सन्निधौ समीपे निषीदन्ति ये तान्-पार्श्वचरानित्यर्थः । सहायान् सचिवादीन् । अगादिषम् अवोचम् । शक्तिः प्रभावः । आर्षी ऋषिसम्बन्धिनी । यत्तस्येत्यादि—इन्द्रियाणां चक्षुरादीनां करणानां अजेयस्य जेतुमशक्यस्य तस्य पूर्वोक्तस्य यतेर्मुनेः नीरजसा रजोगुणरहितेन पवित्रेणेत्यर्थः संस्कारेण मन्त्रानुष्ठानेन नीरजानां कमलानां सान्निध्येन सम्पर्केण शालते शोभते एवं शीले—तथा सहर्षाः सानन्दा अलिनो भ्रमरा यत्र तथाभूते सरसि सरोवरे सरसिजदलैः कमलदलैः सन्निकाशा तुल्या छाया कान्तिर्यस्य तादृशस्य तथा अधिकतरदर्शनीयस्य परमरमणीयस्य आकारान्तरस्य अन्यशरीरस्य सिद्धिः प्राप्तिरभूत् । ममेति शेषः । अद्य साम्प्रतम् सकलनास्तिकानां मन्त्रतन्त्रादिप्रभावमस्वीकुर्वताम् पाषण्डानामित्यर्थः । जायेत भवेत् । तत् तस्मात् । चन्द्रशेखरो महेश्वरः, नरकशासनो विष्णुः सरसिजासनो ब्रह्मा तदादीनां त्रिदशेशानां देवानाम् । स्थानानि मन्दिराणि । आदरेति—आदरेण श्रद्धया भक्त्या वा रचित-

* बालक्रीडा *

राजाओंके अनुरूप श्रेष्ठ (सिंहासन) पर आरूढ़ होकर बैठा । उस समय यथानुरूप अपने नियमाचरणोंको प्रदर्शित करनेवाले, भयसे शरीरोंको संकुचित करनेवाले, पार्श्वचरों और सहायकोंसे मैंने कहा—ऋषियोंकी शक्ति देखिये । इन्द्रियोंसे अजेय उस तपस्वीके पवित्र (रजोगुण रहित) संस्कारद्वारा उस तालाबमें, मैंने कमलदलतुल्य क्या उससे भी अधिक दर्शनीय देह प्राप्त की । जिस तालाबमें कमलोंके समीप रहनेवाले भौंरे प्रमुदित भौंरे कमलोंपर शोभा पा रहे हैं । (अपूर्व सिद्धि प्राप्त की) । आज सभी नास्तिकोंका (आर्यधर्मविहीनोंका) शिर लज्जासे झुक गया है । अतः सम्प्रति सभी, महादेव, विष्णु

चिवनृत्यगीताराधनानि क्रियन्ताम्। ह्रियन्तां च गृहादितः क्लेशनिरसनसहान्यर्थिसार्थैर्धनानि' इति।

(२०) आश्चर्यरसातिरेकहृष्टदृष्टयस्ते जय जगदीश, स्वतेजसातिशय्य दश दिशः स्थगयन्निजेन यशसादिराजयशांसि' इत्यसकृदाशास्याचयन्यथादिष्टाः क्रियाः। स चाहं दयितायाः सखीं हृदयस्थानीयां

* बालविबोधिनी *

मनुष्ठितं नृत्यगीताभ्यां आराधनं पूजनं येषु तानि। ह्रियन्तां नीयन्ताम्। गृहादितः—अस्माद् राजसदनात्। क्लेशनिरसनसहानि—दारिद्र्यदुःखनाशसमर्थानि धनानि। अर्थिसार्थैः—याचकसमूहैः। दरिद्रा आगत्य यथेष्टं स्वाभिलषितं धनं गृह्णन्त्विति भावः।

(२०) आश्चर्येति—आश्चर्यरसस्य विस्मयस्य अतिरेकेण आधिक्येन हृष्टा प्रसन्ना दृष्टिर्येषां ते तादृशाः। ते सचिवादयः। स्वतेजसा निजप्रतापेन दशदिशः अतिशय्य अतिक्रम्य निजेन यशसा कीर्त्या आदिराजयशांसि पूर्वनृपतिकीर्तीः स्थगयन् आच्छादयन् जय सर्वोत्कर्षेण वर्तस्वेति असकृत्पुनःपुनः आशास्य आशीर्भिरभिनन्द्य यथादिष्टाः राजाज्ञानुसारेण क्रियाः देवताराधनादिकाः चर्चयन् अन्वतिष्ठन्। स च अहं—नृपरूपेण परिणतो मन्त्रगुप्त इत्यर्थः। दयितायाः प्रियायाः कनकलेखायाः। हृदयस्थानीया स्वहृदयतुल्यामन्तरङ्गभूताम्। कार्या-

* बालक्रीडा *

और ब्रह्माके तथा अन्य देवताओंके मन्दिरोंमें श्रद्धाके साथ नाच-गाना एवं पूजा-अर्चा होवे। दारिद्र्यके दुःखको नाश करनेवाली लक्ष्मी (धन, वस्त्र आदि) याचक जनोंको इस राज प्रासादसे दिये जायें।

(२०) विस्मयकी अधिकतासे प्रफुल्लित दृष्टिवाले उन याचकगण तथा मन्त्रिगणने 'जय जगदीश' कह कर, "अपने प्रतापसे दश दिशाओंको परिव्याप्त करके तथा अपने यशसे पूर्ववर्ती राजाओंकी कीर्तिको जिन्होंने आच्छादित कर लिया है" ऐसे-ऐसे प्रशंसनीय वाक्य तथा आशीर्वचनको बार-बार कहकर, राजाद्वारा आदेशित पूजा—अर्चा समाप्त की। फिर मेरे समीप किसी कार्यवश आयी हुई अपनी प्यारीकी सखी जो उसकी अन्तरंगिणी थी जिसका नाम

शशाङ्कसेनां कन्यकां कदाचित्कार्यान्तरागतां रहस्याचक्षिषि—'कच्चिदयं जनः कदाचिदासीद्दृष्ट:' इति ।

(२१) अथ सा हर्षकाष्ठां गतेन हृदयेनेषदालक्ष्य दशनदीधितिलतां लीलालसं लासयन्ती, ललिताञ्चितकरशाखान्तरितदन्तच्छदकिसलया, हर्षजलक्लेदजर्जरनिरञ्जनेक्षणा रचिताञ्जलिः नितरां जाने यदि न स्यादैन्द्रजालिकस्य जालं किञ्चिदेतादृशम् । कथं चैतत् कथय । इति स्नेहनिर्य-

* बालविबोधिनी *

न्तरागतां—अन्यकार्यव्यपदेशेनागताम् । रहसि निर्जने । आचक्षिषि अकथयम् । अयजनः—मल्लक्षणः । कदाचित्-कस्मिन्नपि समये । दृष्ट आसीत् त्वयेति शेषः कच्चित्-किम् ।

(२१) अथ प्रश्नानन्तरम् । सा शशाङ्कसेना । हर्षकाष्ठां हर्षातिशयम् । गतेन प्राप्तेन हृदयेनोपलक्षिता । ईषदल्पं आलक्ष्य दृष्ट्वा दशनदीधितिरेव दन्तकिरणा एव लता वल्ली तां लीलालसं विलासमन्दं यथा तथा लासयन्ती नर्तयन्ती प्रक्षिपन्तीति यावत् । तथा ललितेति—ललितं सुन्दरं यथा तथा अञ्चितया संकुचितया करशाखया कराङ्गुल्या अन्तरितौ पिहितौ दन्तच्छदौ ओष्ठाधरावेव किसलयौ यया तादृशी, तथा—हर्षेति—हर्षजलक्लेदेन आनन्दाश्रुनिर्गमेण जर्जरे क्लान्ते अतएव निरञ्जने कज्जलरहिते ईक्षणे नयने यस्याः सा । नितरां—अतिशयेन । जाने-त्वां जानामि । ऐन्द्रजालिकस्य मायाविनः । जालं—कपटम् एतादृशं एवम्भूतम् । यद्येषा ऐन्द्रजालिकमाया न

* बालक्रीडा *

शशांकसेना था । उस शशांकसेनासे मैंने (मन्त्रगुप्तने) एकान्तमें कहा—"क्या इस पुरुष (मुझे) को कभी पहिले देखा था ?"

(२१) प्रश्नके बाद उस शशांकसेनाने आनन्दकी परम सीमा प्राप्त चित्तसे कुछ देर देखकर, दन्तरूपी लताको विलाससे नर्त्तन कराकर, सुन्दर और संकुचित हाथकी अंगुलीसे अपने अधर पल्लवको ढककर, हर्षसे उत्पन्न जो आंसू उससे आक्रान्त एवं कज्जल रहित नेत्रोंसे, बद्धाञ्जलि होकर कहा—"मैं आपको भली भांति पहचानती हूं, यदि यह दृश्य (आपकी छवि) कोई कपटसे नहीं

न्त्रणं शनैरगादीत् । अह चास्यै कार्त्स्न्येनाख्याय तदाननसङ्क्रान्तेन सन्देशेन सञ्जनय्य सहचर्या निरतिशय हृदयाह्लादं ततश्चैतया दयितया निरर्गलीकृतातिसत्कृतकलिङ्गनाथन्यायदत्तया सङ्गत्यान्ध्रकलिङ्गराजराज्यशासी तत्यास्यारिणा लिलङ्घयिषितस्याङ्गराजस्य साहाय्यकायालघीयसा साधनेनागत्यात्र ते सखिजनसङ्गतस्य याद‍ृच्छिकदर्शनानन्दराशिलङ्घितचेता जात इति ।

* बालविबोधिनी *

स्याचदा त्वां सर्वथा परिचिनोमीत्यर्थः । कथं चैतत् कथय—कथमेवं सम्भावितमभूत् तत् कथयेत्यर्थः । स्नेहनिर्यन्त्रणं—स्नेहेन प्रेम्णा निर्यन्त्रणं निर्बाधम् । अस्यै शशाङ्कसेनायै। कार्त्स्न्येन-साकल्येन । तदाननसंक्रान्तेन-शशाङ्कसेनामुखद्वारा कथितेन । संजनय्य-उत्पाद्य । सहचर्याः कनकलेखायाः । एतया पूर्वोक्तया कनकलेखया । कीदृश्या इत्याह-निरर्गलीति-निरर्गलीकृतेन बन्धनान्मोचितेन ततः सत्कृतेन पूजितेन कलिङ्गनाथेन कर्दनाख्येन न्यायेन विधिपूर्वकं दत्तया अर्पितया कृतविवाहयेत्यर्थः । संगत्य सर्गं प्राप्य । आन्ध्रेति—आन्ध्रकलिङ्गराजयोः आन्ध्रराजस्य कलिङ्गराजस्य च राज्यं शास्तीति तच्छासी अहमिति शेषः । तस्येत्यादि-तस्य पूर्ववर्णितस्यास्य अङ्गराजस्य सिंहवर्मणः अरिणा शत्रुणा चण्डवर्माख्येन लिलङ्घयिषितस्य आक्रमितुमिष्टस्य । साहाय्यकाय-साहाय्यं कर्तुम् । अलघीयसा विपुलेन । साधनेन सैन्येन । अत्र अस्मिन् अङ्गदेशे । सखिजनसंगतस्य मित्रवर्गपरिवृतस्य । ते तव राजवाहनस्येत्यर्थः । याद‍ृच्छिकेति-याद‍ृच्छिकं दैववयोगाज्जातं यद्दर्शनं तेन य आनन्दराशिस्तेन लङ्घितमाक्रान्तं चेतो यस्य सः । इत्यन्त मन्त्रगुप्तस्य वचनम् ।

* बालक्रीडा *

रचा हुआ है, तो । यह कैसे हुआ, कहिये ।" स्नेहसे बाधती हुई उसने मुझसे धीरेसे उपर्युक्त बात पूछी । तब मैंने अपनी सभी कृतियां उससे निवेदित कर दीं । फिर उसी शशाकसेनाके मुखसे अपनी सभी कृतियां, जो मेरी प्यारीको आनन्ददायिका थीं, अपनी प्यारीके समीप कहला भेजीं । तत्पश्चात् अति आदरपूर्वक प्रतिबन्ध रहित यथाविधि कलिङ्गराजकी पुत्रीको स्वीकार किया और आन्ध्र तथा कलिङ्गका राज्य भी प्राप्त किया । ततः आन्ध्र और कलिङ्ग देशपर

तस्य तत्कौशलं स्मितज्योत्स्नाभिषिक्तदन्तच्छदः सह सुहृद्भिरभिनन्द्य चित्रमिदं महामुनेर्वृत्तम् । अत्रैव खलु फलितमतिकष्टं तपः । तिष्ठतु तावन्नर्म । हर्षप्रकर्षस्पृशोः प्रज्ञासत्त्वयोर्दृष्टमिह स्वरूपम् । इत्यभिधाय पुनः अवतरतु भवान् इति बहुश्रुते विश्रुते विकचराजीवसदृशं दृशं

* बालविबोधिनी *

(२२) तस्य मन्त्रगुप्तस्य । तत् पूर्ववर्णितम् । कौशलं नैपुण्यम् । अभिनन्द्येत्यस्य कर्म । स्मितेति-स्मितस्य मन्दहासस्य ज्योत्स्नया किरणेन अभिषिक्तौ अनुलिप्तौ दन्तच्छदौ ओष्ठाधरौ यस्य तादृश इति राजवाहन इत्यग्रिमेणान्वयः । चित्रं-विस्मयकरम् । महामुनेः महातापसस्य तापसवेषधारिणो मन्त्रगुप्तस्येत्यर्थः । वृत्तं चरित्रम् । अत्रैव इह जन्मन्येव । फलितं सिद्धम् । अतिकष्टं-कष्टसाध्यं । नर्म परिहासवाक्यम् । एतावद् यदुक्तं राजवाहनेन तत्तु परिहाससूचकमेव साम्प्रतं परिहासं विहाय तत्त्वमेवोच्यते इत्यत्र तात्पर्यम् । हर्षप्रकर्षेति हर्षस्यानन्दस्य प्रकर्षमाधिक्यं स्पृशतः इति तयोः-समधिकानन्दजनकयोः । प्रज्ञासत्त्वयोः बुद्धिबलयोः । स्वरूपम् तत्त्वम् । अवतरतु-स्वचरितवर्णनमारभताम् इत्यर्थः । बहुश्रुते-बहु नानाशास्त्रं श्रुतमधीतं येन तस्मिन् । विश्रुते तन्नामधेये कुमारे, तदुपरीत्यर्थः । विकचं प्रफुल्लं यद् राजीवं कमलं तत्-सदृशं तत्तुल्यां दृशं नयनं

* बालक्रीडा *

शासन करते हुए इस शत्रुको जीतनेकी अभिलाषासे और अङ्गराजकी सहायताके लिये संग्राम की प्रभूत साधनों (सैन्यादिकों) के सहित यहांपर आया । यहांपर मित्रोंसहित आपका दर्शन पाकर आनन्दराशिसे मेरा मन पुलकित हो गया

(२२) कुमार मन्त्रगुप्तके इस वृत्तको सुनकर सुहृदोंके साथ राजवाहनने मुसकुराते हुए चन्द्रिकासे अभिषिक्त अधरोंद्वारा उस मन्त्रगुप्तका अभिवादन किया और कहा—"इस महामुनिका चरितवृत्त विचित्र है । अति कठिन तपका फल आपको इसी जीवनमें उपलब्ध हो गया । अब परिहास त्याग दिया जाय । आनन्दके आधिक्यको सर्षित करनेवाला आपके बुद्धिबलका स्वरूप इस वृत्तमें

चिक्षेप देवो राजवाहनः।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते मन्त्रगुप्त चरितं
नाम सप्तम उच्छ्वासः।

* बालविबोधिनी *

चिक्षेप निदधौ। अत्र तस्येत्यारभ्य राजवाहन इत्यन्तं वर्णनं कविनैव कृतमतोऽत्र ओष्ठ्यवर्णप्रयोगो न वैरस्यमावहतीति सहृदयैर्बोध्यम्।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनी समाख्यायां
दशकुमारचरितव्याख्यायां मन्त्रगुप्तचरितं
नाम सप्तम उच्छ्वासः।

* बालक्रीडा *

देखा गया। अस्तु...। ऐसी बातें कहकर अपने विकसित पद्मके सदृश नेत्रोंको विक्षेपित करके देव राजवाहनने नानाशास्त्रनिष्णात विश्रुतसे अपने चरितको आरम्भ करनेके लिये कहा—

इस प्रकारसे दशकुमार चरितके सप्तम उच्छ्वासकी बालक्रीडा
नामक हिन्दी टीका समाप्त हुई।

अष्टमोच्छ्वासः ।

(१) अथ सोऽप्याचचक्षे—'देव, मयापि परिभ्रमता विन्ध्याटव्यां कोऽपि कुमारः क्षुधा तृषा च क्लिश्यन्नक्लेशार्हः क्वचित्कूपाभ्याशेऽष्टवर्षदेशीयो दृष्टः। स च त्रासगद्गदमगदत्—'महाभाग, क्लिष्टस्य मे क्रियतामार्य, साहाय्यकम् । अस्य मे प्राणापहारिणीं पिपासां प्रतिकर्तुमुदकमुदञ्चन्निह कूपे कोऽपि निष्कलो ममैकशरणभूतः पतितः । तमलमस्मि नाहमुद्धर्तुम्' इति ।

(२) अथाहमभ्येत्य व्रतत्या कयापि वृद्धमुत्तार्य, तं च बालं वंशना-

* बालविबोधिनी *

(१) अथ मन्त्रगुप्तकथनानन्तरम् । स विश्रुतनामा कुमारः । विन्ध्याटव्यां विन्ध्यारण्ये । कोऽपि अज्ञातकुलनामा । अक्लेशार्हः क्लेशसहनयोग्यो नेत्यर्थः । कूपाभ्याशे जलाशयसमीपे । अष्टवर्षदेशीयः असमाप्ताष्टवर्षः । सः बालकः । त्रासगद्गदं भयविक्लवं यथा तथा । क्लिष्टस्य क्लेशयुक्तस्य । आर्य-पूज्य । साहाय्यकं स्वार्थे कः । प्राणापहारिणीं जीवितनाशिनीम् । प्रतिकर्तुं अपनोदयितुम् । उदञ्चन् निष्कासयन् । निष्कलो वृद्धः । ममैकशरणभूतो मदवलम्बनभूतः । तं कूपपतितं वृद्धम् । अलं समर्थः । उद्धर्तुं कूपान्निष्कासयितुम् । इत्यन्तं अगददित्यस्य कर्म ।

(२) अथ तच्छ्रवणानन्तरम । अभ्येत्य समीपमागत्य । व्रतत्या लतया र-

* बालक्रीडा *

(१) विश्रुत कहने लगा—'देव ! मैं भी विन्ध्याटवी में इधर-उधर भ्रमण कर रहा था । सहसा एक कुए के समीप मैंने लगभग आठ वर्ष का एक बालक देखा । कष्ट सहन करने के अयोग्य वह सुकुमार बालक भूख—प्यास से व्याकुल था । उसने मुझे देखकर भयभीत भाव से गद्गद होकर कहा—'महाभाग ! मैं इस समय संकट में हूँ । आप मेरी सहायता करिए । मुझे प्राणान्तक पिपासा लगी हुई थी । उसे बुझाने के लिए मैं इस कुए पर आया तो देखा, कोई वृद्ध पुरुष कूप में गिरा हुआ है । मेरे सिवाय इसका और कोई सहायक नहीं है और मुझमें इतना बल नहीं है कि मैं इसका उद्धार कर सकूँ ।'

(२) इसके अनन्तर मैंने कुछ लताओं की सहायता से उस वृद्ध को कुए

लीमुखोद्धृताभिरद्भिः फलैश्च पञ्चषैः शरक्षेपोच्छ्रितस्य लकुचवृक्षस्य शिखरात्पाषाणपातितैः प्रत्यानीतप्राणवृत्तिमापाद्य, तरुतलनिषण्णस्तं जरन्तमप्राक्षम्—'तात, क एष बालः, को वा भवान्, कथं चेयमापदापन्ना' इति।

(३) सोऽश्रुगद्गदमगदत्—'श्रूयतां महाभाग। विदर्भो नाम जनपदः तस्मिन्भोजवंशभूषणम्, अंशावतार इव धर्मस्य, अतिसत्त्वः, सत्यवादी, वदान्यः, विनीतः, विनेता प्रजानाम्, रञ्जितभृत्यः, कीर्तिमान्, उदग्रः,

* बालविबोधिनी *

जृम्भतयेत्यर्थः। उत्तार्य उद्धृत्य। वंशनालीति—वंशस्य नाली अन्तश्छिद्रं वेणुर्वा तस्या मुखमग्रभागस्तेनोद्धृताभिर्निष्कासिताभिः। अद्भिर्जलैः। पञ्च षड् वा प्रमाणमेषां ते पञ्चषास्तैः। शरक्षेपो बाणगतिः यावद्बाणा गच्छन्तीत्यर्थः। शरक्षेपादप्युच्छ्रितस्योन्नतस्य। शिखरात् अग्रप्रदेशात्। पाषाणपातितैः प्रस्तरनिःक्षेपेणाधःक्षिप्तैः। फलैरित्यस्य विशेषणम्। करणभूतैः तैः प्रत्यानीता पुनराक्षिप्ता प्राणवृत्तिः जीवनयोगो यस्य तम्। आपाद्य कृत्वा। जरन्तं वृद्धम्।

(३) सः वृद्धः। जनपदः देशः। अस्तीति शेषः। अंशावतारः—अंशेनैकदेशेन अवतारः न तु पूर्ण इत्यर्थः। अतिसत्त्वः समधिकबलवान् सत्त्वगुणप्रधानो वा। वदान्यो दानशौण्डः। विनेता शिक्षादाता। रञ्जितभृत्यः अनुरक्तसेवकः।

* बालक्रीडा *

से बाहर निकाला और बाँस की नली से पानी काढ़कर उस बालक की पिपासा निवृत्त की। तत्पश्चात् पत्थर तथा बाणों की सहायता से मैंने एक लकुच वृक्ष से पाँच-छ फल तोड़े और उसे खिलाकर उन दोनों की भूख मिटायी। तब वृक्ष की छाया में बैठकर उस बूढ़े से मैंने कहा—'हे तात! यह बालक कौन है? आप कौन हैं और यहाँ आकर इस विपत्ति में कैसे पड़ गये?' मेरे वचन सुनकर उस वृद्ध के नेत्र छलछला आये और गद्गद वाणी में उसने कहा—

(३) 'महाभाग! सुनिए। विदर्भ नाम का एक देश है। उसमें भोजवंशावतंस, धर्म का अंशावतार, असाधारण बलवान्, सत्यवादी, दानी, विनयभावसम्पन्न, प्रजा का शासक, अपने सेवकों को प्रसन्न रखनेवाला, यशस्वी, उन्नतिशील, अपनी बुद्धि और अपने शरीर से सदा प्रजा की उन्नति में लगा रहने वाला, शास्त्र पर आस्था रखने वाला, पंडितों का सत्कार करने में तत्पर,

बुद्धिमूर्तिभ्यामुत्थानशील:, शास्त्रप्रमाणकः, शक्यभव्यकल्पारम्भी, संभावयिता बुधान् , प्रभावयिता सेवकान् , उद्भावयिता बन्धून् , न्यग्भावयिता शत्रून् , असंबद्धप्रलापेष्वदत्तकर्णः, कदाचिदप्यवितृष्णो गुणेषु, अतिनदीष्णः कलासु, नेदिष्ठो धर्मार्थसंहितासु, स्वल्पेऽपि सुकृते सुतरां प्रत्युपकर्ता, प्रत्यवेक्षिता कोशवाहनयोः, यत्नेन परीक्षिता सर्वाध्यक्षाणाम् , उत्साहयिता कृतकर्मणामनुरूपैर्दानमानैः, सद्यः प्रतिकर्ता दैवमानुषीणामापदाम् ,षाड्गु-

* बालविबोधिनी *

बुद्ध्या मूर्त्या आकारेण चोत्थानशीलः पौरुषस्वभावः । शक्यं स्वसाध्यं भव्यं मङ्गलजनकं कल्पं विधिं आरभत इति शक्यभव्यकल्पारम्भी । संभावयिता मानवनादिना सत्कर्त्ता । प्रभावयिता प्रभुत्वकारकः । उद्भावयिता संवर्द्धकः । न्यग्भावयिता जेता । असंबद्धप्रलापेषु निरर्थकवचनेषु। अवितृष्णो विरागरहितः सर्वदा गुणानुरक्त एवेत्यर्थः । अतिनदीष्णः परमपटुः । नेदिष्ठोऽतिसमीपवर्ती सर्वदैव तत्र संलग्न इति भावः । सुकृते केनापि कृते उपकारे । सुतरामतिशयेन । प्रत्यवेक्षिता अनुसन्धानकर्त्ता । परीक्षिता परीक्षकः । सर्वाध्यक्षाणां प्रधानकर्म्मकर्त्तॄणाम् । कृतं निष्पादितं कर्म कार्यं यैस्तेषाम् । प्रतिकर्त्ता शमयिता । षाड्गुण्यं सन्धिविग्रहादिः

* बालक्रीडा *

सेवकों का प्रभाव बढ़ाने में संलग्न, बन्धुजनों का सहायक और शत्रुओं का दमन करनेवाला पुण्यवर्मा नाम का राजा था। वह कभी असम्बद्ध बातों पर ध्यान नहीं देता था । गुणों को ग्रहण करने में कभी भी वह तृप्त नहीं होने आता था। वह सभी कलाओं में निपुण था । धर्म और अर्थ के संग्रह में वह सदा प्रयत्नशील रहता था। यदि कोई उसका तनिक भी उपकार कर देता तो वह उसका भरपूर प्रत्युपकार करता था। अपने कोष और वाहनों पर उसकी सर्वदा निगाह रहती थी। अपने सभी अधिकारियों की वह गुप्तरूप से परीक्षा किया करता था। कार्यकुशल लोगों का सम्मान करता हुआ वह उन्हें आर्थिक सहायता भी पहुँचाया करता था । यदि कभी कोई दैवी या मानुषी विपत्ति आ जाती तो वह तत्काल उसका प्रतीकार कर देता था । सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और आश्रय इन छहों गुणों का वह यथोचित उपयोग करता था । मनु की बतायी प्रणाली के अनुसार वह चारों वर्णों और चारों आश्रमों के धर्मों का पालन कराता था। उसकी पुनीत

ण्योपयोगनिपुणः, मनुमार्गेण प्रणेता चातुर्वर्ण्यस्य, पुण्यवर्मा नामासीत्।

(४) स पुण्यैः कर्मभिः प्राप्य पुरुषायुषम, पुनरपुण्येन प्रजानामगण्य-तामरेषु । तदनन्तरमनन्तवर्मा नाम तदायतिरवनिमध्यतिष्ठत् । स सर्वगुणैः समृद्धोऽपि दैवाद्दण्डनीत्यां नात्यादृतोऽभूत । तमेकदा रहसि वसुरक्षितो नाम मन्त्रिवृद्धः पितुरस्य बहुमत. प्रगल्भवागभाषत ।

(५) 'तात, सर्वैवात्मसंपदभिजनात्प्रभृत्यन्यूनैवात्रभवति लक्ष्यते । बुद्धिश्च निसर्गपट्वी, कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राम-

* बालविबोधिनी *

तेषामुपयोगे विविच्य प्रयोगे निपुण कुशल॰ । मनुमार्गेण मनूक्तपद्धत्या । पुण्य-श्लोक. पवित्रकीर्त्ति॰ ।

(४) स. पुण्यवर्मा । पुण्यै कर्मभि॰ यज्ञदानादिभि । पुरुषायुषं पूर्णमायु शतं वर्षाणीति यावत् । प्राप्य लब्ध्वा । प्राप्येति पाठे जीवित्वेत्यर्थ । अपुण्येन पापेन दुर्भाग्येनेति यावत् । अमरेषु अगण्यत स्वर्गमगच्छत् । तदायति'—त-स्मात् पुण्यवर्मण आयतिः प्रभावो यस्य स. । तत्पुत्र इत्यर्थः । स्यात्प्रभावेऽपि चायतिरित्यमर॰ । दण्डनीत्या राजनीतौ । अत्यादृत आदरवान् । बहुमत. सम्मा-नित । प्रगल्भवाक् वाक्पटुः ।

(५) आत्मसम्पत् पुरुषगुणपरम्परा । अभिजनात्प्रभृति कुलक्रमानुसारेण । अन्यूना अहीना । अत्रभवति त्वयि । निसर्गेति— निसर्गात् स्वभावात् पट्वी

* बालक्रीडा *

कीर्ति समस्त धरातल में फैली हुई थी । ऐसा था वह वीर पुण्यवर्मा ।

(४) उसने मनुष्य की पूर्ण (१२० वर्ष) आयु भोगी और अन्त में वह प्रजा के पाप वश वह स्वर्ग के देवताओं में जा मिला । उसके प्रतीकस्वरूप अनन्तवर्मा नामक पुत्र था । अनन्तवर्मा यद्यपि सब गुणों से पूर्ण था, फिर भी अभाग्य वश लोग उसको दण्डनीति (राजनीति) का आदर नहीं करतेथे । एक दिन उसके पिता द्वारा सम्मानित वृद्ध मंत्री वसुरक्षित ने अनन्तवर्मा को एकान्त में ले जाकर कहा—

(५) 'तात ! अपने कुल के अनुसार आप में सभी गुण विद्यमान हैं । बुद्धि भी आप की स्वभावत॰ प्रखर है । नृत्य, गीत, चित्र तथा काव्यकला पर भी और

विस्तरा तवेतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते । तथाप्यसावप्रतिपद्यात्मसंस्कारमर्थशास्त्रेषु, अनभिसंशोधितेव हेमजातिर्नातिभाति बुद्धिः । बुद्धिहीनो हि भूभृदत्युच्छ्रितोऽपि परैरध्यारुह्यमाणमात्मानं न चेतयते । न च शक्तः साध्यं साधनं वा विभज्य वर्तितुम् । अयथावृत्तश्च कर्मसु प्रतिहन्यमानः स्वैः परैश्च परिभूयते न चावज्ञातस्याज्ञा प्रभवति प्रजानां योगक्षेमाराधनाय । अतिक्रान्तशासनाश्च प्रजा यत्किंचनवादिन्यो यथाकथंचिद्वर्तिन्यः सर्वाः स्थितीः

* बालविबोधिनी *

पटुः । चित्रेषु नानाविधेषु । प्राप्तविस्तरा लब्धप्रसरा । प्रतिविशिष्यते विशिष्टास्ति । असौ बुद्धिः । अप्रतिपद्य अप्राप्य । आत्मसंस्कारं वासनाम् । अर्थशास्त्रेषु दण्डनीत्यादिषु । अनभिशोधितेति सुवर्णं यथा न शोभते तथा संस्काररहिता बुद्धिरपि न शोभत इत्यर्थः । भूभृत् राजा । अत्युच्छ्रितः अत्युन्नतः । परैः शत्रुभिः । अध्यारुह्यमाणं आक्रम्यमाणम् । चेतयते ज्ञातुं प्रभवति । शक्तः समर्थः । साध्यं कार्यम् । साधनं कारणम् । अथवा साध्यं विपक्षभूतं साधनं सपक्षभूतम् । विभज्य निर्णीय । अयथावृत्तः योग्यचरित्रहीनः । कर्मसु कार्येषु । प्रतिहन्यमानः प्रतिरुध्यमानः परिभूयते अवज्ञायते । अलब्धस्य लाभो योगः लब्धस्य संरक्षणं क्षेमस्तयोराराधनाय साधनाय । अतिक्रान्तं लङ्घितं शासनं नृपादेशो याभिस्ताः । यत्किञ्चनवादिन्यः

* बालक्रीडा *

लोगों की अपेक्षा आपकी बुद्धि को अच्छा अधिकार प्राप्त है। यह सब होने पर भी वह बुद्धि अर्थशास्त्र तक नहीं पहुँचती। इसलिये उसकी शोभा उसी तरह नहीं निरख पाती, जैसे सोना आग में तपे विना अपनी चमक-दमक नहीं दिखा पाता। बुद्धिहीन राजा चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, उसके शत्रु उसे भीतर ही भीतर खोखला कर देते हैं, किन्तु ऊपर से कुछ नहीं मालूम होता। बुद्धि के अभाव से वह अपने साध्य और साधन का भी विभाग नहीं कर पाता। जो राज्यपद के अनुकूल आचरण नहीं करता तो उसे अपने या पराये शत्रु एक न एक दिन अवश्य धर दबोचते हैं। ऐसी दशा में वह अपमानित हो जाता है और अपमानित राजा की आज्ञाओं का कोई मूल्य नहीं रह जाता। इसी से वह अपनी प्रजा के योगक्षेम का भी प्रबन्ध नहीं कर पाता। इस परिस्थिति में प्रजा राजा की आज्ञाओं का उल्लंघन करती हुई सभी मर्यादाओं को ठुकराकर मनमाने मार्ग से चलने

संकिरेयुः । निर्मर्यादश्च लोको लोकादितोऽमुतश्च स्वामिनमात्मानं च भ्रंशयते । आगमदीपदृष्टेन खल्वध्वना सुखेन वर्तते लोकयात्रा । दिव्यं हि चक्षुर्भूतभवद्भविष्यत्सु व्यवहितविप्रकृष्टादिषु च विषयेषु शास्त्रं नामप्रतिहतवृत्ति । तेन हीनः सतोरप्यायतविशालयोर्लोचनयोरन्ध एव जन्तुरर्थदर्शनेष्वसामर्थ्यात् । अतो विहाय बाह्यविद्यास्वभिषङ्गमागमय दण्डनीतिं

* बालविबोधिनी *

अनियन्त्रितमार्गिण्यः । यथा कथञ्चिद्वर्त्तिन्यः यथेच्छं विहरन्त्यः । स्थितीर्मर्यादा । संकिरेयुः विशृङ्खलयेयु । इतोलोकात् । अमुतः परलोकात् । भ्रंशयति पातयति । आगमः शास्त्रमेव दीपस्तेन दृष्टेन निर्दिष्टेन । वर्तते सम्पद्यते । लोकयात्रा लोकस्थितिः । व्यवहिता विषयान्तरेणाच्छादिताश्च विप्रकृष्टा असन्निहितास्तेषु । अप्रतिहताऽकुण्ठिता वृत्तिः प्रसरो यस्य तत् । चक्षुषा सर्वं द्रष्टुं न प्रभवन्ति जीवाः शास्त्ररूपं दिव्यं चक्षु र्न कुत्रापि प्रतिहतं भवतीति भावः। तेन शास्त्रचक्षुषा। सतोः वर्तमानयोः । शत्रन्तादस्धातोः सप्तमीद्विवचने रूपम् । आयतविशालयोः दीर्घमहतोः । जन्तुर्जीवः । अर्थदर्शनेषु विषयज्ञानेषु । बाह्यविद्यासु नीतिविद्येतरविद्यासु । अभिषङ्गमासक्तिम् । आगमय प्रापय । आवर्जिता प्राप्ता शक्तिः सामर्थ्यं सिद्धिः कार्यसिद्धिश्च येन सः । अस्खलितशासनः अप्रतिहताज्ञः । शाधि पालयेत्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

लगती है । मर्यादाहीन जनता अपने को और अपने स्वामी को इस लोक और परलोक से भ्रष्ट कर देती है । शास्त्ररूपी दीपक के उजाले में देखकर निर्धारित किये हुए मार्ग पर चलते रहने पर बड़े आनन्द से जीवन बीतता है। शास्त्र दिव्य दृष्टि के सदृश है, जो दृष्टि वर्तमान–भूत और भविष्य तथा अज्ञान से दृष्टिगोचर न होने वाले सभी पदार्थों तक जा पहुँचती है–उसकी कहीं रुकावट नहीं है । जिसके पास यह दिव्य दृष्टि नहीं है, वह सुन्दर और बड़ी–बड़ी आँखें रहते हुए भी अन्धे के समान है । क्योंकि वह कार्य-अकार्य के विषय की विवेचना नहीं कर सकता । इसलिये अब आप बाहरी विद्याओं की ओर से आसक्ति हटाकर अपने कुल की विद्या अर्थात् दण्डनीति सीखने का कष्ट करिए । उस दण्डनीति प्रतिपादित पथ से चलते हुए यदि आप कार्यसाधन में लगिएगा तो सभी शक्तियें और सभी सिद्धियें आपके पास दौड़ आयेंगी और शासनकार्य में कभी

कुलविद्यां तदर्थानुष्ठानेन चावर्जितशक्तिसिद्धिरस्खलितशासनः शाधि चिरमुदधिमेखलामुर्वीम्' इति ।

(६) एतदाकर्ण्य 'स्थान एव गुरुभिरनुशिष्टम् । तथा क्रियते' इत्यन्तःपुरमविशत् । तां च वार्तां पार्थिवेन प्रसङ्गेनोदीरितामुपनिशम्य समीपोपविष्टश्चित्तानुवृत्तिकुशलः प्रसादवित्तो गीतनृत्यवाद्यादिष्वबाह्यो बाह्यनारोपरायणः पटुरयन्त्रितमुखो बहुभङ्गिविशारदः परमर्मान्वेषणपरः परिहासयिता परिवादरुचिः पैशुन्यपण्डितः सचिवमण्डलादप्युत्कोचहारी सकलदुर्नयोपाध्यायः कामतन्त्रकर्णधारः कुमारसेवको विहारभद्रो नाम स्मितपूर्वं

* बालविबोधिनी *

अनुशासनार्थकशासधातोर्लोटि मध्यमपुरुषैकवचने रूपम् । उदधिः समुद्रो मेखला रशना यस्यास्तां ससागरामित्यर्थः । उर्वी पृथ्वीम् ।

(६) स्थाने युक्तम् । प्रसादवित्तः राज्ञः प्रसादेन वित्तः प्रसिद्धः अथवा प्रसाद एव वित्तं धनं यस्य सः, राजप्रसादोपजीवीत्यर्थः । अबाह्यः बहिर्भूतो न; सर्वकलैकदेशज्ञ इत्यर्थः । बाह्यनारोपरायणो वेश्यासक्तः । अयन्त्रितमुखः असंयतमुखः–वाच्यावाच्यज्ञानहीनो बहुभाषी वा । बहुभङ्गिविशारदः वक्रोक्तिचतुरः । परस्य मर्मान्वेषणे गोप्यविषयानुसन्धाने परस्तत्परः परच्छिद्रान्वेषणपरायणो वा । परिवादरुचिः परनिन्दारसिकः । पैशुन्यं खलता तत्र पण्डितः । सचिवमण्डलात् मन्त्रिसमूहादपि

* बालक्रीडा *

कोई भूल होने का खटका नहीं रहेगा । ऐसा करके आप चिरकाल तक समुद्रवसना धरित्री का शासन करिए ।

(६) यह सुनकर अनन्तवर्मा ने कहा—'आपका उपदेश युक्तिसंगत है । मैं ऐसे ही करूंगा ।' यह कहकर वह अन्तःपुर में चला गया । रानियों के बीच में पहुँचकर प्रसंगवश उसने अपने वृद्धमंत्री के उपदेश की भी चर्चा कर दी । जिसे अनन्तवर्मा के एक सेवक विहारभद्र ने सुन लिया । क्योंकि वह भी वहीं बैठा था । विहारभद्र दूसरे का भाव भाँपने में कुशल था । राजा की उस पर कृपा रहती थी । वह नृत्य-गीत-वाद्यादि विद्याओं में निपुण, वेश्यागामी, मुँहफट, व्यंग्य बोलने में चतुर, औरों के गुप्त भेद जानने में तत्पर, परनिन्दापरायण,

व्यज्ञपयत्—

(७) 'देव, दैवानुग्रहेण यदि कश्चिद्भाजनं भवति विभूतेः, तमकस्मादुच्चावचैरुपप्रलोभनैः कदर्थयन्तः स्वार्थं साधयन्ति धूर्ताः । तथाहि—केचित्प्रेत्य किल लभ्यैरभ्युदयातिशयैराशामुत्पाद्य, मुण्डयित्वा शिरः, बद्ध्वा दर्भरज्जुभिः, अजिनेनाच्छाद्य, नवनीतेनोपलिप्य, अनशनं च शयित्वा, सर्वस्व स्वीकरिष्यन्ति । तेभ्योऽपि घोरतराः पाषण्डिनः पुत्रदारशरीरजीविता-

* बालविबोधिनी *

अन्यजनात्तु का कथा । उत्कोचहारी गुप्तरूपेण द्रव्यग्रहणपरः । कुमारसेवकः कुमारावस्थामारभ्य राज्ञः सेवकः ।

(७) भाजनं पात्रम् । विभूतेः ऐश्वर्यस्य । उच्चावचैर्नानाविधैः । कदर्थयन्तो गर्हयन्तः । केचित् केचन धूर्त्ताः । स्वीकरिष्यन्तीत्यनेनान्वयः । प्रेत्य मरणानन्तरम् । अजिनेन मृगचर्मणा । सर्वस्वं अन्यस्य सर्वं धनम् । स्वीकरिष्यन्ति ग्रहीष्यन्ति । यज्ञदीक्षितस्य शिरो मुण्डनं कुशरज्जुभिर्वेष्टनं, मृगचर्माच्छादनमनशनञ्च प्रसिद्धमेव । तेभ्यो धूर्तेभ्योऽपि पाषण्डिनः शठाः । पुत्रदारेति पुत्रदारादीन्यकिञ्चित्कराणि धर्म एवाश्रयणीय इत्यादि कथयित्वा जनान् स्वस्वपुत्रकलत्रादीनि त्याजयन्तीति भावः । पटुजातीयः चतुरसदृशः । प्रकारवचने जातीयर् प्रत्ययः । अस्यै अनन्तरोक्तायै । मृगतृष्णिकायै मरीचिकायै । निमित्ते चतुर्थी । हस्तगतं धनमिति शेषः । तं पटुजातीयम् । अन्ये अपरे राजनीतिज्ञा इति भावः।

* बालक्रीडा *

चुगलखोर, मन्त्रिमण्डल से भी घूस लेने वाला, दुष्टों का सरदार और कामतंत्र अर्थात् नायक-नायिका को एकत्र करने में पटु था । सब बातें सुनकर मन्द-मन्द मुसकाते हुए विहारभद्र ने कहा—

(७) महाराज ! यदि भाग्यवश कोई धनी हो जाता है तो नाहक ऊँची-नीची बातें समझाकर धूर्तलोग उसका मस्तिष्क दूषित-करके अपना स्वार्थ साधते हैं । कितने तो ऐसे धूर्त होते हैं कि वे किसी सीधे-सादे व्यक्ति को पाते ही अपनी बातों के चक्कर में डालकर उसके हृदय में आशा उत्पन्न कराके उसका मूड़ मुड़ा देते, मृगचर्म की कोपीन धारण कराते और कई दिन भूखे सुलाते

न्यपि मोचयन्ति । यदि कश्चित्पटुजातीयो नास्यै मृगतृष्णिकायै हस्तगतं त्यक्तुमिच्छेत् तमन्ये परिवार्याहुः—'एकामपि काकिणीं कार्षापणलक्षमापादयेम, शस्त्रादृते सर्वशत्रून्घातयेम, एकशरीरिणमपि मर्त्यं चक्रवर्तिनं विदधीमहि यद्यस्मदुद्दिष्टेन मार्गेणाचर्यते' इति ।

(८) स पुनरिमान्प्रत्याह—'कोऽसौ मार्गः' इति । पुनरिमे ब्रुवते—'ननु चतस्रो राजविद्यास्त्रयी वार्तान्वीक्षिकी दण्डनीतिरिति । तासु तिस्रस्त्रयीवार्तान्वीक्षिक्यो महत्यो मन्दफलाश्च, तास्तावदासताम् । अधीष्व ताव-

* बालविबोधिनी *

काकिणी वराटिकानां विंशतिः । पणचतुर्थांश इत्यर्थः । कार्षापणः षोडश पणाः । आपादयेम उत्पादयेम । अर्थशास्त्रबलात् एकयाऽपि काकिण्या कार्षापणलक्षमर्जयितुं प्रभवति नर इति भावः । शस्त्रादृते शस्त्रं विना । कूटनीत्या विना युद्धं शत्रुनाशो भवतीत्यर्थः । एकशरीरिणं एकाकिनं पुरुषम् । मर्त्यानां मनुष्याणां चक्रे मण्डले समूहे वा वर्त्तते प्राधान्येन चरतीति तथा । विदधीमहि कर्त्तुं शक्नुयाम । अस्मदुद्दिष्टेन अस्माभिः प्रदर्शितेन । आचर्यते अनुष्ठीयते त्वयेति शेषः ।

(८) त्रयी वेदः । वार्त्ता अर्थशास्त्रम् । आन्वीक्षिकी न्यायशास्त्रम् । मन्दफलाः निष्फलप्रायाः । आसतां तिष्ठन्तु । आस् उपवेशने इत्यस्य धातोर्लोटि रूपम् ।

* बालक्रीडा *

हैं । ऐसा करके एक दिन उसका सर्वस्व डकार जाते हैं । जो उन से भी प्रबल धूर्त हैं, वे तो स्त्री–पुत्र आदि में भी बिलगाव कराते हुए शरीर और जीवन तक से पृथक् कराके अपना स्वार्थ साधते हैं । यदि कोई कुशल शिष्य उस धूर्त के कथनानुसार अपनी हस्तगत सम्पत्ति नहीं छोड़ना चाहता तो उसे और और भी प्रबल धूर्त आ घेरते और कहते हैं–'मैं एक कौड़ी से लाखों बना सकता हूं । बिना शस्त्र-उठाये ही सब शत्रुओं को नष्ट कर सकता हूँ । केवल एक शरीरधारी किसी भी साधारण मनुष्य को मैं चक्रवर्ती बना सकता हूँ । लेकिन यह सब तभी हो सकता है, जब कोई मेरे बताये मार्ग से चले ।'

(८) उस उस धूर्त की इन लम्बी–लम्बी बातों के फेर में पड़कर यदि कोई पूछता है—'आखिर, आप का वह कौन सा मार्ग है ?' इस पर वे कहते हैं 'चार–),

दण्डनीतिम् । इयमिदानीमाचार्यविष्णुगुप्तेन मौर्यार्थे षड्भिः श्लोकसहस्रैः संक्षिप्ता । सैवेयमधीत्य सम्यगनुष्ठीयमाना यथोक्तकर्मक्षमा' इति ।

(९) स 'तथा' इत्यधीते । शृणोति च । तत्रैव जरां गच्छति । तत्तु किल शास्त्रं शास्त्रान्तरानुबन्धि । सर्वमेव वाङ्मयमविदित्वा न तत्त्वतोऽधिगंस्यते । भवतु कालेन बहुनाल्पेन वा तदर्थाधिगतिः । अधिगतशास्त्रेण

* बालविबोधिनी *

इयं दण्डनीतिः । आचार्यविष्णुगुप्तेन चाणक्येन । मौर्यार्थे चन्द्रगुप्तकृते । अनुष्ठीयमाना आचर्यमाणा । यथोक्तकर्मक्षमा पूर्वप्रतिपादितकार्यकरणसमर्था ।

(९) तथा तथैवास्तु । तत्रैव दण्डनीत्यध्ययने । जरां गच्छति—वृद्धत्वं प्राप्नोति । शास्त्रान्तरानुबन्धि—अन्यशास्त्रापेक्षि । वाङ्मयं शास्त्रम् । तत्त्वतो याथार्थ्येन । अधिगंस्यते—सम्यग् ज्ञानं भविष्यति । तदर्थाधिगतिः—तदर्थबोधः । अधिगतं सम्यग् ज्ञातं शास्त्रं येन तेन; जनेनेति शेषः । आदावेव प्रथममेव । विश्वास्यं विश्वसनीयम् । आत्मकुक्षेः स्वोदरस्य । कृते निमित्तम् । इयद्भिः इयत्परिमाणैः ।

* बालक्रीडा *

प्रकार की राजविद्यायें होती हैं, त्रयी (ऋग् यजु. साम तीनों वेद) वार्ता (कृष्यादि कर्म) आन्वीक्षिकी (तर्कशास्त्र) और दण्डनीति (अर्थशास्त्र) । इनमें तीन विद्यायें बड़े परिश्रम से प्राप्त होती हैं और इनका फल भी साधारण ही होता है । इस लिए उनकी कोई आवश्यकता नहीं । तुम उनको त्यागकर केवल दण्डनीति का अध्ययन करो । इस विद्या को आचार्य विष्णुगुप्त (चाणक्य) ने अपने शिष्य चन्द्रगुप्त के लिए केवल ६ हजार श्लोकों में रच दियाथा । बस, इसे तुम पढ़ लो और इसके अनुसार चलो तो तुम जो चाहोगे सो कर लोगे ।,

(९) इस पर जब वह शिष्य कह देता कि 'मैं ऐसे ही करूंगा' और इस कौल के अनुसार वह पढ़ने–सुनने लग जाता तो केवल दण्डनीति का मंथन करते करते वह वृद्ध हो जाता है । फिर भी उसके पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता । जब वह कुछ घबड़ाता तो वह धूर्त समझाता हुआ कहता है–'देखो, एक शास्त्र का सम्बन्ध दूसरे शास्त्रों से लगा रहता है । जबतक तुम सब शास्त्र न पढ़लोगे तब तक दण्डनीति का आशय समझमें आवेगा कैसे ?' अच्छा, कुछ समय माथा मारने

त्वादावेव पुत्रदारमपि न विश्वास्यम् । आत्मकुक्षेरपि कृते तण्डुलैरियद्भि-रियानोदनः संपद्यते । इयत ओदनस्य पाकायैतावदिन्धनं पर्याप्तमिति मानोन्मानपूर्वकं देयम् । उत्थितेन च राज्ञा क्षालिताक्षालिते मुखे मुष्टिमर्धमुष्टिं वाभ्यन्तरीकृत्य कृत्स्नमायव्ययजातमह्नः प्रथमेऽष्टमे वा भागे श्रोतव्यम् । शृण्वत एवास्य द्विगुणमपहरन्ति तेऽध्यक्षधूर्ता-श्चत्वारिंशतं चाणक्योपदिष्टानाहरणोपायान्सहस्रधात्मबुद्ध्यैव ते विक-ल्पयितारः ।

* बालविबोधिनी *

इयान् इयत्परिमाणः । इयतः इयत्परिमाणस्य । एतावत् एतत्परिमाणम् । इन्धनं काष्ठम् । मानः प्रस्थादिकृतः । उन्मानं तुलादण्डकृतः । तत्पूर्वकम् । प्रस्थेन तुल-या वा परिमाप्येति भावः । उत्थितेन शय्याया इति शेषः । क्षालिताक्षालिते—कार्य-त्वरया किञ्चित् क्षालिते किञ्चिदक्षालिते मुखे—इत्यस्य विशेषणम् । अभ्यन्तरीकृत्य निःक्षिप्य गिलित्वेति भावः । शृण्वत इति अनादरे षष्ठी । शृण्वन्तं तमनादृत्य तस्यैव समक्षमित्यर्थः । अध्यक्षधूर्ताः धूर्ताः अधिकारिणः । चत्वारिंशतमित्यादि— चाणक्येन चत्वारिंशत्संख्यका एवाहरणोपाया उपदिष्टास्ते तु स्वबुद्धिबलेन सहस्रप्र-कारानाहरणोपायान् कल्पयेयुरित्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

से दण्डनीति थोड़ी—बहुत समझ में आयी भी तो उस शास्त्र का पहला उपदेश यह होता है कि अपने पुत्र और अपनी स्त्री पर भी विश्वास न करो । एक आदमी का पेट भरने के लिए इतने चावल से इतना भात तैयार हो सकता है । इतना चावल पकाने के लिए इतना ईंधन पर्याप्त होगा । इस लिए ठीक उतना ही चावल और ईंधन तौल—नाप कर रसोइए को देना चाहिए । राजा सोकर उठते ही मुँह धोये हो या नहीं, मुट्ठी—आधी मुट्ठी अन्न पेट में डाल कर सूर्योदय होने के साथ ही उस दिन का सब आय—व्यय समझे । वे मूढ़ राजे आय—व्यय सम-झते रहते ही हैं और उनके धूर्त अधिकारी उस से दुगुनी रकम खा जाते हैं । औरों के धन ऐंठने की चार विधि चाणक्य मुनिने बतायी है, किन्तु वे धूर्त अपनी बुद्धि से हजारों उपाय ढूँढ़ निकालते हैं ।

(१०) द्वितीयेऽन्योन्य विवदमानाना जनानामाक्रोशाद्दह्यमानकर्णः कष्टं जीवति । तत्रापि प्राड्विवाकादयः स्वेच्छया जयपराजयौ विदधाना', पापेनाकीर्त्या च भर्तारमात्मनश्चार्थैर्योजयन्ति । तृतीये स्नातुं भोक्तुं च न लभते । भुक्तस्य यावदन्नपरिणामस्तावदस्य विषभयं न शाम्यत्येव । चतुर्थे हिरण्यप्रतिग्रहाय हस्तं प्रसारयन्नेवोत्तिष्ठति । पञ्चमे मन्त्रचिन्तया महान्तमायासमनुभवति । तत्रापि मन्त्रिणो मध्यस्था इवान्योन्यं संभूय, दोषगुणौ दूतचारवाक्यानि शक्याशक्यतां देशकालकार्यावस्थाश्च स्वेच्छया

* बालविबोधिनी *

(१०) द्वितीये दिवसस्य द्वितीयभागे । आक्रोशात् चीत्कारशब्दात् । प्राड् विवाक• व्यवहारद्रष्टा जज् इति भाषा । पापेनेत्यादि—पापेन निन्दया च भर्तारं स्वामिनं योजयन्ति आत्मन• स्वान् अर्थैर्धनैर्योजयन्ति । तृतीये तृतीयभागे । अन्धसामशनानां परिणामः परिपाकः । विषभयमिति । नृपस्य विनाशाय शत्रवोऽन्नेन सह विषप्रदानं कुर्वन्तीति प्रसिद्धम् । हिरण्यप्रतिग्रहाय प्रजाभ्यो धनग्रहणाय । मन्त्रचिन्तया अमात्यैः सह मन्त्रणायाम् ।आयासं क्लेशम् । मध्यस्था उदासीना• । सम्भूय मिलित्वा । दोषगुणावित्यादि द्वितीयान्तपदानि विपरिवर्त्तयन्त इत्यस्य

* बालक्रीडा *

(१०) आपस में झगड़ते हुए जनसमुदाय के स्पर्धामरे (गाली-गलौज) वाक्य अलग सुनने पड़ते हैं । उन कटुवाक्यों को सुनकर उस सीधे-सादे राजा के कान पक जाते हैं । इस प्रकार बड़े कष्ट के साथ बेचारा अपने जीवन के दिन बिताता है । दूसरे वे धूर्त अपने मन से झूठ-मूठ के झगड़े खड़े करके जय-पराजय की बात गढ़कर विविध पाप और अपयश के कार्य करते हुए अपने मूढ प्रभु को बदनाम करके अपनी जेबें भरते हैं । तीसरे नित्य व्यग्र रहने के कारण राजा को नहाने-खाने का भी अवकाश नहीं मिलता । यदि भोजन भी मिलता तो जब तक वह पच नहीं जाता, तब तक यह भय भी बना रहता है कि कहीं किसी ने जहर न दे दिया हो । चौथे नित्य धन ग्रहण की इच्छा को लिये हुए ही सोने से उठाना पड़ता है । पाँचवें सलाह-बात की चिन्ता से बड़ा क्लेश भोगते रहना पड़ता है । तिस पर भी मन्त्री लोग मध्यस्थ बनकर दूतों और गुप्तचरों की

विपरिवर्तयन्तः, स्वपरमित्रमण्डलान्युपजीवन्ति । बाह्याभ्यन्तरांश्च कोपान्गूढमुत्पाद्य प्रकाशं प्रशमयन्त इव स्वामिनमवशमवगृह्णन्ति ।

(११) षष्ठे स्वैरविहारो मन्त्रो वा सेव्यः । सोऽस्यैतावान्स्वैरविहारकालो यस्यां तिस्रस्त्रिपादोत्तरा नाडिकाः । सप्तमे चतुरङ्गबलप्रत्यवेक्षणप्रयासः । अष्टमेऽस्य सेनापतिसखस्य विक्रमचिन्ताक्लेशः । पुनरुपास्यैव संध्याम्, प्रथमे रात्रिभागे गूढपुरुषा द्रष्टव्याः । तन्मुखेन चातिनृशंसाः शस्त्राग्निरसप्रणिधयोऽनुष्ठेयाः । द्वितीये भोजनानन्तरं श्रोत्रिय इव स्वा-

* बालविबोधिनी *

कर्माणि । विपरिवर्त्तयन्तः विपर्यासयन्तः । दोषं गुणरूपेण गुणं च दोषरूपेणेत्यर्थः । दूतचारवाक्यादीन्यपि तथैव । स्वपरेति स्वस्य परस्य मित्राणाञ्च मण्डलानि उपजीवन्ति । आश्रयन्ते तेभ्योऽपि धनं गृह्णन्ति । बाह्यान् प्रजाः, आभ्यन्तरान् अमात्यादींश्च । प्रशमयन्तः शान्ति प्रापयन्तः । अवगृह्णन्ति अनाद्रियन्ते ।

(११) स्वैरविहारः स्वच्छन्दविहरणम् । त्रिपादोत्तराः त्रिपादाधिकाः । नाडिकाः घटिकाः । चतुरङ्गबलस्य हस्त्यश्वरथपदातिलक्षणस्य प्रत्यवेक्षणं परीक्षणं तस्य प्रयासः क्लेशः । सेनापतिसखस्य सैन्याध्यक्षेण सहेत्यर्थः । शस्त्राग्नीति—

* बालक्रीडा *

बातों के विविध गुण–दोष, सबलता–निर्बलता और देश–काल की अवस्था में मनमाने परिवर्तन करके अपना और अपने मित्रों का कार्य साधन करते हैं। बाहर–भीतर की ओछी बातें सुना–सुना कर वे राजा को कुपित कर देते हैं, किन्तु ऊपर–ऊपर से कोप को शान्त करने का उपक्रम बाँधते हुए राजा को सर्वदा अपनी मुट्ठी में किये रहते हैं।

(११) छठीं बात यह है कि स्वेच्छापूर्वक विहार या सलाह–बात का झमेला इन दोनों में एक ही सध सकता है। उन धूर्त मन्त्रियों की योजना के अनुसार दो–तीन घड़ी से अधिक स्वेच्छा विहार का अवसर नहीं मिलता। सातवें सदा अपनी चतुरंगिणी सेना पर निगाह रखने का प्रयास करते रहना पड़ता है। आठवें राजा के लिये यह आवश्यक रहता है कि वह अपने सेनापति को मित्र बनाये रहे और अपना बल बढ़ाने की नयी योजनायें सोचा करे। शाम को सन्ध्या–वन्दन

ध्यायमारभेत। तृतीये तूर्यघोषेण संविष्टश्चतुर्थपञ्चमौ शयीत किल। कथमिवास्याजस्रचिन्तायासविह्वलमनसो वराकस्य निद्रासुखमुपनमेत। पुनः षष्ठे शास्त्रचिन्ताकार्यचिन्तारम्भः। सप्तमे तु मन्त्रग्रहो दूताभिप्रेषणानि च। दूताश्च नामोभयत्र प्रियाख्यानलब्धान् अनर्थान् वीतशुल्कबाधवर्त्मनि वाणिज्यया वर्धयन्तः, कार्यमविद्यमानमपि लेशेनोत्पाद्यानवरतं भ्रमन्ति।

(१२) अष्टमे पुरोहितादयोऽभ्येत्यैनमाहुः—'अद्य दृष्टो दुःस्वप्नः।

* बालविबोधिनी *

शस्त्रेण अग्निना रसेन विषेण च हन्तारः प्रणिधयो गुप्तचराः। अनुष्ठेयाः कर्त्तव्याः प्रयोज्या इति भावः। तूर्यघोषेण नृपस्य शयनसमयसूचकेन वाद्यध्वनिना। संविष्टः शयितः। उपनमेत समीपमागच्छेत्। उभयत्र येन प्रेषितो यदन्तिके प्रेषितश्च। वीतशुल्केति—वीता राजकीयपुरुषोऽयमिति कृत्वा अपगता शुल्कस्य भाषायां मासूल् इति ख्यातस्य बाधा यत्र तादृशे वर्त्मनि मार्गे। लेशेन कपटेन।

(१२) दुःस्थाः निकृष्टस्थानस्थिताः अनिष्टकारका इति भावः। होमसाधन

* बालक्रीडा *

से निवृत्त होकर रात के प्रथम पहर में ही गुप्तचरों का कार्यकलाप देखे। उनके द्वारा नृशंसव्यक्तियों के शस्त्रप्रहार, अग्निप्रयोग या विष देने वाले पापियों की गूढ योजना का प्रतीकार करे। जैसे ही भोजन से निवृत्त हो, उसी समय वेदपाठी ब्राह्मण के समान शास्त्र के पोथे लेकर उनका पारायण करे। संगीत और तुरही आदि के कोलाहल में केवल चार-पाँच घड़ी सोनेको मिलता है। इस तरह नित्य चिन्ता और क्लेश के वातावरण में जिसका मन व्याकुल रहेगा, उस बेचारे को क्या कभी सुख की नींद मिल सकती है? सोकर उठे तैसे ही फिर वही शास्त्र और कार्य की चिन्ता का बोझ धर दबाता है। मन्त्रियों से सलाह-बात करके दूत भेजने आदि के झमेले खड़े दीखते हैं। वे दूत दोनों पक्षवालों से चिकनी-चुपड़ी बातें करके कहीं से कोई रकम ऐंठते और कहीं किसी चीज का महसूल माफ कराके उसी वस्तु का व्यापार करके अपना कार्य साधन करते फिरते हैं। वास्तव में उनकी कोई आवश्यकता नहीं रहती, पर नन्हीं-नन्हीं बातों को बढ़ा-बढ़ा कर वे अपने लिए नित्य नयी आवश्यकता पैदा कर लिया करते हैं।

(१२) इनके अतिरिक्त पुरोहित आदि आकर कहते हैं—'आज मैंने एक

दुःस्था ग्रहाः शकुनानि चाशुभानि । शान्तयः क्रियन्ताम् । सर्वमस्तु सौवर्णमेव होमसाधनम् । एवं सति कर्म गुणवद्भवति । ब्रह्मकल्पा इमे ब्राह्मणाः । कृतमेभिः स्वस्त्ययनं कल्याणतरं भवति । ते चामी कष्टदारिद्र्या बह्वपत्या यज्वानो वीर्यवन्तश्चाद्याप्यप्राप्तप्रतिग्रहाः । दत्तं चैभ्यः स्वर्गमायुष्यमरिष्टनाशनं च भवति' इति बहु बहु दापयित्वा तन्मुखेन स्वयमुपांशु भक्षयन्ति । तदेवमहर्निशमविहितसुखलेशमायासबहुलमविरलकदर्थनं च नयतोऽनयज्ञस्यास्तां चक्रवर्तिता स्वमण्डलमात्रमपि दुरारक्ष्यं भवेत् । शास्त्रज्ञसमज्ञातो

* बालविबोधिनी *

हवनसामग्री । एवं सति—सौवर्णे होमसाधने सतीत्यर्थः । कर्म यज्ञादि । गुणवत् सार्थकम् । स्वस्त्ययनं शान्त्यादिकम् । कष्टं दारिद्र्यं । बहूनि अपत्यानि येषां ते तथा । अप्राप्तः अद्यापि न लब्धः प्रतिग्रहो दानादिकं यैस्ते । उपांशु गूढमिति भावः । अविरला घना कदर्थना निन्दा यत्र तद् यथा तथा । नयतः जीवनं यापयतः । आस्तां तिष्ठतु । शास्त्रज्ञेति—नीतिशास्त्रज्ञोऽयमिति या समज्ञा

* बालक्रीडा *

बहुत बुरा स्वप्न देखा है। इस समय आप के ग्रह खराब स्थानों में पड़े हैं। शकुन अच्छे नहीं दिखायी देते । यज्ञ द्वारा इन अनिष्टों की शान्ति की जानी चाहिए । यज्ञकार्य के सभी पात्र सुवर्ण के होने चाहियें । क्योंकि ऐसा करने से किया हुआ कर्म शीघ्र कार्य सिद्ध कर देता है । ब्राह्मण परमात्मा के स्वरूप हैं । ये यदि आपकी कल्याणकामना करेंगे तो सब तरह से कल्याण होगा । ये ब्राह्मण बेचारे असह्य दारिद्र्य भोग रहे हैं । इनके अनेक बाल-बच्चे हैं । ये नित्य यज्ञ करते हैं अतएव इनका तेज भी साधारण नहीं है । ये किसी का प्रतिग्रह नहीं लेते । जो लाग इनको पूजते हैं, उन्हें परलोक में स्वर्ग मिलता, आयु बढ़ती और सब अनिष्ट शान्त हो जाया करते हैं ।' इस प्रकार प्रशंसा करके उन विप्रों को बहुत-सा धन दिला देते और बाद में उन से छीन कर स्वयं हड़प जाया करते हैं । इस तरह अहर्निशि सुख से दूर रह, प्रबल परिश्रम कर और दुनिया भर भी भलाई-बुराई ढोनेवाला नीतिज्ञान से शून्य पुरुष चक्रवर्ती तो क्या होगा, अपने राज्य की रक्षा करने की सामर्थ्य भी उस में नहीं रह सकती । उस के मन्त्री आदि धूर्त सेवक

हि यद्ददाति, यन्मानयति, यत्प्रियं ब्रवीति, तत्सर्वमभिसंधातुमित्यविश्वासः । अविश्वास्यता हि जन्मभूमिरलक्ष्म्याः । यावता च नयेन विना न लोकयात्रा स लोकत एव सिद्धः नात्र शास्त्रेणार्थः । स्तनंधयोऽपि हि तैस्तैरुपायैः स्तनपानं जनन्या लिप्सते तदपास्यातियन्त्रणामनुभूयन्तां यथेष्टमिन्द्रियसुखानि ।

(१२) येऽप्युपदिशन्ति 'एवमिन्द्रियाणि जेतव्यानि, एवमरिषड्वर्गस्त्याज्यः, सामादिरुपायवर्गः स्वेषु परेषु चाजस्रं प्रयोज्यः, संधिविग्रह-

* बालविबोधिनी *

कीर्त्तिस्तस्या इति पञ्चम्यास्तसिल् । अभिसन्धातुं जनान् वञ्चयितुम् । अविश्वासो जनानामुत्पद्यते इति शेषः । यावता यत्परिमाणेन । अर्थः प्रयोजनम् । जनन्या इत्यत्र पञ्चमी विभक्तिः । लिप्सते लब्धुमिच्छति । अपास्य दूरीकृत्य । अतियन्त्रणां अत्यर्थनिपीडनं नीतिशास्त्रस्येति शेषः ।

(१२) अरिषड्वर्गः कामक्रोधादयः । इत्यन्तं उपदिशन्तीत्यस्य कर्म । मन्त्रिवकै निकृष्टमन्त्रिभिः । दासीगृहेषु परस्त्रीष्वित्यर्थः । एते उपदेशकाः । के

* बालक्रीडा *

जो शास्त्रसम्मत बातें कहते, दिखाने के लिए राज्यको कुछ लाभ करादेते, राजा का सम्मान करते या मीठी-मीठी बातें करते हैं, यह सब कार्य उस भोले-भाले राजा को ठगने का आडम्बरमात्र रहता है । इस लिए उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता । जहां विश्वास नहीं होगा, वहां दरिद्रता का आना निश्चित सा रहता है । जितनी नीति के विना जीवन निर्वाह नहीं हो सकता, उतनी नीति तो लोकव्यवहार से अपने आप आजाती है । उस के लिए शास्त्र की आवश्यकता नहीं पड़ती । दूध पीने वाला बच्चा भी किसी न किसी उपाय से अपनी माता का दूध पीना चाहता है । यद्यपि उसे सब तरह से दुखी रहना पड़ता है, फिर भी इन्द्रियजनित सुखों का अनुभव तो करता ही है ।

(१२) जो लोग उपदेश देते हुए कहते हैं कि 'इस प्रकार इन्द्रियों को वश में करो, इस प्रकार काम-क्रोध आदि छहों शत्रुओं को त्यागो, अपने पराये सब लोगों के साथ सदा साम-दानादि उपायों को व्यवहार में लाओ । सर्वदा सन्धि-

चिन्तयैव नेयः कालः, स्वल्पोऽपि सुखस्यावकाशो न देयः' इति। तैरप्ये-भिर्मन्त्रिवकैर्युष्मत्तश्चौर्यार्जितं धनं दासीगृहेष्वेव भुज्यते। के चैते वराकाः। येऽपि मन्त्रकर्कशास्तन्त्रकर्तारः शुक्राङ्गिरसविशालाक्षवाहुदन्तिपुत्रपराशर-प्रभृतयस्तैः किमरिषड्वर्गो जितः, कृतं वा तैः शास्त्रानुष्ठानम्। तैरपि हि प्रारब्धेषु कार्येषु दृष्टे सिद्ध्यसिद्धी। पठन्तश्चापठद्भिरतिसंधीयमाना बहवः।

* वालविवोधिनी *

उपदेष्टुं नाधिकारिणः। मन्त्रकर्कशाः नीतिकठोराः। तन्त्रकर्त्तारः नीतिशास्त्रप्रणेतारः। शुक्रः शुक्राचार्यः, आङ्गिरसो बृहस्पतिः, विशालाक्षस्तन्नामधेयो नीतिशास्त्रकारः, वाहुदन्तिपुत्रोऽपि, पराशरः पराशरनीतिकारः। सिद्ध्यसिद्धी क्वचित् सिद्धिः क्वचिच्चासिद्धिः। पठन्त इति—ये पठनविमुखास्ते पठतो जनान् प्रतारयन्तीत्यर्थः। उपपन्नं सङ्गतं प्राप्तमिति यावत्। देवस्य भवतः। अयातयामं नवम्। दर्शनीयं मनोहरम्। सर्वेत्यादि तृतीयान्तपदानि तन्त्रावापेनेत्यस्य विशेषणानि। सुखेति—सुखभोगविरोधिना। वहुमार्गेति—नानापथविमर्शनात्। अमुक्तसंशयेन संशययुक्तेन। तन्त्रः स्वराष्ट्रचिन्ता, आवापः परचिन्ता। कोशगृहाणि धनागाराणि। रेचयिष्यति शून्यीकरिष्यति। किमिदमिति—इदं एतत्सर्वं अपर्याप्तमसम्पूर्णं किं?

* वालक्रीडा *

विग्रह आदि की वात सोचते हुए ही कालयापन करो। क्षण भर भी मौज करने की वात न सोचो।' वे ही मन्त्रीरूपी वगुले आप के पास से चोरी करके प्राप्त किये हुए धन को वेश्याओं के घरों में भरते हुए मजे लूटते हैं। ये वेचारे कौन हैं? ये वेही हैं, जो मन्त्रणा देने में वड़े कुशल और वड़े-वड़े शास्त्रों के रचयिता हैं। इनमें शुक्र, आङ्गिरस, विशालाक्षि, वाहुदन्तिपुत्र पराशर आदि मुख्य हैं। क्या इन लोगों ने काम-क्रोध आदि पर विजय पा ली थी? क्या वे लोग शास्त्र-प्रतिपादित मार्ग से चलते थे? क्या उन्हों ने अपने प्रारम्भ किये हुए कार्यों की सिद्धि या असिद्धि पहले से ही देख ली थी? इन पढ़े-लिखे धूर्तों ने वहुतेरे अनपढ़ लोगों को अपना अनुयायी वना लिया है। क्या यह आप को उचित जान पड़ता है कि सारे संसार को वन्दनीय जाति, सुन्दर शरीर, अपरिमित सम्पत्ति, यह सब उन अविश्वसनीय मन्त्रियों के भुलावे में आकर छोड़ दिया

नन्विदमुपपन्नं देवस्य, यदुत सर्वलोकस्य वन्द्या जातिः, अयातयामं वयः, दर्शनीयं वपुः, अपरिमाणा विभूतिः । तत्सर्वं सर्वाविश्वासहेतुना सुखोपभोगप्रतिबन्धिना बहुमार्गविकल्पनात्सर्वकार्येष्वमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन मा क्षथा वृथा । सन्ति हि ते दन्तिनां दश सहस्राणि, हयानां लक्षत्रयम्, अनन्तं च पादातम् । अपि च पूर्णान्येव हैमरत्नैः कोशगृहाणि । सर्वोऽपि जीवलोकः समग्रमपि युगसहस्रं भुञ्जानो न ते कोष्ठागाराणि रेचयिष्यति । किमिदमपर्याप्तं यदन्यार्जितायासः क्रियते । जीवितं हि नाम जन्मवतां चतुःपञ्चाण्यहानि । तत्रापि भोगयोग्यमल्पाल्पं वयःखण्डम् । अपण्डिताः पुनर्जयन्त एव ध्वंसन्ते । नार्जितस्य वस्तुनो लवमप्यास्वादयितुमीहन्ते ।

(१४) किं बहुना राज्यभारं मारक्षमेष्वन्तरङ्गेषु भक्तिमत्सु समर्प्य,

* बालविबोधिनी *

नैवेत्यर्थः । अन्यार्जितं परकीयधनं तदर्थं आयासः क्लेशो युद्धादिनेति शेषः । जन्मवतां प्राणिनाम् । अल्पाल्पमत्यल्पम् । वयःखण्डमायुर्भागः । अपण्डिता मूर्खाः । जयन्त एव ध्वंसन्ते जित्वाऽपि नाशमायान्ति ।

(१४) भारक्षमेषु राज्यपालनसमर्थेषु । अन्तरङ्गेषु अमात्येषु । ययतुं क्रतु-

* बालक्रीडा *

जाय और सब सुख त्यागकर स्वपरराष्ट्र के विषय में चिन्तन करते हुए ही समय बिताया जाय ? ऐसा न करिए महाराज! आप के पास दस हजार हाथी हैं, तीन लाख घोड़े हैं और अगणित पैदल सेना है । आप का खजाना सुवर्ण और रत्नों से भरा हुआ है । यदि हजारों युग भी आप की छाया में रहने वाले सब लोग बैठकर भोजन करें तो भी आपका कोष खाली नहीं होगा । क्या इतना धन कम है, जो और अर्जन करने का व्यर्थ प्रयास किया जाय ? प्रत्येक मनुष्य का जीवन केवल चार दिन की चाँदनी है । उस में भी भोग करने योग्य समय तो और भी कम रहता है । मूर्ख लोग जन्मते ही मर जाते हैं । वे लोग अपनी कमाई हुई सम्पत्ति में से कुछ भी नहीं भोगना चाहते ।

(१४) आप को मैं कहाँ तक समझाऊँ ? राज्य का भार अपने उन अन्तरङ्ग के साथियों पर डाल कर कि जो आप पर श्रद्धा रखते हुए राज-काज

अप्सरःप्रतिरूपाभिरन्तःपुरिकाभी रममाणो गीतसंगीतपानगोष्ठीश्च यथर्तु बध्नन्यथार्हं कुरु शरीरलाभम्' इति पञ्चाङ्गीमृष्टभूमिरञ्जलिचुम्बितचूडश्चिरमशेत । प्राहसीच्च प्रीतिफुल्ललोचनोऽन्तःपुरप्रमदाजनः ।

(१५) जननाथश्च सस्मितम् 'उत्तिष्ठ, ननु हितोपदेशाद्गुरवो भवन्तः । किमिति गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्' इति तमुत्थाप्य क्रीडानिर्भरमतिष्ठत् । अथैषु दिनेषु भूयोभूयः प्रस्तुतेऽर्थे प्रेर्यमाणो मन्त्रिवृद्धेन, वचसाभ्युपेत्य मनसैवाचित्तज्ञ इत्यवज्ञातवान् ।

बालबिबोधनी

मनतिक्रम्य कालानुरूपमित्यर्थः । बध्नन् कुर्वन् । यथार्हं सार्थकम् । शरीरला जन्म । पञ्चाङ्गेति—जानुद्वयं बाहुद्वयं मूर्द्धा चेति पञ्चाङ्गानि तेषां समाहारः पञ्चाङ्गी तया। पञ्चभिरङ्गैरित्यर्थः—मृष्टा स्पृष्टा भूमिर्येन सः, अञ्जलिना चुम्बिता चूडा मौलिर्येन सः। तथाविधो विहारभद्रः। चिरं दीर्घकालं यावत्, अशेत भूमौ पतितोऽतिष्ठत्।

(१५) जननाथो राजा अनन्तवर्मा। गुरुत्वविपरीतं दण्डवत्प्रणामकरणमित्यर्थः। प्रस्तुते उपदिष्टे। अर्थे विषये। अभ्युपेत्य स्वीकृत्य । अवज्ञातवान् मन्त्रिवृद्धमिति शेषः।

* बालक्रीडा *

सम्हालनेमें समर्थ हों। इस के बाद अप्सराओं सदृश अन्तःपुर की सुन्दरियों के साथ विहार करते हुए गायन–वाद्य आदि सङ्गीत तथा पानशाला के जमावड़े में बैठकर ऋतु के अनुकूल सुखों का उपभोग करते हुए जीवन का आनन्द लीजिए।' ऐसा कह और हाथ जोड़कर अपने पाँचों अङ्गों से अवनितल का स्पर्श करता हुआ वह लेट गया। उस के वचन सुनकर अन्तः पुर की सब स्त्रियें गद्गद होकर हँसने लगीं।

(१५) महाराज भी मुसकाते हुए उठ खड़े हुए और कहने लगे—'उठिए, आप यह क्या करते हैं? हम को नेक सलाह देने वाले आप लोग गुरुजन हैं। और गुरुजन अपने शिष्यों के समक्ष ऐसा नहीं किया करते।' ऐसा कहकर उन्हों ने उठाया और उस के साथ–साथ स्वयं भी बैठ गये। उन्हों ने अपने मन में सोचा कि 'इन दिनों मुझे जो मन्त्री जी बार–बार प्रस्तुत अर्थ के विषय में सलाह दे रहे हैं, यह उन्हीं बातों को सुनकर उसका कुछ आशय समझे विना ही बड़बड़ा रहा है।' इस लिए उन्हों ने उस की बात का कुछ ख्याल नहीं किया।

(१६) अथैवं मन्त्रिणो मनस्यभूत्—'अहो मे मोहाद्बालिश्यम्। अरुचितेऽर्थे चोदयन्नर्थीवाभिगतोऽहमस्य हास्यो जातः। स्पष्टमस्य चेष्टानामयथापूर्व्यम्। तथा हि—न मां स्निग्धं पश्यति, न स्मितपूर्वं भाषते, न रहस्यानि विवृणोति, न हस्ते स्पृशति, न व्यसनेष्वनुकम्पते, नोत्सवेष्वनुगृह्णाति, न विलोभनवस्तु प्रेषयति, न मत्सुकृतानि प्रगणयति, न मे गृहवार्तां पृच्छति, न मत्पक्षान्प्रत्यवेक्षते, न मामासन्नकार्येष्वभ्यन्तरीकरोति, न मामन्तःपुरं प्रवेशयति। अपि च मामनर्हेषु कर्मसु नियुङ्क्ते,

* बालविबोधिनी *

(१६) बालिश्यं मूर्खता। अरुचिते अनभीष्टे। अर्थी याचकः। अभिगतो द्वेष्यः। हास्यः परिहासविषयः। अयथापूर्व्यं पूर्वापरवैपरीत्यं, यथापूर्वं न भवतीति अयथापूर्वं तस्य भावः तथा। पूर्वं यथासीदिदानीं न तथेति भावः। रहस्यानि सङ्गोपनीयानि। विवृणोति प्रकाशयति। व्यसनेषु मम विपत्सु। अनुगृह्णाति मयि अनुग्रहं प्रकाशयति। आसन्नकार्येषु उपस्थितकर्मसु। अभ्यन्तरीकरोति नियोजयति। अनर्हेषु अयोग्येषु। अवष्टभ्यमानमाक्रम्यमाणम्। अनुजानाति अनुमोदते। विश्रम्भं विश्वासम्। प्रतिक्षिपति निषेधति। नयज्ञाना नीति-

* बालक्रीडा *

(१६) उधर मन्त्री ने अपने मन में सोचा—'अहो! मैं भी कितनी मूर्खता कर रहा हूँ, जो बार-बार राजा से अरुचिकर बातें कहता हूँ। मेरे बार बार ऐसा करने से वह भी मुझे भिक्षुक समझने लगा है और मेरी हँसी उड़ाता है। इस का जैसा व्यवहार पहले मेरे साथ होता था, वैसा अब नहीं है। अब मुझे स्नेह भरी निगाह से नहीं देखता। मुस्कराकर मुझसे बातें नहीं करता। अपने मन की बात नहीं बताता। मुझे हाथ से छूता भी नहीं। मुझे तकलीफ में देखकर दया नहीं दिखाता। मेरे यहाँ कोई उत्सव होता है तो उस में भाग नहीं लेता। कोई सुन्दर वस्तु सौगात में नहीं भेजता। मेरे उपकारों को नहीं गिनता और न मेरे घर का हाल-चाल पूछता है। मेरे पक्षवालों की ओर नहीं निहारता। अब तो वह अपना कोई निजी काम भी नहीं सौंपता और न अपने अन्तःपुर में ही भेजता है। अब वह मुझे अयोग्य कामों में लगाता है। दूसरे लोग, मेरा पद

मदासनमन्यैरवष्टभ्यमानमनुजानाति, मद्वैरिषु विश्रम्भं दर्शयति, मदुक्तस्योत्तरं न ददाति, मत्समानदोषान्विगर्हति, मर्माणि मामुपहसति, स्वमतमपि मया वर्ण्यमानं प्रतिक्षिपति, महार्हाणि वस्तूनि मत्प्रहितानि नाभिनन्दति, नयज्ञानां स्खलितानि मत्समक्षं मूर्खैरुद्घोषयति । सत्यमाह चाणक्यः—'चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्था अपि प्रियाः स्युः । दक्षिणा अपि तद्भावबहिष्कृता द्वेष्या भवेयुः' इति । तथापि का गतिः । अविनीतोऽपि न परित्याज्यः पितृपैतामहैरस्मादृशैरयमधिपतिः । अपरित्यजन्तोऽपि कमुपकारमश्रूयमाणवाचः कुर्मः । सर्वथा नयज्ञस्य वसन्तभानोरश्मकेन्द्रस्य हस्ते राज्यमिदं पतितम् । अपि नामापदो भाविन्यः प्रकृतिस्थमेनमापाद-

* बालविबोधिनी *

विदाम् । स्खलितानि दोषान् । चित्तज्ञानेत्यादि—अनर्था अपि यदि दुर्जनानां स्वमतानुकूलाः स्युस्तर्हि प्रिया एव । दक्षिणा अनुकूलाः सरला वा यदि तद्भावविरुद्धास्तदा तेऽपि द्वेष्याः स्युरित्यर्थः । तथापि एवं सत्यपि । का गतिः—उपायान्तरं नास्तीत्यर्थः । पितृपैतामहैः पितृपितामहक्रमादागतैः । न श्रूयमाणा वाक्

* बालक्रीडा *

प्राप्त करना चाहते हैं तो वह जैसे अपनी मौन भाषा में उनका समर्थन करता है । अब वह मेरे वैरियों पर भरोसा करने लगा है । मैं कुछ कहता हूँ तो उस का उत्तर नहीं देता और मेरे निरपराध साथियों की निन्दा करता है । मेरे मर्म की बातें कहकह कर मेरा उपहास करता है । यदि कभी मैं अपना मत प्रगट करने लगता हूँ तो मेरे पर आक्षेप करता है । यदि मैं कीमती वस्तुयें भी उस के पास भेजता हूँ तो वह उन्हें विनीत भाव से अङ्गीकार नहीं करता । बड़े-बड़े नीतिज्ञों के दोषों को वह मेरे सामने मूर्खों का प्रलाप कहता है । चाणक्यने ठीक ही कहा है—मनोभाव का ठीक से अनुसरण करने वाले दुर्जन भी राजाओं के प्रिय हो जाते और राजा के मनोभाव को न समझने वाले प्रियजन भी शत्रु हो जाते हैं । फिर भी क्या कियाजाय ? यह कितना भी उद्धत क्यों न हो अपने पिता-पितामह आदि के द्वारा अधिपति माना हुआ राजा है । इस लिए त्यागा भी तो नहीं जा सकता । और नहीं त्यागने पर भी जब मैं इसको

येषु । अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु कश्चिदुत्पन्नोऽपि द्वेषः, सदुवृत्तमस्मै न गेचयेत् । भवतु भविता तावदनर्थः । स्तम्भितपिशुनजिह्वो यथाकथंचिदभ्रष्टपदस्तिष्ठेयम् इति ।

(१७) एवं गते मन्त्रिणि, राजनि च कामवृत्ते, चन्द्रपालितो नामाश्मकेन्द्रामात्यस्येन्द्रपालितस्य सूनु, असदूवृत्तः पितृनिर्वासितो नाम भूत्वा, बहुभिश्चारणगणैर्बह्वीभिरनल्पकौशलाभिः शिल्पकारिणीभिरनेकच्छद्मविकरैश्च गूढपुरुषै परिवृतोऽभ्येत्य विविधाभिः क्रीडाभिर्विहारभद्रमात्मसा-

* बालविबोधिनी *

येषां ते—वयमिति शेष । अपिनामेति सम्भावनायाम् । आपादयेयुः कुर्यु । सुलभं व्यलीकमपराधो येषु तेषु । स्तम्भिता पिशुनानां खलाना जिह्वा येन स । अभ्रष्टपदः अनष्टाधिकारः ।

(१७) कामवृत्ते यथेच्छाचारे । पितृनिर्वासितो नाम भूत्वा—असद्वृत्त इति हेतोः पित्रा निर्वासितो राज्यान्निष्काशित इति च्छद्मना । नामेत्यलीके । शिल्पकारिणीभिश्चित्रकारिणीभिः । आत्मसात् स्ववशीभूतम् । अमुना विहारभद्रेण सह । सङ्गमेन सम्मेलनेन । राजनि नृपेऽनन्तवर्मण्यपि । आस्पदं स्थानं प्रतिष्ठा-

* बालक्रीडा *

कोई बात न सुनूँगा तो इसका क्या उपकार करूँगा ? यह राज्य अब नीतिज्ञ राजा अश्मकेन्द्र के हाथों में जा पड़ेगा। क्या भविष्य में आनेवाली विपत्तियाँ इस का प्रतिकार कर सकेंगी ? जो लोग अनायास उपद्रव खड़ा कर सकते हैं,-उन में यदि द्वेष के लक्षण प्रत्यक्ष दीखने लगें तो भी यह उनकी ओर नहीं निहारेगा। इस में संशय नहीं कि कोई न कोई उपद्रव अवश्य खड़ा होगा। जो हो, मुझे चाहिए कि मैं अपनी जिह्वा को वश में रखता हुआ किसी तरह अपने पद पर बना रहूँ।

(१७) इस प्रकार जब मन्त्री तटस्थ होगया और राजा मनमानी करने लगा, तब अश्मकेन्द्र के मंत्री इन्द्रपालित के दुराचारी पुत्र चन्द्रपालितने—जो पिता द्वारा घर से निकाल बाहर कर दिया गयाथा—बहुतेरे दुष्टों और वन्दीजनों के साथ नाना प्रकार के कौशल में निपुण वेश्याओं एवं अनेक गुप्तचरों के संग तरह-तरह के खेल-कूद दिखाकर विहारभद्र को अपनी मुट्ठी में करलिया । इस

दकरोत् । अमुना चैव संक्रमेण राजन्यास्पदमलभत । लब्धरन्ध्रश्च स यद्यद्व्यसनमारभते तत्तथेत्यवर्णयत्— 'देव, यथा मृगया ह्यौपकारिकी न तथान्यत् । अत्र हि व्यायामोत्कर्षादापत्सूपकर्ता दीर्घाध्वलङ्घनक्षमो जङ्घाजवः, कफापचयादारोग्यैकमूलमाशयाग्निदीप्तिः, मेदोपकर्षादङ्गानां स्थैर्यकार्कश्यातिलाघवादीनि, शीतोष्णवातवर्षक्षुत्पिपासासहत्वम्, सत्त्वानामवस्थान्तरेषु चित्तचेष्टितज्ञानम्, हरिणगवलगवयादिवधेन सस्यलोप-

* बालविबोधिनी *

मिति यावत् । व्यसनं मृगयादिकम्—स्त्रियोऽक्षा मृगया पानं वाक्पारुष्यार्थदूषणे । दण्डपारुष्यमित्येतन्महाव्यसनसप्तकमिति वैजयन्ती । तथा युक्तम् । औपकारिकी उपकारायार्हा । अत्र मृगयायाम् । जङ्घाजवो जङ्घावेगः । कफस्य श्लेष्मणः अपचयात् क्षयात् । आरोग्यस्यैकमद्वितीयं मूलं निदानम् आशयाग्नेर्जठराग्नेर्दीप्तिः सन्धुक्षणम् । मेदसां भाषायां चर्बीति ख्यातानां धातुविशेषाणाम् अपकर्षादपचयात् । सत्त्वानां प्राणिनाम् । अवस्थान्तरेषु अवस्थाविशेषेषु । गवलो महिषः । गवयो गोसदृशः पशुः । सस्यलोपप्रतिक्रिया सस्यरक्षा । वृकः 'हुड़ार'

* बालक्रीडा *

विहारभद्ररूपी सेतु (पुल) के सहारे चन्द्रपालित ने राजपद प्राप्त कर लिया । छिद्र देख-देख कर चन्द्रपालितने जिन-जिन व्यसनोंमें फंसाया, उस-उसकी उसने भरपूर सहारना की। उसने राजासे कहा—मृगया से जितने उपकार होते हैं, उतने और किसी से नहीं । मृगया में व्यायाम होता है, जिस से शारीरिक पुष्टता आती है । शरीर पुष्ट रहने पर किसी आफत-विपत्ति के अवसर पर आत्मरक्षा होती है । जांघोंमें पैदल रास्ता तैं करनेका बल आता है। कफ नहीं उभड़ता, जिससे औदर्य अग्नि उद्दीप्त रहता है । मेद (चर्बी) न बढ़ने के कारण अङ्गों में स्थिरता और फुर्तीलापन आता है । शीत-उष्ण-वायु-वर्षा-भूख-प्यास आदि सहने की शक्ति उपजती और प्रत्येक जीव का मनोभाव जानने का ज्ञान प्राप्त होता है । हिरन-सांभर आदि पशुओं को मार देने से खेत का अन्न चर जाने से बचता है । भेड़िये-व्याघ्र आदि मारने से स्थलमार्गका शोधन हो जाता है । पर्वत और वन में विचरने से तरह-तरह के स्थान देखने को मिलते हैं । जिससे यह ज्ञान होता

प्रतिक्रिया, वृकव्याघ्रादिघातेन स्थलपथशल्यशोधनम्, शैलाटवीप्रदेशानां विविधकर्मक्षमाणामालोचनम्, आटविकवर्गविश्रम्भणम्, उत्साहशक्तिसंधुक्षणेन प्रत्यनीकवित्रासनमिति बहुतमा गुणाः ।

(१८) द्यूतेऽपि द्रव्यराशेस्तृणवत्त्यागादनुपमानमाशयौदार्यम्, जयपराजयानवस्थानाद्धर्षविषादयोरविधेयत्वम्, पौरुषैकनिमित्तस्यामर्षस्य वृद्धिः, अक्षहस्तभूम्यादिगोचराणामत्यन्तदुरुपलक्ष्याणां कूटकर्मणामुपलक्षणादनन्तबुद्धिनैपुण्यम्, एकविषयोपसंहाराच्चित्तस्यातिचित्रमैकाग्र्यम्,

* बालविबोधिनी *

इति भावः । स्थलपथेति—स्थलपथस्य शल्यानां कण्टकभूतानां शोधनमपनयनम् । शैलाटवीति—पार्वत्यवनभूमिषु बहवः प्रदेशा निरर्थकास्तिष्ठन्ति तेषां सार्थकीकरणम् । आटविका आरण्यकाः । विश्रम्भं विश्वासोत्पादनम् । प्रत्यनीकः शत्रुः ।

(१८) अनुपमानमतुलनीयम् । आशयस्य चित्तस्यौदार्यम् । जयपराजययोः अनवस्थानात् अनिश्चितत्वात् । अविधेयत्वम् अवशीभूतत्वम् । एकस्मिन् विषये उपसंहारात् अभिनिवेशात् । एकाग्रस्य भाव ऐकाग्र्यम् । साहसेषु साहस-

* बालक्रीडा *

है कि किस स्थान से क्या काम लिया जा सकता है । बार-बार आते जाते रहने से वनजन्तुओं के मन में उस शिकारी के प्रति विश्वास उत्पन्न हो जाता है । मृगया से उत्साहशक्ति बढ़ती है, जिससे शत्रुओं में आतंक उत्पन्न करने के अनेक हथकंडे मालूम हो जाते हैं ।

(१८) इसी प्रकार जुए से भी तृण के समान सभी वस्तुओं को त्यागने की क्षमता आती है । जय और पराजय का कोई निश्चय नहीं रहता कि कब कौन पक्ष विजयी होगा और कौन पराजित । जुआ खेलने वाला जय-पराजय सम्बन्धी हर्ष-हर्ष विषाद से परे रहता है । पौरुष बढ़ाने वाले अमर्ष की उत्पत्ति होती है । जुए के पासे से हाथ की सफाई आदि अनुभव की कितनी ही कठिन बातें ज्ञात होती है । बुद्धि में निपुणता आती है । एक ही काम में मन लगाये रहने से चित्त में आश्चर्यजनक एकाग्रता उत्पन्न होती है ।

अध्यवसायसहचरेषु साहसेष्वरतिः, अतिकर्कशपुरुषप्रतिसंसर्गादनन्यधर्षणीयता मानावधारणं अकृपणं च शरीरवापनमिति ।

(१९) उत्तमाङ्गनोपभोगेऽप्यर्थधर्मयोः सफलीकरणम्, पुष्कलः पुरुषाभिमानः भावज्ञानकौशलम्, अलोभक्लिष्टमाचेष्टितम्, अखिलासु कलासु वैचक्षण्यम्, अलब्धोपलब्धिलब्धानुरक्षणरक्षितोपभोगभुक्तानुसंधानरुष्टानुनयादिष्वजस्रमभ्युपायरचनया बुद्धिवाचोः पाटवम्, उत्कृष्टशरीरसंस्कारात्सुभगवेषतया लोकसम्भावनीयतया, परं सुहृत्प्रियत्वम्, गरी-

* बालविबोधिनी *

कर्मसु अरतिः अप्रीतिः । अनन्यधर्षणीयता अन्यानभिभवनीयता । अकृपणं दैन्यरहितम् । शरीरवापनं शरीरधारणम् ।

(१९) पुष्कलः अतिशोभनः । अलब्धोपलब्धीत्यादि । अलब्धस्य वस्तुनो लब्धिर्लाभः, लब्धस्य अनुरक्षणं पालनं, रक्षितस्योपभोगः, भुक्तस्यानुसन्धानं स्मरणं, रुष्टस्य क्रुद्धस्य च अनुनयः समाधानमित्यादिषु विषयेषु अजस्रं निरन्तरं अभ्युपायरचनया बुद्धिवाचोः मतिवचनयोः पाटवं कौशलम् । शरीरस्य संस्कारः

* बालक्रीडा *

उद्योग के सहायक कार्यों में लगन बढ़ती है । जुए में एक से एक कठोर पुरुषों का सम्पर्क होता है, इस लिए मन इतना प्रबल हो जाता है कि किसी के डिगाये नहीं डिगता । जुए से स्वाभिमान का भाव जागृत होता है और दैन्यरहित जीवन बिताने की आदत पड़जाती है ।

(१९) उत्तम श्रेणी की स्त्रियों के साथ सम्भोग करने से भी अर्थ और धर्म की सफलता प्राप्त होती है । इस से उग्र पौरुषाभिमान का भाव उदित होता है । औरों के मानसिक भाव का ज्ञान भी होता है । निर्लोभ कार्य में प्रवृत्ति होती है । सभी कलाओं की निपुणता आती है । अलब्ध वस्तु के लाभ, लब्ध वस्तु की रक्षा, रक्षित वस्तु के उपभोग और भोगी हुई वस्तुओं से उत्पन्न सुख–दुख की विवेचनाशक्ति एवं रूठे हुए प्राणी का नित्य अनुनय–विनय करते रहने से बुद्धि और वचन में पटुता आती है । इस दशा में शारीरिक संस्कार पर पर्याप्त ध्यान रखना पड़ता है और वेष–भूषा भी अच्छी रहती है । इस कारण सर्व साधारण के

यसी परिजनव्यपेक्षा, स्मितपूर्वाभिभाषित्वम्, उद्रिक्तसत्त्वता, दाक्षिण्यानुवर्तनम्। अपत्योत्पादनेनोभयलोकश्रेयस्करत्वमिति।

(२०) पानेऽपि नानाविधरोगभङ्गपटीयसामासवानामासेवनात्स्पृहणीयवयोव्यवस्थापनम्, अहङ्कारप्रकर्षादशेषदुःखतिरस्करणम्, अङ्गरागदीपनादङ्गनोपभोगशक्तिसंधुक्षणम्, अपराधप्रमार्जनान्मनःशल्योन्मार्जनम्, अश्राव्यशंसिभिरनर्गलप्रलापैर्विश्वासोपबृंहणम्, मत्सरानुबन्धान्-

* बालविबोधिनी *

शुद्धिः सम्भावनीयता सम्माननीयता। परिजनव्यपेक्षा परिजनेषु दाक्षिण्यम्। उद्रिक्तसत्त्वता समधिकसारत्वम्।

(२०) पाने मद्यपाने। नानाविधानां रागाणां विषयाभिलाषाणां भङ्गे तदीच्छित्तौ वा पटीयसाम्। आसवानां मद्यानाम्। आसेवनात् पानात्। स्पृहणीयवयो यौवनं तस्य व्यवस्थापनं संरक्षणम्। अङ्गजस्य कामस्य रागः इच्छा तस्य दीपनाद् वृद्धेः। सन्धुक्षणमुत्तेजनम्। अपराधस्य अन्यकृतापराधस्य मार्जनाद् विस्मरणात्। अश्राव्यं श्रावयितुमयोग्यं यत्तस्यापि शंसिभिः सूचकैः। अनर्गलप्रलापैर्यथेच्छमनर्थकवचनैः। विश्वासस्योपबृंहणं वर्द्धनम्। मत्तः सन्नश्राव्यमपि श्रावयति तेन च जनानां विश्वासः समुत्पद्यते। यदयं सारल्येनास्माभिरश्राव्यमपि

* बालक्रीडा *

समक्ष सम्मानित होने का अवसर और मित्रों का प्रेम प्राप्त होता है। अपने परिजनों पर संकोच का अभाव, हंस-हंस कर बातें करने का अभ्यास, बलकी वृद्धि तथा उदारता का उदय होता है। सन्तानोत्पादन द्वारा दोनों लोक में श्रेयःसाधन किया जाता है।

(२०) इसी तरह मद्यपान में भी विविध प्रकार के रोगों को दूर करने वाले मद्यों का सेवन करने से मनचाही अवस्था प्राप्त की जाती है। इस में अहंकार की वृद्धि होती है। इस कारण सभी प्रकार के क्लेश पास नहीं फटकते। मदिरा से वासना उद्दीप्त होती है, जिससे स्त्री के साथ सम्भोग करने की शक्ति तीव्र होती है। कितने ही अपराध क्षमा करते रहने के कारण मनका उद्वेग दूर हो जाता है। गुप्त बातों के संसूचक और व्यर्थ की बकवास से भी विश्वास उत्पन्न

नन्दैकतानता, शब्दादीनामिन्द्रियार्थानां सातत्येनानुभवः, संविभागशीलतया सुहृद्वर्गसंवर्गणम्, अनुपमानमङ्गलावण्यम्, अनुत्तराणि विलसितानि, भयार्तिहरणाच्च साङ्ग्रामिकत्वमिति ।

(२१) वाक्पारुष्यं दण्डो दारुणो दूषणानि चार्थानामेव यथावकाशमौपकारिकाणि । नहि मुनिरिव नरपतिरुपशमरतिरभिभवितुमरिकुलमलम्, अवलम्बितुं च लोकतन्त्रम्' इति ।

* बालविबोधिनी *

वक्तीति भावः । मत्सरस्य मात्सर्यस्य अननुबन्धादधारणात् । आसवपानेन मात्सर्यं न तिष्ठतीति प्रसिद्धिः । एकतानता तत्परता । इन्द्रियार्थानां चक्षुरादीन्द्रियविषयाणाम् । सातत्येन नैरन्तर्येण । आगतेभ्यः सर्वेभ्योऽपि मद्यस्य सम्यग् वण्टनं संविभागः तच्छीलतया सुहृद्वर्गस्य संवर्गणमेकत्रीकरणम् । अनुत्तराणि अलौकिकानि । संग्रामे साधुः सांग्रामिकः तस्य भावः । युद्धपटुत्वमित्यर्थः ।

(२१) एतावता व्यसनसप्तके मृगयादीनां चतुर्णामुपकारकत्वं प्रतिपादितमधुना अवशिष्टं वाक्पारुष्यादित्रयमपि राज्ञामुपकारकमिति वक्ति वाक्पारुष्येति— वाक्पारुष्यमेकं, दारुणो दण्डो दण्डपारुष्यं द्वितीयं, अर्थानां दूषणानि चेति तृतीयं, तान्यपि यथावकाशं यथावसरमुपकारकाणीति । नहीति—उपशमे शान्तौ रतिरनुरागो यस्यासौ–तादृशो मुनिर्यथा अरिकुलं कामादिशत्रुवर्गं जेतुं समर्थस्तथा शान्तो नरपतिररिकुलं पराजेतुं लोकतन्त्रं राष्ट्रसाधनमवलम्बितुं धारयितुञ्च नालमित्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

करा देने की शक्ति आती है । राग-द्वेष दूर हो जाने के कारण आनन्द ही आनन्द दीखता है । शब्द, स्पर्श, रूप, रस आदि का अनुभव होता रहता है । बाँट-चोट कर खाते-पीते रहने से अपने मित्रों और सगे-सम्बन्धियों में एकता बनी रहती है । शारीरिक सौन्दर्य भी असाधारण रूप से निखरता जाता है । विलास सम्बन्धी सर्वोत्कृष्ट सुख प्राप्त होता रहता है । भय के कारण उत्पन्न होनेवाला संकट टालते रहने से युद्धकौशल भी प्राप्त होता है ।

(२१) कटु वचन, कठोर दण्ड और अर्थदूषण (अर्थात् किसी का धन हड़प जाने से) भी लाभ होता है । मुनिके समान शान्तिप्रिय राजा न अपने शत्रुओं को परास्त कर पाता और न प्रजा की स्थिति को ही काबू में रख सकता है ।

(२२) असावपि गुरूपदेशमिवात्यादरेण तस्य मतमन्ववर्तत। तच्छीलानुसारिण्यश्च प्रकृतयो विशृङ्खलमसेवन्त व्यसनानि। सर्वश्च समानदोषतया न कस्यचिच्छिद्रान्वेषणायायतिष्ट। समानभर्तृप्रकृतयस्तन्त्राध्यक्षाः स्वानि कर्मफलान्यभक्षयन्। ततः क्रमादायद्वाराणि व्यशीर्यन्त। व्ययमुखानि विटवैधेयतया विभोरहरहर्व्यवर्धन्त। सामन्तपौरजानपदमुख्याश्च समानशीलतयोपारूढविश्रम्भेण राज्ञा सजायाः पानगोष्ठीष्वभ्यन्तरीकृताः स्व स्वमाचारमत्यचारिषुः।

* बालविबोधिनी *

(२२) असौ अनन्तवर्मापि। तस्य चन्द्रपालितस्य। अन्ववर्तत अन्वसरत्। तच्छीलानुसारिण्यः नृपस्वभावानुवर्तिन्यः। छिद्रान्वेषणाय दोषानुसन्धानाय। समाना भर्तुः प्रकृतिर्येषां ते तन्त्राध्यक्षाः सेनापतयः। कर्मफलानि पूर्वकृतफलान्यभक्षयन् खादितवन्तः—तेऽपि दुर्वृत्ता अभवन्नित्यर्थः। आयद्वाराणि अर्थागमोपायाः। व्यशीर्यन्त क्षीणा बभूवुः। विटेति—विटत्वेन परदारासक्तत्वेन वैधेयतया मूर्खतया च विभोः स्वामिनः। विटविधेयतयेति पाठे विटानां धूर्तानां विधेयतया वशीभूततया। उपारूढविश्रम्भेण उत्पन्नविश्वासेन। सजायाः सस्त्रीकाः। पानगोष्ठीषु मद्यपानसभासु। अभ्यन्तरीकृताः प्रवेशिताः। अत्यचारिषुः लंघयामासुः।

* बालक्रीडा *

(२२) राजाने उस धूर्त की सलाह मान ली और उसी के अनुसार सब काम करने लगा। राजा के स्वभाव का अनुसरण करते हुए उसके नौकर-चाकर भी स्वेच्छानुसार सुरा-सौन्दर्य आदि दुर्व्यसनों का सेवन करने लगे। इस प्रकार उस राज्य का सम्पूर्ण भृत्यसमुदाय समान दोषी हो गया। ऐसी दशामें कोई किसी का दोष कैसे देखता? जब राजा और राजसेवक समान प्रकृति के हो गये, तब राज्य के अधिकारी प्रजा से प्राप्त धन का स्वयं उपभोग करने लगे। धीरे-धीरे आमदनी के सब द्वार अपने आप बन्द होते गये और धूर्तों के वशीभूत होकर नित्य मदिरा वेश्या आदि में आसक्त रहने के कारण राजा का खर्च बढ़ता गया। उस मूर्ख ने अपने सामन्तों और राज्य के धनी-मानी लोगों और उनकी स्त्रियों को भी विश्वास दिलाकर अपनी पानगोष्ठी में सम्मिलित कर लिया और उनकी स्त्रियों के साथ भी उसने विविध प्रकार के दुराचार किये।

(२३) तदङ्गनासु चानेकापदेशपूर्वमपाचरन्नरेन्द्रः । तदन्तःपुरेषु चामी भिन्नवृत्तेषु मन्दत्रासः बहुसुखैरवर्तन्त । सर्वश्च कुलाङ्गनाजनः सुलंभभङ्गिभाषणरतो भग्नचारित्रयन्त्रणस्तृणायापि न गणयित्वा भर्तृन्धातृगणमन्त्रणान्यशृणोत् । तन्मूलाश्च कलहाः सामर्षाणामुदभवन् । अहन्यन्त दुर्वला वलिभिः । अपहृतानि धनवतां धनानि तस्करादिभिः । अपहृतपरिभूतयः प्रहताश्च पातकपथाः । हतबान्धवा हृतवित्ता वधबन्धातुराश्च मुक्तकण्ठमाक्रोशन्नश्रुकण्ठ्यः प्रजाः ।

* बालावबोधिनी *

(२३) तदङ्गनेति—तेषां सामन्तादीनामङ्गनासु स्त्रीषु । अनेकापदेशपूर्वं बहुकपटपूर्वकम् । अपाचरत् असदाचरत् । तदन्तःपुरेति—तस्य नृपस्यान्तःपुरेषु स्त्रीषु । अमी सामन्तादयः । भिन्नं विनष्टं वृत्तं चरित्रं येषां तेषु भिन्नवृत्तेष्विति तदन्तःपुरेष्वित्यस्य विशेषणम् । मन्दत्रासा निर्भयाः—अमी इत्यस्य विशेषणम् । भग्नं भिन्नं चारित्रयन्त्रणं वृत्तबन्धनं यस्येति कुलाङ्गनाजन इत्यस्य विशेषणम् । धातॄणां जाराणां गणः समूहस्तस्य मन्त्रणानि वचनानि । धाता जारे विधातरि इति कोषः । सामर्षाणां असहिष्णूनाम् । अपहृता दूरीकृता परिभूतिस्तिरस्क्रिया येभ्यस्ते । प्रहता विततः विस्तारं गता वा पातकपथाः पापमार्गाः । पापमार्गप्रवृत्तानपि न कश्चित्तिरस्करोतीत्यर्थः । आक्रोशन् चक्रन्दुः । अश्रुकण्ठ्यः बाष्पगद्गदस्वराः ।

* बालक्रीडा *

(२३) तरह तरह के कपट करके उसने अपने सामन्तों की स्त्रियों तक को नहीं छोड़ा । उसको कुपथपरायण देखकर सामन्तगण निर्भीकभाव से उसके अन्तःपुर की महिलाओं के साथ आनन्द लूटने लगे । कुछ ही समय में अन्तःपुर की सब महिलायें चरित्रभ्रष्ट हो और राजा को तृण के बराबर भी न मानकर उन बदमाशों के उपदेशानुसार चलने लगीं । आगे चलकर उन यारों में ही कलह की आग भभक उठी । जिससे दुर्बल बलवानों के हाथ मार डाले गये । धनवानों का धन चोर चुरा ले गये । उसके राज्य की सारी सम्पत्ति हर गयी । पाप के सभी द्वार खुल गये । उसकी सारी प्रजा के बन्धु-बान्धव मार डाले गये । उनका बहुत सा धन छिन गया । उसके उच्छृङ्खल अधिकारियों द्वारा कितने ही प्रजाजन पकड़कर मार डाले गये या कारागार में बन्द कर दिये

(२४) दण्डश्चायथाप्रणीतो भयक्रोधावजनयत् । कृशकुटुम्बेषु लोभ. पदमधत्त । विमानिताश्च तेजस्विनोऽमानेनादह्यन्त । तेषु तेषु चाकृत्येषु प्रासरन्परोपजापाः । तदा च मृगयुवेषमृगबाहुल्यवर्णनेनाद्रिद्रोणीरनपसा· रमार्गाः शुष्कतृणवंशगुल्मा प्रवेश्य द्वारतोऽग्निविसर्गैः, व्याघ्रादिवधे प्रो-

* बालविबोधिनी *

(२४) अयथाप्रणीतोऽन्यायकृतः । लघुपापेन गुरुदण्डो गुरुपापेन च लघु दण्ड इत्यर्थः । कृशकुटुम्बेषु दरिद्रपरिवारेषु । पदं स्थानम् । अकृत्येषु अन्यायेषु । परोपजापा. भेदा । तदा भेदे समुत्पन्ने । मृगयुवेषेति—मृगयुवेषेण व्याधरूपधारिणा यन्मृगबाहुल्यवर्णनं तेन । विश्वासोत्पादनाय स्वयं मृगयुर्भूत्वा अत्र बहवो मृगा वर्तन्त इति कथयित्वेत्यर्थः । अद्रिद्रोणीः पर्वतमध्यपद्धतीः । द्रोणिः स्यान्मध्यपद्धतिरिति कोषात् । नास्ति अपसारमार्गो निर्गमनमार्गो यासु ताः । शुष्काणि तृणानि वंशगुल्मानि च यासु ताः । अद्रिद्रोणीरित्यस्य विशेषणद्वयम् । प्रवेश्य जनानिति शेषः । अग्निविसर्गैरनलप्रदानैः । अनन्तवर्मकटकं जर्जरमकुर्वन् इत्यनेनान्वयः । एवं सर्वत्रापि । तन्मुखपातनैः व्याघ्रमुखपातनैः । इष्टेषु मनोज्ञेषु कूपेषु तृष्णोत्पादनेन तत्र मनोज्ञः कूपोऽस्ति तस्यैव जलं पातव्यमिति तृष्णामुत्पाद्य । अतिदूरहारितानां दूरं नीतानाम् । तृणगुल्मेति–तृणगुल्मैर्गूढच्छन्नानामाच्छादितानां

* बालक्रीडा *

गये । इस दशा में सारी प्रजा आँसू बहाती हुई रोने लगी ।

(२४) अपराधियों को ठीक तरह से दण्ड नहीं दिया गया, इस कारण प्रजा में भय और क्रोध का सञ्चार हो गया । धनहीन परिवारों में लोभ ने आसन जमाया। राज्य के स्वाभिमानी पुरुषों का अपमान किया गया। इस कारण वे लोग भी क्षुब्ध हो गये । तरह–तरह के अनाचार होने के कारण धीरे–धीरे शत्रुओं की भेदनीति काम करने लगी । इस नीति के अनुसार शत्रु के कितने ही दूत बहेलिये का वेष धारण कर-करके अनन्तवर्मा की सेना में जा पहुँचे और वन के किसी प्रदेश में वनजन्तुओं की अधिकता तथा उनके अनायास प्राप्त होने का प्रलोभन दे देकर पर्वतों की ऐसी कन्दराओं में ले गये, जहाँ से निकलने का कोई मार्ग न था। वहाँ पहुँचा कर उन्होंने द्वार पर फूस और लकड़ियों का ढेर लगाकर आग

त्साह्य तन्मुखपातनैः, इष्टकूपतृष्णोत्पादनेनातिदूरहारितानां प्राणहारिभि· क्षुत्पिपासाभिवर्धनैः तृणगुल्मगूढच्छन्नतटप्रदरपातहेतुभिर्विषममार्गप्रधावनैः विषमुखीभिः क्षुरिकाभिश्चरणकण्टकोद्धरणैः विष्वग्विसरविच्छिन्नानुयातृतयैकाकीकृतानां यथेष्टघातनैः, मृगदेहापराद्धैर्नामेषुमोक्षणैः, सपणबन्धमधिरुह्याद्रिशृङ्गाणि दुरधिरोहाण्यनन्यलक्ष्यैः प्रभ्रंशनैः, आटवि-

* बालविबोधिनी *

तटानामुच्चैःप्रदेशानां प्रदरेषु निम्नमार्गेषु पातहेतुभिः पतनकारणैः । विषमुखीभिः विषलिप्ताग्राभिः । विष्वगिति—विष्वक् समन्ताद् विसरेण प्रसरणेन विच्छिन्ना भ्रष्टा अनुयातारोऽनुसारिणो येषां तेषां भावस्तया । हेतौ तृतीया । यथेष्टघातनैर्यथेच्छमारणैः । मृगदेहे मृगशरीरे अपराद्धैर्लक्ष्यभ्रष्टैः । इषुमोक्षणैर्बाणक्षेपैः । सपणबन्धं पणं कृत्वा । प्रभ्रंशनैः पातनैः । आटविक आरण्यकस्तस्य कपटेन ।

* बालक्रीडा *

लगा दी । कितने ही यह कहकर कि 'अमुक वन में एक व्याघ्र है, जो बड़ा उत्पात मचाता है ।' ले गये और उनमें से बहुतेरे सैनिकों को बाघों द्वारा मरवा डाला । कितने ही प्यासे सिपाहियों को किसी कुएँ का पता बताकर दूर भेज दिया और वहाँ पहुँच कर उनको मार डाला । जिस मार्ग से सेना गुजरने वाली होती, उधर राह में बड़े-बड़े कुएं खोदकर ऊपर घास-फूस बिछा दिया, इससे भी कितने ही सैनिक मर गये । ऐसे-ऐसे कौशल रचे गये कि कितने ही सिपाही पर्वत के दुर्गम मार्ग में दौड़-दौड़ कर मर मिटे । वनों की दौड़-धूप में यदि सिपाहियों के पैर में काँटे गड़ जाते तो उसे निकालने के लिए लोग जहर की बुझी हुई छुरियें देते, जिन से रुधिर का संसर्ग होने पर घाव बिगड़ जाता और वे सड़-सड़ कर मर जाते थे । कभी-कभी वे लोग कुछ सिपाहियों को टोली से अलग कर मार डालते थे । वनजन्तुओं का शिकार करने के बहाने भी उन्होंने कितने ही सैनिकों को मार डाला । कभी-कभी किसी पर्वतशिखर पर बाजी लगाकर चढ़ा ले जाते और एकान्त में पाकर उन्हें ढकेल देते थे । कितने ही लोग वनवासी बनकर जंगलों में छिपे रहते और इक्के-दुक्के सिपाहियों पर आक्रमण करके उन्हें मार डालते थे । किसी समय सैनिक लोग यदि किसी प्रकार के आमोद-प्रमोद में व्यस्त रहते तो एकाएक छापा मारकर वे कितने ही सैनिकों को साफ कर दिया

कच्छद्मना विपिनेषु विरलसैनिकानां प्रतिरोधनैः, अक्षद्यूतपक्षियुद्धयात्रोत्सवादिसंकुलेषु बलवदनुप्रवेशनैः- इतरेषां हिंसोत्पादनैः, गूढोत्पादितव्यलीकेभ्योऽप्रियाणि प्रकाशं लब्ध्वा साक्षिषु तद्विख्याप्याकीर्तिगुप्तिहेतुभिः पराक्रमैः, परकलत्रेषु सुहृत्त्वेनाभियोज्य जारान्भर्तृभयमपहृत्य तत्साहसोपन्यासैः, योग्यनारीहारितानां संकेतेषु प्रागुपनिलीय पश्चादभिद्रुत्याकीर्तनीयैः प्रमापणैः, उपप्रलोभ्य बिलप्रवेशेषु निधानखननेषु च विघ्नव्याज-

* बालविबोधिनी *

विरलसैनिकानां स्वल्पसैन्यानाम् । गूढेत्यादि गूढं गुप्तमुत्पादितं व्यलीकं दुःखं येषां तेभ्यः तत्सकाशादित्यर्थः । प्रकाशं सर्वसमक्षं अप्रियाणि अप्रियवाक्यानि लब्ध्वा श्रुत्वा अकीर्तेरयशसो गुप्तेर्गोपनस्य हेतुभिः कारणैः पराक्रमैः साक्षिषु द्रष्टृषु तद् विख्याप्य ख्यापयित्वा । अभियोज्य नियोज्य । तत्साहसेति—तेषां जाराणां साहसोपन्यासैः साहसोत्पादनैः । योग्यनारीति—योग्याभिर्नारीभिर्हारितानामाकर्षितानां सङ्केतेषु सङ्केतस्थानेषु प्राक् प्रथममुपनिलीय प्रच्छन्नो भूत्वा पश्चादभिद्रुत्य

* बालक्रीडा *

करते थे । कभी–कभी लोग कोई ऐसा झमेला खड़ा कर देते कि बहुतेरे सैनिक आपस में ही कट मरते थे । कभी–कभी वे लोग झूठ–मूठ की अफवाहें फैलाकर लोगों में आतंक उत्पन्न कर देते, जिससे साधारण जनसमुदाय में राजा अनन्तवर्मा की बदनामी फैल जाती और अवसर पाकर लोग बहुत से सैनिकों को यमपुरी पहुँचा दिया करते थे । मौका पाकर कभी–कभी किसी स्त्री से किसी अधिकारी का सम्बन्ध बताकर लोग उस पक्ष वाले कितने ही सैनिकों को मरवा डालते थे । कभी-कभी किसी सुन्दरी को नियुक्त कर देते । जो राजा के अधिकारियों या सैनिकों को पूर्वनिश्चित किसी स्थान पर ले जाती और वहां पहले ही से छिपे हुए गुप्त दूत कर आकर उन्हें नष्ट कर देते थे। कभी–कभी किसी कन्दरा में बड़ा भारी खजाना गड़ा होने या किसी मन्त्र का साधन करके कामना पूर्ण होने की बात कहकर राजा के अधिकारियों और सैनिकों के हृदय में लोभ जगत करते और वहां पहुँचने पर स्वयं विघ्न बन कर कितने ही लोगों की इहलीला समाप्त कर देते थे । किसी को किसी मतवाले हाथी पर सवारी करने के लिए प्रेरित करके ऊपर- ऊपर से उस मतवाले हाथी को सम्हालने के बहाने उसे भड़का देते थे ।

साध्यैर्व्यापादनैः, मत्तगजाधिरोहणाय प्रेर्य प्रत्यवायनिर्वर्तनैः; व्यालहस्तिनं कोपयित्वा लक्ष्यीकृतमुख्यमण्डलेष्वपक्रमणैः, दायाद्यर्थे विवदमानानुपांशु हत्वा प्रतिपक्षेष्वयशःपातनैः, सामन्तपुरजनपदेष्वयथावृत्तानप्रकाशमभिप्रहृत्य तद्वैरिनामघोषणैः, योग्याङ्गनाभिरहर्निशमभिरमय्य राजयक्ष्मोत्पादनैः, वस्त्राभरणमाल्याङ्गरागादिषु रसविधानकौशलैः, चिकित्सामुखेनामयोपबृंहणैरन्यैश्चाभ्युपायैरश्मकेन्द्रप्रयुक्तास्तीक्ष्णरसदादयः प्रक्षपितप्रवीरमनन्तवर्मकटकं जर्जरमकुर्वन् ।

* बालविबोधिनी *

धावित्वा अकीर्तनीयैर्निन्दनीयैः प्रमापणैर्मारणैः । प्रत्यवायनिर्वर्तनैः हिंसोत्पादनैः । व्यालहस्तिनं दुष्टगजम् । अपक्रमणैः प्रेरणैः । दायाद्यर्थे धनादिविषये । अयथावृत्तान् असद्वृत्तान् । राजयक्ष्मा रोगविशेषः । रसविधानकौशलैः विषप्रदानचातुर्यैः । चिकित्सामुखेन चिकित्साच्छलेन । आमयोपबृंहणैः रोगवर्द्धनैः । तीक्ष्णरसं विषं ददातीति तीक्ष्णरसदः स आदिर्येषां ते । प्रक्षपिता विनाशिताः प्रवीरा योधा यस्य तत् । जर्जरं शिथिलम् ।

* बालक्रीडा *

जिस से विगड़ कर वह उसे रौंद डालता था । कभी-कभी वे मतवाले हाथी को कुपित करके उसी ओर भागते थे, जिधर राज्य के बड़े-बड़े अधिकारी उपस्थित होते थे, जिससे वह विगड़ा हुआ हाथी उन सबको साफ कर दिया करता था। राजा के सहायकों में यदि में खानदानी झगड़ा रहता तो कुछ लोग जाकर उन को साफ कर देते और उस कुकर्म का अपराध दूसरे पक्षवालों पर लाद दिया करते थे । वे लोग उस राजा के सामन्तों की नगरियों में घुसकर दुराचारियों को मार डालते और जाँच-पड़ताल के अवसर पर उन के शत्रुओं का नाम घोषित कर देते थे । कितने ही सैनिकों को वे लोग किसी रुग्ण स्त्री के साथ सम्बन्ध करा कर क्षयी रोग का रोगी बनाकर मरवा डालते थे । कितने ही दूतों ने राज्य के सैनिकों को विषाक्त वस्त्र-आभूषण तथा सुगन्धित लेप आदि अर्पण कर-करके मार डाला । कितनों ने वैद्य बनकर बहुतेरे सैनिकों को औषधि के बहाने दूषित रस या विष दे देकर समाप्त कर दिया । इस प्रकार अश्मक देश के अधिपति वसन्तभानु के द्वारा प्रेरित चरोंने तीक्ष्ण रस आदि देने के व्याज से अनन्तवर्मा की

(२५) अथ वसन्तभानुर्भानुवर्माणं नाम वानवास्यं प्रोत्साह्यानन्तवर्मणा व्यग्राहयत्। तत्परामृष्टराष्ट्रपर्यन्तश्चानन्तवर्मा तमभियोक्तुं बलसमुत्थानमकरोत्। सर्वसामन्तेभ्यश्चाश्मकेन्द्रः प्रागुपेत्यास्य प्रियतरोऽभूत्। अपरेऽपि सामन्ताः समगंसत। गत्वा चाभ्यर्णे नर्मदारोधसि न्यविशन्। तस्मिंश्चावसरे महासामन्तस्य कुन्तलपतेरवन्तिदेवस्यात्मनाटकीयां क्ष्मातलोर्वशीं नाम चन्द्रपालितादिभिरतिप्रशस्तनृत्यकौशलामाहूयानन्तवर्मा नृत्यमद्राक्षीत्। अतिरक्तश्च भुक्तवानिमां मधुमत्ताम्।

* बालविबोधिनी *

(२५) वसन्तभानुः अश्मकेन्द्रः। वानवास्यो वनप्रदेशाधिपतिः। व्यग्राहयत् विग्रहं कारितवान्। तत्परामृष्टेति—तेन वानवास्येन परामृष्टो गृहीतो राष्ट्रस्य स्वराज्यस्य पर्यन्तः प्रान्तभागो यस्य सः। तम् अश्मकेन्द्रम्। सर्वसामन्तेभ्य इत्यत्र पञ्चमीविभक्तिः। अस्य वानवास्यस्य। समगंसत मिलिता अभवन्। अभ्यर्णे समीपवर्तिनि। नर्मदारोधसि नर्मदातीरे। आत्मनाटकीयां स्वनर्तकीम्। मधुमत्तां मद्यपानप्रमत्ताम्।

* बालक्रीडा *

सारी सेना जर्जर कर डाली।

(२५) इसके अनन्तर वसन्तभानु ने भानुवर्मा नामक भीलों के राजा को उभाड़कर अनन्तवर्मा से लड़ा दिया। भानुवर्मा के आक्रमण करने पर अनन्तवर्मा ने उसे पराजित करने के लिए सारे राष्ट्र की शक्ति लगा दी। इधर अपने सभी सामन्तों को साथ लेकर वसन्तभानु अनन्तवर्मा से जा मिला और उस का प्रिय बन गया। इसके अतिरिक्त और और सामन्त भी अनन्तवर्मा की सहायता के लिए आ पहुंचे। उन सब लोगों ने नर्मदा नदी के तट पर अपनी-अपनी छावनियें डाल दीं। उस समय महासामन्त और कुन्तल देश के अधिपति अवन्तिदेव की नाट्यशाला की प्रधान नर्तकी—जो सुन्दरता में पृथिवीतलकी उर्वशी कही जा सकती थी—नाच रही थी और अनन्तर वर्मा उसका नृत्य देख रहाथा। चन्द्रपालित आदि भी उसी के साथ थे। मधुपान करके मस्त होकर उस सुन्दरी के सौन्दर्य में वह अतिशय आसक्त था। अश्मकपति ने कुन्तलपति अवन्तिदेव को एकान्त में लेजाकर कहा—

(२६) अश्मकेन्द्रस्तु कुन्तलपतिमेकान्ते समभ्यधत्त—'प्रमत्त एष राजा कलत्राणि नः परामृशति । कियत्यवज्ञा सोढव्या । मम शतमस्ति हस्तिनाम्, पञ्चशतानि च ते । तदावां संभूय मुरलेशं वीरसेनमृचीकेशमेकवीरं कोङ्कणपतिं कुमारगुप्तं सासिक्यनाथं च नागपालमुपजपाव । ते चावश्यमस्याविनयमसहमाना अस्मन्मतेनैवोपावर्तेरन् । अयं च वानवास्यः प्रियं मे मित्रम् । अमुनैनं दुर्विनीतमग्रतो व्यतिषक्तं पृष्ठतः प्रहरेम । कोशवाहनं च विभज्य गृह्णीमः' इति हृष्टेन चामुनाभ्युपेते, विंशतिं वरांशुकानाम्, पञ्चविंशतिं काञ्चनकुङ्कुमकम्बलानाम्, प्राभृतीकृत्याप्तमु-

* बालविबोधिनी *

(२६) परामृशति धर्षयति । सम्भूय मिलित्वा । उपजपाव विघटयाव । लोट् । ते वीरसेनादयः । अस्य अनन्तवर्मणः । अविनयं दुराचरणम् । उपावर्त्तेरन् आगच्छेयुः । अमुना वानवास्येन । एनं अश्मकेन्द्रम् । अग्रतः सम्मुखे । व्यतिषक्तं प्रतिरुद्धम् । अमुना कुन्तलपतिना । अभ्युपेते स्वीकृते । वरांशुकानां श्रेष्ठवस्त्राणाम् । काञ्चनेति—काञ्चनवर्णकुङ्कुमवासितकम्बलानामित्यर्थः । प्राभृतीकृत्य उपायनीकृत्य । आप्तमुखेन विश्वस्तपुरुषद्वारा । स्वमतौ स्वाभिमते । उत्तरेयुः

* बालक्रीडा *

(२६) 'राजा इस समय पागल सा हो गया है और हमारी स्त्रियों पर बलात्कार करता है । आखिर, हम लोग कब तक इस प्रकार का अपमान सहेंगे ? मेरे पास सौ हाथी हैं और पाँच सौ आप के पास । आओ, हम दोनों मिलकर मुरलेश वीरसेन, ऋचीक देश के अधिपति एकवीर, कोंकण देश के स्वामी कुमारगुप्त और सासिक्य देश के अधिपति नागपाल को फोड़कर अनन्तवर्मा से अलग कर दें । उसके उच्छृंखल व्यवहार से रुष्ट होकर वे अवश्य मेरे साथ हो जायँगे। यह भीलों का अधिपति मेरा प्रिय मित्र है । उसे आगे भेजकर अनन्तवर्मा को रोक दें और पीछे से हम लोग चढ़ाई करके मार डालें और इसका सारा खजाना और वाहन आपस में बाँट लें ।' जब अवन्तिदेव ने यह बात स्वीकार कर ली, तब बीस उत्तम वस्त्र और पच्चीस सुनहले तथा कुंकुम की सुगन्धि से सुगन्धित कम्बल देकर उसने उसके विश्वासपात्र मन्त्रियों के साथ मन्त्रणा करके उन सब

खेन तैः सामन्तैः संमन्त्र्य तानपि स्वमतावस्थापयत। उत्तरेद्युस्तेषां सामन्तानां वानवास्यस्य च अनन्तवर्मा नयद्वेषादामिषत्वमगच्छत॥ वसन्तभानुश्च तत्कोशवाहनमवशीर्णमात्माधिष्ठितमेव कृत्वा 'यथा न्यासं यथाबलं च विभज्य गृह्णीत। युष्मदनुज्ञया येनकेनचिदंशेनाहं तुष्यामि' इति शाठ्यात्सर्वानुवर्ती, तेनैवामिषेण निमित्तीकृतेनोत्पादितकलहः सर्वसामन्तान्व्यसयत्। तदीयं च सर्वस्वं स्वयमेवाग्रसत्। वानवास्यं केनचिदंशेना गृह्य प्रत्यावृत्य सर्वमनन्तवर्मराज्यमात्मसादकरोत्।

(२७) अस्मिन्नन्तरे मन्त्रिवृद्धो वसुरक्षितः कैश्चिन्मौलैः संभूय

* बालविबोधिनी *

परदिने। नयद्वेषात् दुर्नयात्। आमिषत्वं भोग्यवस्तुत्वम्। तैर्हत इति भावः। तत्कोशेति—तस्यानन्तवर्मणः कोशवाहनं धनरत्नगजाश्वादिकम्। अवशीर्णं विध्वस्तम्। आत्माधिकृतं स्वाधिकृतम्। यथाप्रयासं स्वस्वचेष्टानुरूपम्। यथाबलं स्वस्वशक्त्यनुसारेण। सर्वानुवर्ती सर्वेषां मनोरञ्जकः।

(२७) मौलैः भूम्यादिमूलदातृभिः। 'मुखिया' इति भाषा। भास्करवर्मा

* बालक्रीडा *

को भी मिला दिया। दूसरे दिन उन सामन्तों और भीलों के अधिपति के कौशल से अनन्तवर्मा मार डाला गया। इसके अनन्तर वसन्तभानु ने अनन्तवर्मा की विध्वस्त सेना, कोश और वाहन अपने कब्जे में कर लिया और सब लोगों से कहा—'आप लोग अपने परिश्रम और अपने बल के अनुसार इस धनका हिस्सा बाँट लीजिए। अपनी इच्छा से आप मुझे जो कुछ दे दीजिएगा, मैं उसी में प्रसन्न हो जाऊँगा।' इस प्रकार की माया फैलाकर वसन्तभानु ने अपनी ओर से सब को प्रसन्न कर दिया। किन्तु इस धनके बटवारे में सभी सामन्त आपस में ही लड़गये और अवसर पाकर उसने सभी सामन्तों को ध्वस्त कर डाला। इसके अनन्तर उन लोगों की भी सारी सम्पत्ति वह स्वयं हड़प गया। भीलों के राजा को अलबत्ते थोड़ा-बहुत दिया और वहां से लौटकर अनन्तवर्मा का सारा राज्य अपने हाथ में कर लिया।

(२७) इसी बीच मन्त्रियों में वृद्ध वसुरक्षित इस विपत्ति से दुःखित होकर

बालमेनं भास्करवर्माणम्, अस्यैव ज्यायसीं भगिनीं त्रयोदशवर्षां मञ्जुवादिनीम्, अनयोश्च मातरं महादेवीं वसुंधरामादायापसर्पन्नापदोऽस्या भावितया दाहज्वरेण देहमजहात्। अस्मादृशैर्मित्रैस्तु नीत्वा माहिष्मतीं भर्तृद्वैमातुराय भ्रात्रे मित्रवर्मणे सापत्या देवी दर्शिताभूत्। तां चार्यामनार्योऽसावन्यथाभ्यमन्यत। निर्भर्त्सितश्च तया 'सुतमियमखण्डचारित्रा राज्यार्हं चिकीर्षति' इति नैर्घृण्यात्तमेनं बालमजिघांसीत्। इदं तु ज्ञात्वा देव्याहमाज्ञप्तः—'तात, नालीजङ्घ, जीवतानेनार्भकेण यत्र क्वचिदवधाय जीव। जीवेयं चेदहमप्येतमनुसरिष्यामि। ज्ञापय मां क्षेमप्रवृत्तः स्ववा-

* बालविबोधिनी *

विश्रुतेन पूर्वदृष्टाऽष्टवर्षदेशीयो बालकः अनन्तवर्मणः पुत्रः। ज्यायसीं ज्येष्ठाम्। अपसर्पन् पलायमानः। भर्तुः पत्युर्द्वैमातुराय वैमात्रेयभ्रात्रे। आर्यां सुचरित्राम्। अन्यथा दुश्चरित्रामित्यर्थः। अखण्डचारित्रा अभ्रष्टचरित्रा। राज्यार्हं राज्यप्राप्तियोग्यम्। इति हेतोः। नैर्घृण्यात् निष्करुणत्वात्। अजिघांसीत् हन्तुमैच्छत्। सन्नन्ताद् हन्धातोर्लुङ्। अहं—अस्येतिवृत्तस्य वक्ता वृद्धो नालीजङ्घनामा। अवधाय व्यवहितो भूत्वा। संकुले जनाकीर्णे। व्यगाहिषि प्राविक्षम्। घोषे आभीरप-

* बालक्रीडा *

कुछ पुराने सेवकों और उसकी तेरह वर्ष की बड़ी बहिन मंजुवादिनी तथा उन दोनों की माता महादेवी वसुंधरा को लेकर भागा, किन्तु कुछ ही दिनों बाद दाहज्वर से मर गया। इसके अनन्तर कुछ मित्रों ने बच्चे समेत महादेवी वसुन्धरा को उसकी सौत के लड़के के पास पहुँचा दिया। उस सच्चरित्रवती माता को उसके सौतेले बेटेने भ्रष्ट समझा और वह इस बात से डरा कि 'कहीं यह इस विचार में न हो कि मैं अपने बेटे को राजा बनाऊंगी'। ऐसा विचारकर मित्रवर्मा ने बड़ी निर्दयता के साथ उस के पुत्र को मार डालने का विचार किया। जब महारानी को यह बात मालूम हुई तब उन्होंने मुझे आज्ञा दी—'नीलजंघ! इस बालक को ले जाव और कहीं छिपाकर तुम भी इसके साथ रहो। तब तक यदि मैं जीवित रहूँगी तो इससे आ मिलूँगी। यहां से जाकर जहाँ रहो, वहां से अपने कुशलपूर्वक पहुँचने की खबर मुझे अवश्य दे देना।' महारानी की आज्ञानुसार मैं उस बालकको लेकर उस

तोम्' इति । अहं तु संकुले राजकुले कथंचिदेनं निर्गमय्य विन्ध्याटवीं व्यगाहिषि । पादचारिणं चैनमाश्वासयितुं घोषे कचिदहानि कानिचिद्विश्रमय्य, तत्रापि राजपुरुषसंपातभीतो दूराध्वमपासरम् । तत्रास्य दारुणपिपासापीडितस्य वारि दातुकामः कूपेऽस्मिन्नपभ्रश्य पतितस्त्वयैवमनुगृहीतः । त्वमेवास्यात. शरणमेधि विशरणस्य राजसूनोः' इत्यञ्जलिमबध्नात्।

(२८) 'किमीया जात्यास्य माता' इत्यनुयुक्ते मयामुनोक्तम्-'पाटलिपुत्रस्य वणिजो वैश्रवणस्य दुहितरि सागरदत्तायां कोसलेन्द्रात्कुसुमधन्वनोऽस्य माता जाता' इति । 'यद्येवमेतन्मातुर्मत्पितुश्चैको मातामह'

* बालविबोधिनी *

रत्याम् । विश्रमय्य विश्रामं कारयित्वा । तत्रापि घोषेऽपि । राजपुरुषेति-राजपुरुषाणां सम्पातात् आगमनाद् भीतः शङ्कितः । दूराध्वं दूरमार्गम् । अपभ्रश्य भ्रष्टो भूत्वा । त्वया विश्रुतेनेत्यर्थः । अतः अस्मात्परम्। विशरणस्य शरणरहितस्य । एधि भव । अस् धातोर्लोटि रूपम् ।

(२८) किमीया जात्येति-कस्येयमिति किमीया कस्या जातेरुत्पन्नेत्यर्थः । अनुयुक्ते पृष्टे । मया विश्रुतेनेत्यर्थः । अमुना नालीजङ्घेन । तं बालकम् । सिन्धुदत्तेति सिन्धुदत्तस्य बहवः पुत्रास्तेषु तव पिता कतमः किंनामक इति । तं

* बालक्रीडा *

राजकुल से निकलकर विन्ध्य पर्वत के वनों में जा छिपा । पैदल चलने के कारण थके हुए बालक की थकान मिटाने के लिए मैंने कई दिन तक एक अहीर की गोशाला में रखा । लेकिन वहां राजपुरुषों के आ पहुँचने का भय था इस लिए वहां से भी दूर चला गया । रास्ते में इसे बड़ी जोर की प्यास लगी। मैं इस के लिये पानी लेने को गया और इस कुए में गिर पड़ा और आपने कृपा करके मुझे बचा लिया । अतएव इस अनाथ राजपुत्र के आप ही प्रभु बनें और इसे जिलावें । ।' वह ऐसा कह और हाथ जोड़कर वह खड़ा हो गया ।

(२८) मैंने पूछा-'यह किस जाति का बालक है ?' उसने उत्तर दिया-'पाटलि पुत्र के वैश्य वैश्रवण की कन्या सागरदत्ता के गर्भ और कोशल देश के अधिपति महाराज कुसुमधन्वा के संसर्ग से इस की माता उत्पन्न हुई थी।'

इति सस्नेहं तमहं सस्वजे। वृद्धेनोक्तम्—'सिन्धुदत्तपुत्राणां कतमस्ते पिता' इति। 'सुश्रुतः' इत्युक्ते सोऽत्यहृष्यत्। अहं तु 'तं नयावलिप्तमश्मकेन्द्रमश्मकनयेनैवोन्मूल्य बालमेनं पित्र्ये पदे प्रतिष्ठापयेयम्' इति प्रतिज्ञाय 'कथमस्यैनां क्षुधं क्षपयेयम्' इत्यचिन्तयम्। तावदापतितौ च कस्यापि व्याधस्य त्रीनिषूनतीत्य द्वौ मृगौ स च व्याधः। तस्य हस्तादवशिष्टमिषुद्वयं कोदण्डं चाक्षिप्याविधिषम्। एकश्च सपत्राकृतोऽन्यश्च निष्पत्राकृतोऽपतत्। तं चैकं मृगं दत्त्वा मृगयवे, अन्यस्यापलोमत्वचः क्लोमापोह्य, निष्कुलाकृत्य विकृत्योर्वङ्घ्रिग्रीवादीनि शूलाकृत्य दावाङ्गारेषु, तप्तेनामिषेण तयोरात्मनश्च

* बालविबोधिनी *

अश्मकेन्द्रम्। नयावलिप्तं नीतिगर्वितम्। अश्मकनयेन पाषाणोन्मूलनन्यायेन। अश्मकमिति पाठे तु नयेन नीत्येति सम्बन्धः। अस्य बालस्य। क्षुधं क्षुधाम्। क्षपयेयं नाशयेयम्। तावत्—एतस्मिन्नन्तरे। त्रीन् इषून् बाणत्रयमित्यर्थः। अतीत्योल्लङ्घ्य। स च व्याध आपतित इत्यध्याहारेणान्वयः। अविधिषं प्राहरम्। सपत्राकृतो निष्पत्राकृतश्च 'सपत्रनिष्पत्रादतिव्यथने' इति डाच्। अनयोरर्थस्तु—सपत्रः शरो मृगस्य शरीरे प्रवेशित इति सपत्राकृतः—मृगस्य पार्श्वद्वयं भित्त्वा निष्पत्रः शरो बहिष्कृत इति निष्पत्राकृतः। मृगयवे व्याधाय। अपलो·

* बालक्रीडा *

यह सुनकर मैंने कहा–'तब तो इस की माता और मेरे पिता दोनों के मातामह एक ही थे।' बस, मैंने उस बालक को छाती से लगा लिया। वृद्ध ने कहा—'सिन्धुदत्त के पुत्रों में से कौन तुम्हारे पिता थे?' मैंने कहा—'सुश्रुत।' यह सुन कर वह बहुत प्रसन्न हुआ। मैंने मन ही मन प्रतिज्ञा की—'मैं उस नीतिगर्वित अश्मकदेशाधिपति को नीतिबल से उखाड़ फेंकूंगा और इस बालक को इसके पिता के पद पर बैठाऊंगा।' इस के बाद यह चिन्ता हुई कि 'इस बालक की भूख कैसे मिटाऊं?' इसी समय दो मृग भागते हुए मेरी ओर आये। वे एक बहेलिए के तीन बाणों से बचकर भाग निकले थे। इसी समय वह बहेलिया भी आ पहुँचा। उसके पास अभी दो बाण शेष थे। बस, मैंने उससे धनुष-बाण ले लिया और उन दोनों पर चला दिया। उनमें से एक के शरीर में वह बाण ऊपर लगे हुए पंख तक

क्षुधमतार्षम्। एतस्मिन्कर्मणि मत्सौष्ठवेनातिहृष्टं किरातमस्मि पृष्टवान्- 'अपि जानासि माहिष्मतीवृत्तान्तम्' इति। असावाचष्ट—'तत्र व्याघ्रत्वचो दृतीश्च विक्रीयाद्यैवागतः किं न जानामि। प्रचण्डवर्मा नाम चण्डवर्मानुजो मित्रवर्मदुहितरं मञ्जुवादिनीं विवाहसुरभ्येतीति तेनोत्सवोत्तरा पुरी' इति।

(२९) अथ कर्णजीर्णमब्रवम् 'धूर्तो मित्रवर्मा दुहितरि सम्यक्प्रतिप

* बालविबोधिनी *

मत्वचो निर्लोमचर्मण.। अन्यस्येत्यस्य विशेषणम्। क्लोम फुप्फुसम्। 'फँफड़ा' इति भाषा। अपोह्य नि.सार्य। निष्कुलाकृत्य निस्त्वचीकृत्य। विकृत्य विच्छिद्य। शूलाकृत्य शूलेन पाचयित्वा। दावाङ्गारेषु वनाग्निषु। तप्तेन उष्णेन भर्जितेन वा। आमिषेण मांसेन। तयोः बालवृद्धयो। अतार्षं न्यवारयम्। मत्सौष्ठवेन मम पाटवेन दक्षतयेति यावत्। किरातं पूर्वागतं व्याधम्। व्याघ्रत्वचो व्याघ्रचर्माणि। दृतीः चर्मपुटकान्। किं न जानामीत्यस्यार्थः। सर्वमेव जानामीति विलिप्सुर्लब्धुमिच्छुः। उत्सवोत्तरा उत्सवभूयिष्ठा।

(२९) जीर्णं वृद्धं नालीजंघमित्यर्थः। दुहितरि मञ्जुवादिन्याम्। सम्य

* बालक्रीडा *

घुस गया था और दूसरे मृग के शरीर में मेरा फेंका हुआ बाण आर-पार निकल गया था। उन दोनों में से एक मृग मैंने बहेलिये को दे दिया और दूसरे मृग के रोयें, चमड़ी तथा क्लोम (हृदय के दाहिने भाग में रहने वाला=पिपासा का उत्पत्ति स्थान) तथा अंतड़ियें आदि निकालकर अलग की और कटा-कूटा। इसके बाद उसकी जांघ, हड्डी और गला आदि सलाइयों में बाँधकर दावानल के अङ्गारों में भूना। इस प्रकार उस पके हुए मांस से मैंने उस बालक की, नालीजंघ की तथा अपनी क्षुधा निवृत्त की। मेरे इस कौशल से वह बहेलिया बहुत प्रसन्न हुआ। मैंने उससे पूछा—'माहिष्मती का कुछ हाल जानते हो?' उसने कहा—'वहीं तो बाघ के चमड़े की पेटारियें बेच कर आ रहा हूं। वहां का हाल क्यों न जानूंगा। चण्डवर्मा का छोटा भाई प्रचण्डवर्मा मित्रवर्मा की पुत्री मञ्जुवादिनी को लेने आ रहा है। इसलिए पुरी में आज बड़ा उत्सव मनाया जा रहा है।'

(२९) इसके अनन्तर मैंने उस वृद्ध नालीजंघ के कान में कहा—'वह धूर्त

त्या मातरं विश्वास्य तन्मुखेन प्रत्याकृष्य बालकं जिघांसति । तत्प्रतिगत्य-कुशलमस्य मद्वार्तां च देव्यै रहो निवेद्य पुनः कुमारः शार्दूलभक्षित इति प्रकाशमाक्रोशनं कार्यम् । स दुर्मतिरन्तःप्रीतो बहिर्दुःखं दर्शयन्देवीमनुनेष्यति। पुनस्तया त्वन्मुखेन स वाच्यः—'यदपेक्षया त्वन्मतमत्यक्रमिषं सोऽपि बालः पापेन मे परलोकमगात् । अद्य तु त्वदादेशकारिण्येवाहम्' इति । स तथोक्तः प्रीतिं प्रतिपद्याभिपत्स्यति । पुनरनेन वत्सनाभनाम्ना महाविषेण संनीय तोयं तत्र मालां मज्जयित्वा तया स वक्षसि मुखे च हन्तव्यः । 'स एवायमसिप्रहारः पापीयसस्तव भवतु यद्यस्मि पतिव्रता' । पुनरनेनागदेन संगमितेऽम्भसि तां मालां मज्जयित्वा स्वदुहित्रे देया । मृते तु तस्मिंस्तस्यां च निर्विकारायां सत्याम्, सतीत्येवैनां प्रकृतयोऽनुवर्तिष्यन्ते ।

बालविबोधनी

कप्रतिपत्त्या अनुकम्पया । प्रत्याकृष्य आनीय । तत् तस्मात् कारणात् । अस्य भास्करवर्मणः । रहो निर्जने । पुनः पश्चात् । आक्रोशनं क्रन्दनम् । त्वन्मुखेन त्वां सम्प्रेष्येत्यर्थः । स मित्रवर्मा । अत्यक्रमिषम् अतिक्रान्तवती । प्रतिपद्य प्राप्य । अभिपत्स्यते अनुग्रहीष्यति देवीमिति शेषः । वत्सनाभो विषभेदः । दारदो वत्सनाभश्चेत्यमरः । सन्नीय मिश्रयित्वा । तया देव्या । स मित्रवर्मा । अगदेन ओषधिना । सङ्गमिते मिश्रिते । स्वदुहित्रे मञ्जुवादिन्यै । तस्मिन् मित्रवर्मणि । तस्यां

* बालक्रीडा *

मित्रवर्मा अपनी पुत्री मंजुवादिनी पर स्नेह दरसा और उस के द्वारा माता को विश्वास दिला करके इस बालक को अपने पास बुलवा कर मार डालना चाहता है। इस लिए तुम मेरा और इस बालक का कुशल–समाचार लेकर देवी वसुधंरा के पास जाओ और 'बच्चे को बाघ खा गया' यहकह कर रोने लग जाओ । दुष्ट मित्रवर्मा मन ही मन प्रसन्न हो और बाहर से दुःख प्रदर्शन करता हुआ महारानी को सान्त्वना देगा । इसके बाद महारानी तुम्हारे द्वारा उस दुष्ट के पास यह कहलायें कि जिसके लिए मैंने तुम्हारी बात नहीं मानी, वह बालक भी मर गया । अब तुम जो कहोगे, मैं वही करूंगी ।' यह सुनकर वह बहुत प्रसन्न होकर महादेवी वसुन्धरा के पास जायगा । उस समय महादेवी इस वत्स-

पुनः प्रचण्डवर्मणे संदेश्यम्—'अनायकमिदं राज्यम्। अनेनैव मद्बालिकेयं स्वीकर्तव्या' इति। तावदावां कापालिकवेषच्छन्नौ देव्यैव दीयमानभिक्षौ पुरो बहिरुपश्मशानं वत्स्यावः। पुनरार्यप्रायान्पौरवृद्धानामांश्च मन्त्रिवृद्धानेकान्ते ब्रवीतु देवी—'स्वप्नेऽद्य मे देव्या विन्ध्यवासिन्या कृतः प्रसादः। अद्य चतुर्थेऽहनि प्रचण्डवर्मा मरिष्यति। पञ्चमेऽहनि रेवातटवर्तिनि मद्भवने परीक्ष्य वैजन्यम्, जनेषु निर्गतेषु कपाटमुद्घाट्य त्वत्सुतेन सह कोऽपि द्विजकुमारो निर्यास्यति। स राज्यमिदमनुपाल्य बालं ते प्रतिष्ठापयिष्यति। स खलु बालो मया व्याघ्रोत्-

* बालविबोधिनी *

मञ्जुवादिन्याम्। निर्विकारायां विकाररहितायाम्। सतीति पतिव्रतेति। एनां देवीम्। अनुवर्तिष्यन्ते अनुसरिष्यन्ति। सन्देश्यं वाचिकं प्रेषणीयम्। अनायकं नायकशून्यम्। अनेन राज्येन। स्वीकर्तव्या विवाह्या। तावत् तावता कालेन। आवां अहं भास्करवर्मा च। दीयमाना भिक्षा याभ्यां तौ। पुरो बहिर्नगराद्बहिः। उपश्मशानं श्मशानसमीपे। आर्यप्रायान् साधुन् सच्चरित्रान्। वैजन्यं जनशून्य-

* बालक्रीडा *

नाम नाम के महाविष को पानी में घोलकर उसमें फूलों की माला डुबो ले और उससे मित्रवर्मा की छाती और मुख में मारे और कहे—'यदि मैं पतिव्रता हूँ तो मेरी इस माला की मार तेरे लिए तलवार का प्रहार हो जाय।' इसके अनन्तर मेरी इस ओषधि में उस माला को धो और निर्विष करके अपनी कन्या मंजुवादिनी को दे दे। ऐसा करने से मित्रवर्मा मर जायगा और मञ्जुवादिनी निर्विकार बच जायगी। ऐसी दशा में लोग महादेवी को सती समझकर उसका अनुसरण करेंगे। इसके अनन्तर प्रचण्डवर्मा के पास यह सन्देश भेजना चाहिए कि 'यह राज्य इस समय राजासे हीन है। अत एव आप इस राज्य के साथ-साथ इस बालिका को भी अंगीकार करें। तब तक हम दोनों कापालिक (वाममार्गी संन्यासी) का वेश धारण करके महारानी की भिक्षा पर ही जीवन बिताते हुए नगर के बाहर श्मशान में रहेंगे। अवसर पाकर महादेवी अपने आप्त पुरवासियों और वृद्ध मन्त्रियों को बुलाकर एकान्त में कहे—'आज स्वप्न में भगवती विन्ध्यवासिनी ने

पया तिरस्कृत्य स्थापितः । सा चेयं वत्सा मञ्जुवादिनी तस्य द्विजातिदारकस्य दारत्वेनैव कल्पिता' इति । तदेतदतिरहस्यं युष्मास्वेव गुप्तं तिष्ठतु यावदेतदुपपत्स्यते' इति ।

(३०) स सांप्रतमतिप्रीतः प्रयातोऽर्थश्चायं यथाचिन्तितमनुष्ठितोऽभूत् । प्रतिदिशं च लोकवादः प्रासर्पत—'अहो माहात्म्यं पतिव्रतानाम्' । असिप्रहार एव हि स मालाप्रहारस्तस्मै जातः । न शक्यमुपधियुक्तमेतत्कर्मेति वक्तुम् । यतस्तदेव दत्तं दाम दुहित्रे स्तनमण्डनमेव तस्यै जा ं न

* बालविबोधिनी *

ताम् । अतिरहस्यमतिगोपनीयम् । यावत् यत्कालपर्यन्तम् । उपपत्स्यते सिद्धं भविष्यति ।

(३०) सः नालीजंघः । अर्थः मदुक्तो विषयः । प्रासर्पत् प्राचरत् । तस्मै

* बालक्रीडा *

मेरे समक्ष आकर कहा है कि 'आज के चौथे रोज प्रचण्डवर्मा मर जायगा ।' पाँचवें दिन रेवा नदी के तट पर एकान्त में विद्यमान मेरे मन्दिर में जब सन्नाटा हो जायगा तब एक ब्राह्मणकुमार तुम्हारे बालक के साथ फाटक खोलकर बाहर निकलेगा । वह द्विज इस राज्य को हस्तगत करके तुम्हारे बालक को राज्यसिंहासन पर बिठालेगा । इस समय मैं व्याघ्रीरूप से उस बालक की रक्षा कर रही हूँ । यह मंजुवादिनी उस द्विजबालक की पत्नी होगी । हमने जो यह गुप्त बात बतायी है, उसे तब तक आप लोग भी गुप्त ही रखें ।"

(३०) वह वृद्ध (नालीजंघ) बड़ी प्रसन्नता के साथ विदा हुआ और मैंने जो योजना बतायी थी, उसके अनुसार उसने सब कार्य सम्पन्न कर दिया । अब चारों ओर यह प्रवाद फैल गया—'अहो ! पातिव्रत धर्म की कितनी प्रबल महिमा है ! देवी ने मित्रवर्मा पर माला का प्रहार किया और वह उसके लिए खड्गप्रहार होगया । यदि कहा जाय कि माला में कोई ऐसा असर था, सो बात भी नहीं है । क्योंकि उससे मित्रवर्मा को मारकर वह माला देवी ने मंजुवादिनी को दे दी । उसने उसे पहन लिया । जिससे वह मरी नहीं, बल्कि वह माला उसके स्तनों का अलंकार

मृत्युः । योऽस्याः पतिव्रतायाः शासनमतिवर्तते स भस्मैव भवेत्' इति ।

(३१) अथ महाव्रतिवेषेण मां च पुत्रं च भिक्षायै प्रविष्टौ दृष्ट्वा प्रस्नुतस्तनी प्रत्युत्थाय हर्षाकुलमब्रवीत्—'भगवन्, अयमञ्जलिः । अनाथोऽयं जनोऽनुगृह्यताम् । अस्ति ममैकः स्वप्नः स किं सत्यो न वा' इति । मयोक्तम्—'फलमद्यैव द्रक्ष्यसि' इति । 'यद्येवं बहु भागधेयमस्या वो दास्याः । स खल्वस्याः सानाथ्यशंसी स्वप्नः' इति मद्दर्शनरागबद्धसाध्वसां मञ्जुवादिनीं प्रणमय्य, भूयोऽपि हर्षगर्भमब्रूत—'तच्चेन्मिथ्या सोऽयं युष्मदीयो बालकपाली स्वो मया निरोद्धव्यः' इति । मयापि सस्मित

* बालविबोधिनी *

तदर्थम् मित्रवर्मणे इत्यर्थः । उपधियुक्तं कपटतायुक्तम् । दाम माला । अतिवर्तते लङ्घयति ।

(३१) महाव्रतिवेषेण कापालिकच्छद्मना । भिक्षायै भिक्षार्थम् । प्रस्नुतस्तनी स्रवत्पयोधरा । यद्येवं भवद्वचनं यदि सत्यं स्यात् । अस्याः ममेत्यर्थः । अस्या· मद्दुहितुः । सानाथ्यं शंसतीति सानाथ्यशंसी सनाथतासूचकः । मद्दर्शनेति—मम दर्शनाद् रागेण प्रेम्णा बद्धमुत्पादितं साध्वसं लज्जा यस्यास्ताम् । प्रणमय्य

* बालक्रीडा *

बन गयी । जो कोई इस पतिव्रता की आज्ञा का उल्लंघन करेगा, वह भस्म हो जायगा ।'

(३१) इसके बाद जब मैं और उसका पुत्र दोनों सन्यासी बनकर उसके यहाँ जब भिक्षा माँगने गये, तो हम दोनों को देखकर उसकी प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा । उसके स्तनोंसे दूध की धारा बहने लगी और गद्गद होकर बोली—'भगवन् ! मैं हाथ जोड़ती हूँ । कृपया आप इस अनाथ को सनाथ करें । मैंने एक स्वप्न देखा था, वह सच है या नहीं ?' मैंने कहा—'आज ही उस स्वप्न का फल दिखायी देगा ।' यह सुनकर वह बोली—'यदि इस दासी का इतना प्रबल भाग्योदय हुआ है तो मैं समझती हूँ कि वह स्वप्न इसको सनाथ होने की सूचना देने के लिए ही हुआ था । ऐसा कह और मुझे देखते ही आसक्त हो जाने वाली सुन्दरी मंजुवादिनी को प्रणाम कराके बड़े हर्ष के साथ वह बोली—'यदि

मञ्जुवादिनीरागलीनदृष्टिलीढधैर्येण 'एवमस्तु' इति लब्धभैक्ष्यः नालीजङ्घमाकार्य निर्गम्य ततश्च तं चानुयान्तं शनैरपृच्छम्—'कासावल्पायुः प्रथितः प्रचण्डवर्मा' इति । सोऽब्रूत—'राज्यमिदं ममेत्यपास्तशङ्को राजास्थानमण्डप एव तिष्ठत्युपास्यमानः कुशीलवैः' इति ।

(३२) 'यद्येवमुद्याने तिष्ठ' इति तं जरन्तमादिश्य तत्प्राकारैकपार्श्वे कचिच्छून्यमठिकायां मात्राः समवतार्य, तद्रक्षणनियुक्तराजपुत्रः, कृतकुशीलववेषलीलः प्रचण्डवर्माणमेत्यान्वरञ्जयम् । अनुरञ्जितातपे तु समये, जनसमा-

* बालविबोधिनी *

प्रणामं कारयित्वा मञ्जुवादिन्येति शेषः । तत् तव वचनं चेन्मिथ्या भवेत्तर्हि । बालकपाली शिशुव्रती । मञ्जुवादिनीत्यादि—मञ्जुवादिन्या रागेण प्रेम्णा लीना संसक्ता या दृष्टिस्तया लीनं कवलितं धैर्यं यस्य तेन । स नालीजंघः । राजास्थानमण्डपे राजसभायाम् । कुशीलवैः चारणैः ।

(३२) जरन्तं वृद्धम् । शून्यमठिकायां निर्जनमठे । मठशब्दात्स्वल्पार्थे कः प्रत्ययः । मात्राः कन्थादिपरिच्छदान् । मात्रा परिच्छदेऽल्पेंशे इति कोषात् । तद्रक्षणे मात्रासंरक्षायां नियुक्तो राजपुत्रो येनासौ । कृतकुशीलवेति–कुशीलवच्छद्मनेत्यर्थः । अनुरञ्जितो रक्त आतपो यस्मात्—दिवावसानकाले । जनसमाजस्य

* बालक्रीडा *

मेरा वह स्वप्न मिथ्या होगा तो कल मैं तुम्हारे इस बालभिक्षु को मैं रोक लूँगी । मंजुवादिनी के अनुराग से मैंने स्थिर दृष्टि से निहार और मुसकाकर कहा–'अच्छा, ऐसे ही सही ।' इसके बाद भिक्षा ले और नालीजंघ को साथ लेकर चल पड़ा । कुछ दूर आगे जाकर मैंने नालीजंघ से पूछा—'वह अल्पायु चण्डवर्मा इस समय कहाँ है ?' उसने उत्तर दिया—'उसको यह विश्वास होगया है कि अब यह राज्य मेरा ही है । अत एव वन्दीजनों को स्तुतियें सुनता हुआ सभागृह में बैठा है ।'

(३२) 'यदि ऐसा है तो तुम इस उद्यान में ठहरो' उस वृद्ध से यह कहकर मैं उस महल के एक कोने में विद्यमान शून्य मठ में चला गया वहाँ अपना कापालिक वेप उतारकर धर दिया और चारण का वेष धारण करके प्रचण्डवर्मा के पास जा पहुँचा । राजपुत्र को भी कह–सुनकर उसकी सेवकाई में लगा दिया और

ज्ञानोपयोगीनि संहृत्य नृत्यगीतनानारुदिताद्दिहस्तचङ्क्रमणमूर्ध्वपादालातपादपीठवृश्चिकमकरलङ्घनादीनि मत्स्योद्वर्तनादीनि च करणानि, पुनरादायादायासन्नवर्तिना क्षुरिकाः ताभिरुपाहितवर्ष्मा चित्रदुष्कराणि करणानि श्येनपातोत्क्रोशपातादीनि दर्शयन्, विंशतिचापान्तरालावस्थितस्य प्रचण्डवर्मणश्छुरिकयैकया प्रत्युरस प्रहृत्य, 'जीव्याद्वर्षसहस्रं वसन्तभानुः'

* बालविबोधिनी *

लोकसमूहस्य ज्ञानोपयोगीनि यथा लोकाः ज्ञातुं प्रभवेयुस्तथाभूतानि । संहृत्य दर्शयित्वा । नृत्यं नर्त्तनं, गीतं गानं नानारुदितादि नानाविधक्रन्दनानुकारि शब्दादि, हस्तचंक्रमणं इतस्ततो हस्तभ्रामणं, ऊर्ध्वपादोऽलातपादश्चेति नृत्यविशेषौ, वृश्चिकलंघनं वृश्चिकेन क्रीडनं, मकरलंघनमपि तथा । द्वन्द्वान्ते बहुव्रीहिः । मत्स्योद्वर्त्तनं मीनविलसितम् । करणानि क्रियाविशेषान् । आदायादाय विश्वासोत्पादनार्थं पुन पुनर्गृहीत्वा । आसन्नवर्त्तिनां समीपस्थितानाम् । छुरिकाः शस्त्रिका । आदायेत्यस्य कर्म । ताभिश्छुरिकाभिः । उपाहितवर्ष्मा संयुक्तशरीरः । चित्रदुष्कराणि—चित्राणि आश्चर्याणि दुष्कराणि अन्यैः कर्त्तुमशक्यानि । श्येनः पक्षिविशेषः उत्क्रोशः—कुररपक्षी तद्वत्पातः पतनं तादृशानि । विंशतिचापेति—विंशतिचाप-

* बालक्रीडा *

कवितायें सुना-सुनाकर प्रचण्डवर्मा का मनोरंजन करने लगा । जब सायंकाल के समय सूर्य भगवान के आतप में लालिमा आगयी, तब मैंने अपनी वेष-भूषा ऐसी बनाली—जिस से जन साधारण मुझे पहचान न सके और नृत्य, गान, विविध प्रकार के रोदन, हाथ चमकाने, दोनों हाथों से पृथिवी को थामकर मस्तक घुमाते हुए पैरों को ऊपर करने, एक पैर उठा और दूसरा पैर सिकोड़कर नाचने, बिच्छू या मगर जैसी आकृति बनाकर चलने, मछली की तरह उलटने आदि का कौशल दिखाते-दिखाते मैंने अपने पास वाले लोगों की छुरियाँ लेलीं और उनपर अपने सारे शरीर का भार लाद दिया । मेरे कार्य ऐसे थे, जो कोई नहीं कर सकता था। इस लिए मेरा कौशल देख-देखकर लोग बड़े विस्मित थे । इनके अतिरिक्त बाज पक्षी के समान झपटने और कुररी पक्षी के समान कुहुँकने आदि का कार्य दिखाया । उस समय प्रचण्डवर्मा बीस धनुष (८० हाथ) की दूरीपर बैठा था ।

इत्यभिगर्जन्, मद्गात्रमुत्कर्तुमुद्यतासेः कस्यापि चारभटस्य पीवरांसबाहुशिखरमाक्रम्य, तावतैव तं विचेतीकुर्वन्, आकुलं च लोकमुच्चक्षूकुर्वन्, द्विपुरुषोच्छ्रितं प्राकारमत्यलङ्घयम् ।

(३३) अवप्लुत्य चोपवने 'मदनुपातिनामेष पन्था दृश्यते' इति ब्रुवाण एव नालीजङ्घसमीकृतसैकतास्पृष्टपादन्यासया तमालवीथ्या चानुप्राकारं

* बालविबोधिनी *

मशीतिहस्तपरिमाणं तत्प्रमाणेऽन्तराले दूरेऽवस्थितस्य वर्त्तमानस्य । प्रत्युरसं वक्षसि । विभक्त्यर्थेऽव्ययीभावः । उत्कर्त्तुं छेत्तुम् । उद्यतासेः गृहीतखड्गस्य । चारश्चरः स चासौ भटो योद्धा चेति । पीवरौ स्थूलौ अंसौ ययोस्तयोर्बाह्वोः करयोः शिखरं मूर्द्धभागम् । तावता तन्मात्रेणैव । आकुलं सम्भ्रान्तम् । उच्चक्षूकुर्वन् ऊर्ध्वनेत्रं सम्पादयन् । द्विपुरुषोच्छ्रितं पुरुषद्वयप्रमाणोन्नतम् ।

(३३) अवप्लुत्य उल्लम्घ्य । मदनुपातिनां मामनुधावताम् । पन्था गतिरित्यर्थः । यो मां धर्त्तुं धाविष्यति स एवं हतो भविष्यतीति भावः । नालीजंघेति—नालीजंघेन समीकृतेन समानीकृतेन सैकतेन बालुकामयस्थानेन अस्पृष्टोऽलग्नो यः पादस्तादृशस्य न्यासो निक्षेपो यस्यां तया । पादचिह्नगोपनार्थमेतत् ।

* बालक्रीडा *

खेल दिखाते-दिखाते मैं उसके पास जा पहुँचा और उसीकी छुरी लेकर उसको छाती में भोंक दी और 'महाराज वसन्तभानु हजारों वर्ष तक विजयी होकर जीवित रहें' यह कहकर चिल्ला उठा । इसी समय उन गुप्त दूतों में से किसी योधाने मेरे पर प्रहार करने के लिए तलवार उठायी । तत्काल, मैंने झपट कर उसकी भुजा थाम ली । उसी समय उसे अचेत करता और व्याकुल जनसमाज की दृष्टि अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ मैं दो पुरुष जितनी उँचाई की चहारदीवारी फाँद आया ।

(३३) उससे बाहर होकर मैं उपवन में पहुँचा । जो लोग मेरा पीछा कर रहे थे, उनको 'यही रास्ता दिखायी दे रहा है' यह कहता हुआ मैं नालीजंघ के द्वारा समतल किये हुए बालुकामय स्थान का स्पर्श किये विना ही अर्थात् बड़े वेग से प्राकार के ईर्द-गिर्द की तमालवीथी में होता हुआ पूर्वदिशा को भाग निकला । किन्तु आगे चलकर ईंटों का एक उँचा सा टीला था, इस कारण फिर पश्चिम की

प्राचा प्रतिप्रधावितः; पुनरवाचोच्चितेष्टकचितत्वादलक्ष्यपातेन प्रद्रुत्य, लङ्घितप्राकारवप्रखातवलयः, तस्यां शून्यमठिकायां तूर्णमेव प्रविश्य, प्रति मुक्तपूर्ववेष. सह कुमारेण मत्कर्मतुमुलराजद्वारदुःखलब्धवर्त्मा श्मशानोद्देशमभ्यगाम् । प्रागेव तस्मिन्दुर्गागृहे प्रतिमाधिष्ठान एव मया कृतं भग्नपार्श्वस्थैर्यस्थूलप्रस्तरस्थगितबाह्यद्वारं बिलम् ।

(३४) अथ गलति मध्यरात्रे वर्षवरोपनीतमहार्हरत्नभूषणपट्टनिवसनौ तद्बिलमावां प्रविश्य तूष्णीमतिष्ठाव । देवी तु पूर्वेद्युरेव यथार्हमभि·

* बालविबोधिनी *

तमालवीथ्या तमालवृक्षपद्धत्या । अनुप्राकारं प्राकारसमीपम् । प्राचा पूर्वया दिशा । अवाचा दक्षिणदिशा । उच्चितानि राशीकृतानि यानि इष्टकानि तैश्चितत्वात् व्याप्तत्वात् । लंघितमतिक्रान्तं प्राकारवप्रस्य प्राचीरस्य खातवलयं खातवेष्टनं येन स. । प्रतिमुक्तस्त्यक्तः पूर्ववेष· कुशीलववेषो येनासौ । मत्कर्मणा पूर्वोक्ताचरणेन तुमुले सङ्कुले राजद्वारे दु.खेनातिकष्टेन लब्धं वर्त्म पन्था येनासौ । प्रतिमाया मूर्तेरधिष्ठाने स्थाने । भग्नं त्रुटितं पार्श्वयोः पार्श्वभागयो· स्थैर्यं काठिन्यं यस्य तादृशेन स्थूलेन महता प्रस्तरेण स्थगितमाच्छादितं बाह्यद्वारं बहिर्द्वारं यस्य तदिति बिलविशेषणम् । बिलं छिद्रम् ।

(३४) गलति गच्छति अतिक्रामति सतीत्यर्थः । वर्षवरो राजान्त.पुर·

* बालक्रीडा *

ओर लौटा और बड़े वेग से भागकर मृन्मय स्तूप, परिखा आदि लाँघता हुआ उसी शून्य मठ में जा पहुँचा । वहाँ जाकर मैंने अपना वह वेष उतारकर फिर पुरानी पोशाक पहनली । तब कुमार को साथ लेकर मैं कोहराम मचे हुए राजद्वार पर बड़ी कठिनाई से रास्ता साफ करके श्मशान की ओर बढ़ा । वहाँ दुर्गाजी का एक मन्दिर था । प्रतिमा के पास मैंने पहले ही से एक गुप्त द्वार बना लिया था और उसके मुखपर एक बड़ा सा पत्थर रख दिया था । जब कि मध्य रात्रि का समय हुआ और अन्त.पुर का रक्षक कीमती रेशमी वस्त्र और आभूषण ले आया तो हम दोनों उसी बिल के भीतर चुपके से जा बैठे ।

(३४) महादेवी तो एक दिन पहले ही मालवाधिपति चण्डवर्मा और प्र·

संस्कारं मालवाय दत्त्वा प्रचण्डवर्मणे, चण्डवर्मणे च तामवस्थामश्मकेन्द्रोपधिकृतामेव सन्दिश्य, उत्तरेद्युः प्रत्युषस्येव पूर्वसंकेतितपौरामात्यसामन्तवृद्धैः सहाभ्येत्य भगवतीमर्चयित्वा सर्वजनप्रत्यक्षं परीक्षितकुक्षिवैजन्यं तद्भवनं विधाय दत्तदृष्टिः सह जनेन स्थित्वा, पटीयांसं पटहशब्दमकारयत् । अणुतररन्ध्रप्रविष्टेन तेन नादेनाहं दत्तसंज्ञः शिरसैवोत्क्षिप्य सप्रतिमं लोहपादपीठमंसलपुरुषप्रयत्नदुश्चलमुभयकरविधृतमेकपार्श्वमेकतो निवेश्य

* बालविबोधिनी *

क्षकः षण्ढः तेनोपनीतं प्रापितं देव्या प्रदत्तमित्यर्थः महार्हं महामूल्यं रत्नभूषणं पट्टनिवसनं कौषेयवस्त्रं च याभ्यां तौ । रत्नालङ्कारान् वस्त्राणि च परिधायेत्यर्थः । आवां कुमारोविश्रुतश्च । अग्निसंस्कारं दाहक्रियाम् । मालवाय मालवदेशीयाय । चण्डवर्मणे चेत्यस्य सन्दिश्येत्यनेन सम्बन्धः । अवस्थां प्रचण्डवर्ममरणघटनाम् । अश्मकेन्द्रस्य वसन्तभानोरुपधिना छलेन कृतां जनितामिति अवस्थाया विशेषणम् । प्रत्युषसि प्रभाते परीक्षितं सम्यग् दृष्टं कुक्षेः अभ्यन्तरस्य वैजन्यं विजनता जनशून्यत्वं यस्य तत् । भवनस्य विशेषणम्। पटीयांसं महान्तम् । दत्तसंज्ञः दत्तसङ्केतः । सप्रतिमं देवीमूर्तिसहितम् । अंसलस्य बलवतः पुरुषस्य प्रयत्नेनायासेन दुश्चलं चालयितुमशक्यम् । लोहपादपीठविशेषणम् । उभयकरविधृतमिति

* बालक्रीडा *

ण्डवर्मा का यथोचित दाहसंस्कार कर चुकी थीं । वसन्तभानु के कौशल से किये हुए सब कार्यों का वृत्तान्त बताकर दूसरे दिन सवेरे पहले ही से निश्चित पुरवासियों, वृद्ध मंत्रियों और सामन्तों के साथ मैं गया और मन्दिर में पूजन करके सब लोगों के समक्ष सफाई दी (कि प्रचण्डवर्मा और चण्डवर्मा की मृत्यु के सम्बन्ध में मेरा हाथ नहीं था) और सब के साथ बैठकर बड़ा-सा नगाड़ा बजवाया । महीन-महीन छिद्रों से पहुँचे हुए उस पटहशब्द से मुझे संकेत हो गया और प्रतिमा समेत लौहपीठ को जो कि मोटे-ताजे मनुष्यों से भी नहीं उठा सकता था-मैंने अपने दोनों हाथों से उठाकर एक कंधे पर रखा और कुमार को साथ लेकर निकल पड़ा । इसके अनन्तर मैंने नित्य की तरह दुर्गा की पूजा की और किंवाड़ खोला । उस समय विश्वास के कारण प्रसन्न दृष्टिवाली, रोमांच युक्त

निरगमम् । निरगमय च कुमारम् । अथ यथापूर्वमर्चयित्वा दुर्गामुद्घाटितकपाटः प्रत्यक्षीभूय प्रत्ययहृष्टदृष्टीः स्पष्टरोमाञ्चमुद्यताञ्जलिरूढविस्मयं च प्रणिपतन्तीः प्रकृतीरभ्यधाम—'इत्थं देवी विन्ध्यवासिनी मन्मुखेन युष्मानाज्ञापयति—मया सकृपया शार्दूलरूपेण तिरस्कृत्याद्य वो दत्तमेनमद्यप्रभृति मत्पुत्रतया मन्दमातृपक्ष इति परिगृह्णन्तु भवन्तः ।

(३५) अपि च दुर्घटकूटकोटिघटनापाटवप्रकटशाठ्यनिष्ठुराश्मकघटघट्टनात्मानं मा मन्यध्वमस्य रक्षितारम् । रक्षानिर्वेशश्चास्य स्वसेयं सुभ्रू

* बालविबोधिनी *

एकपार्श्वस्य विशेषणम् । एकपार्श्वस्य लोहपादपीठस्येति ज्ञेयम् । एकतः बिलस्यैकपार्श्वे । निरगमयं निष्कासितवान् । प्रत्यक्षीभूय सर्वजनसमक्षं निर्गत्य । प्रत्ययेन विश्वासेन हृष्टा सन्तुष्टा दृष्टिर्यासां ताः । रूढः सञ्जातो विस्मयो यस्मिंस्तद् यथा तथा । स्पष्टरोमाञ्चमित्यादि त्रय क्रियाविशेषणम् । प्रकृतयः प्रजाः । तिरस्कृत्य संछाद्य संगोप्य वा । वः युष्मभ्यम् । एनं कुमारम् । मन्दो दुर्भाग्यो मातृपक्षो यस्य तथाभूतः । परिगृह्णन्तु—स्वीकुर्वन्तु ।

(३५) दुर्घटेति—दुर्घटाया दुःसाध्याया कूटकोटेः कपटसमूहस्य पाटवेन नैपुण्येन प्रकटं व्यक्तं शाठ्यं धूर्तत्वं यस्य तथाभूतो निष्ठुरो निर्दयो योऽश्मको वसन्तभानुः स एव घटस्तस्य घट्टनं स्फोटनं तदेव आत्मा यस्य तम् । अश्मकेन्द्रस्य कपटचेष्टितं मयैवावगतमिति भावः । अस्य बालकस्य । रक्षानिर्वेशः रक्ष-

* बालक्रीडा *

हाथ जोड़े और विस्मित भाव से दुर्गा को नमस्कार करती हुई प्रजा से मैंने कहा—'विन्ध्यवासिनी देवी ने मेरे द्वारा तुम सबको आदेश दिया है कि—'मैंने कृपा करके व्याघ्ररूप धारणकर कुमार की रक्षा की है । आज मैं इसे तुम्हारे हाथों में सौंप रही हूँ । आज से तुम इसे मेरा पुत्र समझो ।' मैंने फिर कहा—

(३५) इन दुर्घट कपटों की योजना के नैपुण्य से जिसकी शठता प्रगट हो चुकी है, उस निर्दयी वसन्तभानु का मंसूबा बिगाड़ने वाला मैं इस कुमार का रक्षक हूँ । मेरे पुरुषार्थ के पुरस्कारस्वरूप महादेवी वसुन्धरा ने इसकी बहिन मंजुवादिनी मुझे दे दी है ।' यह सुनकर लोग बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे—

रभ्यनुज्ञाता मह्यमार्यया' इति । श्रुत्वैतत् 'अहो भाग्यवान्भोजवंशः, यस्य स्वमार्यादत्तो नाथः' इत्यप्रीयन्त प्रकृतयः । सा तु वाचामगोचरां हर्षावस्थामस्पृशन्मे श्वश्रूः । तदहरेव च यथावदग्राहयन्मञ्जुवादिनीपाणिपल्लवम् । अपन्नायां च यामिन्यां सम्यगेव बिलं प्रत्यपूरयम् । अलब्धरन्ध्रश्च लोको नष्टमुष्टिचिन्तादिकथनैरभ्युपायान्तरप्रयुक्तैर्दिव्यांशतामेव मम समर्थयमानः, मदाज्ञां नात्यवर्तत ।

(३६) राजपुत्रस्यार्यापुत्र इति प्रभावहेतुः प्रसिद्धिरासीत् । तं च

* बालविबोधिनी *

णपारिश्रमिकम् । स्वसा भगिनी । अभ्यनुज्ञाता दातुं स्वीकृता । आर्यया देव्या । वाचामगोचरां अनिर्वाच्याम् । अस्पृशत् प्राप्तवती । तदहरेव तस्मिन्नेव दिने । यथावत् यथाविधि । प्रपन्नायाम् उपस्थितायाम् । अलब्धेति—न लब्धं दृष्टं रन्ध्रं छिद्रं दोषा येन सः । नष्टस्य अदर्शनं गतस्य मुष्टौ करमध्ये चिन्ता नष्टानि वस्तूनि करे एव पश्यामीत्यादिकथनैः प्रकाशनैः । अभ्युपायेति अन्योपायनिर्वर्तितैः । उपायान्तरेण नष्टमाविष्कृत्य स्वमुष्टावेव पश्यामीति ख्यापयतीति भावः । दिवि स्वर्गे भवो दिव्यो देवस्तस्यांशतां समर्थयमानः अनुमन्यमानः । अत्यवर्त्तत अत्यक्रामत् ।

(३६) आर्यापुत्रो देवीपुत्रो भवानीपुत्रो वा । इति एवंरूपा । प्रसिद्धिरि-

* बालक्रीडा *

'यह भोजवंश धन्य है, जिसके अधिपति तुम हो । जिसे स्वयं भगवती ने हम लोगों के कल्याणार्थ भेज दिया है । मेरी सास को भी अवर्णनीय हर्ष प्राप्त हुआ । उसने उसी रोज मेरे साथ अपनी पुत्री मंजुवादिनी का विवाह कर दिया । जब रात हुई तो मैंने वह सुरंग अच्छी तरह भर दी । जन साधारण को मेरे इस कपट व्यवहार का हाल कुछ भी नहीं मालूम हुआ उसे इस बात का बड़ा विस्मय था कि उस मन्दिर में खाने-पीने के लिए कुछ भी नहीं रहा, फिर भी हम प्रसन्न और हृष्ट-पुष्ट थे । इसी कारण सब लोग मुझे किसी देवता का अंश मान रहे थे । अब किसी में भी यह साहस नहीं था कि जो मेरी आज्ञा का उल्लंघन करता ।

(३६) राजकुमार आर्या (देवी) के पुत्र कहे जाते थे, इस लिए उनका

गुणवत्यहनि भद्राकृतमुपनाय्य पुरोहितेन पाठयन्नीतिं राजकार्याण्यन्वतिष्ठम् । अचिन्तयं च—'राज्यं नाम शक्तित्रयायत्तम्, शक्तयश्च मन्त्रप्रभावोत्साहाः परस्परानुगृहीताः कृत्येषु क्रमन्ते । मन्त्रेण हि विनिश्चयोऽर्थानाम्, प्रभावेण प्रारम्भः, उत्साहेन निर्वहणम् । अतः पञ्चाङ्गमन्त्रमूलः, द्विरूपप्रभावस्कन्धः, चतुर्गुणोत्साहविटपः, द्विसप्ततिप्रकृतिपत्रः, षड्गुणकिसलयः, शक्तिसिद्धिपुष्पफलश्च, नयवनस्पतिर्नेतुरुपकरोति । स चायमने-

* बालविबोधिनी *

त्यर्थेनान्वयः । प्रभावहेतु प्रभुत्वकारणम् । तं राजकुमारम् । गुणवति शुभे । भद्राकृतं मुण्डितम् । उपनाय्य उपनयनं कारयित्वा । शक्तित्रयायत्तं शक्तित्रयाधीनम् । मन्त्रेति—मन्त्रशक्तिः प्रभुशक्तिरुत्साहशक्तिश्चेति । परस्परानुगृहीताः परस्परापेक्षिणः । कृत्येषु विधेयवस्तुषु । क्रमन्ते प्रभवन्ति । विनिश्चयो निर्णयः । अर्थानां कार्यवस्तूनाम् । प्रारम्भः प्रवर्तनं कार्येष्विति शेषः । निर्वहणं सिद्धिः । पञ्च अङ्गानि सहायादीनि यस्य तादृशो यो मन्त्रः स एव मूलं यस्य सः । द्विरूपः कोषजदण्डजत्वेन द्विविधः । प्रभाव एव स्कन्धः काण्डो यस्य सः । चतुर्गुणोऽधिक उत्साहो विटपाः शाखा यस्य सः । द्विसप्ततिः प्रकृतयः स्वाम्यमात्यादयः पत्राणि यस्य सः । षाड्गुण्यं सन्धिविग्रहादि किसलयं पल्लवं यस्य स शक्तिर्बलं सिद्धिः कार्यसिद्धिश्च ते पुष्पं फलञ्च यस्य सः । एतत्सर्वं नयवनस्पतिविशेषणम् । नय-

* बालक्रीडा *

प्रभाव भी बहुत बढ़ गया । इसके अनन्तर शुभ दिन को मैंने पुरोहित द्वारा राजकुमार का मुण्डनसंस्कार और यज्ञोपवीत कराया और नीतिशास्त्र पढ़ाते हुए राज्यकार्य का सञ्चालन प्रारम्भ किया । मैंने विचार किया कि राज्य तीन शक्तियों के अधीन रहता है । वे तीन शक्तियाँ हैं-मंत्र, प्रभाव और उत्साह । ये तीनों परस्पर एक दूसरी से सम्बद्ध होकर कार्य साधन करती हैं । मंत्र से कर्तव्य कर्म का ज्ञान होता है । प्रभाव अर्थात् प्रभुशक्ति से कार्य में प्रवृत्ति होती है और उत्साहशक्ति से कार्यसिद्धि होती है । सहाय, साधन, उपाय, देश-कालका विभाग और विपत्ति का प्रतीकार ये पंचांग कहे जाते हैं । ये ही पांच अङ्ग नीतिरूपी वृक्ष के मूल हैं । कोष और दण्ड का प्रभाव उक्त वृक्ष का स्कन्ध है । कर्तव्य अर्थ के अतिशय स्थिर प्रयत्न को उत्साह कहते हैं । साम, दान, दण्ड और भेद

काधिकरणत्वादसहायेन दुरुपजीव्यः ।

(३७) यस्त्वयमार्यकेतुर्नाम मित्रवर्ममन्त्री स कोसलाभिजनत्वात्कुमारमातृपक्षो मन्त्रिगुणैश्च युक्तः तन्मतिमवमत्यैव ध्वस्तो मित्रवर्मा, स चेल्लब्धः पेशलम्' इति । अथ नालिजङ्घं रहस्यशिक्षयम्—'तात, आर्यमार्यकेतुमेकान्ते ब्रूहि—'को न्वेष मायापुरुषो य इमां राज्यलक्ष्मीमनुभवति, स चायमस्मद्बालो भुजङ्गेनामुना परिगृहीतः । किमुद्गीर्येत ग्रस्येत

* बालविबोधिनी *

वनस्पतिः नीतिवृक्षः । नेतुर्नायकस्य विजिगीषोरित्यर्थः । स नीतिवृक्षः । अनेकाधिकरणत्वात् नानाश्रयत्वात् अनेकविधत्वादिति यावत् । दुरुपजीव्यः कष्टेन संरक्षणीयः ।

(३७) कोशलाभिजनत्वात् कोशलवंशोत्पन्नत्वात् कोशलदेशीयत्वात् वा । कुमारस्य राजपुत्रस्य मातृपक्षस्तत्पक्षीयः । अवमत्य अनादृत्य । ध्वस्तो विनष्टः । स आर्यकेतुः । लब्धः प्राप्तोऽस्मदधीनः स्यादिति शेषः । पेशलं सुन्दरं शुभमिति वा । मायापुरुष ऐन्द्रजालिकः । भुजङ्गेन सर्पसदृशेन धूर्तेन वा । अमुना विश्रुते-

* बालक्रीडा *

ये चारों गुण उस की शाखायें हैं। स्वामी, अमात्य, सुहृद्, कोष, राष्ट्र, दुर्ग, सेना और पुरवासी, इन आठ राज्याङ्गों के भेद-प्रभेद से नीतिवृक्ष के ७२ पत्र होते हैं। सन्धि, विग्रह, यान, द्वैध और समाश्रय ये ही नीतिवृक्ष के पल्लव हैं। प्रभाव, मन्त्र, उत्साह और इनकी सिद्धियें इस के पुष्प और फल हैं । यह नीतिरूपी वृक्ष राजा का बराबर उपकार करता रहता है।

(३७) मित्रवर्मा का मंत्री आर्यकेतु कोशल देश में उत्पन्न होने के कारण कुमार की माता का पक्षपाती है और इस में मन्त्री के सभी गुण विद्यमान हैं। उसकी सलाह न मानने के कारण ही मित्रवर्मा को नीचा देखना पड़ा है। यदि आर्यकेतु कुमार के हाथ लगजाय तो बहुत अच्छा हो। इसके बाद नालोजंघ को एकान्त में लेजाकर मैंने शिक्षा देते हुए कहा-'तात ! तुम श्रद्धेय आर्यकेतु को एकान्त में ले जाकर कहो—'यह महापापो पुरुष कौनहै, जो राजकुमार को अपने वश में करके राज्यलक्ष्मी का उपभोग कर रहा है ? इस दुष्ट ने मेरे

वा' इति । स यद्वदिष्यति 'तदस्मि बोध्यः' इति । सोऽन्यदेव मामावेदयत–'मुहुरुपास्य प्राभृतैः, प्रवर्त्य चित्राः कथाः, संवाह्य पाणिपदम्, अतिविस्रम्भदत्तक्षणं समप्राक्षं त्वदुपदिष्टेन नयेन । सोऽप्येवमकथयत्—'भद्र मैवं वादीः । अभिजनस्य शुद्धिदर्शनम्, असाधारणं बुद्धिनैपुण्यम्, अपरिमाणमौदार्यम्, अत्याश्चर्यमस्त्रकौशलम्, अनल्पं शिल्पज्ञानम्, अनुग्रहार्द्रं चेतः, तेजश्चाप्यविपह्यमभ्यमित्रीणम्, इत्यस्मिन्नेव संनिपातितं

* बालविबोधिनी *

नेत्यर्थः । उद्गीर्येत त्यज्येत । ग्रस्येत भक्ष्येत । बोध्यः विज्ञाप्यः । अन्यद अन्यदिवसे । प्राभृतैरुपायनैः । प्रवर्त्य आरभ्य । संवाह्य मर्दयित्वा । अतिविस्रम्भेनाधिकविश्वासेन दत्तोऽर्पितः क्षणो येन तम् । तम् आर्यकेतुम् । अप्राक्षमिति प्रच्छधातोर्लुङि रूपम् । त्वया भवतोपदिष्टेन कथितेन । नयेन मार्गेण प्रकारेण वा । अभिजनस्य कुलस्य । शुद्धेर्वैमल्यस्य दर्शनं ज्ञापकम् । अतिमानुषमलौकिकम् । अनुग्रहेण दयया आर्द्रं स्निग्धम् । तेजः प्रतापः । अभ्यमित्रीणं शत्रून् प्रति प्रकटितमिति तेजोविशेषणम् । अविपह्यं परैः सोढुमशक्यम् । अस्मिन् विश्रुते इत्यर्थः ।

* बालक्रीडा *

कुमार पर जैसे मोहिनी डाल दी है । आखिर, यह कुमार को छोड़ेगा या निगल ही जायगा ?' इसका वे जो उत्तर दें, वह मुझे बताना ।' दूसरे समय नालीजंघ ने आकर कहा—'आप की आज्ञा से मैं आर्यकेतु के पास गया । विविध प्रकार से उनकी सेवा की, तरह-तरह के उपहार अर्पण किये और नाना प्रकार के वार्तालाप करके हाथ-पैर दाबा । इस प्रकार उनको अत्यन्त विश्वास दिलाकर मैंने आप को बतायी नीति के अनुसार पूछा । इस पर उन्हों ने कहा–'भद्र ! ऐसा मत कहो । उससे राजवंश विमल होगा । उस की असाधारण बुद्धि है । उसमें अलौकिक बल है । उसमें असीम उदारता और आश्चर्यजनक अस्त्रकौशल है । उसमें अतुलित शिल्पज्ञान है । उसका मन दया से ओत-प्रोत है । उसका तेज दुःसह है और वह बड़ी वीरता के साथ शत्रु का सामना कर सकता है । मुझे तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जो मानवोचित गुण एक पुरुष में कभी नहीं दीखते, उन

गुणाः येऽन्यत्रैकैकशोऽपि दुर्लभाः। द्विषतामेष चिरविल्वद्रुमः, प्रह्वाणां तु चन्दनतरुः, तमुद्धृत्य नीतिज्ञंमन्यमश्मकमिमं च राजपुत्रं पित्र्ये पदे प्रतिष्ठितमेव विद्धि। नात्र संशयः कार्यः' इति।

(३८) तच्चापि श्रुत्वा भूयोभूयश्चोपदाभिर्विशोध्य तं मे मतिसहायमकरवम्। तत्सखश्च सत्यशौचयुक्तानमात्यान्विविधव्यञ्जनांश्च गूढपुरुषानुदपादयम्। तेभ्यश्चोपलभ्य लुब्धसमृद्धमत्युत्सिक्तमविधेयप्रायं च प्रकृतिमण्डलमलुब्धतामभिख्यापयन्, धार्मिकत्वमुद्भावयन्, नास्तिकान्कदर्थयन्,

* बालविबोधिनी *

सन्निपातिनः एकत्रावस्थायिनः। ये गुणाः। अन्यत्र अपरपुरुषे। एकैकश इति– सम्भूयावस्थानं तु दूरे, प्रत्येकमेकोऽपि दुर्लभ इत्यर्थः। चिरविल्वद्रुमः करञ्जवृक्षः, अनम्रः कण्टकाकीर्णश्च भवतीति तत्तादात्म्यारोपः। प्रह्वानां नम्राणाम्। चन्दनतरुरानन्ददायकः। उद्धृत्य विनाश्य। आत्मानं नीतिज्ञं मन्यत इति नीतिज्ञम्मन्यं नीतिज्ञाभिमानिनम्।

(३८) उपदाभिः उपढौकनैः। विशोध्य सन्तोष्य। तमार्यकेतुम्। मतिसहायं बुद्धिसहायकम्। तत्सखः तत्सहायः। विविधव्यञ्जनान् नानावेषधारिणः। उदपादयम्—अजनयम्। तेभ्यः गूढपुरुषेभ्यः। लुब्धं लोभोपहतं, समृद्धं सधनञ्च। अत्युत्सिक्तम् अतिगर्वितम्। अविधेयप्रायं प्रायेणावशीभूतम्। एतानि प्रकृतिमण्डलस्य विशेषणानि। अलुब्धतां स्वकीयलोभशून्यताम्। कदर्थयन् गर्ह-

* बालक्रीडा *

सभी गुणों ने आकर इस में डेरा जमाया है। यह शत्रु के लिये कंटीला वृक्ष और नम्रजनों के लिए चन्दनतरु है। इसी ने उस नीति के अभिमानी अश्मकदेश के अधिपति को उजाड़ कर इस राजकुमार को इसके पिता के पद पर लाकर बैठाया है। इस विषय में तुम कुछ भी संशय मतकरो।

(३८) उस वृद्ध मन्त्री का मनोभाव जानकर मैंने उसे विविध प्रकार के उपहार दे और उसका हृदय आप्यायित करके अपना सहायक बनाया। उसकी सहायता से मैंने विविध प्रकार के वेष धारण करनेवाले गुप्तचर बनाये। उन चरों के द्वारा मैंने प्रजा के भीतर रहने वाले लोभी, अभिमानी, किसी के वश में न होने वाले लोगों में अपनी अलुब्ध वृत्ति का प्रचार और धार्मिक भावना जागृत

कण्टकान्विशोधयन्, अमित्रोपधीरपघ्नन्, चातुर्वर्ण्यं च स्वधर्मकर्मसु स्थापयन्, अभिसमाहरेयमर्थानर्थमूला हि दण्डविशिष्टकर्मारम्भा न चान्यदस्ति पापिष्ठं तत्र दौर्बल्यात्, इत्याकलय्य योगानन्वतिष्ठम्।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते विश्रुतचरित
नामाष्टम उच्छ्वासः।

* बालविबोधिनी *

यन्। कण्टकान् रिपून्। विशोधयन् उन्मूलयन्। अमित्राणां शत्रूणामुपधीः कपटानि। अपघ्नन् विफलयन्। अभिसमाहरेयं सञ्चिनुयाम्, उपार्जयेयमित्यर्थः। अर्थानिति शेषः। अर्थमूलाः अर्थप्रधानाः। दण्डानां दण्डसाध्यानां विशिष्टानां च कर्मणामारम्भाः उद्योगाः। तत्र अर्थविषये। दौर्बल्यात् दौर्बल्यं विहाय। अन्यदपरं पापिष्ठं निकृष्टं पापं दोषो वा नास्तीति आकलय्य विचार्य। योगान् नानाविधोपायान्। अन्वतिष्ठम् आचरम्।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां
दशकुमारचरितव्याख्यायामष्टम उच्छ्वासः।

* बालक्रीडा *

करते हुए मैंने नास्तिक जनों को नीचा दिखाया। राज्य कार्य संचालन में जो बाधक थे, उन्हें उखाड़ फेंका। शत्रुओं की कूटनीति का शमन किया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, इन चारों वर्णों के लोगों को अपने-अपने धर्म पर चलाते हुए मैंने अर्थोपार्जन के उपाय निकाले। क्यों कि अर्थ से ही दण्ड और राज्यसम्बन्धी कार्य सिद्ध होते हैं। दुर्बलता से बढ़कर और कोई पाप नहीं है यह विचार कर मैं बल बढ़ाने का उपाय करने लगा।

इति श्रीरामतेजपाण्डेयकृतदशकुमारचरितभाषानुवादे
विश्रुतचरित नामाष्टम उच्छ्वास।

सम्यग्लब्ध्वा यौवनेन विलसन्तं कुमारनिकरं निरीक्ष्य महीवल्लभः सः 'अहं शत्रुजनदुर्लभः' इति परमानन्दममन्दमविन्दत ।

इति श्रीदण्डिनः कृतौ दशकुमारचरिते कुमारोत्पत्तिर्नाम प्रथम उच्छ्वासः।

द्वितीयोच्छ्वासः ।

(१) अथैकदा वामदेवः सकलकलाकुशलेन कुसुमशायकसंशयितसौन्दर्येण कल्पितसोदर्येण साहसापहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारणकुलिशाङ्कितकरेण कुमारनिकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं

* बालविबोधिनी *

लब्ध्वा अधिगम्य । कृत्येषु कार्येषु अनलसमालस्यरहितमुद्यमशीलमित्यर्थः । महीवल्लभो राजा। शत्रुजनदुर्लभः शत्रुभिरपराजेयः । अविन्दत अलभत ।

इति श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृतायां बालविबोधिनीसमाख्यायां दशकुमारचरितव्याख्यायां प्रथमोच्छ्वासः ।

(१) सकलासु निखिलासु कलासु नृत्यगीतादिविद्यासु कुशलेन निपुणेन । कुमारनिकरेणेत्यस्य विशेषणमेवमग्रेऽपि । कुसुमशायकः कन्दर्पः संशयितः कन्दर्पो वा तदन्यो वेति सन्दिग्धो यस्मात् तथाभूतं सौन्दर्यं यस्य तेन । यस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा जनस्य कन्दर्पभ्रमो भवतीत्यर्थः । कल्पितं परस्परं रचितं सौदर्यं सहोदरभावबन्धुतेति यावत्, येन तेन । साहसेन पराक्रमेण अपहसितस्तिरस्कृतः कुमारः कार्तिकेयो येन तेन । कुमाराधिकवीर्यशालिनेत्यर्थः । सुकुमारेण कोमलशरीरेण । जयध्वजो जयपताका, आतपवारणं छत्रं, कुलिशं वज्रं तैरङ्कितौ चिह्नितौ करौ हस्तौ

* बालक्रीडा *

परमानन्द को पाया ।

इसतरह बालक्रीडा टीका में दशकुमारोत्पत्ति नामका प्रथम उच्छ्वास समाप्त हुआ ।

---

(१) इसके बाद एक दिन वामदेव सम्पूर्ण कलाओंमें कुशल यही कामदेव है ऐसा लोगों के हृदयों मे संशय के उत्पादक वेशादि से अत्यन्त सुन्दर एवं साहस में कार्त्तिकेय का उपहास करनेवाले तथा जिनके करों मे जयध्वजा छत्र एवं कुलिश के चिन्ह है, ऐसे सुकुमार कुमार समूह मे घिरे हुए, प्रणतमस्तक

समभिगम्य तेन तां कृतां परिचर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षं विदलिष्यमाणविपक्षं कुमारचयं गाढमालिङ्ग्य मितसत्यवाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत । ७/०१

(२) भूवल्लभ, भवदीयमनोरथफलमिव समृद्धलावण्यं तारुण्यं नुतमित्रो भवत्पुत्रोऽनुभवति। सहचरसमेतस्य नूनमेतस्य दिग्विजयारम्भसमय एषः। तदस्य सकलक्लेशसहस्य राजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं क्रियताम्' इति

* बालविबोधिनी *

यस्य तेन । येषां करेषु ध्वजादिरेखाः सन्तीत्यर्थः । कुमारनिकरेण कुमारसमूहेन आनतशिरसं कृतनमस्कारम् । तेन राज्ञा राजहंसेन । परिचर्या सेवाम् । अङ्गीकृत्य स्वीकृत्य । निजस्य (वामदेवस्य) चरणकमलयुगले पादपङ्कजद्वये मिलन्तः पतन्तः मधुकरायमाणा भ्रमरा इवाचरन्तः काकपक्षाः शिखण्डका यस्य तं वामदेवं प्रणमन्तमित्यर्थः । विदलिष्यमाणाः पराजेष्यमाणा विपक्षाः शत्रवो येन तम् । कुमारचयं राजवाहनादिकुमारगणम् । गाढं निर्भरम् । मितं स्वल्पं सत्यमवितथं यद्वाक्यं तेन । परिमितसत्याप्रियवचनेनेत्यर्थः । विहिताशीः कृताशीर्वादः ।

(२) भवदीयानां त्वदीयानां मनोरथानामभिलाषाणां फलमिव । समृद्धमतिशयेन वर्धितं लावण्यं सौन्दर्यं यस्मिन् तदिति तारुण्यविशेषणम् । नुतानि प्रशंसितानि मित्राणि सुहृदो यस्य सः । नूनं निश्चयेन । दिशां विजयस्यारम्भः प्रारम्भस्तस्य समयः कालः । अस्मिन्नेव समये दिग्विजयोद्योगः कर्तव्य इत्यर्थः । सकलक्लेशसहस्य सत्त्वसम्पन्नतया सकलक्लेशसहिष्णोः । दिग्विजयप्रयाणं दिग्विजययात्रा ।

* बालक्रीडा *

राजा के पास गये और वहां उसका सेवा-सत्कार किया । इसके बाद अपने चरणकमल में प्रणाम करते समय जिनका काकपक्ष मधुकर की शोभा को धारण करता था और जो भविष्य में विपक्षदलका दलन करनेवाला था, ऐसे कुमारसमूह का आलिङ्गन किया और परिमित एवं सत्य वाक्य से आशीर्वाद देकर बोले—

(२) हे भूवल्लभ ! अनुकूलमित्र आपका पुत्र राजवाहन आपके मनोरथफल की तरह समृद्ध लावण्य और तारुण्य का अनुभव करता है । अतः सहचरों के साथ यह इसका दिग्विजय करने का समय है । इस वास्ते दिग्विजय करने के लिए आप इस को भेज दीजिए ।